प्रकाशक

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी

ज्ञानवापी, बनारस ।

शाखाएँ—

२०१, हरिसन रोड, कलकत्ता ।

बाँकीपुर, पटना ।

मुद्रक—

कृष्णगोपाल केडिया

वणिक प्रेस

साक्षीविनायक, बनारस ।

प्रस्तावना

यह ग्रन्थ स्वर्गीय पं० हरिनारायणजी आपटेके मराठी उपन्यास 'उषाकाल' का अनुवाद है। पं० हरिनारायणजी आपटेके उपन्यासोंको मराठी भाषा-भाषियोंने बड़े आदरकी दृष्टिसे अपनाया। एक-एक पुस्तकके कई-कई संस्करण हो चुके हैं। बँगला उपन्यासकारोंमें जो स्थान स्वर्गीय बंकिम बाबूका है वही स्थान मराठीमें आपटे महाशयका है। जिस मराठी भाषाके सुप्रसिद्ध सामाजिक उपन्यास 'रागिणी' का अनुवाद कराके हमने छापा और उसका जैसा आदर हमारे प्रेमी पाठकों और समालोचकोंने करके हमारे उत्साहको बढाया कि हम फिर मराठीके एक बहुत ही उच्च कोटिके उपन्यासके छापनेकी लालसाको रोक न सके। अतएव उस समय हमारी दृष्टि आपटे महाशयके प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास 'उषाकाल' पर पड़ी। उसी ऐतिहासिक उपन्यासको लेकर आज हम अपने प्रेमी पाठकोंके सम्मुख उपस्थित होते हैं। इस उपन्यासमें वीर केसरी शिवाजीके जन्मके पहले मराठा-जातिकी अवस्था और हिन्दुओंकी मनोवृत्तिका इतना उत्तम दिग्दर्शन कराया गया है कि पढ़ते ही बनता है। सत्य और न्याय तथा नीतिके लिये किस तरहसे वे लोग स्वार्थ, जाति और देशको भूलकर अपने बादशाहों और सरदारोंके अन्यायको भी सहते हुए अपने वचनपर डटे रहे। इसके फलस्वरूप कुटिल नीतिके आगे न्याय और सत्यकी पराजय हुई। ऐसी अवस्थामें गौ, ब्राह्मण और देशकी रक्षाके लिये एक महान् आत्माके प्रादुर्भावकी आवश्यकता पड़ी, जो देशमें शक्तिका संचार करने तथा हिन्दू सभ्यता और जातीयताको सुरक्षित रखनेके लिये देशवासियोंमें नवीन जीवन उत्पन्न करें।

अतएव परमपिता परमात्माकी कृपासे वीर केसरी शिवाजीका जन्म हुआ, जिसने अपने पराक्रम, साहस तथा बाहुबलसे उस समयकी राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक स्थितिको उलटने एवं देश और हिन्दू-

धर्मको बचानेके लिये जो जो उद्योग किये हैं, उन्हीं घटनाओंको लेखक-ने अपने प्रतिभामयी भाव और भाषासे इस उपन्यासका बड़े मनोरंजक ढंगसे लिखा है।

इस उपन्यासमें जहाँतक ही हमें हिन्दू जातिके उत्थानको मनोरंजक वर्णन, पढ़नेको मिलेगा, वहाँ मुसलमान जातिकी कुटिलता, अन्याय-प्रियता, क्रूरता, विश्वासघातकता और दुश्चरित्रताका सच्चा उदाहरण भी मिलेगा। राजा और उसकी शासनपद्धतिसे (अन्याय और अत्याचारके कारण) जब प्रजाका विश्वास उठ जाता है तब शासकगण अपने अत्याचारको छिपानेके लिये क्रूरता और निरकुशताका अवलम्बन करते हैं। लेकिन इससे प्रजाका अविश्वास नहीं घटता और उस अन्याय और अत्याचारका जहरीला असर देश और शासकको अवश्य चखना पड़ता है। इस सत्य घटनाका बहुत ही बढ़िया उदाहरण इस उपन्यास 'उषाकाल' में आपको मिलेगा। इस उपन्यासमें जो ऐतिहासिक घट-नाएँ आई हैं, उनके लिये सत्यताका कहाँतक ध्यान रखा गया है, इसे जाननेके लिये हमारे यहासे प्रकाशित 'वीर केशरी शिवाजी' को पढ़-कर देखें।

पुस्तक इतनी रोचक ढगसे लिखी है, वर्णनशैली इतनी मनोहर और भाषा इतनी परमार्जित है कि, पढते ही बनती है।

प्रकाशक

उषाकाल

पहला परिच्छेद

हनुमानजीका मन्दिर

पूनासे सासवड़को जानेवाले मार्गपर, एक वार, सम्वत् १७०२ विक्रमोकी श्रावण कृष्णा दशमोके दिन, रातके समय, जोरकी वर्षा हो चुकी थी; और भी भारी वृष्टिकी सम्भावना थी। सम्पूर्ण आकाश ऐसा घर काला हो रहा था कि जैसे तेलमें घोटे हुए काजलसे रग दिया गया हो। क्षण-क्षणमें बिजली कडकडा रही थी; और अपनी चमचमाहटने चकाचौंध उत्पन्न कर रही थी। किसी विकराल राक्षसके विकट हास्यकी भाति आकाशमें गड़गड़ाहटका शब्द हो रहा था। जिस विशेष घड़ीका वर्णन हम कर रहे हैं, उस समय तो वर्षा बन्द थी; परन्तु थ ड़ी देर पहले काफी वर्षा हो चुकी थी; और उपर्युक्त मार्ग, तथा उसके आसपासकी सम्पूर्ण वृक्षलताये भीगकर तर-बतर हो गयी थीं। उनको चोटियोपर पडा हुआ जल नीचेकी डालियोंपर और फिर टहनियोंपर गिर रहा था। इसी भाति पत्तोपरसे नीचेके पत्तोंपर, और, फिर और नीचेके पत्तोंपर, पानीकी बूँदें टपक रही थीं। इस प्रकार सम्पूर्ण वृक्षलता-समूह और झाडियोंसे पानी गिरने और टपकनेसे जगलमें एक प्रकार विचित्र शब्द हो रहा था। फिर वे सब बूँदे एकत्रित होकर जब नीचे पड़े हुए पत्तोपर गिरतीं और उसी बीचमें यदि हवाके किसो भारी झोंकेके आजानेसे वह पानी और भी वेगके साथ नीचे गिरता, तब तो उसका शब्द किसी भी मुसाफिरको चकित-सा कर देता था। रात बहुत ही भयानक दिखायी देने लगी थी। भयङ्कर जंगली जानवरों और सर्प इत्यादि जीव-जन्तुओंके डरसे भी वह स्थान खाली

न था। ऐसे भयङ्कर समयमें कोई भी मुसाफिर भला क्योंकर उस मार्गसे जानेका साहस कर सकता था? और यदि कोई करता भी, तो अपने प्राणोंसे भी प्रिय किसी कार्यके लिये ही कर सकता था। सो, उस भयंकर समयमें भी, उस मार्गमें एक घुड़सवार खूब तेजीके साथ जा रहा था। उसको इस बातकी परवा नहीं थी कि, मेरा घोड़ा इस अवघट मार्गमें ऐसे समयमें जा सकेगा, अथवा नहीं—कहीं वह रपटकर गिर तो नहीं पड़ेगा? कालकूट विषके समान दिखाई पड़नेवाले उस अन्धकारमें, मार्गके नदी-नालोंकी कठिनाइयोंका कुछ भी विचार न करते हुए, यह सवार कहाँ जा रहा है? और क्यों जा रहा है? यदि कहे, घुड़सवार किसी पलटनका है, सो भी नहीं। बिजलीकी बारीक चमकमें उसकी पोशाक सहज ही दिखायी पड़ सकती थी। उसकी पोशाक—पोशाक काहेकी—बारीक मलमलका एक मुसलमानी ढंगका लम्बा कुरता था, जिसको लौटाकर उसने अपने कन्धोपर डाल लिया था। कुर्त्ता भींगकर तर हो गया था, वह उसके बदनमें बिलकुल चिपक गया था, जिससे उसके बदनकी गठन स्पष्ट रूपसे दिखाई पड़ रही थी। सिरमें एक साफा साधारण तौरसे लपेटा हुआ था, जिसका एक सिरा पीठकी ओर लटकता हुआ पानीमें भींगकर चिपक गया था, दूसरा सिरा, जो पहले सिरपर कलँगीकी तरह रखा हुआ होगा, अब वर्षाके मारे नीचे लचककर बालोंमें चिपक गया था। उसके हाथमें लम्बी तलवार, सो भी नंगी थी। तलवारका म्यान न तो उसकी कमरमें और न उसके पास ही कहीं दिखाई देता था। शायद इसीलिए उसने नंगी तलवार पकड़ रखी थी। नहीं तो वैसी वर्षामें ऐसे रखनेकी कोई आवश्यकता नहीं थी। तलवारका पानी बिजलीकी चमचमाहटसे तड़प अवश्य रहा था, किन्तु बीच-बीचमें ऐसा भी जान पड़ता था कि उसपर किसी न किसी चीज़की आभा-सी पड़ी हुई है। बस, इससे अधिक इस समय उस सवारका कोई वर्णन किया नहीं जा सकता। हाँ, वह अपने घोड़ेको इस प्रकार उत्तेजित कर रहा था कि, जिससे वह तेज़ दौड़नेमें कोई कसर उठा न रखे। उसका यह सारा प्रयत्न इसीलिये तो

नहीं था कि, कहीं पानी फिरसे न बरसने लगे, और उसे कष्ट हो? शायद ऐसा ही हो; क्योंकि हवा अब फिर बड़े वेगसे बहने लगी थी; और चारों ओरसे उसकी सन-सनाहट चित्तको व्याकुल कर रही थी। इधर आकाशमें बादलोंका अन्धकार भी बढ़ता ही जाता था। थोड़ी ही देरमें बूँदें पडनी शुरू हुईं, परन्तु उस साहसी अस्वारोहीने अपने घोड़ेको नहीं रोका। लीजिये, अब और भी तेज वर्षा होने लगी; लेकिन फिर भी उसके रुकनेके कोई चिन्ह दिखाई न पड़े। अन्तमें मूसलाधार वृष्टि होने लगी; और ऐसा जान पडा मानो उसका घोड़ा ही आगे जानेका मन नहीं रखता। यह देखकर उसने एक बड़े वृक्षके नीचे ठहर जानेका विचार किया। सवार और घोड़ा, दोनों ही भींगकर तर हो गये थे; परन्तु जान पड़ता था कि, वह क्षणभरके लिये भी घोड़ेसे उतरकर अपने वस्त्र इत्यादि भी निचोड़ना नहीं चाहता। ऊपर-से पेड़का पानी जब घोड़ेके बदन अथवा मुँहपर गिरता, तब वह एकदम फुड़क उठता। परन्तु सवार अपने विचारमें ही निमग्न-सा दिखाई देता था। क्या विचार करता होगा? कौन जाने!

बहुत देर हो गई, वृष्टि बन्द नहीं हुई; और न उसका जोर ही कम हुआ। सवार स्पष्ट ही इस चिन्तामें था कि, वृष्टि कब बन्द हो; और मैं आगे बढ़ूँ। वह बार-बार ऊपर आकाशकी ओर, फिर घोड़ेकी ओर देखता; और कुछ क्षुब्ध-सा हुआ दिखाई देता।

"क्या करूँ इस वर्षाके लिये! काम तो फतह हो गया, किन्तु अब कहीं फँस न जाऊँ; कुछ समझ नहीं पड़ता। जो प्रतिज्ञा करके चला था, सो तो पूरी हो गई; पर अबतक मुझे अपने लोगोंमें पहुँच जाना चाहिये था। यह कैसे हो? हाँ, यह तो निश्चय है कि, वर्षाके मारे शत्रु हमारे पीछे नहीं आते—वे आ ही कैसे सकते हैं?·· मुर्दे······ कभी नहीं!"

पहलेके वाक्य जिस स्पष्टताके साथ उस सवारके मुखसे निकले, उतनी स्पष्टताके साथ पिछले वाक्य नहीं निकले; क्योंकि इसी बीचमें उसका घोड़ा एकदम चमक उठा। मालूम नहीं, किस कारणसे। न

जाने उसके पैरके नीचे कोई जीवजन्तु पड़ गया, अथवा किसीने उसे काट खाया। अन्तमें वह नीचे उतर पड़ा, और अपने घोड़ेसे बोला—"चित्तल! इतना व्याकुल क्यों हुआ? जो कुछ कर आया, उतना क्या काफी नहीं है? बेटा, यदि तू और मैं जीवित हैं तो और न जाने कितने ऐसे ही पराक्रम कर दिखलायेंगे। माता जगदम्बाके चरणोंपर शत्रुओंके एक सौ आठ सिर—कमसे कम एक सौ आठ सिर समर्पित करूँगा।" यह कहते हुए उसने अपने प्यारे घोड़ेके बदनपर हाथ फेरा और उसको शाबाशी देते हुए पुचकारा। चित्तल भी मानो अपने स्वामीके वचनोंको समझकर, अपनी गर्दन और दृष्टि तिरछी करके, एकबार जोरसे फुड़का और खूब हिनहिनाया। उसकी आवाज़को सुनकर सवार बहुत आनन्दित हुआ। इसके बाद उसने फिर उसकी पीठपर हाथ फेरा और दिलासा दिया, तथा एक कुहनी उसकी पीठपर रखकर, उसी हाथकी हथेलीपर अपना कपोल रखे हुए, वह उसके सहारे खड़ा हो गया। उस समय ऐसा जान पड़ता था कि, वह खूब चिन्तातुर होकर मन ही मन कुछ सोच रहा है।

इतनेमें वृष्टि भी कुछ कम हुई, और जान पड़ने लगा कि घड़ी दो घड़ीमें पानी बहुत कुछ सध जायगा। हमारा घुड़सवार अब चलनेके लिए तैयार हो गया। वह घोड़ेपर सवार हुआ, और उससे बोला, "चित्तल बेटा! अब बहुत जल्द अपने स्थानपर पहुँचना है। रास्तेमें चाहे पानी आवे, और चाहे ओले बरसें, पर कहीं ठहरना नहीं होगा।" इतना कहकर उसने घोड़ेको वेगसे चलनेका इशारा किया।

वर्षा अभीतक बिल्कुल तो बन्द नहीं हुई थी। हाँ, आकाशका कुछ भाग बादलोंको हटानेके प्रयत्नमें अवश्य था। हमारा अश्वारोही भी पहले हीकी भांति वेगसे चला। रास्ता तो उसके परिचयका ही दिखाई देता था, क्योंकि मार्गसे अपरिचित व्यक्ति वैसी अँधेरी रातमें, मूसलाधार पानी गिरते समय, उधरसे जानेका साहस ही कैसे कर सकता था? ऐसा व्यक्ति तो कहीं न कहीं कुछ ठिठकता, जहांसे दो रास्ते फटते, वहाँ खड़ा होकर कुछ विचार करता, किन्तु हमारे अश्वारोहीका यह हाल न था।

उसके मनमें तो सिवाय इसके कि, अगला मार्ग किस प्रकार तै किया जाय, और कोई विचार ही नहीं जान पड़ता था। चलते चलते, लगभग तीन-साढे तीन घड़ीके बाद वह एकदम ठहर गया। इस समय पानी बन्द हो चुका था। हाँ, नदी-नालोंके प्रवाहकी आवाज आ रही थी; और आसपासकी झाड़ियोंसे जलबिन्दुओंके झरनेकी आवाज भी सुनाई दे रही थी। बस, इसके सिवाय और कोई शब्द कानोंमें नहीं आता था। परन्तु ऐसा जान पड़ा कि उस सवारको उस समय कोई न कोई ऐसी आवाज अवश्य सुनाई दी कि, जिसके कारण वह एकदम रुक गया, और कुछ आहटसी लेते हुए एक तरफ ध्यानपूर्वक देखने लगा। उसके चेहरेसे स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि उसके मनमें कोई शंका उत्पन्न हुई है; और बहुत जल्द मालूम हो गया कि, उस चतुर अश्वारोहीकी शकाके लिये प्रबल कारण मौजूद था अर्थात् पीछेकी ओरसे पाँच घोड़ेकी टापें बजनेका स्पष्ट भास हुआ। आकाश स्वच्छ होने लगा था, किन्तु उससे दूरकी वस्तु दिखाई देनेमें सहायता नहीं मिल रही थी। दूरकी वस्तु दिखनेमें तो तभी कुछ सहायता हो सकती थी, जबकी विद्युल्लतादेवी कुछ अपनी चमक दिखलातीं। सौभाग्यवश हमारे अश्वारोहीको, उस समय विद्युल्लता-देवीने सहायता दी। क्रमश दो तीन बार बिजली चमकी, और उसके उजेलेसे यह मालूम हो गया कि, पीछेसे जो घोड़े आ रहे हैं, वे किसके हैं, और किस ओरसे आ रहे हैं। पीछेसे जो लोग आ रहे थे, वे चार थे; और चारों घुड़सवार थे। परन्तु वे हमारे घुड़सवारकी भाँति सिर्फ कुरता पहने और शाफा लपेटे हुए नहीं थे। वे पूरी पोशाक पहने थे। परन्तु वर्षाने उनकी पोशाकपर भी काफी कृपा की थी; जिससे उनके कपड़े भी खराब हो गये थे। प्रत्येकको क्षण क्षणपर अपने हाथ फटकारने पड़ते और मुँहपर हाथ फेरकर अपनी अपनी दाढ़ियाँ निचोड़नी पड़ती थीं।

हमारे सवारने ज्योंही उनको देखा, त्यों-ही उसने अपने मस्तकपर बड़ी-बड़ी शिकनें डालीं, और भौंहें सिकोड़ीं। ऊपरके दाँतोंसे नीचेका

दांत बार बार चबाया और धीरेसे कहा, "अरे शत्रुओ! हमारे देश, हमारे धर्म, हमारे सर्वस्वके दुश्मनो क्या करूँ!"

इन शब्दोंका उच्चारण करते समय उसने अपनी तलवारको मठ मजबूतीसे पकड़ी, और उसको ऊपर उठाया। आगे बढनेके लिए घोड़ेको एड़ लगाई। परन्तु फिर न जाने क्या विचार उसके मनमें आया कि, तुरन्त ही अपने घोड़ेको पीछे घुमानेके लिए झटका दिया। घोड़ा अपने स्वामीका इरादा कुछ भी समझ न सका। आगे जावे या पीछे! अथवा जहाँका तहाँ खड़ा रहे! वह बहुत ही क्षुब्ध हुआ। निस्सन्देह उसके मनकी भी वही दशा थी, जो उसके स्वामीके मनकी थी। पीछेसे आनेवाले घुड़सवार क्षण-क्षणपर पास आने लगे, हमारा सवार और उसका घोड़ा और भी अधिकाधिक क्षुब्ध होने लगे। इतनेमें वे बिल्कुल पास आ गये—और हमारे घुड़सवारने भी अपने मनमें कोई एक विचार निश्चित कर लिया, तदनुसार अपने घोड़ेको पीछे लौटानेके लिए जल्दीसे लगाममें झटका दिया। उसके इस कार्यसे, अभीष्ट-सिद्धि तो दूर रही, घोड़ा एकदम बड़े जोरसे बिगड़ उठा, और जिधर मार्ग सूझा, उधर ही भग चला। इससे उसके पीछे आनेवाले चारों सवारोंके घोड़े भी चमककर भड़क उठे। उनमेंसे एक घुड़सवार संयोगवश आगे हुआ, और हमारा घुड़सवार उसके पीछे हो गया। बाकी सवार जाने कहाके कहाँ गये।

हमारे घुड़सवारके साथ अब उस रातको, उन चारों घुड़सवारोंमेंसे एककी ऐसी बाजी लगी कि कुछ पूछिये नहीं। उन दोनोंमें एकका भी भी घोड़ा रोके नहीं रुका। हमारे घुड़सवारने जब यह देखा कि, शत्रुओं-का एक घोड़ा हमारे आगे है, तब तो उसको उस बाजीमें खूब ही जोश आया। इतनेमें अगला घोड़ा धड़ामसे एक भारी वृक्षके तनेमें जा टकराया, और नीचे गिर पड़ा। इससे उसका सवार "अल्लाह! अल्लाह! कहता हुआ धड़ामसे जमीनपर गिर पड़ा। हमारे घुड़सवारकी भी वही दशा होनेवाली थी, परन्तु अगले घोड़ेकी वह दशा देखकर हमारा सवार कुछ सम्हलने लगा, जिससे उसका घोड़ा इतना चमका

कि, वह एक तीसरी ही ओरको भाग खड़ा हुआ। इस बार चित्तल इतने जोरसे भड़का कि, उसको काबूमें लाना एक बड़ा भारी काम था। अब हमारे सवारके हाथमें, सिवाय इसके कि, वह अपना आसन जमाये रहे; और घोड़ा जहाँ ले जाय जावे, और कुछ भी नहीं रहा। वह बड़े चक्करमें पड़ा। वह कहाँ किस उद्देश्यसे जा रहा था और यह क्या हुआ।

कुछ देर बाद चित्तल कुछ सम्हला—कमसे कम हमारे घुड़सवारको यह भरोसा हुआ कि, अब यदि उसको काबूमें लानेका प्रयत्न किया जायगा, तो निष्फल नहीं होगा। उसने प्रयत्न भी किया। चित्तलने भी अबतक प्राय: अपनी अधिकांश शक्ति भड़कनेमें ही खर्च कर डाली थी, अतएव वह भी अपनी इच्छानुसार इधर उधर भाग नहीं सकता था। लाचार हो उसने भी अपना मन और शरीर फिरसे पूर्ववत् अपने स्वामीके हाथमें दे दिया। परन्तु अब उससे कोई विशेष लाभ नहीं था। क्योंकि उस समय उसके स्वामीको यही पता नहीं था कि, हम कहा हैं, और किस तरफ जा रहे हैं। उसने अपने आस-पास चारों दिशाओंकी ओर दृष्टि डाली। आकाश अभीतक बिलकुल स्वच्छ नहीं हुआ था; परन्तु हाँ उसके कुछ भागमें तारे चमकते हुए दिखाई दे रहे थे; और हवा इतने वेगसे चल रही थी कि, बहुत जल्द बाकी बादलोंके दूर हो जानेकी भी आशा होती थी। इससे जान पड़ता था कि, अब बहुत शीघ्र मार्गका कुछ अनुमान होगा। सवार भी इस बातके लिए बहुत ही आतुर हो रहा था कि, उस मार्गका कुछ पता चले। वह बार-बार बड़े गौरसे चारों ओर निहारता था, परन्तु बहुत देरतक उसके मुखमंडल-पर कुछ भी आशाके चिन्ह दृष्टिगोचर नहीं हुए। अन्तमें निराश होकर उसने यही सोचा कि, अब जिस ओर हो, उसी ओर घोड़ेको बढ़ाया जाय, और तदनुसार उसने घोड़ेको इशारा किया। मालिकका संकेत पाते ही चित्तल आगे बढ़ा। उस निराशाकी दशामें ही, जबकि सवार आगे जा रहा था, एकाएक उसके चेहरेपर आशाकी एक झलक दिखाई दी। अब वह एकही दिशाकी ओर बड़े गौरसे देखने लगा, जिससे उसे

कोई विशेष बात उस ओर दिखाई दी। उसने लगाममें झटका देकर घोड़ेको कुछ अधिक वेगसे उसी ओरको चलनेका संकेत किया। कुछ दूर और चलनेपर उसने घोड़ेको रोककर फिर ध्यानसे देखा, तो उसके चेहरेके भावोंसे ऐसा मालूम हुआ कि, आगे वही बात है, जिसका उसने कुछ देर पहले अनुमान किया था। अवश्य ही अब उसी ओर चलनेका उसका उत्साह बढ़ा, और उसने अपने घोड़ेकी गर्दनपर थाप देकर प्यारसे कहा —

"चिपाल! देखो, भटक करके तुमने अपना शिकार खो ही तो दिया! कुछ परवा नहीं। तुमको आज बड़ी हैरानी हुई है, लेकिन अब धीरज धरो, और आगे कुछ सम्हलकर चलो। वह सामने दीपक दिखाई दे रहा है, वहाँतक बढे चलो। वहाँ पहुँचनेपर हम दोनों विश्राम लेंगे। वहाँ कोई झोपड़ी मन्दिर या घर, अवश्य होगा। देखो, कहाँके कहाँ भटक गये। चलो, अब इतने घबराओ नहीं।"

यह कहकर उसने घोड़ेको पुचकारा, गर्दनपर थाप दी, उसके मुँहको ऊपर करके कुछ चुम्बनसा लिया। उस समय सवारने अपने घोड़ेपर जो प्यार प्रकट किया, उसमे इस बातकी सत्यता पूरी प्रतीत हो रही थी, कि "मराठे सरदारको अपना घोड़ा प्राणोंसे भी अधिक प्यारा होता है।"

चिपालने जब यह देखा कि उसके स्वामीने उसको प्यार किया तब वह फिर उत्साहित हुआ, और जोर जोरसे फुदकते लगाम चबाते तथा गर्दन तिरछी करते हुए चलने लगा। कुछ ही देर बाद, सवार उस प्रकाशके निकट आ गया, जिसे कि उसने दूरसे देखा था। वहाँ एक छोटासा मन्दिर था जिसके आगे प्रागणमें दोनों ओर जलते हुए दो बड़े-बड़े पलीते अब बुझनेपर आ गये थे। हमारा सवार उस मन्दिरके प्रागणमे गया, और घोड़ेसे उतरकर इधर-उधर देखने लगा। पर वहाँ उसे एक चिड़ियातक नजर नहीं आई। घोड़ेकी लगाम पकडे हुए वह प्रागणके अन्ततक चला गया, जहाँ उसे मन्दिरका दरवाजा दिखाई दिया। भीतर झाँककर देखा, तो हनुमानजीकी एक बड़ी मूर्त्तिके अतिरिक्त उसे और कुछ दिखाई न दिया। घोड़ेको वहीं

छोड़कर उसने भीतर जानेका साहस किया; और वहाँ जाकर देखता है कि, हनुमानजीके आगे किसीने एक हरा नारियल फोड़ा है, जिसके खोखले वहाँ पड़े हैं, और पड़ा है गिरीका एक टुकड़ा। इस उद्देश्यसे, कि कोई न कोई मनुष्य वहाँ दिखाई देगा, हमारे सिपाही जवानने उस मन्दिरमें बहुत ढूँढ़-खोज की; पर कुछ लाभ न हुआ। अन्तमें निराश होकर वह वैसा ही धरतीपर लेट गया। इतनेमें पृथ्वी-गर्भसे किसीके बोलने-चलने और हँसनेकीसी आवाज उसके कानमें पड़ी; जिससे वह बहुत विस्मित हुआ और उभककर इधर-उधर देखने लगा।

दूसरा परिच्छेद

वजरङ्गवलीके आसनके नीचे

हमने ऊपर कहा है कि, हमारा सिपाही विस्मित होकर इधर-उधर देखने लगा। यह ठीक है। परन्तु पहले पहल जब कि, उसके कानमें वे शब्द पड़े, उसको यह निश्चय नहीं हुआ कि, वे जमीनके अन्दरसे ही निकल रहे हैं। पहले तो उसे यही शंका हुई कि, हमने यह जो ध्वनि सुनी, सो सच्ची है. अथवा केवल उसका मिथ्या भास ही हुआ है। इसके बाद उसने यह भी समझा कि, यहीं निकट, कहीं आस-पास, कोई धीरे-धीरे बोलता होगा। इसलिये बिलकुल स्तब्ध होकर उसने आहट ली। पर कुछ भी सुनाई नहीं दिया। इसके बाद उसने सोचा कि शायद मन्दिरके बाहर, आसपास, कोई बोलता हो, इसलिये वह बाहर गया। मन्दिरके आस-पास, दस-दस, पाँच-पाँच कदमोंपर, चुप खड़ रहकर उसने आहट ली। वहाँ सिर्फ उसके घोड़ेके फुड़कनेकी आवाज़ ही सुनाई दी, अथवा हवाके झोंकोंके साथ यदि कोई जलविन्दु उन बुझते हुए पलीतोंकी ज्योतियोंपर आकर गिरते थे,

ता उनसे भी 'निनि' आवाज निकलती थी। बस, उसके सिवाय और कोई भी शब्द उसके कानोंमें नहीं पड़ा। उसने बड़ी सावधानीसे एक दो बार ठिठकते ठिठकते, आहट लेते हुए, उस मन्दिरके आसपास परिक्रमा की। पर कोई दिखाई नहीं दिया। अतएव उसको पूर्ण विश्वास हो गया कि, मन्दिरके आसपास कोई है नहीं, इसलिये हमारे कानोंमें जो आवाज पड़ी है, वह अवश्य ही कल्पनाका खेल है। क्योंकि उसने जिस प्रकार मन्दिरके बाहर प्रदक्षिणा की थी, उसी प्रकार उसके भीतर भी चारों ओर दीवालोंको पकड़कर परिक्रमा कर डाली परन्तु कोई चीज उसे दिखाई नहीं दी—हाँ, एक कोनेमें धूनी बुझी हुई पड़ी थी। शायद उसके अन्दर आग भी गड़ी थी। इसके सिवाय दो-एक चिलमें, एक लोटा, एक चिमटा, इत्यादि भी वहाँ पड़ा था, पर सिपाहीका उस ओर ध्यान नहीं गया। उसका सारा ध्यान तो इसी एक बातकी ओर था कि, यह शब्द कहाँसे आता है ? उसके कुछ समझ ही न पड़ने लगा कि अब वह क्या करे, जिस समय वे शब्द उसके कानोंमें पड़े थे—अथवा उनका भास हुआ था—उस समय उसने यही समझा था कि, कोई मनुष्य बोल रहा है, परन्तु अब, जब कि उसने देखा कि, इतनी ढूंढ-खोज करनेपर भी उसका कुछ पता नहीं चलता, तब उसका मन बड़ी दुविधामें पड़ गया। एक बार तो उसके मनमें आता कि, मैंने शब्द तो अवश्य ही सुने हैं, और दूसरी बार फिर सोचता कि, शायद शब्द सुननेका मिथ्या ही भास हुआ हो। हमारा मन चूंकि अत्यन्त क्षुब्ध हो रहा था, इस कारण यह भी हमारी ही कल्पनाका एक कौतुकमात्र था। इस प्रकार मनकी द्विविधा-त्रिविधा स्थितिमें वह यह सोच नहीं सका कि, अब आगे वह क्या करे। अत्यन्त क्षुब्ध हो जानेके कारण उससे चुप बैठे भी नहीं रहा जाता था। अब उसका मन इसीमें लगा कि, कब सुबह हो, और कब मुझे यह मालूम हो कि मैं कहाँ आ गया हूँ। परन्तु इधर मनकी यह उद्विग्नता भी उसे कष्ट देने लगी। अन्तमें जब कोई विचार न सूझा, तब फिर वह मन्दिरमें आकर पड़ रहा। सो इस हेतुसे कि, फिर शायद वही ध्वनि

कानोंमें सुनाई दे। बड़ी उत्सुकताके साथ उसने कान लगाये, पर कुछ भी सुनाई न दिया। हॉ, छन-छन करके कुछ बजानेकी आवाज अवश्य कानोंमें पड़ी, पर वह कुछ चकित करने योग्य आवाज न थी। हॉ, इसपे हमारे सिपाहीके मनमें एक प्रकारकी शंका फिर आ गई, और उसने फिर वही पूर्वकी आवाज सुननेके लिए अपने कान बिल्कुल जमीनतकमें भिडा दिये, पर फिर उस मनुष्यकी आवाज उसे बिल्कुल ही सुनाई नहीं दी। हॉ, जैसा कि ऊपर बतलाया है, दो चार बार "छन-छन" की आवाज जरूर आई। बार-बार करवट बदलकर, और स्थान-परिवर्तन करके उसने शब्द सुननेका प्रयत्न किया। पर आसपास, कहीं भी उन सुने हुए शब्दोंका पता नहीं चला, तब उसको विश्वास हो गया कि, हो न हो, वे शब्द पृथ्वीके अन्दरसे ही निकले होंगे, क्योंकि वे शब्द लेटे हुए ही उसके कानोंमें पड़े थे। परन्तु जब मन्दिर-की सम्पूर्ण जगह उसने खोज डाली, और वे शब्द फिरसे उसके कानो-में नहीं पड़े, तब यही सोचा कि, उसकी कल्पनाने ही उसे इतने चक्करमें डाला। इसलिये जब यह निश्चय हो गया कि अब पता लगानेका और कोई मार्ग ही नहीं रहा, तब बेचारा बिल्कुल निराश होकर यह सोचने लगा कि, अब यहासे कूच कर दिया जावे। पर साथ ही यह भी मनमें आया कि, रातमें कहीं भटक न जावें। जिस कामके लिये गये थे, सो तो पूर्ण हो गया, अब हमें समयपर स्थानपर पहुँचना ही चाहिये, नहीं तो उलटे हमारी ही खोज शुरू होगी और यदि भटकते-भटकते अचानक किसीके हाथमें पड गये, तो और आफत आवेगी। सब किया-कराया व्यर्थ जायगा; और अगला विचार भी पूरा न हो सकेगा। यह मन्दिर बिल्कुल निर्जन जान पड़ता है, पर रातमें यहाँ कोई लोग आते अवश्य हैं, नहीं तो यह ताजा फूटा हुआ नारियल और ये जलते हुए पलीते कहासे आते। इत्यादि अनेक विचार हमारे सिपाही जवान-के मनमें आने लगे। उसने यह भी सोचा कि, यहाँपर जो लोग एक-त्रित होते होंगे, वे क्या हमारे ही समान होगे? हमारे ही ऐसे विचार उनके भी होंगे? यही दृढ़ता क्या उनमें भी होगी? यदि ऐसा ही हो,

तब क्या करना है ! अपने धर्म, अपनी जातिके दुश्मनों, अपने देशके शत्रुओं और गो-ब्राह्मणोंपर अत्याचार करनेवालों पर कठोर शासन करनेकी यदि उनमें भी ऐसी ही इच्छा हो, तो फिर और क्या चाहिये ? हा ! क्या आज हमारा सारा शौर्य, वीर्य और धैर्य नष्ट हो गया ? भीष्म, द्रोण, कर्ण, अर्जुन, भीम आदि वीरोंने जिस भूमिमें जन्म लिया वह भूमि क्या आज वन्ध्या हो गई ? उसमें एक भी कुलदीपक वीर पुरुष उत्पन्न नहीं होता ? हाँ, हाँ, मुझे तो यदि अपना घर द्वार छोड़नेकी भी नौबत आ जावे, तो मैं छोड़ दूँगा—और एक प्रकारसे छोड़ ही दिया है—पूर्णतया छोड़ दूँगा। पिताजीको मेरा कार्य, मेरे विचार, मेरा कुछ भी पसन्द नहीं है और मुझे भी उनकी कोई बात पसन्द नहीं। वे कहते हैं कि, हम उन दुश्मनोंके ही अन्नसे पलते हैं, उनके ताबेदार हैं, जिस तरह वे चलावें, उसी तरह चलना चाहिये। उनके विरुद्ध कोई भी काम न करना चाहिये। खैर ! उनके अन्नसे पलते हैं ! कहाँसे लायें वे अन्न ? अन्न उनके बापका है ? देश हमारा है, द्रव्य हमारा है, जमीन हमारी है, सब कुछ हमारा है ! हम अपना खाते हैं—फिर भी ये बुड्ढे लोग कहते हैं कि हम उनका अन्न खाते हैं ! वाह ! वाह ! ये दुष्ट लोग हमारा जगह-जगह अपमान करें, हमारे धर्ममें हस्तक्षेप करें, हमको विधर्मी बनानेके लिये हमपर खुल्लम-खुल्ला जुल्म करें, हमारी स्त्रियोंका अपमान करें, हमको स्थान-स्थानपर नीचा दिखावें, सबके देखते हुए गोवध करें, और ये सब अत्याचार और अन्याय हम हिन्दू—आर्य—ऋषियोंकी सन्तान, चुपकेसे देखते रहें ? इससे तो यही अच्छा है कि, संसारसे हमारा अस्तित्व ही उठ जावे ! फिर भी देखो—हमरे ही बाप, दादा, चाचा, मामा हमको ही उद्दण्ड, अविचारी, मूर्ख उपद्रवी कहकर बुरा-भला कहते हैं—कहते हैं कि क्यों हमारे घरमें जन्म लिया और यदि पूछो कि, हमारा अपराध उसमें क्या है ? तो यही कि, इन दुष्टोंका अत्याचार हमसे सहन नहीं होता ! इनके अत्याचारसे अपने देश, अपनी जाति, अपने धर्म और सारी प्रजाकी रक्षा करनेके विचार मनमें आते हैं, और उनको हम डकैकी

चोट प्रकट करते हैं, तथा इसी प्रकारके और भी प्रयत्न करते हैं—बस, यही हमारे अपराध हैं; और इन्हीं अपराधोंके लिये हमारे बाप, दादा हमको गालियाँ देते हैं। धमकाते हैं कि, घरसे निकाल देंगे! निकाल दो न घरसे! मेरे समान सभी नवयुवक यदि अपने-अपने घरसे निकाल दिये जायँ; और फिर वे सब एक जगह आकर एकत्रित हो जायँ, तब तो क्या ही उत्तम बात हो....

बस, इसी प्रकारके विचारोंसे हमारे सिपाहीके मस्तिष्कको चक्करमें डाल रखा था। मनमें—उसमें भी अत्यन्त क्षुब्ध होनेवाले मनमें—जब मनुष्यके प्रिय-विचार आने लगते हैं, तब फिर उनका कोई ठिकाना नहीं रहता। एकके बाद एक आते ही चले जाते हैं। बस, यही दशा हमारे सिपाहीकी इस समय हो रही थी। अनेक विचारोंने उसे पूर्णतया अपने कब्जेमें कर लिया था। उसका सम्पूर्ण ध्यान एक ही ओर लग रहा था। उस समयके उसके हाव-भाव देखने योग्य थे। प्रत्येक क्षुब्ध मनुष्यके मनोविकार, उस समयके उसके हाव-भावोंमें, स्पष्ट दिखाई देते ही हैं। मनोविकारोंके अनुसार ही उसके हाथ-पैर आदिकी चेष्टाएँ भी होने लगती हैं। हमारे सिपाही जवानकी भी उस समय वही दशा हुई। उसकी भौंहें ऊपर चढ़ती, फिर सकुचित होतीं, वह बार-बार अपनी तलवार उठाता, इधर उधर घुमाता, वार करने लिए तैयारसा होता, फिर नीचे रख देता। उपर्युक्त विचारोंके आनेपर अन्तमें, जब उसके मनमें यह विचार आया कि, "दुष्टोंके जुल्मसे अकुलाये हुए हमारे समान सन्तप्त नवयुवक, यदि अपने अपने घरोंसे निकाले जाकर एक जगह एकत्र हो जावें, तो कितना भारी काम हो जावे" तब उसके मनको एक प्रकारका असीम आनन्द हुआ। वास्तवमें इस प्रकारके युवक-समुदायके एकत्र हो जानेपर, जिस महान् कार्यके होनेकी भावना उसके मनमें थी, उसका सजीव चित्र उसकी आखोंके सामने आ गया। वह चित्र जिस समय उसकी आँखोंके सम्मुख आया, वह सामनेकी—बजरंगबलीकी—मूर्त्तिकी ओर देख रहा था। मानों उसने यह पूछनेके उद्देश्यसे ही कि, हमारे इस चित्रमें क्या कुछ कमी है, उस ओर अपनी दृष्टि लगाई थी।

अथवा जैसे उसका वह चित्त उस समय बजरंगबलीके शरीरपर ही अंकित हुआ है और उसीको वह ध्यानपूर्वक देख रहा हो। इस प्रकार वह देख रहा था कि, इतनेहीमें एकाएक वह चमक उठा, और उसके मुँहसे ये शब्द निकल पड़े कि, "अरे! यह क्या!" उस वक्त वह इतना घबड़ासा गया कि, एकदम उठकर खड़ा हो गया, और भय तथा आश्चर्यमें उसका मुख मंडल व्याप्त हो गया। उसने अपनी आँखें फाड़-कर इस प्रकार फिराई, और अपनी तलवार ऐसे सँभाली कि, जैसे किसी बड़े संकटमें अपनी रक्षा करनेके लिये कोई आतुर हो उठे।

एकदम यह क्या हुआ। वह एकाएक बड़ी विचित्रताके साथ बजरंगबलीकी मूर्तिकी ओर देखने लगा! बात यह हुई कि वह मूर्ति धीरे-धीरे आगेकी ओर खिसक रही थी! यह बात जब पहले-पहल हमारे सिपाही जवानकी नजरमें पड़ी, तब, उसका अत्यन्त चकित होना बिल्कुल स्वाभाविक था। जिस पाषाणमय मूर्तिपर आज कई सौ वर्षसे बराबर सिन्दूरका लेप हो रहा था, वह आज एकाएक आगे खिसकने लगी! ऐसे चमत्कारको देखकर कौन धैर्यशाली आश्चर्य-चकित न होगा! यह क्या संकट है! यह प्रश्न किसके मनमें उत्पन्न न होगा! कौन ऐसा व्यक्ति होगा जो कि, हमारे सिपाही जवानके समान ही अपनी तलवार इत्यादि सँभालकर एकदम खड़ा न हो जायगा!

वह मूर्त्ति सिर्फ चावल चावलभर आगे खिसक रही थी। इस कारण उस सिपाहीको—उसका मन कुछ स्थिर होते ही—ऐसा मालूम हुआ कि, यह भी मनका मिथ्या भास होगा, अथवा हमारी कल्पनाका ही खेल होगा। परन्तु वह मूर्ति बराबर आगे ही आ रही थी, जरासी भी हिल्ती-डुल्ती न थी, और न आगेको झुकती थी! बिल्कुल सीधी, अत्यन्त मन्द गतिमें आगेको खिसक रही थी। यह है क्या बात! क्या इस मूर्तिमें चैतन्यका संचार हो गया! अथवा इसकी ओटमें खड़ा हुआ कोई इसे आगे खिसका रहा है! सो भी नहीं हो सकता। हमने कितनी बार इसके आसपास परिक्रमा करके आगे पीछे, सब ओर देख लिया है, कोई भी दिखाई नहीं दिया। न किसीके होनेकी संभावना ही

दिखाई दी। एक तो वे बाहरके पलीते और दूसरी यह कोनेकी धूनी— बस, इन दोके अतिरिक्त मनुष्यका तो यहाँ कोई चिन्ह भी दिखाई नहीं दिया। ऐसी दशामें, अब एकाएक हनुमानजीकी यह मूर्त्ति कौन खिसकावेगा! और क्यों! इस प्रकारके अनेक प्रश्न उसके मनमें आये। किन्तु सन्तोष जनक कोई भी उत्तर सूझ नहीं पड़ा। अपनी जगहपे उठकर यदि आगे बढ़कर देखें, तो उसके लिए साहस ही नहीं होता था। अब बाहरके दो पलीतोंमेंसे सिर्फ एक ही कुछ-कुछ प्रकाश दे रहा था। अब वह भी बुझने लगा, और प्रकाशकी जगह गन्दा धुआँ छोड़ने लगा। प्रकाश बिल्कुल ही नहीं रहा। अतएव हनुमानजीका खिसकना भी अब दिखाई नहीं पडने लगा। सिपाही बेचारा चुपचाप वैसा ही खडा रहा। करता ही क्या! इतनेमें हनुमानजीके पीछे कुछ उजेलासा दिखाई दिया, और ऐसा जान पडा कि, मूर्त्ति अपने स्थानसे हाथ-सवा हाथ आगे हट आई। यह उजेला कहाँ से आया! जब हनुमानजी हाथ सवा हाथ अपनी जगह छोड़कर आगे आ गये थे, तब जो जगह पीछे खाली हो गई, उसीसे तो यह उजेला बहुत हो सो भी नहीं, सिर्फ एक झलकमात्र थी, जो कि नीचेसे ऊपरकी ओर आती हुई दिखाई दी थी। हमारे सिपाही मित्रकी बुद्धि बड़े चक्करमें पडी। कोई न कोई बड़ा विचित्र भेद इस जगह है, या भूतोंकी लीला कहें, तो हनुमानजीके सामने वह कैसे हो सकती है!

भूत-पिशाच निकट नहिं आवें।
महावीर जब नाम सुनावें॥

तब तो अवश्य ही यह कोई बड़ा भारी रहस्य है इस रहस्यका भेद हमको अवश्य ही पाना चाहिए। यह सब सोच करके सिपाहीने अपनी तलवार सम्हाली; और आगे कदम रखा। अब उसका यही निश्चय दिखाई दिया कि, सच्ची बातको जाने बिना वह नहीं ठहर सकता। सिपाही, एक एक कदम आगे बढ़ते हुए, हनुमानजीके बिल्कुल पास पहुँच गया, और धीरेसे मूर्त्तिके स्कन्धपरसे देखा, तो एक चौकोना छेद दिखाई दिया, जिसमे एक दीपककी धीमीसी रोशनी आ रही थी।

विषयमें अनेक लोगोंने अनेक अनुमान किये हैं। जो हो, इतना निश्चय है कि यह किला बीजापुरके बादशाहोंके समयका नहीं है, अथवा पहले जो ब्राह्मण राजा हो गये, उनका बनवाया हुआ भी नहीं है, और उनके पहले जो मुगल शासक दक्षिणकी ओर चढ़ाइयाँ करके गये थे, उनके समयका भी नहीं है। सच तो यह है कि, देवगढ़के समान, जो अत्यन्त पुराने मराठोंके किले हैं उन्हींमेंसे एक यह भी है। किलेके नीचे सुल्तानपुर नामक एक छोटासा गाँव था, उसके लोग किलेके विषयमें भिन्न-भिन्न दन्तकथाएँ बतलाया करते थे, जिससे यह मालूम होता था कि, यह किला पाण्डवोंके समयका बना हुआ है। वहाके लोगोंका कथन है कि पाण्डवोंने अपने अज्ञातवासके समयमें अपने छिपनेके लिये जो अनेक सुरक्षित स्थान पहाड़ोंमें बनाये थे, उन्हीं-मेंसे यह किला भी है, और इसका बहुत प्राचीन नाम भीमगढ है। इसके सिवाय इस किलेका अकार भी अन्य पहाडी, कृत्रिम गुफाओंकी ही तरह बना हुआ है। इस कारण सर्वसाधारण लोगोंका विश्वास स्वाभाविक ही जम गया कि, यह पाण्डवोंका ही किला है। किलेका सम्पूर्ण स्वरूप पहाड़के अन्दर इस प्रकार छिप जाता है कि, दूरसे देखनेवालेको वह किला मालूम ही नहीं होता। अलाउद्दीनसे लेकर आगे जितने शासकोंने उसे अपने अधिकारमें रखा, सभीने अपनी अपनी इच्छाके अनुसार किलेकी मरम्मत करवाई, कोर्ट बनवाये, इस-लिये उसका रूप भी पहलेसे बहुत कुछ परिवर्तित हो गया है। इसमें सन्देह नहीं कि, किलेकी अत्यन्त प्राचीनताके विषयमें ऊपर जिस दन्त-कथाका उल्लेख किया गया है, वह परम्परासे ही चली आती होगी। कुछ भी हो, इतना कहनेमें कोई प्रत्यवाय नहीं कि, यह किला मुगलोंके शासनमें नहीं बनवाया गया है, किन्तु महाराष्ट्रके अत्यन्त प्राचीन कालके राजवंशोंमेंसे किसी महापुरुषने बनवाया होगा। किलेके दो-तीन दरवाजोंपर कुछ शिलालेख टूटी-फूटी दशामें मौजूद हैं जिनपर एक विचित्र प्रकारकी लिपि लिखी हुई है। उससे भी हमारा ऊपरका ही अनुमान दृढ़ होता है। इस किलेका प्राचीन नाम यद्यपि भीमगढ है,

पर जिस समयमें हम अपने पाठकोंके साथ, इसे देखने जा रहे हैं, उस समय इसे सुल्तानगढ़ ही कहते थे, और कागजपत्रोंमें भी इसे "सुल्तानगढ़का किला" ही लिखते थे। यह नाम भी बहुत पुराना है। पर यह नहीं कहा जा सकता कि, किस सुल्तानने इसे जीतकर इसका यह नाम रखा। किसी किसीका कथन है कि, बीजापुरकी गद्दीके मूल संस्थापक यूसुफ आदिलशाहने ही इस किलेको जीतकर, इसका नाम सुल्तानगढ़ तथा नीचेके गाँवका नाम सुल्तानपुर रखा। किसी किसीका कथन है कि, मुगलोंने ही अति प्राचीन कालमें ये नाम रखे।

इस सम्पूर्ण इतिहासके यहाँ बतलानेका वास्तवमें यही कारण है कि, इस किलेका सुल्तानगढ़ नाम यद्यपि मुसल्मानी जान पडता है; पर वास्तवमें वह किला बहुत पुराना था, और इस कारण बहुत मजबूत भी था। स्वयं मुगलोंने जैसे किले बनवाये, अथवा उनके अन्तर जो बनवाये गये, उस प्रकारका यह किला केवल दिखाऊ नहीं था। यह अपनी भव्यता और मजबूतीके कारण अपने आसपास ४०-५० कोसकी दूरीतक बहुत बडा प्रभाव रखता था। इसके आसपास पहले दो तरफ पहाड़का ही हिस्सा था। जिसका एक बहुत बड़ा भाग देखकर ही पहलेपहल यह किला तैयार करवाया गया। बाकी दोनों तरफ यद्यपि थोड़ा-बहुत उतार और फिर सपाट जगह थी, परन्तु जंगल और झाड़ियाँ उस ओर भी इतनी घनी विस्तृत थीं कि पाससे देखनेवालेको सारा जंगल ही जंगल दिखाई देता था।

सुल्तानपुर एक बहुत छोटा गाँव था—बस, लगभग सौ-सवासौ घर होंगे। जन-संख्या लगभग चार-पाँच सौके होगी। किलेके सहारे यह गाँव बसा था। गाँवकी नम्बरदारी किलेदारके ही हाथमें थी। परन्तु गाँवके सच्चे नम्बरदार उस समय पटेल लोग होते थे। गाँवका कोई भी मामला होता, आवजी नामक पटेलके यहाँ अवश्य जाता था। किलेपर चाहे कोई आदमी आवे, और चाहे वहासे कोई जावे, उसको आवजी पटेलके मकानपर जाकर सब समाचार अवश्य ही बतलाना चाहिये। इसके बाद फिर वह चाहे जहाँ जावे। यह एक

प्रकारका नियम सा बन गया था। आवजीके घरका हुक्कापानी जिसे पसन्द न हो, अथवा जो उनकी अप्रसन्नता सम्पादन करना चाहता हो, वह भले ही आवजीका घर बचाकर किलेपर चला जावे; और उनसे छिपकर किलेसे वापस भी चला जाय। परन्तु सच तो यह है कि, आवजीके घरकी गप्पों और उनके घरके हुक्केपानीका ऐसा कुछ आकर्षण था कि सुल्तानपुर गाँवके आसपास जो भी कोई आ जाता, वह फिर आवजी पटेलके घर गये बिना नहीं रहता था।

पिछले परिच्छेदमें जिस रात्रिका वृत्तान्त बतलाया गया है, वह रात अब बीत चुकी थी, और सूर्यनारायणने अपनी प्रकाशमय किरणोंको सुल्तानगढपर और सुलतानपुरके आसपासके जगलके ऊँचे-ऊँचे वृक्षोंके शिखरोंपर फैलाना प्रारम्भ कर दिया था। सासवड़ गाँवकी ओर यद्यपि उस रातको इतनी भारी वृष्टि हुई थी, पर इधर सिर्फ बादलोंके घिर आनेके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं हुआ था। सो भी सुबहके करीब ऐसी तेज हवा शुरू हुई कि, जिसने बादलोंको बिल्कुल हटा दिया, और आकाश करीब-करीब सफा कर दिया। अतएव उस दिन प्रभातकाल्की शोभा बहुत ही सुन्दर दिखाई देती थी और उस समय बिछौनेपर पड़े रहनेका कोई मौका नहीं था। परन्तु पिछले दिन रातको आवजी पटेल किसी कारणसे बहुत देरतक जगते रहे थे, अतएव आज वे अब भी, घुटनोंतक ऊ चे गद्दे पर पड़े हुए, खुर्राटे ले रहे थे। इतनेमें उनके दरवाजेके पास आकर एक नौकर चिल्लाकर कहने लगा—"पटेल साहब, किलेसे सुभान आया है, सुभान!" इधर सुभान भी बाहरकी ओर चिन्तातुर खड़ा था।

आवजी पटेलका नौकर जोर जोरसे और घबराया हुआसा पुकार रहा था, और सुभानका चेहरा भी चिन्तासे व्याप्त जान पडता था, इससे स्पष्ट है कि, सुभान आज किसी न किसी महत्वपूर्ण कार्यके लिये आया था। सुभान यद्यपि आज बिल्कुल गुप्तरूपसे ही आवजीके घर आया था, परन्तु फिर भी लोगोंको उसके आनेका समाचार मिल ही गया था। एक आदमीने सुभानको ऊपरसे जल्दी-जल्दी उतरते और आवजीके

मकानके सामने ठहरते हुए देखा; उसदे दूसरेसे कहा, दूसरेने तीसरेसे कहा,—इस प्रकार उसके आनेका समाचार फैलता ही गया। इधर आवजीको जगानेके लिए भी शोर मच रहा था। फिर क्या पूछना है! बीसियों आदमी किलेपरका समाचार सुननेके लिए आवजीके अहातेमें जमा हो गये, इतनेमें आवजीकी निद्रा भी कुछ दूर हुई; और उन्होंने चिल्लाकर पूछा कि, "क्या गड़बड़ मचा रखा है!" यह सुनते ही सुभान आगे बढ़कर बोला:—

"पटेलजी, आपको सरकारने ऊपर बुलाया है। जल्दी चलिये।"

पटेलजी सुभानके उपर्युक्त शब्द सुनते ही "क्या है! क्या है रे सुभान!" कहते हुए तुरन्त उठे और बोले—"नाना साहबका कुछ समाचार मिला! कोई कुछ खबर लेकर आया! अरे, बोल जल्दी। गूँगेकी तरह क्या देखता है। कोई आया। कोई आया! बोलता क्यों नहीं!"

"पटेल साहब, आप यह क्या कहते हैं। कोई आवेगा, तो क्या आपसे मिले बिना ऊपर चला जायगा! न कोई आया और न कोई गया। ऊपर पहुँचनेके पहले ही आपको सब खबर मिल जायगी। आप ऊपर चलते हैं! शीघ्र चलिये। बड़े सरकाने मुझसे कहा है कि, आवजी पटेलको जल्दी साथ ही ले आओ।"

बाहर जो लोग जमा हो गये थे, उन्होंने यह बातचीत सुनी, और उनमेंसे एकदोकी यह इच्छा भी हुई कि बीचमें ही बोलकर कुछ पूछ-ताछ करें। तदनुसार उन्होंने कुछ पूछा भी, परन्तु आवजी पटेलने उनको एक ऐसी डाट बतलाई कि, जिससे उन बेचारोंको अपनी जिज्ञासा दबानी पड़ी! सुभानकी अन्तिम बात सुनकर आवजी पटेल कुछ चिन्ताग्रस्तसे दिखाई दिये। इसके बाद कुछ अश्लील शब्द मन ही मन कहकर बोले—"चल, चल, आता हूँ। परन्तु जंगल तो हो आऊँ, तबतक तू जरा हुक्का भरनेको तो कह दे। नहीं तो तू ही भर ला—अरे, ये कौन निठल्ले लोग जमा हुए हैं! यदि कुछ काम बतलाया जाय, तो कोई भी करनेको तैयार न होगा, परन्तु देखो यों ही कैसे दौड़ते

चले आ रहे हैं।" इस प्रकार कुछ बक-झककर सवारी लोटा लेकर जंगल चले गये। आवजीके जाते ही लोगोंमें जरा अधिक दम आ गया। बहुतसे लोग सुभानके आसपास जमा हो गये, और एक साथ ही सब मिलकर प्रश्न करने लगे। सबके पूछनेका मतलब एक ही था। दो बातोंपर विशेष जोर था—एक "नाना साहबको कुछ खबर मिली।" दूसरी "बड़े सरकारकी तबियत कैसी है।"

दोनों बातोंके उत्तर सुभानने इस प्रकार दिये—"हमें कुछ नहीं मालूम। लोग गये हैं, वे जब लौटेंगे, तब पहले गावमें ही आवेंगे, पीछे किले पर जायँगे। इसलिए जो खबर आवेगी, पहले गावमें ही आवेगी, पीछे किलेपर पहुँचेगी। बड़े सरकारकी तबियत जैसी थी, वैसी ही है। उसमें कोई विशेष अन्तर नहीं।" परन्तु इस प्रकारके उत्तरोंसे उन चतुर लोगोंको सन्तोष थोड़े ही हो सकता था, उनको मुख्य बात तो और ही पूछनी थी। ये तो ऊपरी बातें थीं। मुख्य प्रश्न उनको यही करना था कि, आवजी पटेलको इतनी जल्दी क्यों बुलाया है। इतनी जल्दीमें बुलानेका कारण क्या है। यह बात मालूम हुए बिना उन लोगोंको सन्तोष नहीं हो सकता। परन्तु सुभान भी उनको ठीक-ठीक उत्तर देकर सन्तुष्ट करनेमें समर्थ नहीं था, क्योंकि स्वयं उसको भी यह बात मालूम न थी कि, आवजी पटेलको किलेपर क्यों बुलवा भेजा है। हाँ, उसने अपने मनमें कुछ न कुछ अनुमान अवश्य कर लिया था, परन्तु वह उसे लोगोंपर प्रकट नहीं करना चाहता था। इसके सिवाय, लोगोंको वह यह भी मालूम होने देना नहीं चाहता था कि, उसको इस विषयमें कुछ भी मालूम नहीं है। लोगोंकी दृष्टिमें अपना कुछ न कुछ महत्व वह अवश्य रखना चाहता था, और इसी कारण उनके सामने उसने यह प्रकट किया कि, उसे कुछ न कुछ मालूम अवश्य है, पर वह लोगोंको बतलाना नहीं चाहता, अस्तु।

इतनेमें आवजी पटेल भी दिशा-फरागतसे वापस आ गये। इधर सुभानने हुक्का तैयार कर रखा था। उसे जल्दी जल्दीसे, परन्तु बड़ी शानके साथ, पीकर एकत्रित लोगोंको फिर दो-चार गालियां सुना दीं,

और मुँशीजीको भी कुछ काम-वाम बतलाया। इतनेमें वहाँ गाँवके जोशीजी आ गये, उनसे भी कुछ उलहना सा देते हुए कहा—'जोशीजी आपका तो वह सब गणित-वणित व्यर्थ गया। बहुत कुण्डलिया-उण्डलियाँ खचाईं, पर कोई लाभ न हुआ! नाना साहबका कुछ भी पता न चला।" यह कहकर पटेलने अपने मुखकी ऐसी चेष्टा बनाई कि, जैसे जोशीजीको उन्होंने खूब शर्मिन्दासा किया हो! इसके बाद फिर एक बार हुक्का गुड़गड़ाया; और अपने भुजवण्डोपर हाथ फेरा। इसके बाद अपनी पुरानी चाककी पगड़ी और अगरखा पहनकर और चौड़ी किनारी का डुपट्टा गलेमें डालकर तथा हाथमें अपनी लम्बी, टेढी तलवार लेकर वे सुभानके साथ किलेपर चले।

इतनेमें सूर्यभगवान दो-तीन हाथ ऊपर चढ आये थे। पटेलजीको यह आशा थी कि, एकत्रित लोगोंमेंसे कोई न कोई यह कहेगा कि, हम भी साथ चलते हैं; और इसी आशासे उन्होंने चारों ओर दृष्टि भी फेंकी। आस्तीनें जरा ऊपर चढ़ाई, तलवार इस हाथसे उस हाथमें ली, उस हाथसे फिर इस हाथमें ली; और यह कहकर कि, श्यामा, अरे यहाँ बैठा क्या करेगा! चल न हमारे साथ। वहाँ कुछ काम लगेगा, तो अच्छा होगा नीचे भेजनेको—कुछ नहीं—चल, चल" श्यामाके गलेमें अपना हाथ डाला। श्यामा सिर्फ चौदह-पन्द्रह वर्षका एक लड़का था। वह भी पटेलजीके साथ जानेकी इच्छा रखता था। अतएव तुरन्त ही चल दिया। पटेलजी, सुभान और आगे आगे श्यामा—तीनों जने आगे चले, और पीछे-पीछे गाँवके लोग। परन्तु गाँव-के बाहरतक एक-एक, दो-दो करके सब लौट पड़े। किलेकी चढाई तक कोई भी न रहा। यहाँतक पटेलजीकी जीभ खूब चलती रही, पर आगे कुछ कम हो गई। हाँ, मार्ग उनके रोजके आने-जानेका ही था; अतएव कुछ कठिनाई नहीं जान पड़ी। अस्तु। मार्गमें उनकी जो बातचीत हुई, वह पाठकोंके जानने योग्य है, अतएव यहाँपर दी जाती है।

"क्यों रे सुभान, बड़े सरकार तो नाना साहबपर अवश्य ही प्रसन्न होंगे, अन्यथा उनकी अनुपस्थितिमें वे इतने बीमार क्यों हो जाते?"

"वाह पटेलजी! आप यह क्या पूछते हैं? नाना साहबका कोई भी कार्य बड़े सरकारको पसन्द नहीं आता। वे सदैव उनसे यही कहा करते—तू यदि हमारे घरमें पैदा ही न हुआ होता, तो बहुत अच्छा होता। तूने हमारे कुलका सत्यानाश करनेके लिये जन्म लिया है। तू कभी न कभी अपने सारे घर-बारको बरबाद किये बिना न छोड़ेगा। मैं तुमसे कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहता। तुझे देखते ही मेरी देह जल उठती है।" हॉ, जिस दिनमें वे चले गये हैं, उस दिनमें अवश्य ही उनको हाय सी पैठ गई है। घड़ी घड़ीपर पूछते रहते हैं,—'अरे कोई आया उसका पता लगाकर? कहॉ है वह? कुशलमें तो है?" एक घड़ी भी नहीं मानते, इसी प्रकार पूछते रहते हैं।'

"क्यों रे सुभान नाना साहब जिस दिन गायब हुए, उसके पहले दिन रातको क्या कोई विशेष बात हुई थी?"

"हॉ हॉ, पटेलजी, उस दिन बड़े सरकारने न जाने क्या क्या कहा; और इसीलिए तो नाना साहब नाराज होकर चले गये।"

"क्या? क्या? बड़े सरकारने ऐसी कौनसी बात कही कि जिससे वे घर छोड़कर न जाने कहॉ चले गये?"

'वाह! पटेलजी, मालूम होता है, इस विषयमें आपने तो कुछ सुना ही नहीं है! यह तो आप जानते ही हैं कि, नाना साहब मुसल्मानोंका नाम सुनते ही चिढ जाते हैं। क्या वहॉसे सारा किस्सा बतलाना पड़ेगा? आप तो ऐसे पूछते हैं, जैसे कुछ जानते ही न हों!"

"अरे, ऐसी बात नहीं है। मुझे आज तकका सारा हाल मालूम है। तू सिर्फ इतना ही बतला कि, नाना साहब जिस दिन गये, उस दिन क्या बात हुई?"

"अजी, वही तो मुख्य बात है। बादशाहके यहॉसे एक पोशाक और खरीता आया था कि नाना साहब अब बड़े हुए हैं, और उनकी वीरताकी अनेक बातें हमारे कानोंमें आई हैं, सो उनको वर्ष-दो-वर्षके लिये दरबारमें, हुजूरकी सेवामें, भेज दो। यदि भेजना हो, तो इस खरीतेको देखते ही भेजो।"

"इस प्रकारका खरीता और वह बढ़िया पोशाक देखकर बड़े सरकारको अत्यन्त हर्ष हुआ, और उनके मुखसे अचानक ये आनन्द-प्रदर्शक वचन निकल पड़े, "इतने दिन जो नौकरी की, उसका आज फल मिला!" इसके बाद तुरन्त ही उन्होंने नाना साहबको बुलवाया। पहले बहुत देरतक तो नाना साहब आये ही नहीं। जब दो-चार बार बुलावा गया, तब कहीं एक बार नाना साहबकी सवारी आई। बड़े सरकारने वह पोशाक उनको दिखलाई, वह खरीता पढ़नेके लिये दिया। परन्तु पोशाककी ओर नजर आते ही नाना साहबके मस्तकमें बल पड़ गये!"

"और खरीता देखकर?" पटेलजीने बीचमें ही पूछा।

"हाँ, खरीता देखकर तो उनका सारा शरीर सन्तप्त हो उठा। होंठ थर-थर काँपने लगे, और स्पष्ट दिखाई दिया कि, उनको अत्यन्त क्रोध आ गया।"

इतने बड़े सरकार उनसे बोले, "यह पोशाक देखी? यह खरीता पढ़ लिया? अब कल तुमको बीजापुर जाना चाहिये। बादशाहकी आज्ञा शिरोधार्य करनी चाहिये। आज कितनी ही पीढ़ियोंसे उनका अन्न खा रहे हैं।" बस इतने ही शब्द बड़े सरकारके मुखसे निकले थे कि, नाना साहबकी ऐसी कुछ दशा हो गई, जो बतलाई नहीं जा सकती। क्या कहूँ—इतना भारी क्रोध तो मैंने जन्मभर किसीको देखा ही नहीं।

चौथा परिच्छेद

बड़े सरकार

सुभानकी बातें सुनकर पटेल साहबने अपने होठोंके अन्दर ही अन्दर इस प्रकारके कुछ शब्द कहकर थोड़ी सी टीका-टिप्पणी की, "सच ही है, इन नवीन लड़कोंको मुगलोंका और बादशाहीका नाम

"वाह पटेलजी! आप यह क्या पूछते हैं? नाना साहबका कोई भी कार्य बड़े सरकारको पसन्द नहीं आता। वे सदैव उनसे यही कहा करते—तू यदि हमारे घरमें पैदा ही न हुआ होता, तो बहुत अच्छा होता। तूने हमारे कुलका सत्यानाश करनेके लिये जन्म लिया है। तू कभी न कभी अपने सारे घर-बारको बरबाद किये बिना न छोड़ेगा। मैं तुमसे कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहता। तुझे देखते ही मेरी देह जल उठती है।" हाँ, जिस दिनसे वे चले गये हैं, उस दिनसे अवश्य ही उनको हाय सी पैठ गई है। घड़ी घड़ीपर पूछते रहते हैं,—'अरे कोई आया उसका पता लगाकर? कहाँ है वह? कुशलसे तो है?" एक घड़ी भी नहीं मानते, इसी प्रकार पूछते रहते हैं।'

"क्यों रे सुभान नाना साहब जिस दिन गायब हुए, उसके पहले दिन रातको क्या कोई विशेष बात हुई थी?"

"हाँ हाँ, पटेलजी, उस दिन बड़े सरकारने न जाने क्या क्या कहा; और इसीलिए तो नाना साहब नाराज होकर चले गये।"

"क्या? क्या? बड़े सरकारने ऐसी कौनसी बात कही कि जिससे वे घर छोड़कर न जाने कहाँ चले गये?"

'वाह! पटेलजी, मालूम होता है, इस विषयमें आपने तो कुछ सुना ही नहीं है! यह तो आप जानते ही हैं कि, नाना साहब मुसल्मानोंका नाम सुनते ही चिढ जाते हैं। क्या वहाँसे सारा किस्सा बतलाना पड़ेगा? आप तो ऐसे पूछते हैं, जैसे कुछ जानते ही न हो।"

"अरे, ऐसी बात नहीं है। मुझे आज तकका सारा हाल मालूम है। तू सिर्फ इतना ही बतला कि, नाना साहब जिस दिन गये, उस दिन क्या बात हुई?"

"अजी, वही तो मुख्य बात है। बादशाहके यहाँसे एक पोशाक और खरीता आया था कि नाना साहब अब बड़े हुए हैं, और उनकी वीरताकी अनेक बातें हमारे कानोंमें आई हैं, सो उनको वर्ष-दो-वर्षके लिये दरबारमें, हुजूरकी सेवामें, भेज दो। यदि भेजना हो, तो इस खरीतेको देखते ही भेजो।"

मैं क्या कोई कलका आदमी हूँ ? तू तो ऐसे बतला रहा है कि, जैसे मैं कोई नवीन ही यहाँ आया हूँ। अरे, ये सब बातें तो नाना साहबकी मुझे मालूम ही है—तू तो यही बतला कि, उस दिन रातको फिर क्या हुआ ?"

"हाँ, हाँ, पटेल साहब ! सब बतलाता हूँ। परन्तु बीचमें यह याद आ गया, सो बतला दिया। मैं कब कहता हूँ कि आपको मालूम नहीं ? अच्छा मैं भूल गया, कहाँतक बतलाया था ?"

"बडे सरकारकी बातें सुनकर नाना साहब बहुत क्रुद्ध हुए…" श्यामा, जो आगे-आगे चल रहा था, बीचहीमें पीछे घूमकर एकदम बोल उठा।

उस लडकेके ये शब्द सुनकर दोनों ही चकित हुए। इससे जान पड़ा कि, वह भी बड़े ध्यानसे उन दोनोंकी बातें सुन रहा था। आवजी पटेलने बड़ी-बड़ी आँखें निकालकर उसकी ओर देखते हुए कहा, "क्योंरे छोकरे, हमारी बातोंमें तू क्यों बीचमें पड़ता है ? शैतान कहींका ! ठहर, बदमाश ! अभी तेरे कान खींचता हूँ। चल आगे, खबरदार, जो हमारी बातें सुनीं !

श्यामा ऐसी धमकीसे डरनेवाला नहीं था। वह बिल्कुल न घबड़ा-कर कुछ दूर तो आगे दौड़ता हुआसा गया, परन्तु फिरसे धीमे-धीमे चलकर पीछे रहनेका ही प्रयत्न करने लगा।

इधर पटेलजी "फिर क्या हुआ ? कहकर सुमानसे आगेका हाल पूछने लगे। अब सुमानको यह घमण्ड हुआ कि, वाह ! देखो, पटेल-जीसे भी अधिक किलेके ऊपरका हाल मुझको मालूम है। इसके सिवाय जो वृत्तान्त वह बतला रहा था, वह उसके मनका था, अतएव वह फिर बड़े प्रेमसे बतलाने लगा—"पटेलजी, नाना साहब अत्यन्त क्रुद्ध हुए, उनके होंठ थर-थर काँपने लगे, और मुंहसे एक शब्द भी न निकला—वे इतने सन्तप्त हुए कि, बोली तो निकली नहीं; परन्तु क्रोधने भरी हुई आँखें नीची करके सिर्फ जमीनकी ओर देखते हुए खड़े रहे। 'हाँ अथवा 'नहीं' कुछ भी नहीं कह सके।"

सुनते ही एक प्रकारका क्रोध आ जाता है, और उनकी आँखें लाल हो जाती हैं।" परन्तु पटेलजीकी यह टीका-टिप्पणी सुभानके ध्यानमें कुछ भी नहीं आई। मानो, जिस पुरुषके क्रोधका वह वर्णन कर रहा था, उस पुरुषकी क्रुद्ध मूर्त्ति उसकी आँखोंके सामने दिखाई दे रही थी, और उसकी ओर वह एकटक देखसा रहा था। उस मूर्त्तिको देखकर उसको मानो एक प्रकारका जोशसा आ गया और वह आगे बोला —

"पटेलजी, मैं आपसे यह निश्चित बात करता हूँ देखिये, हमारे नाना साहबके समान और कोई पुरुष हो ही नहीं सकता। परन्तु बस, इसी एक बातकी उनको ऐसी कुछ चिढ है कि, कुछ पूछो मत। और सो भी छुटपनसे ही। मेरा बाप छुटपनमें उनको खिलाते समय, अथवा घूमनेको ले जाते समय, सदैव चिढ़ाया करता, "नाना साहब, जब तुम बड़े होगे, तब दरबारमें जाकर बढीसी नौकरी करोगे, बड़े-बड़े ओहदे पाओगे, और सरदारोंकी बराबरीपर तुम्हें गद्दी मिलेगी।" जहाँ वे ऐसा कहने लगते, तहाँ नाना साहबका चिढना शुरू हो जाता। वे इतने क्रुद्ध होते कि, कभी-कभी मेरे बापको काट भी लेते थे। बस तभीसे उनका यह हाल है—जहाँ मुगलोंका अथवा बादशाही दरबारका नाम लिया गया कि, वे एकदम भड़के। और जैसे जैसे वे चिढते, वैसे ही वैसे हम सब उनको और भी अधिक चिढ़ाते थे। कोई कहता, बादशाह नाना साहबको अपना दामाद बनावेगा। कोई कहता कि, ये अफजलखाके दामाद होंगे। इस प्रकार कोई कुछ और कुछ कहकर उनको चिढाता, फिर वे क्रुद्ध होकर बड़े सरकार और माईजीके यहाँ जाकर हमलोगोंकी शिकायत करते। बालकपनकी उनकी यह लीला देखकर सबको बड़ा कौतुक होता था। वे सब बातें अब भी मेरी आँखोंके सामने हैं। परन्तु उस समय यह किसीको मालूम नहीं था कि, आगे भी इनका ऐसा ही हाल बना रहेगा। उस समय तो बालककी लीला देखकर सबको कौतूहल होता था। उसमें कोई विशेषता नहीं जान पड़ती थी, पर अब तो कुछ पूछिये ही नहीं · "

"सुभान, यह तू क्या कह रहा है? यह तो सब मुझे मालूम है।

रखेगा, कुछ न कुछ तो दरबारकी सेवा बजा देगा—पर कुछ नहीं—मेरे नसीबमें ही नहीं है। इसके लिये तू क्या करेगा, और मैं क्या करूँगा ? जा—आजसे न मैं तेरा; और न तू मेरा जन्मभरकी खटखट मिटी ! जा, आजसे तेरे लिये दूरसे ही जो कुछ कलंक मुझपर लगता होगा, सो लगेगा। मेरे पास रहनेकी अब तुझे कोई आवश्यकता नहीं।"

आगे वे और भी कुछ कहनेवाले थे, पर इतने हीमें क्रोधके आवेगमें उन्हें मूर्च्छासी आ गयी, और वे धडामसे पृथ्वीपर गिर पडे·· "

"यह आगेका सारा हाल तो मुझे मालूम है।" आवजी पटेल बीचहीमें बोल उठे।

"उनको जब मूर्च्छा आ गई, तब उनको होशमें लानेके लिए नाना साहब दौड़े, और कुछ उपचार किये, पर ज्यों ही उनकी आँखें खुली, त्यों ही नाना साहब उनकी दृष्टिकी ओट हो गये; और रात ही रातमें न जाने कहाँ चले गये।"

'सो सब मुझे मालूम है—यह बीचका हाल नहीं मालूम था, सो सब मैंने तुमसे पूछा—अरे, किलेपर जो कुछ होता है, उसका तिल-तिल सब वृत्तान्त मुझे मालूम होता रहता है। पर उस दिन—हाँ, उस दिनका समाचार कोई बतलाने ही नहीं ··देख !"

"अजी, उस दिनका समाचार किसीको मालूम ही नहीं हुआ—सिर्फ मैं ही उस समय अकेला था—और यदि कोई होता भी, तो बाहर कैसे बतलाता ? और मैंने भी अभीतक किसीसे नहीं कहा देखो पटेलजी। बात रह थोड़े ही सकती है। वह तो किसी न किसी रूपसे फैलेगी ही। नाना साहब जबसे चले गये, बड़े सरकार तबसे बिलकुल बेचैन हैं, उनको वे बहुत चाहते थे, पर वे क्रोधमें आकर चले गये। अजी, उनके रक्त हीमें यह गुण है, वे मान कैसे सकते थे ? किन्तु पटेलजी, अब नाना साहब गये कहाँ ? बड़े जोशमें गये हैं। कुछ साथमें भी नहीं ले गये, सारे कपड़े-लत्ते और सामान, जहाँका तहाँ, रखा है। हाँ, उनकी प्यारी तलवार कहीं दिखाई नहीं देती। अजी और कहाँतक

"फिर ?" पटेलजीने बड़ी आतुरतासे पूछा।

"फिर क्या ? बड़े सरकारने उनकी ओर देखकर बड़ी उद्विग्नतासे कहा, कहो, फिर दो चार दिनमें जाओगे या नहीं ? मुहूर्त वगैरह देखें ? बृहस्पतिवारको बहुत अच्छा मुहूर्त है। देखो, आजतक मैंने तुमको बहुत समझाया, परन्तु तुमने कुछ भी ध्यान नहीं दिया। लड़का समझ कर मैंने भी तुमसे कुछ बहुत कह-सुना नहीं की। पर अब ऐसा नहीं होना चाहिये। अब तुम बड़े हुए। अपनी भलाई-बुराई अच्छी तरह समझने लगे हो। अब इस राज-काजकी तरफ ध्यान देना चाहिये। दरबारमें जाना-आना चाहिये। बादशाहका अन्न आज न जाने कितनी पीढियोंसे हम खा रहे हैं, उनके साथ नमकहरामी न करना चाहिये।' इस प्रकार बड़े सरकारने नाना साहबको बहुत समझाया-बुझाया, पर नाना साहबने कुछ भी उत्तर नहीं दिया। वे जैसे के तैसे खड़े रहे। ऊपर आँख उठाकर उन्होंने देखा भी नहीं।"

"इसपर बड़े सरकारने फिर क्रोधित होकर कहा—"क्या ? बिलकुल चुप क्यों हो ? बोलते क्यों नहीं ?"

"क्या बोलूँ ? मैं अनेक बार आपसे बतला चुका हूँ। कहिये फिर वही कह दूँ। मैं मुसल्मानोंके दरबारोंमें जाकर कभी रह नहीं सकता। उनको सलाम नहीं कर सकता। उनको छूनेसे • "

आगेके शब्द नाना साहबके मुखमें ही रहे। बड़े सरकार क्रोधसे काँपने लगे, और एकदम बोले, "अभागा कहीं का ? तू हमारा कुल डुबोने आया है—तू अपने वंशका नाश करेगा। उसका नाम डुबोयेगा। जिसका नमक आजतक खाया है, उसको अदा नहीं करेगा। नमक-हराम बनेगा। यह समझकर, कि, तू अभी छोटा है, नासमझ है, मैंने अभीतक गम खाया। पर अब तू मेरी आँखोंके सामनेसे चला जा। अरे छोकरे, तेरा यह शरीर किस अन्नसे बना है ? रोज तू किसका अन्न खाता है ? जा चला जा, मेरी आँखोंके सामनेसे टल जा—अब मुझे मुँह न दिखलाना, खबरदार। अब तेरा मैं नामतक न लूँगा। तू अकेला मेरे एक था, और इसलिये समझा था कि, कुछ तो नाम

रखेगा, कुछ न कुछ तो दरबारकी सेवा बजा देगा—पर कुछ नहीं—मेरे नसीबमें ही नहीं है। इसके लिये तू क्या करेगा, और मैं क्या करूँगा? जा—आजसे न मैं तेरा, और न तू मेरा जन्मभरकी खटखट मिटी! जा, आजसे तेरे लिये दूरसे ही जो कुछ कलंक मुझपर लगता होगा, सो लगेगा! मेरे पास रहनेकी अब तुझे कोई आवश्यकता नहीं।"

आगे वे और भी कुछ कहनेवाले थे, पर इतने हीमें क्रोधके आवेग-मे उन्हें मूर्च्छासी आ गयी, और वे धडामसे पृथ्वीपर गिर पडे⋯"

"यह आगेका सारा हाल तो मुझे मालूम है।" आवजी पटेल बीचहीमें बोल उठे।

"उनको जब मूर्च्छा आ गई, तब उनको होशमें लानेके लिए नाना साहब दौडे, और कुछ उपचार किये; पर ज्यों ही उनकी आँखें खुली, त्यों ही नाना साहब उनकी दृष्टिकी ओट हो गये, और रात ही रातमें न जाने कहाँ चले गये।"

'सो सब मुझे मालूम है—यह बीचका हाल नहीं मालूम था, सो सब मैंने तुमसे पूछा—अरे, किलेपर जो कुछ होता है, उसका तिल-तिल सब वृत्तान्त मुझे मालूम होता रहता है। पर उस दिन—हाँ, उस दिनका समाचार कोई बतलाने ही नहीं⋯देख।"

"अजी, उस दिनका समाचार किसीको मालूम ही नहीं हुआ—सिर्फ मैं ही उस समय अकेला था—और यदि कोई होता भी, तो बाहर कैसे बतलाता? और मैंने भी अभीतक किसीसे नहीं कहा देखो पटेलजी! बात रह थोड़े ही सकती है। वह तो किसी न किसी रूपसे फैलेगी ही। नाना साहब जबसे चले गये, बड़े सरकार तबसे बिलकुल बेचैन हैं, उनको वे बहुत चाहते थे, पर वे क्रोधमें आकर चले गये! अजी, उनके रक्त हीमें यह गुण है, वे मान कैसे सकते थे? किन्तु पटेलजी, अब नाना साहब गये कहाँ? बड़े जोशमें गये हैं। कुछ साथमें भी नहीं ले गये, सारे कपड़े-लत्ते और सामान, जहाँका तहाँ, रखा है हाँ, उनकी प्यारी तलवार कहीं दिखाई नहीं देती। अजी और

करें ? वह सिरमुखी रूमाल भी उन्होंने अपने कमरेमें पलंगके पास तिपाईपर निकाल कर रख दिया। क्या कहूँ ? विचित्र साहसी पुरुष! और किस ओरसे गये, कुछ पता नहीं।"

आवजी पटेल चिन्तापुर चेष्टा करके कहा—"अरे चाहे जितनी रातको गये हों, गये तो गावकी ही ओरसे होंगे—यह निश्चित है—पर ऐसे गये कि, किसीको कुछ नहीं मालूम हुआ—अरे, इतने नौकर! पर किसी नौकरको भी खबर नहीं हुई! बड़े आश्चर्यकी बात है! पर हॉ, मुझे अवश्य शका होती है कि, कहॉ गये। किन्तु निश्चित कुछ भी नहीं कहा जा सकता।"

'हॉ हॉ, वह अपनी शका तो जरूर बतला दीजिए—मैंने इतना आपको बतलाया पटेलजी! आप भी तो कुछ मुझे बतला दें"

सुभान और भी कुछ कहना चाहता था, पर वह आगे कह नहीं सकता, क्योंकि इतने हीमें उन दोनोंने सुना कि, दस-बीस मनुष्य यह कहकर, 'आइये, आइये, पटेल साहब आइये," उनका स्वागत करने लगे।

"वाह! पटेल साहब, आपने तो आज खूब ही जल्दी की। प्रतिक्षा भी कहॉतक की जावे ?"

यह कहकर सफोजी हवलदारने आवजीको उलहनासा दिया, एक दूसरे मनुष्यने और ही कुछ कहा, तीसरेने तीसरे ही प्रकारसे छेड़छाड़ की। आवजीको उत्तर देनेका ही अवकाश न मिला। इतनेमे सुभान कहता है, 'अजी साहब, मैं जिस समय पहुँचा, पटेल साहब आनन्दसे सो रहे थे।"

"क्या करूँ ? कल रातको बहुत जागना पड़ा, इसलिए जरा . "

"क्यो, क्यों, जागना क्यो पड़ा, जान पड़ता है, कहीं तमाशा-वमाशा था। हॅ-हॅ-हॅ, पटेलजी उस सजनके छोकरेपर ऐसे कुछ लट्टू हो रहे हैं! हॅ-हॅ-हॅ! पटेल साहब, आपने हमें तो खबरतक नहीं दी! सब आनन्द आपहीने ."

यह सुनकर सब लोग खिलखिलाकर हँसने लगे; और आवजी टेल बड़े शरमिन्दा हुए; परन्तु इतनेमें कुछ खीझकर बोल उठे —

"अरे सर्फोजी तुम यह कहते क्या हो ? कल ही तो मैं नाना साहब ा पता लगाकर वापस आया हूँ—तमाशे-वमाशे कहाँके ? देखो, क़िलेपरके सब आदमी उदास हो रहे हैं, और तुमको तमाशेकी पडी है। सी बातें मत करो।"

पहले सर्फोजीकी हँसीकी बात सुनकर सब लोग हँसने लगे थे, पर ़ावजी पटेलके ये क्रोधयुक्त वचन सुनकर सबकी हँसी जाती रही, और र्फोजी हवलदार उदासीनसा दिखाई देने लगा। यह अवसर देखकर आवजी पटेल आगे बढ़े। श्यामा भी साथ ही साथ चल रहा था, परन्तु ान उसके पीछे ही थे; और आँखें चारो ओर लगी हुई थीं। जब र्फोजीको दबाकर आवजी पटेल आगे चलने लगे तो सर्फोजीने पटेलके ीछेकी ओर न जाने किस दृष्टिसे देखा, और मूछें मरोड़कर होंठोंके अन्दर ही अन्दर न जाने क्या कहा ये सब बातें वह चतुर लड़का श्यामा ेखता रहा। एक क्षणमात्रके लिए ही पीछे देखा था इतने ही में उसने र्फोजीकी सारी चेष्टाको अपने मन रख लिया।

यह सब होनेके बाद आवजी पटेल किलेपर किलेदारके मकानके ास पहुँचे। वर्तमान समयमें महाराष्ट्रके पहाड़ी किलोंपर जिस भाँति ा सकते हैं, उस भाँति उस समय नहीं जा सकते थे। जगह जगह चौकी-पहरा इत्यादिका बन्दोवस्त रहता था। न सिर्फ इतना ही; किन्तु और भी अनेक बातें रहती थीं। उन सबका वर्णन आज इसी परिच्छेद-में करनेकी आवश्यकता नहीं है। सुल्तानगढ़के ऊपर हमारे पाठकोंको और भी अनेक बार अनेक भिन्न-भिन्न व्यक्तियोंके साथ आना पड़ेगा। आवजी पटेल जिस मार्गसे आये, उस मार्गसे उनके समान सरकारी कामके लिए आनेवाले व्यक्तिको कोई कठिनाई नहीं थी। किलेके अन्दर प्रवेश करना अथवा भीतरसे बाहर जाना, जिन लोगोंके लिए प्रगट रूप-मे नहीं हो सकता था, उनकी कठिनाइयों, उनके मार्गोंसे आवजी

पटेलको इस समय कोई तात्पर्य न था। वे पानो दरवाजोंमें चोकीदारोंके द्वारा सलाम लेते हुए ऊपर आ गये।

किलेदारके मकानके पास पहुंचते ही पहरेदारोंके द्वारा आवजीके आनेका समाचार भेजा गया। आवजी उस दिन खास तौरपर बुलवाये गये थे, अतएव तुरन्त ही उन्हे भीतर जाना पड़ा। पहरेपर जो जमादार था, उसने हुक्केको आवजीके सामने किया, पर बेचारे सिर्फ एक ही दो बार उसको गुडगुडा सके, और बहुत जल्दी मुख इत्यादि पोछकर आगे बढे। पहरेके चोकमें आवजी जब अन्दर पहुँचे, तब बाई ओरके दालानमें आगेकी बैठकमें वह जाने लगे। मार्गमें उन्हे बन्दूक, तलवार भाला, ढाल, जिरहबख्तर, भिलग टोप इत्यादिके अतिरिक्त और कुछ भी दिखलाई नहीं दिया। आवजी बैठकके पास पहुंचे, और दरवाजेसे ही खूब लचकर तीन बार मुजरा किया। इसके बाद हाथ जोडे हुए भीतर प्रवेश किया।

इस स्थानमें सर्वत्र खूब मुलायम बिछौना बिछा हआ था, एक ओर दिवालमें मिली हुई, सफेद गिलाफकी सुन्दर मसनद लगी हुई थी, उसके दोनों ओर दो बढिया तकिये, और आगे खूब ऊँची सुन्दर गद्दी लगी हुई थी, जिसपर सफेद मुलायम चादर बिछी थी। उसपर दो-तीन छोटी-छोटी गद्दियाँ पड़ी हुई था, और गद्दीके बीचोबीच एक वृद्ध—जिसके सब बाल पककर सफेद हो गये थे, चेहरा खूब भव्य था, और और वृद्धावस्थाकी अपेक्षा चिन्ताकी ही झलक विशेष दिखाई दे रही थी—इस समय गर्दन नीचेको किये हुए, चिन्तायुक्त बैठा था। फिर भी इतना स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि, यह पुरुष वास्तवमें पहलेका कोई बडा तेजस्वी और भव्य महाशय है। उसके शरीरकी गठनमें ही यह बात प्रकट हो रही थी। आवजी पटेलने भीतर आकर तीन बार झुककर प्रणाम किया, तथापि उस पुरुषका मानो उसकी ओर कुछ भी ध्यान नहीं गया। वह जेसाका तैसा बैठा रहा। आवजी पटेल भी वैसे ही खडे रहे, और दीवालके चित्रोंकी ओर देखने लगे। इतनेमें उस प्रभावशाली वृद्ध महाशयने ऊपरकी ओर नजर उठाकर कहा—'क्यों, आवजी अभी-

तक तुमको कुछ पता नहीं लगा ? तुम सब गाँवके लोग ऐसे ही गाफिल पड़े रहते हो ? इसी प्रकार यदि बस्तीका चाहे जो आदमी, चाहे जिस समय आवे-जावेगा और तुमको कुछ पता भी न लगेगा, तो आगे कैसे काम चलेगा ? जरा बतलाओ, तो।

आवजी एक शब्द भी नहीं बोल सके। क्या बोलते ?

पांचवां परिच्छेद

बीजापुरका लिफाफा

आवजी पटेल बेचारे नीची गर्दन किये हुए खड़े थे। इतनेमें वह वृद्ध फिर बोल उठे:—

"आवजी, किलेके ऊपरकी गुप्तसे गुप्त खबरें भी चाहे जो आकर ले जावे, तो भी तुमको शायद न मालूम हो ? यदि तुमको अपना नमक इसी प्रकार अदा करना है, तो यहाँसे मुँह काला कर जाओ। मैं आज इतने दिनसे प्रतीक्षा कर रहा हूँ कि, ये आज नहीं तो कल इस विषयका कोई न कोई समाचार जरूर लावेंगे, पर कुछ भी पता नहीं। मुझको तो इसकी भी शंका है कि तुमने आदमी भी भेजे हैं या नहीं। बताओ तो कहाँ-कहाँ आदमी भेजे ?"

यह कहते हुए उन वृद्ध महाशयकी चेष्टा इतनी कठोर जान पड़ी कि, आवजी पटेल बिल्कुल घबड़ा गये। उस समयके वृद्ध मनुष्य प्राय: जमदग्निके ही अवतार होते थे। अवश्य ही वे एक प्रकारसे अत्यन्त दृढ़ और बड़े उग्र होते थे, इस कारण अधीनस्थ लोगोंपर उनका बड़ा आतंक रहता था। इसमें सन्देह नहीं कि, राष्ट्रमें जब ऐसे मनुष्य होते हैं, तभी कुछ राजकाज ठीकसे होता है। किलेदार रंगराव अप्पा भी ऐसे ही दृढ़ पुरुषोंमेंसे थे, और इस कारण आसपासके सब गाँववालों और अधिकारियोंपर उनका बड़ा प्रभाव रहता था। प्रत्येक मनुष्य जब कोई कार्य करने लगता, तब उसके मनमें यही भाव आ जाता कि, "हम

पटेलको इस समय कोई तात्पर्य न था। वे मानो दरवाजोंमें नौकरों-द्वारा सलाम लेते हुए ऊपर आ गये।

किलेदारके मकानके पास पहुँचते ही पहरेदारोंके द्वारा आवजी आनेका समाचार भेजा गया। आवजी उस दिन खास तौरपर बुलवा गये थे, अतएव तुरन्त ही उन्हें भीतर जाना पड़ा। पहरेपर जो जमादार था, उसने हुक्केको आवजीके सामने किया, पर बेचारे सिर्फ एक ही दो बार उसको गुड़गुड़ा सके, और बहुत जल्दी मुख इत्यादि पोंछकर आगे बढ़े। पहरेके चौकमें आवजी जब अन्दर पहुँचे, तब बाईं ओरके दालानसे आगेकी बैठकमें वह जाने लगे। मार्गमें उन्हें बन्दूक, तलवार भाला, ढाल, जिरहबख्तर, झिलम-टोप इत्यादिके अतिरिक्त और कुछ भी दिखलाई नहीं दिया। आवजी बैठकके पास पहुँचे, और दरवाजेसे ही खूब लचकर तीन बार मुजरा किया। इसके बाद हाथ जोड़े हुए भीतर प्रवेश किया।

इस स्थानमें सर्वत्र खूब मुलायम बिछौना बिछा हुआ था, एक ओर दिवालसे मिली हुई, सफेद गिलाफकी सुन्दर मसनद लगी हुई थी, उसके दोनों ओर दो बढ़िया तकिये, और आगे खूब ऊँची सुन्दर गद्दी लगी हुई थी, जिसपर सफेद मुलायम चादर बिछी थी। उसपर दो-तीन छोटी-छोटी गद्दियाँ पड़ी हुई था, और गद्दीके बीचोबीच एक वृद्ध—जिसके सब बाल पककर सफेद हो गये थे, चेहरा खूब भव्य था, और और वृद्धावस्थाकी अपेक्षा चिन्ताकी ही झलक विशेष दिखाई दे रही थी—इस समय गर्दन नीचेको किये हुए, चिन्तायुक्त बैठा था। फिर भी इतना स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि, यह पुरुष वास्तवमें पहलेका कोई बड़ा तेजस्वी और भव्य महाशय है। उसके शरीरकी गठनसे ही यह बात प्रकट हो रही थी। आवजी पटेलने भीतर आकर तीन बार झुककर प्रणाम किया, तथापि उस पुरुषका मानो उसकी ओर कुछ भी ध्यान नहीं गया। वह जैसाका तैसा बैठा रहा। आवजी पटेल भी वैसे ही खड़े रहे, और दीवालके चित्रोंकी ओर देखने लगे। इतनेमें उस प्रभावशाली वृद्ध महाशयने ऊपरकी ओर नजर उठाकर कहा—'क्यों, आवजी अभी-

आवजी कुछ कहने न पाये थे कि, इतनेमें बडे सरकारने फिर अत्यन्त क्रोधित होकर और तिरस्कारकी चेष्टासे कहा, "आवजी, अब मैं तुम्हारी एक भी न सुनूँगा। आजसे चार दिनके अन्दर—देखो, तुमको चार दिनकी मुद्दत देता हूँ—इसके अन्दर ही नाना साहबका पता लगाकर बतलाओ कि, वह किस ओर गया है। यदि इतना काम भी तुमसे न हुआ, तो फिर समझ लेना—मेरा स्वभाव तुम जानते हो। ऐसे नमक-हराम हैं ये लोग!"

इतने शब्द उन वृद्ध महाशयने आवजीको सम्बोधन करके कहे; और फिर आवजीकी तरफ बिल्कुल ही न देखते हुए पीछे रखी हुई मसनदसे टिक गये।

रंगराव अप्पा साहब किस तरहके पुरुष थे, और उनकी इस समय क्या दशा थी, सो पाठकोंको ऊपरके वर्णनसे मालूम ही हो गया होगा। प्रत्येक संयमी मनुष्यके हृदयका कोई न कोई अत्यन्त निर्बल अंश होता ही है। हमारे पाठकोंमेंसे बहुतोंका अनुभव होगा कि, अन्य सब बातोंमें दृढ़, किंबहुना दुराग्रही और हठी पुरुषोंमें भी कोई न कोई मानसिक मर्मस्थान होता ही है। रंगराव अप्पा साहब भी अत्यन्त कठोर, दृढ़, शूरवीर और संकीर्ण स्वभावके व्यक्ति थे। वे जिस कार्यके करनेका एक बार निश्चय कर लेते, उसको किये बिना नहीं मानते थे—फिर चाहे प्रत्यक्ष ब्रह्मा ही क्यों न आ जावें। परन्तु उनके हृदयमें भी एक बड़ी भारी निर्बलता थी—अर्थात् उनको अपने पुत्रपर प्रेम बहुत अधिक था; और उसकी शूरताका अभिमान भी। छुटपनसे ही उसको प्राणोंसे भी अधिक चाहते थे। युद्धशास्त्र और अन्य विद्याओंमें उन्होंने उसे सुशिक्षित बनानेमें भी कोई बात उठा नहीं रखी थी। उसका दुलार भी उन्होंने इतना किया था कि, जितना और किसी बापने न किया होगा। पीछे एक-दो बार इस बातका उल्लेख हो ही चुका है कि रंगराव अप्पा साहबकी यह बड़ी इच्छा थी कि, उस लड़केके हाथसे उनके कुलकी खूब नामवरी हो, उसकी मनसबदारीका ओहदा अथवा हुजूर-दरबारकी दीवानगिरीतक मिल जावे और यह सब उनकी जिन्दगीमें ही उनकी

यह करते तो हैं, पर बड़े सरकार क्या करेंगे? हम यदि ऐसा करेंगे, तो वे हमको खा ही जायेंगे, सबे सबे निरवा डालेंगे।" बेचारे आवजी पटेल भी उनके अधीन ही थे। ऐसी दशामें यदि वह उनके उपर्युक्त कथनमें थर थर कांपने लगे, एक शब्द भी पूरा पूरा बोल न सके, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? नाना साहबकी तलाशमें उन्होंने अभीतक बहुतेरे मनुष्य भेजे थे। सुल्तानगढ़के चारों तरफ, बड़ी दूर-दूरतक अपने आदमी भेजे थे। प्रत्येक गाँवमें भलीभांति खोज लगानेके लिये उनको सख्त ताकीद भी कर दी थी। इसके सिवाय वे खुद भी बड़ी बारीकीके साथ खोज लगानेको घूमे थे। इतना सब करनेपर भी स्पष्ट रूपमें कहनेको उनकी हिम्मत उस समय नहीं होती थी। एक तो जिह्वा भीतर ही भीतर लड़खड़ाती थी, और यदि कोई शब्द निकलता भी, तो बिल्कुल अधूरा रह जाता था।

आवजीका गाँवके लोगोंपर अच्छा प्रभाव था, जब कभी वह अपने उग्र चेहरे और भव्य शरीरसे गाँवके गरीब लोगोंपर धाक जमाते, और डॉट-डपटकर बातें करते, तब उनका दूसरा ही रंग होता था। परन्तु इस समय यदि कोई उन्हें देखता, तो अवश्य ही उसको शंका होती कि, "गाँववालोंपर धाक जमाकर उनसे डॉट-डपटकी बातें करनेवाले क्या आवजी पटेल यही हैं?" उनके चेहरेका प्रभाव इस समय ऐसा ही उतर गया था। अस्तु, पटेल साहब बड़े अभिमानसे श्यामा नामक लड़केको भी अपने साथ ले आये थे सो पाठकोंको मालूम ही है। अब इस समय उनको यह शंका आई कि, कहीं श्यामा पीछेसे हमारी यह फजीहत तो नहीं देख रहा है, और इसलिये धीरेसे पीछे घूमकर उन्होंने देखा, तो श्यामा चुपकेसे झॉककर देख रहा था। उसकी चेष्टा भी इस समय बड़ी विचित्र हो रही थी, क्योंकि वह अपनी हँसी अन्दर ही अन्दर दबानेका प्रयत्न करता था, उसमें उसको सफलता मिलती हुई नहीं दिखाई दे रही थी। श्यामाने ज्यों ही देखा कि, आवजीने उसकी तरफ नजर डाली, त्यों ही उसने अपना सिर पीछे खिसका लिया। यह सब देखके तो आवजीकी और भी विचित्र दशा हुई।

आवजी कुछ कहने न पाये थे कि, इतनेमें बड़े सरकारने फिर अत्यन्त क्रोधित होकर और तिरस्कारकी चेष्टासे कहा, "आवजी, अब मैं तुम्हारी एक भी न सुनूँगा। आजसे चार दिनके अन्दर—देखो, तुमको चार दिनकी मुद्दत देता हूँ—इसके अन्दर ही नाना साहबका पता लगाकर बतलाओ कि, वह किस ओर गया है। यदि इतना काम भी तुमसे न हुआ, तो फिर समझ लेना—मेरा स्वभाव तुम जानते हो। ऐसे नमक-हराम हैं ये लोग!"

इतने शब्द उन वृद्ध महाशयने आवजीको सम्बोधन करके कहे; और फिर आवजीकी तरफ बिल्कुल ही न देखते हुए पीछे रखी हुई मसनदसे टिक गये।

रंगराव अप्पा साहब किस तरहके पुरुष थे, और उनकी इस समय क्या दशा थी, सो पाठकोंको ऊपरके वर्णनसे मालूम ही हो गया होगा। प्रत्येक संयमी मनुष्यके हृदयका कोई न कोई अत्यन्त निर्बल अंश होता ही है। हमारे पाठकोंमेंसे बहुतोंका अनुभव होगा कि, अन्य सब बातोंमें दृढ़, किंबहुना दुराग्रही और हठी पुरुषोंमें भी कोई न कोई मानसिक मर्मस्थान होता ही है। रंगराव अप्पा साहब भी अत्यन्त कठोर, दृढ़, शूरवीर और संकीर्ण स्वभावके व्यक्ति थे। वे जिस कार्यके करनेका एक बार निश्चय कर लेते, उसको किये बिना नहीं मानते थे—फिर चाहे प्रत्यक्ष ब्रह्मा ही क्यों न आ जावें। परन्तु उनके हृदयमें भी एक बड़ी भारी निर्बलता थी—अर्थात् उनको अपने पुत्रपर प्रेम बहुत अधिक था; और उसकी शूरताका अभिमान भी। छुटपनसे ही उसको प्राणोंसे भी अधिक चाहते थे। युद्धशास्त्र और अन्य विद्याओंमें उन्होंने उसे सुशिक्षित बनानेमें भी कोई बात उठा नहीं रखी थी। उसका दुलार भी उन्होंने इतना किया था कि, जितना और किसी बापने न किया होगा। पीछे एक-दो बार इस बातका उल्लेख हो ही चुका है कि रंगराव अप्पा साहबकी यह बड़ी इच्छा थी कि, उस लड़केके हाथसे उनके कुलकी खूब नामवरी हो, उसकी मनसबदारीका ओहदा अथवा हुजूर-दरबारकी दीवानगिरीतक मिल जावे और यह सब उनकी जिन्दगीमें ही उनकी

या करते तो हैं, पर बड़े सरकार क्या करेंगे ? हम यदि ऐसा करेंगे, तो वे हमको खा ही जायेंगे, खाने खाने निरखा डालेंगे।" बेचारे आवजी पटेल भी उनके अधीन ही थे। ऐसी दशामें यदि वह उनके उपर्युक्त कथनमें थर थर कापने लगे, एक शब्द भी पूरा पूरा बोल न सके, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? नाना साहबकी तलाशमें उन्होंने अभीतक बहुतेरे मनुष्य भेजे थे। मुल्तानगढ़के चारो तरफ, बड़ी दूर-दूरतक अपने आदमी भेजे थे। प्रत्येक गॉवमें भलीभाति खोज लगानेके लिये उनको सख्त ताकीद भी कर दी थी। इसके सिवाय वे खुद भी बड़ी बारीकीके साथ खोज लगानेको घूमे थे। इतना सब करनेपर भी स्पष्ट रूपमें कहनेको उनकी हिम्मत उस समय नहीं होती थी। एक तो जिह्वा भीतर ही भीतर लड़खड़ाती थी, और यदि कोई शब्द निकलता भी, तो बिल्कुल अधूरा रह जाता था।

आवजीका गॉवके लोगोंपर अच्छा प्रभाव था, जब कभी वह अपने उग्र चेहरे और भव्य शरीरसे गॉवके गरीब लोगोंपर धाक जमाते, और डॉट-डपटकर बातें करते, तब उनका दूसरा ही रग होता था। परन्तु इस समय यदि कोई उन्हें देखता, तो अवश्य ही उसको शका होती कि, "गॉववालोंपर धाक जमाकर उनसे डॉट-डपटकी बातें करनेवाले क्या आवजी पटेल यही हैं ?" उनके चेहरेका प्रभाव इस समय ऐसा ही उतर गया था। अस्तु, पटेल साहब बड़े अभिमानसे श्यामा नामक लड़केको भी अपने साथ ले आये थे सो पाठकोंको मालूम ही है। अब इस समय उनको यह शका आई कि, कहीं श्यामा पीछेसे हमारी यह फजीहत तो नहीं देख रहा है, और इसलिये धीरेसे पीछे घूमकर उन्होंने देखा, तो श्यामा चुपकेसे झॉककर देख रहा था। उसकी चेष्टा भी इस समय बड़ी विचित्र हो रही थी, क्योंकि वह अपनी हॅसी अन्दर ही अन्दर दबानेका प्रयत्न करता था, उसमें उसको सफलता मिलती हुई नहीं दिखाई दे रही थी। श्यामाने ज्यो ही देखा कि, आवजीने उसकी तरफ नजर डाली, त्यों ही उसने अपना सिर पीछे खिसका लिया। यह सब देखके तो आवजीकी और भी विचित्र दशा हुई।

न करते हुए यहासे चला गया, हमसे एक शब्द भी न बोला; और दो-चार शब्द लिखकर ही छोड़ गया तब उन्हें अत्यन्त शोक हुआ। बस, उनके अत्यन्त कठोर हृदयका मृदु-स्थान यही था कि, उनको अपने लड़केपर अत्यन्त प्रेम—प्रेमका मोह था। लड़का जबतक उनके सामने था, तबतक तो उन्होंने उससे अनेक प्रकारकी बातें कीं; परन्तु जब वह चला गया, तब उनका धैर्य छूट गया। वे बिल्कुल अधीर हो उठे। परन्तु अपने मनकी यह दशा उन्होंने किसीपर प्रकट नहीं होने दी, बल्कि यह कहनेमें भी कोई प्रत्यवाय नहीं कि, उनके मनकी यह सच्ची दशा सुभानके अतिरिक्त और किसीको भी मालूम नहीं थी। किसीके सामने उन्होंने ऐसे वचन अपने मुखसे कभी नहीं निकाले कि; जिससे उनके हृदयका दुःख प्रकट होकर उनके धैर्य-गलित होनेका परिचय मिलता। हाँ, इसके विरुद्ध, सबके सामने उनके मुखसे इस प्रकारके कठोर शब्द ही निकला करते थे कि, इस दुष्टको पकड़कर गिरफ्तार कर लाना चाहिए, उसको एक कोठरीमें बन्द कर देना, अथवा जबर्दस्ती दरबारमें भेज देना चाहिये। उनके मुखसे ऐसे कठोर वचन सुनकर सबको विश्वास भी यही होता था कि, वह बुड्ढा ऐसा ही कुछ न कुछ किये बिना नहीं रहेगा।

जो कुछ भी हो, बड़े सरकारकी इस दशासे कोई लाभ नहीं हुआ। नाना साहबका कुछ भी पता नहीं लगा। यही नहीं, बल्कि विश्वासपूर्वक कोई यह भी नहीं बतलाता था कि, वे अमुक ओर, अमुक समय, इस-इस प्रकारसे गये। वह बुड्ढा अन्दर ही अन्दर तड़फड़ाता रहा। इसी बीचमें दो-तीन भयंकर और विचित्र शकाएँ भी उसके मनमें आईं, जिनके कारण उनके जीकी व्याकुलता और भी बढ़ी।

एक शका तो यही आती थी कि, यह तूफानी लड़का जिस ओर गया होगा, उसी ओर किसी मुसल्मानसे झगड़ा न हो गया हो, जिसमें यह काट डाला गया हो। जिस समयकी आख्यायिका हम लिख रहे हैं, उस समय ऐसा होना कुछ असम्भव भी न था—यही नहीं, बल्कि बारंबार वैसा हुआ ही करता था। हिन्दुओंको चिढ़ानेके लिए मुसल्मान

इच्छाके अनुसार हो। अपनी इस इच्छाको पूर्ण करनेके लिये उन्होंने सब प्रकारके प्रयत्न किये, अपने लड़केको भी सब तरहसे समझाया-बुझाया, और जो कुछ उपदेश वे कर सकते थे, सब किया, पर कोई लाभ न हुआ। मुसल्मानोंका नाम लेते ही उसका चेहरा तिरस्कार, द्वेष और क्रोधसे सुर्ख हो जाता था। मुसल्मानोंके विषयमें बातचीत करते समय वह 'म्लेच्छ' शब्दका ही सदैव व्यवहार करता। फिर भी अप्पा साहबका यह ख्याल था कि, हम किसी न किसी प्रकार उसको समझा लेंगे, और इसीलिये उन्होंने साम-दाम, दण्ड-भेद इत्यादि सब उपाय किये। इतनेमें उन्होंने यह भी सोचा कि, बादशाहके यहांसे बुलावा आनेपर ही शायद यह जानेको तैयार हो जाय। इसलिये वे वैसा ही प्रयत्न करना चाहते थे, पर पीछेसे वैसे प्रयत्न करनेकी भी आवश्यकता नहीं रही, क्योंकि उनकी इच्छाके अनुसार, जैसा कि पिछले परिच्छेदमें बतलाया है, स्वयं बादशाहकी ओरसे ही एक खरीता और पोशाक आ गई। इससे अप्पा साहबको बड़ा आनन्द हुआ, पर उसका अन्त किस प्रकार हुआ, जो पिछले परिच्छेदमें सुभान और आवजीके सम्भाषणसे मालूम ही हो चुका है। अप्पा साहबने जब यह देखा कि लड़का, हमारी एक भी नहीं सुनता, और बड़ी उद्दण्डतासे उत्तर देता है—यही नहीं, किन्तु उसने हमारी आजतककी सारी आशाओं, सम्पूर्ण इच्छाओं और महत्वाकांक्षापर पानी फेर दिया, और कुलको कलंक लगाने तथा स्वयं अपनेको भी बरबादकर लेनेका मौका उपस्थित कर दिया, तब उनको अत्यन्त खेद हुआ, और उस खेदका क्या परिणाम हुआ, सो पाठकोंको पिछले परिच्छेदसे मालूम ही हो चुका है। अप्पा साहबने अत्यन्त खिन्न होकर अपने लड़केके सामने ऐसे कटु वचन कहे कि, जो उसके हृदयमें बाणकी तरह चुभ गये और वह किलेको छोड़-कर बाहर चला गया। बड़े सरकारको ज्यों ही यह मालूम हुआ कि, हमारा लड़का बाहर भाग गया, त्यों ही उनकी कुछ विचित्रसी दशा हो गई। उन्होंने जब देखा कि, जो लड़का हमारे प्राणोंसे भी प्यारा था, वह हमारी इच्छाओं, आशाओं, किंबहुना हमारे शरीरकी भी परवा

न करते हुए यहासे चला गया, हमसे एक शब्द भी न बोला; और दो-चार शब्द लिखकर ही छोड़ गया तब उन्हें अत्यन्त शोक हुआ। बस, उनके अत्यन्त कठोर हृदयका मृदु-स्थान यही था कि, उनको अपने लड़केपर अत्यन्त प्रेम—प्रेमका मोह था। लड़का जबतक उनके सामने था, तबतक तो उन्होंने उससे अनेक प्रकारकी बातें कीं; परन्तु जब वह चला गया, तब उनका धैर्य छूट गया। वे बिल्कुल अधीर हो उठे। परन्तु अपने मनकी यह दशा उन्होंने किसीपर प्रकट नहीं होने दी, बल्कि यह कहनेमें भी कोई प्रत्यवाय नहीं कि, उनके मनकी यह सच्ची दशा सुमानके अतिरिक्त और किसीको भी मालूम नहीं थी। किसीके सामने उन्होंने ऐसे वचन अपने मुखसे कभी नहीं निकाले कि; जिससे उनके हृदयका दुःख प्रकट होकर उनके धैर्य-गलित होनेका परिचय मिलता। हाँ, इसके विरुद्ध, सबके सामने उनके मुखसे इस प्रकारके कठोर शब्द ही निकला करते थे कि, इस दुष्टको पकड़कर गिरफ्तार कर लाना चाहिए, उसको एक कोठरीमें बन्द कर देना, अथवा जबर्दस्ती दरबारमें भेज देना चाहिये। उनके मुखसे ऐसे कठोर वचन सुनकर सबको विश्वास भी यही होता था कि, वह बुड्ढा ऐसा ही कुछ न कुछ किये बिना नहीं रहेगा।

जो कुछ भी हो, बड़े सरकारकी इस दशासे कोई लाभ नहीं हुआ। नाना साहबका कुछ भी पता नहीं लगा। यही नहीं, बल्कि विश्वासपूर्वक कोई यह भी नहीं बतलाता था कि, वे अमुक ओर, अमुक समय, इस-इस प्रकारसे गये। वह बुड्ढा अन्दर ही अन्दर तड़फड़ाता रहा। इसी बीचमें दो-तीन भयंकर और विचित्र शंकाएँ भी उसके मनमें आईं, जिनके कारण उनके जीकी व्याकुलता और भी बढ़ी।

एक शंका तो यही आती थी कि, यह तूफानी लड़का जिस ओर गया होगा, उसी ओर किसी मुसल्मानसे झगड़ा न हो गया हो, जिसमें यह काट डाला गया हो। जिस समयकी आख्यायिका हम लिख रहे हैं, उस समय ऐसा होना कुछ असम्भव भी न था—यही नहीं, बल्कि बारंबार वैसा हुआ ही करता था। हिन्दुओंको चिढ़ानेके लिए मुसल्मान

इच्छाके अनुसार हो। अपनी इस इच्छाको पूर्ण करनेके लिये उन्होंने सब प्रकारके प्रयत्न किये, अपने लड़केको भी सब तरहसे समझाया-बुझाया, और जो कुछ उपदेश वे कर सकते थे, सब किया, पर कोई लाभ न हुआ! मुसल्मानोंका नाम लेते ही उसका चेहरा तिरस्कार, द्वेष और क्रोधसे सुर्ख हो जाता था। मुसल्मानोंके विषयमें बातचीत करते समय वह 'म्लेच्छ' शब्दका ही सदैव व्यवहार करता। फिर भी अप्पा साहबका यह ख्याल था कि, हम किसी न किसी प्रकार उसको समझा लेंगे, और इसीलिये उन्होंने साम-दाम, दण्ड-भेद इत्यादि सब उपाय किये। इतनेमें उन्होंने यह भी सोचा कि, बादशाहके यहाँसे बुलावा आनेपर ही शायद यह जानेको तैयार हो जाय। इसलिये वे वैसा ही प्रयत्न करना चाहते थे, पर पीछेसे वैसे प्रयत्न करनेकी भी आवश्यकता नहीं रही, क्योंकि उनकी इच्छाके अनुसार, जैसा कि पिछले परिच्छेदमें बतलाया है, स्वयं बादशाहकी ओरसे ही एक खरीता और पोशाक आ गई। इससे अप्पा साहबको बड़ा आनन्द हुआ, पर उसका अन्त किस प्रकार हुआ, जो पिछले परिच्छेदमें सुभान और आवजीके सम्भाषणसे मालूम ही हो चुका है। अप्पा साहबने जब यह देखा कि लड़का, हमारी एक भी नहीं सुनता, और बड़ी उद्दण्डतासे उत्तर देता है—यही नहीं, किन्तु उसने हमारी आजतककी सारी आशाओं, सम्पूर्ण इच्छाओं और महत्वाकांक्षापर पानी फेर दिया, और कुलको कलंक लगाने तथा स्वयं अपनेको भी बरबादकर लेनेका मौका उपस्थित कर दिया, तब उनको अत्यन्त खेद हुआ, और उस खेदका क्या परिणाम हुआ, सो पाठकोंको पिछले परिच्छेदसे मालूम ही हो चुका है। अप्पा साहबने अत्यन्त खिन्न होकर अपने लड़केके सामने ऐसे कटु वचन कहे कि, जो उसके हृदयमें बाणकी तरह चुभ गये और वह किलेको छोड़कर बाहर चला गया। बड़े सरकारको ज्यों ही यह मालूम हुआ कि, हमारा लड़का बाहर भाग गया, त्यों ही उनकी कुछ विचित्रसी दशा हो गई। उन्होंने जब देखा कि, जो लड़का हमारे प्राणोंसे भी प्यारा था, वह हमारी इच्छाओं, आशाओं, किंबहुना हमारे शरीरकी भी परवा

न करते हुए यहाँसे चला गया, हमसे एक शब्द भी न बोला; और दो-चार शब्द लिखकर ही छोड़ गया तब उन्हें अत्यन्त शोक हुआ। बस, उनके अत्यन्त कठोर हृदयका मृदु-स्थान यही था कि, उनको अपने लड़केपर अत्यन्त प्रेम—प्रेमका मोह था। लड़का जबतक उनके सामने था, तबतक तो उन्होंने उससे अनेक प्रकारकी बातें कीं; परन्तु जब वह चला गया, तब उनका धैर्य छूट गया। वे बिल्कुल अधीर हो उठे। परन्तु अपने मनकी यह दशा उन्होंने किसीपर प्रकट नहीं होने दी, बल्कि यह कहनेमें भी कोई प्रत्यवाय नहीं कि, उनके मनकी यह सच्ची दशा सुमानके अतिरिक्त और किसीको भी मालूम नहीं थी। किसीके सामने उन्होंने ऐसे वचन अपने मुखसे कभी नहीं निकाले कि; जिससे उनके हृदयका दुःख प्रकट होकर उनके धैर्य-गलित होनेका परिचय मिलता। हाँ, इसके विरुद्ध, सबके सामने उनके मुखसे इस प्रकारके कठोर शब्द ही निकला करते थे कि, इस दुष्टको पकड़कर गिरफ्तार कर लाना चाहिए, उसको एक कोठरीमें बन्द कर देना, अथवा जबर्दस्ती दरबारमें भेज देना चाहिये। उनके मुखसे ऐसे कठोर वचन सुनकर सबको विश्वास भी यही होता था कि, वह बुड्ढा ऐसा ही कुछ न कुछ किये बिना नहीं रहेगा।

जो कुछ भी हो, बड़े सरकारकी इस दशासे कोई लाभ नहीं हुआ। नाना साहबका कुछ भी पता नहीं लगा। यही नहीं, बल्कि विश्वासपूर्वक कोई यह भी नहीं बतलाता था कि, वे अमुक ओर, अमुक समय, इस-इस प्रकारसे गये। वह बुड्ढा अन्दर ही अन्दर तड़फड़ाता रहा। इसी बीचमें दो-तीन भयंकर और विचित्र शंकाएँ भी उसके मनमें आईं, जिनके कारण उनके जीकी व्याकुलता और भी बढ़ी।

एक शंका तो यही आती थी कि, यह तूफानी लड़का जिस ओर गया होगा, उसी ओर किसी मुसल्मानसे झगड़ा न हो गया हो, जिसमें यह काट डाला गया हो। जिस समयकी आख्यायिका हम लिख रहे हैं, उस समय ऐसा होना कुछ असम्भव भी न था—यही नहीं, बल्कि बारंबार वैसा हुआ ही करता था। हिन्दुओंको चिढ़ानेके लिए मुसल्मान

उस समय बीच रास्तेपर कभी-कभी गोवध करने लगते, हिन्दू लोग इस-पर यदि कुछ कहते, अथवा कोई ब्राह्मण ही किसी मुसल्मानसे झगड़ा करने लगता, तो मुसल्मान लोग तत्काल उस हिन्दूको घायल करते अथवा तलवारसे काट डालते थे। मुगलराज्यमें प्राय यह भी देखा जाता कि, मुसल्मान लोग रास्ते चलते हिन्दू-स्त्रियोंसे छेड़-छाड़ करते, और खिल-खिलाकर हँसा करते थे। मतलब यह कि, उस समय मुसल्मानोंका व्यवहार इतना असह्य हो गया था कि, प्रत्येकके मनमें उनके विषयमें द्वेष उत्पन्न हो गया था। इसका कारण सिर्फ मुसल्मानोंका दुरभिमान ही था। राज्यमदमें वे इतने मतवाले हो गये थे कि, किस समय किसका अपमान कर डालेंगे, इसका कुछ ठिकाना ही न था। उसमें भी फिर उस समय औरगजेबका शासन जारी था। फिर क्या पूछना है? मुसल्मानोंके दिमागका पता ही न था! औरगजेबके धार्मिक अत्याचार, मन्दिरोंके ढहाने, मूर्त्तियोंके तोड़ने और ब्राह्मणोंके धर्म-भ्रष्ट करनेके नित्य नये-नये समाचार दक्षिणमें आया करते थे। वे स्वय वहाँ भी इसी प्रकारकी अनेक घटनाएँ समय-समयपर हो जाया करती थीं। अतएव नवीन पीढ़ीके नवयुवक मुसल्मानी राज्यसे बहुत ही उद्विग्न हो उठे थे। अनेक सरदारोंके मनमें भी यही आने लगा कि, इस भयंकर दशामें यदि हमारा किसी प्रकार छुटकारा हो जाय, तो अच्छी बात है। भोले भावुक लोगोंमें यह भाव भी फैल रहा था कि, इस भयकर दशासे हिन्दुओं महाराष्टनिवासियोंको—मुक्त करनेके लिए कोई न कोई अवतारी पुरुष अवश्य प्रकट होगा, और इस भावनापर अनेक लोगोंको पूरी-पूरी श्रद्धा भी जम गई थी। नवीन पीढ़ीके युवकोंको तो अब सिर्फ एक नेताकी ही आवश्यकता रह गई थी। रगराव अप्पा, खानदानके भी अनेक मराठे सरदार, मनसबदार, किलेदार इत्यादि ओहदोंपर थे। वे सब भी यद्यपि वर्तमान भयकर दशासे छूटनेकी इच्छा रखते थे, परतु फिर भी उनमें अभी यह कृतज्ञता जागृत थी कि, हम मुसल्मानी दरबार-के आश्रित हैं और इसीलिये जब कोई सरदार केवल अपने ही बलपर बगावत करनेको तैयार होता, तब वे समझते कि, इसके हाथसे महाराष्ट्र-

का उद्धार होना बिल्कुल असम्भव है। ये किलेदार और मनसबदार, जब कभी यह सुनते कि, शहाजी भोसलेका लड़का शिवाजी पूना, सूपा इत्यादि प्रान्तोंमें और मालव-प्रदेशमें कुछ गड़बड़ मचा रहा है, तब वे प्राय: कहा करते कि, 'अरे, इस पागलसे क्या होगा? यों ही मारा जायगा! ये जंगली छोकरे अविचारवश अपने ही सिरपर पत्थर पटक लेंगे। मुगल बादशाहीका इनसे बाल भी बाँका न हो सकेगा। पत्थरसे सिर टकराकर अपना ही सिर फोड़ लेंगे।" इत्यादि। अप्पा साहबके समान जो लोग पूर्णतया राजभक्त थे, वे तो चाहते थे कि, ऐसे उपद्रवी लोगोंको एकदम गिरफ्तार कर लिया जाय, और किलेकी कालकोठरीमें बन्द कर दिया जाय! वे सदैव इसी प्रकारके विचार प्रकट किया करते। वे मुसल्मानी बादशाहतके कट्टर भक्त थे। अप्पा साहब स्वय अपने लड़केके मुखसे ही जब वैसी भयंकर बातें सुनते, तब उनके शरीरपरके रोंगटे खड़े हो आते, और वे बड़े क्रुद्ध होते थे। परन्तु आज प्रत्यक्ष उनपर वह नौबत आ गई, कि उनके लड़केने स्पष्ट जवाब दे दिया कि, हम मुसल्मानोंकी नौकरी नहीं करेंगे। यही नहीं, बल्कि वह इसीपर क्रुद्ध होकर घरसे भी निकल गया। ऐसी दशामें अप्पाजीके जीको चैन कैसे पड़ सकता था? उनका तो यह खयाल था कि, बादशाह स्वयं विष्णुका अवतार है, और उसे "कर्तुमकर्तुमन्यथा कर्तुम्" की शक्ति प्राप्त है। आज इतनी पीढ़ियोंसे हम उसका नमक खा रहे हैं, इसलिये हमको उसकी नौकरीमें दिन बिताने चाहिए, उसीके लिये अपने प्राण देने चाहिये—इसीमें सच्चा पुरुषार्थ है। उसके विरुद्ध कुछ कहना मानो नमकहरामी करना है। इस प्रकारकी विचारशैलीके जो कुछ थोड़े-बहुत जागीरदार, किलेदार इत्यादि उस समय थे, उनमें रगराव अप्पा एक प्रमुख व्यक्ति थे। परन्तु उन्हींका लड़का उनके बिल्कुल विरुद्ध पैदा हुआ—यह भी समय और दैवकी ही महिमा समझनी चाहिये। अप्पा साहबका बादशाहपर जितना दृढ़ प्रेम था, नाना साहबका उतना ही द्वेष। अतएव अप्पा साहबको अब अपनी विचित्र दशाके विषयमें सन्तोष क्योंकर हो सकता था? शहाजी भोसलेके उद्दण्ड पुत्र

[शिवाजी] के कार्य जब कभी कानोंकान अप्पाजीको सुनाई देते, तब वे सदैव उसकी हँसी उड़ाते, उसको बुरा-भला कहते, और कभी-कभी गालियाँतक देते थे। नाना साहब अपने पिताके मुखसे ज्यों-ज्यों शिवाजीके विषयमें उपर्युक्त बातें सुनते, त्यों-त्यों उनका हृदय और भी अधिक दृढ़ होता, और शिवाजीके विषयमें उनका पूज्य भाव और भी बढ़ता जाता। इस प्रकार नानासाहबके मनकी तैयारी भी एक प्रकारसे अप्पा साहबके कार्योंके फलस्वरूप ही थी। अतएव अप्पा साहबके मनमें दूसरी शंका यह उपस्थित हुई कि, हमारा लड़का कहीं उसी उपद्रवी और मनहूस शिवाजीके पास न चला गया हो ! इसी प्रकार एक तीसरी शंका उत्पन्न होनेका कारण यह था कि उनका लड़का किलेके नीचे सुल्तानपुर और आसपासके अन्य गाँवोंमें सदैव जाया करता था, और वहाँ गरीब लोगोंके नवयुवक लड़कोंमें हिलमिलकर कभी उनको घोड़ेपर बैठना सिखलाता, कभी कुश्ती लड़ता, और कभी अपने पासके हथियार इत्यादि देकर उनको शिकार खेलने ले जाता, गदकाफरी खेलता। साराश यह कि, दिनका बहुतसा समय उन्हींके साथ व्यतीत करता। अतएव इस समय अप्पा साहबको तीसरी शंका यह भी उपस्थित हुई कि कहीं वह उन्हीं नवयुवकोंको एकत्रित करके लूटमार करने अथवा इसी प्रकारके अन्य उपद्रव करने तो नहीं चला गया ? इन तीन शंकाओंमेंसे पहली और दूसरी शंका ही उनके मनमें बार-बार आती और उनको कष्ट देती रहती थी। "लड़केको कहीं दंगे-फसादमें मुसल्मानोंने न काट डाला हो !" बस इसी भयंकर विचारसे उनका हृदय काँप रहा था। अन्य सब बातोंकी अपेक्षा इसी एक बातको उनके मनने विशेष सम्भव मान लिया था, मुसल्मानोंका नाम सुनते ही उसका शरीर जल उठता था, मुसल्मानोंसे लड़ने-भिड़नेमें वह सबसे आगे रहता था। इसलिए कहीं किसी गाँवमें गो, ब्राह्मण अथवा किसी स्त्रीको सताते हुए, यदि वह देख पाता तो आगे-पीछेका कुछ भी विचार न करते हुए वह आक्रमण कर देता, और मरनेकी भी नौबत आ जाती, तो भी पैर पीछे न हटाता। अतएव वह बुड्ढा यही

सोच-सोचकर घबड़ा रहा था। दूसरा यह विचार भी उसको उतना ही भयंकर मालूम होता था कि, यह शिवाजीके 'उद्दण्डतापूर्ण' कार्योंमे सहायता देनेके लिये उससे न जा मिला हो। निदान अप्पाजीके मनमें यही आया कि, या तो हमारे लड़केको मुसल्मानोंने कहीं मार डाला, अथवा वह "उद्दण्ड लुटेरों" की टोलीमें जाकर सम्मिलित हो गया। जो कुछ भी हो, पर लड़का हमारे हाथसे निकल गया। अब वह लौटकर नहीं आता, यह सोच करके बिल्कुल निराशसे हो चुके थे। अस्तु।

उपर्युक्त वर्णनसे पाठकोंको हमारे कथानकके समयकी परिस्थितिका बहुत कुछ ज्ञान हो गया होगा, और यहाँतक जिन पत्रोंका थोड़ा-बहुत वर्णन आया है, उनकी भी कुछ न कुछ दशा पाठकोंके अनुमानमें आ गई होगी।

जैसा कि ऊपर हमने बतलाया, अप्पाजी साहब आवजी पटेलको यह हुक्म देकर कि, चार दिनके अन्दर लड़केका पता लगाकर उसे हमारे सामने हाज़िर करो, मसनदपर पीठके सहारे लेट गये थे, सो अबतक वैसे ही लेटे हुए थे। इसके बाद फिर एक बार उन्होंने आवजीको पुकारकर तेजीसे कहा, "देखो आवजी, जिन उपद्रवी लोगोंके साथ वह सारा दिन भटकता रहता हो, उन सबको पकड़कर कल ही हमारे सामने उपस्थित करना चाहिये। यह काम अबतक कभीका हो जाना चाहिये था, पर न जाने तुमने क्यों ध्यान नहीं दिया। तुम लोग बिल्कुल नमकहराम हो। जिसका नमक खाते हो, उसकी नौकरी किस प्रकार करनी चाहिये, इसका तुम्हें कुछ भी पता नहीं है। स्वयं तुम्हारा मालिक, तुम्हारा अन्नदाता चला गया, और तुम आनन्दपूर्वक हुक्का गुड़गुड़ाते और मजेसे खाते-पीते हो। जाओ—अभी जाओ—उठो, अब कोई न कोई काम किये बिना इधर न आना—अपना यह काला मुँह मुझे न दिखलाना—ख़बरदार—जाओ।"

आवजी पटेल बेचारे बहुत घबरा रहे थे। परन्तु अब अप्पा साहबका उपर्युक्त कथन सुनकर उनके जीमें जी आया। उन्होंने सोचा—चलो, किसी प्रकार प्राण तो बचे; और उठकर सलाम करके वे चलना

ही चाहते थे कि, इतनेमें दरवाजेसे एक नौकर आया, और बोला, "सरकार, बीजापुरसे सलामतखाँ सवार आया है, और कहता है कि, "एक अति आवश्यक लिफाफा लाया हूँ सो हुजूरको बहुत जल्द देना चाहिये।"

अप्पा साहब एकदम आतुर होकर कहते हैं, "जल्दी बुलाओ उसको जल्दी।" फिर आबजीकी ओर देखकर बोले "आबजी, अभी जाना नहीं। और कोई काम हुआ, तो बतलाता हूँ।"

सलामतखाँ बहुत दूर नहीं था। नौकर शीघ्र ही उसे भीतर ले आया। उसने नियमानुसार झुककर सलाम किया, और रूमालसे हाथ बाँधकर लिफाफा आगे रख दिया। अप्पा साहबने उसके सलामकी ओर तो कुछ ध्यान दिया नहीं, और बहुत जल्द अपने हाथसे लिफाफा खोला। समाचार कुछ बहुत लम्बा-चौड़ा नहीं था, परन्तु उसके पढ़ते ही अप्पा साहबका मुँह काला—स्याह पड़ गया!

छठां परिच्छेद

तहखानेके अन्दर

हमारे सिपाहीने "बजरंगबलीकी जय" कहकर ताल ठोंकी और हनुमानजीके आसनके नीचेके द्वारसे पैर लटकाकर तहखानेमें जानेका इरादा किया। यहाँतकका वर्णन पिछले एक परिच्छेदमें आ चुका है। उसके आगेका वर्णन जाननेके लिये हमारे पाठक अवश्य उत्सुक होंगे। अतएव अब रंगराव अप्पा साहबको तो बीजापुरका पत्र पढ़कर खेद करते हुए यहीं छोड़ दें, और हम हनुमानजीके मन्दिरमें फिर वापस आ जावें।

जैसा कि हम कह चुके हैं, हमारे सिपाही जवानने इस बातकी कुछ भी परवा न करते हुए कि, ऐसा करनेसे हमारे ऊपर कोई संकट तो न आ जायगा—अन्दर पैर डाल लिये। उसने सोचा कि, जो कुछ होना होगा, सो होगा, पर इसके अन्दर है क्या, इसका पता अवश्य

लगाना चाहिये। बस इसी विचारसे ज्यों ही उसने अन्दर पैर छोडे, त्यों ही उसके कानोंमें ये शब्द आ टकराये—"कौन है—कौन हरमजादा भीतर आनेका साहस कर रहा है ?" इसके साथ ही एक बड़े जोरकी ठोकर भी उसके पैरमें आ लगी। पर सिपाहीराम, बड़े जबरदस्त थे! उन्होंने उसकी कुछ भी परवा न की, और एक-दमसे यह चिल्लाते हुए कि, "जिसमें वैसा साहस होगा, वही ऐसा करेगा ?" तुरन्त ही ऊपरसे हाथ छोड़कर भीतर कूद पड़े। इसके बाद, जिसने उस वीरके पैरमें ठोकर मारी थी, उसकी ओर वे दौड़े। दोनोंमें लपटग होनेकी नौबत आई। परन्तु जिसकी ओर हमारा सिपाही इतना क्रोधित होकर दौड़ा था, उसका वेश और तेज ज्यों ही उसने देखा, वह ठिठककर पीछे हट पड़ा, और फिर चकित दृष्टिसे उसकी ओर देखने लगा। उसका वेश बिल्कुल फकीरकी तरह था। गलेसे लेकर पैरोंतक एक कफनी पहने था। एक हाथमें रुद्राक्षकी माला और दूसरेमें एक छोटी-सी कुबड़ी, जटा और दाढ़ी बढ़ी हुई थी। कोनेमें एक दीपक जल रहा था। उसके धुँधले प्रकाशमें वे दोनों एक दूसरेकी ओर अपने-अपने नेत्र—जो सन्ताप और आश्चर्यसे विस्तृत हो रहे थे—फाड़-फाड़कर देख रहे थे। यह नहीं कहा जा सकता कि, हमारा सिपाही जिस उद्देश्यसे उस फकीरवेशी व्यक्तिकी ओर देख रहा था, उसी उद्देश्यसे वह भी उसकी ओर देखता होगा। दोनोंका पेशा अलग-अलग था, सो उनके भिन्न-भिन्न वेशों परसे ही मालूम हो रहा था। सिपाहीकी चेष्टासे कुछ आश्चर्य, कुछ कौतूहल, कुछ पूज्यभाव और कुछ—बहुत ही थोड़ा—क्रोध प्रकट हो रहा था, और उस फकीरवेशी रुद्राक्षमालाधारी व्यक्तिकी दृष्टिमें आश्चर्य और क्रोधके अतिरिक्त और कुछ भी दिखाई नहीं देता था। दोनों एक दूसरेकी ओर देखते हुए बहुत देरतक खड़े रहे, किसीके मुखसे भी वचन न निकला। एक दूसरेपर आक्रमण करनेका जो आवेश उनमें पहले दिखाई दिया था, सो अब कम होने लगा। अन्तमें वह रुद्राक्ष-मालाधारी व्यक्ति मुसल्मानोंकी विशुद्ध भाषामें हमारे सिपाहीसे कहता है, "तू कौन है ? यहाँ क्यों आया है ? यहाँ तेरा क्या काम

है ? यदि तू व्यर्थ ही मौतके मुखमें न जाना चाहता हो, तो चुपके इसी रास्तेमें लौट जा, नहीं तो ...''

''नहीं तो क्या ? मैं मौतके मुखमें जाऊँगा ? अच्छा, मुझे मृत्युके मुखमें डालनेवाला कौन है ? सामने दिखाई तो दे—मैं देख लूँगा। आपके हाथसे तो यह बात हो ही नहीं सकती।''

''क्यों ? मेरे हाथसे क्यों नहीं हो सकती ? तू मुझे क्या समझता है ? मेरे इस वेशकी तरफ मत देख। मेरे ये बाल सफेद होने लगे हैं, इनपर भी मत भूल। मैं तुझे अच्छी तरह छकाऊँगा—पर पहले तू यह तो बतला कि, तू है कौन ? नहीं तो व्यर्थ ही मारा जायगा। तू इस तहखानेमें क्यों आया, सिंहकी गुफामें—मृत्युके मुखमें—आ पड़ा है, इसमें सन्देह नहीं। बोल तू कौन है ? यदि तू मुसल्मान है, तो अपने को मरा ही समझ।''

''क्या ? क्या ? मुसलमानके लिये यह मरने ही की जगह है ? वाह! वाह! तब तो मैं बिलकुल उचित ही स्थानपर आ गया हूँ। बाबाजी, सचमुच ही क्या यह जगह वैसाही है, जैसी कि आप बतलाते हैं ? तो यह बन्दा आपका गुलाम है। इस जगहमें आनेवालेको क्या मुसल्मान सचमुच ही अपने शत्रु जान पड़ते हैं ? तब तो मैं इसी जगहमें रहूँगा। बाबाजी, बोलते क्यों नहीं अब ? मैं कौन हूँ, इसका क्या अब भी आपको सन्देह है ? स्वामीजी, मैं असली मराठा हूँ। इससे अधिक और क्या बतलाऊँ ? यह देखिये, मेरी बड़ी भारी पहचान—और इससे भी अधिक यदि निशानी चाहिये, तो किसी मुसल्मानको आने दीजिये—मैं प्रत्यक्ष ही आपको दिखला दूँगा! किन्तु मुझे मुसल्मान समझकर मेरा अपमान न कीजिये।''

ये शब्द युवकने इतने जोशमें आकर कहे कि, वह पुरुष अत्यन्त कौतूहलके साथ उसकी ओर देखने लगा। उसके मुखमण्डलपर एक प्रकारका सन्तोष-सा दिखाई देने लगा। उसको स्पष्ट मालूम हो गया कि, हमारे सामने जो नवयुवक खड़ा है वह असली मराठा है—यही नहीं, बल्कि मुसल्मानोंका कट्टर शत्रु भी है। पाठको, क्या इसी

कारण तो उसके चेहरेपर सन्तोषकी झलक दिखाई नहीं दी? क्षणभर वह शान्तिपूर्ण दृष्टिसे उस ओर देखता है और फिर तुरन्त ही कहता है—"शाबाश बेटा, शाबाश! यदि सचमुच ही तू जो कुछ कहता है, वह सब सत्य है, तो फिर तुझको इस स्थानपर कोई भय नहीं। किन्तु तू कौन है? कहाँका है? और यहाँ आया कैसे? यह जबतक मुझे मालूम न हो जाय, मैं विश्वास कैसे करूँ?"

बाबाजीके मुखसे यह प्रश्न सुनते ही वह कहता है—"बाबाजी, यह सब जानकर आप क्या करेंगे? मैं एक मामूली मराठा हूँ। मेरे आगे-पीछे कोई नहीं। मैं तो योंही भटक रहा हूँ। आप मुझे यदि अपने पास रहने दें, तो मैं आपकी सेवामें रहूँगा—जीवनभर आपको छोड़कर कहीं नहीं जाऊँगा। इतना अवश्य कहता हूँ कि, संसारमें अब मेरा कोई नहीं, यह मैं अपने हृदयसे कहता हूँ। आप विरक्त हैं, सो आपके रूपसे ही दिखाई दे रहा है, किन्तु मैंने अभीतक वेश नहीं बदला है—आप यदि आज्ञा दें, तो आपहीके समान मैं भी हो जाऊँ। मेरे पीछे कोई बन्धन नहीं।"

"नहीं, नहीं, तू जो कुछ बतलाता है, इसपर मेरा बिल्कुल विश्वास नहीं जमता। तू अपनेको, कोई नहीं, बतलाता है, सो बिल्कुल झूठ है। मेरे समान विरक्त बननेका तेरा उद्देश्य नहीं है; और वैसी दशा भी नहीं! तेरा उद्देश्य मुझे मालूम हो गया है, पर मैं इस समय बताऊँगा नहीं। यह मैं जानता हूँ कि, वह अच्छा है; और मैं तुझे यह आशीर्वाद देता हूँ कि, उसके सफल होनेके मार्गपर तू शीघ्र ही जा लगेगा। यह न समझना कि, मैंने तुझे पहचाना नहीं—हाँ, तुझे यदि अपना नाम-ग्राम गुप्त रखना हो, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं—रख सकते हो—किन्तु······"

बाबाजी अभी अपनी पूरी बात न कहने पाये थे कि, इतनेमें एक सीटीसी बजी, और वे मानो उसकी आहटसी लेने लगे। इसके बाद बहुत जल्द वे आगेकी ओर गये कि, जिधर कुछ अँधेरासा था। फिर देखते-देखते वे वहाँ गायब हो गये। यह देखकर हमारा सिपाही बहुत

ही चकराया और इधर-उधर देखने लगा। पाव घड़ी हुई, आधी घड़ी हुई, एक घड़ी हुई, पर बाबाजीके लौटनेका कोई चिह्न दिखाई न दिया। यह है क्या—सोचकर सिपाही भी उसी ओर गया, जिधर बाबाजी गये थे। देखता क्या है कि उस ओर दूरतक टेढ़ासा रास्ता चला गया है, जो बिल्कुल अन्धकारमे व्याप्त है। इतना अन्धकार कि, कोई आँखोंमें उँगली डाले, तो भी कुछ मालूम न पड़े। आगे जावे या यहीं खड़ा रहे, सिपाही कुछ निश्चय न कर सका। हम इस विचित्र स्थानमें क्यों आये? यह है क्या? यही बारम्बार सोचकर वह बड़े गड़बड़मे पड़ा। बाबाजी अब आवेंगे, तब आवेंगे, सोचते सोचते वह कुछ देरतक वहीं खड़ा रहा। जिस समय कोई अत्यन्त उत्कंठित होता है, उस समय थोड़ा समय भी कितना अधिक जान पड़ता है, इसका सबको अनुभव है। फिर उसमें भी जिस जगह हमारा सिपाही खड़ा था, घोर अन्धकार था, वहाँ एक-एक पल एक-एक पहरके समान भास होना कोई कठिन नहीं था वह बेचारा खड़ा-खड़ा बिल्कुल उकता गया, और निश्चय किया कि, आगे बढ़े। अब उसने यह बिल्कुल न सोचा कि, ऐसे अँधेरेमें क्या संकट आवेगा, और क्या नहीं—उसने आगे पग बढ़ाया। हाथ आगे करके टटोलते टटोलते वह बहुत दूरतक गया। कितना दूर गया, इसका उसे कुछ भी पता न था। अन्तमें बिल्कुल घबड़ाकर उसने लौटनेका विचार किया, क्योंकि बाबाजीका कहीं बिल्कुल पता नहीं था। अतएव अब वह लौटनेवाला ही था, इतनेमें जिस हाथसे वह टटोल रहा था, उसके सामने ही एक दीवार मिली। पहले तो वह सीधा ही सीधा आ रहा था, किन्तु अब उसे दिखाई दिया कि सीधा मार्ग खतम हो गया। परन्तु सिर्फ इसीसे कि, सीधा मार्ग खतम हो गया, उसके मनको सन्तोष न हुआ। जिस मार्गसे वह गया था, वह मार्ग बिल्कुल सीधा ही न था, और अब आकर अन्तमें दीवार मिली, इससे इसके बनानेवालेका उद्देश्य क्या? अवश्य ही यह मार्ग अभी समाप्त नहीं हुआ है। यह कहीं न कहीं तिरछा गया है। यह सोचकर वह दीवारसे कुछ अलग होकर एक ओर चलनेको हुआ, इतनेमें तुरन्त ही उसका शरीर एक बाजूमें

टकराया—जैसे कि, किसी गुफाके द्वारका वाजू हो। इसलिये उसने सोचा कि, यहीं वाई ओरसे कहीं न कहीं भीतर पैठनेका द्वार अवश्य है यह सोचकर वह नीचे वैठ गया, और टटोलकर देखने लगा। इससे शीघ्र ही उसे मालूम हुआ कि, द्वार वहुत संकीर्ण है। परन्तु फिर भी उस साहसी पुरुषने भीतर घुसनेका निश्चय किया, और तुरन्त ही घुस भी पड़ा। इस जगह उसे दो-चार सीढ़ियाँ मिलीं। उनसे उतरकर वह नीचे गया, और फिर सीधा चलने लगा।

उस समय ऐसे भुँहारोंके मार्ग किलेपर रहनेवाले लोगों और सिपाहियोंके लिए अपरिचित न थे। आजकल जिस प्रकार भुँहारे और उनके मार्ग इत्यादि वातें लोगोंको विलकुल असम्भवसी जान पडती हैं, अथवा ऐयारी और तिलिस्मके उपन्यासोंमें ही जैसे इनकी अधिकता मानी जाती है, वैसी उस समय दशा न थी, उस समय सभी भारी-भारी किलोंके नीचे वड़े-वडे भुँहारे थे, और उन भुँहारोंसे चार-चार, पाँच-पाँच कोस-तक मार्ग भी निकाले गये थे। अव चूँकि ये मार्ग प्रायः नष्ट हो चुके हैं, इसलिये वातें किसीको सत्य भी नहीं मालूम होती। हाँ, अव उनके विषयकी आख्यायिकाएँ भर शेष रह गई हैं। परन्तु दौलतावाद [देवगढ] के समान किलोंकी जिन लोगोंने एक वार भी यात्रा की होगी, उनको इस वातका अनुभव और परिज्ञान अवश्य ही हुआ होगा कि, उन किलोंके मार्ग भुँहरोंसे गये हैं, और उनमें जाते समय भरे दो-पहरको भी मशाल लेकर जाना होता है। वह समय ही ऐसा था कि, उस समय भुँहारों इत्यादिके गुप्त मार्गोंकी वहुत आवश्यकता थी। किस समय मुगलोंका आक्रमण होगा; और हमको अपने कुटुम्वके साथ अपना महल अथवा किला छोड़कर भागना होगा, इसका कोई निश्चय न था। ऐसी दशामें सव वडे-वड़े धनाढ्य सरदारों और राजा-रजवाडोंको अपने अपने महलोंमें तहखाने रखने पडते थे। भुँहारे वनाकर उनसे गुप्त मार्ग दूर दूरतक ले जाने पड़ते थे। इससे घरके मुख्य-मुख्य लोगों और विश्वासपात्र नौकरोंको वे मार्ग उस समय पूर्णतया अवगत रहते थे। जव कभी कोई ऐसा मौका आ जाता, तो वे उसका उपयोग करते थे।

ही चकराया और इधर-उधर देखने लगा। पाव घड़ी हुई, आधी घड़ी हुई, एक घड़ी हुई, पर बाबाजीके लौटनेका कोई चिन्ह दिखाई न दिया। यह है क्या—सोचकर सिपाही भी उसी ओर गया, जिधर बाबाजी गये थे। देखता क्या है कि उस ओर दूरतक टेढ़ासा रास्ता चला गया है, जो बिल्कुल अन्धकारसे व्याप्त है। इतना अन्धकार कि, कोई आखोंमे उँगली डाले, तो भी कुछ मालूम न पड़े। आगे जावे या यहीं खड़ा रहे, सिपाही कुछ निश्चय न कर सका। हम इस विचित्र स्थानमें क्यों आये? यह है क्या? यही बारम्बार सोचकर वह बड़े गड़बड़में पड़ा। बाबाजी अब आवेंगे, तब आवेंगे, सोचते सोचते वह कुछ देरतक वहीं खड़ा रहा। जिस समय कोई अत्यन्त उत्कठित होता है, उस समय थोड़ा समय भी कितना अधिक जान पड़ता है, इसका सबको अनुभव है। फिर उसमें भी जिस जगह हमारा सिपाही खड़ा था, घोर अन्धकार था, वहाँ एक-एक पल एक-एक पहरके समान भास होना कोई कठिन नहीं था वह बेचारा खड़ा-खड़ा बिल्कुल उकता गया, और निश्चय किया कि, आगे बढ़े। अब उसने यह बिल्कुल न सोचा कि, ऐसे अँधेरेमें क्या सकट आवेगा, और क्या नहीं—उसने आगे पग बढ़ाया। हाथ आगे करके टटोलते टटोलते वह बहुत दूरतक गया। कितना दूर गया, इसका उसे कुछ भी पता न था। अन्तमें बिलकुल घबड़ाकर उसने लौटनेका विचार किया, क्योंकि बाबाजीका कहीं बिलकुल पता नहीं था। अतएव अब वह लौटनेवाला ही था, इतनेमें जिस हाथसे वह टटोल रहा था, उसके सामने ही एक दीवार मिली। पहले तो वह सीधा ही सीधा आ रहा था, किन्तु अब उसे दिखाई दिया कि सीधा मार्ग खतम हो गया। परन्तु सिर्फ इसीसे कि, सीधा मार्ग खतम हो गया, उसके मनको सन्तोष न हुआ। जिस मार्गसे वह गया था, वह मार्ग बिलकुल सीधा ही न था, और अब आकर अन्तमें दीवार मिली, इससे इसके बनानेवालेका उद्देश्य क्या? अवश्य ही यह मार्ग अभी समाप्त नहीं हुआ है। यह कहीं न कहीं तिरछा गया है। यह सोचकर वह दीवारसे कुछ अलग होकर एक ओर चलनेको हुआ, इतनेमें तुरन्त ही उसका शरीर एक बाजूमें

भीतर गया। देखता क्या है, कि सचमुच ही एक बड़ा विस्तीर्ण सभा-भवन बना हुआ है, और मध्यभागमें एक बड़ी विकराल अष्टभुजा देवीकी मूर्त्ति है। वह अपने पैरोंके नीचे एक बहुत ही भयंकर राक्षसको कुचल रही है। चार हाथोंमें चार आयुध और शेष चार हाथोंमें चार सिर लिये हुए है। शिरोंकी जिह्वाएँ बाहरको निकली हुई हैं। शिरको छोड़कर देवीके सम्पूर्ण अंगपर सिन्दूरके पुट चढे हुए हैं। उसके सामने उपर्युक्त बढे-बड़े नन्दादीप जगमगा रहे थे। उस देवीको देखते ही हमारे सिपाहीने एकदम साष्टाग नमस्कार किया, और फिर उठकर भाविक भक्तकी भाति हाथ जोड़कर देवीजीकी वन्दना की। इसके बाद जब वह सभा भवनमें इधर-उधर देखने लगा, तब क्या देखता है कि, चारों ओर हथियार ही हथियार रखे हैं। दीवारोंम तलवारें, ढालें, बन्दूकें इत्यादि टँगी हुई थी। भाले और बर्छियाँ तो असंख्य थीं। एक कोनेमें चार तोपें रखी हुई थीं, और उन्हींके नजदीक गोलोंकी दो राशियाँ लगी थीं। छोटे-छोटे हथियार, जैसे खंजर और कटारें इत्यादि अनेक थीं। दो शृंग टँगे थे। चार चवरें थीं। एक जगह पाँच-सात बड़ी-बड़ी लाठियाँ खड़ी थीं, जिनपर एक-एक बख्तर पडा हुआ था, और उनपर फौलादी टोप टँगे थे। यह सब देखकर वह जवान एकदम चकितसा दिखाई दिया; और अचम्भेके साथ मुँह-पर उँगली रखकर उन सब चीजोंको ओर देखने लगा। इसके बाद नीचे दृष्टि करनेपर वह क्या देखता है कि, जिन दीवारोंपर वे अस्त्र-शस्त्र टँगे थे, उन्हीं दीवारोंसे सटे हुए कई एक बड़े-बड़े सन्दूक रखे हैं, जिनमें बडे-बड़े भारी ताले पड़े हुए हैं। सन्दूक ऐसे मजबूत थे कि कुछ पूछिये नहीं, और ताले भी उनमें ऐसे आहनी थे कि, उन सन्दूकोंमें अत्यन्त मूल्यवान् वस्तुओं अथवा खजानेके अतिरिक्त और क्या हो सकता था। यह सब देखकर वह सिपाही अत्यन्त विस्मित हुआ। यह मामला क्या है, सो कुछ उसकी समझमें नहीं आया। वह इधर-उधर घूमने लगा। सब ओर उसनें खूब ध्यानसे देखा, पर कुछ अनुमान न कर सका। अन्तमें बेचारा थक गया; और विस्मित होकर देवीकी

सो यह जवान भी ऐसे मार्गोंसे अपरिचित न था। अतएव उसे वह गुफा देखकर कोई आश्चर्य नहीं हुआ, बल्कि, इसके विरुद्ध वह उन सीढ़ियोंसे उतरकर इस भाँति सीधा चलने लगा, जैसे मार्ग उसके परिचयका ही हो। सीधा चला, फिर उसके हाथमें दीवार छू गई, दाहिनी ओर घूम पड़ा। फिर सीधा गया, फिर बाईं ओरको थोड़ासा सीधा गया और ठिठक गया। इसके बाद कहीं न कहींसे कुछ उजेलासा उसे भास हुआ। जिस ओरसे कुछ उजेलासा भासता था, उस ओर उसने ध्यानपूर्वक देखा, तो सचमुच ही उधरसे उजेलेकी कुछ आभा आ रही थी—तुरन्त ही उसने सोचा कि, कुछ भी हो, इस उजेलेतक तो जाऊँगा ही। वह उसीकी सीधमें चला। चलते-चलते काठके एक दरवाजेके पास पहुँचा। दरवाजा बन्द था। उसकी दराजोंसे दीपकके समान उजेला आ रहा था। सो उसने देखा। इसके बाद उन दराजोंसे उसने जरा ध्यानपूर्वक देखा, तो भीतर सभाभवनके समान एक दरबार-हाल उसे दिखाई दिया। और सामने किसी देवताकी मूर्त्ति भी दृष्टिगोचर हुई। यह क्या है ? इतनी दूर भुँहारेके अन्दर यह मन्दिर किसका ? और इस मूर्त्तिके सामने इतने बड़े-बड़े नन्दादीप—खूब मनुष्यकी ऊँचाईके बराबरतकके शमादान—जल रहे हैं। उन दराजोंसे उसे जो कुछ दिखाई पड़ सकता था, सो सब उसने देखनेका प्रयत्न किया, पर, ऊपर जो बतलाया, बस उतना ही, उसे दिखाई दिया। अन्तमें उसने दरवाजा खोलनेका भी प्रयत्न किया, पर वह शीघ्र न खुला। इसमें बाहरसे ताला तो नहीं लगा ? यह देखनेके लिये उसने उसपर चारों ओरसे हाथ फिराया। ताला भी दिखाई न दिया। परन्तु हाँ, एक ऊपरकी ओर और दूसरी नीचे देहरीमें—इस प्रकार दो साकलें जरूर उसके हाथसे लगीं। ऊपरकी साँकल बहुत प्रयत्न करनेपर भी जब उसके हाथसे न खुली, तब उसने पुराने दरवाजोंकी भाँति उसका एक कपाट जोरसे ऊपरकी ओर उठाकर साकल खोलनेका प्रयत्न किया। इस प्रकार ऊपरकी साकल खुल गई, और फिर नीचेकी भी साँकल खुलनेमें देर न लगी। इस प्रकार दरवाजा तुरन्त खोलकर सिपाही

भीतर गया। देखता क्या है, कि सचमुच ही एक बड़ा विस्तीर्ण सभा-भवन बना हुआ है, और मध्यभागमें एक बड़ी विकराल अष्टभुजा देवीकी मूर्त्ति है। वह अपने पैरोंके नीचे एक बहुत ही भयकर राक्षसको कुचल रही है। चार हाथोंमें चार आयुध और शेष चार हाथोंमें चार सिर लिये हुए है। शिरोंकी जिह्वाएँ बाहरको निकली हुई हैं। शिरको छोड़कर देवीके सम्पूर्ण अंगपर सिन्दूरके पुट चढे हुए हैं। उसके सामने उपर्युक्त बड़े-बड़े नन्दादीप जगमगा रहे थे। उस देवीको देखते ही हमारे सिपाहीने एकदम साष्टाग नमस्कार किया, और फिर उठकर भाविक भक्तकी भाति हाथ जोड़कर देवीजीकी वन्दना की। इसके बाद जब वह सभा भवनमें इधर-उधर देखने लगा, तब क्या देखता है कि, चारों ओर हथियार ही हथियार रखे हैं। दीवारोंमे तल्वारें, ढालें, बन्दूकें इत्यादि टँगी हुई थी। भाले और बर्छियाँ तो असख्य थीं। एक कोनेमें चार तोपें रखी हुई थीं, और उन्हींके नजदीक गोलोंकी दो राशियाँ लगी थीं। छोटे-छोटे हथियार, जैसे खंजर और कटारें इत्यादि अनेक थीं। दो शृंग टँगे थे। चार चवरें थीं। एक जगह पाँच-सात बड़ी-बडी लाठियाँ खडी थीं, जिनपर एक-एक बख्तर पड़ा हुआ था, और उनपर फौलादी टोप टँगे थे। यह सब देखकर वह जवान एकदम चकितसा दिखाई दिया; और अचम्भेके साथ मुँह-पर उँगली रखकर उन सब चीजोंकी ओर देखने लगा। इसके बाद नीचे दृष्टि करनेपर वह क्या देखता है कि, जिन दीवारोंपर वे अस्त्र-शस्त्र टँगे थे, उन्हीं दीवारोंसे सटे हुए कई एक बड़े-बडे सन्दूक रखे हैं, जिनमें बडे-बड़े भारी ताले पड़े हुए हैं। सन्दूक ऐसे मजबूत थे कि कुछ पूछिये नहीं, और ताले भी उनमें ऐसे आहनी थे कि, उन सन्दूकोंमें अत्यन्त मूल्यवान् वस्तुओं अथवा खजानेके अतिरिक्त और क्या हो सकता था। यह सब देखकर वह सिपाही अत्यन्त विस्मित हुआ। यह मामला क्या है, सो कुछ उसकी समझमें नहीं आया। वह इधर-उधर घूमने लगा। सब ओर उसने खूब ध्यानसे देखा, पर कुछ अनुमान न कर सका। अन्तमें बेचारा थक गया; और विस्मित होकर देवीकी

ओर देखने लगा। उस समय यह भी उसके मनमें आया कि, देवीजीके आसनके नीचे भी तो कोई इसी प्रकारका चमत्कार नहीं है? अन्तमें जब कोई बात उसकी समझमें न आई, तब वह उसी जगह पड़ रहा; और थोड़ी ही देरमें उसे गम्भीर निद्रा आ गई।

इधर बाबाजी जहाँ गये थे, वहाँसे वापस आकर देखते हैं, तो सिपाही वहाँ है ही नहीं, जहाँ वे उसे छोड़ गये थे। उन्होंने इधर-उधर बहुत ढूँढ खोज की, अन्तमें वे उस चौकोने द्वारसे ऊपर भी आये, और मन्दिरमें तलाश किया, परन्तु कहीं कोई दिखाई न दिया। हाँ, घोड़ा अकेला अवश्य ही इधर-उधर घूमता हुआ हरी दूब चर रहा था। प्रभातकाल हो गया था। प्राकृतिक शोभा अत्यन्त रमणीय दिखाई दे रही थी। बाबाजीने बाहर आकर इधर उधर बहुत कुछ देखा, पर जब कोई भी दिखाई न दिया, तब वे फिर मन्दिरमें लौट आये, और भीतर-ही-भीतर कुछ गुन-गुनाते हुए हनुमानजीको जहाँका तहाँ बैठाकर स्वयं धूनीके पास आ विराजे। फिर मुँहसे कुछ दोहा इत्यादि कहते हुए अपनी चिलमकी तैयारीमें लगे।

सातवां परिच्छेद

गुप्त भेंट

पीछे बतलाया गया है कि, सुल्तानगढ़के चारों ओर जगल और झाड़ियाँ बहुत थीं। अब यहाँपर इतना ही कहना है कि, पीछेकी तरफ सबसे अधिक घना जगल था। बड़, पीपल, पाकड इत्यादिके वृक्ष विशेष थे, और इनके आस-पास घनी-घनी झाड़ियोंका घेरा था। इन झाड़ियोंमें मार्ग निकाले गये थे, पर वे बिलकुल अस्पष्ट थे। किले पर जानेके लिये मुख्य मार्ग आवजी पटेलके ग्रामसे ही था। शेष अन्य मार्ग भी किलेके दो पार्श्वोंकी ओरसे थे। पीछेके मार्ग बिलकुल गुप्त थे, और वे सिर्फ खास खास लोगोंको ही मालूम थे। सर्वसाधारणको उनका

ज्ञान न था। अवश्य ही उन मार्गोंसे प्रायः कोई आया-जाया नहीं करता था। पहले ये पीछेकी झाड़ियाँ एक प्रकारसे घाटीमें ही थीं। वहासे सिर्फ किलेके पीछेकी वड़ी पहाड़ीको उतरकर आगे जानेका ही मार्ग था। परन्तु आगे जानेकी कभी किसीको आवश्यकता ही नहीं पड़ती थी क्योंकि उस ओर वस्ती वगैरह कुछ थी ही नहीं। वह पहाडी, किलेकी मुख्य पहाड़ीकी अपेक्षा, कुछ नीची ही थी। ऐसी दशामें उस पहाड़ीका उपयोग एक प्राकृतिक कोटकी तरह था। पहाड़ीके आगे वहुत ही भयंकर जगल था; और उस ओर प्रायः लोग शिकार इत्यादि खेलने जाया करते थे।

ऊपर हमने यह वतलाया है कि, किलेके पीछेकी तरफ प्राय: कोई आता-जाता नहीं था। अवश्य ही जिस ओर विशेष किसीके आने-जानेकी सम्भावना नहीं रहती, उस ओरका स्थान ऐसे लोगोंके लिये वहुत ही उपयोगी होता है, जो गुप्त रूपसे लोगोंसे मुलाकात करना चाहते हैं, अथवा गुप्त वातें करना चाहते हैं, या जिनको गुप्त षड्यन्त्र रचने होते हैं, अथवा ऐसे ही और कोई कार्य करने होते हैं; जो उजेलेमें नहीं किये जा सकते। दो-चार अथवा अधिक लोग सलाह कर लें; और किसी न किसी एकान्त स्थानमें एकत्र हो जावें, और फिर वहाँ आनन्दपूर्वक जो कुछ वातचीत करना हो, अथवा जो कार्य करना हो करें, उसपर खूव आपसमें चर्चा करके मनमाना विचार करें। क्योंकि वहाँपर ऐसा सन्देह करनेका कोई कारण ही नहीं रहता कि, यहाँपर कोई आ जायगा; और हमारा सलाह-मशविरा, जान लेगा। इस प्रकारके अनेक स्थान किलेके उस ओर थे। अव्वल तो उस पहाड़ीके गर्भमें ऐसे अनेक गुप्त स्थान थे कि, जहाँ तीन-तीन चार-चार आदमी मजेसे हुक्का पीते हुए वैठे रहें। और फिर वे स्थान थे कैसे? गोमुखीके आकृतिके। अर्थात् उनके मुँहके पास ही जाकर चाहे मनुष्य झाँककर देखे, फिर भी पता न चले कि, यहाँ आदमी वैठे होंगे। अस्तु।

पिछले एक परिच्छेदमें वतलाया गया है कि, सलामतखाँ नामक वीजापुरके एक घुड़सवारने सुल्तानगढ आकर एक खरीता अप्पासाहव-

को दिया। उसको खोलकर देखते ही उनकी चित्तवृत्ति अत्यन्त खिन्न हो गयी। उनकी ऐसी दशा क्यों हुई, और उस खरीतेमे क्या था, इत्यादि बातें पाठकोंको शीघ्र ही मालूम हो जायंगी। यहाँपर तो सिर्फ इतना ही बतलाना है कि, उस खरीतेको पढते ही अप्पासाहबको उस समय अत्यन्त खेद हुआ, और कुछ देर वे चुप बैठे रहे। फिर कुछ सचेत होकर उन्होने शुद्ध उर्दू भाषामे कहा—"सलामतखाँ, तुम अपनी वर्दी वगैरह निकालकर आराम करो। आवजी, सलामतखाके खाने-पीनेका इन्तजाम कर दो। हुजूर-दरबारको इस खरीतेका जवाब हम जरा फुरसत पानेपर लिखेंगे। एक-आध दिन लग जाय, तो कोई हर्ज नहीं। जाओ, अब तुम। मुझे जरा घड़ीभर चैन मिलने दो।" यह कहकर अप्पासाहब फिर मसनदके सहारे लेट रहे। आवजी और सला-मतखॉ वहासे चल दिये। वहासे छूटते ही आवजीको बहुत सन्तोष हुआ, और वह सलामतखासे बातचीत करते हुए महलके बाहर आये। वहाँ आकर आवजीने देखा तो श्यामा वहाँ मौजूद था। पर इतनी देर वह कहाँ रहा, बीचमे अप्पासाहबके दरबार-हालमें द्वारसे झाँकता हुआ वह दिखाई दिया था, और फिर तुरन्त ही कहीं चला गया, फिर दरवाजे-पर जाने कहासे आ गया, बीचके समयमें इसने न जाने क्या किया, इन बातोंकी जॉच करना आवजी भूल गये। उन्होंने इसकी कोई आवश्यकता भी नहीं समझी। वे बेचारे अबतक इसी भयमे थे कि, कहीं दुबारा फिर महलके अन्दर न बुला लिया जाय, और फिर फजी-हत होनेकी नौबत आवे। इसलिये बाहर आते ही पहरेदारोंके जमादार-को यह हुक्म दिया कि, "तुम सलामतखॉका प्रबन्ध करो, अप्पासाहबने कहा है।" और स्वय, श्यामासे यह कहकर कि, "चल रे छोकरे।" आवजीने कदम आगेको बढ़ाया। किन्तु सलामतखाँ खास हुजूर-दरबार-का सिपाही था, वह भला आवजी पटेलको इस भाति कैसे जाने दे सकता था? उसने तुरन्त ही उनको रोककर कहा, "क्यों बे पटेल, हमारा प्रबन्ध करनेके लिये सरकारने तुझको कहा है, और तू इस तरह भागा जाता है—ऐसे कैसे काम चलेगा? याद रख, सलामतखा कोई ऐसा-

वैसा आदमी नहीं है। उसके हुक्के-पानीका इन्तज़ाम करके तब तू कहीं जा।" यह कहकर उसने आवजीकी पीठपर एक थाप दी। वह ख़ास हुज़ूर-दरबारका सवार था, उसके सामने आवजीकी क्या चल सकती थी? इसमें सन्देह नहीं, पटेलजी अपने गाँवके अधिकारी थे। पर सलामतख़ाँ उनकी क्या परवा कर सकता था? क्योंकि एक तो वह बीजापुर बादशाहीका सवार था, दूसरे आवश्यक खरीता लेकर आया था, और तीसरे अप्पासाहबने स्वयं उसके सामने ही आवजीको प्रबन्ध करनेकी आज्ञा दी थी! फिर क्या था? वह चाहे जो कह सकता था! उसमें भी विशेषता यह थी कि, किलेके उस बीचवाले दरवाजेपर जो लोग बैठे थे, उनमेंसे सर्फोजी इत्यादि चार-पाच आदमी ऊपर आये। बात यह थी कि, जब लोगोंने सुना कि सलामतख़ाँ दरबारसे कोई महत्वपूर्ण चिट्ठी ले आया है, तब सभीको यह इच्छा हुई कि, चलो उससे मिलें; और क्या खबर लाया है, सो मालूम करें, साथ ही चिलम चट्टी भी उड़ावें। परन्तु ऊपरवालोंको ही अपनी यह इच्छा तृप्त करनेको मौका मिल सकता है—उनके नीचेवाले बेचारे वैसे ही रह जाते हैं! सर्फोजीने ज्यों ही देखा कि, सलामतख़ाँ महलसे बाहर निकला, त्यों ही वह अपने दो-चार कृपापात्रोंको साथ लिये हुए ऊपर आया। उसी समय सलामतख़ाँ और आवजीका उपर्युक्त सम्भाषण हुआ, और आवजी अप्रसन्नतासे [परन्तु उस अप्रसन्नताको छिपानेके लिये बनावटी हँसी हँसकर] कुछ देर ठहर गये, और महलके बाहर कुछ अन्तरपर एक चबूतरा था, वहाँ गये, तथा हुक्का-पानी और बैठनेके लिये प्रबन्ध करनेको उन्होंने एक सिपाहीसे कहा। इधर सर्फोजी इत्यादिके आ जानेपर तो पूरी मण्डली जम गई, किन्तु सर्फोजीको देखते ही आवजीके मस्तकपर बल पड गये, और वे तुरन्त ही सलामतख़ाँसे बोले, "वाह! वाह! ख़ाँ साहब, अब तो तुमको हमारी कोई भी जरूरत नहीं रही। जमादार सर्फोजी साहब आ गये हैं, अब तुमको किसी बातकी कमी नहीं रहेगी। अब हमको जाने दो, तो बहुत अच्छा हो। सरकारने हमको एक जरूरी काम बतलाया है।"

यह सुनते ही सफोजी कहता है, "हाँ-हाँ, खाँसाहब, पटेलजीको जाने दीजिये। इनकी पटेलिन अजी, आप भी क्या गप्पें मारते हैं! इस वक्त काम कौनसा? और जैसे हमको कोई काम ही न हो! सच तो यह है कि, उस बेचारी पटेलिनकी · "

"सफोजी जरा जबान सम्हालकर बात किया करो। तुम इस तरह अट सट बकोगे, तो समझ लेना फिर! तुम अब बहुत ही "

इन शब्दोंका उच्चारण करते हुए आवजी पटेलने बहुत ही तेजी दिखलाई, अथवा यों कहिये कि, उस समय उनकी वह तेजी सच ही थी। उस वाक्यको अधूरा ही छोड़कर फिर वे सलामतखाँकी ओर देखकर बोले, "खाँसाहब, मुझे बहुत ही जरूरी काम है, मैं अब आपसे बिदा चाहता हूँ। ये लोग आपका सब प्रबन्ध करेंगे। आप आराममें रहिये। आप जब किलेसे उतरें, तब घर जरूर आवें।"

यह कहकर आवजी चल दिये—उन्होंने सलामतखाँके उत्तरकी भी प्रतीक्षा नहीं की।

इतने ही बीचमें सफोजीने सलामतखाको कुछ नेत्र-सकेत किया। उस सकेतका क्या अर्थ था, कुछ कहा नहीं जा सकता। शायद यही उसका मतलब हो कि, सलामतखाँ अब आवजीको जाने दे, रोके नहीं; क्योंकि इस बार उसने आवजीको रोका नहीं, और न उनसे ठहरनेका आग्रह किया। शायद सफोजीके नेत्र-सकेतमें और भी कोई अर्थ हो।

आवजी पटेल चले गये, किन्तु श्यामा उनके पीछे-पीछे नहीं गया। इसी बीचमें वह न जाने कहाँ चला गया। आवजीकी चित्तवृति इस समय ऐसी नहीं थी कि, वह श्यामाकी खोज करते, अथवा उसकी प्रतीक्षा करते। उनका मन इस समय कुछ क्रोध, कुछ चिन्ता कुछ खेद इत्यादि विकारोंके मिश्रणसे भरा हुआ था। अतएव वे अकेले ही चुपकेसे निकल गये।

इधर कुछ देर गप-शप होनेके बाद सफोजीको छोड़कर अन्य सब लोग चले गये। चले क्या गये—किसी न किसी बहानेसे सफोजीने ही उनको टरका दिया। सलामतखाँसे कुछ बातचीत करनेके लिये इस समय

वह बहुत ही उतावला-सा दिखाई देता था, लोगोंके चले जानेपर उसने एक बार चारों ओर देखा, और फिर सलामतखाँसे बोला, "मेरे लिये तो—की ओरसे कोई विशेष संदेशा नहीं है ?" जिस जगह रेखा कर दी है, वह नाम सर्फोजीने सलामतखाँ के बिल्कुल कानमें ही कहा, अतएव सिर्फ उसीको सुनाई दिया। सलामतखाँ भी इधर-उधर देखकर कहता है—"है, है। सन्देशा है, और एक कागज भी है। परन्तु वह तुझे बिल्कुल अलगमें देनेको कहा है। मैं समझता हूँ, यहाँ देना ठीक न होगा। शायद कोई देख न ले—मुझसे बार-बार डाटकर कह दिया है कि, बड़ी सावधानीके साथ, बिल्कुल गुप्त रूपसे, जहाँ किसीके होनेकी सम्भावना भी न हो, एसी जगह देखकर वह कागज तुझे दिया जाय। यहाँ देऊँ ? पर यहाँ देना ठीक न होगा।"

'नहीं, यहाँ नहीं। यहा ठीक नहीं है न जाने कौन दरवाजेसे आया; और कौन नहीं। किन्तु सन्देशा क्या है, सो बतलानेमें कोई हानि नहीं।' यह सर्फोजी कह ही रहा था कि, इतनेमें एक ओरसे कुछ गुनगुनाका भास हुआ। दोनोंने इधर-उधर कुछ देखा, पर यह समझकर कि 'कोई बात नहीं है; फिर उन्होंने अपना गुप्त भाषण प्रारम्भ किया।

"सन्देशा क्या है, सो तो तुम अभी मुझे बतला दो; और यहाँसे उठकर चलने लगो, तब चुपकेसे पत्र हमारे हाथमें दे देना। एक बार वह हमारे हाथमें आ जाय, फिर कोई चिन्ता नहीं। मैं उसे पढ्वाकर······।"

फिर किसीके गुनगुनानेकीसी आवाज आई। इसलिये इधर-उधर देखकर सर्फोजी बोला, "सूखे हुए पत्ते हिलते हैं, उन्हींकी यह आवाज होगी, अथवा उस वृक्षके नीचे कोई गिरगिदान-विरगिदान निकला होगा, उसीसे सूखे पत्तोंकी आवाज आई होगी। कोई आया वाया नहीं, अब तुम जल्दीसे वह सन्देशा बतला दो तो अच्छा होगा, नहीं तो शायद कोई आ ही जाय—यह चौराहेकी जगह है।"

सलामतखाँने तुरन्त ही उत्तर दिया, "सन्देशा-वन्देशा तो कोई विशेष नहीं है। आज रातको बारह बजे तू अपने उस हमेशावाले मकानमें आ,

और पूरा पूरा सब वृत्तान्त मुझको बतला, मैं आज वहाँ आऊँगा—बस, इतने ही शब्द तुझको बतलानेके लिये कहे हैं। इसके सिवाय इतना और कहा है कि बाकी हाल उस कागजमें है, सो वह कागज हम लोग जब नीचे चलेंगे, तब रास्तेमें तुझे देंगे।"

सलामतखाँका यह कथन अभी पूरा ही हुआ था कि, इतनेमें सच-मुच ही, सफोजीने जैसा अनुमान किया था, एक सिपाही महलके दरवाजेसे आया, और सलामतखाँसे बोला, "चलो, तुम्हारे घोड़ेको कुछ दाना वगैरह देना है, उसकी सेवा बरदासका प्रबन्ध करना है। सरकारने फिर अभी मुझसे बुलाकर कहा है।" यह सुनते ही सफोजी बड़ीतेजीसे चिल्लाकर यह कहते हुए उठा कि, "चल, चल, आगे तू, हम आते हैं, घोड़ा अभी घुड़सालमें बाँध दिया गया, और उसको दाना भी दे दिया गया, अब तू आया है—चला जा, किसीको उसकी सेवा-बरदासमें लगा।" उसके साथ ही साथ सलामतखाँ भी उठा। सिपाही सफोजीकी फटकार सुनकर दौड़ते हुए ही गया। सफोजी और सलामतखाँ उसके पीछे हो गये। इतनेमें उस चबूतरेके पीछेसे कुछ खुसखुसानेकीसी आवाज आई। इसके बाद यह दिखाई दिया कि, एक छोटासा सिर अपनी चातुर्यपूर्ण आखें ऊपर करके उन दोनोंकी ओर देख रहा है। साथ ही यह भी जान पड़ा कि, वह सिर कुछ विचारमें है। इसके बाद कुछ समयमें, जब कि वे दोनों दूर निकल गये, वह सिर कुछ ऊपर उठने लगा, और फिर उस सिरके शरीरके पैर तेजीके साथ उन दोनोंकी ओर जाने लगे। सिरकी दृष्टि पूरी-पूरी उन दोनोंके हाथोंकी ही ओर थी। इतनेमें सलामतखाके हाथोंसे सफोजीके हाथमें धरी किया हुआ एक छोटासा कागज गया, सो भी उसने देखा।

जिन छोटेसे, किन्तु अत्यन्त तीक्ष्ण और चंचल युगल-नेत्रोंने सलामतखाँ और सफोजीके बीचका यह सारा मामला देखा, और जिन छोटे छोटे तीक्ष्ण युगल-कर्णोंने उन दोनोंका संवाद सुना, उन नेत्रों और कर्णोंका छोटासा स्वामी, क्षणभरके लिये कुछ चकितसा होकर खड़ा हो गया, और फिर कुछ विचित्र तरहसे, आगे जानेवाले उन दोनों व्यक्तियो-

की ओर देखने लगा। उसके मनमें क्या विचार आ रहे थे; सो ठीक ठीक बतलाया नहीं जा सकता। क्योंकि उसकी अवस्थाको देखते हुए यह सम्भव नहीं था कि, उसके मनमें राजनीतिकी कोई बड़ी-बड़ी बातें— आती हों, जिनपर वह मन ही मन सोचता-विचारता हो। उसकी उम्र छोटी अवश्य थी, पर लड़का अत्यन्त चतुर और चपल दिखाई देता था। यह तो उसकी सदैवकी आदत थी कि, उसके आसपास यदि कोई कुछ बातें करता हो, अथवा कोई कुछ कार्य करता हो, तो वह बड़े ध्यानसे देखता-सुनता रहता था। सब प्रकारकी जाँच वह बड़ी होशियारीसे करता था। बस, उसी आदतके अनुसार जान पड़ता है, अबतकका उसका सारा व्यवहार था। जो हो, क्षणभरके लिये अब उसके मनमें मानो यही प्रश्न उठने लगे कि, इन दोनोंके पीछे क्या अब और कुछ दूरतक मैं जाऊँ? अभीतक जो कुछ मैंने देखा है, उससे अधिक क्या और कुछ मुझको मालूम होगा? परन्तु इन प्रश्नोंपर शायद उसके मनमें अब यही निश्चय हुआ कि, इनके पीछे जानेमें अब कोई लाभ नहीं। क्योंकि तुरन्त ही उसने अब किलेसे नीचे उतरनेवाला मार्ग पकड़ा। सलामतखाँ और सर्फोजी दोनों आगे जा रहे थे, परन्तु वह बड़ी सिताबी-के साथ उनके पासहीसे निकल गया। सर्फोजीने अपने कल्लोपर हाथ फेरते हुए एक बार उसकी ओर क्षुद्र दृष्टिसे देखा, परन्तु वह चालाक लड़का, बातकी बातमें, उन दोनोंको धता बताकर, किसी हिरनके बच्चेकी भाति उछलता हुआ किलेसे नीचे उतर आया। किलेसे नीचे उतरनेके बाद शायद दम मारनेके लिये ही वह कुछ थोड़ासा ठहरा, और जैसे कोई मार्ग भूला हुआ हिरनका बच्चा, कहीं दो मार्गोंके आ पड़नेपर इधर-उधर चकराने लगे, वैसे ही यह लड़का भी क्षणभरके लिये इधर-उधर चकराता रहा। उस समय उसके मनमें क्या आया, सो समझना कठिन था। वास्तवमें वह स्वय ही उस समय अपने मनकी उस दशाको जान सका, अथवा नहीं, इसमें शंका है। जो भी हो, अन्तमें ऐसा दिखाई दिया कि, उसके मनका कोई न कोई निश्चय हो गया—उसने आबजी पटेलके घरकी ओर क़दम बढाया। आबजी भी

और पूरा पूरा सब वृत्तान्त मुझको बतला, मैं आज वहाँ आऊँगा—बस, इतने ही शब्द तुझको बतलानेके लिये कहे हैं। इसके सिवाय इतना और कहा है कि बाकी हाल उस कागजमें है, सो वह कागज हम लोग जब नीचे चलेंगे, तब रास्तेमें तुझे देंगे।"

सलामतखाँका यह कथन अभी पूरा ही हुआ था कि, इतनेमें सच-मुच ही, सफोर्जीने जैसा अनुमान किया था, एक सिपाही महलके दरवाजेमें आया और सलामतखाँसे बोला, "चलो, तुम्हारे घोड़ेको कुछ दाना वगैरह देना है, उसकी सेवा बरदासका प्रबन्ध करना है। सरकारने फिर अभी मुझसे बुलाकर कहा है।" यह सुनते ही सफोजी बड़ीते जीसे चिल्लाकर यह कहते हुए उठा कि, "चल, चल, आगे तू, हम आते हैं, घोडा अभी घुड़सालमें बाँध दिया गया, और उसको दाना भी दे दिया गया, अब तू आया है—चला जा, किसीको उसकी सेवा-बरदासमें लगा।" उसके साथ ही साथ सलामतखाँ भी उठा। सिपाही सफोंजीकी फटकार सुनकर दौड़ते हुए ही गया। सफोंजी और सलामतखा उसके पीछे हो गये। इतनेमें उस चबूतरेके पीछेसे कुछ खुसखुसानेकीसी आवाज आई। इसके बाद यह दिखाई दिया कि, एक छोटासा सिर अपनी चातुर्यपूर्ण आखें ऊपर करके उन दोनोकी ओर देख रहा है। साथ ही यह भी जान पड़ा कि, वह सिर कुछ विचारमें है। इसके बाद कुछ समयमे, जब कि वे दोनो दूर निकल गये, वह सिर कुछ ऊपर उठने लगा, और फिर उस सिरके शरीरके पैर तेजीके साथ उन दोनोंकी ओर जाने लगे,। सिरकी दृष्टि पूरी-पूरी उन दोनोंके हाथोकी ही ओर थी। इतनेमें सलामतखाके हाथोसे सफोजीके हाथमे घरी किया हुआ एक छोटासा कागज गया, सो भी उसने देखा।

जिन छोटेसे, किन्तु अत्यन्त तीक्ष्ण और चंचल युगल-नेत्रोने सला-मतखाँ और सफोजीके बीचका यह सारा मामला देखा, और जिन छोटे छोटे तीक्ष्ण युगल-कर्णोंने उन दोनोका सवाद सुना, उन नेत्रो और कर्णोंका छोटासा स्वामी, क्षणभरके लिये कुछ चकितसा होकर खडा हो गया, और फिर कुछ विचित्र तरहसे, आगे जानेवाले उन दोनो व्यक्तियो-

की ओर देखने लगा। उसके मनमें क्या विचार आ रहे थे; सो ठीक ठीक बतलाया नहीं जा सकता। क्योंकि उसकी अवस्थाको देखते हुए यह सम्भव नहीं था कि, उसके मनमें राजनीतिकी कोई बड़ी-बड़ी बातें—आती हों, जिनपर वह मन ही मन सोचता-विचारता हो! उसकी उम्र छोटी अवश्य थी, पर लड़का अत्यन्त चतुर और चपल दिखाई देता था। यह तो उसकी सदैवकी आदत थी कि, उसके आसपास यदि कोई कुछ बातें करता हो, अथवा कोई कुछ कार्य करता हो, तो वह बड़े ध्यानसे देखता-सुनता रहता था। सब प्रकारकी जाँच वह बड़ी होशियारीसे करता था। बस, उसी आदतके अनुसार जान पड़ता है, अबतकका उसका सारा व्यवहार था। जो हो, क्षणभरके लिये अब उसके मनमें मानो यही प्रश्न उठने लगे कि, इन दोनोंके पीछे क्या अब और कुछ दूरतक मैं जाऊँ? अभीतक जो कुछ मैंने देखा है, उससे अधिक क्या और कुछ मुझको मालूम होगा? परन्तु इन प्रश्नोंपर शायद उसके मनमें अब यही निश्चय हुआ कि, इनके पीछे जानेमें अब कोई लाभ नहीं। क्योंकि तुरन्त ही उसने अब किलेसे नीचे उतरनेवाला मार्ग पकड़ा। सलामतखाँ और सर्फोजी दोनों आगे जा रहे थे, परन्तु वह बड़ी सिताबीके साथ उनके पासहीसे निकल गया। सर्फोजीने अपने कल्लोंपर हाथ फेरते हुए एक बार उसकी ओर क्षुद्र दृष्टिसे देखा, परन्तु वह चालाक लड़का, बातकी बातमें, उन दोनोंको धता बताकर, किसी हिरनके बच्चेकी भांति उछलता हुआ किलेसे नीचे उतर आया। किलेसे नीचे उतरनेके बाद शायद दम मारनेके लिये ही वह कुछ थोड़ासा ठहरा; और जैसे कोई मार्ग भूला हुआ हिरनका बच्चा, कहीं दो मार्गोंके आ पड़नेपर इधर-उधर चकराने लगे, वैसे ही यह लड़का भी क्षणभरके लिये इधर-उधर चकराता रहा। उस समय उसके मनमें क्या आया, सो समझना कठिन था। वास्तवमें वह स्वयं ही उस समय अपने मनकी उस दशाको जान सका, अथवा नहीं, इसमें शंका है। जो भी हो, अन्तमें ऐसा दिखाई दिया कि, उसके मनका कोई न कोई निश्चय हो गया—उसने आवजी पटेलके घरकी ओर कदम बढ़ाया! आवजी भी

अभी हाल ही में अपने घर आकर कुछ आराम करने लगे थे। न जाने वे किलेपरसे उतरकर आये थे, इस कारण, अथवा अन्य किसी कारणसे, उनका चेहरा बिल्कुल उतरा हुआसा दिखाई दे रहा था।

वह लड़का, जो किलेपरसे दौड़ता हुआ आया, ठीक आवजी पटेलके सामने ही आ उपस्थित हुआ। गाँवभरमें मानो प्रत्येकके घरमें उसे जानेकी पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त थी। पटेलजीके सामने ज्यों ही वह पहुँचा, त्यों ही उन्होंने बड़ी-बड़ी आँखें निकालकर उससे कहा—"अरे श्यामा, बदमाश, अभीतक कहाँ था? मैं ऊपरसे चला, तब तू कहाँ गया था? आ!" परन्तु श्यामा उनके इस धमकीपूर्ण प्रश्नसे घबड़ानेवाला लड़का न था। वह उनके प्रश्नका कुछ भी उत्तर न देते हुए बोला, "मैं वहीं था, आप बड़ी जल्दी चले आये, उस सफोंजी और सलामतखाँसे डरकर! किन्तु पटेलजी, सफोजी और सलामतखाँका कोई गोलमाल अवश्य है। मैंने आपके सामने ही उनको छिपकर आँखोंसे इशारा करते हुए देखा। उनकी कुछ-कुछ बातें भी मैंने सुनीं, और एक छोटासा कागज भी सफोजीको देते हुए देखा और पटेलजी, आज रातके बारह बजे, किलेकी उस ओर जो बाघका झरना है, वहाँ सफोजी-को किसीने बुलाया है, और वहाँ उसका जाना भी निश्चित हो चुका है—सच कहता हूँ, पटेलजी, सफोजी कोई न कोई गुप्त कारस्थानी अवश्य कर रहा है।

श्यामा पहले पहल जब बोलने लगा, तब आवजी पटेलने समझा कि, यह छोकड़ा कुछ न कुछ शैतानी कर रहा है, और उसको धमकानेके लिये आवजीने कुछ शब्द भी कहने चाहे, परन्तु जब श्यामा एकके बाद एक, अनेक बात बतला गया, तब आवजीकी चित्तवृत्ति बिल्कुल बदल गई। उन्होंने भली-भाँति समझ लिया कि, श्यामा जो कुछ कहता है, उसमें कुछ न कुछ सत्यता अवश्य है, और उस ओर ध्यान देना आवश्यक है। श्यामा गाँवभरमें सबसे अधिक बदमाश लड़का गिना जाता था। कोई उसे बड़ा बातूनी कहता, कोई उसे बड़ा गुरूघण्टाल कहता। परन्तु प्यार उसको सब कोई करते थे, और प्रत्येक

यही समझता था कि, इसके बराबर ईमानदार और कोई लड़का नहीं है। आवजी पटेलकी तो उसपर बड़ी कृपा थी। पटेलजी यद्यपि सदैव उसको गाली ही दिया करते, तथापि यदि किसी दिन श्यामा उनकी नजर न पड़ता, तो खास तौरपर उसे बुलवाना पड़ता था। उस लड़के-की सत्यप्रियता, चातुर्य, ईमानदारी इत्यादिके विषयमें सबको विश्वास था, और उसकी वाचालता उसके अन्य गुणोंके लिये शोभादायक हो थी। उपर्युक्त वृत्तान्त उसके मुखसे सुनकर आवजी पटेल कुछ देरतक चुप बैठे रहे। उस समय ऐसा जान पड़ा कि, कुछ ऐसी पिछली बातें उनके ध्यानमें आईं कि, जो श्यामाके बतलाये हुए वृत्तान्तसे मेल खाती थीं। इतनेमें घरसे स्नानके लिये उठनेको पटेलजीके सन्देशा आया। परन्तु उनका चित्त उपर्युक्त बातोंका विचार करनेमें ही निमग्न हो रहा था। घरसे जो सन्देशा आया, वह मानो उनके कानोंतक पहुँचा ही नहीं। इतनेमें वे एकदम उठकर बैठ गये, और श्यामाके सिरपर एक चपत जमाकर बोले, "अरे यह सब तू कहासे सुनता रहा? जान पड़ता है, यह सब झूठ ही कहता है—"

इसपर श्यामा एकदम बोला, "नहीं, नहीं, पटेलजी, मैं सौगन्ध खाकर कहता हूँ, कभी झूठ नहीं बोलूँगा। जो कुछ आपको अभी बतलाया है, सो सब मैंने स्वयं अपने कानोंसे सुना है, और दौड़ता आया हूँ आपको बतलानेके लिये। पटेलजी, मैं सच कहता हूँ, यह सर्फोजी बड़ा ही खोटा आदमी है। किसी न किसी बुरे काममें वह अवश्य लगा है। उसकी बोल-चाल, काम-काज, उठ-बैठ सब बदमाशी-से भरी है।" वास्तवमें आवजी पटेलको यह शंका ही नहीं हो सकती थी कि श्यामा झूठ कहता है, अथवा कुछ बनाकर कहता है। इस समय इन्होंने श्यामाको झूठा बनानेके लिये भाषण किया, सो मानो इसीलिए कि जिससे उनके मनके उस समयके विचार खुलने न पावे, या न विचारोंके कारण आई हुई विमनस्कता बाहर प्रकट होने पावे। श्यामाने उनको क्या उत्तर दिया, सो उन्होंने सुना होगा, अथवा नहीं, इसमें सन्देह ही है। अस्तु। वे बहुत देरतक विचार करते रहे; और

फिर उठे, तब श्यामासे कहा, "क्यों लड़के, तूने अभी रोटी खाई है या नहीं ?" श्यामाने कहा, "नहीं।" यह सुनकर पटेलजी बोले, "अच्छा तो चल" मेरे साथ रोटी खाले, और फिर जल्दी किलेपर जा, और सुभानको बुला ला।"

श्यामा तुरन्त ही बोल उठा, "अजी, फिर रोटी खानेकी ही ऐसी क्या जल्दी पड़ी है ? मैं अभी उसे बुलाय लाता हूँ। फिर घर जाऊँगा, तब रोटी खा लूँगा। श्यामा रोटीके लिये रुकनेवाला नहीं, और न रोटीके लिए वह अपने काम ही छोड़ेगा। हाँ, अम्मा जरा नाराज होगी, सो नाराज होने दो—वह तो ऐसे रोज ही नाराज होती रहती है।"

इतना कहकर वह चलनेको तैयार हो गया, पर आवजी पटेलने उसे जाने नहीं दिया। पहले अपने साथ उन्होंने उसे रोटी खिलाई, और फिर सुभानको बुलानेके लिये भेजा। अव्वल तो लड़केकी जाति स्वाभाविक ही बड़ी चपल होती है, फिर उसमें भी श्यामाके लिये क्या कहना। वह जिस वेगके साथ किलेसे नीचे उतरा था, उससे दूने वेगके साथ इस बार सुभानको बुलानेके लिये जा रहा था। आज रातको कोई न कोई तमाशा देखनेको मिलेगा, सुभान और पटेलजी सफोजीकी ताकमें रहेंगे, और फिर मैं भी उनके पीछे-पीछे जाऊँगा, और सब तमाशा देखूँगा—बस, इसी प्रकारके विचार बराबर उसके मनमें आ रहे थे और इन्हीं कौतूहलप्रद विचारोंकी सनकमें वह छोकरा खूब तेजीसे चला जा रहा था। बातकी बातमें वह किलेपर पहुँच गया, और फिर सफोजीकी आँख बचाकर सुभानसे मिला। सुभानको पटेलजीका सन्देशा बतलाया, और तुरन्त ही फिर लौट पड़ा। किन्तु लौटते हुए वह सफोजी-की नजरसे बच नहीं सका। सफोजी मार्गपर ही मौजूद था। श्यामाको वापस आते हुए उसने देखा, और कुछ चकितसा होकर उसको बराबर देखता रहा। श्यामा बड़े चक्करमें पड़ा। उसने सोचा कि, अब यदि मैं इस दुष्ट सिपाहीके सामनेसे निकलता हूँ, तो वह यह कहकर कि, "तू ऊपरसे नीचे, और नीचेसे ऊपर बार-बार क्यों आता है ?" मुझको

डाटे विना न रहेगा, और यदि उसकी आँख बचाकर दूसरी ओर जाता हूँ, तो भी अच्छा नहीं है। इससे मेरे आने-जानेका कारण शायद यह समझ जायगा, और रातका सारा तमाशा विना कारण ही हाथसे चला जायगा। इस प्रकारकी अनेक बातें आईं, परन्तु श्यामा एक बड़ा ही ढीठ लड़का था—वह सामनेके मार्गसे सर्फोजीने उसे रोका, और धमकाया, पर लड़का बड़ा जबरदस्त था, वह भला इसकी क्यों परवा करने लगा! उसके सामने ढिठाई करके, उसकी थोड़ी-बहुत हँसी करके उसे हँसाकर, और इस प्रकार उसे धता बताकर निकल गया। उसके पीछे-पीछे सुभान भी किलेके नीचे उतरा। यह देखकर अवश्य सर्फोजीको कुछ सन्देह हुआ। परन्तु जो मनुष्य अपना अभीष्ट उद्देश्य सिद्ध करनेको उत्सुक होता है, उसके सामने ऐसे छोटे-बड़े सन्देह चाहे जितने आवे, वह तुरन्त ही उनको व्यर्थ समझकर अपने मनका समाधान कर लेता है। तदनुसार सर्फोजीने भी अपने मनका समाधान कर लिया। इधर सुभान आवजी पटेलके सन्देशेके अनुसार उनके पास गया। दोनोंका बहुत देरतक एकान्तमें सम्भाषण होता रहा। अन्तमें श्यामाके बतलाये हुए समय और स्थानपर रातमें जानेका निश्चय हुआ।

सर्फोजी और किलेपरके अन्य नौकरोंमें पटती नहीं थी। इधर आवजी पटेलके साथ भी उसका मेल नहीं था, सो पाठकोंको मालूम ही हो चुका है। सुभानका और सर्फोजीका तो बहुत ही वैमनस्य था, इसलिए जब आवजी तथा सुभानको यह मालूम हुआ कि, आज सर्फोजीको कोई न कोई बुराई हमको अवश्य मालूम होगी, तब उनको मानो एक प्रकारका आनन्दसा हुआ। श्यामाके कथनपर उन्हें पूरा-पूरा विश्वास नहीं होता था, इसलिए उन्होंने वार वार उससे खोद खोदकर पूछा—"सलामतखाँने क्या कहा था? सर्फोजीने फिर उससे क्या कहा? जिससे आज उसकी गुप्त भेंट होगी, उसका नाम क्या तुमको मालूम हुआ? सर्फोजी अथवा सलामतने क्या उसका नाम लिया था?" इत्यादि प्रश्न दोनोंने मिलकर बार बार उससे पूछे। परन्तु जितनी जानकारी उस लड़केको थी, उतनी उसने बार बार उन दोनोंको बतला दी थी। अस्तु,

सारा वृत्तान्त सुन लेनेपर उन दोनोंने उस रातको वहाँ जानेका निश्चय किया। सुभानने अपने अन्त चक्षु एक बार उस स्थानकी ओर घुमाकर भलीभाँति देखा कि वहाँ सर्फोजी और उससे जो मिलनेवाला है, वे दोनो कहाँ बैठेंगे और कहाँ खड़े होंगे, तथा हम लोग पहले जाकर कहाँ खड़े हों, जिससे उनकी गुप्त मन्त्रणा ठीक ठीक हमारे कानोंमे पड़े। परन्तु सुभानकी सूरतमे यह नहीं जान पड़ा कि अपने अन्त चक्षुओंके उस निरीक्षणने उसको कोई विशेष सन्तोष हुआ। बहुत देरतक बराबर वह विचार करता रहा। अन्तमे आवजीकी पीठपर थाप मारकर वह बोला 'पटेलजी, मै एकबार उधर हो आता हूँ। उस स्थानकी ओर बहुत दिनसे मै गया नहीं हूँ, इसलिए पहले अच्छी तरह देख आऊँ। इसके सिवाय अभीसे यहाँ बैठा रहना भी ठीक न होगा। एक बार किलेपर हो आना ही अच्छा है। वह बदमाश ज्यो ही वहाँसे चलेगा, मै तुरन्त तुम्हारे पास आ जाऊँगा। तुम तैयार रहो, बस।" इतना कहकर वह तुरन्त ही उठ पडा। श्यामाने कहा, "मैं भी रातको आपके पीछे-पीछे चलूँगा।" सुभान वहाँ गया, और जो कुछ उसे देखना था, अच्छी तरह देखकर किलेपर चला गया। वह अपने कार्यमें बिल्कुल निमग्नसा दिखाई दिया। परन्तु उसका सम्पूर्ण ध्यान उस समय सर्फोजी के कार्योंकी ओर था। बीच-बीचमें किसी कामके बहाने वह सदर दरवाजेपर जाता, और किसी न किसीके द्वारा सर्फोजीका सारा हाल जान लेता था। साथ ही वह इस बातका भी पूरा ध्यान रखता था कि, किसीको उसपर सन्देह न होने पावे। समय ज्यों-ज्यो नजदीक आने लगा, त्यो-त्यो वह अधिक उतावला होता गया। अन्तमें अपने स्वामीके पास जाकर उसने यह कहकर इजाजत ले ली कि, 'आजकी रातको मुझे नीचे गाँवमें किसी कामसे जाना है।" इसके बाद वह एक ऐसे मार्गसे नीचेकी ओर चला कि, जिस मार्गसे सर्फोजीसे भेंट नही हो सकती थी। सर्फोजी यद्यपि अपने स्थानसे नहीं चला था, परन्तु सुभानने इस बातका पता लगा लिया था कि, वह उस समय आज अवश्य जायगा, और उसने अपने अधीनस्थ नायकसे इस बातका भी प्रबन्ध करा लिया है

कि, जिसने अमुक समयपर उसके अनुपस्थित रहनेसे किसी प्रकारकी गड़बड़ी न मचे। यह समाचार पाते ही मूछोंपर ताव देते हुए सुभानरावकी सवारी, एक बिलकुल नवीन ही मार्गसे, किलेके नीचे उतरने लगी। उसके सिरमें कई विचार चक्कर काट रहे थे। इससे, अवश्य ही मार्गकी ओर जितना ध्यान देना चाहिए था, उतना नहीं दे सकता था। फिर भी वह इतनी शीघ्रताके साथ उस पहाड़ी किलेसे नीचे उतर रहा था, कि जैसे ऊपरसे छोड़ा हुआ कोई गेन्द, अथवा तेजीसे दौड़ता हुआ कोई साँप। पैरोंके नीचेका मार्ग उसे इतना मालूम था कि, जहाँ कहीं पत्थर आ पड़े, अथवा कोई मोड़ बीचमें आ जाय, तो वह बिना नीचा देखे ही पार करता जाता था। पहाड़ी किलोंसे नीचे उतरना और ऊपर चढ़ना कितना कठिन होता है, इसका अनुभव हमारे उन्हीं पाठकोंको हो सकता है, जिनको कभी ऐसे किलोंपर चढ़नेका मौका आया है; परन्तु उस समयके उन किलोंके नौकरोंमें इतनी चपलता रहती थी कि, उतार और चढ़ाव, दोनोंमें वे हिरनकी तरह उछलते कूदते चले जाते थे। अस्तु।

सुभान रास्ते-रास्ते यह सोचता जाता था कि, इस नीचपे—सर्फोजीसे—आज जो मिलने आनेवाला है, वह है कौन? क्यों मिलने आता है? बीजापुरसे आता है, सो भी सिर्फ इससे मिलनेके लिए! यह बात क्या है? उसको चिट्ठी भी दी! पर यह मूर्ख पढ़ना भी तो नहीं जानता! चिलम सुलगाकर पी गया होगा! और क्या करेगा? किन्तु यह मामला क्या है? जान पड़ता है, इसमें कोई न कोई बड़ा भेद है, नहीं तो इसकी इतनी पूछ कौन करता? इसने कुछ न कुछ किसीसे डींग मारी होगी, किसीको कुछ वचन दिया होगा, नहीं तो ऐसा क्यों होता? भला बच्चाजी! सर्फो, मैं नामका सुभान हूँ—आओ तो एक बार बच्चा हमारे पंजेमें! मैं अबतक वे पीछेकी—भूला नहीं हूँ। वह मेरे सिरका घाव अबतक ताजा है। बेटाजी! तुमने हमारे सिरपर घाव नहीं किया—सापकी पूँछपर चोटकी है! मैं वही सुभान हूँ, जिसका·· तू समझता

क्या है ? पूरा पूरा बदला निकालूँगा। और इसमें भी यदि कुछ नाना साहबके विरुद्ध हुआ, तो फिर समझ ले कि ·· ····

इसी प्रकारके विचार करता हुआ वह नीचे आ पहुँचा, और शीघ्र ही आवजी पटेलके घर पहुँचा। आवजी बिलकुल तैयार थे, परन्तु उनका मन अब तैयार नहीं था। इसलिए इस प्रकारके बहाने वह बतलाने लगे कि, तू अकेला ही जा—मेरी क्या आवश्यकता है? हम दोनों ही यदि जायँगे, तो शायद उनको यह सन्देह हो कि, छिपकर आये हैं, और उनकी गुप्त मन्त्रणा सुनते हैं, इत्यादि। सच तो यह था कि आवजी अब उतरती अवस्थाके पुरुष थे, अतएव झगड़ोंसे वे बहुत बचना चाहते थे। परन्तु सुभान भला क्यों मानता! उसने उनको घसीट ही लिया। अन्तमें बेचारे उठे और चल दिये। श्यामा उस समय कहीं न दिखाई दिया। दोनों ही चाहते थे कि, वह साथ रहे, परन्तु फिर यह भी सोचा कि, लड़का है, शायद कुछ कर बैठा, हम कुछ सुनने भी न पाये, और भेद खुल गया, तो क्या लाभ होगा? बड़ी गड़बड़ी मचेगी। यही सोचकर उन्होंने श्यामाकी तलाश नहीं की, और चल दिये। गाँवकी सीमा पार करके अब वे जंगली रास्तेपर आये, आवजी बेचारे ठोकर खाने लगे। उनका शरीर अब उनसे न सम्हलने लगा। रात अँधेरी थी, और सुभानके समान चपल मनुष्यका साथ! फिर क्या कहना है! "अरे राम! हे ईश्वर!" के शब्द प्रत्येक ठोकरपर बेचारेके मुखसे निकलने लगे। यह देखकर सुभान बोला, "चुप्-चुप् पटेलजी, क्या है तुम्हारे मनमें? सब भेद खोल देना चाहते हो? बिलकुल चुप रहो—मैं जहाँतक इस मामलेका विचार करता हूँ, यही मालूम होता है कि, सर्फोजी किसी बड़ी कारस्तानीमें लगा हुआ है। कोई भयंकर षड्यन्त्र वह करना चाहता है। नानासाहबके साथ इसकी बड़ी दोस्ती थी। पीछे-पीछे तो वे इनसे खूब सलाह-मशविरा किया करते थे। इन सब बातोंको याद करके बड़े ही विचित्र विचार मेरे मनमें आते हैं। इस नीचके मनमें क्या है? कौन इससे मिलने आवेगा।" इसी प्रकारकी बातें बिलकुल धीरे-धीरे कहकर वह आवजीको चुप करनेका प्रयत्न करता था।

आवजी बेचारे कहते ही क्या ? सब ठोकरें इत्यादि चुपकेसे सहन करते हुए चले जा रहे थे। नियत स्थान ज्यों-ज्यों निकट आने लगा, सुभान आवजीको और भी अधिकाधिक दावने लगा, और आवजी ठोकरें भी अधिकाधिक खाने लगे। उनका कष्ट बढ़ने लगा, और चुप रहनेकी आवश्यकता भी बढ़ने लगी। दोनोंका समीकरण उनसे हो नहीं सकता था। इतनेमें सुभानको मालूम हुआ कि, सामनेसे कोई आरहा है और ताली बजाकर इशारा करता है। सुभान तुरन्त ही ठहर गया और आहट लेने लगा। इतनेमें बिल्कुल पाससे ही, धीमे ये शब्द उन दोनोंके कानोंमें पड़े—"सुभान! पटेलजी, अब एक अक्षर भी मुँहसे न निकालो वह आदमी आ गया और घोड़ेको पेड़में बाँधकर उस जगह खड़ा है, सर्फोजी अभी नहीं आया, जल्दी ही आवेगा। तुम बिल्कुल धीरेसे, चप्पल निकालकर, उधरसे आकर देखो। उसके पास जानेकी आवश्यकता नहीं।" ये शब्द किस चतुर और छोटेसे मुखसे निकले थे, सो उन दोनोंने पहचान लिया, और उसको सुनकर दोनोंको आश्चर्य भी हुआ! वे समझते थे कि, दोपहरकी थकावटके कारण छोकरा घरमें जाकर सोता होगा, परन्तु उनका यह अनुमान गलत निकला, और वह उनके पहले ही वहाँ जाकर हाज़िर हो गया। ऐसे विकट स्थानपर, और रातके समय, इतनी शीघ्रतासे उसको आया हुआ देखकर दोनोंको अत्यन्त ही आश्चर्य हुआ।

श्यामाके उक्त कथनको सुनकर दोनोंहीने उसीके कहनेके अनुसार किया। उन्होंने अपने-अपने चप्पल तुरन्त ही निकाल लिये। श्यामाने उनको अपनी फटी हुई धोतीमें लपेट लिया, और बगलमें दाबकर आगे-आगे चलने लगा। अब चन्द्रदेवने क्षितिजसे अपना सिर थोड़ा थोड़ा ऊपर निकालना शुरू किया था, इस कारण मार्ग चलनेमें अब उनको कुछ सहायता भी मिल रही थी। श्यामाने जिस टेकरीका पता बतलाया था, उसके पीछे जाकर तंग जगहोंसे चढ़ना और छिपकर बैठना बहुत कठिन था, पर इस समय कठिनाईमें घबड़ाकर पीछे हटने-का भी मौका नहीं था। उतना साहस भी न किया जाता, तो अवतक-

का किया सारा प्रयत्न व्यर्थ था। पहले वे दोनो जिस जगह गुप्त भेंट करनेवाले थे, वह जगह बिल्कुल सुलभ थी, उसके आस पास छिपकर बैठनेके स्थान भी अच्छे थे, परन्तु अब जिस टीलेपर उस आदमीके खड़े होनेकी खबर श्यामाने बतलायी थी, उसके पीछेकी ओरसे लग जगहोंसे ऊपर चढ़ना और टीलेके पिछले भागमे नीची जगहोंमे, मेढककी तरह छिपकर बैठना तथा इस प्रकार ऊपरके लोगोंकी गुप्त बातचीत सुनना बहुत कठिन काम था परन्तु इसके सिवाय और कोई मार्ग नहीं था। पटेलजीके लिये यह प्रयास अत्यन्त असम्भव था। उनका इस प्रकार चढ़ना मानो एक प्रकारसे स्वर्गारोहण ही था। इसलिए उनके विषयमें इतना ही निश्चय किया गया कि, वे टीलेके नीचे किसी गुप्त स्थानमें बैठें जहांसे वे किसीको दिखाई न पड़ें। इस प्रकार सलाह होकर तदनुसार कार्य करनेका निश्चय हुआ, और आवजी पटेलको टेकड़ीके पीछेकी ओर एक खड्डेमें बैठाकर वे दोनों उस पहाड़ीके पीछेकी ओरसे ऊपर चढ़ने लगे। वह चढाई इतनी कठिन थी कि, आवजीको क्षण-क्षणपर यही विश्वास होने लगा कि, अब दोनोंमेंसे एक न एक अवश्य शिथिल होकर नीचे गिरेगा, और उसकी कपालक्रिया होगी। सुभान कुछ सावधानीसे चढ रहा था, पर श्यामा तो बिलकुल मेढककी भांति ही फुदकता हुआ जारहा था। चढते-चढते वह एक ऐसी जगह पर पहुँचा जहांसे ऊपरकी बातचीत सहजमें सुनाई दे सकती। उसी जगह एक खोह थी, जिसमें घुसकर बैठनेके लिए श्यामाने सुभानको इशारा किया, और स्वय और भी कुछ ऊपर गया—इतना ऊपर गया कि, जहांसे हाथ दो हाथ टेकड़ी और रह जाती थी—और फिर वहां छिपकर बैठ गया। इस दशामें उसको यदि इस समय कोई देखता, तो यही जान पड़ता कि, कोई बन्दर खोहमें छिपा बैठा है। इस प्रकार सुभान और श्यामा ऊपरकी ओर कान लगाये इस उत्सुकतासे बैठे कि, कब आवाज़ आवे, और कब हम सुनें। ऊपर टेकड़ीपर जो व्यक्ति था, वह कभी-कभी उकताकर इधर-उधर टहलने लगता, तब उसके पैरोंकी आहट उन दोनोंको भलीभांति सुनाई देती। इस कारण उनको विश्वास हो

गया कि, ऊपर जो बातचीत होगी, वह भी हमें अच्छी तरह सुनाई देगी। बहुत देर हो गई, पर सर्फोजीका कहीं पता नहीं। अतएव ऊपर जो व्यक्ति इधर-उधर घूम रहा था, वह बहुत त्रस्त हुआसा दिखाई दिया। उसने चार-पॉच ऐसी गालियॉ सर्फोजीको दीं कि जो लिखी नहीं जा सकतीं। इसके सिवाय वह और भी कुछ ऐसे वाक्य कह रहा था कि, जिसमें सर्फोजीके सात पीढ़ियोंके पुरखे तर जा सकते थे। इतनेमें उसने देखा कि, कोई उस टेकड़ीपर चढ रहा है। तब वह और भी अधिक बकने लगा। विशुद्ध उर्दू भाषामें गालियाँ देते हुए वह बोला, "हरामजादे, इतनी देर तूने क्यों लगा दी? अपने बापको इतनी देरसे यहॉ बैठाल रखा? तुमको शरम नहीं लगती? इस समय तुझपर मुझे इतना क्रोध आया है कि, इसी तलवारसे तेरे टुकडे-टुकडे करके यहीं फेंक दूँ। पाजी कहींका। क्या तू समझता था कि, जितनी तूने मुझे बतलाईं, उतनी सभी मैं सच समझूँगा?" सर्फोजी घबड़ाई हुई आवाजसे बोला—"मैंने जितनी बातें बतलाईं, उनमेंसे एक भी झूठ नहीं। क्या मैं जानता नहीं हूॅ कि, झूठी बातें आपसे कहला भेजनेमें मेरा गुजारा कैसे हो सकता है?"

"तब क्या तू जो कहता है कि 'अब वह नमकहराम छोकरा इधर कभी नहीं आवेगा, इसका प्रबन्ध हो गया'—सो क्या सच है?"

"बिल्कुल सच। आप उसके विषयमें बिल्कुल सन्देह न करें। वह अवश्य चला गया। आप निश्चित समझें। मैं जिसको एक बार कहूॅगा उसे फिर बिना किये न छोड़ूँगा। मैंने स्वय ही उसको जानेमें सहायता दी है। मैंने खुद उसे बतलाया है कि वह कहॉ जावे, और कैसे जावे। सब रास्ते मैंने स्वय बतलाये हैं और उसको अब तक पूर्ण विश्वास है कि, मेरे समान विश्वासपात्र नौकर तथा मित्र संसारमें कहीं नहीं मिलेगा। यह बिल्कुल ठीक कहता हूँ, आप विश्वास रखें। अब आप निश्चिन्त होकर अगली कार्यवाहीमें लगें। मैं कर ही रहा हूॅ। इस तरफसे आप निश्चिन्त रहें यहॉका सारा प्रबन्ध मैंने अपने हाथमें लिया सो कई बार आपसे निवेदन कर ही चुका हूॅ। बिल्कुल निश्चिन्त

गरिये—गो " सफोजीके मुँहसे "हाँ" का शब्द सुनते ही वह महाशय कुछ गुस्स और कुछ नाखुश भी होकर कहता है—"हाँ ? हाँ क्या ? बोल, बोल तेरे 'हाँ' का क्या मतलब है ? 'हाँ-हाँ' कहकर जो कुछ तू कहना चाहता हो, जो कुछ तेरी शर्त हो, सो कह क्यों नहीं डालता ? अरे बदमाश, तेरे समान लोग यदि संसारमें होते ..." इतना कहकर न जाने क्या समझकर उसने अपनी जीभ दाँतों तले दबाई, और फिर एकदम अपना स्वर बदल कर बोला, "हाँ तेरा इनाम तुझे शीघ्र ही मिलना चाहिये, यही तो ? तेरे द्वारा यदि हम काम करा लेते हैं, तो फिर तुझे तेरे योग्य इनाम क्यों न मिलेगा ? 'हाँ' कहकर उसकी याद दिलानेकी कोई आवश्यकता नहीं। तेरी मददका खयाल—हम पूरे तौरसे रखेंगे। तू घबड़ाना नहीं। प्रत्येकके, हर प्रकारके परिश्रमका सच्चा और उचित इनाम यदि न दिलाया जाय, तो फिर उसमें परिश्रम ही क्यों लिया जाय ? बोल, और भी कोई समाचार हो, तो कह डाल। जितना समाचार दिया था, उतना काम हो गया। उसका जितना उचित इनाम मिलना चाहिये, उतना तुझे अवश्य मिलेगा। आगे बोल। जिस बातके विषयमें मैंने तुझसे विशेष रूपसे कहा था, सो हो रही है, अथवा नहीं ? यदि वह न हुई, तो तेरे आज तकके मशविरोंका और तेरी इस सहायताका कुछ भी उपयोग न होगा ..."

"वह काम बहुत कठिन है मुझसे जो कुछ हो सकता है, सो मैं करता हूँ। अन्य किसी मार्गसे भी यत्न हो रहा है। किन्तु ..."

"किन्तु ? किन्तु मैं कुछ भी नहीं सुनूँगा, वह तो पहले होना चाहिये। यहाँतक जो कुछ हुआ है, सो तो कुछ भी नहीं है। यह तो प्रत्येक कर सकता था तू अत्यन्त विश्वासपात्र है, अत्यन्त ईमानदार है, संकटके समय यदि कुछ काम देगा, तो तू—ऐसा ही तुझपर नानाका भरोसा था न ? तूने ही तो कहा था कि, चलते समय वह जनानखानेमें भी कह गया है कि, तेरे ही भरोसे पर रहे, तू मौका पड़ने पर प्राण भी दे देगा।"

बहुत देरतक इस प्रश्नका सफोजीकी ओरसे कोई भी उत्तर न

मिला। उस व्यक्तिने धमकाकर फिर भी वही प्रश्न किया, तब उसने उत्तर दिया कि, "हाँ, हाँ, किन्तु···किन्तु उसका कोई भी उपयोग होता हुआ दिखाई नहीं देता।" यह उत्तर इतना घबड़ाते हुए और डरते हुए दिया गया कि, जिसका कुछ ठिकाना नहीं। इसके बाद बहुत देर तक कोई कुछ नहीं बोला। धुँधली-धुँधली चाँदनी छा रही थी; और वे दोनों मनुष्य एक दूसरेकी ओर एकटक देखते हुए बैठे थे। उनके श्वासोच्छ्वासके अतिरिक्त अन्य कोई भी ध्वनि उस समय कानमें नहीं आरही थी। वायु भी यहाँ तक स्तब्ध थी कि आसपासके वृक्षोंका पत्ता भी न हिलता था। बाह्य सृष्टिमें इतनी शान्ति दिखाई दे रही थी, पर उन दोनों मनुष्योंकी अन्तःसृष्टिमें कुछ भी शान्ति न थी। उन दोनोंके बाह्य चक्षु इतनी स्थिरताके साथ, एकटक, एक दूसरेकी ओर देख रहे थे, पर अन्तःचक्षुओंके आगे न जाने कितने भिन्न-भिन्न दृश्य दिखाई दे रहे थे। बहुत देर हो गई। इसके बाद वह मनुष्य सर्फोजीसे फिर बोला, ठीक है आजसे आठ दिनके अन्दर, जैसा कि मैंने तुझे पहले बतलाया है, सब प्रबन्ध हो जायगा। किलेदारके पास खरीता आवेगा। उसके साथ ही तेरे पास भी एक लिफाफा आवेगा। सुभान, आवजी इत्यादि लोगोंका क्या प्रबन्ध किया जाय, सो भी मालूम हो जायगा। सलामतखाँ कल सुबह लौट जायगा। बीचमें यदि कोई न्यूनाधिक समाचार हो, तो मुझे बतलाना। मैं अब इसी समय वापस नहीं जाऊँगा कड़वोजीरावके·· किन्तु नहीं। मैं भी कल सुबह ही लौट जाऊँगा। इसके बिना वह खत ठीक न होगा। तू बहुत ही सावधानीके साथ रह ·· पर अब यदि नहीं भी रहेगा तो भी कोई हानि नहीं। अब हमारे मनके अनुकूल होनेमें कोई कठिनाई न पड़ेगी। अच्छा, अब तू जा। मैं एक बार तुझे प्रत्यक्ष देखकर प्रतीत कर लेना चाहता था और बस, आज तुझे यहाँ बुलानेका इतना ही उद्देश्य था। जा, जा अब यहांसे जल्दी, मैं भी जाता हूँ और हमारा काम—विश्वासका काम—ऐसा ही जारी रहना चाहिए।"

इतना कहकर वह कुछ विचित्र तरहसे, जोरसे हँसा; और टेकड़ीसे

उतरकर जाने लगा। इतनेमें सर्फोजी चिल्लाकर उससे बोला—'किन्तु सरकार, इस टेकड़ीके पीछेकी ओर कोई छिपा है, और हम लोगोंने जो बातचीत की, उसे किसीने अवश्य सुन लिया है।"

"सुनने दे, सुनने दे। स्वयं ब्रह्मा भी यदि सुन जावें, तो भी अब किला मेरे

आगेके शब्द किसीके कानमें नहीं पड़े, क्योंकि वह व्यक्ति बहुत दूर नीचे उतर गया। वहाँसे सीधा वह उस वृक्षके ही पास गया, जहाँ उसका घोड़ा बँधा था, और तुरन्त उसपर सवार होकर चला गया। सर्फोजी पागलकी भाँति अपनी जगह पर खड़ा हुआ उसकी ओर देखता रहा। इधर सुभान और श्यामा भी अपनी-अपनी जगहसे नीचेकी ओर उतरने लगे। उन्होंने जो कुछ सुना, वह कुछ भी उनकी समझमें नहीं आया। परन्तु अब वहाँ अधिक देर तक छिपे रहनेसे भी लाभ नहीं था। सर्फोजी भी कुछ समय बाद अपने मार्ग पर चल दिया।

आठवां परिच्छेद

खबरोंका दिन।

श्यामा और सुभान कुछ देर तक चुप रहे। इधर आबजी बेचारे सब बातें सुननेके लिए उत्सुक हो रहे थे। अतएव वे दोनों ज्यों ही नीचे आये, त्योंही आबजी उनके सामने पहुँचे और जोर जोरसे सब बातें पूछने ही वाले थे कि, इतनेमें सुभानने उनको दाब दिया। उसने सोचा कि, शायद वह घोड़ेपर बैठकर आया हुआ मनुष्य यहीं कहीं आस पास हो। सर्फोजीने उससे यह कह दिया था कि, "हम लोगोंने जो कुछ बातचीत की उसे किसीने सुन लिया है," सो उस समय यद्यपि उसने सर्फोजीको डाँट दिया था, परन्तु शायद पीछेसे उसको भी सन्देह हो गया हो। ऐसी दशामें यदि वह आहट लेता हो और हम लोग उसे मिल जावें, तो हमने जो कुछ सुना है और जिसका आगे खुलासा करके हम कुछ काम

निकाल सकते हैं—उससे कोई लाभ न उठा सकेंगे। सुभान यद्यपि यह पूरे तौर पर नहीं जान सका था कि, सर्फोजी और उससे उदण्डतापूर्वक बातचीत करनेवाले उस सरदारसे क्या सम्बन्ध है, तथापि यह बात तो सुभानको भलीभॉति मालूम ही हो गई कि, इन दोनोंका जो भी कुछ सम्बन्ध हो, पर है वह अवश्य अनिष्ट कारक। किलेदारको हानि पहुँचानेके उद्देश्यसे ही सर्फोजीके द्वारा कोई न कोई अनिष्ट कार्रवाइयां की जा रही हैं। इसके सिवाय, उस सरदार—अथवा सरदारी भेषके पुरुषकी अन्तिम बातचीतसे तो उपर्युक्त बातका पूरा विश्वास हो जाता था। जो हो, यह बात सुभानके ध्यानमें नहीं आई कि जो कुछ बातचीत हुई, सो वास्तवमें क्या थी, और यह पुरुष जो सर्फोजीसे इतनी ढिठाईसे गाली-गलौज करके, परन्तु अपनी श्रेष्ठता प्रत्येक शब्द और उसके उच्चारणमें भी दिखला कर बातचीत करता था, सो कौन था। सुभान बीजापुरके दरबारमें बहुत बार नहीं गया था, क्योंकि उसका स्वामी ही जहा तक हो सकता था, टाल देता था। तथापि एक-दो-बार, जब कभी वह गया भी था, उसका दरबारके सरदारों, मानकरी लोगोंसे थोड़ा-बहुत परिचय हो ही गया था। इसलिए अब उसने अपने मनमें यह विचार करना शुरू किया कि, जिस मनुष्यकी बातचीत हमने अभी सुनी है उसकी आवाजके समान भी किसी सरदार या मानकरी इत्यादिकी आवाज उस समय मैंने वहॉ सुनी थी या नहीं। सर्फोजीसे टेकड़ीके ऊपर जब वह मनुष्य बातचीत कर रहा था, उस समय सुभानके मनमें हजार बार यह बात आई कि, किसी प्रकार इस मनुष्यकी सूरत यदि दिखलाई दे जाय तो अच्छा हो, पर उसका कोई उपयोग न हुआ। जिस जगह वह बैठा हुआ था, वहासे, सिवाय सुननेके, वह कुछ नहीं कर सकता था, देख तो वह बिल्कुल नहीं सकता था। इस कारण उसे सिर्फ सुननेपर ही सन्तोष करना पड़ा। जिन मानकरी लोगो अथवा सरदारोंकी आवाज़ उसने बीजापुर दरबारमें अथवा अन्य कहीं सुनी थी, उनकी आवाजोंके विषयमें जब उसने अपने मनमें जाच कर ली, और जब उसे यह निश्चय हो गया कि, आजकी आवाज़ उन लोगोंमेंसे किसीकी नहीं है, तब उसने

इस विषयमें मनको विशेष कष्ट देना उचित न समझा, और अपना मौन भी छोड़ दिया, जो अब तक धारण किये हुए था, क्योंकि आवजीने उससे फिर पूछा कि, "क्या हुआ ?" सुभानने उन्हें स्फुट उत्तर दिये, जो एक भ्रान्त मनुष्यके समान कहे गये थे। उसे इस बातकी भी शंका हुई कि, जिस सरदारके, साथ आज सर्फोजीकी बातचीत हमने सुनी है, वह वास्तवमें सरदार ही है अथवा और कोई ? परन्तु यह शंका बहुत देर नहीं टिकी। क्योंकि उस मनुष्यकी बातचीत बिल्कुल सरदारी शानसे भरी हुई थी, और बनावटी सरदारसे यह बात कभी हो नहीं सकती थी। इस खयालसे कि, सर्फोजीके द्वारा उसका कार्य हो रहा है, वह लाचारीके साथ दबी जबानसे, अथवा आशासे भरी हुई आवाजसे, नहीं बोलता था, किन्तु अधिकार युक्त, वाणीसे, हुकूमतके साथ, किसी मालिककी तरह बातचीत करता था। इसके सिवाय, सर्फोजी यद्यपि बीच-बीचमें ढिठाईके साथ, और कुछ उदण्डतापूर्ण भी, भाषण करता था, पर वह उसके ऐसे भाषणको उत्तेजना न देनेकी सावधानी रखता था। यह बात उसके प्रत्येक शब्दसे स्पष्ट दिखाई दे रही थी। सुभान एक खान्दानी सरदारका नौकर था, अतएव सरदारी ढंगकी बात चीतसे वह भली-भांति परिचित था। इससे उसको अब निश्चय हो गया कि, सर्फोजीसे सम्बन्ध रखनेवाला यह पुरुष अवश्यमेव कोई सरदार लोगोंमेंसे ही है। इसके बाद उसने फिर एक बार ऐसे सरदारोंके नामों और रूपोंका अपने मनमें ध्यान किया जो कि, उसके मालिकसे शत्रुता रखते थे। इससे उसको दो तीन पुरुषोंका संशय हुआ। परन्तु जब विश्वास पूर्वक वह कुछ भी निश्चय न कर सका, तब फिर उसने इस विषयको छोड़ दिया, और आवजी पटेलसे बातचीत करनेकी ओर ध्यान दिया। आवजीने धीरे-धीरे बातचीत करके सब बातें जानलीं, और बड़ी फुर्तीके साथ, ऐसा मौका देखकर, कि श्यामा कुछ दूर है, उन्होंने एक नाम सुभानके कानमें कहा, जिसे सुनतेही सुभान आश्चर्यचकित चेष्टासे बोला—

"हां, हां, अवश्य, वही होगा! जरूर, वही होगा! किन्तु मैं समझता हूँ कि, अब हमको अपना काम करना चाहिये। जो कुछ हमने सुना है,

अथवा जो कुछ देखा है, सब, अभीका अभी, सरकारके कानमें डाल देना चाहिये। यदि ऐसा नहीं किया, और कुछ भला-बुरा हो गया, तो इस बातका पश्चात्ताप होगा कि, इतनी बातें मालूम होनेपर भी लोगोंने समयपर सरकारको सचेत नहीं कर दिया, और अपने काममें ढिलाई की और हमने इतना सारा खटाटोप किया, स्वय प्राणोंका भी परवा नहीं की—और इस श्यामाका तो मुझे क्षण-क्षणभर भय मालूम होता था कि, यह छोकरा अवश्य नीचे गिरकर मर जायगा। अजी, बन्दर भी ऐसी जगहमें जाकर नहीं बैठ सकता, जहाँ यह घुसकर बैठा था। लड़का मर गया होता, तो इसकी माने क्या कहा होता ? यह सब व्यर्थ जायगा—यदि हम उनको समयपर सचेत न कर देंगे।"

परन्तु श्यामाका ध्यान उनकी बातोंकी ओर बिल्कुल नहीं था। अत्यन्त चचल और तीक्ष्ण आँखोंवाली चिड़िया जिस प्रकार दूरतक दृष्टि डालती रहती है, उसी प्रकार वह भी चारों ओर अपनी दृष्टि फेंक रहा था। कुछ देर इधर-उधर देखनेके बाद बीचमें एकदम ताली बजाकर श्यामा सुभानसे बोल उठा, "सुभान दादा, देखो तो भला, किलेकी उस ओरसे इतनी रातको वह नीचे कौन उतर रहा है ? देखा न तुमने ? वह जो भवानीके चबूतरेके पास बरगदका वृक्ष है, उसीकी सीधमें वह ऊपरकी ओर देखो, अवश्य कोई उतर रहा है। दो हैं, दो। कमली ओढ़े हुए दिखाई देते हैं। देख लिया न ? वे दो मनुष्य आते हैं। अच्छा अब तुम यहीं ठहर जाओ, मैं दौड़कर देख आता हूँ कि, कौन आता है।"

इतना कहकर वह इतने वेगसे चला कि, जैसे कोई शिकारी कुत्ता दूर भागनेवाले अपने शिकारकी ओर लपके। श्यामा उस समयके तेज लड़कोंका एक उत्तम उदाहरण था। उसकी तीव्रता बड़ी विचित्र थी, और नेत्र चचल तथा तीक्ष्ण थे। उसकी दृष्टि एक जगह स्थिर कभी रहती ही नहीं थी। सर्वदा सम्पूर्ण दिशाएँ घूमकर उसकी आँखें मानो सदैव इस बातके लिये उत्सुकसी रहती थीं सब जगहकी सभी बातें मेरी नज़रमें आकर स्थित होती हैं या नहीं ? उनके सिवाय अन्य

भी यदि कोई बाते हो, तो वे भी तुरन्त ही मेरी नजरमें आनी चाहिये। उसकी दृष्टिके समान ही उसकी अन्य इन्द्रियाँ भी बहुत तेज थीं। कहीं किसीने कुछ कहा कि, बस तुरन्त ही वह इसके कानोंमें पड़कर पूर्णतया स्थित हुआ! कोई बात उससे छूटकर जा नहीं सकती थी। उसके हाथों-पैरोंमें ही—सम्पूर्ण शरीरमें ही—ऐसी कुछ उत्साह शक्ति भरी हुई थी कि, सर्पकी चञ्चलताके समान सदैव कोई न कोई चञ्चलतापूर्ण कार्य उसको अवश्य चाहिये था। उसका प्रेम नानासाहब पर बहुत था वे उसको एक प्रकारसे देवता ही जान पड़ते थे, और जबसे वे गये—शायद उसे मालूम भी होगा कि वे कहाँ गये, क्यों गये—उसकी चञ्चलता और भी अधिक बढ़ गई थी। नानासाहब जब किलेपर थे, तब उसकी सारी चपलता, उनके साथ रहकर ऐसे ही कार्य करनेमें खर्च होती थी कि जो उनको प्रिय थे। अस्तु। इन बातोंके वर्णनकी यहाँपर विशेष जरूरत नहीं मालूम होती, क्योंकि श्यामाका वर्णन करनेके लिये अभी आगे अनेक प्रसंग आवेंगे। वहींपर उसका वर्णन करनेमें पाठकोंको विशेष कौतूहल होगा। इस समय तो आइये, हम उसके साथ, जहाँ वह जाय, जावें। ऊपर जिस प्राणीसे उसके दौड़नेकी उपमा दी गई है, सचमुच ही वह इस समय उसीके समान जा रहा था। इसमें कुछ भी अतिशयोक्ति नहीं। क्योंकि रातका समय था, धुँधली चाँदनी छाई हुई थी—ऐसे मौकेपर उसे मार्ग कहाँ दिखाई दे सकता था? परन्तु वह अपना धावा मारते चला ही जाता था। अस्तु। किलेकी जिस ओरसे उसने दो व्यक्तियोंको उतरते हुए देखा था, उसी ओर वह गया, और थोड़ी देरके बाद एक ओरको घूमकर वह एक ऐसी मोड़पर छिपकर खड़ा हो गया जिधरसे वे दोनों मनुष्य निकलनेवाले थे वह उन दोनोंकी सूरत देखना चाहता था, और यदि सूरत देखनेको न मिले तो उनकी आवाज ही सुन लेना चाहता था। कुछ देरके बाद वे दोनों मनुष्य उसीके पाससे निकलकर आगे चले गये। परन्तु दुर्भाग्य-वश श्यामा न उनकी सूरत देख सका, और न बोली ही सुन सका। दोनोंमें उसका कोई भी उद्देश्य सिद्ध न हुआ, क्योंकि दोनों आदमी

बिलकुल चुपके-चुपके चले जा रहे थे; और अपने सारे शरीरको इस विचित्र रीतिसे ढक लिया था कि, ऑखें तक भी खुली दिखाई नहीं देती थीं। श्यामाको इसी बातका आश्चर्य हुआ कि, इनको मार्ग कैसे सूझता होगा। यहॉंतक कि यदि कोई उससे यही पूछता कि वे दोनों स्त्रियाँ थीं या पुरुष ? तो इस प्रश्नका उत्तर देना भी उसके लिए कठिन था। अतएव उसने सोचा कि आजकी रात क्या सारी चमत्कारोंकी ही है ? आज क्या आश्चर्य ही आश्चर्य देख पड़ेगा ? उधर सफोजीकी गुप्त कारस्तानी अभी देख ही चुके, अब यह एक और विचित्र प्रकरण उपस्थित हुआ। आज यह क्या बात है ? इस प्रकार सोचकर अन्तमें उसने यही निश्चय किया कि अब इनके पीछे-पीछे जाकर इनका भेद अवश्य लेना चाहिये। परन्तु किसी चतुर राजनीतिज्ञके समान वह कुछ ठहर गया। उसने सोचा कि, हम यदि इनके पीछे ही पीछे गये; और आहट पाकर इन्होंने हमको पहचान लिया, तो सारा मामला खराब हो जायगा। बस, यही सोचकर पहले उसने थोड़ी देरतक वहाँ खड़े रहनेका निश्चय किया, और फिर कुछ देर बाद वह उन दोनोंके पीछे चला। उधर सुमान और आवजी बेचारे बहुत देर प्रतीक्षा करते-करते थक गये, और अन्तमें यह कहकर, कि जाने यह बदमाश छोकरा कहाँ चला गया, वे भी अपने रास्तेसे चल दिये।

बात यह थी कि, उनको अपना अगला विचार करना था, और इसके सिवाय, इस बातका भय तो उनको था ही नहीं कि, श्यामा भूलकर कहीं दूसरी जगह चला जायगा। इस कारण श्यामाकी फिर उन्होंने कोई चिन्ता नहीं की। आवजी सुमानको अपने घर ले गये, और वहाँ जाकर जो कुछ उनको निश्चय करना था किया, और तदनुसार कार्य करना सुमानके सुपुर्द कर दिया गया। आवजी प्रत्येक बातमें—और विशेषत. किलेदारके विषयमें—अगुआ होकर काम करनेके लिये हिचकते थे, इसलिये इस बार यही निश्चित हुआ, कि सुमान पहले सारा वृत्तान्त सरकारके कानोंमें डाल दे; और फिर किसी उपयुक्त समयपर आवजी जब उनको सलाम करने जावें, उस समय जो कुछ वे पूछें,

उन्होंने दरवाजा बन्द कर लिया और दूसरे बैरागीको धूनीके पास ले जाकर बैठाया। बैठते ही उसने चिलम इत्यादि उठाई, और भरने लगा। बैरागीकी सूरत बिलकुल उदासीन हो गई थी। यह सोचकर बेचारा यहाँतक आया होगा कि, हम जाकर खबर बतलावेंगे और उसपर हमारी बड़ी प्रशंसा होगी, परन्तु उसकी वह आशा पूर्ण नहीं हुई और उल्टी फजीहत हुई। इसमें वह बिलकुल निराश हो गया; यह उसके चेहरेमें स्पष्ट दिखाई दे रहा था। हमारे बाबाजीने शायद यह बात ताड़ ली, क्योंकि उसकी सूरतकी ओर देखकर उन्होंने एकदम उसकी पीठपर हाथ फेरा और बोले, "बेटा, जो मैंने कहा, उसको बुरा न मानना। जो उद्देश्य हमारे श्रीमान्‌जी सिद्ध करना चाहते हैं, और जिसका सिद्ध करना हम सभीका कर्त्तव्य है, उसको यदि शीघ्रतर, और ठीक सिद्ध करना है, तो प्रत्येकको अपना-अपना कार्य सुचारु रूपसे करना चाहिये। बीचमें शायद यदि हमारे खयालसे कोई अच्छा भी काम आ जावे, तो उसके चक्करमें पड़कर अपने मुख्य कार्यमें हानि न पहुँचने देना चाहिये। इस समय मैं तुझसे इसी कारण नाराज हुआ कि, जिससे यह बात तेरे ध्यानमें रहे। तूने जो कुछ किया, सो अच्छे उद्देश्यसे ही किया, इसमें मुझे अणुमात्र भी सन्देह नहीं। किन्तु अपना असली कार्य छोड़कर इस कार्यमें लग गया, यही जरा खराब हुआ। देख, तू जो अभी मुझको बतलाता था, उसके विषयमें क्या-क्या जानकारी मुझे प्राप्त हो चुकी है, और क्या-क्या अभी मिलनेवाली थी, सो अभी तुझको दिखलाता हूँ। चल मेरे साथ नीचे।"

इतना कहकर बाबाजीने मन्दिरका दरवाजा फिर बन्द कर दिया और हनुमानजीको नमस्कार करके उनकी बैठकको आगे हटाया, और वे दोनों तहखानेके भीतर उतर गये। बहुत देरतक अँधेरेमें टटोलते वे जगदम्बाके मन्दिरके पास जा पहुँचे। इसके बाद मन्दिरके अधिष्ठाता, हमारे पहले बाबाजी, उस दूसरे साधुको एकदम ठहराकर कहते हैं, "किवाड़ोंकी दराजमें भीतर देखो। तुमको कुछ दिखलाई पड़ता है?" दूसरे बाबाजीने ज्यों ही धीरेसे देखा, त्यों ही उसे देवीजीके सामने एक

जवान आदमी पड़ा हुआ दिखाई दिया, जो उसी समय जगकर आँखें मलता हुआ इधर-उधर देख रहा था। उसको देखते ही उस साधूने हमारे बाबाजीके कन्धेपर हाथ रखकर पूछा, "यह कौन है?" यह सुनकर बाबाजी हँसे, और उसके कानमें कुछ शब्द धीरेसे कहकर फिर प्रकट रूपसे बोले, यह कल रातसे ही यहाँ आया हुआ है। आज सुबह भूलसे भीतर पहुँच गया, और भुँहारेके अन्दर जाकर मुझसे मिला। इसके आनेसे अवश्य ही मुझे कोई आश्चर्य नहीं मालूम हुआ। कल रातको जब मैं भुँहारेमें गया, तब ऊपरके मन्दिरका द्वार लगाना भूल गया, इससे मुझे कुछ आनन्द ही हुआ। यह स्वयं जब यहाँ आगया, तब और क्या खबर तू मुझे बतलावेगा? हाँ, उसके इधर चले आनेके बाद यदि कोई घटनाएँ हुई होंगी, तो वे शायद तुझे मालूम हुई होंगी; और उन्हींको बतलानेके लिए तू आया होगा। परन्तु वे घटनाएँ भी मुझे कल सुबहके अन्दर ही मालूम हो गई होतीं। अब तू कल प्रातःकाल जायगा, परन्तु देखना कि इसी बीचमें कोई न कोई मुझे वे खबरें बतला जायगा।"बाबाजीका यह कथन अभी समाप्त ही हुआ था कि, इतनेमें उन्होंने कोई आहटसी सुनी, और तुरन्त ही उस दूसरे साधूसे बोले, "हाँ ऊपर चल। कदाचित् इसी समय तुझको मेरे कथनकी प्रतीति हो जायगी। तू ऊपर चल, और मैं इसका कुछ समाचार लेकर आता हूँ। यदि अपने लोगोंमेंसे ही कोई आया हो, तो बिठाकर मुझे बुला ले जाना। यह सुनते ही दूसरा बाबा तुरन्त ही पहलेके मार्गसे लौट आया, और वे जगदम्बाजीके मन्दिरमें गये। इधर जो साधू ऊपर गया, वह हनुमानजीकी बैठकके नीचेके द्वारसे ऊपर निकलकर, और मूर्तिको फिर जहाँका तहाँ हटाकर, दरवाजेके पास गया। वहासे उसे ऐसी आहट मिली कि, जैसे दूरसे कोई आता हो। अब, यह विचार करते हुए, कि यह कौन आता है, वहीं बैठ गया। साथ ही वह अपने गुरुजीकी इस सम्पूर्ण व्यवस्था पर आश्चर्य भी करने लगा।

इतनेमें उसने देखा कि, जिन लोगोंके आनेकी आहट उसे दूरसे मिली थी, वे अब पास ही आ गये, अतएव दरवाजेके पास जाकर

उन्होंने दरवाजा बन्द कर लिया और दूसरे बैरागीको धूनीके पास ले जाकर बैठाया। बैठते ही उसने चिल्म इत्यादि उठाई, और भरने लगा। बेचारेकी सूरत बिलकुल उदासीन हो गई थी। यह सोचकर बेचारा यहाँतक आया होगा कि, हम जाकर खबर बतलावेंगे और उसपर हमारी बड़ी प्रशंसा होगी, परन्तु उसकी वह आशा पूर्ण नहीं हुई, और उलटी फजीहत हुई। इससे वह बिलकुल निराश हो गया; यह उसके चेहरेसे स्पष्ट दिखाई दे रहा था। हमारे बाबाजीने शायद यह बात ताड़ ली, क्योंकि उसकी सूरतकी ओर देखकर उन्होंने एकदम उसकी पीठपर हाथ फेरा और बोले, "बेटा, जो मैंने कहा, उसको बुरा न मानना। जो उद्देश्य हमारे श्रीमान्‌जी सिद्ध करना चाहते हैं, और जिसका सिद्ध करना हम सभीका कर्त्तव्य है, उसको यदि शीघ्रतर, और ठीक सिद्ध करना है, तो प्रत्येकको अपना-अपना कार्य सुचारु रूपसे करना चाहिये। बीचमें शायद यदि हमारे खयालसे कोई अच्छा भी काम आ जावे, तो उसके चक्करमें पड़कर अपने मुख्य कार्यमें हानि न पहुँचने देना चाहिये। इस समय मैं तुझसे इसी कारण नाराज हुआ कि, जिससे यह बात तेरे ध्यानमें रहे। तूने जो कुछ किया, सो अच्छे उद्देश्यसे ही किया, इसमें मुझे अणुमात्र भी सन्देह नहीं। किन्तु अपना असली कार्य छोड़कर इस कार्यमें लग गया, यही ज़रा खराब हुआ। देख, तू जो अभी मुझको बतलाता था, उसके विषयमें क्या-क्या जानकारी मुझे प्राप्त हो चुकी है, और क्या-क्या अभी मिलनेवाली थी, सो अभी तुझको दिखलाता हूँ। चल मेरे साथ नीचे।"

इतना कहकर बाबाजीने मन्दिरका दरवाजा फिर बन्द कर दिया और हनुमानजीको नमस्कार करके उनकी बैठकको आगे हटाया, और वे दोनों तहखानेके भीतर उतर गये। बहुत देरतक अँधेरेमें टटोलते वे जगदम्बाके मन्दिरके पास जा पहुँचे। इसके बाद मन्दिरके अधिष्ठाता, हमारे पहले बाबाजी, उस दूसरे साधुको एकदम ठहराकर कहते हैं, "किवाड़ोंकी दराजमें भीतर देखो। तुमको कुछ दिखलाई पड़ता है ?" दूसरे बाबाजीने ज्यों ही धीरेसे देखा, त्यों ही उसे देवीजीके सामने एक

जवान आदमी पड़ा हुआ दिखाई दिया, जो उसी समय जगकर आखें मलता हुआ इधर-उधर देख रहा था। उसको देखते ही उस साधूने हमारे बाबाजीके कन्धेपर हाथ रखकर पूछा, "यह कौन है?" यह सुनकर बाबाजी हँसे; और उसके कानमें कुछ शब्द धीरेसे कहकर फिर प्रकट रूपसे बोले, यह कल रातसे ही यहाँ आया हुआ है। आज सुबह भूलसे भीतर पहुँच गया, और भुँहारेके अन्दर जाकर मुझसे मिला। इसके आनेसे अवश्य ही मुझे कोई आश्चर्य नहीं मालूम हुआ। कल रातको जब मैं भुँहारेमें गया, तब ऊपरके मन्दिरका द्वार लगाना भूल गया, इससे मुझे कुछ आनन्द ही हुआ। यह स्वयं जब यहाँ आगया, तब और क्या खबर तू मुझे बतलावेगा? हाँ, उसके इधर चले आनेके बाद यदि कोई घटनाएँ हुई होंगी, तो वे शायद तुझे मालूम हुई होंगी; और उन्हींको बतलानेके लिए तू आया होगा। परन्तु वे घटनाएँ भी मुझे कल सुबहके अन्दर ही मालूम हो गई होतीं। अब तू कल प्रातःकाल जायगा, परन्तु देखना कि इसी बीचमें कोई न कोई मुझे वे खबरें बतला जायगा।"बाबाजीका यह कथन अभी समाप्त ही हुआ था कि, इतनेमें उन्होंने कोई आहटसी सुनी, और तुरन्त ही उस दूसरे साधूसे बोले, "हाँ ऊपर चल। कदाचित् इसी समय तुझको मेरे कथनकी प्रतीति हो जायगी। तू ऊपर चल; और मैं इसका कुछ समाचार लेकर आता हूँ। यदि अपने लोगोंमेंसे ही कोई आया हो, तो बिठाकर मुझे बुला ले जाना। यह सुनते ही दूसरा बाबा तुरन्त ही पहलेके मार्गसे लौट आया, और वे जगदम्बाजीके मन्दिरमें गये। इधर जो साधू ऊपर गया, वह हनुमानजीकी बैठकके नीचेके द्वारसे ऊपर निकलकर, और मूर्तिको फिर जहाँका तहाँ हटाकर, दरवाजेके पास गया। वहासे उसे ऐसी आहट मिली कि, जैसे दूरसे कोई आता हो। अब, यह विचार करते हुए, कि यह कौन आता है, वहीं बैठ गया। साथ ही वह अपने गुरुजीकी इस सम्पूर्ण व्यवस्था पर आश्चर्य भी करने लगा।

इतनेमें उसने देखा कि, जिन लोगोंके आनेकी आहट उसे दूरसे मिली थी, वे अब पास ही आ गये, अतएव दरवाजेके पास जाकर

ज्योंही उसने झाँककर देखा, त्योंही उसे मालूम हुआ कि, दो आदमी आ रहे हैं, जिनका पहनावा कनफटोंका-सा है। बातकी बातमें वे दोनों इसके पास आ गये। आते ही उन्होंने "बजरंगबलीकी जय! बजरंगबलीकी जय!!" का शब्द उच्चारण किया, फिर उस बाबाकी ओर देखकर पूछा, "क्योंजी, वे बाबा कहाँ है, जो यहाँ बैठे रहते हैं?" अब हमारा साधू बड़े चक्करमे पड़ा, कि इन्हें उत्तर क्या दिया जा—यह क्या गोलमाल है? बेचारा पागलकी तरह खड़ा हुआ उनकी ओर देखता रहा।

अब हमारे इस वैरागीको पूरी-पूरी शंका हुई कि, हो न हो, ये कनफटे जोगी भी जो "दूसरे बाबाजी" को पूछते हैं, हमारी ही तरह हमारे गुरुजीके गुप्तचर होंगे। किन्तु इस शंकाके दूर करनेका उपाय क्या था? क्षणभर वह विचारमें पड़ा रहा। हाँ, अब हमको गुरुजीके कथनानुसार, उनको बुलाने जाना चाहिये या नहीं? और यदि बुलाने जाते हैं, तो इनके सामने हमें भुँहारेका मार्ग खोलकर घुसना पड़ेगा; और यह बात बड़े खतरेकी होगी। यह सोचकर पहले उसने यह जाननेका निश्चय किया कि ये कोई अपने विश्वासके ही आदमी हैं, अथवा नहीं? अतएव उसने स्वाभाविक ही तौरसे पूछा, "क्योंजी, तुमको जो काम बतलाया गया था, सो हो गया? जो खबर लानी थी, सो ले आये?"

यह सुनकर वे दोनों कनफटे कुछ चकराये, और कुछ घबड़ायेसे उसे दिखाई दिये, परन्तु इतनेमें, उन दोनोंमेंसे जो कनफटा कुछ आगे था, वह बोला, "हमे काम बतलाया था? किसने? बाबाजीने? नहीं भाई! हम तो गरीब आदमी कहीं न कहीं भीख माँगते फिरते हैं, किंगिरी बजाते हैं, गाना गाते हैं, और जो कुछ मिल जाता है, उसी पर गुजारा करते हैं। आज यहाँ हैं, तो कल वहाँ हैं। हम बाबाजीका कौनसा काम कर सकते हैं? यों ही आ निकले थे, सो मनमें आया कि देखते चलें, बाबाजी हैं या नहीं। उनसे हमारी बड़ी दोस्ती है।" यह कहते हुए उसने अपनी किंगिरी निकाली, और उससे दो सुर निकाले,

तथा फिर बोला, हम तो इसीलिये आये थे कि, दो-चार गप्पें उड़ेंगी, और तम्बाकू पियेंगे—और क्या ?"

यह सुनते ही हमारा वैरागी समझ गया कि, यह जो कुछ कह रहा है, सब बनावटी है। हमारे गुरुजी कहते थे कि कोई खबर लावेगा, सो शायद यही लोग होंगे। फिर भी उसने सोचा कि, जबतक पूर्ण विश्वास न हो जाय, हमें इनको भीतर न बुलाना चाहिये और न इनके सामने गुप्त द्वार खोलकर भीतर जानेका साहस ही करना चाहिये। शायद यहाके इन सारे प्रबन्धका किसीको पता लग गया हो। और किसीने इन्हें खबर लेनेके लिये भेजा हो। जिस प्रकार हम अपने श्रीमान्‌जीके लिये, अनेक उपाय करके, भिन्न-भिन्न स्थानोंकी खबरें ले आते हैं, उसी प्रकार सम्भव है, हमारा पता पानेके लिये भी लोग उपाय करते हों। विशेष सावधानी रखनी प्रत्येक दशामें अच्छी ही बात है। यह विचार करके उसने फिर कनफटोंसे कहा, "बाबाजी न जाने कहाँ चले गये हैं। मैं भी उन्हींकी प्रतीक्षामें हूँ।"

परन्तु यह कहते हुए उसे खुद ही मालूम हुआ कि, मैंने अभी जो कुछ कहा था, उससे मेरा कथन मेल नहीं खाता। अस्तु। उसका उपर्युक्त कथन सुनकर वह कनफटा, जिसने अभी बात चीत की थी, मन ही मन हँसा, और हँसते ही हँसते उसने अपने पीछेके साथीकी ओर घुमकर देखा, और उस वैरागीको दरवाजेमें थोड़ासा एक ओर हटाकर, यह कहते हुए भीतर घुसा कि, "सीताराम चलो, तो हम लोग जबतक बाबाजी न आजावें, उस धुनीके ही पास बैठें, और तम्बाकू इत्यादि पियें। जिस ढिठाईके साथ वह भीतर घुसा, उसको देखकर हमारा वैरागी चकित हुआ, और खुद भी उनके साथ ही मन्दिरमें चला गया।

सब लोग उस धुनीके पास बैठ गये, और इधर उधरकी बातें करने लगे। कनफटोंका वह मुखिया अपनी भाषामें चार गाली देकर अपने साथीसे कहता है, "अरे, इन म्लेच्छोंने बड़ा उपद्रव मचा रखा है। रास्तेपर—रास्तेहीपर गौमाताका वध! शिव! शिव!! न जाने परमात्मा इनको अबतक दण्ड क्यों नहीं देता! श्रीराम! सीताराम! गौमाता

हमारा जीवन है, इसीमें हमारे प्राण हैं! फिर भी बीच रास्तेपर, हिन्दुओं के देखते—ब्राह्मणोंके देखते—चौराहे पर भी उनका गला काटकर, उनका रक्त जान बूझकर रास्तेपर छिड़क देते हैं।—"

उनका यह कथन हमारा वैरागी बड़े ध्यानसे सुन रहा था, और कहनेवाला कनफटा भी इतने हृदयसे और दर्दसे कह रहा था, उसकी आँखोंमें आँसूतक भर आये थे। उसके उस कहनेके ढगसे और उसके गद्‌गद् कंठसे स्पष्ट मालूम हो रहा था कि, जिस वेशमें वह आया है, उस वेशका वह मनुष्य नहीं होना चाहिये। हमारा वैरागी उसकी उपर्युक्त दशा देखकर और भी ध्यानसे देखने लगा, और बोला, गुसाईंजी आप "

वह आगे और भी कुछ कहने ही वाला था कि, इतनेमें उसे मालूम हुआ कि, हनुमानजीकी बैठकके नीचेवाले द्वारसे उसको कोई बुला रहा है, और आसन भी आगेकी ओर खिसक रहा है। उसने देखा कि, इस बातकी ओर कनफटोंका भी ध्यान गया, परन्तु फिर भी उनके चेहरेपर आश्चर्यकी कुछ भी झलक दिखाई नहीं दी। हाँ, उन्होंने इतना अवश्य कहा कि, "हाँ, बाबाजी हैं।" इससे हमारे वैरागीको यह विश्वास हो गया कि, ये दोनों हमारे ही गुटके आदमी हैं। इसके सिवाय उसने यह भी सोचा कि, अब छिपानेसे कोई प्रयोजन नहीं है। इसलिए एकदम वह बोल उठा कि, "हाँ, मैं उनको तुम्हारे आनेका समाचार देता हूँ।" इतना कहकर वह तुरन्त ही बजरगबलीके पीछेकी ओर गया।

वह अभी जाने भी न पाया था कि, बाबाजीका आधा शरीर ऊपर को निकल भी आया। उसने बाबाजीके कानमें चुपकेसे यह खबर दी कि, इस प्रकारके दो कनफटे आये हैं। बाबाजी हँसे, और कहा, "अच्छा!" फिर वे शीघ्र ही ऊपर आये। उनके पीछे-पीछे उस वैरागीने उस पुरुषको भी ऊपर आते हुए देखा जिसको उसने भवानीजीके मन्दिरमें किवाड़ोंकी दराजसे देखा था। बाबाजी आगे आये, और एकदम उन कनफटोंके मुखियाकी पीठपर थाप मारकर कहा, "कहो क्या हाल है? जिस कामके लिए गये थे, उसका क्या समाचार है?"

इन शब्दोंको सुनते ही, जो कि बाबाजीने कनफटेको सम्बोधन करके कहे थे, हमारा वह सिपाही जवान उन कनफटोंकी ओर, और फिर उनकी ओरसे बाबाजीकी ओर, एक विचित्र प्रकारकी चेष्टासे देखने लगा। उसको पिछली रातसे लेकर अबतकका सारा दृश्य एक स्वप्नके समान ही दिखाई पड़ रहा था। उसने सोचा कि, अच्छा रास्ता भूले! यहाँ आये; यह मन्दिर देखा—बाबाजी भी क्या ही ठहरे! और बजरंगबली-की बैठकके नीचे इतना बड़ा भुँहारेमें भवानीजीका इतना बड़ा मन्दिर! उस मन्दिरमें इतने हथियार, और बड़े-बड़े ताले जिनमें लटक रहे हैं, ऐसे भारी-भारी सन्दूक! सभी विचित्र मामला है! और फिर, यह सब किसके अधिकारमें? उसी हनुमानजीके मन्दिरमें रहनेवाले एक बाबाके अधिकारमें। और अब देखते हैं तो दो कनफटे, और एक वैरागी आ गया है। यह पहला बाबाजी बड़े प्रेमसे उनकी पीठ पर थाप मारकर, "तुम्हारा काम हो गया?" इत्यादि प्रश्न कर रहा है। इस बाबाका ऐसा कौनसा काम हो सकता है? और उसके करनेके लिए यह अपने ही समान वैरागी और गोसाईं सब तरफ भेजता है—इसका अर्थ है? इसी प्रकारके अनेक विचार इस समय उनके मनमें चक्कर काट रहे थे।

वह कनफटा बाबाजीको कुछ उत्तर देनेही वाला था कि, इतनेमें उन्होंने उसे चुप रहनेका इशारा किया, और हमारे सिपाहीकी ओर देखकर कहने लगे, "आपका घोड़ा आपके लिए बहुत उत्सुक हो रहा होगा। अभी थोड़ी देर हुई, मैंने उसे चारा-दाना दिया था, परन्तु आप एक बार बाहर जाकर उसके बदनपर हाथ फेर आवें, तो उसे बड़ा आराम मिलेगा। कल रातसे ही उसने आपको नहीं देखा है, परन्तु देखिये, कितना स्वाभिभक्त जानवर है, वहासे हिलता तक नहीं।" इतना कहकर वे दूसरे साधूको सम्बोधन करके बोले, "बलरामजी, इनको बाहर पहुँचा आओ।" सिपाही द्वारके बाहर हुआ, इतनेमें बाबाजीने बलराम-को पीछे बुलाकर कानमें चुपकेसे कह दिया "देखो, यह यदि कुछ पूछे, तो बतलाना नहीं, और तुम्हारे मनमें भी यदि पूछनेको हो तो मत पूछना।"

बाबाजीकी ताकीद सुनकर बलराम उस सिपाहीके साथ बाहर चला गया। उन दोनोंके बाहर जाते ही बाबाजी कनफटोंके मुखियासे कहते हैं "बतला। यह जवान आमदी कौन है ? तूने पहचाना नहीं। क्योंकि यदि पहचाना होता तो, इसके सामने अभी बोलने कैसे लगता ? बतला। बतला जल्दी।"

यह सुनते ही वह कनफटा कहता है, "तीन या चार दिनके बाद सुल्तानगढपर बडा भारी उपद्रव होगा, इसमे सन्देह नहीं और उसमे उस चौकीदारका बहुत बडा हाथ है। आज बादशाहका खरीता प्राय किलेदारके हाथमे पहुँच गया होगा। मैंने मार्गमे जो बातें सुनी हैं, वे यदि सच हैं, तो कहना चाहिये, मामला बहुत बढ गया है। एक बार उस आवजी पटेलको हमें अपने हाथमे कर लेना चाहिये। सुभान भी यदि आ मिलता, तो बड़ा काम बनता। नाना साहब कहा चले गये हैं सो किलेदारको अभीतक बिल्कुल ही मालूम नहीं है। सब अलग-अलग गप्पें मार रहे हैं। पर यह निश्चित कोई नहीं बतलाता कि, वे कहाँ चले गये हैं। सबको यही सन्देह है कि, जब वे इतने जोशके साथ गये हैं, तब अवश्य ही आप • "

परन्तु बाबाजीने उसे आगे नहीं बोलने दिया। वहींसे रोक लिया; क्योंकि इतनेमे उनको उन दोनोंके आनेकी आहट सुनाई दी। उन दोनोंके भीतर आते ही उन्होंने अपने विषयको बदलनेका यत्न किया, और बाबाजी उस सिपाहीकी ओर देखकर बोले, "आपका घोडा क्या कहता था ?" सिपाहीने कहा, "कुछ नहीं, वह बडे आनन्दमे है। हाँ, अब उसे यदि छायाकी जगह मिल जाय, तो बहुत अच्छा हो। बचारे-को आज न जाने कितने दिनोंसे छायाकी जगह नहीं मिली- और न बेचारेकी किसीने सेवा-बरदासकी। कितने ही दिनोंसे उसे ठीक-ठीक चारा-दाना भी नहीं मिला है यही हमारा असली साथी है! मुझपर इसका सच्चा प्रेम है। हम दोनो ही मानो एक दूसरेके प्राणोंके आधार हो रहे हैं। किला••• • "

इतना कहकर उसने अपनी जीभ दातों तले दबाई, और बात

बदलकर एकदम बाबाजीसे बोला, "बाबाजी, आप इस निर्जन वनमें आकर रहें, फिर भी आपके यहाँ बहुतसे लोग आते ही रहते हैं। मैं जिस समय आया, मन्दिरके बाहरी प्रांगणमें पलीते भी जल रहे थे। आज इन लोगोंको देख रहा हूँ।"

यह सुनकर कनफटोंका मुखिया उसको तुरन्त ही उत्तर देता है, "बाबाजीके पास गुण ही ऐसा है। आप चाहे जहाँ जाकर रहें, वहाँ आपकी सेवा में लोग हाजिर रहेंगे।"

इस प्रकार उनकी बातचीत बढ़नेका मौका आगया था, और सिपाहीके मनमें भी यही विचार था कि, इस प्रकार बातों बातोंमें ही, जो कुछ जानकारी हमें प्राप्त करनी है, धीरे-धीरे प्राप्त कर लेनी चाहिये। पर बाबाजीने बीचमें ही उस कनफटे और बलरामजीसे कहा, "अजी, रात तो व्यतीत होने आई, अब तुमको अपने कामसे जाना है, सो उठो और जाओ! हम लोग इसी प्रकार यदि बैठे-बैठे बातचीत करते रहेंगे, तो एक रात क्या, कितनी ही रातें पर्याप्त नहीं होगी, कनफटोंने भी अब अधिक देर तक बैठनेकी आतुरता नही दिखलाई। एक बार चिलम इत्यादि पीकर वे सब, एकके बाद एक, चलते बने। बाबाजी भी उनके साथ बाहर गये, और कोई आधी घड़ीतक बातचीत करते रहे। हाँ यह नहीं कहा जा सकता कि, वह बातचीत प्रकृति विषयपर ही थी, सिपाही बेचारा उतनी देरतक अकेला ही भीतर बैठा रहा। ऐसा जान पड़ता था कि, अब उसके मनमें कोई नवीन ही विचार चक्कर काट रहा है। क्योंकि बाबाजीके भीतर आते ही वह उनसे कहने लगा, "बाबाजी, यह मन्दिर क्या है? अन्दर तहखानेका मन्दिर क्या है? भीतरके सन्दूक और हथियार किसके हैं? यह सब क्या मुझे बतलावेंगे? आप अपनेको केवल वैरागी कहते हैं, पर आप कैसे वैरागी हैं। यहाँ और भी कोई न कोई अवश्य आते होंगे। मैं आया, उस समय यहाँ पलीते और बहुतसे लोगोंके पदचिन्ह दिखाई दिये। ऐसे कौन लोग यहाँ आते हैं? मुझे बतलावेंगे? स्वामीजी, आप यदि किसी राजनैतिक उद्देश्यमें लगे हुए हैं, तो आप मुझे अपना चेला

अराध्य बनाइये। मेरे घर-द्वार कुछ भी नहीं मैं सब भांति आपहीकी सेवामें रहूँगा।'

इसके आगे वह और कुछ न कह सका। बाबाजी उसका कथन सुनकर मन ही मन कुछ मुस्कराये, और फिर उससे बोले, "सत्य कहता है कि, घर द्वार तेरे कुछ भी नहीं है, और तू मेरे ही समान एक फक्कड़ वैरागी है। मैंने मान लिया। अच्छा अब यदि मैं तुझे अपने सम्प्रदायमें दीक्षित कर लूँ, और पीछेसे, कहीं न कहींसे तेरा घर द्वार, और तेरे घरके लोग सामने आजावें तो फिर कैसा होगा?"

बाबाजीके इस प्रश्नसे सिपाही महाशय कुछ गड़बड़ातेसे दिखाई दिये, और चुप हो गये। बाबाजी और हँसे, और भी उसकी पीठपर हाथ मारकर बोले, "कोई हानि नहीं तेरी इच्छाके अनुसार ही सब बातें होंगी। तू यह बची हुई रात, और कलका दिन किसी प्रकार यहाँ व्यतीत कर। शामको यहाँ कोई न कोई चमत्कार तुझे दृष्टिगोचर होगा—जिसे देखकर तू यही समझेगा कि, हमारे मनके अनुसार कार्य होनेके लिये यदि कोई जगह है, तो वह यही है, और हम यहाँ आगये यह बहुत ही अच्छा हुआ।"

दसवां परिच्छेद

यह लोग कौन?

इतना आश्वासन मिलनेपर भी हमारे सिपाहीको इस बातका कुछ भी खुलासा नहीं हुआ कि, यह मामला क्या है? और हम कहाँ हैं? वह बराबर बाबाजीकी ओर विचित्र चेष्टासे देखता रहा। उसके मनमें बराबर तर्कपर तर्क उठ रहे थे, और वह उसी विषयके विचारोंमें निमग्न था। बाबाजीकी यह इच्छा नहीं जान पड़ती कि, उसे और कुछ अधिक जानकारी दी जाय, और उसके कौतूहलकी शान्ति की जाय। बल्कि इसके विरुद्ध, बाबाजीकी उस समयकी चेष्टासे तो यही प्रकट होता था कि, वे उसको और भी अधिक उसी गोलमालकी अवस्थामें रखना

चाहते हैं, और इस प्रकार उसका कौतुक देखना चाहते हैं। वे कुछ मुस्कुराती हुई सूरतसे बीच बीचमें उसकी ओर देखते जाते थे, और मन ही मन कुछ गुनगुनाते भी जाते थे। हाँ, वह युवक अवश्यही गम्भीर भावसे शान्तिपूर्वक बैठा हुआ विचार कर रहा था।

अन्तमें बाबाजी उससे कहते हैं, "तू ऐसा ही कबतक बैठा रहेगा? मेरी तरह घडीभर लेटकर रात व्यतीत कर। एक वार सुबह होते ही दिन, बातकी बातमें, निकल जायगा। तेरे मनमें कौनसे विचार आ रहे हैं, यह मैं जानता हूँ। परन्तु उन विचारोंमें अब तू चाहे जितना अपने मनको फँसावे, कोई विशेष लाभ नहीं होगा। मैंने अब तक तुझे इतना आश्वासन दिया, पर तेरे चित्तको शान्ति नहीं हुई, और उसका न होना एक प्रकारसे स्वाभाविक ही है। किन्तु तू अपने मनमें यह भली भाति समझ ले कि, अब एक उचित स्थानमें आगया है, और इस बातको समझकर किसी भाति, कल शामतक, शान्तिपूर्वक समय व्यतीत कर।"

इतना कहकर बाबाजी जानबूझकर उसके पाससे उठे, और अपनी धूनीके पास जाकर शान्तिपूर्वक—कमसे कम ऊपरसे तो शान्तिपूर्वक—"जय हनुमान जय हनुमान सीताराम सीताराम" करते हुए लेट रहे। उनके साथीने काफी निद्रा ले ली थी, सो अब उसको नींद कहाँ आ सकती थी? इसके सिवाय, पिछले दिन उसकी दशा भी दूसरी ही थी। वह परिश्रमसे इतना थक गया था कि, उसे चाहे जैसी जगहमें, चाहे जहाँपर, चाहे जिसपर लेटे रहनेमे भी प्रगाढ़ निद्रा आगई होती, और तदनुसार उसे निद्रा आई भी। किन्तु इस समयकी उसकी अवस्था बिल्कुल भिन्न थी। निस्सन्देह वह शूर-वीर-जातिका मनुष्य था, किन्तु कमसे कम, उसकी सूरत शकलसे तो ऐसा नहीं जान पड़ता था कि, चाहे जहाँ लेटकर सोनेकी उसकी आदत हो, अमीरीके चिन्ह कभी छिपाये नहीं जा सकते। आज उसे, उस मन्दिरमें, बाबाजीकी धूनीके पास, लेटकर सोना एक प्रकारसे बिल्कुल कठिन होता था। वह बहुत देर तक जहाँका तहाँ बैठा रहा, और कभी

अथवा आटा मिलेगा, सो ले आऊँगा और तवा-पतीली भी दूँगा, सो आनन्दपूर्वक यहाँपर एक तरफ रोटी अथवा भात, जो मन चाहे पकाकर खाना।"

बाबाजीने ये शब्द बिल्कुल हँसीमें आकर कहे थे, यह उनके चेहरेसे स्पष्ट दिखाई दे रहा था, और उसके उत्तरकी प्रतीक्षा करते हुये बड़ी उत्सुकतासे आप उसकी ओर छिपी नजरसे देख भी रहे थे। उनके उपर्युक्त शब्दोंका जो उत्तर मिलने वाला था, वह उन्हें एक प्रकारसे मालूम ही था, और तदनुसार उनको उत्तर मिला भी। उनका साथी गर्दन नीची करके कुछ हँसता हुआ कहता है, बाबाजी आपको सब मालूम है, फिर आप क्या पूछते हैं? यहाँसे कोई गाँव यदि निकट हो तो मुझे वहाँ ले चलिये। वहाँ चाहे जिसको चार पैसे दे देनेमे भोजन मिल जायगा।" यह सुनते ही बाबाजी खूब हँसते हुये कहते हैं, "मतलब यह कि, तुझे अपने हाथसे बनाना नहीं आता। अस्तु। तू यहाँसे कहीं मत जा। बस्तीमे अभी चार पाँच दिनतक जाना तेरे लिये खतरनाक है। इसके सिवाय कोई बस्ती पास भी नहीं है। घडी-आध घड़ीमे तेरे खानेका प्रबन्ध हो जायगा, और तेरे घोड़ेको चारा-दाना भी मिल जायगा।"

"बस्ती बहुत दूर है, फिर घड़ी-आध घड़ीमें प्रबन्ध कैसे हो जायगा?" यह उस बेचारेके ध्यानमें न आया। तथापि, अब उसको इस बातका विश्वास हो चला था कि, यह बाबा कोई न कोई विचित्र व्यक्ति है—जैसा दिखाई देता है, वैसा ही नहीं है। इस कारण अब उसकी समझमें आ गया कि, यह जो कुछ कहेगा, वैसा ही अवश्य होगा। और सचमुच ही, उपर्युक्त बातचीत हुये अभी आधी घड़ी भी नहीं हुई थी कि, इतने हीमें एक ब्राह्मण एक परोसी हुई थाली, ढाककर ले आया, और एकदम हनुमानजीके सामने जाकर उनको नैवेद्य दिखाया, और फिर बाबाजीकी ओर देखकर कहा, "आपकी आज्ञाके अनुसार सब प्रबन्ध हो गया है। थोड़ी ही देरमें भगुआ चारा-दाना लेकर आवेगा। शामके वक्त फिर कब लाऊँ, सो बतला दें, तो अच्छा

हो।" बाबाजीको जो कुछ उससे कहना था, कह दिया, और वह चला गया। सिपाही बेचारा चकित होकर इधर-उधर देख रहा था। बाबाजीने उससे कहा, "अब आरामसे खाना खा, थोड़ी ही देरमें घोड़ेका भी प्रबन्ध हो जायगा। कोई चिन्ता मत करना।" यह कहकर आप स्नानके लिये चल दिये।

सिपाही बिचारा भूखसे व्याकुल हो रहा था। इसलिये अब समय न व्यतीत करके उसने खूब आनन्दपूर्वक भोजन किया। पदार्थ भी बहुत उत्तम बने थे। अभी सिपाहीका भोजन समाप्त नहीं होने पाया था कि भगुआ लोधी हरी घासका गट्ठा लेकर वहाँ आया, और "बाबाजी कहाँ हैं"—पूछने लगा। "वे स्नानको गये हैं"—यह मालूम होते ही गट्ठा वहीं डाल दिया, और बहुतसे चने ले आया था, उनको भी वहीं रखकर आप चलता बना। सिपाहीने देखा कि, हमारा भोजन हो गया, घोड़ेकी खुराकका भी प्रबन्ध हो गया। अब क्या बाकी रह गया! वह उठा, और घोड़ेके पास जाकर उसकी पीठ ठोंकी, और उसके आगे चारा डालकर यह सोचने लगा कि, दाना किसमें दूँ। किन्तु तोबरेके बिना काम थोड़े ही अटक सकता था? उसने अपनी धोतीके सिरेका ही तोबरा बनाकर उसमें दाना दिया। इतने सब काम हो गये, पर बाबाजीका कहीं पता नहीं। वे स्नानके लिये गये थे, परन्तु घड़ी हुई, दो घड़ी हुई, पहर हुआ, डेढ़ पहर हुआ, तीसरा पहर भी लौट गया, बाबाजीका कुछ पता नहीं! हमारे सिपाहीके मनमें विचित्र ही शंका आई। उसने सोचा कि, इस बाबाने हमको विश्वास देकर रोक रखा है—अब कहीं हमारा विश्वासघात तो नहीं करना चाहता? शामको बड़ा आनन्द आयेगा, कहकर कहीं किसी मेरे शत्रुके हाथमें दे देनेकी ही तो यह युक्ति नहीं? मेरी निगहबानीपर किसीको रखे बिना इसको मेरा सब हाल कैसे मालूम हुआ? फिर सोचता है कि, ऐसा नहीं हो सकता। एक तो यहाँ हनुमानजीका मन्दिर है, और नीचे तहखानेमें जगदम्बाजीका भी मन्दिर है, और इन दोनों मन्दिरोंका यह अधिष्ठाता है। मन्दिर दुश्मनोंके मालूम नहीं होते। इसकी बातचीतसे भी ऐसा मालूम नहीं होता कि,

यह विश्वासघात करेगा। कुछ नहीं! मेरे मनके ये विचार मूर्खतापूर्ण हैं। बाबाजीकी यह धीर गम्भीर सूरत मुझको अणुमात्र भी अविश्वासकी नहीं जान पड़ी? किन्तु वह जैसा दिखाई देता है, वैसा तो अवश्य नहीं है। यह है कौन? क्या यह व्यक्ति मेरे ही समान इन म्लेच्छोंका तिरस्कार करनेवाला भी हो सकता है? अथवा यह ऐसा कोई पुरुष है कि जिसको उनके द्वारा बहुत कष्ट पहुँचाया गया है? वह चाहे जैसा हो किन्तु जैसी अभी मुझको शंका हुई थी, वैसा तो कदापि नहीं है। अच्छा, यह स्थान किसका है? नीचे, देवीजीके मन्दिरमें, हथियारों इत्यादिकी पूरी पूरी तैयारी है! बड़े-बड़े सन्दूक रखे हैं, जिनमें मुहरबन्द आहनी ताले लगे हैं। क्या इनमें द्रव्य तो नहीं है? जो हो। यह स्थान किसका है? किसने बनाया है? यहाँ मुझको शामके वक्त ऐसा कौनसा चमत्कार दिखाई देगा? और जैसा बाबाजी कहते हैं कि, मेरे उद्देश्य यहीं पूर्ण होंगे—सो कैसे? मेरी कुछ समझमें नहीं आता। इस प्रकार सोचते-विचारते हुए कुछ देरके लिए वह मन्दिरके बाहर आकर खड़ा हो गया, और यह सोचते हुए कि, बाबाजी अभीतक नहीं आये, वह चारों दिशाओंकी ओर दूरतक दृष्टि डालने लगा। इस प्रकार होते-होते सन्ध्याका समय आ गया। बाबाजीका कहीं पता नहीं। इसके बाद उसके मनमें और ही विचार आने लगे। बाबाजीपर कोई संकट तो नहीं आ गया? म्लेच्छोंको कहीं यह तो पता नहीं लग गया कि, वे ऐसे एक विचित्र स्थानके अधिष्ठाता हैं, और इसी कारण शायद उनको पकड़कर कहीं मार डाला हो! अथवा—यह स्थान कहाँ है, क्या है, किसका है इत्यादि बातें उनसे जाननेके लिए कहीं वे उनको कष्ट तो नहीं दे रहे होंगे?

इस प्रकारके विचार उसके मनमें आये, और जम गये। वह बहुत कोशिश करता था, पर किसी प्रकार वे विचार उसके मनसे दूर नहीं होते थे। यही नहीं, बल्कि उसने यह भी सोचा कि, यदि ऐसा ही है, तो इस अवसरपर मुझको धैर्य धरकर आगे बढ़ना चाहिये, और यदि वे मिल जायं, तो उनको दुष्टोंके हाथसे छुड़ाना चाहिए। इस बातपर

उसका मन इतना जमा कि, वह तुरन्त ही तैयार हो गया, और अपने घोडेपर जीन कसनेका विचार करने लगा। उसको पूर्ण विश्वास हो गया कि, जो भय मेरे मनमें आया है, वह सत्य ही होगा। बस, इसी जोशमें उसने सचमुच ही घोडेपर जीन चढ़ा दी। अब वह घोडेपर बैठ-कर, उसको उत्साह दिलाते हुए, यह कहनेही वाला था कि, "चित्तल! बेटा चलो," कि इतनेमें "सीताराम! सीताराम!" कहते हुए बाबाजी आ पहुँचे। आते ही उन्होंने सिपाहीसे कहा, "क्यों मेरे कहनेका तुझे अबतक विश्वास नहीं आया? तू मुझसे छिपकर जानेकी तैयारी कर रहा था? मैं मौकेपर ही आ गया, यह अच्छा हुआ। तेरे लिए न जाने कितने लोग जगह-जगह घूम रहे हैं। इस बातकी यदि तुझे कुछ भी कल्पना होती, तो ऐ मूर्ख! तू इस मन्दिरके बाहर पैर रखनेका भी साहस न करता! चुपकेसे उतर! मेरी सुन; और भीतर चल।"

यह सुनकर सिपाहीको बहुत खेद हुआ, उसने सोचा कि, देखो, हमारा उद्देश्य क्या था, और इन्होंने समझा क्या! बेचारा तुरन्त ही घोड़े परसे उतर पड़ा; और बाबाजीके साथ चुपकेसे भीतर चला गया। वहाँ कुछ देर तो वह स्तब्ध रहा, परन्तु अन्तमें बाबाजीसे इस बातका खुलासा किये बिना उससे नहीं रहा गया कि, वह उस जगहसे क्यों चल दिया था। परन्तु उसकी उस खिन्नावस्थामें भी आनन्दकी बात इतनी ही हुई कि, बाबाजीने उसके उस कथन पर विश्वास कर लिया। परन्तु उन्होंने यह नहीं प्रकट किया कि, सिपाहीके उक्त सदुद्देश्यसे उनको कितना आनन्द हुआ। अन्तमें वे सिपाहीसे इस प्रकार बोले, "अब जरा सावधान रह। थोड़ी ही देर बाद अब तुझे वह घटना दिखाई देगी, जिसकी हमने चर्चाकी थी।"

इस बातचीतको हुए लगभग आधी घड़ी हुई होगी कि, इतनेमें सिपाहीको क्या भास हुआ कि, दूरसे बहुतेरे मनुष्य आ रहे हैं, उनके हाथमें पलीते हैं, कुछ घोड़ोपर हैं, और बहुतसे पैदल हैं। परन्तु मनको पूरा-पूरा विश्वास दिलानेके लिए वह बाहर गया, और खूब ध्यान लगाकर देखने लगा। जो लोग आगे थे, उनमेंसे कुछ लोगोंके हाथमें

पलीते भी दिखाई पड़े। वहाँसे स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि, वे सब लोग मन्दिरकी ही ओर आ रहे हैं। पर वे थे कौन? शत्रु या मित्र? सो कुछ उसकी समझमें नहीं आया। भीतर जाकर उसने बाबाजीको समाचार दिया और पूछा कि, ये आनेवाले लोग कौन हैं? बाबाजी हँसे और गोलमाल करके इतना ही उत्तर दिया कि, लोग जब यहाँ आ जायँगे, तब आप ही मालूम हो जायगा। अभी चौथाई घडी भी नहीं मुश्किलसे हुई होगी कि, इतनेमें "भवानी माताकी जय!" का घोष सुनाई दिया, और वे लोग मन्दिरके प्राङ्गणमें आ गये। हमारे सिपाहीने उनकी ओर एक नजरसे देखा। वे सब लोग, मराठे जवान थे, उनमेंसे जो घोड़ोंपर थे, उनका पेशा तो कमसे कम वही था, जो हमारे सिपाहीका था।

उस मण्डलीमें बहुतसे लोग आये थे। सबसे आगे दो नवयुवक हाथमें पलीते लिए हुए मन्दिर ही की ओर आ रहे थे। उनके पीछे चार-पाँच जवान पैदल आ रहे थे। उनके पीछे सरदारी पेशेका एक युवक—बिलकुल नवयुवक—घोड़ेपर आ रहा था। उसका रंग पक्का था। आँखे बहुत विशाल और तेजसे भरी थीं, परन्तु उनकी विशेषता उनकी विशालतामें नहीं थी, किन्तु उस अद्वितीय तेजमें थी, जो कि खूब चमक रहा था! उसकी नाक बड़ी, गरुड़की चोंचके समान थी। वह शरीरसे बहुत भव्य नहीं था। डीलडौल भी कुछ ठिंगनासा ही था। होंठों और ठुड्डीपर अभी तक रेख नहीं झलकी थी। पोशाक बिलकुल सादी! एक लम्बा अँगरखा, और मराठोंका सा पायजामा पहने था। सिरमें उस समयके मराठोंकी सी एक छोटी सी पगड़ी थी। उसके चंचल नेत्र बराबर इधर-उधर घूम रहे थे, जिससे मालूम होता था कि, मानों सारी दिशाओंकी घटनाओंको वह एकदम ही ग्रहण करता जाता था। जिस घोड़ेपर वह बैठा था, वह जातका बहुत ही उत्तम था, और बार बार ऊपर-नीचे गर्दन करते हुए चल रहा था। इससे ऐसा जान पड़ता था कि, मानो अपने ऊपर आरूढ होनेवाले अपने स्वामीके विषयमें अभिमान दिखलाते हुए औरोंको वह तुच्छ जतला रहा था!

बार-बार लगाम चबाने और फुदकनेमें वह अपनी ऐसी शान रखता था कि, जिसे देखकर लोग मोहित हो जाते थे। वह इस समय धीरे-धीरे चल रहा था। जो नवयुवक उसपर आरूढ़ था, वह इस समय अपनी एक ओर घूमकर, एक दूसरे व्यक्तिसे बातचीत करता हुआ आ रहा था। उसीके समान और भी एक-दो खासे नवयुवक थे। वे भी अवस्थामें उसी नवयुवकके समान ही—अथवा एक-दो वर्ष न्यूनाधिक थे, और घोड़ेपर ही सवार थे। उनके पीछे पाँच-सात आदमी पैदल आ रहे। उनके बदन पर प्रायः कपड़े कम ही थे। वे सब जवान ही थे, किन्तु बहुत मोटे अथवा ऊँचे-पूरे नहीं थे। यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता कि, वे बिल्कुल दुबले-पतले थे, तथापि बहुत मोटे भी न थे। परन्तु जितना कुछ उनका डीलडौल था, उतना सब बहुत ही मजबूत, गठा हुआ और सुदृढ था। आँखें सबकी बहुत ही पानीदार थीं। उनके मध्यभागमें कोई ऐसी वस्तु थी, जिसकी वे सब रक्षा करते चले आ रहे थे। यह सब मराठा-मण्डली ऐसी थी, जिनकी गणना नवयुवकोंमें ही की जा सकती थी—उनकी बातचीत, उनका हँसना-खेलना इत्यादि सब बातें, और विशेषकर उनकी कुछ उद्दण्ड वृत्ति, उनकी युवावस्थाको प्रकट कर रही थी। वे लोग जैसे-जैसे निकट आने लगे, वैसे ही हमारे मन्दिरके जवानको अत्यन्त अचम्भा मालूम होने लगा। अब तककी सारी बातें देखकर उसे जो आश्चर्य मालूम हुआ था, वह इस समय दस गुना बढ़ गया। इतने लोग, इतनी रातको, ऐसे निर्जन प्रदेशके मन्दिरमें क्यों आते हैं। और वे जो कुछ लाये हैं, सो क्या है ? इत्यादि प्रश्न उसके मनमें उठे, और वह एकटक उनकी ओर देखने लगा। वह किसी पाषाणमय मूर्त्तिकी तरह स्तब्ध खड़ा था, और उन लोगोंकी ओर—विशेषतः सबके आगे चलनेवाले उस नव-युवककी ओर—उसकी नजर लगी थी। ऐसा जान पड़ा कि, उनकी ओर देखते ही उसके मनमें कोई विचित्र-सा विचार आया। जिसकी चर्चा करनेसे यहाँ कोई विशेष तात्पर्य नहीं है। वे लोग मन्दिरके अगले प्रांगणमें आ पहुँचे। अब वह नवयुवक, झटसे अपने घोड़ेपरसे

उतर पड़ा। यह देख कर तुरन्त ही एक मनुष्य आगे आया, और उसके घोड़ेकी बाग पकड़ ली। एक मनुष्यने कम्बल बिछा दिया, और उसपर बैठनेकी उससे प्रार्थना की। अन्य लोग भी घोड़ोंसे नीचे उतरे, और उनके घोड़े भी पहले घोड़ेकी भांति ही एक ओर मनुष्य वहासे हटा ले गया। जो नवयुवक पलीते लिये आ रहे थे, उन्होंने अपने-अपने पलीतोंको हनुमानजीके दरवाजासे कुछ अन्तर पर खड़ा कर दिया। वह नवयुवक घोड़ेपर बैठे हुए जिन लोगोंसे बातचीत करता आता था उन्हींको साथ लिये हुए, और पहले ही की भांति उनसे बातचीत करते हुए, मन्दिरके द्वारपर आया, और दो बार दरवाजेसे ही पूछा कि, "श्रीधर स्वामी कहाँ हैं ?" अवश्य ही वे प्रश्न हमारे सिपाहीको सम्बोधन करके किये गये थे, क्योंकि वही उस समय द्वारपर था। परन्तु पूछनेवालेके मनमें उस समय यह विचार बिल्कुल ही न होगा कि, जिससे हम पूछ रहे हैं, वह कौन है, कहासे आया है, इत्यादि। और ऐसा ही उसकी चेष्टासे भी प्रकट हो रहा था। वह नवयुवक पुरुष अपने साथी अन्य दो नवयुवकोंके साथ ज्यों ही आगे बढ़ा, त्यों ही हमारा सिपाही जवान, जो अभी तक उस नवयुवक पुरुषकी ओर बराबर चकित दृष्टिसे देख रहा था, एकदम पीछे हट गया, और इस प्रकार उसने उन तीनोंको भीतर जानेका मार्ग दे दिया। उस नवयुवकने बजरंगबलीकी मूर्त्तिके पास जाकर नमस्कार किया। वहासे वह बाबाजीकी धूनीकी तरफ चला। बाबाजी चुपके बैठे हुए यह सब तमाशा देख रहे थे। नवयुवकने उनके पास जाकर उनको भी नमस्कार किया, और हँसते-हँसते कहा —

"स्वामीजी महाराज, आज आप भीतर ही बैठे हैं! हम आज और भी कुछ ले आये हैं। उसको आपके चरणोंपर अर्पण करके हम कृतार्थ होंगे।" इतना कह ही रहा था कि, इतनेमें उसकी दृष्टि दरवाजेके पास खड़े हुए, हमारे उस सिपाहीकी ओर फिर गई, और उसने तुरन्त ही स्वामीजीसे "यह कौन!" इस अर्थका प्रश्न-सूचक सकेत किया। स्वामीजीने तुरन्त ही हँसते-हँसते यह उत्तर दिया कि, "तेरी

ही श्रेणीका यह भी एक है।" इसके बाद स्वामीजीने उस नवयुवकको, और उसके साथ वाले दोनों अन्य नवयुवकोंको भी, जरा निकट आने-का, इशारा किया, और इस भांति कोई बात बतलाई कि, जो सिर्फ उन्हींको सुन पड़ी। उसे सुनते ही उन तीनोंने एक बार पीछे घूमकर हमारे उस सिपाहीकी ओर ध्यानसे देखा, और फिर तुरन्त ही आपसमें एक दूसरेकी ओर भी कुछ अर्थपूर्ण दृष्टिसे देखा। इसके बाद वह नवयुवक स्वामीजीकी ओर देख कर फिर बोला:—

"इस प्रकारके लोग मिल जायं, और भवानी माता तथा आपकी कृपा हो जाय तो उस महापुरुषने जो कार्य मेरे द्वारा करानेका विचार किया है, वह बहुत जल्दी हो जाय! रात-दिन मेरे मनमें यही आता रहता है कि, ये बातें कब पूरी हों, और इसी चिन्तामें मेरा हृदय व्याकुल रहता है। किन्तु क्या करूँ? बडे महाराजका, और अपने गुरुजीका बड़ा भय मालूम होता है। मेरे ये विचार और कार्य उनको बिल्कुल ही पसन्द नहीं हैं, सो आपको मालूम ही है। उनके यहाँ से प्रति दिन किस प्रकारके पत्र आते रहते हैं, और घरमें प्रति दिन क्या क्या विचार होते रहते हैं, सो सब आप इन दोनोंसे पूछिये।"

इतना कहकर उस नवयुवकने दोनों साथियोंकी ओर घूमकर देखा। तब उनमेंसे एक बीचहीमें कहता है," सो कुछ मत पूछिये। माताजी सदैव यही उपदेश किया करती हैं कि, "ऐसा करना ठीक नहीं, ऐसा करनेसे ऐसा होता है, वैसा करनेसे अमुक नाराज होगा, तू बड़ा उपद्रवी है। बड़े जो कुछ कहते हैं, उसे सुनना चाहिए। गुरूजी जो कुछ कहेंगे, वह हमारे हितका ही कहेंगे। ऐसी कोई बात मतकर, जिससे वे नाराज हों, अथवा उनको बुरा लगे!" कभी-कभी जब हम जाते हैं, हमसे भी नाराज होती हैं। हमपर यह अपराध लगाया गया है कि, हमारी ही संगतिसे श्रीमान्‌जी बिगड़ गये हैं। स्वामीजी महाराज! देखिये, कैसा तमाशा है!"

आगे वह और कुछ कहनेवाला था कि इतनेमें वह नवयुवक बीच-हीमें कहता है, "वास्तवमें हमारे अनुकूल कोई नहीं है; किन्तु हमने

अपना निश्चय कर लिया है। आज अच्छा हाथ लगा है। यह अब आप अपने अधिकारमें लेवें। दिल्लीको खजाना जारहा था। इन दुष्टों के बापका धन है? गरीब लोगोंको लूटते हैं, सरदार लोगोंके घरोंपर भी हाथ साफ करते हैं और इस प्रकार अपना घर भरते हैं। बादशाहके पास नाममात्रके लिये नजराना भर भेज देते हैं। मुझे आपकी कृपासे सात आठ दिन पहले खबर मिली थी। और तभीसे यह निश्चय किया था कि, यह खजाना दिल्ली कभी न जाने देंगे—यह तो माता भवानीके चरणोंपर लाकर अर्पण करेंगे। हमने सोचा था कि खजानेके साथ पल्टन भी अधिक होगी, परन्तु जितना हम खयाल करते थे, उतना बन्दोबस्त नहीं था। कल रातको हम अपनी सदैवकी हिकमतसे उनको घेर लिया, और पता बताकर खज़ाना लूट लिया। हमने ज्योंही उन पर अचानक छापा मारा, त्यो ही वे दुष्ट "तोबा तोबा" करते हुए जंगलमें इधर-उधर भाग खड़े हुए। एक दो रह गये थे, उन्होंने कुछ देर हाथ पेर मारे, पर अन्तमें इन दोनोंने उनको भी मार भगाया।"

श्रीधर स्वामी चुपकेसे सब सुन रहे थे। उसका कथन समाप्त होते ही स्वामीजी कुछ हँसे और बोले, "इसी विनयशीलतासे तेरी शोभा है। कलके धावेका सारा हाल मुझे मिल चुका है। उस धावेमें इन दोनोंने तो वीरता दिखलाई ही थी, किन्तु और भी किसीने दिखलाई थी, सो भी मुझे मालूम है। किन्तु देख, [श्रीधर स्वामीका कंठ इस समय भर आया, और उन्होंने उस नवयुवककी पीठ पर हाथ रखा] प्रत्येक अवसर पर तू ही इतना आगे न हुआ कर। तू इन सबका नायक है। जो कुछ होगा, सो सब तेरे ही हाथसे। सब छोटे-बड़े अवसरोंपर यदि तू ही आगे बढ़ेगा, तो वक्त है, यदि कोई अनिष्टकारक अवसर कभी आगया तो? "

इसके आगे श्रीधर स्वामीसे कुछ भी कहते न बना। उनका शरीर कुछ थर्रा गया। अगले कथनमें जो विचार प्रकट होनेवाला था, वह मानो उनको बहुत ही असह्यसा जान पड़ा। उनका एक हाथ नवयुवककी पीठपर था, और वे एकटक दृष्टिसे उसकी ओर देख रहे थे। उनकी

उस दृष्टिमें अत्यन्त गम्भीर प्रेम भरा हुआ था। उस नवयुवकने अपना सिर नीचे करके सिर्फ इतना ही कहा, "स्वामीजी महाराज! भवानी माता, बजरंगवली और आपके कृपा-प्रसादसे मुझपर कोई भी अनिष्ट-प्रसंग नहीं आवेगा, इसका मुझे पूरा विश्वास है। इसके सिवाय, यदि मैं स्वयं ही अग्रसर नहीं हूँगा, तो इन लोगोंको आगे रखनेका मुझे क्या अधिकार है? बस, यही सोच कर प्रत्येक सकटके अवसर पर इनके साथ मैं भी आगे रहता हूँ। स्वय पीछे रहकर हुकूमत चलाना मुझे अच्छा नहीं लगता।" स्वामीजी इसपर कुछ भी नहीं बोले। वह नवयुवक भी कुछ देरतक चुप ही बैठा रहा। इसके बाद उसने बाहरके लोगोंमें वह पिटारा, जो उनके साथ था, भीतर लानेके लिये कहा। पिटारा भीतर लाया गया, और हनुमानजीकी मूर्तिके पीछे रखा गया। इसके बाद फिर वे लोग बाहर चले गये। वह नवयुवक, उसके दो साथी, श्रीधर स्वामी; और हमारा वह सिपाही—सिर्फ इतने ही मनुष्य भीतर रह गये। श्रीधर स्वामीने उस नवयुवकसे, कहा, "जैसा कि तू अपने इन दोनों साथियोंको समझता है कि, ये तेरे लिए प्राण देंगे—और सचमुच ये हैं भी ऐसे ही—उसी प्रकार इस [उस जवानकी ओर सकेत करके] शूर पुरुषको भी तू अपना साथी समझ—यह भी तेरे लिये प्राण देगा। तेरी तरह, इस पवित्र भारतवर्षके लिये, यह भी अपनी जान देनेको तैयार है। तेरी ही तरह इसको भी उन दुष्ट म्लेच्छोंसे घृणा है यह कहनेमें भी कोई अतिशयोक्ति न होगी कि, सर्वथा तेरीहीसी इसकी भी परिस्थिति है। यह अपना घर-द्वार छोड़कर तेरे ही गिरोहमें मिलनेको चला था, बीचमें रास्ता भूलकर इधर आ गया, सो मैंने इसको रोक लिया। और तुझसे इसकी मुलाकात भी करवा दी।

श्रीधर स्वामी जब यह कह रहे थे, हमारा शूर सिपाही और वह पराक्रमी नवयुवक—दोनों एक दूसरेकी ओर अत्यन्त स्तब्ध दृष्टिसे देख रहे थे—मानो इस प्रकार वे दोनों अपने-अपने नेत्राकर्षणसे एक दूसरेके हृदयको खींच रहे थे।

ग्यारहवां परिच्छेद ।

सङ्कट आया !

उस तरुण पुरुषने, जैसा कि ऊपर बतलाया, श्रीधर स्वामीके बतलाये हुए सिपाहीकी ओर अपने विशाल और चंचल नेत्रोंसे अत्यन्त मार्मिक दृष्टिसे देखा। हम यह पहले ही प्रकट कर चुके हैं कि, यह तरुण बिल्कुल नवयुवक था। किन्तु तेजस्वी महात्माका महत्व उसकी अवस्था पर अवलम्बित नहीं रहता। बस यह दशा उस तरुण पुरुषकी भी थी। उसके साथ जो लोग वहाँ आये थे, उनमें उसकी अपेक्षा उम्रमें बड़े लोग भी कई थे। किन्तु यह स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि वे सभी केवल उसके दृष्टिपातपर ही अवलम्बित थे। उसका शील-स्वभाव भी ऐसा ही दिखाई दे रहा था, इसमें सन्देह नहीं। बहुत देरतक वह नवयुवक उस सिपाहीकी ओर ध्यानसे देखता रहा और फिर पीछेसे ऐसा मालूम हुआ कि, मानो उसने उसका मर्म पा लिया! इसके बाद तुरन्त ही वह श्रीधर स्वामीकी ओर देखकर बोला :—

"स्वामीजी! जिस मनुष्यकी आपने सिफारिश की, उसके विषयमें अधिक पूछ-ताछ करना मेरा काम नहीं है।" इतना कहकर उसने उस सिपाही युवककी ओर दृष्टि डाली, और उससे बोला—

"भाईजी, स्वामीजीकी आज्ञा आपने सुन ही ली। आजसे, आप ये दोनों, और मैं—बिल्कुल एक जीव हुए, शरीरभर भिन्न समझिये! इसके अतिरिक्त और जो कुछ न्यूनाधिक विचार होना होगा, सो दूसरे स्थानमें, दूसरे समय होगा। आज मैं जिस समय यहांसे चलूँ, आप मेरे साथ ही चलें।"

इतना कहकर वह फिर उसकी ओर एकटक देखने लगा—मानो वह जानना चाहता था कि, देखें, मेरे कहनेका इसपर क्या प्रभाव पड़ा है। इसपर उसकी चेष्टासे उस समय यही जान पड़ा कि, जो कुछ प्रभाव उसके कहनेका उस समय पड़ा, वह उस नवयुवकके अनुकूल ही था। कुछ समय बाद श्रीधर स्वामीने उस नवयुवकके दोनों साथियोंमें

कुछ इशारा किया। उस इशारेको पातेही उनमेंसे एक मनुष्य दरवाजेके पास गया, और बाहरकी ओर झाककर लोगोंसे कहा, "स्वामीजी थोड़ीदेर हमसे कुछ बातचीत करेंगे, इसलिये कोई बीचमें न बोलना।" इसके सिवाय, दरवाजेके पास एक मजबूत आदमी खड़ा था, उससे कह दिया कि, "तू अपना रोजका कर्तव्य पूरा कर।" यह कहकर उसने दरवाजेको मजबूतीके साथ बन्द कर लिया। इसके बाद करीब आधी घड़ी सब लोग बिल्कुल स्तब्ध रहे। श्रीधर स्वामी किसी विचारमें दिखाई देते थे। थोडी ही देर बाद वे उठे और हनुमानजीके पीछेकी ओर जाकर तीन बार "हनुमानजीकी जय!" का घोष किया। इसके बाद उन्होंने नियमानुसार हनुमानजीकी बैठक हटाई। फिर स्वामीजी उस तहखानेके मुँहसे अन्दर गये, और उनके पीछे ही पीछे उस तरुण महाशयके साथियोंमेंसे एक साथी भी भीतर उतरा। दूसरेने वह पिटारा, जो वहाँ रखा था, उसको पकड़ा दिया। पिटारा जब भीतर पहुँच गया तब वह नवयुवक महाशय भी भीतर उतर गया। उसके पीछे-पीछे दूसरा साथी भी भीतर गया। हमारा सिपाही जवान, जो वहाँ बाकी रह गया था, उसे उन्होंने ऊपर ही रहनेके लिए कहा।

यह देखते ही उसके चेहरेपर असन्तोषकी एक बारीकसी रेखा क्षणमात्रके लिए झलकती हुई दिखाई दी, तथापि उसने तिलभर भी अपना पर आगे नहीं बढाया। जैसे कोई सेनापति सिपाहीको आज्ञा देवे, और वह उसे शिरोधार्य करे, उसी भाति वह जहाँका तहाँ स्तब्ध खड़ा रहा। भीतर जो चार आदमी गये थे, वे एकके बाद एक, नियमानुसार भीतर अम्बिकाके मन्दिरमें गये। साथमें जो पिटारा ले गये थे, उसे भी अम्बिकाजीके सम्मुख रख दिया। इसके बाद सब, कुछ स्तब्ध-से होकर, भवानीकी उस भव्य मूर्त्तिके सामने खडे हो गये। थोडी ही देरमें श्रीधर स्वामी उस तेजस्वी नवयुवककी तरफ देखकर बोले,—

"जिसके विषयमें मैंने यह बतलाया कि, तू इसे अपने जीवनका साथी बना, उसके विषयमें तूने विशेष पूछताछ क्यो नहीं की? उसके साथ जिस प्रकारका बर्ताव करनेके लिये मैंने तुझसे कहा है, उस तरहमे

यदि तू रखने लगेगा और उसपर भी इन दोनोंहीके समान विश्वास रखने लगेगा, तो यह तू कैसे समझ गया कि, वह तेरे साथ विश्वास-घात न करेगा ?"

स्वामीजीके ये वचन सुनकर वह नवयुवक कुछ हँसा और उनकी ओर देखकर कहने लगा —

"आपके वचनोंसे अधिक और क्या विश्वास हो सकता है ? इसके सिवाय, उसको देखकर मेरे विचारमें भी यही आया कि, भवानी माता-का उसपर प्रसाद अवश्य है, और उसके द्वारा मुझे सचमुच ही बहुत सहायता मिलेगी। परन्तु अब, जबकि आप ही कहते हैं, तो मैं पूछता हूँ—बतलाइये, वह कौन है ? कहाँसे आया है ?"

श्रीधर स्वामीने उसकी यह जिज्ञासा शीघ्रही तृप्त की। उन्होंने जो कुछ बतलाया उससे, जान पड़ा कि, उस नवयुवकको कुछ आश्चर्य भी हुआ, परन्तु उस आश्चर्यको उसने वचनों द्वारा प्रकट नहीं किया।

आधी घड़ी और हुई। इसके बाद उस नवयुवकके कहनेसे उसके एक साथीने ऊपरके उस व्यक्ति (सिपाही) को नीचे आनेके लिये कहा, जिसे सुनते ही वह नीचे उतरा, और शीघ्रतापूर्वक उसके पीछे ही पीछे भवानीजीके मन्दिर तक गया। वहाँ जानेपर वह नवयुवक महाशय उससे कहता है.—

"अब यहाँ अपनी अपनी सच्ची दशा एक दूसरेसे छिपानेका कुछ भी काम नहीं है और अबतक यद्यपि हम लोगोंने छिपानेका प्रयत्न किया, किन्तु श्रीधर स्वामीसे कुछ छिपा नहीं है। उन्होंने मुझे सब बतला दिया है। इसलिए इस समय और कुछ अधिक मैं आपसे नहीं पूछता। परन्तु आपके बाद वहाँ क्या हाल हुआ, सो जाननेके लिये आपको बड़ी उत्सुकता होगी। वह अवश्य ही ·

आगे वह नवयुवक कुछ कहनेवाला था, कि श्रीधर स्वामी एकदम बोल उठे —

"वह पीछेसे बतलाया जा सकता है। इस समय यहाँ जो विधियाँ करनी हों, सो थोड़ी देरमें कर लो।" उस नवयुवक पुरुषने एक बार

भवानीकी मूर्तिके आसपास परिक्रमा की। परिक्रमा करके वह फिर भवानीजीके सामने आरहा था कि, इतनेमें उसका तेज कुछ विचित्र ही दिखाई देने लगा। उसकी पहलेकी मूर्ति, और इस समयकी उसकी कान्तिमें कुछ विचित्र अन्तर दिखाई पडने लगा। उसके अन्य साथी उससे दूर हट गए, और बराबर उसकी ओर एकटक दृष्टिसे देखने लगे। उस समय ऐसा जान पड़ा कि, वह नवयुवक पुरुष अपने आस-पासकी सारी बातोंमें अलिप्त होकर मानो किसी दूसरी ही परिस्थितिमें पहुँच चुका था। उस समय ऐसा कुछ मालूम हुआ कि, मानो उस पुरुषको इस बातका कुछ भान ही नहीं था कि, उसके आसपास कोई और भी मनुष्य मौजूद हैं। उसकी चेष्टासे उस समय ऐसा कुछ मालूम हो रहा था कि, उनकी उस अत्यन्त स्तब्ध दृष्टिको, उसके आसपासकी वस्तुओ अथवा प्राणियोंका ज्ञान चाहे भले ही न हो, पर अन्य किसी 'वस्तु' का ज्ञान तो उसे अवश्य ही हो रहा था, और उसी ओर उसका सारा ध्यान एकत्रित हो रहा था। बहुत देरतक वह कुछ भी नहीं बोला। परन्तु इसके बाद उसने दो-तीन बार भवानी माताने सामने दण्डवत् प्रणाम किया, और फिर कुछ शब्द मुँहसे निकाले। वे शब्द इस प्रकार थे·—

"सकट आवेगा, पर विनाश नहीं होगा। सावधानीसे रहना··· यवन प्रवल · कुछ साहसके साथ · "

इतने ही शब्द उसके मुँहसे बाहर निकले। जिनको श्रीधर स्वामी और अन्य लोगोंने भलीभाति ध्यानमें रखा।

इसके बाद वह नवयुवक पुरुष उस देवीके आगे दण्डवत् करके बिल्कुल निश्चेष्ट-सा पडा रहा। उसते उसको जागृत करनेका किसीने प्रयत्न नहीं किया। चारों मनुष्य बिल्कुल तटस्थ-वृत्तिसे उसकी ओर शान्त चित्तसे बराबर देख रहे थे। श्रीधर स्वामी और उनके दो साथियोंको तो, मानो उसमें कोई विशेषता नहीं दिखाई दी परन्तु एक चौथा महाशय, जो वहाँ था उसकी वैसी दशा नहीं थी। वह अत्यन्त तटस्थ होकर यह सारी घटना देख रहा था। उसकी सूरत पर विशेषत

यदि न रखने लगेगा और उसपर भी इन दोनोंहीके समान विश्वास करने लगेगा, तो यह तू कैसे समझ गया कि, वह तेरे साथ विश्वासघात न करेगा ?"

स्वामीजीके ये वचन सुनकर वह नवयुवक कुछ हँसा और उनकी ओर देखकर कहने लगा —

"आपके वचनोंसे अधिक और क्या विश्वास हो सकता है ? इसके सिवाय उसको देखकर मेरे विचारमें भी यही आया कि, भवानी माताका उसपर प्रसाद अवश्य है, और उसके द्वारा मुझे सचमुच ही बहुत सहायता मिलेगी। परन्तु अब, जबकि आप ही कहते हैं, तो मैं पूछता हूँ —बतलाइये, वह कौन है ? कहाँसे आया है ?"

श्रीधर स्वामीने उसकी यह जिज्ञासा शीघ्रही तृप्त की। उन्होंने जो कुछ बतलाया उसमें, जान पड़ा कि, उस नवयुवकको कुछ आश्चर्य भी हुआ, परन्तु उस आश्चर्यको उसने वचनों द्वारा प्रकट नहीं किया।

आधी घटी और हुई। इसके बाद उस नवयुवकके कहनेसे उसके एक साथीने ऊपरके उस व्यक्ति (सिपाही) को नीचे आनेके लिये कहा, जिसे सुनते ही वह नीचे उतरा, और शीघ्रतापूर्वक उसके पीछे ही पीछे भवानीजीके मन्दिर तक गया। वहाँ जानेपर वह नवयुवक महाशय उससे कहता है —

"अब यहाँ अपनी अपनी सच्ची दशा एक दूसरेसे छिपानेका कुछ भी काम नहीं है और अबतक यद्यपि हम लोगोंने छिपानेका प्रयत्न किया, किन्तु श्रीधर स्वामीसे कुछ छिपा नहीं है। उन्होंने मुझे सब बतला दिया है। इसलिए इस समय और कुछ अधिक मैं आपसे नहीं पूछता। परन्तु आपके बाद वहाँ क्या हाल हुआ, सो जाननेके लिये आपको बड़ी उत्सुकता होगी। वह अवश्य ही . . ."

आगे वह नवयुवक कुछ कहनेवाला था, कि श्रीधर स्वामी एकदम बोल उठे —

"वह पीछेसे बतलाया जा सकता है। इस समय यहाँ जो विधियाँ करनी हों, सो थोड़ी देरमें कर लो।" उस नवयुवक पुरुषने एक बार

भवानीकी मूर्तिके आसपास परिक्रमा की। परिक्रमा करके वह फिर भवानीजीके सामने आरहा था कि, इतनेमें उसका तेज कुछ विचित्र ही दिखाई देने लगा। उसकी पहलेकी मूर्ति, और इस समयकी उसकी कान्तिमें कुछ विचित्र अन्तर दिखाई पडने लगा। उसके अन्य साथी उससे दूर हट गए, और बराबर उसकी ओर एकटक दृष्टिसे देखने लगे। उस समय ऐसा जान पड़ा कि, वह नवयुवक पुरुष अपने आस-पासकी सारी बातोंमे अलिप्त होकर मानो किसी दूसरी ही परिस्थितिमें पहुँच चुका था। उस समय ऐसा कुछ मालूम हुआ कि, मानो उस पुरुषको इस बातका कुछ भान ही नहीं था कि, उसके आसपास कोई और भी मनुष्य मौजूद हैं। उसकी चेष्टासे उस समय ऐसा कुछ मालूम हो रहा था कि, उनकी उस अत्यन्त स्तब्ध दृष्टिको, उसके आसपासकी वस्तुओं अथवा प्राणियोंका ज्ञान चाहे भले ही न हो, पर अन्य किसी 'वस्तु' का ज्ञान तो उसे अवश्य ही हो रहा था, और उसी ओर उसका सारा ध्यान एकत्रित हो रहा था। बहुत देरतक वह कुछ भी नहीं बोला। परन्तु इसके बाद उसने दो-तीन बार भवानी माताके सामने दण्डवत् प्रणाम किया, और फिर कुछ शब्द मुँहमे निकाले। वे शब्द इस प्रकार थे—

"सकट आवेगा, पर विनाश नहीं होगा। सावधानीसे रहना··· यवन प्रबल · कुछ साहसके साथ·· "

इतने ही शब्द उसके मुँहमे बाहर निकले। जिनको श्रीधर स्वामी और अन्य लोगोंने भलीभाति ध्यानमें रखा।

इसके बाद वह नवयुवक पुरुष उस देवीके आगे दण्डवत् करके बिल्कुल निश्चेष्ट-सा पड़ा रहा। उससे उसको जागृत करनेका किसीने प्रयत्न नहीं किया। चारों मनुष्य बिल्कुल तटस्थ-वृत्तिसे उसकी ओर शान्त चित्तसे बराबर देख रहे थे। श्रीधर स्वामी और उनके दो साथियोंको तो, मानो उसमें कोई विशेषता नहीं दिखाई दी परन्तु एक चौथा महाशय, जो वहाँ था उसकी वैसी दशा नहीं थी। वह अत्यन्त तटस्थ होकर यह सारी घटना देख रहा था। उसकी सूरत पर विशेषत

नेत्रोंमें बहुत अधिक पूज्य भाव दिखाई पड रहा था। उसके चेहरेपर उस समय जो थोडासा अन्तर दिखाई दिया, उससे यह कहा जा सकता था कि वह सम्पूर्ण लीला देखकर, उस नवयुवकका, वह व्यक्ति और भी विशेष आदरकी दृष्टिसे देखने लगा होगा। धीरे धीरे यह नवयुवक पुरुष सचेत होने लगा। कुछ देरमें वह चारो ओर देखने लगा, और फिर अपने नवीन मित्र, हमारे सिपाही जवानको अपने निकट बुलाया और उसकी पीठपर हाथ फिराने लगा। इसके बाद उसने अपनी तलवार निकाल कर भवानी माताके सामने रख दी, और फिर उस अपने नवीन साथीसे कहा कि, "यह कहकर कि, **मैं भवानी माताकी सेवामें, और गौ-ब्राह्मणोंका कष्ट दूर करनेमें अपने प्राणतक निछावर कर दूँगा**—भवानी माताको साष्टाग नमस्कार करो, और यह तलवार उठाओ।"

हमारे सिपाही जवानको, मनसे यह सब करनेकी इच्छा हो, चाहे न हो,—परन्तु उस समय तो उसने क्षणभरका भी विलम्ब न लगाते हुए वैसा ही किया, और उस नवयुवककी तलवार उठाकर अपने मस्तक-पर धारण की।

इतना सब हो जाने पर वह नवयुवक उठा। अब वह पूरा-पूरा सचेत हो गया था इसलिये श्रीधर स्वामीकी ओर देखकर वह कहता है—

"स्वामीजी, कुछ नवीन समाचार है?" स्वामीजीने यह कहकर कि, "हाँ, हैं" इन अक्षरोंका उच्चारण किया—"संकट आवेगा, विनाश नहीं होगा, यवन प्रबल कुछ साहसके साथ।" यह सुनते ही उस नव युवक पुरुषके चेहरे पर कुछ चिन्तासी दिखाई देने लगी, पर यह बात उसने किसीपर प्रकट नहीं होने दी, और सबकी ओर देखकर बोला—

लक्षण अच्छे नहीं हैं, माता भवानीने जैसा कि सूचित किया है—संकट कब आवेगा, यह कुछ कहा नहीं जासकता, तथापि यह तो निश्चित ही है कि, विनाश नहीं होगा। फिर भी अत्यन्त सावधानीसे काम लेना चाहिये। अस्तु। अब इस पिटारेका प्रबन्ध करके यहांसे चल देना अच्छा होगा।"

यह कहकर वह उठा, और स्वामीजीको जतला दिया कि, ये बहुत बड़े-बड़े भारी जो पिटारे रखे हैं, उनमेंसे एकको खोलकर यह नवीन खजाना भी रख छोड़ियेगा। इसके बाद फिर उसने कहा :—

'भवानी माताने हमको इस बातकी कभी कमी नहीं पड़ने दी, और उनकी कृपासे आगे भी ऐसा ही रहेगा। आवश्यकता है केवल दृढ़ श्रद्धाकी! यह नहीं कि, हमारे बड़े-बूढ़ोंको यह बात अच्छी न लगती हो—वे भी इसको चाहते हैं, परन्तु उनको यह भय मालूम होता है कि, हमारे हाथसे यह होगा नहीं, और व्यर्थमें फँसेंगे अथवा इन मुसल्लोंके चक्करमें पड़कर चकनाचूर हो जायँगे। मुझे मालूम है, जब किसी जगह हमारी जीत होती है, गुरुजीको भीतरसे, वास्तवमें, आनन्द होता है। किन्तु वे सदैव मुझे इसी डरसे निरुत्साहित किया करते हैं कि, मैं यदि बराबर ऐसे ही उद्योगमें लगा रहूँगा, तो शायद किसी समय फिसल जाऊँ; और यदि ऐसा हुआ, तो सारे कुलका सत्यानाश हो जायगा। किन्तु हम सबके हाथसे यदि किसी दिन अभीष्ट-सिद्धि होगी, तो न सिर्फ गुरूजीको ही आनन्द होगा, किन्तु बड़े महाराजको आनन्द हुए बिना न रहेगा। इसलिए हम सब लोगोंको बड़ी सावधानीसे काम लेना चाहिए। निष्फलता कदापि न होनी चाहिये। जबतक भवानी माता और स्वामीजी महाराजकी कृपा है, खज़ानेकी कोई कमी नहीं और जब आप लोगोंके समान शूरवीर साथियोंकी पूरी-पूरी सहायता है, तब मुझे सफलता प्राप्त होनेमें किसी प्रकार भी शङ्का नहीं मालूम होती। बड़े-बूढ़े जो कुछ भी कहा करें, उसकी ओर विशेष ध्यान देनेकी आवश्यकता नहीं। अपना उद्योग जारी रखना चाहिए। न जाने क्या कारण है, मेरा मन आज कुछ उदास-सा हो रहा है। सच पूछिये, तो इनके समान नवीन साथी मिलनेसे उत्साह बढ़ना चाहिये, पर...” इतनेमें श्रीधर स्वामी कुछ आहटसी लेकर कहते हैं :—

“भगुआ, जान पड़ता है, दरवाजेको जोर ओरसे खटखटा रहा है। किसीको जाकर देख आना चाहिए।” उनके मुखसे ये शब्द निकलते ही, हमारा सिपाही जवान और उन दो साथियोंमेंसे एक मनुष्य, दोनों

गन्न गी दा े। ऊपर जाकर क्या देखते हैं कि, भगुआ जो द्वारपालका काम कर रहा था, जोर जोरसे दरवाजेको ठेल रहा है। दोनोंके पूछनेपर उसने कहा, "या खबर दे दी कि, एक गुसाई यह सन्देशा लेकर आया है कि मुसल्मानोंका एक बड़ा भारी गिरोह बिल्कुल निकट आगया है। जान पड़ता है कि, उन्हें कुछ पता लग गया। सन्देह होता है कि, उस गिरोहने इधर ही अपना मोर्चा फिराया है। वह हमको घेरना चाहता है।"

यह सुनते ही दोनों बहुत अचम्भेमें आगये। नवीन साथी तो बिल्कुल ही स्तब्धसा खड़ा रहा। तब दूसरा साथी उससे तुरन्त ही कहता है —

"वाह वाह! इतनीहीसी खबरसे तुम इतने स्तब्ध हो गये, फिर आगे क्या करोगे? ऐसी खबरें तो लाखोंही बार आवेंगी। चलो, नीचे चलकर खबर देवें, फिर देखो क्या चमत्कार होता है।"

इतना कहकर दोनो नीचे गये। खबर दी। वह नवयुवक पुरुष श्रीधर स्वामीकी ओर देखकर कुछ हँसा और बोला —

"यह मुकाबिला करनेका, मौका नहीं है। इस समय यदि मुकाबिला किया जायगा तो कठिनाई पड़ेगी, इसलिए ऊपर जाकर आज्ञा दीजिए कि, कल राततक लोग जहाके तहा चले जायँ। हम अपना देख लेंगे।"

श्रीधर स्वामी वह आज्ञा लेकर ऊपर गये हनुमानजीकी बैठक उन्होंने जहाँकी तहाँ कर दी। उपर्युक्त आज्ञा बाहर दे दी। सब लोग तुरन्त ही जहाँके तहाँ होगये। बाबाजी अपनी धूनीके पास बैठ गये, और 'सीताराम सीताराम' जपते हुए चुपके बैठे हुए अपनी चिल्मके फौवारे छोड़ते रहे।

बारहवां परिच्छेद।

गोटेश्वरके मन्दिरमें।

अब बाबाजीको तो भजन करनेके लिए हम यहीं छोड दे, और दूसरी ओर ध्यान दें।

सन्ध्या-समय हो चुका है। जंगल अत्यन्त घना है चारों ओर सन्नाटा वीत रहा है। एक छोटीसी पगडंडी, जो ठीक-ठीक दिखाई भी नहीं पड रही है, उसीसे दो मनुष्य सरपट चले जारहे हैं। एक मनुष्य बडा है, जो खूब ही झपाटेसे चला जा रहा है, और दूसरा एक विल्कुल छोटा लड़का! जान पड़ता है कि, वहुत जल्द वे किसी वस्तीकी तलाशमें हैं। क्षण क्षणपर उन्हें अन्धकार घेर रहा है, और वे भी मानों अन्धकारको पीछे हटानेके लिए ही जी छोड़कर भाग रहे हैं। पाठकोंको अनुमान हो गया होगा कि, ये दोनों कौन हैं और यदि न हुआ हो, तो अभी मालूम हुआ जाता है। उन दोनोंमेंसे वडा मनुष्य उस लड़केकी पीठपर एक थाप देकर कहता है :—

"अरे श्यामा, तू अपनी मॉकी नजर बचाकर मेरे साथ आ ही गया, परन्तु वह वेचारी ढूँढ-ढूँढ़कर थक जायगी। अरे तुझे वह क्या कहेगी?"

श्यामा जोरसे हँसकर कहता है, "कहने दो, कुछ भी कहा करे, मैं क्या जन्मभर उसके पैरमें पैर बाँधकर वैठा रहूँगा? देखो, सुमान दादा, यह लड़का ऐसा वैसा होकर नहीं रहेगा—सरदार होगा, एक दिन सरदार! जागीर पावेगा। मैंने कभीका मॉसे कह दिया है कि, मैं बड़ा होनेपर घरमें नहीं वैठा रहूँगा। कहीं न कहीं निकल जाऊँगा, तलवार वजानेके लिए।"

उस छोटे लड़केका कथन सुनते ही सुमान—यद्यपि वह आगे जानेके लिए उतावला होरहा था, फिर भी—कुछ ठहर गया; और पेट पकड़कर हँसने लगा। उसे उस लड़केका उक्त कथन वडा ही विचित्र जान पड़ा। इसके वाद फिर वह उसकी पीठपर एक चपत लगाकर कहता है :—

"वाह! वाह! तू सरदार वनेगा क्या? और तलवार वजावेगा? पर तेरी वह तलवार कहॉ है? तलवार भी तो चाहिए?"

यह सुनकर श्यामा कुछ खिन्न स्वरसे कहता है :—

"क्या कहें, नानासाहव चले गये! नहीं तो दिखलाता मैं तुमको तलवार कैसी होती है। उन्होंने मुझसे तलवार देनेको कहा था! खैर, कोई हर्ज नहीं, तलवार तो किसी तरह मैं पाही लूँगा! किन्तु सुमानदादा

तुम आप जा किस तरफ रहे हो? मैं तो तुम्हारे पीछे ही पीछे चल रहा हूँ —कुछ पता भी लगने दोगे?"

सुभान तुरन्त ही उसकी ओर देखकर कहता है —

"अरे तुझको ऐसी पतेकी क्या फिक्र पड़ी है? तू अभी बच्चा है। चला आया है, मेरे साथ चलाचल।" इतना कहकर उसने फिर अपना वेग पहलेसे दूना कर दिया, श्यामा एक बड़ा होशियार छोकरा था। उसने देखा कि सुभान इस समय मुझको कुछ भी पता नहीं दे सकता, इसलिये जितना मुझे मालूम है, उतने ही को रखकर काम निकालना ठीक होगा। उसको इतना निश्चित मालूम था कि, सुभान जिस कामसे जाता है, वह कोई अत्यन्त नाजुक काम है। इसके सिवाय वह यह भी जानता था कि, सुभानके खीसेमें सरकारका दिया हुआ बहुत ही महत्वपूर्ण एक लिफाफा है। फिर, जिस दिशाकी ओर सुभान जा रहा था, उससे उसको यह भी मालूम हो गया था कि, किस बस्तीकी ओर लिफाफा जानेको है। परन्तु चूंकि उसकी अवस्था थोड़ी थी, इसलिए उसकी जिज्ञासा भी बढ़ी हुई थी, और इस कारण सदैव ही उसकी यह इच्छा रहा करती थी कि, मुझको प्रत्येक बातका पूरा वृत्तान्त मालूम होना चाहिये। उसकी जिज्ञासा यद्यपि अधिक थी, फिर भी उसमें सारासार-विचारकी कमी नहीं थी, अतएव वह कभी किसीको अप्रिय नहीं मालूम हुआ।

अस्तु। बहुत देरतक वे दोनों जोर जोरसे चलते रहे, फिर भी जंगल खतम न हुआ, और अन्धेरा बढ़ता ही गया। तब सुभान श्यामासे कहता है:—

"अबे श्यामा, रास्ता तो नहीं भूल गये? अरे देख, यदि कहीं रास्ता भूल गये, और इधरके उधर भटक गये, तो तेरी हड्डी ऐसी नरम करूँगा कि, जैसे तू हुआ ही न हो। देख, मै तो सीधा रास्ता आ ही रहा था, लेकिन तू ही यह कहकर कि, 'चलो जल्दीका रास्ता दिखलाता हूँ' इधर ले आया···"

श्यामाने उसे पूरा-पूरा नहीं बोलने दिया, और बीचमें ही कहने लगा:—

"क्या कहा सुभान दादा? ऐसा कहाँ हो सकता है? मैं हजारों बार, लड़कपनसे, इधर गया हूँ। अभी दस ही बारह दिन पहले मैं इधरसे निकल गया हूँ। तुम चले चलो।"

श्यामाके कथनकी सत्यता सुभानको तुरन्त ही मालूम हो गई। थोड़ी ही देरमें वे दोनों उस बीहड़से निकलकर मैदानमें आये; और दूरपर, लगभग एक कोसके अन्तरपर, एक आकाशी दीपक उनको दृष्टिगोचर हुआ। उसे देखते ही सुभानने श्यामाकी पीठ ठोककर कहा:—

"शाबाश! बेटा, शाबाश! यह मार्ग मुझे भी मालूम था, पर तेरी परीक्षा लेनेके लिए ऐसा कहा था।"

श्यामा कुछ नहीं बोला। ऐसा जान पड़ा कि, वह दूरपर कुछ देख रहा था। कुछ देर उसी स्थितिमें रहनेके बाद वह सुभानसे कहता है:—

"हमको इस समय बस्तीमें नहीं जाना चाहिये। मैं समझता हूँ कि, इसी गोटेश्वरके मन्दिरमें प्रात.कालतक समय बिताया जाय और सुबह बहुत जल्द उठकर आगे चल देवें। बस्तीमें जायेंगे, तो पटेल इत्यादि आकर इधर-उधरकी जाँच करेंगे। यहाँका पटेल सर्फोंजीके यहाँ भी यदा कदा जाया करता है। मैंने उसको कई बार देखा है। सो वह सर्फोंजीसे जाकर सब हाल बतलावेगा।"

सुभानने उसके कहनेकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। "गाँवकी सीमा पर पहुँचकर देखा जायगा," यह कहकर वह पहलेकी भाति तेज़ चलने लगा।

अब मैदान था। घिरी हुई झाड़ियाँ नहीं थीं। इस कारण दोनों-की नज़र—विशेषत' उस लड़केकी चचल दृष्टि तो और भी अधिक—चारों ओर बड़ी तेजीसे घूम रही थी। वह इधर-उधर देखता और बीचमें ही सुभानसे बतलाता, अथवा कुछ दिखलाता जाता था। थोड़ी देरमें जब वे बागके बिल्कुल नजदीक आ गये, तब सुभानने भी ऐसा ही विचार किया कि, अब गाँवम न जावें, और श्यामा जिस मन्दिरमें

बतलाता कि उसी गोंडेगाँव महादेवके मन्दिरमें रात व्यतीत करें। क्योंकि एक तो गाँवमें जानेकी उनको कोई आवश्यकता नहीं थी, और फिर जैसा कि श्यामाने बतलाया था, सचमुच ही यदि उस गाँवके पटेलके साथ सम्भाजीकी दुश्मनी थी, तो सरकारका बतलाया हुआ कार्य बिल्कुल गुप्त रूपसे नहीं किया जा सकता था। इसके सिवाय वे दोनो अपने खानेका सामान भी साथ ही लाए थे। ऐसी दशामें बस्तीमें जानेका उस समय काम ही क्या था? मन्दिरमें कुआँ भी था, अतएव पानी इत्यादिकी कोई कठिनाई पड़ ही नहीं सकती थी। अस्तु। ऐसा विचार करके सुभानने मन्दिरका रास्ता पकड़ा। मन्दिर बिल्कुल गिरी हुई हालतमें था, इस कारण वहाँ विशेषकर किसीके आने-जानेकी भी सम्भावना नहीं थी—सब प्रकारकी सुविधा उनके मनके अनुसार ही थी, अतएव दोनोंने मन्दिरमें ही जाकर डेरा डालने का निश्चय किया। श्यामा भूखके मारे व्याकुल हो रहा था। ज्यों ही वह भीतर गया, और अपनी कमली बिछाई, त्यो ही पहले उसने सुभानसे रोटी निकालनेका आग्रह किया। थोड़ी ही देरमें, प्याज और रोटी—"जो मराठोंका खाना है"—से खूब छककर, दोनो कमलीपर लेट रहे।

रास्तेके परिश्रमसे दोनों ही खूब थके थे, अतएव लेटते ही गहरी नींदमें सो गये। हम समझते हैं, उस समय मन्दिरमें आग भी लग जाती, तो भी उनका जगना मुश्किल ही था।

मन्दिरमें एक दीपक रखा था, वह पहले ही बिल्कुल टिमटिमा रहा था, कुछ देर बाद उसके बुझनेकी ही नौबत आ गई और जब उसने देखा कि, अब हमारे जाग्रत रहनेसे कोई लाभ नहीं, तब उसने भी आसपासके अन्धकारमें विलीन हो जाना ही उचित समझा। मन्दिरके भीतर-बाहर, चारों ओर घना अन्धकार छा गया। घड़ी, दो घड़ी, चार घड़ी समय उसी दशामें गया। अब आधी रात बीत गई। चन्द्रदेवके उदय होनेका समय निकट आ गया। चन्द्रोदयकी दिशा कुछ कुछ उजली दिखाई पड़ने लगी। थोड़ी ही देरमें चन्द्रदेवने अपना सिर ऊपर निकाला और धीरे-धीरे उस गिरे हुए मन्दिरपर अपनी कान्ति

फैलानी शुरू की। वे भीतर सोये हुए दोनों प्राणी अबतक प्रगाढ निद्रामें ही थे, इतनेमें वहाँ दो मनुष्योंकी छाया मन्दिरके अग्र भागपर पडी हुई दिखाई दी, और धीरे-धीरे स्पष्ट दिखाई देने लगा कि वे दोनों मनुष्य मन्दिरकी ही ओर आ रहे हैं। क्षण-क्षणपर वे दोनों छायाएँ मन्दिरके पास आने लगीं। उनकी पोशाकसे स्पष्ट मालूम होता था कि, इनमें से एक स्त्री है; और दूसरा पुरुष। वे छायाएँ बहुत ही शीघ्रतापूर्वक मन्दिरकी ओर आ रही थीं। मन्दिरकी चहारदीवारीके अन्दर आकर वे ठहर सी गयीं; और बड़ी घवड़ाहटकी सूरतसे आस-पास देखने लगीं। उस समय ऐसा जान पड़ा कि, मानो किसीके हाथमें वे फँससे गये थे और यही देखनेके लिये उनकी दृष्टि चारों ओर घूम रही थी कि, अब यहाँ आ जानेसे हमारी बचत होती है या नहीं। क्योंकि दोनोंकी— उस पुरुष और स्त्रीकी भी—दृष्टि बड़ी घबडाहटसे भरी हुई थी। कह नहीं सकते कि, उनके पीछे कोई जंगली जानवर लगा था, अथवा किसी मनुष्यने ही उनका पीछा किया था, जो हो। मन्दिरके घेरेमें आकर जब उन्होंने देखा कि, अब हम सुरक्षित हैं, तब कहीं उनको थोड़ासा धीरज बँधा। उनमेंसे स्त्री तुरन्त ही आगे बढी और कुछ हँसी-की आवाज़ निकालकर पुरुषसे बोली:—

"यही तुम्हारा धीरज है? जरा अपने लिबासको तो देखो और इसकी लाज रखो!" यह सुनते ही पुरुष उसकी ओर देखकर कहता है:—

"चुप रह, चुप! बदमाश कहींकी। यह हँसी करनेका समय है? जा, अब देख, मन्दिरके भीतर अच्छी जगह है या नहीं।"

स्त्री फिर कुछ नहीं बोली। आगे बढ़कर मन्दिरके दरवाजेसे झाँक-कर उसने देखा। परन्तु चाँदनी अभी भीतर नहीं पहुँची थी। वह शिवमन्दिर यद्यपि ऐसा ही बना हुआ था कि, चाँदनी शिवके मस्तकपर पहुँच सकती थी, परन्तु चन्द्रमा अभी इतना ऊपर नहीं आया था कि, द्वारसे भीतर चाँदनीका प्रवेश हो सकता। स्त्रीने भीतरकी ओर बहुत कुछ दृष्टि डाली, परन्तु अन्धकारके सिवाय और उसको कुछ भी दिखाई

ना। दिया। अन्तमें जब उसने समझा कि भीतर कोई नहीं है, तब वह पीछे लौटकर पुरुषके पास गई, और बोली, "मन्दिरमें तो कोई नहीं है परन्तु अब यहाँपर और कितनी देर बैठ सकते हैं? शीघ्र ही आगे चलना चाहिये, नहीं तो सुबह हो जायगा और बस्तीके लोग यदि इधर आने लगेंगे, तो फिर • •• "

पुरुष बीचहीमें उससे कहता है·—

"घड़ीभर तो मुझे भीतर बैठने दे, फिर मुझे जहाँ दौड़ाना हो, भले ही दौड़ा लेना!" इतना कहकर वह आगे बढ़ा। चाँदनीमें दिखाई देनेपर मालूम हुआ कि, पुरुष अभी बिलकुल नवयुवक था—यहाँतक कि युवावस्थाकी विजय-पताका अभी उसके होठोंपर अथवा ठुड्डीपर नाममात्रको भी नहीं दिखाई दे रही थी। उसका शरीर बहुत ही उत्तम; और गौर वर्णका था। होंठ बिल्कुल सुर्ख और नेत्र अत्यन्त तेजस्वी थे। उसका सम्पूर्ण डीलडौल बहुत ही सुन्दर, परन्तु अत्यन्त नाजुक दिखाई देता था। सिरमें बड़ी मजबूत पगड़ी बाँधी थी और लम्बा अँगरखा खूब ढीला-ढाला पहने था।

वह स्त्री उससे काफी बड़ी थी—कोई पाँच-सात वर्ष बड़ी दिखाई देती थी। रंग उसका काला था, और बोली इत्यादिसे किसी नीच कौमकी जान पड़ती थी। परन्तु उसके चेहरेसे ऐसा जान पड़ता था कि, वह बड़ी चालाक और चतुर है और उस पुरुषपर उसका प्रेम भी बहुत अधिक है। जो हो। वह पुरुष आगे बढ़ा और धीरेसे ही दरवाजेमें जाकर झाँककर देखा, तथा आगे कदम बढ़ाना चाहा कि, इतनेमें सुभानने नींदमें ही एक बड़ी लम्बी साँस ली, जिसे सुनते ही वह घबड़ाकर पीछे लौट पड़ा। बात यह थी कि, सुभानकी वह लम्बी साँस उसको किसी भुजंगकी फुसकारके समान भास हुई, और इससे स्वाभाविक ही वह नवयुवक पीछे हट गया।

अब दोमेंसे किसीको भी भीतर जानेका साहस न हुआ, और वहाँसे और कहीं जानेका भी उनके पैर नहीं उठते थे। उस नवयुवकने अपना भय उस स्त्रीसे प्रकट किया, जिससे वह भी कुछ घबड़ाई।

भीतरसे जो फुसकार कानोंमें आई थी, सो वास्तवमें किसी विषधर-भुजंगकीसी ही थी। इतनेमें सुमानने भीतर एक जमुहाई ली, और वह भी इतने जोरसे कि बाहरके लोग और भी अधिक घबड़ाये और यह मामला क्या है, सो कुछ उनकी समझमें नहीं आया। अन्तमें वे दोनों वहांसे भगनेहीवाले थे कि, इतनेमें सुमान गिरता-पड़ता हुआ बाहर-की ओर आने लगा। इतनेमें वे दोनों व्यक्ति वहीं एक ओरको खिसक गये। सुमान बाहर आया, और एक बड़ीसी अंगड़ाई लेकर "ऊँ राम, राम, हरे राम!" के शब्द ज़ोर ज़ोरसे उच्चारण किये, जिसे सुनकर वे दोनों एक दूसरेकी ओर बड़ी विचित्र दृष्टिसे देखने लगे। अन्तमें वह स्त्री उस नवयुवकके कानमें बहुत धीरेसे, किन्तु स्पष्ट स्वरमें कहती है, "आवाज पहचानकी है! हमने पहचान ली।" उस पुरुषने सिर्फ गर्दन-भर हिला दी! परन्तु उसका सारा चित्त अब इसीमें लगा हुआ था कि, सुमान किस प्रकार जल्दी अन्दर जावे। शायद सुमान इधर आ न जावे, इसी विचारसे वह और भी अधिक एक कोनेमें छिपने लगा। यह देखकर स्त्री धीरेसे ही कहती है:—

'नहीं, नहीं, उधर नहीं, कहीं बिच्छू-बिच्छू काट लेगा, तो फिर...'

वह नवयुवक बिलकुल ही धीमी आवाजसे, किन्तु चिन्ता-पूर्वक कहता है, 'चुप चुप चण्डालिन! अरे कहीं उसको यह शंका होगई कि, इधर कोई है, तो न जाने क्या होगा! तू कुछ समझती ही नहीं।'

ये शब्द उसने इतने धीमे स्वरसे कहे, साथ ही उसने उस स्त्रीकी बाँहमें चिमटी न ली होती, तो शायद युवकका उद्देश्य भी उसकी समझमें न आता। परन्तु वे जिस संकटके भयमें थे वह उनपर नहीं आया। अब शीघ्र ही उन दोनोंने वहाँसे चल देनेका विचार किया; और उसी तरफसे पीछेको खिसक जानेवाले थे। इतनेमें उन्होंने सुना कि, भीतर गया हुआ मनुष्य किसीको पुकारकर नींदसे जगा रहा है; और कहता है कि, "चल, अब हमारे चलनेका समय आगया।" यह सुनकर अब स्वाभाविक ही बाहरके दोनों व्यक्ति इस विचारमें पड़े कि, पहले हम निकल जायँ या इन दोनोंको निकल जाने दें। भीतरके दोनों

क्योंकि नींद लेकर फिर ताजे होगये थे, और जो लोग बाहर खड़े थे, उनको नींदका मोका ही न मिला था, इस कारण उन दोनोंने सोचा कि, ऐसी दशामें यदि हम पहले चल देंगे, और उसी रास्तेसे पीछे पीछे वे भी दोनों आवेंगे, तो बातकी बातमें वे हमारे पास आजायँगे। यह उनका अभीष्ट न था। इसलिए अब क्या किया जाय, सो कुछ उनकी समझमें नहीं आया। दोनो चिन्तामग्न अवस्थामें जहाँके तहाँ खड़े रहे। भीतरके दोनों मनुष्य जगकर होशियार हो चुके थे, और अब बाहर निकलने ही वाले थे—यह देखकर उन दोनोंने वहीं खड़े रहनेका निश्चय किया।

इतनेमें सुभान और श्यामा कंधेपर अपनी-अपनी कमली डालकर बाहर निकले। उनके निकलते ही बाहरके लोग और भी अधिक छिपने-का प्रयत्न करने लगे। इतनेमें श्यामाकी आवाज भी उनके कानोंमें पड़ी, जिसे सुनते ही दोनों एक दूसरेकी ओर एकटक देखने लगे।

तेरहवां परिच्छेद

श्यामाका साहस

श्यामा और सुभान, दोनो अपनी-अपनी कमली लेकर बाहर निकले। उनके निकलनेके साथ ही उस नवयुवक और उस स्त्रीकी ऐसी बुरी अवस्था हुई कि, कुछ पूछिये मत! दोनों ही घबड़ा गये—विशेषतः पुरुष तो ऐसा थर-थर काँपने लगा कि, जैसे जूड़ी चढ़ आई हो! दोनों-की आँखें और कान सुभान और श्यामाकी तरफ लगे हुए थे। उनकी चेष्टासे ऐसा जान पड़ता था कि, सुभान और श्यामा कब वहाँसे निकलकर उनकी दृष्टिकी ओट हों। उनकी यह दशा क्यों थी? वह नवयुवक तो बहुत ही उदास दिखाई दे रहा था, परन्तु उन दोनोंको देखते ही इनकी ऐसी बुरी दशा क्यों होगई? जो कुछ भी हो, किन्तु वे बहुत अधिक घबड़ाये हुए थे।

"चल बे! चल, जल्दी ही बाहर निकल चलें—बस्तीमें चलकर

हमको क्या करना है? चल, इधर पीछेकी तरफसे निकल चलें। कहीं वह पटेल न मिल जावे, नहीं तो · ”

“मैं भी तो यही कहता हूँ कि, इस समय जहाँतक हम लोग बस्तीको बचा सकें, अच्छा ही है। यहाँतक कि, यह भी किसीको मालूम न होने पावे कि, तुम और मैं, दोनों साथ साथ, इधरसे गये हैं।”

दोनोंके ये शब्द उन बाहरवाले दोनों व्यक्तियोंके कानमें स्पष्ट रूपसे सुनाई दिये, और इतनेहीमें वे घूमकर उनके पाससे आगे निकल भी गये। हाँ श्यामाने अवश्य पीछे घूमकर देखा और फिर आगे चला। यह बात उस पुरुषको मालूम भी होगई। फिर उस नवयुवकको यह भी भास हुआ कि, श्यामाने और भी दो-एक बार पीछे घूमकर देखा। इस प्रकारका भास होनेपर नवयुवककी अशान्ति और भी बढ़ती हुई दिखाई दी।

इसमें सन्देह नहीं, श्यामाने एक-दो बार पीछे घूमकर देखा अवश्य था और यह कहना भी मिथ्या न होगा कि, उसको कोई शंका भी अवश्य हुई थी और इसी कारण उसने पीछे घूम-घूमकर देखा था। हमने कई बार पीछे भी बतलाया है कि, इस लड़केके चञ्चल नेत्रोंसे कोई भी वस्तु छूटकर बची नहीं! वह उन दोनोंके पाससे जब निकला था, तभी उसे भास हुआ था कि, मन्दिरकी दीवालके इस कोनेमें कुछ काला, और सफेदसा दिखाई देता है। वहाँ कोई खड़ा अवश्य है— फिर चाहे वह मनुष्य हो या कोई जगली जानवर! कुछ दूर चलनेपर उसकी यह इच्छा भी हुई कि, क्या है, सो देखना चाहिये, लेकिन उसने समझा कि, सुभान इस बातके लिये राजी नहीं होगा, अतएव उसने अपनी इच्छाको वैसा ही दबा दिया। तथापि वह बार-बार पीछे घूमकर देखता जाता था, इस मतलबसे कि, सुभान जब मुझसे कुछ पूछेगा, तो उसे बतला दूँगा। इसमें शायद मेरी तरह उसको भी इच्छा हो कि, देखें पीछे क्या है, और इस तरह कदाचित् वह भी पीछे घूम पड़े।

श्यामाकी यह आशा बिल्कुल व्यर्थ नहीं गई। सुभानने जब देखा कि, यह पागलकी तरह बार-बार पीछे देखता है, तब उसने श्यामासे

इसका कारण जानना चाहा। श्यामाने अपनी शंका उससे प्रकट की। सुभानने पहले तो उसको हँसीमें ही उड़ा दिया, परन्तु फिर पीछेसे कहा कि, "होगा कोई, हमको इससे क्या मतलब ?" यह कहकर उसने उसको दबा दिया, और आगे चल दिया। श्यामाको जो थोड़ीसी आशा उत्पन्न हुई थी, सो भी अब चली गई। इससे उसको बेमनसे ही सुभानके साथ आगे बढ़ना पड़ा। एक बार उसने यह भी कहा है कि, "मैं अकेला ही दौड़ता हुआ जाता हूँ।" पर इससे भी कुछ फल न हुआ। सुभानने उसको डाँट दिया। इससे अवश्य ही श्यामाको अपनी बाल-जिज्ञासा भीतर ही भीतर दाब रखनी पड़ी। बेचारेको यदि कहीं यह मालूम हो जाता कि, मेरी यह जिज्ञासा कुछ देर बाद, एक भिन्न मार्ग-से ही तृप्त होगी, तो क्या ही आनन्द हुआ होता !

अस्तु। वे आगे चले गये। इधर उस नवयुवक पुरुष और उस स्त्रीको थोडासा धीरज हुआ। जो कुछ भय उनको था, सो अब दूर हो गया। उस नवयुवकने बीसियों बार बडे ध्यानसे दूर तक नजर फेंकी होगी कि, श्यामा और सुभान अब ओझिल हुए या नहीं। अन्तमें जब उसने देख लिया कि, अब वे दोनों बहुत दूर निकल गये, इतने कि दृष्टिसे परे होगये, तब उसको शान्ति मिली, और संकटसे छूटनेकी उसने एक लम्बी सांस छोड़ी। इसके बाद फिर वह अपने साथकी स्त्रीसे बोला, "कहाँ जाते होंगे ? ये भी उसी दुष्टकी ही तरह हैं न ? किन्तु हम लोगोंके बाद क्या हालत गुजरी होगी ? क्योंरी, एक आठ दिनमें ही हम लोगोंकी कितनी विचित्र दशा हुई ? नहीं तो मुझे ऐसा ..."

वह स्त्री कुछ देरतक बिल्कुलही नहीं बोली। किन्तु फिर एकदम कहती है, "पर अब केवल खड़े रहनेसे ही काम नहीं चलेगा। आगे चलनेके लिए तो कहते हो शक्ति नहीं। फिर यहीं खड़े रहनेमें काम कैसे चलेगा ? हम लोग अभी बहुत कम चले हैं, सो जानते ही हो।"

"सो सब सच है, पर अब मेरे पैर ही नहीं उठते हैं, इसके लिये मैं क्या करूँ ? मैं अब भीतर मन्दिरमें जाकर बैठूँगा। जो कुछ होना हो, सो हो। कुछ थकावट दूर हो जाय, तब फिर आगे चलनेकी बात हो।"

"ठीक। ठीक।" वह स्त्री कहती है, "और इसी तरह मंजिल-दर-जिल चलकर वहाँ पहुँचोगे? मेरी समझमें इस जन्ममें तो यह हो नहीं कता।"

"चाहे जो कह। मुझमें अब इस समय यहाँसे हिलनेकी ताव नहीं गैर पागल कहींकी, क्या तू यह नहीं समझती कि, अब सुबह होनेमें ी कुछ देर नहीं। सुबह हो जानेपर फिर हम लोग मार्ग चल ही कैसे कते हैं? कोई पहचानका मिल जायगा तो फिर कैसा होगा? और हुछ हो नहीं सकता, हम तो अब सारे दिन यहीं रहेंगे; और फिर शाम होनेपर आगे चलेंगे।"

इसके आगे स्त्री फिर कुछ नहीं बोली। बात यह थी कि, उस पुरुषका कहना ही कुछ ऐसी डाँटका था, और इसके सिवाय उसके कथनमें स्त्रीको कुछ सत्यता भी जान पड़ी। इस कारण कुछ देरके लिए वह चुप हो गई। इसके बाद फिर उस पुरुषकी ओर देखकर कहती है—

"परन्तु, फिर इस मन्दिरमें ही दिन कैसे काट सकते हैं? यहाँ बस्तीके लोग आते ही जाते होंगे। इसके सिवाय, जैसे ये दोनों आकर यहाँ सोये थे, वैसे ही अन्य कोई मुसाफिर आकर नहा रहते होंगे, इसका क्या ठीक?" परन्तु उसके इस कथनपर उस नवयुवकने कुछ भी ध्यान नहीं दिया। वह स्वय ही आगे बढ़कर आया और मन्दिरमें चला गया। लाचार, उसके पीछे-पीछे स्त्रीको भी जाना पडा। उसकी काँखमें एक छोटीसी गठरी थी। उससे तुरन्त ही उसने एक चादर निकाली; और नीचे बिछाकर उसपर लेट रहनेके लिये उस पुरुषसे प्रार्थना की। स्त्रियोंकी चादरपर लेटनेका अवसर पुरुषोंको अच्छा नहीं लगता, किन्तु यह मौका इस प्रकारके विचार करनेका नहीं था, अथवा और कोई कारण हो—जो कुछ हो—परन्तु उस नवयुवकको उस समय उस चादरपर लेटनेमें कोई सकोच नहीं हुआ। उसने न तो शरीरके कपड़े उतारे; और न सिरकी पगडी, बल्कि वैसा ही लेट रहा। कुछ देर तो उसके नेत्र चटकीले दिखाई देते रहे, परन्तु फिर वे आप ही आप बन्द होने लगे। अन्तमें वे बिल्कुल मुँद गये, और उसको

प्रगाढ़ निद्रा आगई। वह स्त्री बड़े प्रेमसे उसके पायताने बैठकर पैर दाबने लगी।

परन्तु अब हम उनको तो यहां छोड़कर आराम करने दें, और अपने अन्य दोनों मुसाफिरोंकी ओर कुछ ध्यान देवें।

सुभान और श्यामा, रातको खूब नींद लेकर, अब नवीन उत्साहसे भर गये थे। अतएव अब वे बड़े तेजीके साथ मार्गक्रमण कर रहे थे। श्यामाके सिरमें अभी यही विचार चक्कर काट रहा था कि, "मन्दिरकी दीवारके पास मैंने देखा कुछ अवश्य था, परन्तु वह क्या था, इसकी पूरी जाँच नहीं कर सका।" बस, अभीतक वह इसी धुनमें निमग्न था। परन्तु सुभानके सिरमें कोई दूसरे ही विचार चक्कर मार रहे थे। वह इस समय इन विचारोंमें डूबा हुआ था कि, इन दस-पन्द्रह दिनोंके बीचमें हमारे किलेपर क्या-क्या घटनाएँ बीत चुकीं, और इन सब घटनाओंका अन्तमें क्या परिणाम होगा? वह मन ही मन कह रहा था —

"हमारे सरकारका कैसा प्रभाव था! पर आज देखो, उनपर भी कैसा विचित्र अवसर आ गया है! बीजापुरके दरबारमें उनका कितना वजन था, परन्तु आज उनको यह भी सोचनेका अवकाश नहीं है कि, अब हमारी क्या गति होगी, और क्या नहीं! नाना साहब न जाने कहाँ चले गये? आज सुबह · · · क्या कहा जाय! जबसे यह सुना तबसे तो सरकारकी तबीयत और भी विचित्र हो गई! मुझे इधर भेजा है, पर न जाने इसमें भी कुछ लाभ होता है या नहीं, क्या बतलाऊँ? आज कितनी ही पीढ़ियोंसे जो थानेदारी चली आ रही है, वही अब जायगी! इस ढलती उम्रमें इस कठोर बुड्ढेपर ऐसा विचित्र मौका आवेगा! उस दिन नाना साहबपर वे जब बके झके! मैंने उसी दिन कह दिया था कि, अब दिन अच्छे नहीं! नाना साहब अब अधिक दिन किलेपर नहीं रह सकते थे, यह तो निश्चय था। बादशाहके यहाँ-से उनको बुलावा अवश्य आया होता और उन्होंने भी साफ ही लिख दिया होता कि, हम नहीं आवेंगे और कदाचित् वे गये भी होते, तो

और भी अधिक भयकर परिणाम होनेकी सम्भावना थी। भरे दरबारमें उन्होंने सलाम नहीं किया होता, अथवा अत्यन्त उद्दण्डतापूर्ण व्यवहार रखा होता। इससे न जाने क्या भयकर सकट उपस्थित हो जाता। ये सब बातें मैं पहले ही जानता था। उनकी आदत ही ऐसी है! इसलिए एक तरहसे जो हुआ, सो अच्छा ही हुआ। किन्तु अब जो हो रहा है, वह और भी विचित्र है। इसकी अब कहाँतक नौबत पहुँचेगी, इसका कोई ठीक-ठिकाना नहीं। उस बदमाश सर्फोजीने उस रातको जैसा कुछ कहा, सो क्या सचमुच ही सब वैसा ही होगा भी? यदि सारा षडयन्त्र जैसेका तैसा सफल हो गया, तो बहुत ही भयंकर, अत्यन्त भयकर, घटना घटित होगी और वह सफल भी हो जायगा, इसमें बिलकुल शका नहीं।"

यहाँतक जब उसके विचार आये, तब उसके रोंगटे खडे हो गये। सर्फोजीके ऊपर उसे अत्यन्त क्रोध आया। उसने सोचा कि, "जो कुछ होना था, सो होता। लेकिन एक बार उस सर्फोजीको अवश्य यम धाम पहुँचाना चाहिये था। आवजी पटेल, मैं तथा, और भी एक-दोने मिलकर यदि उसे नष्ट कर डाला होता, तो इसमें कोई बुराई नहीं थी। परमात्माके घरमें इसके लिए कोई पाप नहीं लगता। दुष्ट! नीच कहींका! जब एक बार यह मालूम हो गया कि, यह इतना नीच है, तब फिर हमारे सरकार चुप कैसे बैठे रहे! पेडमें बँधवाकर इसको तुरन्त ही मरवा डालना चाहिये था।" इस प्रकारसे विचार भी उसके सिरमें घूमने लगे और अब उनमें वह बिलकुल ही निमग्नसा हो गया। इतनेमें कुछ-कुछ उजेला होने लगा, और श्यामाको ऐसा आभास हुआ कि, वहासे कुछ दूरपर बहुतसे लोगोंका एक गिरोह आ रहा है। उनके आनेकी आहट भी कानोंमें पडी, जैसे कोई खरगोश निश्चित होकर दूब चरनेमें लगा हो, और फिर अचानक उसके कानोंमें कोई आवाज आवे, जिससे उसके कान खड़े हो जायँ; और वह चौकन्ना होकर गुञ्जाके समान अपनी लाल-लाल आँखें चारों ओर फिरावे—बस, यही हाल उस समय श्यामाका हुआ। उसे कुछ और ही मामला समझ

पड़ा। उसके ध्यानमें आया कि, सामनेसे जो लोग आ रहे हैं वे कोई साधारण बटोहियोंके समान नहीं हैं। थोड़ी ही देरमें उसे स्पष्ट दिखाई दिया कि जो गिरोह आ रहा है उसमें कोई सौ-सवा-सौ आदमियोंसे कम नहीं हैं—उनमें भी कुछ घोड़ोंपर हैं, कुछ पैदल हैं। वे आनेवाले कुछ चुपके भी नहीं आ रहे हैं, किन्तु खूब शोर-गुल मचाते हुए, हँसते-हँसते आ रहे हैं। ये आनेवाले लोग हैं कौन? इसकी उसे शका नहीं थी। वह जानता था कि, यह किन लोगोंका गिरोह है। अतएव वह तुरन्त ही सुभानसे कहता है—"सुभान दादा, यह मुसल्मानोंकी एक टोली आ रही है। न जाने कौन हैं, और कौन नहीं! इसलिए अच्छा होगा कि, हम लोग जरा इनसे बचकर एक ओर निकल जायँ।"

किन्तु सुभानके कानमें ये शब्द नहीं पडे। वह अपना वैसा ही चला जा रहा था। क्योंकि अबतक वह अपनी उपर्युक्त विचार परम्परा-मे ही मग्न था। श्यामाने फिर पुकारकर उससे कहा, तब वह समझा; और कहता क्या है—"अरे जाने दो दुष्टोंको! चाहे कोई हो! हमें क्या मतलब! हम अपना रास्ता छोडकर क्यों जावें? रास्ता छोडकर यदि जायगे, तो उनको और भी शका होगी, फिर और भी अधिक वे पीछा करेंगे। चलो, हम अपने चुपके निकल जाय।" इतना कहते हुए वे चार कदम आगे बढे थे कि, इतनेमें सामनेके लोग बिलकुल ही नजदीक आ गये। सुभान यदि राजी भी हो जाता, तो भी अब रास्ता छोड़कर जा नहीं सकते थे। हाँ, उस गिरोहको मार्ग देनेके लिए वे दोनों एक ओर हटकर खड़े हो गये।

सामनेसे जो लोग आरहे थे, वे सचमुच ही सौ सवा सौ आदमी थे। उनमें लगभग बारह तो घोड़ोंपर थे, और बाकी पैदल चल रहे थे। पीछे दस-बीस गाड़ियाँ सामानसे लदी आ रही थीं। तम्बू-कनात-राव-टियोंकी भी कोई पन्द्रह-बीस गाड़ियाँ थीं। छोटीसी एक पलटन ही थी, इसमें सन्देह नहीं। अश्वारोही लोग आपसमें कुछ बात-चीत करते और हँसते हुए जा रहे थे। उनका सारा सम्भाषण विशुद्ध उर्दू-भाषामें था। उसमें "सुल्तानगढ" का शब्द बार-बार सुनाई देरहा था और एकबार

चन्द्रावाई, नाना साहब, हरामज़ादा सर्फोजी" इस प्रकारके नाम भी सुभानके कानमें पड़े। इससे अवश्य ही उसका पूरा-पूरा ध्यान उधर गया। यही नहीं, बल्कि उसके कानमें और भी कुछ ऐसे वाक्य पड़े कि, जिनके कारण उसका ध्यान उधर जाना अनिवार्य था। उन वाक्योंने उसे पागल ही बना दिया। उसने सोचा कि, जिस कामके लिए मैं जा रहा हूँ, उसे छोडकर अब एकदम लौट ही जाना चाहिये; और इनके आनेका समाचार इसी दम जाकर सरकारको बतलाना चाहिये। यह अत्यन्त आवश्यक है। परन्तु सरकारने जो कार्य बतलाया था, वह भी अत्यन्त महत्वका था और इस समय जो बात हमने देखी और सुनी है, वह भी जितनी शीघ्रतासे सरकारको मालूम हो जाय, उतना ही अभीष्ट है— क्योंकि जो शब्द उसने सुने थे, वे अत्यन्त भयंकर थे। करता क्या? उसको कुछ सूझ ही न पड़ा। अन्तमें वह श्यामाकी ओर देखकर बोला, "श्यामा, इस समय अत्यन्त विकट प्रसंग आगया है; और इसको बहुत जल्द, अभीका अभी, जितनी जल्दी होसके, किलेपर जाकर बतलाना चाहिये। जिस कामके लिये मुझे सरकारने भेजा है, उसीके समान यह भी अत्यन्त शीघ्र होना चाहिए।"

श्यामा एकदम कहता है:—

"दोनोंको दोनों ही काम करना चाहिए। मैं किलेपर जाता हूँ; और तुम अपने कामपर जाओ।" सुभान न जाने क्या सोचकर कुछ ठिठका।

फिर एकदम उस लड़केसे कहता है, "नहीं; नहीं, मैं ही किलेपर जाऊँगा। तू यह लिफाफा लेकर जा; और······"

कहते कहते उसने लिफाफा निकाला, जो उसने अपने मुरैठेमें बड़ी मजबूतीसे छिपा रखा था। इतनेमें, दुर्भाग्यवश, उसी गिरोहका एक सिपाही आ निकला, जो पीछे रह गया था। उसका आना था। और इधर सुभानका अपने मुरैठेसे लिफाफा निकालकर उस लड़केके सामने करना! दोनों बातें एक ही समयमें हुई? सुभान लिफाफाको श्यामाके सामने किये हुए यह बतला रहा था कि, वह लिफाफा कहाँ ले जाकर किसको देना होगा कि, इतनेमें वह सिपाही नजदीक ही आ पहुँचा।

उन दानोंका उसकी ओर पूरा पूरा ध्यान भी नहीं जाने पाया था कि, उसका ध्यान दुर्भाग्यवश, उनकी ओर चला गया। उसने तुरन्त ही ताड़ लिया कि यहाँ कुछ गुप्त भेद है। अतएव वह एकदम चिल्लाकर उनसे कहता है —"ऐ हरामजादा! तुम कौन हो? यहाँ क्या करते हो? यह लिफाफा कैसा है? देखें!

सचमुच वह मौका ही ऐसा अचानक आपड़ा कि, जिससे सुभान बहुत अधिक चकरा गया, और वह लिफाफा उसके हाथसे छूट पड़ा।

"ऐ हरामजादो! काफिर!" .. इत्यादि विशेषणोंका उच्चारण करते हुए वह सिपाही उस लिफाफेको उठानेके लिये झुकनेहीवाला था कि, इतनेमें श्यामाने उसे तुरन्त ही उठा लिया, और इतने जोरमें उसे लेकर वह वहाँसे चम्पत हुआ कि, वह सिपाही कुछ कर ही न सका— उसको अवकाश ही न मिला कि, वह उसके पीछे दौड़नेकी बात सोचे, और अपने पैरोंको गति देवे—इतनी शीघ्रतापूर्वक वह वहाँसे भगा, जैसे कोई बाघिन, बधिकके भयसे, अपने छौनेको मुँह दबाकर, उछलती-कूदती हुई चली जाती है—उसी प्रकार श्यामा वहाँसे भग चला। वह मुसल्मान सिपाही उसके पीछे लगता अवश्य, पर जिस नौकरीपर वह उस समय था, उसको छोड़कर जाना उसके लिये उचित नहीं था, इसके सिवाय, सुभान उसके पंजेमें था ही। ऐसी दशामें शायद उसने यही सोचा हो कि, सारा क्रोध इसीको दिखाकर बदला निकाल लो। श्यामाकी वह चपलता देखकर सुभानको भी अत्यन्त आश्चर्य हुआ, और वह अभी अचम्भेमें ही था कि, इतनेमें एक और मुचण्डा आगया, और सुभानका वहाँसे भागना असम्भव होगया। दोनोंने मिलकर उसे पकड लिया, और एकने उसे तड़ातड़ मारना शुरू किया। उसने भी काफी हाथ-पैर मारे। परन्तु इतनेहीमें उनके कोलाहलसे आगे गये हुए लोगोंमेंसे कुछ लोगोंका ध्यान इधर आकर्षित हुआ, अतएव उनमेंसे एक-दो और दौड़ आये। फिर क्या कहना है? सुभानके ऊपर गालियों और छड़ियोंकी बौछार शुरू हो गई। फिर अन्तमें उसे कैद करके वे लोग आगे ले चले।

———

चौदहवां परिच्छेद ।

गड़बड़में गड़बड़

सुभानकी यह दशा हुई। परन्तु उसमें भी सन्तोषकी बात उसके लिए इतनी ही थी कि, श्यामाने बड़ी अद्‌भुत चपलता दिखलाकर उस मुचंडेको खूब ही छकाया। उस लिफाफेकी ही उसके मनको चिन्ता थी; क्योंकि सरकारने अत्यन्त विश्वासपात्र समझकर उसके हाथमें वह दिया था। अतएव वह यदि उस मुचडेके हाथमे पड़ गया होता, तो न जाने कौनसा भयंकर सकट आ जाता! क्योंकि यवन लोग उन दिनों सरकार साहबके पीछे पड़ गये थे। ऐसी दशामे चाहे कोई छोटी ही बात क्यों न होती, उसीको लेकर वे उपद्रव मचा सकते थे। अस्तु।

वे यवन जिस समय उसको धक्के देते हुए, गालियाँ देते हुए, और उसकी हँसी करते हुए उसको आगे लिये जाते थे, उस समय स्वामिभक्त सुभानके मनमें उपर्युक्त आशयके ही विचार आ रहे थे। वे उसकी गर्दनमें धक्के लगाते हुए उसको आगेकी ओर ढकेल रहे थे, और साथ ही इस प्रकारके अनेक प्रश्न उससे कर रहे थे—"तू कहाँ जा रहा था?" "लिफाफा किसका था?" कहा लिये जा रहा था?" "किसने दिया था?" "किसका नौकर है?" इत्यादि। परन्तु वह किसी मूक पुरुषकी तरह बिल्कुल चुप था। उन्होंने हर तरहसे उसे तग किया, परन्तु वह एक अक्षर भी नहीं बोला। ज्यों-ज्यो वह नही बोलता था, त्यों-त्यों वे उसे और भी अधिक सताते थे। सुभानने जब देखा कि ये बहुत अधिक कष्ट दे रहे हैं, तब उसने भी एक बार आस्तीनें ऊपर समेटकर और आँखें तथा भौंहें ऊपर चढाकर अत्यन्त उग्र स्वरूप दिखलाया। जो आदमी उसे धक्का दे रहा था, उसको उसने एक ऐसा मजेदार धक्का दिया कि, वह जमीनपर गिर गया। इसके बाद दूसरे मुचड़ेने उसको पकड़ लिया। अस्तु। इस प्रकार सुभानने जब अपना उग्र स्वरूप दिखलाया, तब उन मुचण्डोकी मस्ती कुछ कम हो गई। हाँ, मुँहसे फिर भी वे खूब बकते-झकते रहे। सुभान बहुत देरसे सोच रहा था कि,

एक झटका देकर मै इनके हाथसे छूटकर निकल भागूँ, परन्तु उसको विश्वास नहीं था कि, इस प्रकार छूटकर भगनेमे उसको सफलता होगी। इसके सिवाय उसने यह भी सोचा कि, अभी छूटकर भागनेकी अपेक्षा तो यही अच्छा है कि कुछ समय तक इनके साथ ही रहूँ, और फिर पीछेसे रात-बिरात इनकी आँख बचाकर भाग जाऊँ। क्योंकि यह उसको निश्चय था कि ये लोग किले पर ही जा रहे हैं, और वह यह भेद भी लेना चाहता था कि ये क्यों जा रहे हैं, और वहाँ जाकर क्या करेंगे। अतएव जब तक यह भेद वह नहीं पा लेता तबतक उसके छूटकर भागनेमें कोई विशेष बात नहीं थी। इसलिए उस समय उसने छूटकर भागनेका विचार छोड दिया।

आगेके लोग बहुत शीघ्रतापूर्वक नहीं चल रहे थे, और सुभानको पकड़कर पीछेके लोग जरा तेज चलने लगे थे, इस कारण वे बहुत जल्द आगेवालोंमें जा मिले। इसके बाद उन्होंने अपने मुख्य सरदारके पास उसे लेजाकर सब हाल बतलाया कि, इस मनुष्यको हमने इस प्रकार कैद किया है, इसके पास सील-मुहर किया हुआ एक लिफाफा था। उस लिफाफेको, बन्दरकी औलाद एक लडका, जो इसके साथ था, अचानक लेकर भाग गया। किन्तु इसको हम लोग कैद कर लाये हैं। अवश्य ही उस मुचंडेको यह बतलाते लज्जा मालूम हुई कि हमारे देखते हुए वह लड़का लिफाफा लेकर भाग गया। इसलिए उसने उसके साथ इतना और कह दिया कि जब वह लड़का भग गया, तब हमने सन्देहके कारण इसको पकड लिया। फिर भी उसकी बड़ी हँसी हुई। यद्यपि हँसी करनेका वह समय नहीं था। उस समय तो उस कैद किये हुए मनुष्यको तंग करके, जो कुछ भेद उससे मिल सके, वह ले लेनेका ही मौका था। इस कारण उस सरदारने यही हुक्म विशुद्ध उर्दू भाषामें दिया कि, "अच्छा, ले चलो इसको आगे जहाँ छावनी डाली जायगी, वहां इसकी जाँच होगी। ऐ करीमबख्श, तू आगे जाकर छावनीकी जगह देखकर खेमा लगा। दो घण्टे वहां ठहर कर तब आगे चलेंगे। चलो ले चलो, इस नमकहरामको देख लेंगे।"

करीमबख्श और उसके साथ अन्य दस-बारह आदमी, तथा खेमेकी दो बडी-बड़ी गाडियाँ जरा शीघ्रतापूर्वक आगे बढीं। करीमबख्श बहुत आगे निकल गया। छावनीके लिए स्थान देखते-देखते वह उसी गोटेश्वरके मन्दिरके पास पहुँचा। वहाँ उसने बस्तीके बाहर, छावनी लगानेका बडा अच्छा मौका देखा, और ठीक महादेवजीके मन्दिरके सामने ही मुख्य तम्बू लगानेका हुक्म दिया। उस हुक्मको सुनते ही एक सिपाहीने कहा —"लेकिन यह तो हिन्दुओंका मन्दिर है !" उन शब्दको सुनते ही करीमबख्श उससे बुड़क कर कहता है·—

"क्यों बे ! क्या तू हिन्दुओंकी औलाद है ? जो तुझे हिन्दुओंके मन्दिरकी इतनी फिक्र है। मैं तो मन्दिरमें जाकर पेशाब करूँगा। वाह ! मन्दिर भी क्या ही अच्छा बना है ! चलो, लगाओ तम्बू जल्दी ! तब तक मैं मन्दिरमें जाकर हुक्का पीता हूँ। अरे अहमद ! हुक्का तो ला भाई ! अल्ला ! अल्ला !"

यह कहकर करीमबख्श कल्लोंपर हाथ फेरते हुए शीघ्रही मन्दिरकी ओर गया। इतनेमें भीतरसे चूडियोंकी आवाज़ आई। पिछले परिच्छेद-में जिस स्त्रीका जिक्र आया है, वह इस समय अन्दर रसोई बनानेकी तैयारीमें थी। सामान इत्यादि लाकर रखा था। करीमबख्श और उसके साथके लोगोंके बाहर आनेकी आहट जबसे उसने सुनी थी, तबसे वह खडी हुई थर-थर काँप रही थी। उसके पास ही वह नवयुवक भी खडा था। दोनों अत्यन्त घबड़ाहटकी हालतमें थे। सुभान और श्यामाके रहते समय जो संकट मालूम हुआ था, उससे कहीं अधिक सकट उनको इस समय जान पडा। दोनोंहीकी आँखें ज़मीनकी ओर लगी हुई थीं। स्त्रीने अपना मुख बिल्कुल ढक लिया था, और जान पड़ता था कि, पुरुष भी यही चाहता था कि, मैं भी इसीकी तरह हो जाऊँ तो अच्छा हो। दोनोंका हृदय धड़क रहा था। अहमद एक बिछौना और हुक्का लेकर भीतर आया। उसके पीछे-पीछे करीमबख्श भी आया। भीतर आतेही अहमद उस स्त्री और पुरुष, दोनोंको देख-

कर सब जोरसे हँसता हुआ कहता है—"जनाब, यहा तो आशिक-माशूक दिखाई दे रहे हैं।"

करीमबख्श एकदम पीछे हटा, और "क्या! जनाना ?" कहकर तुरन्त ही पीछे लौट गया। इसके बाद उसने बाहर ही पेडके नीचे बिछौना डालनेके लिये कहा। अहमदने बिछौना डालकर हुक्का दे दिया, और मसनद-तकिये भी रख दिये। करीमबख्शने हुक्का गुड-गुडाते हुए कुछ सोचकर अहमदको बुलाया, और कहा कि, भीतर जाकर उस आदमीसे कह दो कि, "यहाँ खॉ साहबकी छावनी पडेगी। तुम कहीं दूर गॉव-वॉवमे जाकर रहो।"

भीतर उन दोनोके मनमे भी यही विचार आ रहा था। दोनो ही एक दूसरेसे खुसफुसाते हुए सामान इत्यादि इकट्ठा करने और किसी प्रकार वहासे चल देनेका विचार कर रहे थे। इतनेमे अहमदने दर-वाजेके पास आकर, उस नवयुवकको जोरसे पुकार कर करीमबख्शका सन्देशा कहा, जिसे सुनते ही उस पुरुषको बडा आनन्द हुआ। सामान इत्यादिकी बहुत चिन्ता न करते हुए जल्दी-जल्दी उन्होने अपना डेरा-डण्डा समेटा, और दोनों बाहर चलनेको तैयार हो गये। स्त्रीने अपनी साडीसे अपना मुख बिलकुल ढक लिया था। परन्तु जिस स्त्रीका मुँह ढका होता है, उसको देखनेकी और भी आतुरता बढती है। उसमें भी मुसलमान लोग उस समय मराठा स्त्रीको देखनेमे विशेष आनन्द मानते थे। अहमद सन्देशा देकर अभी दरवाजेसे अलग नहीं हुआ था कि उसे उस स्त्रीकी सूरत देखनेकी बहुत इच्छा हुई। पहले वह बिलकुल दरवाजेके बीच ही मे खड़ा था, फिर कुछ एक ओर हट गया। किन्तु उसकी ऑखें बिलकुल स्त्रीकी ही ओर लगी हुई थीं। स्त्रीने जब यह देखा कि, वह देख रहा है—बिलकुल दरवाजेमे ही खडा हुआ है—तब वह पीछे हटने लगी और उस पुरुषके कानमे धीरेसे कहा कि, इससे जरा अलग हटनेको कहो। उस सूचनाको पाकर नवयुवकने अपनी सुन्दर और मधुर वाणीसे, अदबके साथ, अहमदसे जरा हट जानेको कहा। अहमद हट गया, परन्तु अब वह उस स्त्रीकी ओर देखना

बन्द करके पुरुषकी ही ओर बड़े ध्यानसे देखने लगा। कह नहीं सकते कि, उसके मनमें क्या बात आई। जो कुछ कहो। अहमद ज्यों-ज्यों उस नवयुवककी ओर देखता, त्यों-त्यों उसकी नज़र बचानेकी कोशिश करता, और बीच-बीचमें यह ताड़नेके लिये, कि अहमदकी नजर मेरी ओर तो नहीं, एक दो-बार उसने उसकी ओर आँख छिपाकर देखा भी। अस्तु। करीमबख्श जिस वृक्षके नीचे बैठकर हुक्का पी रहा था, उसी ओरसे बस्तीकी तरफ जानेका मार्ग था, वह स्त्री और पुरुष, दोनो उस ओरसे न जाकर एक दूसरी ही ओरसे जाने लगे। अहमद बराबर दोनोंकी ओर देख रहा था, बल्कि पुरुषकी ओर विशेष रूपसे। वे दोनो अभी बहुत दूर नहीं गये थे कि, करीमबख्शके पास जाकर अहमदने उसके कानमें कुछ पूछा, तब "हजूर" करते हुए अहमदने फिर कुछ कहा। इसपर करीमबख्शने गर्दन हिलाई, और अहमद शीघ्रतापूर्वक दौड़ता हुआ उस पुरुषके पास गया, और बोला, "अजी, जनाब आली, आपको हुजूरने जरा बुलाया है।" अहमदने यह प्रार्थना अत्यन्त नम्रता-पूर्वक और अदबके साथ की। अब, जावें या न जावें, यह विचार आया। जाते हैं, तो क्या होगा? और नहीं जाते तो क्या होगा? यह सब सोचनेके लिये वहाँ अवकाश नहीं था। कुछ न कुछ शीघ्रही निश्चय कर डालना आवश्यक था। अहमदने आकर सन्देशा इतनी नम्रता-पूर्वक कहा था कि, इस समय इन्कार करना मानो जान-बूझकर और भी सन्देह बढाना तथा अपने मार्गमें बिना कारण विघ्न उपस्थित करना था। यह सोचकर वह तुरन्तही अहमदको, उसीकी भाषामें, उत्तर देता है:—"मुझे बुलानेका सबब क्या है? मैं इसको बस्तीमें पहुँचाकर जल्दी ही लौटता हूँ।"

ये वाक्य मानो उसने अपने अन्दर बहुतेरा साहस लाकर कहे। परन्तु अहमदने फिर उससे नम्रतापूर्वक कहा, "जनाबमन्! जनानेको ज़रा यहीं पेड़के नीचे बिठा दीजिये आपको वहाँ कुछ देरी नहीं लगेगी।" इतना कहनेपर फिर क्या इलाज था? उसने एक बार उस स्त्रीकी ओर देखा, और यह पक्की तौरपर समझकर, कि अब एक

अन्दर भी करनेकी गुञ्जाइश नहीं रही, अहमदके साथ हो लिया। नियमानुसार बन्दगी इत्यादि होनेपर करीमबख्शने "आइये, बैठिये" कहकर उसका स्वागत किया। नवयुवक बड़े गड़बड़में पड़ा। अहमद और करीमबख्श, दोनों ही बड़े ध्यानमें उसकी ओर देख रहे थे, इस कारण उसकी और भी विचित्र दशा हो रही थी।

अन्तमें करीमबख्शने उससे "आप कहांसे आये", "कहाँ जायगे" इत्यादि प्रश्न किये। इस प्रकारके प्रश्नोंके उत्तर देनेके लिये वास्तवमें उस नवयुवकको पहलेहीसे तैयार रहना चाहिये था, किन्तु प्रश्नोंके उत्तर शीघ्रता पूर्वक देना तो दूर रहा, वह और भी घबड़ाता हुआ दिखाई दिया। अन्तमें, उसने कुछ उत्तर दिये भी। परन्तु प्रश्नकर्त्ता लोग बातकी बातमें ताड़ गये कि, ये उत्तर सत्यसे बहुत दूर हैं। फलतः उन्होंने और भी अनेक प्रश्न, एकके बाद एक किये। नवयुवकने उस प्रश्नोंके भी उत्तर, जो उसे सूझ पड़े दिये। परन्तु उस उत्तरोंसे करीम-बख्शको सन्ताप नहीं हुआ, बल्कि अहमद और वह, दोनों बीच-बीचमें एक दूसरे की ओर देखकर हँसते जाते थे। इससे स्पष्ट मालूम होता था कि, उस नवयुवकके एक उत्तर पर भी उनका विश्वास नहीं होता था, और उसको अधिकाधिक गड़बड़में डालनेके लिये ही वे प्रश्न पर प्रश्न कर रहे थे।

इतनेमें वह नवयुवक बीचमें ही उठ खड़ा हुआ, और "जनाना रुकी है, जाता हूँ" कहकर वहांसे चलने लगा। परन्तु करीमबख्शने उसे रोककर कहा, "आपने मेरे प्रश्नोंके उत्तर ठीक-ठीक नहीं दिये हैं, इसलिये खाँ साहब जबतक न आ आवें, जाने नहीं दे सकते। आप जनानेको खुशीसे मन्दिरमें बैठने दीजिये, और रसोई पानी जो कुछ बनाना हो, बनाइये—खाँ साहब भी आही रहे हैं। उनसे अपना सच्चा सच्चा हाल बतला दीजिये और फिर चले जाइये।"

कहते हैं कि, "छिद्रेष्वनर्थाबहुली भवन्ति," सो बिलकुल ठीक है। उस पुरुषको उस समय इस लोकोक्तिका बहुत अच्छा अनुभव हुआ। उसने सोचा कि, एकके हाथसे तो छुटने नहीं पाये, और अब यह

कहता है कि, दूसरा खाँ साहब आजायँ, तब जाना—तबतक बैठो यहीं। क्या करता बेचारा? उसने अपनी ओरसे बहुत प्रयत्न किया, परन्तु करीमबख्शका उत्तर बराबर वही बना रहा। बेचारेने उस स्त्रीको वापस बुलाया, और मन्दिरमें जाकर बैठनेके लिए कहा, तथा स्वयं भी मन्दिरमें गया। वहाँ स्त्रीसे बहुत देरतक धीरे-धीरे बातें करता रहा। इसके बाद फिर वह बाहर आया। फिर भीतर गया। फिर बाहर आया। ऐसा जान पड़ता था कि, अहमदका सारा ध्यान उसकी ओर है। वह पुरुष चाहे भीतर जाता; और चाहे बाहर आता, उसकी दृष्टिसे बच नहीं सकता था। उस पुरुषने उपर्युक्त रीतिसे चार-पाच चक्कर लगाये, इतनेमें तम्बू लगानेका कार्य समाप्त हो गया, और पीछेके लोग भी आ गये। उनके आते ही करीमबख्श उठा। पलटनके मुख्य सरदारको तीन बार सलाम किया। तम्बू तैयार होनेकी खबर दी, और घोड़ेसे नीचे उतरनेकी प्रार्थना की। खाँ साहब उतरे। करीमबख्शके साथ जो लोग आये थे, उन सबने ज़मीन तक झुक झुककर सरदारको सलाम किया। उसने भी सबकी सलामें लीं। इसके बाद वह मन्दिरके सामनेवाले तम्बूमें गया।

यह सरदार बिल्कुल नवजवान था होंठोंपर और ठुड्डीपर अब कहीं थोड़ी-थोड़ी कृष्णध्वजा झलकने लगी थी। पोशाक बिल्कुल सादी थी। एक कामदार लम्बा अँगरखा, उसके अन्दर कई बटनोंका हरा जाकिट, फिर कुर्त्ता और एक सफेद चूड़ीदार पायजामा। एक हाथमें रेशमी रूमाल, और दूसरे हाथमें तिरछी तलवार। सिरमें चार अंगुल चौड़ी जरीकी ऊँची टोपी, और पीछेकी ओर गर्दनतक लटकते हुए घूँघरवाले बाल, जो बहुत सुन्दर दिखाई देते थे। पुरुष खूबसूरत था। तम्बूमें जाते ही एक अर्दलीने, तम्बूके अन्दर पहननेका एक जोड़ा उसके आगे रखा। वहाँ बिछे हुए एक पलंगपर जाकर ज्योंहीं वह बैठा, त्योंही दूसरे एक अर्दलीने उसके जोड़े निकाले और दूसरे नवीन पहना दिये। एकने तस्तरी और तिपाई लाकर रख दी, और हाथ-मुँह धोनेकी प्रार्थना की। दूसरेने आकर सूचना दी कि, जलपान तैयार है। इस प्रकार सब

तैयारी हो जानेपर उसने जब जलपान कर लिया, तब हुक्केकी तैयारी हुई। हुक्का पीकर जब आराम कर चुका, तब उसे उस आदमीकी याद आई, जो मार्गमें कैद किया गया था। उसको ले आनेके लिये अर्दली-को हुक्म दिया। तुरन्त ही एक आदमी सुभानको ले आया। सुभान भीतर आकर सलाम करते हुये, अभी खड़ा ही हुआ था, और खाँ साहब उसको सम्बोधन करके कुछ कह रहे थे कि, इतनेमें करीमबख्शने भीतर आकर बहुत देरतक उनके कानमें कुछ प्रार्थना की। हुक्म हुआ कि, "उसे भी लाओ।" अहमदने मन्दिरमें जाकर उस नवयुवकसे कहा कि, खाँ साहब आपको बुला रहे हैं। वह भी इस समय हाँ, नाहीं, कुछ भी न करते हुये, चुपकेसे और गम्भीर सूरत बनाकर, उसके साथ चल दिया। जान पड़ता था कि, इस बार उसने खाँ साहबके आगे निधड़क बातचीत करनेका खब निश्चय कर लिया था। बड़ी शान्तिके साथ वह अहमदके पीछे-पीछे डेरेमें गया, और भीतर कदम रखकर, सलाम करके, ज्यों ही उसने ऊपरकी ओर देखा, त्यों ही सुभानकी ओर उसकी चार आँखें हुई। इससे नवयुवककी गम्भीरता एकदम जातीसी रही, और सुभान आश्चर्यसे अत्यन्त चकित होकर घबड़ाया हुआ सा दिखाई दिया।

पन्द्रहवां परिच्छेद

बाबाजीसे बातचीत

हमारे इस कथानकमें अभी और भी कई ऐसे पात्र हैं कि, जिनके विषयमें जाननेके लिये हमारे पाठक उत्सुक होंगे। इसलिये अब उन्हींकी ओर हमें ध्यान देना चाहिये। पाठकोंको स्मरण होगा कि, हनुमानजीके मन्दिरमें जो लोग थे, उनको यह खबर मिली थी कि, यवनोंका एक गिरोह उनके मन्दिर की ओर आ रहा है। इस खबरको पाकर उन लोगोंने अपना सब प्रबन्ध कर लिया, और मन्दिरमें किसीका कुछ पता नहीं रहने दिया। सिर्फ बाबाजी अपनी धुनीके पास बैठे हुये "राम-

राम" "सीताराम" कह कहकर एकाग्रताके साथ भजन करते रहे। अपनी कुवड़ीपर हाथ टेके हुए बावाजी महाराज अपने भजनमें इतने तल्लीन हो रहे थे कि, जैसे अब संसारमें एक "सीताराम" के अतिरिक्त और किसीमें चित्त लग ही नहीं सकता हो। परन्तु भजन करते समय बावाजीका ध्यान भजनमें ही था, अथवा और भी किसी बातकी ओर, सो सूक्ष्म दृष्टिसे अवलोकन करनेवाले मनुष्यको विशेष रूपसे मालूम हो सकता था। स्वामीजी महाराज मुँहसे यद्यपि सीतारामका ही जयघोष बराबर कर रहे थे, किन्तु, फिर भी, बाहरकी आहटकी ओर उनका पूरा-पूरा ध्यान था, और यह स्पष्ट दिखाई भी दे रहा था। भजन करते करते वे धीरेसे उठे, और आगे दरवाजेके पास कफनी निचोड़ने, अथवा थूकनेके बहानेसे बीसियों बार गये, और दूर-दूरतक नज़र डालते रहे। कुछ देर बाद उन्होंने क्या देखा कि, जिन लोगोंके आनेकी आहट मिली, वे बिलकुल नज़दीक ही आ गये हैं, और जान पड़ता है कि, मन्दिरकी ही ओर उनका मोर्चा है। यह अनुमान होते ही स्वामीजीने कुछ ऐसे ढगसे गर्दन हिलायी कि, जैसे उनके मनमें कोई विचित्र ही गुप्त उद्देश्य आया हो, और "देवी, तू गुरूका प्रसाद है, क्या आज तेरा उपयोग होगा?" कहकर उस कुबडीकी ओर गुप्त-अर्थ-पूर्ण नेत्रोंसे देखा। उसको एक बार उठाया, और फिर एक-दो बार खँखारकर गुनगुनाते हुए कहा—"जहाँतक शरीरमें प्राण हैं, वहाँतक तो दाल नहीं गलने देंगे, जान रहते उनके हाथमें नहीं पड़ेंगे।" इसके बाद लोगोंके आनेकी आहट बहुत नजदीक सुनाई देने लगी—यहाँतक कि, वे दिखाई भी देने लगे। उनको देखते ही उन्होंने अपना भजन और भी जोर-जोरसे शुरू किया। इतने जोरसे कि, बाहर मन्दिरके आसपास यदि कोई आवे-जावे, तो उनकी आवाज सहज ही उसे सुनाई दे, और ऐसा ही हुआ भी। बाहरसे जो लोग आये, उनका ध्यान उस ओर आकर्षित हुआ और उनमेंसे दो आदमी आगे आये, और मन्दिरके द्वारपर आकर—"कौन है गुसाईं? इधर आ साले!" इस प्रकार धमकीके शब्द कहे। गुसाईं बाबा पहले ही से तैयार बैठे थे। वे बहुत जल्द

आगे निकल आये, और कौन है? महाराज! मुझे क्यों बुलाया?" कहकर पूछा।

यह सुनकर उन दो में से एक तुरन्त ही कहता है, "यह मन्दिर किसका है? यहाँ कौन-कौन रहता है? तू यहाँ क्या करता है? तुझको रहनेके लिये यहाँ किसने कहा है?" इस प्रकार एकके बाद एक, कई प्रश्न उसने कर डाले। अब बाबाजी कुछ उत्तर देने ही वाले थे कि, इतनेमें दूसरे साहब खूब चडबडाकर बोले "आ, साले सुअर क्या कहता है? पकडो इसको! बड़ा बदमाश दिखाई देता है! बतला, यहाँ और कौन-कौन रहता है?"

बाबाजीने अपनी शान्ति बिलकुल ही भग नहीं होने दी। वे बिलकुल शान्तिके साथ उत्तर देते हैं, "यह हनुमानजीका मन्दिर है। मैं ही अकेला रहता हूँ। आस-पासके गाँवोंसे भिक्षा मागकर खाता हूँ। सीतारामका भजन किया करता हूँ।"

"और कौन रहता है यहाँ? बतला जल्दी?"

"और कोई भी नहीं। मेरे ही समान फक्कड़ गुसाईं, जिनके कोई घर द्वार नहीं, कभी कभी आ जाते हैं, चार घडी रहते हैं, अथवा बहुत हुआ, तो एक दो दिन रह जाते हैं, फिर चले जाते हैं।"

"नहीं, नहीं, गुसाईं नहीं और कौन आता है?"

"और कौन? कभी कभी मगलवार और हनुमान जयन्तिके दिन, लोग दर्शन करने आते हैं। कोई मानताके लिये, कोई और किसी पूजाके लिए—इस प्रकार लोग आते रहते हैं। और कौन आता।

कोई नहीं? और कोई नहीं आता? सच सच बोल! गुसाईं बना फिरता है।"

"महाराज, व्यर्थके लिये मुझे तग न कीजिये। एक बार मैंने बतला दिया कि, यहाँ कोई नहीं आता-जाता। मैंने जिनको ऊपर बतलाया, उनको छोड़कर और कोई आदमी यहाँ बेकाम नहीं आता।"

"मैंने सुना है कि यहाँ रातको गदका-फरी और कुश्ती इत्यादिके खेल हुआ करते हैं, और बहुत लोग इकट्ठे होते हैं। सच बतलाओ?"

हाँ, ऐसे खेल भी कभी-कभी हुआ करते हैं—यह मन्दिर ही बजरंगबलीका है। फिर यहाँ ऐसे खेल क्यों न हों?"

"बस, बस, हम बजरंग-बजरंगबली कुछ नहीं जानते! यहाँ कुश्ती-कुश्ती खेलने कौन लोग आते हैं? किस वक्त आते हैं? आज आये थे या नहीं?"

"यही आसपासके गाँववाले आ जाते हैं, और कहाके आवेंगे? घडी भरके लिए आये, अपना आनन्द किया, नारियल चढाया, प्रसाद बाँटा, और चलते बने। और उनका काम ही क्या है? किन्तु सरदार साहब, आप इतनी बारीकीसे जाँच क्यो करते हैं?"

बाबाजीके इस प्रश्नका उस सरदारने कोई सरल उत्तर नहीं दिया। किन्तु उलटे मस्तकमें बल डालकर कहा, "तुझे जाँच-बाँचने क्या मतलब? जो कुछ मैं पूछता हूँ, वही बतला। अबे गुसाईं, सच-सच बतला कि, यहाँ शाहजी भोसलेका लडका शिवाजी कभी आता है या नहीं?... ..बतला। यह उसकी मुकर्रर जगह है या नहीं? उसके साथ और भी कुछ · देख, यदि तूने मुझसे कुछ भी छिपा रखा तो कुशल न समझना। मैं जातका मराठा हूँ—परन्तु बाहर बहुतसे मुसलमान खड़े हैं, जो बादशाहकी ओरसे, उसे पकड़ने आये हैं। हम सब लोग गिरोह बाँधकर आये हैं। तू यदि सीधी तरहसे बतला देगा, तब तो ठीक है—नहीं तो ... "

आगे वह और कुछ कहनेवाला था कि, इतनेमें बाबाजी कहते हैं, "अच्छा! आप इस मतलबसे यहाँ आये हैं? तब तो ठीक है! शिवाजी तो इधर कभी आते-जाते नहीं हैं! इसके सिवाय यहाँ यह भी निश्चित नहीं कि, रोज़-रोज़ एक ही मनुष्य आते हों। आठ-आठ दिनतक कोई फटकता भी नहीं—मैं अकेला ही इस पीपलपर रहनेवाले उल्लू और चमगीदडोंके साथ, अपने दिन काटता रहता हूँ। आप मराठे सरदार हैं, और बादशाहकी तरफसे आये हैं, "शिवबा" को पकडनेके लिये, गोल बाँधकर! वाह! वाह! प्रभुकी लीला अगाध है!"

बाबाजीने अन्तिम शब्द कुछ ऐसी विचित्र आवाजसे कहे, और कुछ ऐसी विचित्र दृष्टिसे उस सरदारकी ओर देखा कि उसको भी कुछ विचित्र हीसा भास हुआ और वह तिरछी नजरसे बाबाजीकी ओर देखकर कहता है—"बस! बस! गुसाईं जी, व्यर्थकी बात मत करो। ऐसी प्रकारकी बातोंमें तुम लोगोंपर कैसी-कैसी नौबत आजाती है सो जानते हो? चुप बैठो, नहीं तो तुम्हारे ऊपरकी सारी छत फट पड़ेगी, और हनुमानजी रसातलको चले जायगे! तुमको यदि कुछ मालूम हो, तो बताओ।"

"मालूम? मुझको जो कुछ मालूम था, सो बतला दिया। अब तुम चाहे जितने नाराज हो, धमकाओ—डराओ, पर मैं बतलाऊँ कहांसे? जो मुझे ·· "

"मैं भीतर आकर जरूर देखूँगा। तुम्हारे ही समान गुसाईं और बाबा लोगोंकी उस लुटेरेको मदद है "

'लुटेरा" शब्दको सुनते ही बाबाजीकी नस-नसमें क्रोध व्याप्त हो गया। उनकी आँखें सुर्ख हो गईं, और मस्तकमें बल पड़ गये, तथा दाँतोंसे अपने होंठ उन्होंने इस तरह चबाये कि, जैसे अब वे उस सरदारकी गर्दनपर चढ़ ही तो बैठेंगे। किन्तु नहीं, उसी दम उन्होंने आत्मसंयम किया। ऐसा करनेमें उनको मानो बहुत प्रयास पड़ा, यह उनकी चेष्टासे स्पष्ट दिखाई दिया। क्रोधके प्रथम आवेगके वश होकर यदि उन्होंने कुछ कर डाला होता, तो यह नहीं कहा जा सकता कि, उसका क्या परिणाम हुआ होता। परन्तु वैसा मौका नहीं आया। साथ ही यह भी जान पड़ा कि, बाबाजीकी, क्षणभरकी, वह अत्यन्त क्रोधयुक्त चेष्टा उस सरदारकी नजरमें नहीं आई, क्योंकि यदि आई होती, तो आगे उसके व्यवहारमें भी कुछ अन्तर दिखाई देता। परन्तु ऐसा कुछ दिखाई नहीं दिया। मराठा सरदार तुरन्त ही अन्दर बढ़ा, उसके साथ दूसरा सरदार भी बढ़ा। मराठा सरदार और भी आगे बढ़नेवाला था कि, इतनेमें बाबाजी बिलकुल दरवाजेमें खड़े होकर कहते हैं, "खबरदार! मराठाको छोड़कर—हिन्दूके अतिरिक्त—यदि कोई भी

भीतर आवेगा, तो वह मेरी लाशपर ही पैर रखकर भीतर आ सकेगा ! मैं जीवित हूँ, तबतक····· ”

इतनेमें वह सरदार एकदम बोल उठा, “बेशक ! बेशक ! मैं मराठा हूँ,” इसीलिए भीतर जाता हूँ, ये अब भीतर न आवेंगे। पर यदि मुझे कोई सन्देह हुआ, तो फिर मैं नहीं जानता। तुम्हारा ·····”

किन्तु, इतनेमें वह दूसरा सरदार भी भीतर जानेको बहुत ही उत्सुक दिखाई दिया। अवश्य ही उस मराठा सरदारने यह कहा कि, “ये भीतर नहीं आवेंगे,” किन्तु उनकी ओर उसका बिलकुल ही ध्यान नहीं था, अथवा जान-बूझकर उसने ध्यान दिया ही नहीं। उसका पैर अभी भीतर नहीं पड़ने पाया था कि, बाबाजी आगे बढ़े, और डॉटकर बोले—अन्दर मत आना—अन्दर !” साथ ही उन्होंने अपना अत्यन्त मजबूत हाथ, किसी फौलादी बेंड़ेकी तरह, आड़ा लगा दिया, और चुप खड़े रहे। दूसरा मुसल्मान सरदार हथियारबन्द था, परन्तु बाबाजीकी उस विशुद्ध उद्दण्डताके कारण वह कुछ ऐसा चकितसा दिखाई दिया कि, क्षणभरके लिये वह पीछे हटकर चुप खड़ा हुआ उनकी ओर देखता रहा। बाबाजीने बेंडेकी तरह अपना हाथ जो दरवाजेमें आड़ा लगा दिया था, वह ऐसा कुछ गठा हुआ था, और ऐसा कुछ शक्तिका सार उसमें भरा हुआ दिखाई देता था कि, चाहे कोई कितना ही ढीट क्यों न होता, उसको ठिठककर पीछे हटना ही पड़ता ! '

एक मामूली गुसाई ने मुसल्मान सरदारको पीछे हटा दिया, इस बातपर उस मुसल्मान सरदारको बहुत खेद हुआ; और उसका बदला लेनेके लिए वह अपनी तल्वार भी निकाल्नेही वाला था, परन्तु इतनेमें उस मराठे सरदारने भी उसे पीछे ही रहनेके लिए कहा। विशुद्ध उर्दू भाषामें उसने उससे कहा, “सरदार साहब, आप अन्दर आनेकी जल्दी न करें। मैं भीतर आही गया हूँ, सब अच्छी तरह घूमकर देखता हूँ। यदि कोई बात होगी, तो······’

“बस। बस, मैं कभी नहीं सुनूँगा। तुम मुझे कहनेवाले कौन हो ? तुम इस घमण्डमें न रहना कि, मैं तुम्हारे मातहत भेजा गया हूँ।

तुम यदि फितूरका काम करोगे, तो मै तुम्हारी कभी न सुनूँगा।"

इस प्रकार, अत्यन्त उद्दण्डतापूर्वक, उस मुसल्मानने मराठे सरदारको उत्तर दिया। यह सरदारको बहुत बुरा लगा। उसका शरीर जल उठा किन्तु उसके मुँहसे एक शब्द भी नहीं निकला—शायद क्रोधका अतिरेक ही इसका कारण हो। हाँ, उसने एक बार उस मुसल्मान सरदारकी ओर ऐसे ज्वलन्त कटाक्षोंसे देखा कि, जिनसे वह भस्म हो जा सकता था। फिर कुछ देर बाद वह उससे कहता है—"मेरा कहना न सुनोगे, तो मै जबरदस्ती सुनाऊँगा। कभी मानूँगा नहीं। जबतक कहीं सन्देहके लिए स्थान नहीं तबतक मै बिना कारण तुमको यहाँ भ्रष्टाचार नहीं करने दूँगा। फिर चाहे मुझे सूलीपर चढ़ा दिया जाय, अथवा तोपदम करा दिया जाय, कोई परवा नहीं। यहाँ तुम अगर उद्दण्डता दिखलाओगे, तो मै यहीं उलट पडूँगा, और तुम्हारी एक भी नहीं चलने दूँगा।" बातो ही बातोंमे जब यहाँतक नौबत आ पहुँची, और मराठा सरदार बिगड़ उठा, तब मुसल्मान सरदार कुछ नरम पड़ा, और दाँत किटकिटाते हुए दरवाजेपर ही खड़ा रहा।

मुसल्मान सरदार दाँत किटकिटाते हुए, मस्तकपर बार-बार शिकन डालते हुए, और कभी-कभी उस मराठे सरदारकी ओर घूरते हुए खड़ा रहा। इसके बाद वह भीतर ही भीतर कुछ फुसफुसाया, जैसे कुछ प्रतिज्ञासी कर रहा हो। परन्तु उस मन्दिरमे जानेवाले मराठे सरदारका ध्यान उसकी ओर बिलकुल नहीं गया, अथवा जैसे उसकी ओर कुछ ध्यान देनेका प्रयोजन ही उसे प्रतीत न हुआ हो। अस्तु। वह उन गुसाई जीके साथ भीतर गया। दरवाजेसे जब वह कुछ दूर चला गया, तब बाबाजी कुछ धृष्टतापूर्वक उससे कहते हैं, "सरदार साहब, आप बादशाहका काम करने तो आये ही हैं। पर क्या मै भी कुछ कहूँ।"

"हाँ, हाँ, अवश्य कहो। जो कुछ तुमको कहना हो, कह डालो, मै हृदयसे सुनूँगा। पर मै जो कुछ पूछता हूँ, सो बतला दो। सचमुच बतलाओ, आजकलके ये छोकरे यहाँ बैठकर कुछ गुप्त मन्त्रणा किया

करते हैं या नही ? हमको पता पूरा मिल गया है। चाहे तुम छिपाओ भी, परन्तु हमको विश्वास हो चुका है। हम सब बातें निकाल लेंगे। परन्तु तुमसे ही यदि मालूम हो जाय, तो और अच्छा, इसलिए तुमसे पछता हूँ।"

"सरदार साहब," बाबाजी कुछ चकित चेष्टा बनाकर कहते हैं, "आप क्या कहते हैं, और क्या पूछते हैं, सो कुछ मेरी समझमें नहीं आता। मुझे जो कुछ मालूम था, सो मैंने आपको बतला दिया। इसमें अधिक और क्या बतलाऊँ ? बतलानेको और कुछ है ही नहीं। आप अपने धर्मको भूलकर यदि मुसल्लोंके द्वारा मन्दिरको भ्रष्ट कराना चाहते हैं, उसको नाश करवा डालना चाहते हैं, और यदि आपको अपने धर्मका कुछ अभिमान नहीं है, तो जो कुछ आप चाहते हैं, खुशीसे करें। मेरे रोके आप मानेंगे थोड़े ही ?—किन्तु मेरी प्रार्थना सिर्फ इतनी ही है कि, हम हिन्दू हैं, और उसमें मराठे हैं, हमको इन मुसल्लोंने मानों चूस डालनेका ही प्रबन्ध कर रखा है। इनके सामने हमारी कोई भी कीमत नहीं रही है। और यह सब हमने अपनी ही हाथों कर रखा है— आप मराठे ही तो हैं ? आपको अपने कुलका, अपनी जातिका, अपने देशका कुछ भी अभिमान नहीं है ?"

बाबाजी उपर्युक्त प्रश्न करते हुए मानों बिलकुल तल्लीनसे हो गये। यह स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि, उनका पूरा-पूरा हृदय उपर्युक्त प्रश्नमें ही उतर आया है। परन्तु उस मराठे सरदारको वह बिलकुल ही नही रुचा। एक मामूली गुसाई हमको इस तरहसे कहे, और ऐसे समयमें ! यह उसको बिल्कुल ही सहन नही हुआ। वह एकदम बाबाजीकी तरफ देखकर कहता है, "बाबाजी, इस कथनसे आपके महात्मापनमे बट्टा लगता है, और हमको सन्देह हो रहा है कि, आप उन उपद्रवी लोगोंके मददगार अवश्य हैं। इसलिए इच्छा होती है कि, आपहीको हम कैदकर ले जावें। आपने सर्व-संगपरित्याग किया है। यह कौपीन, ये जटा, और ये सब सन्यासीके चिन्ह, हमको ढोंग मालूम हो रहे हैं ! अन्यथा आपको ऐसी बातोंसे क्या मतलब ?"

"मुझे ? मुझे कौनसा मतलब ? मुझे कैद करना चाहते हैं ? खुशीसे कीजिए । कैद कीजिये शूलीपर चढाइये, तोपके मुँहमे दीजिए, वृक्षमे उलटा टांगकर प्राण लीजिए, चाहे दीवालमे चुनकर मार डालिये, अथवा आज हाथ, कल पैर, परसों कान—इस प्रकार एक-एक अंग काटकर—रोज तिल-तिल काटकर—मेरी जान लीजिये, अथवा एक ही वारमें किसी किलेपरसे लेजाकर ढकेल दीजिये। इससे भी अधिक यदि आपको कोई विचित्र युक्ति सूझ पडे, तो उसीको भिडाकर मेरे प्राण लीजिए। मुझे चाहे जितना कष्ट दे लीजिए, मेरे पीछे कोई रोनेवाला नही बैठा है, और आपको इससे कोई लाभ भी नहीं हो सकता। चाहे जितने कष्टसे मुझे करना पडे, मैं तैयार हूँ। और क्या चाहिये ? मुझे कैदखानेका, सजाका, मृत्युका भय दिलानेमे क्या लाभ ? यवनोकी नौकरी करके गौ-ब्राह्मणोपर आपको कोई तरस नही आता। पेटके लिये आप अपना मराठापन भूल गये हैं। हिन्दुओंका व्रत भूल गये हैं! यही ससार पर प्रकट होगा! और क्या होगा ?"

बाबाजी इतनी शान्तिसे, और हृदयपूर्वक कह रहे थे कि, सुननेवाले के मनपर भी कुछ न कुछ प्रभाव होता हुआसा दिखाई दिया, परन्तु उस प्रभावको उसने बाहर नही प्रकट होने दिया, और इसी उद्देश्यसे वह सरदार बाबाजीसे इस प्रकार बोला, "ठीक है, ठीक है, हमें आपका यह सिखावन नहीं चाहिये! हम जिस कामके लिए आये हैं, वह काम करने दीजिए।"

इतना कहकर उसने एक बार बाहर दरवाजेकी तरफ देखा। उसने सोचा कि, हम इतनी देरसे इस गुसाईं से बातचीत कर रहे हैं। ऐसी दशामें हमारे मुसल्मान साथीको कहीं सन्देह न हो जावे, और वह कहीं भीतर न चला आवे। बस, यही सोचकर उसने अपने साथीकी ओर नजर फेंकी। इसके बाद हनुमानजीके पासका दीपक उठाकर उसने एक बार चारों तरफ निरीक्षण किया। तदनन्तर वह फिर एक बार बाबाजी-से पूछता है, "यहाँ नीचे कहीं न कहीं तहखाना है, और उस तहखानेमे कुछ न कुछ•• •••"

उस मराठे सरदारका कथन अभी समाप्त भी न हो पाया था कि, बाबाजी उससे कहते हैं, "क्या ? क्या ? यहाँ तहखाना है ? कहाँ, कहाँ है ? आपको, मालूम है ? मुझे तो इसका बिल्कुल पता नहीं, पर आपको यदि पूरा-पूरा मालूम हैं, तो मैं पता लगाऊँगा ! मेरे समान गरीब मनुष्यको छिपकर बैठनेके लिए स्थान ही मिल जायगा।"

मराठा सरदार इसपर फिर कुछ नहीं बोला। एक दो बार नीचे पड़कर मानों उसने जमीनके अन्दरकी आहटसी ली। इसके सिवाय जहाँ जहाँ उसे सन्देह हुआ वहाँ वहाँ हाथ-पैर पटककर उसने परीक्षा की। यह देखा कि, कहीं पोलाईकी आवाज तो नहीं आती। परन्तु वैसी आवाज कहीं नहीं आई, और यदि आई भी हो तो उसके खयालमें नहीं आई। वास्तवमें उसको आई ही नहीं। क्योंकि नीचे भुँहारेकी रचना बडी विचित्र थी। जहाँ हनुमानजीकी मूर्त्ति खड़ी थी येंदाँसे पीछेकी ओर मन्दिरका भाग बहुत थोडा था, और उसी ओर भुँहारा था। मन्दिरके अगले भागमें उसका कहीं पता ही न था। और यदि कहीं था भी, तो बहुत ही थोडे अंशमें। सो वह अंश संयोगवश उस सरदारकी परीक्षामें नहीं आया। उसने बहुत देरतक इधर-उधर देखा। हनुमानजी-के पीछेसे भी उसने चार-पाच बार प्रदक्षिणा की। सम्पूर्ण जमीनकी खूब अच्छी तरह जाच की। सन्देह यह था कि, कहीं एक-आध दराज दिखाई पडेगी, अथवा और ही कुछ चिन्ह मिलेगा, तो हमारी जाच पूरी हो जायगी। क्योंकि उसको इस बातका तो पूरा विश्वास हो गया था कि, इस मन्दिरमें कहीं न कहीं कुछ गडबड़ अवश्य है। अन्तमें उसको यह सन्देह हुआ कि, बाबाजीकी धूनी जिस जगह है, उसी जगह, राखके ढेरके नीचे, शायद कुछ न कुछ विशेष बात मिले। बाबाजी नहीं, नाहीं करते ही रहे, पर उसने एक न सुनी; और उनकी धूनी भी हटाकर देखी, जगह साफ करके देखी, किन्तु सब व्यर्थ ! कुछ भी पता नहीं लगा। तब कुछ निराशसा होकर वह बाबाजीसे कहता है, "तो फिर तुम हमको कुछ भी पता नहीं लगने दोगे—एँ ? देखो, तुम बच नहीं सकते। कुछ पता हो, तो बताओ।" बाबाजी खास तौरपर हँसकर कहते हैं,

"सरदार साहब, आप क्या कहते हैं, और किस बातका पता चाहते हैं, सो कुछ मेरी समझमें नहीं आता। जो कुछ मुझे मालूम था, सो मैंने आपको बतला ही दिया। अब और क्या बतलाऊँ? मैं आपसे यह भी कहता हूँ कि, जो कुछ आप पूछते हैं, उसका यदि मुझे पता होता भी, तो मैंने आपको बतलाया न होता। यही नहीं बल्कि मुझको यदि मौका मिल गया, तो मैं किसी न किसीके द्वारा शिवबाको—जहां वह होगा, वहां—कहला भेजूंगा कि, "भैया, तूने जिस कार्यको हाथमें लिया है, उसे नष्ट करनेके लिए मराठा-कुलके ही सिंह उद्यत हो रहे हैं। बादशाही शाहदोंके लालचने उनको पछाड़ा है!' हाय! हाय! मुसल्मानोंकी गुलामी करके हमारे मराठे सरदारोंने स्वाभिमानको बिलकुल ही तिलाजलि दे दी है! वे गौ-ब्राह्मणोंके उद्धारकी बात भी नहीं सोचते! सब गरीब और हीन-दीन जनोंकी आहें चुपकेसे सुनते रहो, धर्मकी अवहेलना आखोंसे देखते रहो, और यदि किसीसे वह न देखी जावे, और वह इस नरकयातनासे छूटनेका प्रयत्न करे, तो उसके विरुद्ध होकर शत्रुको सहायता करो—उस बेचारेकी निन्दा और विडम्बना करो! इससे तो यही अच्छा है कि, राजपूत वीरोंकी तरह अपने घर-द्वारको आग लगाकर, बाल-बच्चोंको अपने हाथसे मारकर, उन्हींकी चितामें हम कूद पड़ें! राम! राम! सीताराम! हे ईश्वर! तू ही रक्षक है!"

बाबाजीके इस भाषणमें कोई विशेषता हो, सो नहीं, किन्तु इन शब्दोंके मुँहसे निकलते समय उनकी चेष्टा अवश्य कुछ विलक्षणसी हो रही थी। उस समय यदि किसीने उनकी वह सूरत देखी होती, तो यह कोई नहीं कह सकता था कि, ये केवल गुसाई ही हैं। उनका सम्पूर्ण हृदय मानो उस समय उनकी सूरतमें ही आ गया था। उनके शरीरके प्रत्येक अंग मानो वही शब्द उच्चारण कर रहा था। बाबाजीके उन शब्दोंका—अथवा उन शब्दोंके उच्चारण करते समयकी उनकी चेष्टाका—उस सुननेवालेपर कुछ न कुछ प्रभाव अवश्य पड़ा। क्योंकि उसकी सूरत कुछ नम्रसी दिखाई पड़ने लगी। उसकी आखोंमें जो पहले उदण्डताका पानी था, सो कुछ कम हो गया, और उनमें एक

प्रकारकी शालीनता दिखाई देने लगी। इसके बाद एकाएक कुछ हँसकर वह बाबाजीसे बोला, "धीरे धीरे! इतने जोरसे मत बोलिये। वह बाहर खड़ा है। उसने यदि सुन लिया, तो औरका और हो जायगा। आप जो कुछ कह रहे हैं, सो मेरे मनमें नहीं आता, ऐसा नहीं—मेरे मनमें भी आता है, किन्तु मेरी कुछ चलती नहीं। इस समय उन्हींका इकबाल है। प्रत्येक मनुष्य यदि वही प्रयत्न करने लगे, तो इससे कुछ नहीं होगा। भलीभाति सोच-समझकर काम करना चाहिये।"

उसी समय कुछ उत्तर देनेके लिये बाबाजीके होंठ स्फुरित हुए, सो सरदारने देखा। परन्तु जान पड़ा कि, अब विशेष वह उनकी सुनना नही चाहता था। इसलिए तुरन्त वह दरवाजेकी ओर चला गया; और दरबारी भाषामें गम्भीरतापूर्वक उस मुसल्मान सरदारसे बोला, "यहाँ सन्देहके लिये कोई स्थान दिखाई नहीं देता। मैंने खूब जाँच की। इस गुसाई से और कुछ विशेष मालूम हो सकेगा, सो आशा नहीं। मैंने बहुत पूछा, पर हम लोगोंको जो खबर मिली थी, वैसा यहाँ कुछ भी दिखाई नहीं दिया। इसलिए अब हमको यहासे···"

"मेरे खयालसे इस गुसाईंपर विश्वास रखनेका कोई कारण नहीं", मुसल्मान सरदार मस्तक सिकोडकर कहता है, "यह बड़ा धूर्त्त दिखलाई पडता है। मैं इसे कैदकर ले जाऊँगा, और मन्दिरके आसपास पहरा रखूँगा। तुमने जो कुछ पता लगाया, सो सब मैंने देखा। मुझे तो यही शंका है कि, इस गुसाईंने तुमको पूरा पूरा चकमा दिया। तुम हिन्दू-हिन्दू सब एक होगे, सो मैं अच्छी तरह जानता हूँ। कुछ भी हो, मराठे लोग नमक······"

उस मराठे सरदारकी उस समयकी चेष्टा देखकर ही मानो उस मुसल्मान सरदारके उपर्युक्त शब्द अधूरे रह गये। ऐसा जान पड़ता था कि उस समय उस मुसल्मान सरदारके वचन सुनकर उस मराठे सरदारके चित्तको बडा खेद हुआ। उसने सोचा कि, जिस समय देखो उसी समय हमको और हमारी जातिको ये परकीय लोग इस प्रकार

धिक्कारते रहते हैं और जो मनमे आता है, वही कहते हैं। इसके सिवाय उस समय एक कौतूहलकी बात यह भी हुई कि, उस मुसल्मान सरदारके मुखसे जिस समय उपर्युक्त अन्तिम वाक्य निकले, त्यो ही बाबाजी भी पीछेसे दरवाजेके पास आ गये, और मराठे सरदारकी दृष्टि उनकी ओर पडी।

जिस समयकी आख्यायिका हम लिख रहे हैं, उस समय मुसल्मान लोग बहुत ही उद्दण्डताका बर्ताव करते थे। मराठे सरदार बादशाही राज्यके लिए बडे उपयोगी होते थे, अतएव उनको भिन्न-भिन्न कार्य सौंपे जाते थे। बडे-बडे उत्तरदायित्वके कार्य भी उनके सिपुर्द किये जाते थे। किन्तु साथ ही उनके जोड़का एक एक मुसलमान सरदार भी उनके साथ दिया जाता था। विजित और विजेता लोगोंमे चाहे जितना सख्यभाव हो, फिर भी विजेताओंके मनका अभिमान और विजित लोगोंके मनका असन्तोष पूर्णतया कदापि नष्ट नही होता, यही अबतकका अनुभव है। हमारे कथानकके समयमे भी ऐसा ही था। दक्षिणके सभी मराठे सरदारोंके हृदयमें इतना असन्तोष फैल रहा था कि, जिसका कुछ टिकाना नही। दरबारमें चाहे जितना मान हो, अथवा बड़े-बड़े उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य भी क्यों न बतलाये जाय, किन्तु मुसल्मान सरदार सदैव उन मराठे सरदारोंके साथ ऐसा ही बर्ताव करते थे, जिससे मराठे सरदारोंको यह मालूम होता रहे कि, राज्यकी ओरसे उनपर बड़ा उपकार हो रहा है, उनको बडे-बडे ओहदे दिये गये हैं। उनका मान होता रहता है। इत्यादि। नवयुवक मुसल्मान सरदार जिस प्रकार अपने उद्दण्डतापूर्ण व्यवहारमें और बातचीतमें उपर्युक्त भाव दरसाते थे, उसी प्रकार वृद्ध सरदार भी किसी दूसरी तरहसे उपर्युक्त भाव प्रकट करते थे। मतलब यह कि उस समय सब जगह ऐसी ही अवस्था थी कि, जिससे मराठे सरदारो और महाराष्ट्र-प्रजाके हृदयमे असन्तोष उत्पन्न हो चुका था। यही नही, बल्कि प्रत्येकके मनमे यह इच्छा उत्पन्न हो चुकी थी कि, किसी न किसी प्रकारसे इन मुसल्मान राजाओंको यदि कोई नीचा दिखावे तो बहुत

अच्छा हो। किन्तु ऐसी दशा नहीं थी कि, उस इच्छा, और उस समयकी वास्तविक परिस्थितिसे लाभ उठा सकनेकी आशा किसीके मनमें उत्पन्न हुई हो। सबके मनका यही भाव था कि, किसी न किसी प्रकार कुछ हो, तो अच्छा! इनका राज्य किसी प्रकारसे नष्ट हो! नवयुवक लोग जब एकत्र बैठकर इधर-उधरकी बातें करते, तब यह विषय अवश्य उनकी बातोंमें निकलता था—फिर उस समय वे लोग यही कहते कि, "यार अमुक अमुक तरहसे यदि कोई यत्न करे, तो सफलता अवश्य हो, अमुक अमुक बात यदि इस प्रकार हो जाय, तो क्या ही आनन्द हो! सबका एका यदि हो जाय, तो कोई मुश्किल बात नहीं। अमुक व्यक्ति ऐसा ऐसा प्रयत्न कर रहा है, किन्तु उसको सफलता होगी, सो नहीं दिखाई देता। मुसल्मान बड़े ही धूर्त हैं।" बस इसी प्रकारकी बातें नवयुवकोंमें हुआ करती थीं। ऐसी बातोंसे कुछ होता है, सो नहीं। हाँ, हवा किस तरफ बह रही है, यह जाननेके लिए ऐसी बातोंसे लाभ उठाया जा सकता है। जब जब कोई राज्यक्रान्तियाँ होती रही हैं, तब तब उनके पूर्व-लक्षण इसी प्रकारके दिखाई देते रहे हैं, असन्तोष! असन्तोष! और सो भी विशेषतः जनसाधारणके मनमें उत्पन्न होनेवाला असन्तोष! बस, यही राज्यक्रान्तियोंका आदि कारण है। परन्तु जाने दो। हमको राजनीतिके सिद्धान्तोंपर यहाँ व्याख्यान नहीं देना है। इसलिये हम अपने कथानककी ही ओर आवें, तो अच्छा होगा।

"इस मुसल्मान सरदारने ऐसी बात कही कि, जिससे हमारे गौरवको धक्का लगा, और बाबाजीके कानोंमें यदि यह बात पड़ गई होगी, तो वे हमको क्या कहेंगे—" बस, यही भाव तुरन्त उस सरदारके मनमें आया। परन्तु वह मौका कुछ कहनेका नहीं था, इसके सिवाय, उसके मनमें कुछ विचार भी आया जिससे उसने समझा कि, अब इस समय जितनी जल्दी होसके, चल देना चाहिये। यदि और कुछ समय हम यहाँ रहेंगे, तो यह यवन, जैसा कहता है, बाबाजीको सचमुच ही कैद कर लेगा। मराठा सरदार यह नहीं चाहता था। उसकी सूरतसे स्पष्ट झलकता था कि, बाबाजीके कहनेका उसपर अवश्य प्रभाव पड़ा है;

और बाबाजीके विषयमें उस मराठे सरदारके मनमें एक प्रकारका पूज्य भाव उत्पन्न हो चुका था, इसलिए उनको कैद करने देना उसे बिलकुल अनुचित मालूम हुआ, और उसने उन्हें बचानेका प्रयत्न भी किया, पर उसकी सफलताके कोई लक्षण दिखाई नहीं दिये। अन्तमें वह सफल नहीं हुआ। मुसल्मान सरदारने एकदम बाबाजीको कैद करनेका हुक्म दे दिया।

सोलहवां परिच्छेद

बाबाजीको दण्ड।

बाबाजीको पकड़नेका हुक्म हुआ, और अब वे पकड़े जानेवाले हैं, यह उनको भलीभांति मालूम हो गया। ऐसी दशामें, उनकी चेष्टा कितनी गम्भीर—कितनी उद्धत हो गई होगी, इसकी कल्पना पाठकोंको, अपने मनमें करनी चाहिये। जिन लोगोंने बाबाजीके उस दिनतकके चरित्रका निरीक्षण किया होगा, उनको भी, उस समयकी उनकी सूरत देखकर, यह बतलाना कठिन था कि, उनके हृदयकी उस समय क्या दशा थी। जैसे किसीके हृदयमें अत्यन्त तिरस्कार और क्रोधका भाव उठते हों, और इन दोनों मनोविकारोंको अत्यन्त कष्टके साथ वह भीतर ही भीतर दाब रहा हो। ऐसी ही दशा इस समय हमारे बाबाजीकी हो रही थी। "इसको पकड़ो, और अपने साथ ले चलो!" ये शब्द ज्यों ही उनके कानमें पड़े, त्यों ही उनके शरीरकी नस नस, तनकर, फूल गई। उनके उस विशाल मस्तककी तीन नसें तो बिलकुल उँगलीके समान ही तनी हुई दिखाई देने लगीं। उनकी आँखें ऐसी कुछ क्रूर और तिरस्कारपूर्ण दिखाई देने लगीं कि, जिसका कुछ ठिकाना ही नहीं। अपनी कृष्णवर्ण और घनी घनी भौंहोंके नीचेसे उन्होंने उस मुसल्मान सरदारकी ओर आँखें फाड़कर देखा। उस दृष्टिमें तथ्य भरा हुआ था, इसमें सन्देह नहीं। इसके बाद फिर उन्होंने अपनी उन्हीं तथ्यपूर्ण आँखोंसे एक बार अपनी कुबड़ीकी ओर देखा, और फिर उस

मुसल्मान सरदारके हृदयकी ओर देखा···इसके बाद फिर अपने मेष-की ओर देखा; और मन ही मन "अभी समय नहीं आया," कहकर वे चुपके खड़े रहे।

कह नहीं सकते, क्या कारण था, लेकिन बाबाजीकी वह तिरस्कार-पूर्ण दृष्टि मुसल्मान सरदारको अच्छी नहीं लगी। उसने फिर उनकी ओर देखा भी नहीं। मानों वह मन ही मन सोच रहा था कि, अपने हुक्मको अमलमें लाऊँ या न लाऊँ। जान पड़ता था, वह मुसल्मान सरदार भी कुछ कम तर्कज्ञानी नहीं था। क्योंकि, उसने बाबाजीके केवल उस दृष्टिक्षेपसे ही ताड़ लिया कि, हमारे सामने जो ये खड़ा है, सो केवल बाबा ही नहीं है। और यह बात उसकी सूरत भी बतला रही थी। सच पूछिये, तो जब कि यह शका हो चुकी थी, तब फिर बाबाजी-के पकड़ने न पकड़नेके प्रश्नपर बहुत सोच-विचार करनेका कोई कारण नहीं था। परन्तु शायद स्वामीजीकी वह क्रूर और संतप्त चेष्टा, तथा ऐसी ही उनकी दृष्टि, इन दो बातोंने ही उस मुसल्मान सरदारके मनको गड़बड़में डाल दिया हो! जो कुछ भी हो, किन्तु अन्तमें उसने यही निश्चय किया कि, बस, अब इसको पकड़ो ही! इसके बाद उसने फिर एक बार उस मराठे सरदारकी ओर देखकर कहा, "तुम चाहे जो कहो, मुझे विश्वास नहीं होता कि, यह बिलकुल बाबा ही होगा। इसलिये इसको मैं अवश्य गिरफ्तार करके ले चलूँगा।" यह कहकर उसने जोरसे अपने साथ आये हुए अन्य लोगोंको बुलाया, और फिर एक बार हुक्म दिया कि, 'इस गुसाईंको पकड़कर ले चलो।' हुक्म सुनते ही चार-पाच आदमी दौड़कर आये; और बाबाजीके शरीरमें हाथ लगानेही वाले थे कि, इतनेमें ऐसी तेजीके साथ—जो कि केवल किसी जन्मसिद्ध राजत्व पाये हुए मनुष्यको ही शोभा देने योग्य थी—उन्होंने अपना केवल दाहिना हाथ ऊपर उठाया; और उतनी ही तेजीके साथ वे सब लोगोंकी ओर देखकर बोले, 'खबरदार! हमारे शरीरमें हाथ लगाया तो! बस्ती छोड़कर मैं मन्दिरमें आकर बैठा हूँ—मेरे समान गरीब वैरागीको भी कष्ट देनेसे तुम लोग बाज नहीं आते! तब, अवश्य ही तुम्हारे सत्यानाश

होनेका समय निकट आ गया है, इसमे सन्देह नहीं। कोई परवा नहीं। तुम्हें मेरी तरफ दौड़कर मुझे पकड़नेकी कोई जरूरत नहीं। मैं स्वय तुम्हारे साथ होऊँगा। किन्तु जरा धीरजसे। एक बार जब मैं तुम्हारे पजेमे फँस जाऊँगा, तब न जाने कब फिर इस जगह आना हो, और कब न हो, इसलिए बजरंगबलीकी चार परिक्रमा कर लूँ।" इतना कहकर तुरन्त ही उन्होंने अपनी पीठ फिराई। उनकी उस तेजीपे वह मुसल्मान सरदार और उसके अन्य लोग बिल्कुल चकित होकर उनकी ओर देखते रहे। किसीके मनमें भी न आया कि, "जो कुछ होगा, सो देखा जायगा—इसे एक बार दौड़कर पकड ही लो।" केवल उनकी उस उद्धत गति और उद्दण्ड वृत्तिकी ओर देखते रहनेके अतिरिक्त और कुछ भी मानो उन्हें सुझाई ही नहीं दिया, और वास्तवमें था भी ऐसा ही। उस मुसल्मान सरदारका हृदय तो स्वामीजीका वह बर्ताव देखकर बिलकुल विचार मग्न हो गया था। "यह मनुष्य है कौन? जिस वेशमें यह दिखाई देता है, वह सच्चा तो है नहीं—कोई न कोई कपटजाल है—" यह बात उसके मनमें घर कर गई थी। बाबाजीका प्रत्येक बातसे यही दिखाई देता था कि, इनका किसी न किसी उच्च कुलका ही जन्म है—कमसे कम उस मुसल्मान सरदारको तो ऐसा ही मालूम होता था। मराठे सरदारका हृदय भी कुछ उसी प्रकारके विचार विकारोंसे व्याप्त हो रहा था, और वह भी उसी दृष्टिमे बाबाजीको देख रहा था। इतनेमें वह मुसल्मान सरदार उससे कहता है, "सन्ताजीराव" तुम उसपर अपनी नजर रखो। वह हनुमानजीकी प्रदक्षिणाके बहानेपे उधर गया है। सावधानीके साथ उसपर दृष्टि रखो। वह बातकी बातमें धोखा देकर चला जायगा। तुम भीतर जाकर उसके पीछे ही पीछे रहो। वह किसी न किसीको इशारा करके अपनी सब दशा जतला देगा। देखो, वह क्या करता है, सो सब हमको मालूम होना चाहिए। तुम इधर-उधर न देखो। भीतर उसपर पूरी पूरी नजर रखो।"

इतना तो उसने स्पष्ट रूपमे कहा; और फिर अन्दर ही अन्दर

फुसफुसाता है, "परन्तु तुमपर इतना भी विश्वास कैसे रखें? क्योंकि तुम उसे भगा देनेमें भी नहीं चूकोगे। किन्तु मैं स्वयं ही नजर रखूंगा। कभी चूकूंगा नहीं।" यह कहकर वह सचमुच ही उस गुसाईंकी ओर देखता हुआ खड़ा रहा। उसके साथके लोग भी उसकी भाँति देखते खड़े रहे।

बाबाजीने दो-तीन बार अच्छी तरहसे परिक्रमा की। जितनी बार वे हनुमानजीके पीछेसे निकले, प्रत्येक बार उस ओर फुर्तीके साथ नीचे झुककर "टक् टक् टक्" की तीन बार आवाज की। इस प्रकार जब तीन प्रदक्षिणा हो गईं, तब उन्होंने अत्यन्त चपलगति दिखाकर हनुमानजी-को एक-दो अंगुल आगे सरकाया, और उस दराजसे कुछ डाल दिया, तथा, फिर उसी दम हनुमानजीको जहाका तहा कर दिया। यह कार्य उस समय बाबाजीने अत्यन्त ढिठाईके साथ और फुर्तीसे किया। बाहरसे जो लोग देख रहे थे, उनकी दृष्टिमें यदि हनुमानजीका हिलना जरासा भी आ जाता, तो सर्वनाश अत्यन्त निकट था; और बाबाजी यह बात नहीं जानते थे, सो नहीं। वे जानते थे; किन्तु अपनी कर्तव्यदक्षताके विषयमें उनको इतना अभिमान था—और वह अभिमान बिल्कुल ठीक था—कि, जिसका कुछ ठिकाना नहीं। जो कुछ भी हो, क्षणभरके लिए उस मुसल्मान सरदारके मनमें हनुमानजीके हिलनेकी शंका जरूर आई। परन्तु वह यह न समझ सका कि, हमने जो कुछ देखा, वह केवल भासमात्र है या क्या? उसने सोचा कि यह भास अवश्य हुआ; पर यह भास है क्या? हनुमानजीकी मूर्त्ति हिली क्यों? जो हो, यह केवल भास ही होगा; क्योंकि इतनी देरपे हम बराबर देख रहे हैं, पर इस क्षणके अतिरिक्त और फिर ऐसा भास भी नहीं हुआ। अन्तमें उस सरदारने समझा कि, यह केवल भासमात्र था, और कुछ नहीं। बस, यही समझकर वह कुछ नहीं बोला। इतनेमें बाबाजी भी यह कहते हुए आ पहुँचे—"हाँ, चलो, अब जहाँ ले चलनेको हो, ले चलो। चलनेके पहले एक बार फिर मैं तुमसे कह देना चाहता हूँ कि, तुम बिना कारण मुझ गरीब वैरागीको कष्ट दे रहे हो।"

पर उनकी सुनता कौन है ? बाहर आते ही आसपासमे लोगोंने उनको घेर लिया, और बीचमे करके वहाँसे चल दिये। मन्दिरसे बाहर निकलते समय बाबाजीने एक लम्बी सास ली, और कुछ खेद-प्रदर्शक हँसी हँसकर पीछेकी ओर देखा।

बाबाजीके मनमे क्या क्या विचार उस समय आ रहे थे, सो कुछ कहा नहीं जा सकता। परन्तु उस समयके उनके उस खिन्न हास्यमे; और पीछे घूमकर अपने मन्दिरकी ओर एक विचित्र दृष्टि डालनेसे, यह अनुमान स्वाभाविक ही होता है कि, उनके मनमे कोई विलक्षण विचार आ रहे थे। बहुत देरतक वे लोग, एक दूसरेसे कुछ भी न बोलते हुए, चुपचाप, जा रहे थे। हॉ, मन ही मन वे शायद कुछ सोचते जाते थे; और कुछ फुसफुसाते भी थे। मराठा सरदार यह सोच रहा था कि, देखो, यहॉपर हमारी एक भी नहीं चलने पाई, एक दूसरे मनुष्य [बाबाजी] के आगे मुसल्लेने हमारी बेअदबी की—वास्तवमे यह हमारा मातहत है, पर इसने हमारी न सुनकर अपनी मनमानी कार्यवाही की; और अन्तमे हमारे देखते देखते इस मनुष्यको पकडे लिये जा रहा है—इस सबका कारण क्या है ? यही तो कि, हमारे ऊपर विश्वास नहीं। बस, इसी प्रकारके विचार उस मराठे सरदारके मनमे आ रहे थे; और वह मन ही मन जलता हुआ चला जा रहा था। उसके घोडेको भी, जान पड़ता था, अपने मालिकके मनकी दशा मालूम हो गई थी, क्योंकि वह भी बिलकुल उदाससा होकर चल रहा था। मुसल्मान सरदार भी अपने मनमें आई शकाओंके विषयमें विचार करता हुआ जा रहा था। वह सोचता था कि, हम इस मनुष्यको कैद करके लिये तो जा रहे हैं, पर कहीं यह जैसा कि कहता है, कोई वैरागी ही तो नहीं है ? हमने तो इसको यही समझकर पकड़ा है कि, यह कोई बड़ा चतुर षड्यन्त्रकर्त्ता है, और शाहजी भोसलेके छोकरेके गिरोहका कोई व्यक्ति है। परन्तु अन्तमे यह कोई बिलकुल वैरागी ही न निकल जावे, और यदि कहीं ऐसा ही हुआ, हमारा अनुमान सत्य न निकला, तो अवश्य ही हमारी किरकिरी होगी। अच्छा, यदि हमारा अनुमान सत्य है, तो फिर

यह है कौन ? यह इस मन्दिरमें वैरागीके रूपमें क्यों रहता है ? हमारे सुननेमें आया था कि, इस जगह वह शाहजीका छोकरा अपने ग्रामीण साथियोंको इकट्ठा करता है—सो क्या वास्तवमें सच है ? इन बातोंका निश्चय कैसे हो ? बस, इसी प्रकारके प्रश्न वह मन ही मन सोचकर, अपनी कल्पनाके अनुसार, उनके उत्तर भी देता जाता था। इसी प्रकार कुछ देर सोचने-विचारनेके बाद अचानक उसके मनमें यह आया कि, हनुमानजीकी मूर्त्ति हिलनेका जो भास हुआ था, सो क्या था ? इस बातकी याद आते ही उसकी विचारावलीमें और भी अधिकाधिक उलझन पड़ने लगी। उसके अन्तःकरणको यह विश्वास तो था ही कि, वह जो कुछ दिखाई दिया था, सो केवल भासमात्र था; परन्तु क्षण-क्षणमें उसके हृदयमें एक प्रकारकी अत्यन्त सूक्ष्म शङ्काध्वनि भी उठ ही जाती थी। वह ध्वनि जड़से निर्मूल नहीं हुई, और जितनी बार उसने बाबाजीकी ओर देखा, उतनी बार उक्त शङ्काध्वनि उसके हृदयमें ज़रूर ही उठती रही। यह वैरागी सच्चा वैरागी नहीं है—यह विचार तो उस समय उसके हृदयमें इतना जोर भरता था कि, उसको उस समय इसी बातपर बड़ा आश्चर्य हुआ कि, यह शङ्का ही मेरे मनमें क्यों आई ? इधर बाबाजीके मनमें जो विचार आ रहे थे, सो ऐसे नहीं थे कि, उनकी चेष्टापरसे किसीकी समझमें आ जाते। उनकी चेष्टा इस समय खिन्न अथवा उदास भी न थी। वे इस समय उतने ही मजेमें चले जा रहे थे जैसे वे नित्य भिक्षाके लिए जाया करते थे, अथवा और किसी स्वाभाविक कार्यके लिए चले जा रहे हो। पहलेकी भांति अब तिरस्कार अथवा द्वेषकी भी कुछ छटा उनके चेहरेपर दिखाई नहीं दे रही थी। वे इस समय बिल्कुल शान्त और गम्भीर थे। अन्य लोगोंका क्या पूछना है—वे अपने मजेसे इधर-उधर देखते हुए और मार्गमें आने-जानेवालोंकी हँसी-दिल्लगी करते हुए चले जा रहे थे। मार्गसे जाते हुए प्रत्येक हिन्दूकी हँसी उड़ाना अथवा उस हँसीको और भी कोई बीभत्स स्वरूप देना उन मुसल्लोंके बायें हाथका खेल था। मान लो कि, दस पाँच मुसल्मानोंका गिरोह मार्गसे जा रहा है, और वहांसे

कोई ब्राह्मण स्नान संध्या करके, आचमनी और पंचपात्र लिये हुए निकला—अब उस बेचारेका कुशल नहीं! बस, यही हाल उस समय था। इसके सिवाय कभी-कभी वे शिखानष्ट लोग हिन्दू-स्त्रियोंकी विडम्बना भी, भरे रास्तेमें, कर दिया करते थे। सारांश यह कि, उस समय उनकी उद्दण्डताकी कोई मर्यादा नहीं रही थी। सो उसी स्थिति-का प्रत्यक्ष अनुभव इस समय हमारे बाबाजीको हो रहा था। वह सर-दार अपना बिलकुल चुपचाप चला जा रहा था, परन्तु पीछेके लोग जान-बूझकर जरा पीछे ही रहकर, धीरे-धीरे, और एक दूसरेसे हँसते-खेलते, विनोदपूर्वक, तथा बाबाजीकी हँसी उड़ाते हुए और आने-जाने-वालोंकी खबर लेते हुए, चले जा रहे थे। परन्तु बाबाजीने अपना गौरव इतना नहीं घटा दिया था कि, उन मुसल्लोंकी हँसी-दिल्लगीमें आ जाते—यही नहीं, बल्कि उन्होंने इस बातकी खबरदारी भी रखी थी कि, इनके सामने हमारा गौरव कम न होने पावे—वे अपने मजेसे, कुबड़ी इस हाथसे उस हाथमें और उस हाथसे इस हाथमें, लेते हुए, आनन्दपूर्वक, धीरे-धीरे—मस्तीसे—चले जा रहे थे।

चलते चलते वे लोग एक गाँवके किसी पनघटके पाससे आ निकले। वहाँ बेचारी गरीब ग्रामीण स्त्रियाँ पानी भरनेमें लगी थीं। जब वे लोग बिलकुल वहाँ पास ही आ गये, तब स्वाभाविक ही वे बेचारी लजाकर अपना आँचल सँभालने लगीं, और कनखियोंसे यह देखनेके लिये, कि ये कौन हैं, कहाँ जा रहे हैं, मुँह ऊपर करके खड़ी हो गई। उनमेंसे एक स्त्री—जो जरा सुन्दरी भी थी अभी हालहीमें अपना घड़ा भरकर अपनी सहेलीके सहारेसे सिरपर लेकर चलनेको थी। अवस्था बिलकुल अल्हड़ थी—स्वाभाविक ही इच्छा हो आई कि, देखें, ये लोग कौन हैं। इसलिये घड़ा वैसा ही सिरपर लिये हुए—लजाती हुई, जरा मुड़कर खड़ी होगई। उसकी ओर नजर जाते ही एक मुसल्मान दूसरेमें अपनी लकड़ी टोंचकर कहता है, "ऐ म्याँ, देखो तो, कैसी अदाके साथ खड़ी है। वाह क्या कहना है! बिजलीसी चमकती है। यह नजाकत!" दूसरेने भी उस ओर देखा, और पहलेहीकी तरह कुछ शब्द कहे।

तीसरेने दूसरेसे कुछ और अश्लील शब्द कहकर पूछा, और सब लोग ठठाकर हँसने लगे। दोनों सरदार आगे जा रहे थे, इसलिये उनका ध्यान इस ओर जा ही नहीं सकता था कि, हमारे अनुचरवर्ग पीछे क्या कर रहे हैं। इसके सिवाय उन दोनोंका मन भी अपने-अपने विचारोंमें ही निमग्न था, इसलिये उनकी ओर ध्यान जाना और भी असम्भव था। पीछेवाले लोगोंमें, बीचमें हमारे एक बाबाजीको छोड़कर, और बाकी सब लोग उस ठठ्ठेमें शामिल थे। सब लोग उस समय उस पनघटके सामने खड़े हो गये; और उन स्त्रियोंकी ओर देख देखकर उनके विषयमें—विशेषत: उस बेचारी ग़रीब सुन्दरीके विषयमें आपसमें हँसी करने लगे। बाबाजी अत्यन्त क्रुद्ध हुए। मन्दिरमें जिस प्रकार उनकी चेष्टा अत्यन्त सन्तप्त और क्षुब्ध हो गई थी, उसी प्रकार इस समय भी हो गई—जैसे कोई ज़बरदस्त शेर पिंजरेमें बन्द किया जावे, और फिर उसको लकड़ियोंसे टोंचा जावे, उस समय जैसी उस शेरकी अवस्था होती है, वैसी ही इस समय बेचारे बाबाजीकी भी हो रही थी। उन्होंने सोचा कि, इस समय क्रोधमें आकर यदि हम कुछ कहेंगे, अथवा हाथसे इनको कुछ दण्ड देनेका विचार करेंगे, तो इससे कोई लाभ न होगा; और उल्टे ये लोग बिगड़कर इन स्त्रियोंका और भी अधिक अपमान करेंगे। इसके सिवाय, इतने लोगोंके बीचमें हम अकेले हैं; और अबतक खुले हुए हैं, सो ये फिर हमको बाँध लेंगे। बस, यही सब सोचकर बाबाजीने उस समय गम खाई। ये शिखानष्ट लोग हमारे मराठोंकी स्त्रियोंकी इस प्रकार हँसी-दिल्लगी करें; और हम चुपके देखते रहें—इससे अधिक और निर्बलता क्या हो सकती है? यह सोचकर उनका मन अत्यन्त क्षुब्ध होगया। अपनी क्रोधाग्निको भीतर ही दबाकर वे उसे जहाकी तहाँ ही खपा देनेका प्रयत्न कर रहे थे। इतनेमें उस युवतीको गर्दनमें न जाने लचक लगी या क्या—उसने अपने दोनों हाथोंसे घड़ेको ज़रा ऊपर उचकाकर गर्दन ज़रा इधर-उधर घुमाई, और फिर घड़ा सँभालकर रख लिया। यह एकने देखा, और तुरन्त ही वह दूसरेसे कहता है, "आय् हाय्! क्या सुराहीदार गर्दन है! यह लचक

बाबाजी तिरस्कारयुक्त हँसी-हँसकर कहते हैं, "मुझसे पूछनेवाला तू कौन है? जो कुछ दण्ड मुझे देना हो, खुशीसे दे सकता है!"

सतरहवां परिच्छेद।

मन्दिरसे डेढ़ कोसपर।

समय,—बाबाजीको कैदकर लेजानेके लगभग दो घण्टे बादका, और स्थान,—उस मन्दिरसे डेढ कोसपर।

जिस जगह हमारी इस कथाकी अधिकाश महत्वपूर्ण घटनाएँ अबतक पाठकोको दृष्टिगोचर हुई हैं, उसी हनुमानजीके मन्दिरसे लगभग डेढ कोसपर अब हमको चलना है। जिस स्थानपर हमको जाना है, वह स्थान बिलकुल जंगलमें—पहाड़की तराईमे—दो ऊँची-ऊँची पहाडियोके बीचकी घाटीमें, अवस्थित है। इस स्थानमे पास ही पास दो झोपड़ियाँ हैं, परन्तु उन झोपड़ियोंमें मनुष्य हैं, अथवा नही, सो मालूम नहीं होता। चारो ओर बिलकुल सुनसान है। इन झोपड़ियोंके अतिरिक्त कोसो आसपास मनुष्य बस्तीके कोई चिन्ह कहीं दिखाई नही पड़ते। बस्तीका अनुमान सिर्फ एक इसी बातसे हो सकता था कि, वहाँ झोपड़िया बनी हुई थीं, और बिना हाथके झोपड़ियाँ बन नही सकती थीं। इस समय वहा इतना सुनसान था कि, एक उड़ते हुए घुग्घूके मोटे पखकी फडफड़ अथवा दूरपर गिरे हुए सूखे पत्तोंमें दौड़नेवाले किसी जीव-जन्तुकी मर मर आवाजके अतिरिक्त और कुछ भी सुनाई नही देता था। हाँ उपर्युक्त आवाजोके अतिरिक्त एक आवाज वहाँ और भी सुनाई दे रही थी, और वह थी उन दो झोपडियोंमेसे एक झोपडीमें किसीके खुर्राटे भरनेकी। झोपड़ीके अन्दर निगाह पहुँचना बिल्कुल असम्भव था, क्योंकि चारो ओर अत्यन्त घना अन्धकार छाया हुआ था। किन्तु खुर्राटे भरनेकी आवाज काफी आ रही थी। हाँ, दूसरी झोपडीसे सिवाय सन्नाटेके और कोई भी आवाज कानोमें नहीं पड रही थी। जिस झोपड़ीसे खुर्राटेकी आवाज आ रही थी, और जिस झोपड़ीसे

कोई भी आवाज नहीं आ रही थी—दोनोंके दरवाजे बन्द थे। एकका भीतरसे और दूसरीका बाहरसे।

झोपडीमें सोनेवाले मनुष्यके खुर्राटे भरनेकी आवाज बिल्कुल ताल-सुरसे आ रही थी। इतनेमें झोपड़ीसे लगभग बीस-पच्चीस कदमपर पहाडीमें ऊपरकी ओर एक कोनेसे कुछ उजेलेका आभास दिखाई दिया! उजेला मशालका था, और वह मशाल एक मनुष्यके हाथमें थी। वह मनुष्य पहाड़ीकी एक छोटीसी गुफामें था; और एक अर्ध-वृत्ताकार छिद्र जो वहाँसे दिखाई दे रहा था, उसीसे अपना सिर निकाल कर धीरेसे झाँक रहा था। "जीवा! जीवा!" पुकार करके उसने दो-तीन आवाजें भी दीं; परन्तु कोई बोला नहीं। फिर उसने "जीवा! रे जीवा!" करके जरा जोरसे पुकारा; और शीघ्र ही बाहर आकरके भीतर गुफाके अन्दर फिर झाका, और पीछेकी तरफ किसीसे पूछा कि, "आ गये न?" उसे उसका अभीष्ट उत्तर मिल गया, और उसने मशाल बुझा दी। इसके बाद वह बाहर आया हुआ मनुष्य उस झोपड़ीके पास गया कि, जहाँसे खुर्राटे भरनेकी आवाज आ रही थी, और वहाँ जाकर उसने ये शब्द कहे—"जीवा! अरे जीवा! क्या मर गया, ऐसे ही पहरा दिया करता है? दुष्ट कहींका!"

द्वारके पाससे जब उपर्युक्त शब्द जोर जोरसे सुनाई दिये, तब जीवाका खुर्राटे भरना एकदम बन्द हो गया; और वह बिलकुल घब-डाया हुआ उठा, तथा लड़खड़ाते हुए द्वारके पास आया। इसके बाद ये शब्द उसके मुखसे सुनाई दिये, "कौन? कौन? येसाजी? एँ? एँ? और भी······" आगेके शब्द दरवाजा खोलनेकी आवाजमें ही लुप्त हो गये। झोपड़ीके बाहर जो व्यक्ति खड़ा था, उसका ध्यान भी उस ओर न था। भीतरसे दरवाजा खुला; और लगोटी सँभालते हुए, तथा शरीरके भिन्न-भिन्न भाग; एकके बाद एक, खुजलाते हुए और "धत् तेरेकी! आज ऐसी नींद आई!" कहकर पश्चात्ताप दिखलाते हुए, एक काला-कलूटा, जवान मनुष्य उसके सामने आकर खडा हो गया। जिसको उसने येसाजी कहकर सम्बोधन किया था, उस मनुष्यने

तुरन्त ही उसे एक थप्पड़ जमाकर एक ओर हटाया, और बोला, "जीवा, तुझसे कितनी बार कहा, फिर तेरी आदत नहीं जाती। अरे! तेरे लिए यहाँ दो झोपड़ियाँ बनवाकर रहनेके लिए कहा गया है, सो क्या इसी तरह? दुष्ट कहींका! यही तेरी खबरदारी है!"

"खबरदारी" शब्दके सुनते ही उस दरवाजेमें खड़े हुए मनुष्यको बहुत बुरा लगा, और यह उसकी सूरतमें स्पष्ट दिखाई दिया। इसलिए वह फिर उदास होकर कहता है, "जरूर भूल तो हुई सरकार!"

"अच्छा, कोई हरज नहीं। पर आगेसे खबरदार रहो। जाओ, और अपनी हमेशाकी जगहसे घोड़े मँगाकर खड़े करो। आज चार घोड़े चाहिए। वह यमाजी कहाँ गया? यमाजी?"

"यमाजी अभी अभी "घड़ीभरमें आता हूँ" कह कर चला गया, पर अभी लौटा नहीं। जान पड़ता है, कहीं तमाशे-वमाशेमें फँस गया, और क्या?"

येसाजी फिर कुछ-नहीं बोला। जीवा फिर लँगोटी सँभालकर तुरन्त ही झोपड़ीके बाहर निकला, और बातकी बातमें न जाने किधर गायब हो गया। उसके चले जानेपर येसाजी पीछे लौटा, और गुफाके पास गया। वहाँ उसके पीछे पीछे गुफासे तीन मनुष्य आकर खड़े हुये थे। उनसे उसने कहा, "अब यहाँ बहुत देरतक रहनेकी जरूरत नहीं है। जीवा उधर गया है। वह घोड़े तैयार करेगा। आप सवार हो। मैं और ये यहाँ रहेंगे। यमाजी आजाय, फिर हम अगले प्रबन्धमें लगे। आप जरा भी चिन्ता न करें। श्रीधर स्वामीका यदि बाल भी बाँका हुआ, तो दक्षिणमें म्लेच्छोंका नाम-निशान भी नहीं रहने देंगे—यह प्रतिज्ञा है! ... हाँ, अब हम लोगोंको कोई किला बहुत जल्द हस्तगत करके सारा बन्दोबस्त करना चाहिये, यह बहुत आवश्यक है। क्योंकि यह स्थान जबतक किसीको मालूम नहीं हुआ है, तबतक तो ठीक है। किन्तु यदि किसी अच्छे सरदारको पता लग गया, तो सँभालना मुश्किल होगा, और फिर बड़ी गड़बड़ी मचेगी। इस द्वारके लिए तो कोई भय नहीं।

यह तो बातकी बातमें बन्द करके दूसरी तरफसे निकला जा सकेगा, पर उधरका क्या होगा ?"

अब पाठकोंको शायद यहाँपर इस बातका कुछ अनुमान हो गया होगा कि, उपर्युक्त लोग कौन थे। हमारे उस हनुमानजीके मन्दिरके भुँहारेमें हमारा सिपाही जवान, एक अत्यन्त तेजस्वी नवयुवक और उसके दो साथी, तथा श्रीधर स्वामी—इतने लोग उतरे थे। जिनमेंसे श्रीधर स्वामी उपनाम बाबाजी कुछ देरके बाद ऊपर आ गये थे। श्रीधर स्वामीके ऊपर आजानेपर उस मन्दिरमें क्या-क्या घटनाएँ हुईं, सो पिछले दो परिच्छेदोंमें बतलाई गई। श्रीधर स्वामी ऊपर आकर उन सरदारोंसे झगड़ने लगे, और भीतर, भुँहारेके अन्दर, उन चारों आदमियोंमें बहुत कुछ इधर-उधरकी बातें होती रहीं। वे बातें अवश्य ही, ऊपरकी घटनाओंको न जानते हुए ही हुईं। उन लोगोंको यह स्वप्नमें भी ख़याल न था कि, हमारे बाबाजीके कैद हो जानेतककी नौबत आवेगी। मुसल्मान सूबेदारोंका उस समय यह खयाल ज़रूर हो गया था कि, हनुमानजीके इस मन्दिरमें कुछ, बाग़ी लोगोंका अड्डा है, पर निश्चयात्मक यह कभी किसीको मालूम नहीं हुआ था कि, इस मन्दिरमें अमुक ही अमुक मनुष्य एकत्र होते हैं, अथवा अमुक लोगोंने अमुक जगह झगड़ा-फ़िसाद किया अथवा डाका डाला, इत्यादि। हाँ, एक-दो बार किसी किसीको सन्देह अवश्य हुआ था, पर उस सन्देहको मिटानेका कोई मार्ग न था। क्योंकि इस बातका कुछ पता था ही नहीं कि अमुक ही समयपर लोग जमा होते हैं, अथवा अमुक ही लोग जमा होते हैं। इसके सिवाय, अभी इस बातकी आवश्यकता भी उनको मालूम नहीं होती थी कि, निगहबानीके लिए बराबर मनुष्य ही रख दिये जायँ। आस-पासके क़िलेदार लोग यही सोचते रहते थे कि, गाँवके चार-छै आदमी जिस प्रकार गप्पें मारनेके लिये अथवा खेल इत्यादि खेलनेके लिये किसी चौराहे या मन्दिरके मैदानमें जमा हो जाते हैं, उसी प्रकार कुछ नवजवान वहाँ भी इधर-उधरकी गप्पें उड़ानेको कभी-कभी जमा हो जाते होंगे, और कुछ उपद्रव रचते होंगे;

उनको चाहे जब दाव देंगे। हाँ, मराठे किलेदारोंके कानोंमें कभी-कभी, इस मन्दिरमें होनेवाली बातोंका, अतिरंजित वर्णन पहुँचा करता था, परन्तु वह इतना अतिशयोक्त होता था कि सिवाय ज़ोर ज़ोरसे हँसनेके और कोई महत्व उन्हें कभी मालूम नहीं होता था। प्राय. अधिकांशका खयाल यही था कि, कुछ अवारा छोकरे वहाँ जमा होकर इधर-उधरके उपद्रव किया करते होंगे, और उसमें कोई महत्वकी बात नहीं। पुरन्दर-के किलेदारका तो पूरा पूरा यही खयाल था कि, यह छोकरोंके हँसने-खेलनेकी जगह है, और कोई तत्व नहीं। यह बात तो किसीको स्वप्नमें भी मालूम नहीं थी कि, इस मन्दिरमें हनुमानजीकी मूर्त्तिके नीचे एक भुँहारेका मुँह है, जो कि डेढ कोसपर कहीं जाकर निकला है, अथवा भीतर भुँहारेमें भवानीजीका एक भव्य मन्दिर है, जहाँ अस्त्र-शस्त्र और विपुल द्रव्य इकट्ठा किया जा रहा है। मालूम कैसे होता ? अव्वल तो अभी वह दशा ही नहीं आई थी कि, जिसमें ऐसी बातोंका किसीको स्वप्न होता। इसमें सन्देह नहीं, मुसल्मानी अमलदारीके अनन्वित अत्याचारोंसे सारी प्रजा पीडित हो रही थी, और प्रत्येककी हृदयसे यही इच्छा थी कि, कब परमात्मा वह सुदिन लावे कि, जब इस शासनका अन्त हो, और हम इस कष्टसे छूटें। परन्तु उस सुदिनके उदय होनेकी आशा, महाराष्ट्रके एक तेजस्वी नवयुवकके अतिरिक्त और कुछ ऐसे नवयुवकोंके जिन्होने उसके अत्यन्त निकट रहकर उसके प्राणोंके लिए प्राण देनेका व्रत लिया था—और किसीके भी हृदयमें जाग्रत नहीं हुई थी। यही नहीं बल्कि किसी वृद्ध मराठे मनसबदार अथवा किलेदारके कानोंमें यदि कभी यह बात पड़ती कि, "राजा शाहजी भोसलेका लड़का शिवाजी मराठोंका स्वराज्य स्थापित करना चाहता है," तो वह यही कहता कि, "वाह! वाह! इस छोकरेको भी कहाँकी सूझी है! जान पड़ता है कि, अपने पिताकी सारी कीर्ति और सम्पत्तिपर चौका लगाकर कुत्तेकी मौत मरना चाहता है!" मराठोंका स्वराज्य और मुसल्मानोंकी पराजय, दोनों बातें केवल असम्भव मानी जाती थीं। उस समय तो वहांके लोगोंका यही खयाल था कि, मराठोंको अब मुसल्मान बादशाहों-

के ही दरबारमें रहकर बड़े-बड़े पद प्राप्त करने चाहिये—कहीं किलेदारी, कहीं सरदारी प्राप्त करनी चाहिये, और जन्मभर "जी हुजूर," कहते हुए मुसल्मानोंके दरबारमें राजभक्तिका प्रदर्शन करते रहना चाहिये। बस, यही उस समय एक परम पुरुषार्थ समझा जाता था। हाँ, बहुत हुआ, तो बीच बीचमें ऐसी भी घटनाएँ हो जाया करती थीं कि, कोई सरदार, बादशाहसे पूछे बिना ही, कोई प्रदेश जीत लेना, और उसकी मालगुजारीका अधिकांश भाग एक-दो बार शाही ख़ज़ानेमें भेज देता; और फिर मनमाने तौरसे स्वयं ही उस प्रदेशकी हुकूमत करता रहता। ऐसी घटनाओंमें पूरी सफलता प्राप्त करना अथवा न करना प्रत्येककी योग्यतापर निर्भर रहता था। जो मनुष्य जितना ही अधिक साहसी और शूरवीर होता, वह उतनी ही सफलता भी प्राप्त करता था। ढीले-ढाले आदमीसे कोई भी काम कभी हो ही नहीं सकता। यही हाल उस समय भी था। अस्तु। इसी प्रकारकी सम्पूर्ण अवस्था होनेके कारण, उस समय हमारे हनुमानजीके मन्दिरमें जो लोग एकत्रित होते; और जो कुछ विचार अथवा कार्य वे करते, वे सब उपर्युक्त लोगोंको बिल्कुल तिरस्कार और उपेक्षाके योग्य मालूम होते थे, और वे उन लोगोंकी नज़रमें विशेष रूपसे नहीं आते थे। इसमें सन्देह नहीं, नदीका उद्गम बहुत छोटा होता है; और फिर आगे चलकर उसीकी बहुत बड़ी नदी बन जाती है। परन्तु यह बात किसीके खयालमें कैसे समा सकती है कि, प्रत्येक जगहसे, जहाँ-जहासे छोटे-छोटे स्रोत निकलते हैं, वहाँ-वहाँ सभी जगहसे महानदीका ही उद्गम होगा? पर्वत और पहाड़ियोंपर न जाने कितने छोटे-छोटे झरने व्यर्थ ही चले जाते होंगे। ऐसा झरना तो शायद ही कोई होता है कि, जो सब रुकावटोंको दूर करते हुए, और दूसरे झरनोंको भी अपनेमें मिलाते हुए बराबर ज़ोर ही बाँधता जाता है; और थोड़े ही अवकाशमें महानदीका प्रचण्ड स्वरूप धारण करके मनुष्य-मात्रका कष्टहरण करते हुए सबको शीतल करता है। बस, राजा शाहजी भोसलेके बेटेका प्रयत्न भी ऐसा ही होगा, सो किसी बड़े सरकार अथवा किलेदारके ध्यानमें उस समय नहीं आया; और उस समयकी परिस्थिति,

जैसी ऊपर बतलाई गई, उसको देखते हुए ऐसा होना स्वाभाविक था।

जब पे हमारे कथानकका प्रारम्भ हुआ, राजा शिवाजी (वे अभी महाराज नहीं हुए थे) और उनके लंगोटिये मित्रोंके मनमें यह प्रबल इच्छा हो रही थी कि, कोई किला हमारे कब्जेमें अवश्य होना चाहिए—वास्तवमें इस बातकी अब उन्हें आवश्यकता मालूम होने लगी थी। आजतक श्रीभवानी माताकी कृपासे द्रव्य और अस्त्र-शस्त्रकी सामग्री काफी एकत्र हो चुकी थी, परन्तु अबतक इन चीजोंके रखनेकी जगहें जितनी सुरक्षित समझी जाती थीं, उतनी ही सुरक्षित आगे वे बनी रहेंगी, इसमें सन्देह था। इसके अतिरिक्त अनुयायियोंका गिरोह भी दिन दूना-रात चौगुना बढ रहा था। ऐसी दशामें राजा शिवाजीके मनमें यह विचार भी आने लगा कि, अबतक जितने प्रकारके पराक्रम किये हैं, उनकी अपेक्षा श्रेष्ठ और विशेष साहस तथा वीरताके प्रयत्न करनेका अवसर अब आ गया है, और ऐसे प्रयत्नोंके शुरू हो जानेपर हमारे गिरोहकी परीक्षा भी भलीभाति हो जायगी। येसाजी और तानाजी उनके मानो दो हाथ ही थे। उनको भी उपर्युक्त विचार पसन्द आया था। अतएव आज दस-बारह दिनसे यही सलाह-मशविरा हो रहा था कि, पहले-पहल किस किलेकी ओर दृष्टि रखी जावे। कोई दस-पन्द्रह दिनसे हनुमानजीके मन्दिरके नीचे, भवानीके मन्दिरमें, बैठकर वे लोग यही विवेचन किया करते थे कि, कौन किला कितना सुरक्षित है, तथा किसमें क्या-क्या गुण अथवा अवगुण हैं। स्वय राजा शिवाजी, तानाजी, येसाजी और श्रीधर स्वामी, इन चारोंको दक्षिणके किलोंका पूरा पूरा परिज्ञान था। किस किलेपर कौन कौनसी सुविधाएँ हैं, इस विषयमें उनको इतना परिज्ञान था कि, स्वय उनके किलेदारोंको भी उतना परिचय होगा, अथवा नहीं, इसमें सन्देह था। अब वे लोग इसी बातका विचार कर रहे थे कि, आज दिन हम किस किलेको सहजमें प्राप्त कर सकते हैं, और अपना खजाना यदि हम मन्दिरके भुँहारेसे उठाले जावें, तो ऐसी कौनसी जगह होगी कि जहाँ, वह सुरक्षित रह सकेगा।

जिस रातको हमारे सिपाही जवानके साथ राजा शिवाजीका परिचय कराया गया, उसी रातको कुछ देर बाद उपर्युक्त विषयमें कोई निश्चय होनेवाला था, किन्तु जैसाकि ऊपर बतलाया गया, बीचमें विघ्न आ गया; और श्रीधर स्वामीको ऊपर जाना पड़ा। फिर इसके बाद क्या हुआ, सो पाठकोंको मालूम ही है।

बहुत देर हो गई, जब देखा कि, श्रीधर स्वामी अभीतक नीचे, भुँहारेमें, उतरकर नहीं आये, तब सबको स्वाभाविक ही चिन्ता उत्पन्न हुई। लोगोंने सोचा कि अवश्य ही श्रीधर स्वामीपर कोई सकट आया है। येसाजी तीन बार ऊपरके दरवाजेतक आकर आहट ले गये। पर सिवाय इसके कि, ऊपर कुछ गड़बड़सा हो रहा है, और कोई समाचार उन्हें विदित नहीं हुआ। चौथी बार तानाजी आये, और आहट ली, उस समय बिल्कुल सुनसान था। उनको बड़ा आश्चर्य हुआ, खूब ध्यानसे उन्होंने बार-बार आहट ली, पर कुछ भी मालूम न हुआ। अन्तमें जब इधर-उधर देखा, तो एक खजर उस द्वारको दरारसे भीतर चुभा हुआ दिखाई दिया, जिसके सिरेपर एक फूल टोंचा हुआ था। ताना जी इस संकेतको समझ गये; और तुरन्त ही अन्य लोगोंको जाकर समाचार दिया। इस सकेतका आशय यही नियत था कि, अब सीधे रास्तेसे न जाकर दूसरे रास्तेसे जाओ, क्योंकि सीधे रास्तेसे जानेमें खतरा है। बस, इसी सकेतके अनुसार कार्य करना निश्चित हुआ, परन्तु तानाजी एक बार फिर ऊपर की ओर मन्दिरमें गये, और बहुत ही सध सधकर आहट ली। इससे उनको मालूम हुआ कि, श्रीधर स्वामी पकड़े हुये जा रहे हैं। अत. वे फिर नीचे चले आये। वहाँ आकर उन्होने अन्य लोगोंको वह सारा समाचार दिया, और आगेकी कार्यवाहीका निश्चय करके चारों मनुष्य, मुँहारेके दूसरे मार्गसे, जैसा कि इस परिच्छेदके प्रारम्भमें बतलाया गया है, उस गुफाके मुँहपर गये। यह सारा मार्ग भीतर ही भीतर भुँहारेसे गया था, और खूब मुड़ता हुआ जाकर उक्त गुफासे निकला था। मार्गमें कोई विशेष घटना नहीं हुई। उस दूसरे द्वारपर जाकर क्या हुआ, सो ऊपर बतलाया ही है।

जैसी ऊपर बतलाई गई, उसको देखते हुए ऐसा होना स्वाभाविक था।

जबसे हमारे कथानकका प्रारम्भ हुआ, राजा शिवाजी (वे अभी महाराज नहीं हुए थे) और उनके लंगोटिये मित्रोंके मनमें यह प्रबल इच्छा हो रही थी कि, कोई किला हमारे कब्जेमें अवश्य होना चाहिए-वास्तवमें इस बातकी अब उन्हें आवश्यकता मालूम होने लगी थी। आजतक श्रीभवानी माताकी कृपासे द्रव्य और अस्त्र-शस्त्रकी सामग्री काफी एकत्र हो चुकी थी, परन्तु अबतक इन चीजोंके रखनेकी जगहें जितनी सुरक्षित समझी जाती थीं, उतनी ही सुरक्षित आगे वे बनी रहेंगी, इसमें सन्देह था। इसके अतिरिक्त अनुयायियोंका गिरोह भी दिन दूना-रात चौगुना बढ़ रहा था। ऐसी दशामें राजा शिवाजीके मनमें यह विचार भी आने लगा कि, अबतक जितने प्रकारके पराक्रम किये हैं, उनकी अपेक्षा श्रेष्ठ और विशेष साहस तथा वीरताके प्रयत्न करनेका अवसर अब आ गया है, और ऐसे प्रयत्नोंके शुरू हो जानेपर हमारे गिरोहकी परीक्षा भी भलीभांति हो जायगी। येसाजी और तानाजी उनके मानो दो हाथ ही थे। उनको भी उपर्युक्त विचार पसन्द आया था। अतएव आज दस-बारह दिनसे यही सलाह-मशविरा हो रहा था कि, पहले-पहल किस किलेकी ओर दृष्टि रखी जावे। कोई दस-पन्द्रह दिनसे हनुमानजीके मन्दिरके नीचे, भवानीके मन्दिरमें, बैठकर वे लोग यही विवेचन किया करते थे कि, कौन किला कितना सुरक्षित है, तथा किसमें क्या-क्या गुण अथवा अवगुण हैं। स्वय राजा शिवाजी, तानाजी, येसाजी और श्रीधर स्वामी, इन चारोंको दक्षिणके किलोंका पूरा पूरा परिज्ञान था। किस किलेपर कौन कौनसी सुविधाएँ हैं, इस विषयमें उनको इतना परिज्ञान था कि, स्वय उनके क़िलेदारोंको भी उतना परिचय होगा, अथवा नहीं, इसमें सन्देह था। अब वे लोग इसी बातका विचार कर रहे थे कि, आज दिन हम किस किलेको सहजमें प्राप्त कर सकते हैं, और अपना खजाना यदि हम मन्दिरके भुँहारेसे उठाले जावें, तो ऐसी कौनसी जगह होगी कि जहाँ, वह सुरक्षित रह सकेगा।

जिस रातको हमारे सिपाही जवानके साथ राजा शिवाजीका परिचय कराया गया, उसी रातको कुछ देर बाद उपर्युक्त विषयमें कोई निश्चय होनेवाला था; किन्तु जैसाकि ऊपर बतलाया गया, बीचमें विघ्न आ गया, और श्रीधर स्वामीको ऊपर जाना पड़ा। फिर इसके बाद क्या हुआ, सो पाठकोंको मालूम ही है।

बहुत देर हो गई, जब देखा कि, श्रीधर स्वामी अभीतक नीचे, भुँहारेमें, उतरकर नहीं आये, तब सबको स्वाभाविक ही चिन्ता उत्पन्न हुई। लोगोंने सोचा कि अवश्य ही श्रीधर स्वामीपर कोई सकट आया है। येसाजी तीन बार ऊपरके दरवाजेतक आकर आहट ले गये। पर सिवाय इसके कि, ऊपर कुछ गड़बड़सा हो रहा है, और कोई समाचार उन्हें विदित नहीं हुआ। चौथी बार तानाजी आये, और आहट ली, उस समय बिल्कुल सुनसान था। उनको बड़ा आश्चर्य हुआ, खूब ध्यानसे उन्होंने बार-बार आहट ली, पर कुछ भी मालूम न हुआ। अन्तमें जब इधर-उधर देखा, तो एक खजर उस द्वारको दरारसे भीतर चुभा हुआ दिखाई दिया, जिसके सिरेपर एक फूल टोंचा हुआ था। ताना जी इस सकेतको समझ गये, और तुरन्त ही अन्य लोगोंको जाकर समाचार दिया। इस सकेतका आशय यही नियत था कि, अब सीधे रास्तेसे न जाकर दूसरे रास्तेसे जाओ; क्योंकि सीधे रास्तेसे जानेमें खतरा है। बस, इसी सकेतके अनुसार कार्य करना निश्चित हुआ, परन्तु तानाजी एक बार फिर ऊपर की ओर मन्दिरमें गये, और बहुत ही सध सधकर आहट ली। इससे उनको मालूम हुआ कि, श्रीधर स्वामी पकड़े हुये जा रहे हैं। अतः वे फिर नीचे चले आये। वहाँ आकर उन्होंने अन्य लोगोंको वह सारा समाचार दिया, और आगेकी कार्यवाहीका निश्चय करके चारों मनुष्य, भुँहारेके दूसरे मार्गसे, जैसा कि इस परिच्छेदके प्रारम्भमें बतलाया गया है, उस गुफाके मुँहपर गये। यह सारा मार्ग भीतर ही भीतर भुँहारेसे गया था; और खूब मुड़ता हुआ जाकर उक्त गुफासे निकला था। मार्गमें कोई विशेष घटना नहीं हुई। उस दूसरे द्वारपर जाकर क्या हुआ, सो ऊपर बतलाया ही है।

जैसे कोई बड़ा भारी काला पहाड़ी चूहा हो, और उसे पहाड़ोंमे इधरसे उधर कूदते हुए कोई कठिनाई मालूम न हो, वैसा ही हाल हमारे जीवाका भी था। वह विचित्र चपलताके साथ उछलता-कूदता हुआ चला जाता था। जैसे कोई काला हिरन व्याघ्रके पीछा किये जानेके कारण तीरके समान नीचेसे उपर चला जाता हो, उसी प्रकार जीवा भी, इस बातका जरा भी विचार न करते हुए कि, हमारा पैर कहाँ पड़ता है, बराबर ऊपरकी ओर चढ़ता चला जाता था। वह पहाड़की चढ़ाई क्या चढ रहा था—ऐसा जान पड़ता था कि, जैसे किसी जीनेकी सीढियाँ चढ़ रहा हो। इसके सिवाय, वह बारम्बार सोचता जाता था कि, देखो, हमसे कभी चूक नहीं होती थी, और आज चूक गये। यह सोच सोचकर वह उदासीनसा हो रहा था। पर साथ ही उसके मनमें यह उत्सुकता भी थी कि, जब आज हम ऐसा चूक गये, तो आज हमको, कोई विशेष सेवा करके, येसाजीको खुश करना चाहिये, जिससे वे हमारी उक्त चूकोंको भूल जावें। बस, इसीलिये आज वह और भी विशेष तेजीसे चला जा रहा था। जीवा एक सीधा-सादा 'हेटकरी' जातका आदमी था। उसे अत्यन्त साहसी और सच्चा समझकर येसाजी और तानाजीने, अभी थोड़े ही दिन पहले, दक्षिण कोकनसे बुलाया था। उसीके साथ उसका चचेरा भाई यमाजी भी था। उसको भी अत्यन्त साहसी और खूब मजबूत देखकर बुलाया था। राजा शिवाजीने अभी हालहीमें कोकनकी ओर एक धावा किया था। उस समय इन दोनोंका साहस देखकर वे बहुत प्रसन्न हुए, और अपने साथ देशको लेते आये। यहाँ लाकर उनको दो काम सौंपे गये थे। एक तो भुँहारेके मुखपर पहरा देनेका और दूसरा आसपासके किलोंपर जाकर, लकडी बेचनेके बहाने अथवा अन्य किसी निमित्तसे, सब खबरें लेते रहनेका। इस दूसरे कामके लिए जीवाजी बिलकुल बेकार था। परन्तु यमाजी इस काममें बड़ा चतुर और चालाक था। वह तरह तरहसे भेष बनाकर आसपास, दस-बीस कोस अथवा और भी अधिक इर्दगिर्दमे घूमा करता, और सब प्रकारकी खबरें लाता रहता था।

अस्तु। जैसाकि ऊपर बतलाया, जीवा बराबर पहाड़ीपर चढ़ता गया, और दूसरी ओर जाकर उतरा। वहाँ तराईमें जाकर उसने एक बार, दो बार, तीन बार सीटी बजाई। सीटीकी आवाज सुनते ही लँगोटी लगाये एक दूसरा 'बारगीर' सामनेकी, गुफाके समान, एक जगहसे दौड़ता हुआ आया। जीवा उसके कानमें लगकर कहता है, "चार घोड़े तैयार करके लाओ। अभी यहाँ लोग आवेंगे। सवार होकर पूनेकी ओर जायँगे, शायद!" जिससे यह सन्देशा कहा गया, वह एक क्षणभर भी नहीं ठहरा, और न कोई अन्य बात पूछी। वह जहाँसे निकला था, उसी, गुफाके सदृश, द्वारसे भीतर चला गया। उसके पीछे यदि हम भी जाकर देखें, तो हमको पहले एकदम अंधकार ही दिखाई देगा। परन्तु एक-दो मोड़ोंके समाप्त होते ही फिर चार-पाँच दीपक जलते हुए दिखाई देंगे, और फिर लग-भग चालीस-पचास घोड़ोंकी एक घुडसाल दिखाई देगी। वहाँ कुछ तो काठियावाड़ी और कुछ अन्य उत्तम जातिके घोड़े बक़ायदा बँधे थे। सब घोड़े खूब मजबूत-पुष्ट थे। लँगोटी लगाये हुए वह बारगीर अभी घुडसालके द्वारपर पहुँचा ही था कि, कई घोड़े अपनी अपनी गर्दनें मोडकर उसकी ओर एक ही दृष्टिसे देखने लगे। हमारे बारगीरने दो-चार साईसोंके नाम लेकर उनको पुकारा, और चार घोड़ोंके नाम लेकर उनको तैयार करनेका हुक्म दिया। हुक्म पाते ही वे चारों साईस अपने अपने घोड़ोंके पास गये, और जीन इत्यादि कसकर उन्हें तैयार किये। उनको मानो यह अभिमान हुआ कि, इतने सब घोड़ोंमेंसे उन्हींको किसी विशेष महत्वपूर्ण सेवाके लिये चुना गया, और इस कारण वे सब विशेष उत्सुकताके साथ अपने अपने पैर उठाकर चपलता दिखाने लगे। घोड़े ज्यों ही तैयार हुए, त्योंही बाहर निकाले गये; और जीवाजीके बतलाये हुए स्थानकी ओर चलाये गये। चलते हुए उन साईसोंमेंसे एकने स्वाभाविक ही पूछा, "जीवाजी, अरे आज किस तरफ धावा है? देखो, घोड़े भी क्या ही चौकन्ने हो रहे हैं?

जीवा कहता है, "अरे, तुझको इससे क्या मतलब? हम लोग तो हुक्मके ताबेदार हैं। और बातें जानकर हमको क्या करना?

जीवाजीका रूखा उत्तर पाकर फिर साईसोंने कुछ नहीं पूछा। चुपकेसे वे लोग अपना अपना घोड़ा नियत स्थानपर लेगये। तबतक जीवा आगे ही जाकर वहाँ खड़ा होगया था।

जीवाने आकर यह सब प्रबन्ध किया, और इसमें अभी दो घडी भी नहीं हुई थी कि, इतनेमें हमारा युवक सिपाही, तानाजी और वह नव-युवक तेजस्वी पुरुष—ये तीन मनुष्य पहाडपरसे उतरते हुए दिखाई दिये। हमारा सिपाही जवान यद्यपि उन दोनोंके समान शीघ्रतापूर्वक नहीं उतर सकता था, परन्तु फिर भी उसने जहाँतक हो सका, अपनी हेठी नहीं दीखने दी। तथापि उन दोनों व्यक्तियोंके ध्यानमें वह बात आही गई। परन्तु वह पहाडी प्रदेश हमारे युवक सिपाहीके लिए बिल-कुल अपरिचित था। ऐसी दशामें उसके उतरने-चढनेमें यदि कुछ न्यूनता दिखाई दी, तो कोई आश्चर्यकी बात भी नहीं थी। अस्तु। वे तीनों ज्योंही पहाड़परसे उतर कर आये, त्यों ही तीन साईसोंने घोड़े आगे किये। उस तेजस्वी नवयुवकने एक बार उन घोड़ोंकी ओर दृष्टि डाली। इसके बाद एक घोड़ेकी ओर देखकर कहा, "बेटा, चल, तू ही आज मुझे ले चल।" यह कहकर तुरन्त ही उछलकर उसपर सवार हुआ। फिर उसने एक घोड़ेकी ओर इशारा करके हमारे सिपाही जवान-को उसपर सवार होनेको कहा। शेष दो घोड़ोंमेंसे एकपर तीसरा महाशय सवार हुआ। इसके बाद यह तीसरा महाशय जीवाकी ओर देखकर कहता है, 'तू थोडी देर चौथा घोड़ा रखकर यहीं खडा रह। येसाजी अभी आवेंगे। आज राजा साहबने तुझे क्षमा किया है, परन्तु फिर कभी यदि इसी प्रकार गाफिल दिखाई दिया, तो • • "

आगेके शब्द पूरे भी न होने पाये थे कि, इतनेमें उस तेजस्वी नवयुवकने अपने घोड़ेको छोड़ दिया। उसकी एक ओर वह युवक सिपाही और दूसरी ओर तानाजी तुरन्त ही रवाना होगये। साईस और जीवा, सब दांतों तले उँगली दबाये, अचम्भेमें आकर देखते रह गये।

इधर येसाजी उस पहाड़ीकी दूसरी ओर, उपर्युक्त झोपडीके पास ही, खड़े थे। उनके मुख-मण्डलपर कुछ चिन्ताकी झलक दिखाई दे

रही थी, जैसे किसीकी प्रतीक्षामें हों ! वास्तवमें वे यमाजीका रास्ता देख रहे थे। अन्तमें यमाजी आया। येसाजी उससे कुछ पूछनेहीवाले थे कि, इतनेमें वह स्वय ही कहने लगा, "सरकार! आप यहाँ! अच्छा हुआ, जो आपसे भेंट हो गई। मैं आपसे मिलनेके ही विचारमें था।"

"क्या? क्या? ऐसा क्या महत्वका काम है? कोई विशेष खबर! मालूम होता है, पुरन्दरकी ओर गया था? क्या हालचाल है, उधरका?"

"सुना है कि, राजा शाहजीका पत्र आया है, उसमें आपकी इस सब कार्यवाहीके बारेमें बहुत कुछ लिखा है; और उसमें शायद ऐसा भी कुछ लिखा है कि, इन सब बातोंके बन्द करनेका जहाँतक हो सके जल्दी ही प्रयत्न करना चाहिये।"

"बस! इतना ही तो? अच्छा देखा जायगा। मैंने समझा, शायद बीजापुर इत्यादिकी तरफसे किसी सरदार इत्यादिके चलनेकी खबर लाये हो! उस पत्रमें क्या है, सो सब मैं बातकी बातमें समझ लूँगा; और आवश्यकता होगी, तो पत्रतक मँगा लूँगा। इसके सिवाय उसमें यदि कुछ होगा भी······" आगे कुछ भी न रहकर उन्होंने अपनी जीभ दाँतों तले दबाई। जैसे, जो कुछ वे कह रहे थे, सो कहना नहीं चाहिये था, यही समझकर उन्होंने ऐसा लिया। इसके बाद वे कुछ समयतक विचारमग्नसे दिखाई दिये। किन्तु फिर थोड़ी ही देर बाद वे उससे कहते हैं.—

"यमा, आजतक तूने जो सेवा बजाई है, सो मैं जानता ही हूँ। तेरा चातुर्य कर्त्तव्य-दक्षता राजा शिवाजीके ध्यानमें भी आ गई है। और मौका आनेपर तुझे इनाम भी अच्छा मिलेगा। किन्तु आज तुझे और एक विशेष कार्य बतलाता हूँ। वह कार्य यह कि, हनुमानजीके मन्दिरके उन बावाजीको तू जानता ही है, उनको आज एक मराठे सरदार और एक मुसल्मान सरदारने कैद कर लिया है, सो तू अभीका अभी जा, और उनपर नज़र रख। जो कुछ खबर हो, समय समयपर बतलाते रहना! बावाजीकी जानको यदि कुछ खतरा हो, तो तू जो

चाहे सो करना, पर मुझे खबर जरूर देना। और यदि ऐसी कोई बात न हो, तो सिर्फ उन दोनों सरदारोंपर नजर रखना और जो हालचाल हो, हमको बतलाते रहना। तीन दिनके अन्दर मैं उनको छुड़ाकर रहूँगा। जा, और उस मोंदू जीवाको इसका पता बिल्कुल न लगने देना। जा, बहुत जल्द यहांसे। घबड़ाना बिलकुल नहीं। ज्यों ही तू यहांसे गया, मैं पहाड़ी चढ़ना शुरू करूँगा।"

यह सुनकर यमाजी तुरन्त ही अपनी झोपड़ीमें गया। अभी सिर्फ दस-पन्द्रह मिनट हुए होंगे कि, इतनेमें पैरोंमें घुँघरू इत्यादि झनकाते हुए और हाथमें डफ लेकर उस पर थाप मारते हुए, कन्धेपर झोली इत्यादि डालकर तथा चेहरेपर सिन्दूर इत्यादि लगाकर वह जोगिन बनकर निकल पड़ा, और येसाजीको राम राम करते हुए वह मन्दिरकी ओर चल दिया। येसाजी उसकी ओर हास्यमुखसे कुछ देरतक देखते रहे। फिर उसके दृष्टि ओट होते ही पहाड़ी चढ़ने लगे।

पहाड़ी चढ़कर अभी वे बहुत दूर नहीं गये थे कि, इतनेमें कुछ ठहरकर उन्होंने चारों ओर नजर डाली, और एक दीर्घ निःश्वास छोड़ा। यह निःश्वास किस दुःखद विचारके कारण उनके अन्दरसे निकला, इसका कुछ अनुमान करना सहज नहीं था। उस लम्बी साँसके छोड़नेके बाद लगभग आधी घड़ीतक वे वैसी ही खड़े हुए बिल्कुल निरुद्देश्य-दृष्टिसे किसी ओर देखते रहे, और इसके बाद फिर उन्होंने अपना चढ़नेका सिलसिला जारी किया। नवयुवक येसाजीके मनमें इस समय जो विचार आ रहे थे, उनको जाननेका इस समय यदि हमारे पास कोई साधन होता, तो क्या ही अच्छा होता। हमको पूर्ण विश्वास है कि, उस समय उनके मनमें जो विचार आ रहे थे, वे कोई अत्यन्त उदासीनताके थे। यह देश, जो सचमुच आज मराठोंके अधिकारमें होना चाहिये था, मुसल्मानोंके हाथमें चला गया है—फिर इस जुल्मी राज्यकी हम प्रशंसा करें! दास्यभावमें आकर राजभक्ति और स्वामिभक्तिके गीत गावें! जैसाकि हमारे 'शिवबा' के मनमें आया है, क्या कभी भी हमारे हाथोंसे—कमसे कम—इस प्रान्तका उद्धार होगा?

अवश्य होगा। होगा और जल्दी होगा। राजा शिवबापर भवानी माता-की सच्ची कृपा है। बिल्कुल लडकपनसे मैं देखता हूँ। हमलोगोंके खेलमें भी हार कभी उसे हुई ही नहीं। और आज दो-चार वर्षसे तो हम लोग पराक्रमके ही कार्योंमें लगे हैं। इसमें भी निष्फलता कभी नामको भी नहीं आने पाई। निष्फलताके लिये उसका अवतार ही नहीं हुआ। कदापि नहीं, सफलताहीके लिये ही हुआ है। उसके हाथसे यह महान् कार्य पूर्ण करानेके लिए ही भवानी माताने उसे जन्म दिया है, इसमें तिलमात्र भी शंका नहीं। अब हमने किला लेनेका इरादा किया है, इसमें भी सफलता होगी या नहीं, इसकी उसे बिलकुल चिन्ता नहीं। वह तो कहता है कि, चाहे जिस किलेको हम बातकी बातमें ले सकते हैं। किन्तु डर लगता है, तो हमींको। इतनी अवस्थामें इतना साहस और इतना चातुर्य भवानी माताकी कृपा बिना हो ही नहीं सकता।

बस, इसी प्रकारके कई विचार उस समय येसाजीके मनमें आ रहे थे। उनके धीर और उदार हृदयमें उस समय और विचार आ ही कौन सकते थे? अपने उन विचारोंके जोशमें ही वे बडी तेजीके साथ ऊपर जा रहे थे। कुछ ही समय बाद वे दूसरी ओर जा उतरे। परन्तु जीवा जिस ओर खड़ा था, उस ओर पहले वे नहीं गये—किन्तु पहले वे घुडसालकी ओर गये; और वहाँ जाकर एकबार सारे घोड़ोंका उन्होंने भलीभाति निरीक्षण किया, फिर घुडसालके अधिकारीसे जो कुछ पूछना था, सो पूछा; और जो कुछ कहना था सो कहा—इसके बाद फिर वे वहाँ आये, जहाँ उनके लिये जीवा घोडा लिये हुए खडा था। जीवासे फिर गाफिल न रहनेके लिये ताकीद की; और पहलेके तीन सरदारोंकी तरह वे भी घोडा बढाकर वहासे चल दिये।

अठारहवां परिच्छेद

श्यामाने क्या किया?

सुभान गड़बड़में पड़ा, श्यामाने उसके हाथसे गिरा हुआ कागज,

चाहे सो करना, पर मुझे खबर जरूर देना। और यदि ऐसी कोई बात न हो, तो सिर्फ उन दोनों सरदारोंपर नजर रखना और जो हालचाल हो, हमको बतलाते रहना। तीन दिनके अन्दर मैं उनको छुड़ाकर रहूँगा। जा, और उस भोंदू जीवाको इसका पता बिल्कुल न लगने देना। जा, बहुत जल्द यहांसे। घबड़ाना बिलकुल नहीं। ज्यों ही तू यहांसे गया, मैं पहाड़ी चढ़ना शुरू करूँगा।"

यह सुनकर यमाजी तुरन्त ही अपनी झोपड़ीमें गया। अभी सिर्फ दस-पन्द्रह मिनट हुए होंगे कि, इतनेमें पैरोंमें घुँघरू इत्यादि झनकाते हुए और हाथमें डफ लेकर उस पर थाप मारते हुए, कन्धेपर झोली इत्यादि डालकर तथा चेहरेपर सिन्दूर इत्यादि लगाकर वह जोगिन बनकर निकल पड़ा, और येसाजीको राम राम करते हुए वह मन्दिरकी ओर चल दिया। येसाजी उसकी ओर हास्यमुखसे कुछ देरतक देखते रहे। फिर उसके दृष्टि ओट होते ही पहाड़ी चढ़ने लगे।

पहाड़ी चढ़कर अभी वे बहुत दूर नहीं गये थे कि, इतनेमें कुछ ठहरकर उन्होंने चारों ओर नजर डाली, और एक दीर्घ निःश्वास छोड़ा। यह निःश्वास किस दुःखद विचारके कारण उनके अन्दरसे निकला, इसका कुछ अनुमान करना सहज नहीं था। उस लम्बी साँसके छोड़नेके बाद लगभग आधी घड़ीतक वे वैसी ही खड़े हुए बिल्कुल निरुद्देश्य-दृष्टिसे किसी ओर देखते रहे, और इसके बाद फिर उन्होंने अपना चढ़नेका सिलसिला जारी किया। नवयुवक येसाजीके मनमें इस समय जो विचार आ रहे थे, उनको जाननेका इस समय यदि हमारे पास कोई साधन होता, तो क्या ही अच्छा होता। हमका पूर्ण विश्वास है कि, उस समय उनके मनमें जो विचार आ रहे थे, वे कोई अत्यन्त उदासीनताके थे। यह देश, जो सचमुच आज मराठोंके अधिकारमें होना चाहिये था, मुसल्मानोंके हाथमें चला गया है—फिर इस जुल्मी राज्यकी हम प्रशंसा करें! दास्यभावमें आकर राजभक्ति और स्वामिभक्तिके गीत गावें! जैसाकि हमारे 'शिवबा' के मनमें आया है, क्या कभी भी हमारे हाथोंसे—कमसे कम—इस प्रान्तका उद्धार होगा?

अवश्य होगा। होगा और जल्दी होगा। राजा शिवआपर भवानी माता-की सच्ची कृपा है। बिल्कुल लड़कपनसे मैं देखता हूँ। हमलोगोंके खेलमें भी हार कभी उसे हुई ही नहीं। और आज दो-चार वर्षसे तो हम लोग पराक्रमके ही कार्योंमें लगे हैं। इसमें भी निष्फलता कभी नामको भी नहीं आने पाई। निष्फलताके लिये उसका अवतार ही नहीं हुआ। कदापि नहीं, सफलताहीके लिये ही हुआ है। उसके हाथसे यह महान् कार्य पूर्ण करानेके लिए ही भवानी माताने उसे जन्म दिया है, इसमें तिलमात्र भी शंका नहीं। अब हमने किला लेनेका इरादा किया है, इसमें भी सफलता होगी या नहीं, इसकी उसे बिलकुल चिन्ता नहीं। वह तो कहता है कि, चाहे जिस किलेको हम बातकी बातमें ले सकते हैं। किन्तु डर लगता है, तो हमींको। इतनी अवस्थामें इतना साहस और इतना चातुर्य भवानी माताकी कृपा बिना हो ही नहीं सकता।

बस, इसी प्रकारके कई विचार उस समय येसाजीके मनमें आ रहे थे। उनके धीर और उदार हृदयमें उस समय और विचार आ ही कौन सकते थे? अपने उन विचारोंके जोशमें ही वे बड़ी तेजीके साथ ऊपर जा रहे थे। कुछ ही समय बाद वे दूसरी ओर जा उतरे। परन्तु जीवा जिस ओर खड़ा था, उस ओर पहले वे नहीं गये—किन्तु पहले वे घुड़सालकी ओर गये; और वहाँ जाकर एकबार सारे घोड़ोंका उन्होंने भलीभाति निरीक्षण किया, फिर घुड़सालके अधिकारीसे जो कुछ पूछना था, सो पूछा; और जो कुछ कहना था सो कहा—इसके बाद फिर वे वहाँ आये, जहाँ उनके लिये जीवा घोड़ा लिये हुए खड़ा था। जीवासे फिर गाफिल न रहनेके लिये ताकीद की· और पहलेके तीन सरदारोंकी तरह वे भी घोड़ा बढ़ाकर वहासे चल दिये।

अठारहवां परिच्छेद

श्यामाने क्या किया ?

सुभान गड़बड़में पड़ा; श्यामाने उसके हाथसे गिरा हुआ कागज,

बड़ी चपलताके साथ, तुरन्त उठा लिया, और वहासे लम्बा हुआ, सो सब पाठकोंको याद ही होगा—यही नहीं, बल्कि अब वे यह जाननेके लिए उत्सुक भी होंगे कि, श्यामाका फिर क्या हुआ, और उसने उस कागजको क्या किया, इत्यादि। अच्छा, आइये, अब हम उसके पीछे पीछे चलें, जिसमें हमारी यह जिज्ञासा पूर्ण हो। श्यामा, एक चपलता-की मानो छोटीसी मूर्त्ति ही था, सो पाठकोंको अबतकके उसके वृत्तान्तसे मालूम ही हो गया होगा। उस मुसल्मानोंको धता बताकर लिफाफे सहित वह वहासे नो दो ग्यारह हुआ, और बराबर एकसी चाल रख-कर भरी दोपहरीमें वह धारगॉव जा पहुँचा। इसी गॉवमें जाकर वह लिफाफा उसे देना था। लिफाफा इस ढंगसे देना था कि, वह मुख्य मालिकके अतिरिक्त और किसीके हाथमें भी न जावे। श्यामाके हाथसे उसका दूसरेके हाथमें जाना बिलकुल ही असम्भव था—और कोई होता, तो बात ही दूसरी थी। हॉ, उसके सामने अब यही प्रश्न था कि, वह लिफाफा मुख्य मालिकके हाथमें किस ढगसे जावे कि, जो किसी दूसरेको मालूम भी न होने पावे। ग्रामकी सीमापर पहुँचकर श्यामा कुछ देरके लिये बाहर ठहर गया। उसने सोचा कि, देशमुखके घरमें शायद हमको पहचान लेंगे, और पूछ ताछ करेंगे कि क्या है, क्या नहीं, इस-लिये हमको बड़ी सिताबीके साथ जाकर अपना काम करना चाहिये। इस प्रकार वह क्षणभर विचार करता रहा। बात वह थी कि, देशमुखके महलोंमें वह एक-दो बार नहीं, कई बार गया था, इस लिए वहाके सब लोग उसे पहचानते थे। अतएव उसके नन्हेंमे शरीरका गम्भीर मन अब कुछ इसी विचारमें लगा था कि, असली जगहतक खबर कैसे पहुँचावें, और कोनसी युक्ति करें कि, जिससे बीचमें कुछ पूछना ही न पड़े—और यदि पूछना भी पड़े, तो कोई बात खुलने न पावे—और हमारा काम ठीक ठीक निकल जाय। वह एक बहुत ही तेज लड़का था, अतएव बातकी बातमें उसने, अपने उपर्युक्त विचारोंके विषयमें जो कुछ निश्चय करना था, सो कर लिया, और सीधा देशमुखके महलों-का रास्ता पकड़ा। वहॉ जाकर क्या देखता है कि, सारे गॉवमें चारो ओर

पकड़-धकड और भगदड़ मची हुई है! जिसको देखिये, वही बड़ी तेजीसे भागा जा रहा है। घरोंके लोग बहुत ही घबड़ाहटमें हैं, और अपनी अपनी छतोंकी खिडकियों इत्यादिसे अत्यन्त उदासीनतापूर्वक देख रहे हैं। यह हो क्या रहा है, सो कुछ श्यामाके ध्यानमें न आया। कई भागनेवालोंसे उसने पूछा भी कि, यह क्या बात है; पर किसीने उत्तर न दिया, और दो-एकने दिया भी, तो अत्यन्त विचित्र! एकने कहा, "तेरे बापकी बरसी है।" दूसरेने कहा, "तेरी माँकी छठी है।" श्यामा बेचारा बड़े गडबडमें पडा, और इधर-उधर देखने लगा। परन्तु ज्यों-ज्यों वह देशमुखके महलोंके निकट पहुँचता गया, त्यों-त्यों भीड़ भी बढ़ती गई। और देखता है, तो महलोंके पास भीड़का कुछ ठिकाना ही नहीं है। यह बात क्या है? अबतक तो वह इसी चिन्तामें था कि, यह पत्र सीधा देशमुख साहबके हाथमें कैसे पहुँचेगा, और यहाँ यह हाल दिखाई दे रहा है! देशमुखके महलोंके आसपास इतनी भीड क्यों है? सोचता हुआ वह बालक लड़का कुछ और आगे बढ़ा—इस आशासे कि भली-भाँति निरीक्षण करनेसे, और कान लगाकर सुननेसे, जो कुछ होगा, सो मालूम हो जायगा, और उसकी यह आशा किसी अंशमें सफल भी हुई। क्योंकि उसी दम आगे घुसकर उसने देखा कि, देशमुखके महलोंको सशस्त्र मुसल्मान सिपाहियोंने आ घेरा है; और महलोंके अन्दर भी मुसल्मान लोग, हथियार लिये हुए, घुसे हैं। कोई बीचहीमें खिड़कीके पास आता है, और कुछ फेंक देता है, अथवा जो लोग नीचे एकत्रित हो रहे हैं, उनके ऊपर थूक देता है, और थूक पड़नेके कारण क्रुद्ध होकर यदि कोई ऊपरकी ओर देखने भी लगता है, तो उसके ऊपर फिर थूक देता है, अथवा कुछ कूड़ा-कचरा डाल देता है। बस, यही हाल हो रहा था। जो लोग नीचे एकत्रित थे, वे दूर-दूर हटने लगते थे, अथवा कोई कोई मन-ही-मन क्रुद्ध होकर दातोंसे होंठ चबाने लगते, और कुछ गुनगुनाकर गालियोंसी देने लगते थे। इसके सिवाय, महलोंके अन्दर बडा कोलाहल मचा हुआ था। पर यह सब क्या था, कुछ पता नहीं लगता था। श्यामा एक नन्हासा छोकरा, पर उसकी

जिज्ञासा बड़ी प्रबल। फिर उसमें भी देशमुखके महलोंमें मुसल्मान घुसे थे, सो कुछ यों ही नहीं, कोई न कोई अत्याचार और अपमानकी बात अवश्य थी। इस भारी सन्देहके कारण उसके मनमें क्रोध भी बहुत आया। अपने सन्देहको मिटानेके लिये आसपासके लोगोंसे उसने बहुत कुछ पूछा, पर वहाँ सुनता कौन है? सब अपनी अपनी धुनमें मस्त! अन्तमें एकने त्रस्त होकर उससे कहा, "अबे छोकरे, देखता नहीं क्या? बादशाहके सिपाही महलोंमें घुसकर सबको कैद कर रहे हैं, और लूट-पाट मचा रहे हैं।"

परन्तु इतनेसे उस बेचारेका समाधान कहाँ हो सकता था? मुसल्मान लोग महलोंमें घुसे थे, चारों ओर कोलाहल मचा था, ऐसी दशामें यह तो उसे प्रत्यक्ष ही दिखाई दे रहा था कि, मुसल्मान लोग उपद्रव करके कोई न कोई विडम्बना कर रहे हैं, पर ऐसा क्यों हो रहा है? देशमुख साहब कहाँ हैं? सो कुछ मालूम नहीं पड़ता था। श्यामा यह सोचकर कि, अब हमको स्वयं ही इसका पता लगाना चाहिए, क्रमसे आगेकी ओर घुसा। परन्तु अभी वह बहुत दूर नहीं घुसने पाया था कि, आगेसे एक सिपाहीने उसे पीछे हटानेके लिए, बन्दूकका कुन्दा मारा। गरीब बेचारा—क्या करता? एकदम बेहोश होकर पीछे गिर पड़ा—अच्छा हुआ, जो किसीने पीछेसे उसे सम्हाल लिया, नहीं तो मर ही जाता। किन्तु कुछ देरमें होशमें आनेपर क्या देखता है कि, अब वे मुसल्मान लोग, जो अबतक महलोंको घेरे हुए थे, भीड़के ऊपर अपने घोड़ोंको दूर हटा रहे हैं, और महलके दरवाजोंकी भीड़ भी क्रमशः दूर हो रही है। इसलिए श्यामाने अब समझा कि, इस भीड़में हम पार नहीं पा सकते, अतएव वह पीछेकी ओर हटा। उसी समय उसके मनमें यह भी विचार आया कि, अब हमको महलोंके पीछेसे जाकर कुछ पता लगाना चाहिए। सचमुच ही वह बेचारा उस समय अत्यन्त निराश हो गया था। परन्तु फिर भी उसने उपर्युक्त विचारको पूर्ण करनेके लिए भीड़के अन्दरसे निकलना शुरू किया। इतनेमें सब लोग अत्यन्त घबड़ा-कर इधर-उधर भागने लगे। महलके आसपासके घुड़सवारोंने एकदम

भीड़पर अपने घोड़े छोड़ दिये, और अपनी लम्बी-लम्बी तलवारें इधरसे उधर घुमाते हुए—तथा इस बातकी भी कुछ परवा न करते हुये कि किसीके प्राण जायँगे या क्या—जिधर ही मन माना, जाने लगे। लोग जल्दी आसपासके घरों, झोपड़ियों, खेतों और बाड़ियोंमें घुसने लगे। ऐसा न समझिये कि, उनके हाथमें शस्त्र नहीं थे, अथवा शस्त्रोंका उपयोग मालूम नहीं था। परन्तु बादशाहकी हुकूमत ही तो ठहरी—उसके अत्याचारके सामने मामूली लोग क्या कर सकते हैं? बस, यही सबके विचार थे! गाँवके लोगोंका देशमुखपर बड़ा प्रेम था, पर लाभ क्या? मौका आनेपर कौन खड़ा हो? सब मन ही मन क्रुद्ध हो रहे थे, दाँतोंसे होंठ चबा रहे थे—करते ही क्या?

कुछ देरके बाद महलोंके आगेकी, और गाँवकी भी भीड़ बहुत कुछ कम होगई, अथवा यों कहिये कि, उन सवारोंने जब भीड़पर अपने घोड़े छोड़ दिये, तब भीड़ तितर-बितर होगई। रास्तेमें कोई नहीं दिखाई देता था। हाँ, दोनों तरफ घरोंके चबूतरोंपर और छतोंकी खिड़कियोंपर लोग दिखाई दे रहे थे! ये सब पुरुष ही थे। स्त्रियोंका तो पुतला भी दिखाई नहीं पड़ता था। इस प्रकार महलोंके सामनेका मार्ग जब निर्जन हो गया, तब महलोंके अन्दरके लोग बाहर निकलने लगे। महलोंके अन्दरसे निकले हुए सवार बिलकुल रक्तसे नहाये हुए दिखाई देते थे। आगे लगभग छै आदमी आये। उनके पीछे पाँच-छै आदमी पैदल चले जारहे थे। उनके पीछे एक वृद्ध महाशय गर्दन नीची किये धीरे-धीरे चले जारहे थे। उसके पीछे-पीछे दो लड़के १० और १२ वर्ष-की उम्रके होंगे। लड़कोंके पीछे बुर्का डाले हुए एक स्त्री, और उसके पीछे दो-तीन और स्त्रियाँ-उसीकी तरह बुर्का डाले जारही थीं। स्त्रियोंके पीछे पाच-सात पैदल, और फिर उनके पीछे पहलेहीकी भाँति पाच-सात सवार थे। इन सबके पीछे एक अत्यन्त भयंकर सूरतका सवार था, जो अकेला ही चल रहा था। उसकी चेष्टासे स्पष्ट दिखाई देरहा था कि, इस सारे कार्यका सचालक और प्रेरक यही है। इस प्रकार एक अत्यन्त उदासीन समारम्भ बाहर निकला! श्यामा अत्यन्त उदास भावसे, एक

जिज्ञासा बनी प्रबल ! फिर उसमें भी देशमुखके महलोंमें मुसल्मान घुसे थे, सो कुछ यों ही नहीं, कोई न कोई अत्याचार और अपमानकी बात अवश्य थी। इस भारी सन्देहके कारण उसके मनमें क्रोध भी बहुत आया। अपने सन्देहको मिटानेके लिये आसपासके लोगोंसे उसने बहुत कुछ पूछा, पर वहाँ सुनता कौन है ? सब अपनी अपनी धुनमें मस्त ! अन्तमें एकने त्रस्त होकर उससे कहा, "अबे छोकरे, देखता नहीं क्या ? बादशाहके सिपाही महलोंमें घुसकर सबको कैद कर रहे हैं, और लूट-पाट मचा रहे हैं ?"

परन्तु इतनेसे उस बेचारेका समाधान कहाँ हो सकता था ? मुसल्मान लोग महलोंमें घुसे थे, चारों ओर कोलाहल मचा था, ऐसी दशामें यह तो उसे प्रत्यक्ष ही दिखाई दे रहा था कि, मुसल्मान लोग उपद्रव करके कोई न कोई विडम्बना कर रहे हैं, पर ऐसा क्यों हो रहा है ? देशमुख साहब कहाँ हैं ? सो कुछ मालूम नहीं पड़ता था। श्यामा यह सोचकर कि, अब हमको स्वय ही इसका पता लगाना चाहिए, क्रमसे आगेकी ओर घुसा। परन्तु अभी वह बहुत दूर नहीं घुसने पाया था कि, आगेसे एक सिपाहीने उसे पीछे हटानेके लिए, बन्दूकका कुन्दा मारा। गरीब बेचारा—क्या करता ? एकदम बेहोश होकर पीछे गिर पड़ा—अच्छा हुआ, जो किसीने पीछेसे उसे सम्हाल लिया, नहीं तो मर ही जाता। किन्तु कुछ देरमें होशमें आनेपर क्या देखता है कि, अब वे मुसल्मान लोग, जो अबतक महलोंको घेरे हुए थे, भीड़के ऊपर अपने घोड़ोंको दूर हटा रहे हैं, और महलके दरवाजोंकी भीड़ भी क्रमशः दूर हो रही है। इसलिए श्यामाने अब समझा कि, इस भीड़में हम पार नहीं पा सकते, अतएव वह पीछेकी ओर हटा। उसी समय उसके मनमें यह भी विचार आया कि, अब हमको महलोंके पीछेसे जाकर कुछ पता लगाना चाहिए। सचमुच ही वह बेचारा उस समय अत्यन्त निराश हो गया था। परन्तु फिर भी उसने उपर्युक्त विचारको पूर्ण करनेके लिए भीड़के अन्दरसे निकलना शुरू किया। इतनेमें सब लोग अत्यन्त घबड़ाकर इधर-उधर भागने लगे। महलके आसपासके घुड़सवारोंने एकदम

भीडपर अपने घोडे छोड़ दिये, और अपनी लम्बी-लम्बी तलवारें इधरसे उधर घुमाते हुए—तथा इस वातकी भी कुछ परवा न करते हुये कि किसीके प्राण जायँगे या क्या—जिधर ही मन माना, जाने लगे। लोग जल्दी आसपासके घरों, झोपड़ियों, खेतों और वाड़ियोंमें घुसने लगे। ऐसा न समझिये कि, उनके हाथमें शस्त्र नहीं थे, अथवा शस्त्रोंका उपयोग मालूम नहीं था। परन्तु वादशाहकी हुकूमत ही तो ठहरी—उसके अत्याचारके सामने मामूली लोग क्या कर सकते हैं? बस, यही सबके विचार थे। गाँवके लोगोंका देशमुखपर वडा प्रेम था, पर लाभ क्या? मौका आनेपर कौन खड़ा हो? सब मन ही मन क्रुद्ध हो रहे थे; दाँतोंसे होंठ चवा रहे थे—करते ही क्या?

कुछ देरके वाद महलोंके आगेकी, और गाँवकी भी भीड वहुत कुछ कम होगई, अथवा यों कहिये कि, उन सवारोंने जब भीड़पर अपने घोड़े छोड़ दिये, तब भीड़ तितर-वितर होगई। रास्तेमें कोई नहीं दिखाई देता था। हाँ, दोनों तरफ घरोंके चवूतरोंपर और छतोंकी खिडकियोंपर लोग दिखाई दे रहे थे। ये सब पुरुष ही थे। स्त्रियोंका तो पुतला भी दिखाई नहीं पडता था। इस प्रकार महलोंके सामनेका मार्ग जब निर्जन हो गया, तब महलोंके अन्दरके लोग वाहर निकलने लगे। महलोंके अन्दरसे निकले हुए सवार विल्कुल रक्तसे नहाये हुए दिखाई देते थे। आगे लगभग छै आदमी आये। उनके पीछे पाँच-छै आदमी पैदल चले जारहे थे। उनके पीछे एक वृद्ध महाशय गर्दन नीची किये धीरे-धीरे चले जारहे थे। उसके पीछे-पीछे दो लड़के १० और १२ वर्षकी उम्रके होंगे। लड़कोंके पीछे बुर्का डाले हुए एक स्त्री, और उसके पीछे दो-तीन और स्त्रियाँ-उसीकी तरह बुर्का डाले जारही थीं। स्त्रियोंके पीछे पाच-सात पैदल, और फिर उनके पीछे पहलेहीकी भाँति पाच-सात सवार थे। इन सबके पीछे एक अत्यन्त भयंकर सूरतका सवार था, जो अकेला ही चल रहा था। उसकी चेष्टासे स्पष्ट दिखाई देरहा था कि, इस सारे कार्यका सचालक और प्रेरक यही है। इस प्रकार एक अत्यन्त उदासीन समारम्भ वाहर निकला! श्यामा अत्यन्त उदास भावसे, एक

घरके चबूतरे परसे, यह सारा दृश्य देख रहा था। जो वृद्ध महाशय—वृद्ध न कहकर यदि उन्हे प्रौढ कहा जाय, तो विशेष सयुक्तिक होगा और सत्य भी होगा—आगे चल रहे थे, वे ही देशमुख साहब थे। कुटुम्ब सहित उनकी विडम्बना करके उन्हींको इस समय बाहर निकाला गया था। इसके बाद, अब जो मुसल्मान सवार और सिपाही भीतर गये, तथा उस समय जो और भीतर गये, उन सबने मिलकर, लूट-मार और तोड-फोडका उपद्रव शुरू किया। ठीक दोपहरका समय, सूर्य सिरपर आया, कही न कोई वृक्ष और न कोई छाया, और यदि हो भी, तो उसका उपयोग कौन करने दे? स्पष्ट था कि, उन छोटे-छोटे बच्चो, वृद्ध महाशय और उन बेचारी स्त्रियोको सकटमे डालने और उनकी विडम्बना करनेके लिये ही यह सब किया गया था।

परन्तु अचानक यह सब क्यो हुआ? किसीको कुछ मालूम नही। जो कुछ हुआ, सो बिलकुल अचानक! एकाएक दस-ग्यारह बजेके लगभग करीब पचास सवारोंका—जिनमें अधिकाश मुसल्मान ही थे—गिरोह कोलाहल मचाते हुए गॉवमें पैठा। कौन हैं, क्यो आये हैं, कुछ पता नही। लोगोंने सोचा, कोई डाकू, चोर, उठाईगीरे होगे, दिन-दहाडे डाका डाल्ने आये होंगे। इसलिए कुछ लोग उत्तेजित होकर अपना शौर्य दिखलाते हुए उन पचासों सवारोको काट डाल्नेका विचार करके दौडे। किन्तु गिरोहका सरदार एकदम चिल्लाया, "खबरदार! यदि किसीने इन सवारोके शरीरको हाथ लगाया, तो उसको टुकडे टुकडे करके सारे गावको भस्म कर दूंगा, कभी छोडूंगा नही। तुमको यदि अपने प्राणोंकी परवा हो, और अपने घरद्वारको बचाना चाहते हो, तो चुपकेसे अपने अपने घरोंमें जाकर बैठो—होता क्या है, सो चुपकेसे देखो। हम आये हैं बीजापुरके बादशाहका हुक्म लेकर—सो उस हुक्मके बजा लानेमें जो कोई विघ्न डालेगा, वह व्यर्थके लिये अपनी जानसे हाथ धो बैठेगा, और सारा गॉव जला दिया जायगा, सो अलग!"

इससे अधिक उसने और कुछ कहा ही नही, बल्कि एकदम वह अपने गिरोहके साथ महलोंपर ही पहुँचा। वहॉ कुछ को तो उसने बाहरसे

महलोंको घेरनेका हुक्म दिया, और बाकी दीने-इस्लामके नामपर जोश दिलाते हुए महलोंके भीतर अपने साथ लिया। सिपाही भीतर घुसते हुए कहते हैं, "कहाँ है देशमुख ? पकड़ा बदमाशको ? उसका जनाना कहाँ है ? वह बगावत करता है—ऍ ?" इस प्रकार कुछ बकते-झकते हुए उन्होंने एकदम उपद्रव मचा दिया। सदर दरवाजे और ड्योढ़ीके लोगोंने, जहाँतक हो सका, मुकाबिला किया, पर अन्तमें बेचारे कहाँतक टिक सकते थे ? सिपाहियोंने हथियारोंसे ही काम लिया, और अन्तमें स्त्री, बच्चों और बुड्ढोंकी दुर्दशा करते हुए वे क्रूर सिपाही आगे बढ़े। महलके लोगोंको मारने काटनेमें भी उन्होंने कसर नहीं की, और इस प्रकार रक्तस्राव करते हुए वे सीधे देशमुख साहबके कमरेमें पहुँचे। उनको कैद किया, उनके कुटुम्बको कैद किया। फिर उनको लेकर, जैसा कि हमने पीछे बतलाया, वे लोग भरी धूपमें बाहर निकल पड़े; और पीछेसे महलोंको लूटकर विध्वंस करनेका हुक्म दिया। एकदम ऐसा क्यों हुआ, किसीके कुछ समझमें न आया। सब अपने पासवालों-से पूछने लगे। पूछते पूछते लोग आपसमें अनुमान भी करने लगे; और अनुमान करते करते परस्पर विश्वसनीय उत्तर भी देने लगे।

अस्तु। इधर देशमुख और उनके आदमियोंको इस प्रकार दुःखी देखकर ऐसा कौन था, जिसका हृदय भर न आया हो ? पर बेचारे करते ही क्या ? चुपके उनकी वह दुःखदायक दशा देखकर दीर्घ निःश्वास लेते और मन ही मन मुसल्मानी राज्यको गालियाँ देते रहे। इसपर हमारे पाठक शायद कहेंगे कि, क्या मराठे लोगोंमें उस समय तेजस्विताकी कुछ कमी थी ? उनके गाँवके मुखियाको—उस वृद्ध देश-मुखको, कि जिसपर सारे ग्रामका इतना प्रेम था—बालबच्चों सहित दस-बीस मुसल्ले सिपाही भरी दोपहरीमें घसीट ले गये, और मराठे लोग, मर्द होकर, अपनी आँखों देखते रहे! क्या धारगाँवमें एक भी मराठा न था कि, जिसका हृदय, उस अत्याचारको देख कर विदीर्ण नहीं हुआ ? एक भी मराठेका, तलवार धारण करनेवाला हाथ स्फुरित नहीं हुआ ? एक भी मराठा वीर क्रुद्ध होकर तलवार लिये हुए आगे नहीं

बदा ? वे तो मराठोंके पराक्रमके दिन थे, फिर ऐसा क्योंकर हुआ ? इस प्रकारके प्रश्न पाठकोंके हृदयमे उठ सकते हैं। पाठकवृन्द ! निस्सन्देह इस प्रकारके मराठे वीर उस गॉवमे थे, उनके हृदय भी विदीर्ण हुए, उनकी भुजाऍ भी फड़कीं, उनमेंसे एक दो अपनी तलवारको मजबूतीके साथ पकड़कर आगे बढ़े भी। किन्तु उनको सफलता प्राप्त होनेका समय अभी नहीं आया था। मुसल्मान सरदारों और सिंहासनाधीशोंके पापका घड़ा अभी इतना नही भरा था कि, जो दुष्टोंका निर्दलन करनेके लिए परमेश्वर अवतार लेता। उनके पापका घड़ा भरनेमें अभी थोड़ीसी देरी थी। बस, इसी कारण वे मराठे वीर अपने मनको रोके हुए बैठे रहे। जो हो, अब हमको इन बातोंको यहीं छोड़कर, सिर्फ श्यामाके पीछे पीछे चलना चाहिये।

श्यामा उन सम्पूर्ण घटनाओंको देखकर क्षणभरके लिए ठहर गया। इतना छोटा लड़का, फिर सुबहसे उसको कुछ खाने-पीनेको भी नही मिला, परन्तु उस भयंकर अत्याचारको देखकर उसकी भूख-प्यास सारी हट गई। उसकी उसे याद भी नही आई। उसका हृदय भर आया। अपने हाथकी काल्पनिक तलवार कि, जिसे प्राप्त करनेकी उसे भारी महत्वाकांक्षा थी, उसने मजबूतीके साथ पकड़ी। इसके बाद फिर उसने उन मुसल्मान सिपाहियोंकी गर्दनपर कि, जो उसके आगे जा रहे थे, अपने काल्पनिक वार, एकके बाद एक—बिलकुल अवकाश न लेते हुए—किये। इतनेमें वे लोग दृष्टिकी ओट हो गये। इसलिए वह भी इस विचारमे लगा कि, अब हम कहॉ जावें, और आगे क्या करें। उसने सोचा कि, जो लिफाफा हम ले आये हैं, वह अब देशमुख साहबके हाथमें पहुँचा नहीं सकते, और न ऐसा करना अब इष्ट ही है। इस लिए अब उसने सिर्फ इतना ही टटोलकर देखा कि, लिफाफा अपने पास जहॉ रखा था, वहॉ है या नहीं। इसके बाद फिर वह कुछ विचार करता हुआ महलोंके पीछेकी ओरको चला। महलोंमे अब भी थोड़ा-बहुत उपद्रव हो ही रहा था। महलोंके पीछेकी ओर श्यामा इस विचारमे जा रहा था कि, उस ओरसे हम भीतर चले जायेंगे और

देखेंगे कि बात क्या है; और तब फिर लौटेंगे—बिना कुछ पता लिये यहासे जाना ठीक नहीं है। यह वह सोच ही रहा था कि, इतनेमें उसे कुछ स्मरण आया, और मन ही मन वह बोला, "क्यों, इस गड़बड़ीमें सूर्याजी राव दिखाई क्यों नहीं दिये ? इन मुसल्लोंने उनको कहीं मार तो नहीं डाला ? अवश्य ही, उनको मार डाले बिना महलोंमें इतना उपद्रव मचानेका इनको साहस कैसे हो सकता था ? जो कुछ हो, जान तो यही पड़ता है कि, इन बदमाशोंने सूर्याजी रावका खून कर डाला। हाय ! हाय ! नाना साहबको जब यह वृत्तान्त मालूम होगा, तब उनको न जाने कितना दुःख होगा ! वे इसका बदला लिये बिना भी नहीं रहेंगे। उन दोनोंका प्रेम ही ऐसा था ! दोनोंमें बड़ी ही स्नेह था ! अच्छा, अब एक बार भीतर जाना चाहिये, और देखना चाहिये कि, क्या बात है। सूर्याजी रावके दर्शन जबतक नहीं कर लेवें, उनकी क्या दशा है, सो प्रत्यक्ष जबतक नहीं कर लेवें, तबतक यहासे लौटना कदापि मुनासिब नहीं।" श्यामा यही सोच रहा था।

अब यहाँपर पाठकोंको सूर्याजी रावका थोड़ासा परिचय दे देना अनुचित न होगा। वास्तवमें सूर्याजी राव देशमुख साहबके बड़े बेटे थे। वे अभी बिल्कुल नवयुवक अत्यन्त शूर और उत्तम पुरुष थे। किलेदार साहबके लड़के नाना साहबके जो विचार थे, वही विचार सूर्याजी रावके भी थे। मुसल्मान राज्यके ये भी कट्टर द्रोही थे। हमारा श्यामा उनपर भी बड़ी भक्ति रखता था; और इसी कारण वह इस समय सोच रहा था कि, सूर्याजीके रहते हुए उनके माँ-बाप और घर-द्वारकी ऐसी दुर्दशा मुसल्मान कदापि नहीं कर सकते थे; और न अपनी जीवितावस्थामें वे मुसल्मानोंको अपने महलोंमें ही घुसने दे सकते थे। इसलिये यह निश्चय है कि, या तो सूर्याजी रावको मुसल्मानोंने मार डाला, अथवा नाना साहबकी तरह वे भी कहीं चले गये। अन्यथा मुसल्मानोंको ऐसा साहस नहीं हो सकता था। बस, यही समझकर श्यामा चुपकेसे महलके अन्दर जानेके लिये पीछेकी ओर गया। वहाँ जानेपर पहले उसने इधर-उधर देखा। परन्तु उस ओर कोई था ही

नहीं। बिल्कुल सुनसान था। पिछला फाटक टूटा पड़ा था। श्यामा आगे कुछ भी विचार न करते हुए भीतर घुस पड़ा, और प्रत्येक चौकसे देखते-भालते हुए अन्दर जाने लगा। देखता क्या है कि, चारों ओर बहुतसा सामान और वस्तुएँ टूटी फूटी पड़ी हैं। चौकोंकी कितनी ही कोठरियोंमें लाशें पड़ी था, इस प्रकारका दृश्य श्यामाने अपने उस छोटे-से जीवनमें पहले ही पहल देखा। आजतक ऐसा भयंकर दृश्य कभी उसकी नजरोंमें नहीं आया था, परन्तु फिर भी वह छोकरा जरा भी नहीं घबड़ाया। वह पहले ही जानता था कि, हमें अन्दर जाकर ऐसा ही कुछ दृश्य देखना पड़ेगा। इसके सिवाय उसको लाशोंके अतिरिक्त और विशेष देखना ही क्या था। उसका तो यही देखना था कि, सूर्या-जीकी भी लाश कहीं दिखाई देती है या नहीं—दुष्टोंने उन्हें मार तो नहीं डाला। वह आगे बढ़ा। सूर्यका प्रकाश अभी काफी था। उसने प्रत्येक लाशको गौरके साथ देखा, परन्तु सूर्याजीकी लाश कहीं दिखाई नहीं पड़ा। तब वह पहले चौकसे दूसरे चौकमें गया। वहाँ उसे क्या ही भयंकर दृश्य दिखाई दिया।

उन्नीसवां परिच्छेद

महलोंका भयंकर दृश्य।

श्यामाने दूसरे चौकमें अभी कदम ही रखा था कि, इतनेमें जो दृश्य उसे दिखाई दिया, वह अत्यन्त भयंकर था। उसका कदम चौकमें पड़ते ही ऊपरसे एक लाश नीचे चौकमें आकर गिरी, जिसे देखकर वह बिल्कुल भौंचक्का रह गया। वह लाश एक स्त्रीकी थी। श्यामा क्षणभर उस लाशकी ओर एकटक देखता रहा। वह लाश एक दासी-की थी, और यह पहचाननेमें उसे विलम्ब नहीं लगा। किन्तु ऐसा हुआ क्यों? इस दासीकी लाश इस समय नीचे कैसे आई? क्या किसीने फेंकी? क्या अभीतक कोई ऊपर मार काट ही रहा है? श्यामाने ऊपर-नीचे दायें-बायें देखा। एकदम उसके मनमें आया—

यह जनाना चौक है। ऊपरके कमरोंमें सूर्याजीकी स्त्री, बहिन, माँ इत्यादि स्त्रियाँ रहती थीं, सो उसके ध्यानमें आया। यह लाश—एक दासीकी लाश—ऊपरसे डाली किसने? क्या इन दुष्टोंकी निर्दयताकी सीमा यहाँतक पहुँच गई। क्या अब वे डाकुओंकी तरह घरके भीतर घुसकर अपने हाथोंसे—उस अपनी कायरताभरी तलवारसे—औरतोंका भी खून करने लगे? श्यामाने अभीतक तलवार अपने हाथमें कभी नहीं पकडी थी, पर यह वह भली-भाँति जानता था कि, तलवार पकड़नेवाले मनुष्यको स्त्रियोंपर कभी हाथ न चलाना चाहिये। अवश्य ही उस समय उसने यही समझा कि, यह कोई अत्यन्त नीच मुसल्मान सिपाही है कि, जिसने इस स्त्रीका खून करके ऊपरसे उसकी लाश नीचे धड़ामसे डाली! लाश ऊपरसे नीचे बडे जोरसे गिरी, जिससे उसका मस्तक टकराकर टूट गया; और वह बहुत ही विद्रूप दिखाई पड़ने लगी! लाशका वस्त्र जरा अस्तव्यस्त होगया। यह सब देखकर श्यामाके शरीरके रोंगटे खड़े होगये। लाश नीचे कैसे गिरी, यह देखनेके लिये उसने ऊपरकी ओर देखा, पर उसे कुछ दिखाई नहीं दिया। लाश किसी मनुष्यहीने डाली, पर यह बात क्या है, सो श्यामाके ध्यानमें नहीं आया। इतनेमें उसे ऐसा भास हुआ कि, जैसे कोई चीख मार रहा हो। उसने फिर ऊपर देखा। ऊपरकी खिड़कियाँ सब बन्द थीं। फिर कहाँसे आई? डाली किसने? फिर ऊपर देखा। जरा और ऊपर नजर डाली। हाँ, ऊपर छत थी। शायद छतपर कोई बात हुई हो। यह विचार अभी उसके मनमें आया ही था कि, उसको निश्चय हो गया कि, छतपर ही अभी कुछ उपद्रव होरहा है। उसके साहसके लिये अब और किसी उत्तेजना की आवश्यकता न थी। कोई भयंकर घटना अभी यहाँ हो रही है। बस, इतना ही उसके लिए काफी था। वह तीरकी तरह एक कोनेके जीनेसे ऊपर चढ गया। जीने, एकके ऊपर एक, बराबर छतपर चले गये थे। वह अन्तिम जीनेपर अभी आधी दूरतक नहीं पहुँचा था कि, इतनेमें उसे सुनाई दिया कि, किसीने बडे जोरसे चीख मारी। वह फिर इधर-उधर कुछ भी न देखते हुए एकदम ऊपरकी ओर चला। ऊपर जीनेके

नहीं। बिल्कुल सुनसान था। पिछला फाटक टूटा पड़ा था। श्यामा आगे कुछ भी विचार न करते हुए भीतर घुस पड़ा, और प्रत्येक चौकसे देखते भालते हुए अन्दर जाने लगा। देखता क्या है कि, चारों ओर बहुतसा सामान और वस्तुएँ टूटी फटी पड़ी हैं। चौकोंकी कितनी ही कोठरियोंमें लाशें पड़ी थीं, इस प्रकारका दृश्य श्यामाने अपने उस छोटे-से जीवनमें पहले ही पहल देखा। आजतक ऐसा भयंकर दृश्य कभी उसकी नजरोंमें नहीं आया था, परन्तु फिर भी वह छोकरा जरा भी नहीं घबड़ाया। वह पहले ही जानता था कि, हमें अन्दर जाकर ऐसा ही कुछ दृश्य देखना पड़ेगा। इसके सिवाय उसको लाशोंके अतिरिक्त और विशेष देखना ही क्या था! उसको तो यही देखना था कि, सूर्या-जीकी भी लाश कहीं दिखाई देती है या नहीं—दुष्टोंने उन्हें मार तो नहीं डाला! वह आगे बढ़ा। सूर्यका प्रकाश अभी काफी था। उसने प्रत्येक लाशको गौरके साथ देखा, परन्तु सूर्याजीकी लाश कहीं दिखाई नहीं पड़ी। तब वह पहले चौकसे दूसरे चौकमें गया। वहाँ उसे क्या ही भयंकर दृश्य दिखाई दिया।

उन्नीसवां परिच्छेद

महलोंका भयंकर दृश्य।

श्यामाने दूसरे चौकमें अभी कदम ही रखा था कि, इतनेमें जो दृश्य उसे दिखाई दिया, वह अत्यन्त भयंकर था। उसका कदम चौकमें पड़ते ही ऊपरसे एक लाश नीचे चौकमें आकर गिरी, जिसे देखकर वह बिल्कुल भौचक्का रह गया। वह लाश एक स्त्रीकी थी। श्यामा क्षणभर उस लाशकी ओर एकटक देखता रहा! वह लाश एक दासी-की थी, और यह पहचाननेमें उसे विलम्ब नहीं लगा। किन्तु ऐसा हुआ क्यों? इस दासीकी लाश इस समय नीचे कैसे आई? क्या किसीने फेंकी? क्या अभीतक कोई ऊपर मार-काट ही रहा है? श्यामाने ऊपर-नीचे दायें-बायें देखा। एकदम उसके मनमें आया—

यह जनाना चौक है। ऊपरके कमरोंमें सूर्याजीकी स्त्री, बहिन, माँ इत्यादि स्त्रियाँ रहती थीं, सो उसके ध्यानमें आया। यह लाश—एक दासीकी लाश—ऊपरसे डाली किसने ? क्या इन दुष्टोंकी निर्दयताकी सीमा यहाँतक पहुँच गई। क्या अब वे डाकुओंकी तरह घरके भीतर घुसकर अपने हाथोंसे—उस अपनी कायरताभरी तलवारसे—औरतोंका भी खून करने लगे ? श्यामाने अभीतक तलवार अपने हाथमें कभी नहीं पकड़ी थी, पर यह वह भली-भाँति जानता था कि, तलवार पकड़नेवाले मनुष्यको स्त्रियोंपर कभी हाथ न चलाना चाहिये। अवश्य ही उस समय उसने यही समझा कि, यह कोई अत्यन्त नीच मुसल्मान सिपाही है कि, जिसने इस स्त्रीका खून करके ऊपरसे उसकी लाश नीचे धड़ामसे डाली! लाश ऊपरसे नीचे बड़े जोरसे गिरी, जिससे उसका मस्तक टकराकर टूट गया; और वह बहुत ही विद्रूप दिखाई पड़ने लगी! लाशका वस्त्र जरा अस्तव्यस्त होगया। यह सब देखकर श्यामाके शरीरके रोंगटे खड़े होगये। लाश नीचे कैसे गिरी, यह देखनेके लिये उसने ऊपरकी ओर देखा; पर उसे कुछ दिखाई नहीं दिया। लाश किसी मनुष्यहीने डाली, पर यह बात क्या है, सो श्यामाके ध्यानमें नहीं आया। इतनेमें उसे ऐसा भास हुआ कि, जैसे कोई चीख मार रहा हो। उसने फिर ऊपर देखा। ऊपरकी खिड़कियाँ सब बन्द थीं। फिर कहाँसे आई ? डाली किसने ? फिर ऊपर देखा। जरा और ऊपर नजर डाली। हाँ, ऊपर छत थी। शायद छतपर कोई बात हुई हो। यह विचार अभी उसके मनमें आया ही था कि, उसको निश्चय हो गया कि, छतपर ही अभी कुछ उपद्रव होरहा है। उसके साहसके लिये अब और किसी उत्तेजना की आवश्यकता न थी। कोई भयकर घटना अभी यहाँ हो रही है। बस, इतना ही उसके लिए काफी था। वह तीरकी तरह एक कोनेके जीनेसे ऊपर चढ़ गया। जीने, एकके ऊपर एक, बराबर छतपर चले गये थे। वह अन्तिम जीनेपर अभी आधी दूरतक नहीं पहुँचा था कि, इतनेमें उसे सुनाई दिया कि, किसीने बड़े जोरसे चीख मारी। वह फिर इधर-उधर कुछ भी न देखते हुए एकदम ऊपरकी ओर चला। ऊपर जीनेके

मत्थेपर पहुँचकर उसने झाककर क्या देखा—एक ओरके कमरेके दरवाजे बिल्कुल खुले हैं, और एक अत्यन्त युवती तथा रूपवती स्त्री बेहोश पडी है। वहाँ एक मुसण्डा यवन एक छोटीसी दरी बिछाकर, उसीपर उस स्त्रीको रखनेका विचार कर रहा है। पास ही एक सुन्दर हिंडोलेकी एक तरफ, बाहरकी ओर, एक बालक पडा हुआ रो रहा है। बालक अब जोर जोरसे रोने लगा। वह मुसल्मान मुसण्डा उस बेहोश पड़ी हुई युवतीकी ओर एक बार देखकर कहता है, "ऐ सुन्दरी, बहुत दिनसे तेरे ऊपर मेरी आँख थी। सो आज पूरी हुई। अब मैं तुझे ले जाऊँगा। तेरे उस [उसकी लाशपर थूक कर] दरिद्री पतिको मैंने कभीका शैतानके घर भेज दिया। तेरी उस दासीको भी, जो बहुत इधर-उधर करती थी, नरकमें ढकेल दिया। और इस अभागे बच्चेको मार डालनेका भय दिखलाया, इतनेमें तू बेहोश होकर गिर पड़ी। सो अच्छा ही हुआ। अब मैं तुझे इस दरीमें लपेटकर घोडेपर रख ले जाऊँगा। [बीचमें कुछ त्रस्तसा होकर] अरे! यह कमबख्त कैसा चिल्ला रहा है—अभी गलेपर पैर रखकर मारे डालता हूँ!" यह कर वह दुष्ट सचमुच ही उस बालककी ओर बढा। अपनी तलवार उसने एक ओर डाल दी थी। श्यामाने यह सब देखा। अब एक क्षणका ही अवकाश था! वह दुष्ट—वह शैतान—अपना जूता पहना हुआ पैर उस निरपराध बालकके गलेपर रखना ही चाहता है! दृश्य अत्यन्त भयकर था, जिसे देखकर श्यामाका स्वरूप एकदम बदल उठा। उसकी देहमें किसी विचित्र वीरने सचार किया। और इतने जोशके साथ वह आगे बढा, इतने वेगमे उसने उस मुसडेकी तलवार उठाई, और इस चपलतासे उसने उस दुष्टकी पीठपर वार किया कि, यह सब लिखनेमें तो हमे कुछ समय लगा, पर इसका शताश समय भी उसके इतना सब करनेमें लगा होगा अथवा नहीं, इसमे सन्देह है। उस समय वह मानो कोई और ही जीव बन गया! वार उसने इतने जोशके साथ किया कि, मुसल्मान सिपाहीको पीछे मुडकर देखनेका भी अवकाश नहीं मिला। वह एकदम धडामसे पीछे ही उतान गिर गया। बालक बच गया। दुष्टका पैर

उसकी गर्दनपर नहीं पढने पाया था, श्यामाका वार इसके पहले ही उसपर हो गया। वार बिल्कुल अचानक हुआ। उस सिपाहीको यह ख़याल स्वप्नमें भी न था कि, इस समय हमारे सिवाय यहाँ और भी कोई है—और वह भी ऐसा, जो हमपर वार करे! और सचमुच उसको ऐसा ख़याल हो भी कैसे सकता था—क्योंकि जिनकी तलवारका उसे भय था, उन सबको तो उसने और उसके साथियोंने कभीका यमलोग भेज दिया था, अथवा क़ैद कर ले गये थे। अब और कोई बाकी भी बचे होंगे तो छुक-छिपकर बैठी हुई स्त्रियाँ कहीं भले ही रह गई हों! इसी खयालमें वह चूर था। ऐसी दशामें पीछेसे जब एकदम उसपर वार हुआ, तब वह बड़े अचम्भेमें आया। सच पूछिये, तो पीठमें उस वारके होनेसे उसे जितना दुखित होना पड़ा, उससे कहीं अधिक उसे चकित होना पड़ा।

श्यामाने उस समय ऐसा विलक्षण कार्य किया, जोकि किसी बड़े मनुष्यसे भी नहीं हो सकता था। उसकी समय-सूचकता अत्यन्त प्रशसनीय थी। उसे यह मालूम था कि, हमारे शत्रुकी शक्ति और हमारी शक्तिमें जमीन आसमानका अन्तर है। इसलिए उसने सोचा कि, इस समय यदि हम चूक जायँगे—यह इस समय वारसे घायल होकर और चालाकी से चकित होकर गिर पडा है, इसी हाल्तमें यदि हम इसको मार नहीं डालेंगे, अथवा कमसे कम लंगड़ा-लूला नहीं कर डालेंगे, तो यह हमको साफ कर देगा, बातकी बातमें हमको कुचल डालेगा। यह सोचकर उसने, कुछ भी आगे-पीछे न देखते हुए, जहाँ बन पड़ा, अपने उस नन्हेंसे हाथकी नैसर्गिक चपल्तासे, उसके शरीरमें एक-दो-तीन-चार वार किये। नाकपर, मुँहपर, छातीपर! आखिर तलवार उसके हाथमें थी ही! उसने सोच लिया था कि, वार हमारे चाहे जैसे हों, शत्रुके ऊपर कुछ प्रभाव होगा ही! तलवार उसने एक प्रकारसे कभी छुई ही नहीं थी, तलवार उठाकर वार करना तो दूर रहा। फिर भी उसने इस समय ऐसी समयसूचकता दिखलाई! उस समय यदि कोई वीर पुरुष उसकी उस समय-सूचकताको देखनेके लिये यहाँ उपस्थित होता, तो उसके विषयमें

मस्जिदपर पहुँचकर उसने झाँककर क्या देखा—एक ओरके कमरेके दरवाजे बिल्कुल खुले हैं, और एक अत्यन्त युवती तथा रूपवती स्त्री बेहोश पड़ी है। वहीं एक मुसण्डा यवन एक छोटीसी दरी बिछाकर, उसीपर उस स्त्रीको रखनेका विचार कर रहा है। पास ही एक सुन्दर हिंडोलेकी एक तरफ, बाहरकी ओर, एक बालक पडा हुआ रो रहा है। बालक अब जोर जोरसे रोने लगा। वह मुसल्मान मुसण्डा उस बेहोश पड़ी हुई युवतीकी ओर एक बार देखकर कहता है, "ऐ सुन्दरी, बहुत दिनसे तेरे ऊपर मेरी आँख थी। सो आज पूरी हुई। अब मैं तुझे ले जाऊँगा। तेरे उस [उसकी लाशपर थूक कर] दरिद्री पतिको मैंने कभीका शैतानके घर भेज दिया। तेरी उस दासीको भी, जो बहुत इधर उधर करती थी, नरकमें ढकेल दिया। और इस अभागे बच्चेको मार डालनेका भय दिखलाया, इतनेमें तू बेहोश होकर गिर पडी। सो अच्छा ही हुआ। अब मैं तुझे इस दरीमें लपेटकर घोडेपर रख ले जाऊँगा। [बीचमें कुछ त्रस्तसा होकर] अरे! यह कमबख्त कैसा चिल्ला रहा है—अभी गलेपर पैर रखकर मारे डालता हूँ।" यह कर वह दुष्ट सचमुच ही उस बालककी ओर बढा। अपनी तलवार उसने एक ओर डाल दी थी। श्यामाने यह सब देखा। अब एक क्षणका ही अवकाश था! वह दुष्ट—वह शैतान—अपना जूता पहना हुआ पैर उस निरपराध बालकके गलेपर रखना ही चाहता है! दृश्य अत्यन्त भयंकर था, जिसे देखकर श्यामाका स्वरूप एकदम बदल उठा। उसकी देहमें किसी विचित्र वीरत्वने संचार किया। और इतने जोशके साथ वह आगे बढा, इतने वेगमें उसने उस मुसड्डेकी तलवार उठाई, और इस चपलतामें उसने उस दुष्टकी पीठपर वार किया कि, यह सब लिखनेमें तो हमें कुछ समय लगा, पर इसका शतांश समय भी उसके इतना सब करनेमें लगा होगा अथवा नहीं, इसमें सन्देह है। उस समय वह मानो कोई और ही जीव बन गया! वार उसने इतने जोशके साथ किया कि, मुसल्मान सिपाहीको पीछे मुडकर देखनेका भी अवकाश नहीं मिला। वह एकदम धड़ामसे पीछे ही उतान गिर गया। बालक बच गया। दुष्टका पैर

उसकी गर्दनपर नहीं पड़ने पाया था, श्यामाका वार इसके पहले ही उसपर हो गया। वार बिल्कुल अचानक हुआ। उस सिपाहीको यह खयाल स्वप्नमें भी न था कि, इस समय हमारे सिवाय यहाँ और भी कोई है—और वह भी ऐसा, जो हमपर वार करे। और सचमुच उसको ऐसा ख़याल हो भी कैसे सकता था—क्योंकि जिनकी तलवारका उसे भय था, उन सबको तो उसने और उसके साथियोंने कभीका यमलोग भेज दिया था, अथवा क़ैद कर ले गये थे। अब और कोई बाकी भी बचे होंगे तो छुक-छिपकर बैठी हुई स्त्रियाँ कहीं भले ही रह गई हों! इसी खयालमें वह चूर था। ऐसी दशामें पीछेसे जब एकदम उसपर वार हुआ, तब वह बड़े अचम्भेमें आया। सच पूछिये, तो पीठमें उस वारके होनेसे उसे जितना दुःखित होना पड़ा, उससे कहीं अधिक उसे चकित होना पड़ा।

श्यामाने उस समय ऐसा विलक्षण कार्य किया, जोकि किसी बड़े मनुष्यसे भी नहीं हो सकता था। उसकी समय-सूचकता अत्यन्त प्रशंसनीय थी। उसे यह मालूम था कि, हमारे शत्रुकी शक्ति और हमारी शक्तिमें जमीन आसमानका अन्तर है। इसलिए उसने सोचा कि, इस समय यदि हम चूक जायँगे—यह इस समय वारसे घायल होकर और चालाकी से चकित होकर गिर पड़ा है, इसी हालतमें यदि हम इसको मार नहीं डालेंगे, अथवा कमसे कम लंगड़ा-लूला नहीं कर डालेंगे, तो यह हमको साफ कर देगा, बातकी बातमें हमको कुचल डालेगा। यह सोचकर उसने, कुछ भी आगे-पीछे न देखते हुए, जहाँ बन पड़ा, अपने उस नन्हेंसे हाथकी नैसर्गिक चपलतासे, उसके शरीरमें एक-दो-तीन-चार वार किये। नाकपर, मुँहपर, छातीपर! आखिर तलवार उसके हाथमें थी ही! उसने सोच लिया था कि, वार हमारे चाहे जैसे हों, शत्रुके ऊपर कुछ प्रभाव होगा ही! तलवार उसने एक प्रकारसे कभी छुई ही नहीं थी, तलवार उठाकर वार करना तो दूर रहा। फिर भी उसने इस समय ऐसी समयसूचकता दिखलाई! उस समय यदि कोई वीर पुरुष उसकी उस समय-सूचकताको देखनेके लिये यहाँ उपस्थित होता, तो उसके विषयमें

मलेपर पहुँचकर उसने झाँककर क्या
दरवाजे बिल्कुल खुले हैं और एक अत्य
बेहोश पड़ी है। वहां एक मुसण्डा यवन
उसीपर उस स्त्रीको रखनेका विचार कर
हिंडोलेकी एक तरफ, बाहरकी ओर, एक
बालक अब जोर जोरसे रोने लगा। वह
पड़ी हुई युवतीकी ओर एक बार देखक
दिनसे तेरे ऊपर मेरी आँख थी। सो अ
जाऊँगा। तेरे उस [उसकी लाशपर
कमीको शैतानके घर भेज दिया। तेरी
उधर करती थी, नरकमें ढकेल दिया।
डालनेका भय दिखलाया, इतनेमें तू बेह
ही हुआ। अब मैं तुझे इस दरीमें लपे
[बीचमें कुछ त्रस्तसा होकर] अरे!
है—अभी गलेपर पैर रखकर मारे
सचमुच ही उस बालककी ओर बढ़ा
डाल दी थी। श्यामाने यह सब देखा
था! वह दुष्ट—वह शैतान—अपना
गाय बालकके गलेपर रखना ही चाह
जिसे देखकर श्यामाका स्वरूप एकदम
विचित्र वीरने सचार किया। और
इतने वेगसे उसने उस मुसडेकी त
उसने उस दुष्टकी पीठपर वार किया
समय लगा, पर इसका शताश समय
होगा अथवा नहीं, इसमें सन्देह है।
जीव बन गया! वार उसने इतने
सिपाहीको पीछे मुड़कर देखनेका भी
धड़ामसे पीछे ही उतान गिर गय

था। एक ओर रक्तके नाले वह रहे थे, जिनमें वह दुष्ट तडफडाता हुआ पडा "हाय! हाय!" कर रहा था। दूसरी ओर वह छोटासा बच्चा पडा सो रहा था, और खूनके पनाले उसके नीचेतक पहुँच रहे थे। इधर उस दुष्टकी एक ओर वह छोटा छोकरा, चक्कर आजानेके कारण, अस्तव्यस्त पडा हुआ था, तथा वहीं दूसरी ओर वह युवती, सुन्दरी मृतककी भांति शान्त पडी हुई थी। इस समय यदि वहाँ किसीने आकर वह दृश्य देखा होता, तो वह क्या कहता? उसके मनमें क्या अनुमान होता?

एक तरफ़ तो ये सब प्राणी, उपर्युक्त रीतिसे, पडे हुए थे, और दूसरी ओर महलके एक और कमरेमें एक मनुष्य और भी मृतवत् पडा हुआ था। उसके एक घाव तो वडा ज़बरदस्त हुआ था, और दो साधारण लगे थे, इस प्रकार कुल तीन घाव थे। पहला घाव उसकी गर्दनमें था, और शेष दो घावोंमेंसे एक सिरमें और दूसरा दाहिने हाथमें था। इन घावोंसे ऐसा रक्त वहा था कि प्राय इसी कारण वह मरा हुआसा पड़ा था। कमसे कम जिसने, अथवा जिन्होंने उसे घायल किया था, उन्होंने तो यही समझ लिया होगा कि; यह अब ज़िन्दा नहीं है। पर वास्तवमें उनकी वह समझ भ्रमपूर्ण थी। कमसे कम अभीतक तो वह पुरुष मरा नहीं था, क्योंकि हम जिस समय उसके मुखसे एक लम्बीसी साँस निकली। उसका शरीर थर्राया; और जैसे किसी मनुष्यकी जिह्वामें विशेष शक्ति न हो, और वह बोलनेका प्रयत्न करने लगे, तो जिस प्रकार उसके होंठ हिलने लगते हैं, उसी प्रकार उसके भी होठ हिलते हुएसे दिखाई दिये। यही नहीं, बल्कि उसने अपना एक पैर इधर-ऊधर किया, और "हाय! हाय!" अथवा "आह! आह!" के समान कोई शब्द भी उच्चारण किये। इतना ही नहीं, किन्तु सुनने-वाला यदि अपना कान उसके मुँहके बिल्कुल पास लेगया होता, तो उसके ये, आगे लिखे हुए, शब्द भी सुनाई दे सकते थे—"हाय! हाय! पिताजी, माताजी, वहनजी और मेरी स्त्रीकी इन शिखानष्टोंने बहुत ही विडम्बना की होगी, अथवा कर रहें होंगे! और मैं! मैं किसी

उसने क्या भविष्यद्वाणी कही होती—उसे कैसा गौरवान्वित किया होता ! परन्तु श्यामाने वह पहले-पहल जो पराक्रम दिखलाया, उसको देखनेके लिए उस दुष्टके अतिरिक्त—जो कि उसीकी तलवारसे घायल हुआ था—और कोई भी वहाँ उपस्थित नहीं था। हाँ, एक प्राणी और भी था—और वह था वह छोटा बालक, जो रोते रोते थककर बीचमें चुप हो गया था और आँखें खोले हुए उसकी ओर देख रहा था। जैसा कि हमने ऊपर बतलाया, श्यामाने पहले चार-पाँच वार किये, और फिर इसके बाद चार-पाच वार उसने और भी उसके पैरोंपर किये। क्योंकि उस समय वह यही समझ रहा था कि जितने ही वार इसके ऊपर करें उतने थोड़े ही होंगे। कहां किस प्रकारका वार करनेमें हमारा काम सहजमें हो जायगा, सो उस बेचारेको क्या मालूम ! वह दुष्ट बहुत कुछ उठनेकी कोशिश की, पर कामयाब न हुआ। जिस प्रकार किसी रसीले वृक्षके तनेमें, एकके बाद एक, इस प्रकार कई वार करनेसे उसमेंसे तमाम रस बहने लगता है, उसी प्रकार उस दुष्टके शरीरसे भी, जगह जगहसे लोहू बह निकला सारे शरीरमें घाव हो गये। उसको इधरसे उधर और उधरसे इधर तड़फड़ाने अथवा मुँहसे गालियाँ देनेतककी ताकत नहीं रह गई। वह जो कुछ गुनगुनाकर गालियाँ दे रहा था, अथवा बिलख रहा था, तो उसके मनको और होठोंको ही मालूम !

इतनी देरतक उस भारी तलवारके चलानेसे, अथवा यों कहिये कि उस मुसल्लेमें स्नायुमय पुष्ट शरीरमें उस तलवारके बारम्बार घुसेड़ने और निकालनेके परिश्रमसे, श्यामाके हाथ बिल्कुल थक गये। यहाँ तक कि, वह तलवार उससे उठने ही न लगी, और अब आवश्यकता भी न रही थी। उस दुष्टके आसपास रक्तके पनाले बह रहे थे। यह सब देखकर श्यामाको अन्तमें चक्कर आ गया। एक बार उसने चारों ओर देखा, और वह छोटासा बालक एकदम नीचे बैठ गया। बैठते-बैठते वह गिर पड़ा और बेहोश भी हो गया। उसका परिश्रम बहुत भारी था। इधर वह छोटा बच्चा भी रो रोकर थककर, सो गया !

उस समय उस कमरेका वह दृश्य बहुत ही भयंकर दिखाई दे रहा

था। एक ओर रक्तके नाले बह रहे थे, जिनमें वह दुष्ट तड़फड़ाता हुआ पड़ा "हाय! हाय!" कर रहा था। दूसरी ओर वह छोटासा बच्चा पड़ा सो रहा था, और खूनके पनाले उसके नीचेतक पहुँच रहे थे। इधर उस दुष्टकी एक ओर वह छोटा छोकरा, चक्कर आजानेके कारण, अस्तव्यस्त पड़ा हुआ था, तथा वहीं दूसरी ओर वह युवती, सुन्दरी मृतककी भांति शान्त पड़ी हुई थी। इस समय यदि वहाँ किसीने आकर वह दृश्य देखा होता, तो वह क्या कहता? उसके मनमें क्या अनुमान होता?

एक तरफ तो ये सब प्राणी, उपर्युक्त रीतिसे, पड़े हुए थे, और दूसरी ओर महलके एक और कमरेमें एक मनुष्य और भी मृतवत् पड़ा हुआ था। उसके एक घाव तो बड़ा ज़बरदस्त हुआ था, और दो साधारण लगे थे, इस प्रकार कुल तीन घाव थे। पहला घाव उसकी गर्दनमें था, और शेष दो घावोंमेंसे एक सिरमें और दूसरा दाहिने हाथमें था। इन घावोंसे ऐसा रक्त बहा था कि प्रायः इसी कारण वह मरा हुआसा पड़ा था। कमसे कम जिसने, अथवा जिन्होंने उसे घायल किया था, उन्होंने तो यही समझ लिया होगा कि; यह अब ज़िन्दा नहीं है। पर वास्तवमें उनकी वह समझ भ्रमपूर्ण थी। कमसे कम अभीतक तो वह पुरुष मरा नहीं था, क्योंकि हम जिस समय उसके मुखसे एक लम्बीसी साँस निकली। उसका शरीर थर्राया, और जैसे किसी मनुष्यकी जिह्वामें विशेष शक्ति न हो; और वह बोलनेका प्रयत्न करने लगे, तो जिस प्रकार उसके होंठ हिलने लगते हैं, उसी प्रकार उसके भी होंठ हिलते हुएसे दिखाई दिये। यही नहीं, बल्कि उसने अपना एक पैर इधर-ऊधर किया, और "हाय! हाय!" अथवा "आह! आह!" के समान कोई शब्द भी उच्चारण किये। इतना ही नहीं, किन्तु सुनने-वाला यदि अपना कान उसके मुँहके बिलकुल पास लेगया होता, तो उसके ये, आगे लिखे हुए, शब्द भी सुनाई दे सकते थे—"हाय! हाय! पिताजी, माताजी, बहनजी और मेरी स्त्रीकी इन शिखानष्टोंने बहुत ही विडम्बना की होगी, अथवा कर रहे होंगे। और मैं! मैं किसी

कायरकी भांति यहाँ पड़ा मर रहा हूं ! आह ! आह ! मन तो ऐसा ही होता है कि, उनके कलेजेको चूस लूँ ! पर क्या करूँ ? मुझ अकेलेपर वे तीन मुसण्डे एकदम टूट पड़े, और तीनोंने तीन ओरसे मुझपर वार किये। मुसण्डे थे बड़े धूर्त ! उन्होंने समझ लिया कि, अकेले यदि कोई मुझसे मुकाबिला करेगा, तो उसमें जीत मेरी ही होगी। इसीसे तीनोंने एकदम मुझपर आक्रमण किया। ईश्वरकी इच्छा ! किन्तु अब मैं क्या करूँ ? महलमें तो चारों ओर सुनसान दिखाई देता है। क्या पिताजी कैद कर लेगये ? माताजी, बहनजी और मेरी स्त्री, तथा बच्चेको भी शायद पकड़ लेगये हों ! कहीं सबका खून तो नहीं कर डाला ? और सचमुच ही पकड़ लेजानेकी अपेक्षा तो सबका खून ही कर डाला हो, तो अच्छा ! इन शिखानष्टोंकी सेवा करना मानो बिलकुल कृतघ्नोंकी सेवा करना है। वह बिलकुल सूलीपरकी रोटी है ! हा परमेश्वर ! क्या कभी हमारे इस दुर्भाग्यका अन्त भी होगा ? हमारे धर्मका, हमारी गौमाताका यह कष्ट क्या कभी दूर होगा ? हा ! हा ! अरे ये दुष्ट हमारे देखते हुए हमारी माँ-बहनोंका अपमान करते हैं ! हमारी आँखों देखते गौओंका वध करते हैं, और हमारी ओर देखकर हँसते हैं ”

इस प्रकारके प्रत्यक्ष उद्‌गार मानो उसके मुँहसे बाहर निकल रहे थे। बेचारा इधरसे उधर और उधरसे इधर छटपटा रहा था। एकबार उसके मनमें आया कि, हमको उठना चाहिये, और अपनी शक्तिका बिलकुल खयाल न करते हुए वह उठने भी लगा—उठनेका उसने प्रयत्न किया—किन्तु उसकी इच्छा जितनी प्रबल थी, शरीर उतना प्रबल नहीं था। अतएव, अपना सिर उठाकर, उसे एक हाथसे टेक-कर, ज्यों ही वह उठने लगा, त्यों ही उसे भारी चक्कर आया, और वह फिर निश्चेष्ट होकर गिर पड़ा।

———

बीसवां परिच्छेद

अन्तिम सन्देश

इधर उस युवतीकी, उसके छोटे बच्चेकी, श्यामाकी, और उस मुसल्लेकी क्या दशा हुई, सो देखिये।

युवती वहाँ बिल्कुल बेहोश पड़ी हुई थी। मालूम नहीं होता था कि, वह मर गई है, अथवा अभी जीती है। न कुछ हिल्ती थी, न डुल्ती! पास ही इतनी देरसे बच्चा रो रहा था; पर उसको उनकी कुछ खबर न थी। यह संसार उसके लिए अब भारमात्र था। श्यामाने आकर वहाँ क्या किया; और पीछेसे क्या घटना हुई, सो उसको रत्ती-भर भी खबर नहीं थी। उसको यदि यह मालूम हो जाता कि, जिस दुष्टने हमको ऐसी भयंकर दशामें ला छोड़ा है, वह हमारे निकट ही दुर्दशा ग्रस्त हो मर रहा है, उसको अब हाथ-पैर हिलानेकी भी शक्ति नहीं, तो उसको बहुत ही आनन्द हुआ होता, परन्तु जिस प्रकार अपने बच्चे तथा घरके अन्य लोगोंकी भयंकर यातनाओंके कारण होनेवाले दुःखसे वह अज्ञात थी, उसी प्रकार अपने शत्रुकी अत्यन्त दुर्गति देखकर होनेवाले आनन्दसे भी वह अज्ञात ही थी। उतने बड़े उस कमरेमें, एक उस घायल होकर मरते हुए दुष्टके अतिरिक्त, और कोई भी प्राणी सचेत नहीं दिखाई देता था। हाँ, वह दुष्ट अवश्य ही छटपटा रहा था; और उसको विश्वास हो गया था कि, अब मैं बच नहीं सकता। क्षण-क्षणपर वह अधिकाधिक क्षीण होता चला जा रहा था। फिर भी वह तड़फड़ा अवश्य रहा था। बड़े कष्टसे उसने करवट बदली; और आँखें खोलीं। आँखें खोलते ही उसकी दृष्टि उस सुन्दरीकी ओर गई, जिससे एकाएक उसे ऐसा मालूम हुआ कि, जैसे कुछ शक्तिसी आ गई हो। अहा! आज कितने ही दिनसे मैंने इसको प्राप्त करनेका प्रयत्न किया, कितने ही अवसरोंसे लाभ उठानेकी कोशिश की, कितनी ही कारस्तानियाँ कीं; और अन्तमें यह हाथ भी लगी। यह पक्वान्नोंसे भरा हुआ थाल सामने खींचा; और अब ग्रास मुँहमें डाल्नेभरकी देरी थी कि,

इस दस-बारह वर्षके छोकरेने मेरी यह दशा कर दी ! इसने मेरा सब अभिमान चूर कर दिया ! धिक्कार है मेरे पौरुषको ! इन मूँछोको रखकर क्या किया ? इस दाढ़ीका अब क्या होगा ? इस प्रकारके विचार उसके मनमे आये और उन विचारोंके आवेगमे उसे जोश भी आ गया। वह नखसे शिखतक रक्तमे नहाया हुआ था, रक्तकी धाराएँ अभी भी उसके शरीरसे बह रही थीं, फिर भी उसे दूसरा कोई विचार नहीं सूझा। वह बिल्कुल अन्धा हो गया। उसको यह विश्वास हो चुका था कि, अब मै मर जाऊँगा—ऐसी दशामे खुदाका नाम लेते हुए उसे पड़ा रहना चाहिये था। परन्तु नहीं, शैतानने उसके मनको ग्रसा, शैतानने ही उसके मनको शक्ति दी। मरते दमतक किसीका सुविचार नहीं सूझने देंगे—यही शैतानका व्रत है, और ऐसे लोग शैतानको अत्यन्त प्यारे हैं। अवश्य ही, उसने अपने प्यारेको इस समय भी नहीं छोड़ा। उस दुष्ट मुसल्मान सिपाहीने सोचा कि, आजतक जिस बातके लिये हमने इतने प्रयत्न किये, उस बातको तो अब सिद्ध कर ही लेना चाहिये—कमसे कम इस तरुणीका ओष्ठस्पर्श करके तो हमे कृतार्थ हो ही लेना चाहिये—मृत्यु तो धरी-धराई है, सो तो कुछ मिटती नहीं। इस प्रकारके विचार उसके मनमे आये, और उन्होंने किसी प्रकार भी उसका पिण्ड नहीं छोड़ा। बस, इन्ही विचारोंके आवेगमे वह दुष्ट चाण्डाल सचमुच ही उठनेकी कोशिश करने लगा। किन्तु जब उसमे सफल नहीं हो सका, तब इस प्रयत्नमें लगा कि, घिसलते घिसलते जाकर अपना मनोरथ पूर्ण करूँ। इसमें उसे कुछ सफलता प्राप्त हुई। उस युवती, सुन्दरीके बहुत पासतक वह पहुँच गया, और अब वह अपना दुष्ट मुख ऊपरको उठानेही वाला था कि, इतनेमे वह युवती इस प्रकार क्षुब्ध होकर जाग उठी, जैसे कोई मनुष्य किसी संकटके समय अचानक किसी कारणसे उठ पड़े। ऐसा मालूम हुआ कि, बेहोशीकी हालतमे उसे स्वप्न हो पड़ा। उस अवस्थामें उसे ऐसा भास हुआ कि जैसे उसके पवित्र शरीरपर किसी चाडालकी छाया पड़ती हो ! बस, इसी कारण वह क्षुब्ध होकर उठ पड़ी। देखती क्या है कि, सचमुच ही उसके पास वह चाडाल

आकर पडा हुआ है। जैसे कोई किसी कालसर्पको देखकर एकदम दूर हो जाय, उसी प्रकार वह "मर जा !" कहकर चीख मारती हुई दूर हो गई। उस समय उसके मनमें यही आया कि, इस समय मैं बड़े सकटसे बची। इसके बाद सकपकाकर वह चारों ओर देखने लगी। उसकी चेष्टा इस समय अत्यन्त भयभीत और थोड़ी-थोडी क्रुद्ध भी दिखाई दे रही थी। शायद उसकी चीख कानमें पडी, इसी कारणसे उसका वह बच्चा, जो एक ओर पड़ा सो रहा था, जाग पड़ा, और रोने लगा। यह सुनकर वह दौडी, और तुरन्त ही, "बेटा ! अरे मेरे छौने ! इतनी देर में तुझे छोडकर कहाँ चली गई थी !" कहकर उसे छातीमे लगा लिया, और बार-बार चुम्बन लेने लगी।

बच्चेके हाथ लग जानेसे उसे अत्यन्त आनन्द हुआ। उस आनन्द में मानो यह भी भूल गई कि, मैं कहाँ हूँ, और कहा नहीं। ऐसा जान पड़ा कि, अब उसे यह भी भान नहीं रहा कि अभी क्षणभरके पहले मैं किस बडे सकटसे बची। वह बिलकुल पागलकी तरह इधर-उधर डोलने लगी। इतने ही में उसकी नजर उस पड़े हुए दूसरे छोकरेकी ओर गई। और फिर वह एकदम "अरे यह कौन !" कहकर चिल्लाई। उस समय यदि किसी दूसरेने उसका वह बोल सुना होता, तो उसे यही भास होता कि, कहीं वह पागल तो नहीं हो गयी। किन्तु उस समय वह दशा देखने और उसका वह वचन सुननेके लिये वहाँ कोई भी जाग्रत नहीं था। उसके उस चिल्लानेको सुनकर ही श्यामा जाग पडा। उसने एक लम्बी साँस ली, हाथ पैर तन्नाये, जमुहाई ली, और आँखें खोलीं—देखा, तो उसके सामने वह स्त्री खडी है। उसे देखते ही वह चैतन्य लड़का एकदम उठकर खडा हो गया। इसके बाद एक बार उसने चारों ओर देखा। पहले-पहल तो उसके स्मरणमें सब बातें नहीं आईं। किन्तु धीरे-धीरे सब बातें उसके ध्यानमें आ गईं। क्षणभर तो यह कुछ भी उसके ध्यानमें न आया कि, मैं कहा हूँ, और कैसे आया। क्योंकि जिस समय वह चक्कर खाकर गिरा था, उस समय इतना बेहोश हो गया था कि, उसे कुछ भी भान नहीं रहा था। परन्तु अब, जब कि चारों ओर

उसने देखा—और विशेषत. उस छटपटाते हुए दुष्टकी ओर जब उसकी दृष्टि गई, तब उसे सब कुछ याद आ गया। इसके बाद, जिस तलवार-से उसने उस शिखानष्ट सिपाहीको जर्जर किया था, उसकी ओर जब उसकी नजर गई, तब तो उसे फिर सारी बातें पूरे तौरपर याद आ गईं। वह उस स्त्रीकी ओर देखने लगा, और वह स्त्री उसके मुखकी ओर देखने लगी। इतनेमें श्यामा एकदम उससे कहता है, "सूर्याजीराव कहाँ हैं ?" इस प्रश्नके कानमें पड़ते ही उस स्त्रीकी जो दशा हुई, उसके वर्णन करनेकी हमारी लेखनीमें शक्ति नहीं है। वह एकदम वहाँसे झपटी; और तीरकी तरह उस कमरेसे अदृश्य हो गई। उसके पीछे पीछे श्यामा भी गया। श्यामाको यह भली-भाँति मालूम था कि, यह सूर्याजीरावकी स्त्री है, और इसीलिए उसने उससे यह प्रश्न किया था। उस बेचारेको यह क्या मालूम कि, उसके मनकी उस समय क्या दशा थी। वह यदि मालूम होती, उसके विषयमें उसे यदि थोड़ासा संशय भी होता, तो उसने वह प्रश्न न किया होता। जो हो, वह उसके पीछे पीछे गया। किसी चकित हिरनीकी भांति वह इस दरवाजेसे उस दरवाजेमें और उस दरवाजेसे इस दरवाजेमें छलांगें भरती हुई जा रही थी। अन्तमें वह उस जगह पहुँची, जहाँ वह वीर पुरुष छटपटाता हुआ पड़ा था, और जिसका उल्लेख पिछले परिच्छेदके अन्तमें हुआ है। वहाँ आकर वह चारों ओर शून्य दृष्टिसे देखने लगी। जिस पुरुषको ढूँढनेके लिए वह आई थी, वह पुरुष—वही उसका प्यारा पति—अबतक उसकी दृष्टिको छटपटाता हुआ दिखाई नहीं पड़ा। वह वहींकी वहीं पागलकी तरह घूमने लगी। उसके मनको यह भास तो अवश्य हो चुका था, कि जिसकी तलाशमें आई हूँ, वह पुरुष यहींपर कहीं है अवश्य। वह बार-बार उसके पास जाती, और फिर दूर हट जाती। अन्तमें उसने कुछ सोचा, और गोदके लड़केको तुरन्त ही नीचे डाल दिया। फिर उस शान्त पड़े हुए—ग्लानिके कारण बेहोश पड़े हुए—वीर पुरुषके पास गई। उसकी ओर जरा गौरसे देखा, और बड़े जोरसे चीख मारकर एक-दम बेहोश हो गिर पड़ी। श्यामा उसके पीछे-पीछे उसे ढूँढनेके लिए

आ ही रहा था, परन्तु वह अत्यन्त वेगके साथ भागती हुई और छलांगें मारती हुई चल रही थी, इस कारण वह बराबर उसके साथ नहीं रह सका—वह इस बातपर ध्यान नहीं रख सका कि, जल्दीसे वह किस कमरेमें चली गई। वह इस कमरेसे उस कमरेमें और उस कमरेसे इस कमरेमें घूम रहा था। इतनेमें उसके उपर्युक्त चीखनेका आवाज उसके कानोंमें पड़ी, जिसे लक्ष्य करके वह दौड़ता हुआ उसी कमरेमें आया। देखता क्या है कि, सूर्याजीराव बिल्कुल घायल होकर मृतवत् पड़े हैं— यहीं नहीं, बल्कि श्यामाने तो पहले पहल यही समझा कि, वे बिल्कुल मर ही गये हैं। उनके मरनेका विचार मनमें आते ही उसके मनकी कुछ विचित्रसी दशा हो गई। क्योंकि जैसी नानासाहबपर उसकी भक्ति थी, वैसी ही सूर्याजीपर भी थी। नानासाहबके सन्देशे-वन्देशे और पत्र इत्यादि लेकर इधर कई बार वह आ चुका था। सूर्याजी और नाना-साहब दोनोंमें बड़ा स्नेह था। दोनों मिलकर जब कभी शिकारको जाते, तब इस छोकरेने कई बार उनका कौशल देखा था। इसके अतिरिक्त उनके पटा-बनेठी, कुश्ती, मल्लखम्भ, इत्यादि खेलोंके कौशल भी उसे मालूम थे। उस छोकरेको उक्त खेलोंका मर्म तो बहुत मालूम नहीं था— हां, इतना वह अवश्य जानता था कि, सूर्याजी भी हमारे नानासाहबके समान ही एक वीर पुरुष हैं। और इसी कारण, महलोंके अन्दर प्रवेश करते ही, यह बात उसके खयालमें आई थी कि, सूर्याजी यदि महलोंमें होंगे, तो, जबतक उनकी लाश न गिर जाय, वे कदापि शत्रुओंको अन्दर नहीं घुसने देंगे। यह सब चूंकि पहले ही उसे मालूम हो चुका था; और इसी कारण, सूर्याजीको जब कि उसने मृतवत् पड़ा हुआ देखा, तब उसे कोई आश्चर्य नहीं हुआ। फिर भी उसके मुंहसे "हाँ! हाँ! अन्तमें मुसल्मानोंने इनको मार ही डाला"—इस प्रकारके वचन निकले बिना नहीं रहे। क्षणभर उन दोनोंकी ओर—उस स्त्री और उस पुरुष-की ओर—उसने देखा। फिर सूर्याजीके बिल्कुल पास वह गया, और उनकी ओर जरा गौरसे देखा। इतनेमें सूर्याजीके एक दीर्घ निःश्वास छोड़नेका उसे भास हुआ। उसे मालूम था कि, बेहोश आदमीकी आंखो

त्यादिमें पानी लगानेसे और उसके मुखपर जल छिड़कनेसे वह होशमें आ जाता है। उसने अपनी माँको इसी प्रकार एक बार एक स्त्रीको होशमें लाते हुए देखा था। वैसा ही सूर्याजीके साथ भी उसने किया। उनकी आँखोंमें पानी लगाया, एक घूँट पानी उनके मुँहमें डाला, उनके मुँहपर पानीका एक छींटा मारा। इलाज जल्दी ही काम कर गया, सूर्याजीने फिर एकबार एक लम्बीसी साँस ली, और तुरन्त ही आँखें खोल दीं। श्यामा, यह देखते ही, "सूर्याजी राव, सूर्याजी राव!" करके बड़े जोरसे पुकारने लगा। सूर्याजी राव अभी पूरे-पूरे होशमें नहीं आये थे, किन्तु श्यामाके पुकारनेसे वे कुछ जागृत से हुए। उन्होंने इधर-उधर देखा। फिर भी वह लड़का कौन है, और यह क्या हो रहा है, सो कुछ उनके ध्यानमें नहीं आया। तथापि जैसे कोई मनुष्य दूरसे ऐसी किसी चीजको गौरसे देखता हो, जो कि उसकी पहचानकी हो—बस, इसी प्रकार सूर्याजीराव उस लड़केकी ओर देखने लगे। जान पड़ता था कि, उनके मनमें यह सन्देह हुआ है कि, जो लड़का हमारे सामने खड़ा है, उसे हमने कहीं देखा है। कुछ देरके बाद ऐसा मालूम हुआ कि जैसे उन्होंने पूर्णतया उसे पहचान लिया हो। तुरन्त ही, अत्यन्त क्षीण स्वरसे, उनके मुँहसे ये शब्द बाहर निकले—"कौन? श्यामा, तू कब यहाँ आया?" श्यामाने तुरन्त उनकी ओर देखा, और कहा, "मैं कभी-का आया हूँ। हमारे सरकारने देशमुख साहबको देनेके लिए सुभानको एक चिट्ठी दी थी—सो उसे पहुँचानेके लिये मैं यहाँ आया, और गाँवमें आकर यह सब गड़बड़ी देखी। सूर्याजी राव, यह बात क्या हुई? एकाएक ये मुसल्ले आये कहाँसे और किसके हुक्मसे?

सूर्याजी रावने उसके प्रश्नोंको सिर्फ सुनभर लिया। उत्तर देनेकी उन्हें शक्ति ही न थी, और उनका ध्यान भी पूरा-पूरा उधर न था। वे बीचमें ही एकदम अपने क्षीण स्वरसे कहते हैं, "श्यामा, पिताजी कहाँ हैं रे! माताजी कहाँ हैं? और उसका [स्त्रीका] हाल कुछ मालूम है?" इन प्रश्नोंका क्या उत्तर दे, सो श्यामाको कुछ समझ न पड़ा। हाँ—"ये देखो, यहाँ अपने बच्चेके पास पड़ी हैं" कहकर

वह एकदम उस युवती, सुन्दरीके पास गया। युवतीकी दशा पहले ही की भाति हो रही थी। श्यामाने अपना पानीका उपचार फिर किया, इससे वह होशमें तो आगई, पर पहलेसे भी अधिक पागल दिखाई पडी। उठते ही उसने वालकको फिर पहले ही की भाति उठा लिया, और एक गाना गाने लगी। फिर सूर्याजीकी ओर देखकर—अरे ये कौन हैं? नाम इनका क्या है? अजी यहाँ आकर क्यों पड़े हो?" इत्यादि कोई न कोई प्रश्न करके हँसने लगी। यह और क्या हुआ? सूर्याजी वड़ी चिन्तामें पड़े। परन्तु उन्होंने स्त्रीको पुकारकर—"यह क्या? तुम ऐसा क्यों करती हो? पिताजी कहाँ हैं? माताजी कहाँ हैं? तुम अकेली यहाँ कैसे आई?"—इस प्रकारके प्रश्न, एकके वाद एक, किये। परन्तु कई प्रश्नोंके उसने उलटेसुलटे उत्तर दिये; और कईके उत्तर देना तो एक ओर रहा, वह हँसने लगी। यह देखकर सूर्याजीने श्यामाकी ओर जिज्ञासा-दर्शक दृष्टिसे देखा। कमसे कम ऐसी दृष्टिसे देखा कि, जिससे श्यामाको प्रकट हो गया कि, ये हमसे कुछ पूछना चाहते हैं; और इसलिए उसने सोचा कि, अव इनको सव वृत्तान्त वतला देना चाहिये। तदनुसार जवसे वह गाँवमें आया था, तवसे लेकर और सूर्याजीके पास आनेतकका सारा वृत्तान्त वतला गया। सूर्याजीने सव वृत्तान्त शान्तिपूर्वक सुन लिया; और एक लम्बीसी साँस लेकर वहुत देरतक विल्कुल चुप रहे। उनकी स्त्रीका पागलपनका प्रलाप अभी जारी ही था। इसलिये सूर्याजी फिर अपनी स्त्रीकी ओर देखकर कहते हैं, "श्यामा, तूने आज इतनी वीरताका काम किया है कि, मै यदि अच्छा होता, तो तू जो कुछ कहता, वही मैं तेरे लिए करता। श्यामा, तूने आज जो कार्य कर दिखलाया है, उसका महत्व तुझे कुछ नहीं मालूम है। तूने आज किसका प्राण लिया है, सो तुझे नहीं मालूम है। मैं अव यहाँ इस हालतमे पड़ा हूँ। आशा नहीं है कि, वचूँगा। पर यदि मैं अच्छा होता, तो तुझे अपने पुत्रकी जगह रखता। वेटा, आज तूने मेरे एक वडे भारी दुश्मनको—गौ-व्राह्मणके वड़े भारी कष्टदाताको, मराठोंके एक कट्टर शत्रुको—नष्ट किया है।

निस्सन्देह वह एक मामूली आदमी है, पर है बादशाहका बड़ा भारी प्यारा। उसके बिना क्षणभर भी बादशाहका काम नहीं चलेगा। पर सचमुच क्या वह मर गया? क्या उसके प्राण निकल गये? श्यामा, जो कुछ हुआ, सो अच्छा हुआ। किन्तु इसका परिणाम बहुत भयकर होगा। तू अब यहाँ क्षणभर भी मत रह। बागमे चला जा, और घोड़ा ले। इसको एक घोडेपर बैठा, और एकदम यहासे चला जा। सब सिपाही चले गये, किन्तु यह शैतान अभी नहीं गया। सो यह बात आगे गये हुए सिपाहियोंके ध्यानमे आगई होगी। वे लोग कुछ देरतक इसके आनेका रास्ता देखेंगे, परन्तु अब बहुत देर हो गई, और यह अभी पहुँचा नही है—इसके बिना उनको आगे जानेका साहस नहीं होगा। इसके बिना यदि वे चले भी जायगे, और फिर चाहे जितने पराक्रमके कार्य कर जावें—उनका कुशल नहीं। बस, घडीभरके अन्दर ही वे लौट पड़ेंगे, और जहाँ उन्होंने उसकी लाश देखी कि, फिर क्या अनर्थ करेंगे, और क्या नहीं करेंगे, सो कुछ कहा नहीं जा सकता। जा, अब तुरन्त ही जा। गाँवके लोगोंको देख, कितने डरपोंक हैं—अभी एक भी आदमी इधर झाँकने नही आया · जा · जा ”

यह एकदम लम्बासा भाषण यहाँ बराबर दिया गया है, पर सूर्याजीके मुखसे यह सब लडखड़ाते-लडखडाते और ठहर-ठहरकर निकला। प्रत्येक दो शब्दोंके बीच बीचमे वे कराहते जाते थे। बीच बीचमें उनको विस्मरणसा हो जाता था। वे ठहर जाते थे। गर्दन इधरकी उधर करते थे। होंठोंपर जीभ फेरने लगते थे, और फिर कहने लगते थे। किन्तु इस प्रकार भी वे और कितनी देर बोल सकते थे? उनका गला बिल्कुल सूख गया, और फिर बोल ही न निकलने लगा। ‘पानी” “पानी” का शब्द उन्होने एक-दो बार कहा, किन्तु वह शब्द उनके होठोंके बाहर नहीं निकला। श्यामा सिर्फ अनुमानसे समझ गया; और उसने उन्हें दो घूँट पानी दिया। पेटमे पानीके जाते ही वे फिर होशियार हुए। कमसे कम, आगे जो कुछ कहनेवाले थे, उसको कहने भरके लिए उनमें शक्ति आई। वे फिर श्यामासे बोले, “जा। बुढमाल-

मे दो घोड़ोंके उपर ज़ीन डाल ले; और इसको (स्त्रीकी ओर संकेत करके) अभी लेजा। यहासे उगौती गाँवकी ओर दो कोसपर जा। वहासे चार रास्ते फूटते हैं। उन रास्तोंके पास जानेपर दाहिनी ओरके रास्तेपर मुडना। वह रास्ता कुछ दूर बाद टूट जाता है, फिर जंगल मिलता है। उस जंगलमें एक बड़ा सा बरगदका वृक्ष है। वृक्ष बड़ा भारी है। उसके नीचे एक झोपड़ी है। वहाँ एक बुड्ढा तुझे मिलेगा। जब तू उस बुड्ढेके पास जायगा, तब पहलेपहल वह तुझे मारने दौड़ेगा; पर तू उसे तुरन्त ही यह कटार और तावीज दिखा देना। इसके बाद यहाँका सब हाल उसे बताना। कहना कि, सूर्याजीने अपनी स्त्री और बच्चेको तुम्हें सौंपा है।"

अन्तके शब्द फिर अत्यन्त क्षीण स्वरसे निकलने लगे। एक शब्द कहते, फिर होंठ चबाते और कराहते जाते थे। इसके बाद एक बार फिर उन्होंने पानी माँगा। श्यामाने फिर उन्हें दो घूँट पानी दिया; और फिर वे—इस बार बहुत ही ज़ोरसे बोलने लगे, "और श्यामा, नाना साहब यदि तुझे कभी मिल जायं, तो उनसे ये मेरे अन्तिम वचन कह देना कि, यदि तुम सच्चे मराठे हो; और यदि, हमारी-तुम्हारी जो शपथें हो चुकी हैं, वे तुम्हारे ध्यानमें हैं, तो मेरी इस मृत्युका बदला चुकाये बिना तुम कभी न रहना। आज मेरे कुटुम्बपर जो बीती है; वही तुम्हारे कुटुम्बपर भी बीती है। मेरे हाथसे सहायता हुई होती, किन्तु उन्होंने एकदम दोनोंका गला पकड़नेकी युक्ति निकाली; और सो भी अचानक! मैं तो अब जी नहीं सकता। मेरे कुटुम्बका अपमान हुआ। तुम्हारे कुटुम्बका भी, आज या कल, शीघ्र ही, होनेवाला है। अब तुम्हारे हाथमें और क्या रह गया है—सिवाय बदला लेनेके। सो तुम यह करनेमें भी नहीं चूकोगे, यह मैं जानता हूँ। किन्तु मेरी जो दशा हुई है, उसको ध्यानमें लाकर दूने और चौगुने ज़ोरसे वही करो। किसी प्रकार भी अब—श्यामा, मेरे ये अन्तिम शब्द कहना। तू कभी न भूलना, उनसे कहना कि, 'मराठोंकी सन्तानके लिये जो उचित है, सो करनेकी—और पूरा-पूरा बदला लेनेकी—अपनी शपथें कभी मत

भलो।' इतना कहकर मेरी यह कटार उनको दे देना। जा, अब तुरन्त जा।"

अन्तिम 'जा' उनके मुँहसे निकलने नहीं पाया था कि, फिर उन्हें बेहोशी आगई। अन्तमे उनके वचन बहुत ही अस्पष्ट निकले, क्योंकि क्षण क्षणपर उन्हें क्षीणता आ रही थी। किन्तु हाँ, जब कि वे ये वचन कह रहे थे, उनमें एक प्रकारकी विलक्षण स्फूर्ति, एक प्रकारका विचित्र जोश, आ गया था। किन्तु जब किसी बातका अतिरेक हो जाता है, तब उसका परिणाम भी वैसा ही होता है। जोशके जाते ही क्षीणताने अपना साम्राज्य इतना बढाया कि, बेहोशी ही ला दी। श्यामा अवश्य ही वहासे नहीं हिला। उसने पानीका प्रयोग फिर किया। सूर्या-जीकी स्त्री अपने बच्चेको लिये हुए, उसकी ओर देख देखकर, हँस रही थी। यह क्या हो रहा है, इसका उसे कुछ ज्ञान ही न था। वह बिल-कुल पागल हो रही थी। श्यामा, जब कि सूर्याजीके मुखपर पानी छिडक रहा था, कुछ बूँदे उस युवतीके शरीरपर जाकर पड़ी। उनके पडते ही—"अरे, अरे, यह क्या! आग लग गई! चिनगारियाँ उडा!" कहकर वह वहासे तुरन्त ही चलती बनी। उस समय श्यामाको यही न सूझने लगा कि, अब वह उस स्त्रीके पीछे जावे, अथवा सूर्याजीको होशमे लावे। किन्तु इतनेमें सूर्याजीने आँखें खोल दी, और श्यामाको देखते ही कहने लगे, "अरे छोकरे, तू अभी गया नहीं? जा, तुरन्त ही उसे लेकर, जहाँ मैने बतलाया, जा। जिससे मेरी आँखोके देखते मुसल्मान लोग आकर उसका अपमान न करने पावें। जा, चला जा।"

"आप इस तरहसे पड़े हुए हैं, मैं आपको अकेले छोड़कर कैसे जाऊँ? यह हो कैसे सकता है?" श्यामा एकदम उनसे कहता है, "आपको इस प्रकार छोड़कर मैं कभी नहीं जाऊँगा।"

"अरे, मेरी चिन्ता न कर। मेरे विषयमें अब चाहे जितनी चिन्ता की जाय, मैं जी नहीं सकता। वह पागल हो गई, अपने भानमे नहीं है, सो भी एक तरहसे अच्छा ही हुआ। मै मरूँगा। मुझे कोई बहा देगा ही! ऐसा ही कोई मुझे बहावे तो ठीक! शिलानदीके यहाँ

रहकर जो मनुष्य अपने व्रतको भूल गया है, उसका अन्तिम संस्कार अच्छी तरह होना ही क्यों चाहिए? जा, जा। मैं तुझसे बार बार कहता हूँ, श्यामा, जा। तू जितनी ही देर अब यहाँ रहेगा, उतनी ही जल्दी मैं मरूँगा। तू जा; और उसे लेजा। मेरी दृष्टिके आगे अब तू मत रह। वह कटार ले। वह तावीज रख ले। जा, उसी जगह, जहाँ बतलाया, और फिर नानासाहबसे मेरा सन्देशा कहना न भूलना।"

इसके आगे सूर्याजीके मुखसे कोई शब्द नहीं निकला, और वे ऐसी दृष्टिसे श्यामाकी ओर देखने लगे कि, जिससे श्यामाने यह समझा कि, अब आगे यदि हम रहेंगे, तो इनके लिए अच्छा नहीं है। उसने सोचा कि, हम रहेंगे तो इन्हींके लिए अवश्य, पर इसमे यदि इनको अच्छा नहीं लगा, तो फिर हमारे उस रहनेसे क्या लाभ? यह सोचकर वह उठा। इसके अतिरिक्त उसके मनमें यह विचार भी आया कि, इनका बतलाया हुआ काम करके फिर आवें, और फिर इनके पास बैठें; तो क्या हानि? यह सब सोचकर वह वहाँसे चलनेही वाला था कि, सूर्याजीने फिर उसे इशारा किया कि, "पानी दे।" इशारा पाकर श्यामा तुरन्त ही उनके होंठोके पास पानी ले गया, परन्तु वे पीने ही न लगे, बल्कि यह इशारा किया कि, लोटा पूरा-पूरा हमारे हाथमें दे दे, और वे लोटा अपने हाथमें लेने भी लगे। श्यामा अब इस विचारमे पड़ा कि, लोटा इनके हाथमें देवें या न देवें। अन्तमें लोटा उसने उनके हाथमें दे दिया। उसके हाथमें आते ही सूर्याजी श्यामाको जोर जोरसे इशारा करने लगे कि, "अब तू जा, जा!" साथ ही होठोंपे कुछ खुस-फुसाये भी। ऐसा जान पड़ा कि, उपर्युक्त अर्थके ही शब्द उन्होंने कहे भी। श्यामाने देखा कि, अब हमारे यहाँ रहनेसे कोई लाभ नहीं। अतएव अब वह दरवाजेके बाहर पैर रखनेही वाला था कि, इतनेमें सूर्याजीने फिर उसे अपने बिल्कुल पास आनेका इशारा किया। उसके पास आते ही उन्होंने उसके कानको बिल्कुल अपने मुँहके पास लानेका संकेत किया। अब कुल बातचीत केवल इशारोंमे ही होने लगी थी बोलनेकी शक्ति ही न थी। किन्तु जो कुछ इस समय उन्हें कहना था,

सो इशारोंसे कहने योग्य नहीं था, कमसे कम इशारोंमें बतलाकर समझाने योग्य तो नहीं था। श्यामा अपना कान उनके होठोंके पास ले गया। उस समय ये अक्षर उसके कानमें पड़े,—"तावीज और कटार किसी दूसरेके हाथ न लगने देना। नाना साहब जबतक न मिलें, कटार तू अपने ही पास रखना। तावीज यदि बुड्ढा मांगे, तो उसको देना, अथवा तू अपने ही हाथसे मेरे बच्चेके गलेमें बाँध देना। और जो कुछ करना होगा, सो सब वह बुड्ढा ठीक ठीक करेगा। कर्मधर्म संयोगसे यदि वह अच्छी हो जाय तो · · किन्तु मेरे मरनेपर यदि वह नहीं अच्छी हो, तो ही अच्छा! क्योंकि यदि वह अच्छी हो जायगी, और उसे यह मालूम होगा कि, मैं मर गया, तो·· · तो · · न जाने अपना वह क्या कर डाले!"

"किन्तु आप बार बार मरनेकी बात क्यों करते हैं?" आप मरेंगे नहीं। आप शान्तिसे रहें। मैं अभी आपका बतलाया हुआ काम करके, और लौटते समय किसीको लिये आता हूँ। फिर आपके घावोंको बांधकर आपको अच्छा करता हूँ। सूर्याजीका चेहरा उस समय क्षण-क्षणपर स्याह पड़ता जा रहा था, परन्तु श्यामाके उपर्युक्त वचन सुनकर, उनके उस क्षण-क्षणपर स्याह होते हुए चेहरेपर भी, मृदु हास्यकी एक झलक दिखाई दी, फिर ये शब्द श्यामाके कानमें आये,—"अरे, अब मेरे जीनेकी आशा!" श्यामा मानो उन शब्दोंका ठीक ठीक अर्थ ही नहीं समझ सका। आगे वह और भी कुछ कहनेवाला था कि, इतनेमें सूर्याजीरावकी आँख मुँदी—हाँ, वे हाथोंसे बराबर "जा, जा, जा।" का इशारा करते रहे। श्यामाने अब आगे पीछे कुछ नहीं देखा, और वहाँसे एकदम चलकर सूर्याजीकी पत्नीको ढूँढ़ने लगा। अवश्य ही अब वह उस मुसलमान सिपाहीके किये हुए अपमानके कारण बेहोश होकर पागल हो गई थी।

महलोंमें जिस समय, चारों ओर गड़बड़ी मची, सूर्याजीकी पत्नी अपने कमरेमें अपने बच्चेको दूध पिलाती हुई खिला रही थी, और सूर्याजीका रास्ता देख रही थी कि, अब वे पानका बीड़ा खानेको आते

होंगे। किन्तु अचानक ही चारों ओर कोलाहल मच गया। जिसे सुनते ही उसने वाहरकी ओर दृष्टि डाली, तो "मारो-काटो, पकडो, तोवा तोवा !" की ध्वनि चारों ओर सुनाई दी। मुसल्मान लोग प्रत्येक चौकके सब कमरोंमें घुस रहे थे, और उस स्त्रीके श्वसुर और पतिका नाम लेकर चिल्ला रहे थे, और कह रहे थे—"कहाँ हैं साले, वदमाश ? पकड़ो जल्दी !" इस सारी गडवडीका वह कुछ भी कारण समझ न सकी। अभी हालहीमें उसके बच्चा पैदा हुआ था, जिसके वाद बीचमें वह कुछ बीमार होकर, अब अच्छी होने लगी थी। उसका पति तो उसका सर्वस्व ही था। इसलिये जब उसने देखा कि, उसकी जानपर अब कोई भयकर सकट आनेवाला है, तब वह अत्यन्त घबड़ाई, और यह सोचा कि जहाँ हमारी सास, ननँद और श्वसुर इत्यादि लोग हैं, वहाँ जाकर पतिका पता लगाना चाहिये। यह सोचकर वह अपने बच्चेको रोता हुआ छोडकर वाहर निकली, किन्तु अभी वह अपने कमरेके दरवाजेसे वाहर पैर रखनेहीवाली थी कि, पीछेसे उसकी दो दासियोंने उसको पीछे खींचनेका प्रयत्न किया। उन्होंने वारम्वार उससे यही कहा कि, "तुम इस समय वाहर न जाओ। वाहर जाओगी, तो तुमको वे पकड़ ले जायँगे। वह दुष्ट यवन आ गया है। अभी-अभी उस दुष्टको मैंने देखा है।" यह कहकर उन्होंने उसका हाथ पकड लिया, अंचल खींचा, परन्तु वह निकल ही गई। एक चौकमे वह अभी दूसरे चौकमे गई थी कि, इतनेमें, जैसाकि पिछले परिच्छेदमे वतलाया, उस चाडाल शिखानष्टकी दृष्टिमें वह पड गई। वस, वह "अहा हा ! मेरी जान ! यही है मेरी विजली !" कहकर उसके पीछे लगा। इतनेपर उस वेचारीकी क्या दशा हुई होगी, उसका पाठक ही अनुमान करें। जैसे कोई हिरनी भेडियोंके पजेसे छूटनेके लिए जी छोडकर भागती है, वैसे ही वह वेतहाशा भागती हुई अपने कमरेकी ओर गई। भेडियेने जव एक वार हिरनीको देख लिया—और विशेषत: उस हिरनीको कि, जिसके लिये वह वहुत दिनोंसे हजारों प्रयत्न कर रहा था, और फिर अचानक उस समय वह हाथ आनेवाली है—तब भला वह उसके पजेसे कैसे छूट सकती थी ? वह

उसके लिए उतावला हो रहा था। वह बराबर उसके पीछे ही पीछे, उससे भी अधिक वेगके साथ, छलाग मारते हुए दौडा, और एकदम उसके कमरेमे घुसा। उसकी दासियोमेसे एक दासी अपनी स्वामिनी और उस दुष्टके बीचमे आई। इसपर उस नरपिशाचने उसे झिड़ककर एक जीनेके नीचे अत्यन्त क्रूरतापूर्वक ढकेल दिया। इसके आगे उसकी क्या हालत हुई, सो उसे अधेको क्या मालूम? दूसरी दासी अवश्य ही वहाँसे तुरन्त सटक गई। अब वह अन्धा भीतर जाकर उस युवतीसे भिडने लगा। यह देखते ही उसका शरीर जल उठा। लगभग पन्द्रह-बीस मिनटतक बडे प्रयत्नके साथ आत्मसरक्षक किया, परन्तु अन्तमे यहाँतक नौबत आ गई कि, सन्तापके मारे चीख मारकर धड़ामसे वह नीचे गिर पड़ी, और बेहोश हो गई। इसके आगे जो कुछ हुआ, उसका वर्णन पीछे हो ही चुका है।

श्यामाने जब देखा कि, सूर्याजी आँखें मूँदकर शान्त हो रहे, तब उनको वैसा ही छोडकर बाहर निकला, और इधर-उधर घूमकर उस स्त्रीको खोज करने लगा। उस समय वह इस चिन्तामे था कि, इस स्त्रीको मनाकर अब उसे घोड़ेपर कैसे बैठावें कि, जिससे वह चुपकेसे हमारे साथ चल देवे। सूर्याजीसे तो उसने कह दिया कि, अच्छा, जो काम आप बतलाते हैं, मै अभी किये आता हूँ परन्तु यह नहीं सोचा कि, घोड़े पर जीन कैसे कसेंगे, अथवा इस स्त्रीको बैठावेंगे कैसे? सूर्याजी-को भी शायद यह विचार नहीं सूझा कि, यह इतना छोटा छोकरा है—यह ये काम कैसे करेगा? किन्तु, कुछ भी हो, श्यामा पीछे हटनेवाला लडका नहीं था। उसने यही सोचा कि, आओ, पहले सूर्याजीकी स्त्रीका पता लगावें—बस, वह इधर-उधर घूमने लगा, परन्तु कहीं उसका पता न लगा। उसने बहुत ढूँढा, और अब ऐसा मालूम होने लगा कि, कोई जगह बाकी नहीं रही, जहाँ कि ढूँढा जाय। इतनेमें उसके कानोमे ऐसी आवाज आई कि, जैसे कोई अत्यन्त मधुर स्वरसे गाता हो। उस आवाजको वह भलीभाँति पहचान गया, और उसीको लक्ष्य करके चला। अन्तमें महलके पूजा गृहमें जाकर वह क्या देखता है कि, सूर्याजीकी स्त्री

देवताओंके सामने बैठी कभी हँसती, फिर रोती, बीचमें फिर हँसती और चुटकी बजाती हुई निम्नलिखित उलटा-सीधा गाना गारही है। उस स्त्रीने अपने बच्चेको देवस्थानकी सीढ़ियोंके पास, देवताओंके सामने, बैठा दिया था, और स्वयं उसके आगे चुटकी बजाती हुई अपने विचित्र गानेमें अत्यन्त निमग्न होरही थी। निस्सन्देह, उसके सम्पूर्ण कुटुम्बपर भयकर सकट आया था, जिसे जानकर उसे अपरम्पार दु.ख होना चाहिये था, परन्तु फिर भी वह, अपनी उस अज्ञानावस्थामें, अपना वह गाना गाती हुई उसीमें तल्लीन हो रही थी। वह गाना इस प्रकार था.—

पद

मसल गये सब मेरे फूल।
किसी दुष्टने पैरतले ये, कुचल मिलाये धूल॥ ध्रु० ॥
फुलवाड़ीसे चुनकर लाई, किया देव-उपचार।
किन्तु दुष्टने कुचल कुचलकर, इन्हें मिलाया छार॥ १ ॥
मालीसे लिवाकर इनको सिंचन किया सप्रेम।
बड़े जतनसे इन्हें बढाया, करके पूरा नेम॥ २ ॥
ताजे थे सब, कुम्हलानेकी, नहीं कभी थी आस।
किन्तु दुष्टने कुचल कुचलकर, किया सभीका नास॥ ३ ॥
चम्पा गया, जुही मुरझाई, कुम्हला गया गुलाब।
हाय! हाय! अब इन फूलोंमें, रही न कुछ भी आब! ॥४॥

यह गीत, बिलकुल तन-मन लगाकर, वह अपने ही आप दुहरा दुहराकर गारही थी। श्यामा उसका वह सुन्दर गाना सुनकर तल्लीन होगया। वह छोटा था, इसलिये उस स्त्रीके इस गीतका सच्चा स्वरूप उसके ध्यानमें नहीं आ सकता था। युवती बीच बीचमें चुटकी बजाकर हँसती जाती थी, फिर एकदम फूट फूटकर रोने लगती थी। फिर भी उसका वह उलटा-सुलटा गाना बन्द नहीं होता था। कभी कभी, बीचहीमें वह अपने बच्चेको गोदमें लेकर, लड़कोंकी तरह, चाई-माई

[illegible]

इक्कीसवां परिच्छेद

वट वृक्षके नीचे

उस स्त्रीको किसी प्रकार भी बाहर निकालना, बाहर निकालकर उसको घोड़ेपर चढ़ाना और फिर वहांसे उसे, जितना गुप्त रूपसे हो सके, दयाजीके बतलाये हुए स्थान तक ले जाना, इत्यादि बातें किसी साधारण पुरुषके लिये भी असम्भवसी ही थीं—फिर श्यामाके समान छोटे लड़केको यदि वे असम्भव जान पड़ी हों, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? अबतक जो कथानक लिखा गया, उसमें पाठकोंको कई बार मालूम हो चुका है कि, श्यामा एक छोटा सा लड़का था। इसके साथ ही साथ पाठकोंको यह भी परिचय मिल चुका है कि, वह यद्यपि शरीर और अवस्थामें छोटा था, परन्तु उसकी बुद्धि और उसका साहस किसी वीर धीर और साहसी पुरुषके समान था। फिर भी, इस समय जो अवसर उसके सामने आया था, वह बहुत ही विलक्षण था, और वह एक ऐसा अवसर था कि, जिसमें उसका मन घबड़ा सकता था। वह युवती यदि इस समय अपने होशमें होती, तो पतिकी उस भयंकर दशाके कारण शोकातुर होकर वह आकाश पाताल एक कर डालती। परन्तु, फिर भी, उस दशामें, एक बार उसे समझा-बुझाकर, गुप्त रूपसे वहांसे उसे ले जा सकते थे किन्तु उसकी वर्तमान दशामें उसको समझाना-बुझाना, उसकी भयंकर स्थितिका उसको ज्ञान कराना, और यह

बात उसके मनमें जमा देना कि, इस समय यदि तू जल्दी नहीं चलेगी, तो कैसा भयकर मौका तुझपर आनेवाला है, इत्यादि बातें बहुत ही असम्भव थीं। जैसाकि पिछले परिच्छेदमें बतलाया, इस समय उसे बिलकुल सुध-बुध नहीं रही थी, वह अपने भानमें नहीं थी। हाँ, उसके पास उसका जो बालक था; जो गीत वह गाती थी, और जो विचार उसके मनमें आते हों—बस, इतनी ही बातोंके विषयमे शायद उसको कुछ ज्ञान हो, तो हो! और बाकी बाह्य सृष्टिका ज्ञान तो उसे बिलकुल ही नहीं था। कभी वह अपने बच्चेको देवताओंके सामने रखकर ताली और चुटकी बजाती, कभी उस बच्चेको ही दोनो हाथोंसे ऊपर उठाकर जोरसे चाई-माई घूमते हुए खूब हँसती, कभी उपर्युक्त गीतका कोई अन्तरा अथवा अन्तरेका कोई भाग गाती, कभी एकाएक रोने लगती, और कभी कुछ बकने-झकने लगती। यह सब देखकर वह छोटा-सा छोकरा, किसी बडे मनुष्यकी तरह, अपनी ठुड्डीपर हाथ रखकर, चिन्तापूर्वक, खडा रहा। पहलेपहल तो उसे यह सब दशा देखकर थोड़ीसी हँसी भी आई। परन्तु वह छोकरा; ऐसे अवसरोंपर, केवल हँसनेके लिए ही पैदा नहीं हुआ। इसलिए बहुत जल्द उसे इस बातकी चिन्ता हुई कि, सूर्याजीका बतलाया हुआ कार्य किस प्रकार पूर्ण किया जाय। अपने उस छोटेसे मस्तिष्कमें अब वह इस बातका विचार करने लगा कि मैं अपना उक्त कर्तव्य निर्विघ्न रूपसे पूर्ण कैसे करूँ।

सारे महलमें, घायल होकर मरे हुए, अथवा ऐसे लोग, जो मरने-पर आरहे हैं, जहाँ-तहाँ पडे हुए हैं। एक युवती पागल होकर अपने बच्चेको लिये हुए हँसती-रोती है; और श्यामा अकेला वहाँ चिन्तामें खडा है। बस, इनके अतिरिक्त और किसी प्राणीकी वहाँ आहट भी नहीं मिल रही है। यह दशा तो देखिये। बस्तीका अथवा महलका ही यदि एक भी मनुष्य इस समय वहाँ सहायताको उपस्थित होता, तो बहुत अच्छा हुआ होता, पर इसकी कोई आशा नहीं दिखाई देरही थी कि, कोई वहाँ आवेगा। इसलिए श्यामा बडे कष्टके साथ वहासे चला, और घुड़सालकी ओर जाने लगा। मार्गमें वह सोचता जाता था कि,

[illegible] 'पागल' [illegible] था। उसे उस युवतीकी सच्ची दशा-का पता [illegible] थी। आजतक सिर्फ उसने एक ही पागल स्त्री देखा था। और वह थी उसके गाँवकी एक बुढ्ढी। किन्तु उसका पागलपन कुछ दूसरे ही प्रकारका था। अस्तु।

वह चिन्ता करता हुआ घुड़सालकी ओर गया। वहाँ लगभग सौ-सवा सौ घोड़े, बँधे थे और कमसे कम इतने ही घोड़ोंके स्थान खाली पड़े थे। ऐसा जान पड़ा कि जैसे कोई छोड़ लेगया हो। परन्तु मनुष्य वहाँ एक भी दिखाई नहीं पड़ा। श्यामा चारों ओर खोजकर थक गया। मराठे बारगीरोंके वे घोड़े, जिनको सदैव ही मनुष्योंके निकट रहनेकी आदत थी, उस समय वहाँ एक भी मनुष्यके न रहनेके कारण, चकित-से हो रहे थे। पास पासके घोड़े गर्दन फटकारकर एक दूसरेकी ओर देखते हुए जोर जोरसे फुदक रहे थे, और अत्यन्त अशान्तिके साथ अपने अगले खुरोंसे नीचेकी जमीन खुरचना चाहते, तथा पिछले पैर फटकार फटकारकर पिछाड़ी छोड़नेके लिये प्रयत्न कर रहे थे। मानो उनको, वहाँ न रहनेवाले अपने साथियोंकी यादसी आरही थी, और इसी कारण मानो वे इस बातके लिए तड़फड़ा रहे थे कि चलो, जिस मार्गसे वे गये हैं, उसीसे हम भी जावें। पर उन बेचारोंको क्या मालूम कि, उनके साथियोंपर सवार होकर जो कितने ही बारगीर वहाँसे चले गये हैं, वे केवल अपने कर्तव्यसे च्युत होकर अपने स्वामीकी, उस संकटसे रक्षा न करते हुए, अपने प्राण लेकर भाग गये हैं? और सच-

मुच ही यदि उन घोड़ोंको यह बात मालूम होती, तो वे कभी अपने स्थानसे हिलते भी नहीं, इसका हमें विश्वास है।

श्यामाने चारों ओर बड़े गौरसे देखा। देखते-देखते उसकी दृष्टि एक छोटेसे टट्टू पर पड़ी और वह उस टट्टूको देखते हुए क्षणभर खड़ा रहा। उसके मनमें अपने विषयमें कुछ महत्वाकाक्षाकासा विचार आया। उसने सोचा कि, यह छोटासा घोड़ा मेरे लिए बहुत भला दीखेगा। यह यदि मुझको मिल जाय, और एक छोटीसी तलवार भी मेरे योग्य मिल जाय, तो क्या ही अच्छा हो! इतनेमें उसने अपनी कल्पनासे यह भी देखा कि, जैसे वह उस घोड़ेपर सवार हो, और अपने ही योग्य अत्यन्त सुन्दर ढाल तथा तलवार भी हाथमें लिये हो। फिर उसको यह स्मरण आया कि, सूर्याजीने कहा था कि, यदि मैं जीवित रहता, तो तुमको अपने लड़केके तौरपर रखा होता। इस बातके मनमें आते ही उसे कुछ दुःखसा हुआ। किन्तु इस प्रकारके विचारोंमें उसने अपना समय नहीं गमाया, अथवा यों कहिये कि, उसको ऐसे विचारोंमें समय गमानेके लिए अवकाश ही न था। क्योंकि बहुत जल्द—जबकि वह विचारोंमें निमग्न खड़ा हुआ वहाँ उन घोड़ोंकी ओर देख रहा था—उसे ऐसा भास हुआ कि, जैसे आसपाससे किसी मनुष्यकीसी आहट आई हो। तुरन्त ही उसने अपने कानोंको सावधान करके आहट ली। तो सचमुच ही स्पष्टतया उसे सुनाई दिया कि, कई मनुष्य बोल रहे हैं। किन्तु यह बात उसके ध्यानमें न आई कि, वे मनुष्य हैं कहाँ। उसको उस समय सिर्फ यही जानकर कुछ धीरजसा आया कि जो कुछ हो, चलो, मनुष्य पास तो हैं! और अब हमको जो कुछ करना है, उसमें कुछ सहायता मिलेगी, यह सोचकर वह कुछ आनन्दित हुआ। बस, तुरन्त ही, इस बातकी खोज करनेके लिए कि, ये मनुष्य कहाँ हैं, वह इधर-उधर देखने लगा। इतनेमें उसे यह भास हुआ कि, वहाँ एक ओर जो घासका बड़ा भारी गंज लगा था, उसके अन्दरसे एक मनुष्य कुछ झाँककर देख रहा है। अब सूर्यास्तका समय हो गया था, और घुड़साल भी चूंकि बिलकुल एक ओर थी, इसकारण बहुत अँधेरासा हो रहा था,

अतएव श्यामाको इस बातका विश्वास न हुआ कि, जिसे उसने देखा, वह मनुष्य ही है ? तथापि धीरज धरकर वह उस घासके गञ्जकी ओर चला। और जिस जगह उसने मनुष्य देखा था, वहा जाकर एकदम पूछता है कि, "कौन है रे !" यह सुनते ही एक मनुष्य उस गञ्जमे फिर सिर निकालकर चुपकेसे बाहर देखने लगा, और ज्यो ही देखा कि, "कौन है रे !" कहनेवाला एक छोटासा लड़का ही है, त्यो ही उसका वह जोश, जो अभीतक उस घासके गजमें ही दबा हुआ था, बाहर निकल पड़ा, और यह कहता हुआ कि, "यह तेरा बाप है !" वह मनुष्य एकदम बाहर निकल पड़ा, और श्यामाको मारने दौड़ा। श्यामा दो कदम पीछे हट गया सही, परन्तु बहुत जल्द फिर उस मनुष्यको पहचान कर वह उससे बोला, "कौन है ? हरबा नायक ! अभी तुम्हारा जोश कहा था ? सारे महलोमें इतना भारी उपद्रव मचाकर यवन तुम्हारे मालिकको कैद कर लेगये, सूर्याजीराव मारे गये, महलोमें लाशोके ढेर लगे हैं, उस समय तुम कहाँ गये थे ? इस घासके गजमे ?"

उस छोटेसे लड़केके ये हृदयवेधक शब्द कानोंमे पड़ते ही हरबा नायकके गलमुच्छे खड़े होने लगे, और उसने अपने नथुनोको विचित्र तरहसे फुलाकर अपना बायाँ हाथ श्यामाको पकड़ने और दाहिना हाथ उसके मुँहपर थप्पड़ जमानेके लिए आगे बढ़ाया। परन्तु श्यामा बड़ा उस्ताद था ! वह काहेको ऐसे भगोड़े सिपाहियोकी परवा करता ! बातकी बातमे वह एक ओर भग खड़ा हुआ, और जोरसे हँसकर बोला ! अजी हरबा नायक ! जरा सोचो तो सही ! सूर्याजीराव मरे पड़े हैं, देशमुख साहबको, बाई साहबको और बहनजीको पकड़ ले गये—अब महलमें रह गई हैं अकेली बेचारी भौजाई साहबा, और वह उनका छोटासा दुधमुँहा बच्चा ! और सूर्याजीराव हमको, तुमको दोनोंको यह अन्तिम काम बतला गये हैं कि, उनको अमुक नगर पहुँचा दो। स, यह अन्तिम आज्ञा तो, आओ, हम दोनो चलकर पूरी कर दें। सूर्याजीराव चले गये और इसपर तुमको कुछ भी तरस नहीं आता ?"

"सूर्याजी राव चले गये, और इसपर तुमको कुछ भी तरस नहीं

आता ?" ये शब्द उसके मुँहसे अभी पूरे-पूरे निकले भी नहीं थे कि, इतनेमें घासके उस गञ्जसे एक दूसरा मनुष्य घबराया हुआसा बाहर निकला, और श्यामाके बिल्कुल पास आकर उससे बोला, "क्या ? सूर्याजी राव चले गये ? कहाँ चले गये ?" श्यामा तुरन्त ही कहता है, "वे चले गये जरूर, परन्तु अब मौका नहीं है कि, इसका वृत्तान्त हम बतलाते रहें, और तुम बैठकर सुनते रहो। इस समय तो भौजाई साहबके प्राण बचाकर उनको सूर्याजीकी बतलाई हुई जगहमें पहुँचा देनेकी जल्दी करनी चाहिये। दो घोड़ोंपर जीन कसकर तैयार करो, मैं उनको लिये आता हूँ। तुम मेरे साथ चलो। हम दोनों ही उनको पहुँचा आवें। मार्गमें मैं तुमको सब वृत्तान्त बतला दूँगा। उनकी दशा अत्यन्त सोचनीय होरही है।"

श्यामाका यह सारा भाषण यहाँपर बिल्कुल स्वाभाविक रूपमे दिया गया है, परन्तु उसने इसको इतनी दीन वाणीसे कहा कि, उस निष्ठुर सिपाही हरबा नायकके मनपर चाहे इसका कुछ भी प्रभाव न पड़ा हो, किन्तु उस दूसरे मनुष्यको, और उसके पीछे पीछे गञ्जसे निकले हुए अन्य दो मनुष्योंको, बहुत ही दया आई, और हरबा नायक को तुरन्त ही पीछे हटाकर वे आगे आ गये, और फिर उनमेंसे एक मनुष्य श्यामासे पूछता है, "क्या महलोंमें कोई नहीं है ? एक चिड़िया भी नहीं है ?"

श्यामाने ज्यों ही "नहीं" कहकर उत्तर दिया, त्यों ही वह कुछ सचिन्त दिखाई दिया, और फिर बोला, "किन्तु क्या यह निश्चित है कि, महलोंके आसपास बादशाहका पहरा नहीं है ? यदि हम जाना चाहें, तो क्या बिल्कुल गुप्त रूपसे जासकते हैं ?"

यह प्रश्न अबतक श्यामाके मनमें न आया था। उसको तो अभी-तक इस बातकी शंका ही न थी कि, गुप्त रूपसे बाहर निकलकर वह निर्विघ्न रूपसे, किसीको न मालूम होते हुए, अपने नियत स्थानपर पहुँच सकता है या नहीं। अभीतक तो वह यही समझता था कि महलोंमें जब कि कोई एक चिड़िया भी नहीं है, तब और कौनसा विघ्न

आवेगा, परन्तु जब उपर्युक्त कठिनाई उसके सामने उपस्थित की गई, तब उसे भी उसका महत्व मालूम हो गया। इसलिए वह तुरन्त ही उन दोनोंसे बोला, "फिर अब कैसा होगा ?" कुछ देरतक कोई भी कुछ नहीं बोला। इसके बाद उन दोनोंमेंसे एक व्यक्ति दूसरेसे गद्गद कंठ होकर कहता है, "शंकराजी नायक! अबतक जो कायरता दिखलाई, सो दिखलाई—किन्तु अब तो, आओ, अपना नमक अदा करें! मैं घोड़ोंपर जीन कसता हूँ। तुम जाओ, और चुपकेसे देख आओ कि, महलोंके आसपास पहरा है अथवा नहीं, और यदि है, तो कहाँ कहाँ। जो कुछ होना हो, सो हो, हम आठ आदमी हैं, भौजाई साहबको नियत स्थानपर पहुँचा दें, और फिर चाहे इस कामके लिये एक दोको मरना भी पड़े, तो मर जायँ।"

इतना कहकर वह उनके पीछेसे आये हुए एक दो आदमियोंसे कहता है, "जाओ जी, जाओ, तुम इस लड़केके साथ जाओ, और बाईसाहबको ले आओ।" यह कह कर वह तुरन्त ही घोड़ोंकी ओर चल दिया। महलोंके आसपास पहरा कहाँ कहाँ है, इसकी जाँच करनेके लिए दूसरा आदमी भी चला। हरबा नायक अपने गलमुच्छे फुलाते हुए जहाँका तहाँ ही खड़ा रहा। अन्य दो आदमी तथा श्यामा, महलोंमें जाकर, भोजाई साहबाका पता लगाने लगे। परन्तु विचित्रता यह कि, उनका वहाँ कहीं पता ही नहीं था!

श्यामाने ज्यों ही यह देखा कि, भोजाई साहबाको, जहाँ हम छोड़ गये थे, वहाँ वे अब नहीं हैं, त्यों ही उसने अपने साथियों-सहित चारों ओर उनको खोजना शुरू किया, पर कहीं पता न लगा। इसलिए उन्होंने सोचा कि, अब एक तरफसे सारा महल ढूँढ़ना चाहिये, और [illegible] राव जिस कमरेमें पड़े हैं, उसको अवश्य देखना चाहिये, क्योंकि शायद वे उसी ओर गई हों। यह सोचकर वे उसी कमरेकी ओर [illegible] ही थे कि, इतनेमें आगेके चौकमें एक बड़ा कोलाहल उनके कानोंमें सुनाई दिया। कोलाहलकी भाषा मुसल्मानी थी, इससे श्यामा और उसके दोनों साथियोंने यह समझा कि, भोजाई साहबा शायद उधर [illegible]

इसीसे यह कोलाहल मचा हुआ है। इसलिए श्यामाने सोचा कि, अब इस कोलाहलकी ओर चलकर ही इसका पता लगाना हमारा कर्त्तव्य है। अतएव वह अपने दोनों साथियोंसे उस ओर चलनेका आग्रह करने लगा; पर उसमेंसे एकहीने उसका साथ दिया। दूसरा पीछा पड़ने लगा। श्यामाने समझा कि, यह समय एक दूसरेकी निन्दा करने अथवा एक दूसरेसे चिल्लानेका नहीं है, अतएव वह स्वयं और उसका एक साहसी साथी, दोनों उस कोलाहलकी ओर आगे बढ़े। परन्तु उनको इधर-उधर बहुत घूमना नहीं पड़ा, क्योंकि अभी वे सिर्फ दो ही कदम आगे बढ़े होंगे कि, लगभग दस आदमी हाथमें जलता हुआ पलीता लिये हुए, उनकी ओर आये। इन दसमेंसे पाँच-छ मुसल्मान थे। सिर्फ चार ही मराठे दिखाई पड़े।

"देखिये तो, कैसी विचित्रता हुई—हम लोग अभीतक इसी आशासे जा रहे थे कि, अब आते होंगे, पर जब मुक़ाम बिलकुल नज़दीक ही आ गया, और फिर भी जब उनका कोई पता नहीं लगा, तब हमको वापस भेज दिया। घोड़ोंको हम लोगोंने कितना मारा, और वे भी खूब वेगसे आये।" बस, इसी प्रकारकी बातचीत वे आपसमें कर रहे थे। महलके दरवाजेपर आकर उनमेंसे एक व्यक्तिने तीन पहरेदार सिपाहियोंसे प्यारेखाँका समाचार पूछा, परन्तु उन पहरे-दारोंने सिर्फ इतना ही कहा कि, "हमको कुछ मालूम नहीं है। हम तो पहरेकी जगह छोड़कर अपने स्थानसे हिले भी नहीं, बाहरका कोई आदमी भीतर नहीं गया; और न भीतरका बाहर आया।" फिर प्यारे-खाँ कहाँ गया? पहरेवाले तो यह समझकर भीतर नहीं गये कि, शायद हम अकेले-दुकेले भीतर गये, और वहाँ कोई आदमी छिपे बैठे हों, तो अवश्य ही वे हमें मार डालेंगे। इधर गाँवके आदमी दरवाजेके पास आ आ करके भी यह समझकर पीछे लौट जाते कि, ये तीन बड़े ज़बर-दस्त मुसल्मान सिपाही पहरेपर बैठे हैं, हम यदि पास जायगे, तो न जाने ये क्या कर डालें! बस, यही हाल उस समय महलोंके आसपास था, और इसी कारण महलकी पिछली ओरसे श्यामाको भीतर घुसनेका

मौका मिल गया था। अन्य लोगोंको यह भय था कि, महलके चारो ओर ऐसा ही पहरा होगा। निस्सन्देह कुछ थोड़ेसे लोगोंके मनमें ये प्रश्न अवश्य उठे कि, देशमुख साहबको एकाएक पकड़ ले जानेका कारण क्या है? तथा भीतर जो लोग जीवित रह गये थे, उनकी दशा क्या हुई होगी? किन्तु भयके मारे कोई अपने घरसे निकला नहीं। हाँ, घरमें बैठकर उस दिनकी घटनापर इधर-उधरकी बातें करनेमें कोई हानि नहीं थी, सो सभी लोग वैसा कर रहे थे। परन्तु वह बातचीत भी बिलकुल गुपचुप हो रही थी। शायद बातचीत करनेवालोंके मुखसे कभी कोई शब्द होंठोंके बाहर भी निकल आता हो, तो हम नहीं कह सकते!

वे नवीन लोग प्यारेखाँको ढूँढ़नेके लिए आये थे, यह स्पष्ट था। अब श्यामा और उसके साथीके मनमें यह आया कि, इन लोगोंने यदि हम दोनोंको देख लिया, तो न जाने क्या कर डालेंगे। श्यामाको तो यह मालूम ही था कि, उस मुसल्मान सिपाहीकी, जिसको उसने घायल किया था, अब क्या दशा हुई होगी। उसके मर जानेमें अब श्यामाको अणुमात्र भी शंका न थी। अब उस लड़केकी यही प्रबल इच्छा हो रही थी कि, देखें, उसको मरा हुआ देखकर इन लोगोंकी क्या दशा होती है, और ये क्या करते हैं! श्यामाने ज्यों ही यह देखा कि, उन लोगोंके बीचमें सूर्याजीरावकी स्त्री नहीं है, तब उसको कुछ सन्तोषसा हुआ। क्योंकि उसको इस बातकी चिन्ता थी कि, वह न जाने कहाँ चली गई—उसके मनमें यह भी आया था कि, कहीं अगले दरवाजेसे वह बाहर न निकली हो, और इन लोगोंके हाथमें सहज ही फँस गई हो। किन्तु यह भय अब दूर हो गया—अब उसे सिर्फ अपने विषयमें ही भय उपस्थित हुआ। उसने ज्यों ही देखा कि, ये लोग पलीता आगे लिये हुए आ रहे हैं, त्यों ही उसने एक अँधेरा आश्रय लिया, और अपने साथीको भी वैसा ही करनेका इशारा किया। किन्तु कुछ लाभ न हुआ। उन लोगोंमेंसे एक व्यक्तिकी नजर उसके साथीपर पड़ ही गई, और उसने कड़ककर पूछा, "कौन है रे! हरामजादे?" यह सुनते ही उस बेचारेकी बड़ी बुरी हालत हो गई। भयके मारे वह

काँपने लगा, और "म·· म—मैं—मैं·· " करते हुए वह कुछ बोलने-का प्रयत्न करने लगा। इतनेमें एक मुसल्मानने उसके मुँहमें थप्पड़ जमा दी, और जूतेकी ठोकरसे उसे नीचे गिरा दिया। श्यामा जिस खम्भेके ओटमें खड़ा था, उस खम्भेपर आगेके पलीता पकड़नेवाले मनुष्यकी छाया पड़ गई थी, इस कारण उसपर किसीकी नज़र नहीं पड़ सकती थी। उस महलके वे पुराने चौकोंने बड़े-बड़े खम्भे श्यामाके समान लड़केके छिपनेके लिए काफी थे। श्यामाका वह साथी जब ·· की ठोकरसे नीचे गिरा दिया गया, तब वह और भी अधिक घबड़ा गया; और उस बेचारेको उठनेकी शक्ति ही न रही। अवश्य ही उसको उन यवनोंकी और भी कुछ ठोकरें खानी पड़ीं। सभीने एक एक लात जमाई। बेचारा कर ही क्या सकता था? उसकी यह दशा देखकर श्यामाको उन यवनोंपर अत्यन्त क्रोध आया। परन्तु उस क्रोधसे लाभ क्या? वह अपने साथीको बचा नहीं सकता था। यही बड़ा कुशल हुआ कि, वह अपने लड़कपनके क्रोधके वशीभूत होकर आगे नहीं बढ़ा, अन्यथा उन क्रूर यवनोंने उस लड़केको भी उसके साथीकी तरह, कुचलनेमें कोई कसर न की होती।

अस्तु। इस प्रकार जब उन लोगोंने उस आदमीको खूब मारपीट लिया, तब फिर उन्होंने उसे उठाकर खड़ा किया; और उससे पूछने लगे कि, तू कौन है, कहासे आया, इत्यादि। कोई कहता कि, यह महलको सूना देखकर यहाँ चोरी करनेके लिए आया। कोई कहता, नहीं, यह महलका ही कोई नौकर है, इसको यहाँका जवाहिरात और सोना इत्यादि सब मालूम होगा, कि, कहाँ क्या रखा है, सो आओ, हम लोग इससे उसका पता लगावें; और यदि यह न बतलावे, तो इसके शरीरमें पलीता लगाकर हम लोग स्वयं सब ढूँढ़ ढूँढकर ले जावें। कोई कहता, हम, पहले, जिस कामके लिए आये हैं, उसको तो कर लें। इस प्रकार वे सब आपसमें कहने सुनने लगे। इतनेमें उनका नायक उनकी ओर एकदम डपटकर बोला, "हमको समयपर खबर पहुँचाना चाहिये, नहीं तो अच्छा नहीं होगा। क्या तुमको मालूम नहीं

कि, हमको किसकी खोजके लिये भेजा है? उसकी खोज करनेके पहले यदि तुम अन्य किसी काममे हाथ डालोगे, तो मैं एक एकको मार डालूँगा। अरे नीचो, तुम्हारे वे बाप अभी हालमें ही तो तुम्हारे हाथों सब माल-मसाला उठवा ले गये! अब यहॉ क्या रखा है?"

इतना कहकर उसने अपने पासके व्यक्तिकी गर्दनमें एक धक्का देकर उसे आगे बढाया, और श्यामाके उस साथीके मुँहमे भी एक जमाई, और कहा, "चल, आगे बढ। हमको महलके सब कमरे दिखला। तेरे बापका पता लगाना है।" यह सुनते ही सब लोग आगे बढे। श्यामा अपनी जगहसे खडा खड़ा यह सब दशा चुपके चुपके देख रहा था। उसके मनमें अब यही आया कि, जिस कमरेमें सूर्याजी पडे हैं, उस कमरेमे जाकर जब ये उनकी लाश देखेंगे, तब न जाने ये उनका क्या करेंगे? भौजाई साहबा भी यदि अपनी सनकमें कहीं महलोंके अन्दर ही इन्हें दिखाई पड़ गईं, तो न जाने उनका ये क्या करें? परन्तु उस समय इस विषयमें वह और कर ही क्या सकता था? आखिर उसने यही सोचा कि, आओ, चुपकेसे एक बार फिर हम इधर-उधर घूम लें, और भौजाई साहब कहीं मिल जाय, तो अच्छा हो, अन्यथा अकेले ही सूर्याजी रावके बतलाये हुए उस बटवृक्षके नीचे झोपडीकी ओर जाय, और उस बुड्ढेको यहॉका सब वृत्तान्त बतलाकर अपने घरको लौट जावें। बस, इसके अतिरिक्त और उसके हाथमे उस समय कुछ भी नहीं था। अपने इसी विचारके अनुसार अब वह उन मुसल्मान सिपाहियोंकी ओर न जाते हुए इधर-उधर घूमकर आहट लेने लगा, पर भोजाई साहबाकी उसे कहीं टोह नहीं लगी। मुसल्मान सिपाही एक कमरेसे दूसरे कमरेमें आ-जाकर प्यारेखॉको ढूँढ रहे थे। श्यामा उनकी भी आहट रखता ही था, और जबतक उनकी कोई विशेष गड़बडी नहीं सुनता था, तब तक यही समझता था कि, अभीतक इनको कोई नवीन बात दिखाई नहीं दी। कुछ देर बाद वे सिपाही उस कमरेमे पहुँचे, जहॉ प्यारेखॉ दोपहरको घायल होकर निश्चल रहा था। वहॉ जानेपर उनकी दृष्टि उसकी लाशपर गई।

'लाश' शब्दसे पाठकगण समझ ही गये होंगे कि, अब वह दुष्ट यवन मर चुका था। उसे देखते ही सिपाहियोंके नायकका सारा शरीर जल उठा। उसने बड़ा भारी कोलाहल मचाया। इधर श्यामाने अँधेरेमें चारों ओर आहट लेकर महलसे चले जानेका विचार किया। सिपाहियोंके उस कोलाहलसे उसे इस बातका भी पता लग गया कि, जिस दुष्टको उसने घायल किया था, वह समाप्त हो चुका। इसपर उसे थोड़ासा संतोष हुआ; और उसने इच्छा न होते हुए भी महलको छोड़कर बाहर जानेकी ठानी। शीघ्र ही वह वहाँसे निकल पड़ा, और पीछेके मार्गसे बिल्कुल चुपचाप घुड़सालकी ओर गया। वहाँ घोड़ोंको तैयार करके एक व्यक्ति खड़ा ही था, उससे उसने, सब वृत्तान्त बतलाकर कहा, "अच्छा, अब हम दो-तीन व्यक्ति यहाँसे उस वटवृक्षकी ओर चलें, और सूर्याजी रायके इच्छानुसार सिर्फ उनकी निशानी ही उस वृद्धको दिखलावें।" जो आदमी घोड़े पकड़े खड़ा था, वह पहले ही, सारा वृत्तान्त सुनकर, घबड़ा गया था। उसको श्यामाकी, यह—वहाँसे चल देनेकी—बात बहुत ही पसन्द आई। सूर्याजीका बतलाया हुआ मार्ग श्यामाको भली-भाँति मालूम नहीं था, इसी कारण उसे इस मनुष्यकी बड़ी आवश्यकता थी। दोनों घोड़ोंपर सवार हुए। मुसल्मान सिपाहियोंका वह कोलाहल, जो उन्होंने उस दुष्ट मुसल्मानकी लाशको देखकर मचा रखा था, बहुत दूरतक सुनाई दे रहा था। इस कारण उन दोनोंने वहाँसे चल देनेकी और भी शीघ्रता की। श्यामाको इस बातका बड़ा खेद रहा कि, भौजाई साहबा नहीं मिली, और हम चल दिये। किन्तु करता क्या? उसका कोई इलाज नहीं था।

श्यामा अभी अच्छी तरह घोड़ेपर बैठना नहीं जानता था। परन्तु सौभाग्यवश जिस घोड़ेपर वह बैठा था, वह सीधा था, इस कारण मार्गमें उसे कोई कष्ट नहीं हुआ। उसका साथी आगे चल रहा था; और श्यामा उसके पीछे।

अच्छा, अब हम श्यामाको तो, वटवृक्षकी ओर जाते हुए, कुछ देरके लिए, यहीं छोड़ दें, और उधर महलोंमें चलकर देखें कि, क्या

हुआ। ऊपर हम बतला ही चुके हैं कि प्यारेखाँकी लाशको देखकर उन मुसलमान सिपाहियोंने बड़ा गड़बड़ मचाया। खाँसाहब इतनी देरतक महलोंमें ही होंगे, इस बातकी उन्हें कल्पना भी न थी। वे यह समझते थे—कमसे कम उनका नायक तो अवश्य ही अपने मनमें समझता था—कि, खांसाहब सूर्याजी रावकी स्त्रीको लेकर, इसके बहुत पहले ही, किसी दूसरे मार्गसे निकल गये होंगे। क्योंकि उस नायकको यह भली-भाँति मालूम था कि, सूर्याजी रावकी स्त्रीपर उनकी दृष्टि थी। इसके सिवाय वह यह भी जानता था कि, सूर्याजीको तो पाँच सात जनोंने मिलकर पहले ही खतम कर दिया था, और अन्य लोग जब कि देशमुख तथा उनके कुटुम्बियोंको कैद करनेमें लगे थे, खान अकेले ही सूर्याजीके महलोंमें गये थे। ऐसी दशामें खानकी लाश जब अचानक उसकी दृष्टिमें पड़ी, तब क्या-क्या विचार उसके मनमें आये, इसका पाठक स्वयं ही अनुभव करें। सच तो यह था कि, वह अपने ऊपरके हाकिमकी आज्ञासे ही खानको ढूँढने आया था, और यह भी उसने सोच लिया था कि, खान यदि नहीं मिलेंगे, तो महलोंमें यथेच्छ लूट मचाकर अपना मतलब सिद्ध करेंगे। परन्तु यहाँ आकर जब उसने वह अनपेक्षित घटना देखी, तब उसे यही न सूझने लगा कि, अब क्या करें। उसने सोचा कि, अब खानकी लाश लेकर तो जाना ही चाहिए, परन्तु खानका जिन्होंने खून किया, उनका कुछ पता लगाये बिना, अथवा ऐसा कोई न कोई कार्य किये बिना कि, जिससे यह कहा जा सके कि, देखो, हमने उसका बदला लेनेके लिये ऐसा ऐसा किया—यहाँसे जाना बिल्कुल उचित न होगा। बस यही सोचकर वह कुछ देरतक चिन्ताक्रान्त होकर खड़ा रहा। इसके बाद उस क्रूर मनुष्यके मस्तिष्कमें कोई विचार आया, और तद-नुसार करनेका उसने निश्चय किया। दो आदमियोंको उसने बस्तीकी ओर दौड़ाया, और खानकी लाश उठा ले जानेके लिये अपने जात भाइयोंको बुलाया, और लाशको बाहर निकालते ही महलोंमें चारों ओरसे आग लगा देनेका विचार किया। उद्देश्य यह कि, जिससे यह हम कह सकें, कि देखो, जिस लोगोंने खानका वध किया, उनको हमने जला डाला।

मुसल्मानोंके मनमें जहाँ एक बार कोई भयकर बात आई कि, फिर उसको कर डालनेमें देर किस बातकी ? यों ही विवेक अथवा दयाका जहाँ लेश नहीं, वहाँ अपने शत्रुका घर जला देनेमें वह कहासे आवेगी ? महलोंमें चारों ओरसे आग लगा देनेका विचार उसके मनमें आये हुए अभी बहुत देर नहीं हुई थी कि, खानकी लाश बाहर निकाली गई; और बस्तीके लोगोंके देखते-देखते देशमुखके महलोंमें चारों ओरसे आग लगाकर वे लोग, "अलविदा-अलविदा" कहते हुए, वहाँसे चलते बने।

इधर श्यामा और उसका साथी, दोनों, कुछ ही समय बाद सूर्याजीके बतलाये हुए उस वटवृक्षके नीचे पहुँचकर उस वृद्ध मनुष्यसे मिले। जैसा कि सूर्याजीने बतलाया था, पहले तो वह बुड्ढा उन दोनोंको मारने दौड़ा, पर सूर्याजीकी निशानीको देखकर उसने उनको अपनी झोपड़ीके अन्दर बुला लिया, और सब हाल पूछा। वृतान्त सुनकर कुछ देर तो वह चिन्तामें बैठा रहा, पर फिर बहुत जल्द वह एकदम वेगके साथ उठा; और आप ही आप कुछ गुनगुनाकर उसने बडे जोरसे सीटी बजाई, जिसे सुनते ही एक काला कलूटा बडा जबरदस्त आदमी दूरसे आकर उसके पास खड़ा हो गया! बुड्ढेने उसके कानमें कुछ कहा, जिसे सुनते ही वह बाहर गया, और एक दम, श्यामा तथा उसके साथी के लाये हुए एक घोडेपर सवार होकर, घोड़ेकी भी छाती फट जानेवाले वेगके साथ, वहाँसे रवाना हुआ।

बाईसवां परिच्छेद

अग्निके मुखसे।

महलमें ज्यों ही चारों ओरसे आग लगी, त्यों ही, कुछ देर बाद, वह खूब धडाकेके साथ फैलने लगी। महल बहुत पुराना था। उसके खम्भों इत्यादिने न जाने कितना तेल और मसाला खाया था, इस कारण आग फैलनेमें बहुत देर नहीं लगी। सारे खम्भे दीपककी भाति जलने लगे। सारा काष्ठ जल जलकर, उसके धधकते हुए अगारे बनने

लगे। बीच बीचमे "धड़ाम" "धड़ाम" का भयंकर शब्द होता जाता था। ऊपरके काष्ठ जल जलकर नीचे आते, और वहा आकर अन्य ज्वालाग्राही पदार्थो'को अपना तेज प्रदान करते। दूरमे देखनेवालोंको तो यही जान पडता कि, जैसे सारी बस्ती ही जल रही हो। वायु भी मानो यह समझकर ही कि, जैसे इस महलके स्वामियो'को यातना सहनी पड़ी, वैसी ही इसको न सहनी पडे, बडे वेगसे बहने लगी, और उस महलको बहुत शीघ्र "आत्म-रक्षा" करनेके लिये सहायता पहुँचाने लगी। हवा एक बार जहा चल गई, फिर पूछना ही क्या है—सम्पर्ण महलके आस-पास ज्वाला घूमने लगी—मानो अग्निनारायणने अपने तेजका चक्र ही उस महलके आस-पास चला रखा है, और यवनो'के कष्टसे उसे मुक्त करनेके लिये अपने अधिकारमें कर लिया है। महलकी किसी ओरसे भी भीतर जानेका मार्ग अब नहीं रहा। सब दिशाओ के दरवाजो, खिड़कियों और झरोखो इत्यादिसे धुएँ और आगकी बड़ी बड़ी लपटें बाहरको निकलने लगी, और वह सारा महल मानो सहस्रदल कमलकी भाति दिखाई देने लगा। मुसल्मान लोग इस प्रकार अपना भयकर कार्य करके जब वहासे चले गये, तब बस्तीके लोग धीरे-धीरे महलके आस-पास एकत्रित होने लगे। परन्तु उस समय अग्निकी अवस्था उतनी प्रचण्ड नहीं हुई थी। यद्यपि किसी किसी तरफसे ज्वालाएँ खब निकलने लगी थी, परन्तु फिर भी, एक दो दिशाओंकी ओर कुछ शान्ति थी। आसपास जो लोग जमा हुए थे, वह कह रहे थे—"क्या भीतर कोई होगा?" कोई दिखाई तो नहीं देता!' 'यदि कोई होता, तो चिल्लाता!' इत्यादि। परन्तु "आओ, भीतर चलकर देखे" ऐसा किसीके मुखसे भी नहीं निकला। निस्सन्देह, बस्तीमे उस समय ऐसा एक भी मनुष्य न होगा कि, जिसे वह सब हालत देखकर दुःख न हुआ हो। प्रत्येक मनुष्य मन ही मन यह कहकर तड़फड़ा रहा था कि, "हाय! हाय! दुष्टोंने सत्यानाश कर दिया!" आज देशमुख साहबका सत्यानाश हो गया!" "हे ईश्वर, क्या कोई भी इन दुष्टोंको दण्ड देनेवाला उत्पन्न न होगा?" इत्यादि। प्रत्येक पुरुष अपने ही आप होंठ चबाते हुए क्रुद्ध

हो रहा था। प्रत्येक वृद्ध और युवती स्त्रियां हाथ मल मलकर मुसल्मानों को और उनकी हुकूमतको कोस रही थीं, बस्तीमें पानीकी भी कुछ अधिकता न थी, और महलकी आग कोई मामूली आग न थी, जिसको बुझानेमें थोडे पानीसे काम चल जाता। यही सब सोचकर मानों लोगोंने महलको बुझानेका कोई प्रयत्न नहीं किया। महल जबतक अच्छी तरह जल नहीं उठा, तबतक उन आग लगाने वालोंने भीतर किसीको घॅसने नहीं दिया, और जब वह चारों ओरसे खूब जलने लगा, तब किसीको उसके बुझानेका साहस ही न हुआ। जो हो, इसमें सन्देह नहीं, महल जलकर ख़ाक हो गया।

ऊपर बतलाया ही गया है कि महलके दरवाजों, खिडकियों झरोखों—और जहाॅ जहासे प्रकाश अथवा वायुके आने-जानेका रास्ता था—सभी जगहसे ज्वालाएॅ बाहर निकल रहीं थीं। और अब तो वायु-के झोंकोंके वेगसे वे इतनी भयंकर रीतिमे लपलपा रहीं थीं कि, यदि उस समय कोई एक-आध बेचारा प्राणी उस आगके बीचमे पड कर अपने छुटकारेके लिए रोता-चिल्लाता भी, तो किसीके कानोंमे उसकी आवाज भी न पडी होती। परन्तु क्या इस प्रकारसे रोने-चिल्लानेवाला उस समय वहाॅ कोई था? हाॅ, था। ऐसा जान पडता था कि, कोई उसके भीतर है। क्योंकि उन ज्वालाओंके सों-सों शब्दके भीतरसे और क्षण क्षणपर "धडाम-धड़ाम" करके नीचे गिरनेवाले प्रज्वलित काठोंके शब्दके भीतरसे भी, एक-दो अथवा तीन अत्यन्त दीन वाणीपूर्ण मानवी चीखें, स्पष्टतया सुनाई दे रहीं थीं, इसमें सन्देह नहीं। वे चीखें पहले तो मानो किसी गहरी जगहसे आरहीं थीं, परन्तु अब धीरे-धीरे वे बिल-कुल स्पष्टसी सुनाई देने लगी थीं। वे एक खिड़कीसे निकलनेवाली ज्वालाओंके साथ साथ बाहर निकल रहीं थीं, और किसी स्त्रीकी सी जान पडती थीं। आसपासके लोगोंको यह भी भास हुआ कि, उस स्त्रीकी चीखोंके साथ ही साथ किसी छोटे बच्चेकी चिल्लाहट भी सुनाई दे रही है। अब क्या कहना है! सभी लोग उस ओर एकत्रित होकर आपसमें शोक करने लगे। भीतर कौन है, यह कौन चीख़ रहा है, इस

लगे। बीच बीचमे "धडाम" "धड़ाम" का भयंकर शब्द होता जाता था। ऊपरके काष्ठ जल जलकर नीचे आते, और वहा आकर अन्य ज्वालग्राही पदार्थो'को अपना तेज प्रदान करते। दूरसे देखनेवालेको तो यही जान पड़ता कि, जैसे सारी बस्ती ही जल रही हो। वायु भी मानों यह समझकर ही कि, जैसे इस महलके स्वामियो'को यातना सहनी पडी, वैसी ही इसको न सहनी पडे, बड़े वेगसे बहने लगी, और उस महलको बहुत शीघ्र "आत्म-रक्षा" करनेके लिये सहायता पहुँचाने लगी। हवा एक बार जहा चल गई, फिर पूछना ही क्या है—सम्पूर्ण महलके आस-पास ज्वाला घूमने लगी—मानो अग्निनारायणने अपने तेजका चक्र ही उस महलके आस-पास चला रखा है, और यवनो'के कष्टपे उसे मुक्त करनेके लिये अपने अधिकारमे कर लिया है! महलकी किसी ओरमे भी भीतर जानेका मार्ग अब नही रहा। सब दिशाओके दरवाजो, खिडकियो' और झरोखो' इत्यादिसे धुएँ और आगकी बडी बडी लपटें बाहरको निकलने लगी, और वह सारा महल मानों सहस्रदल कमलकी भाति दिखाई देने लगा। मुसल्मान लोग इस प्रकार अपना भयकर कार्य करके जब वहासे चले गये, तब बस्तीके लोग धीरे-धीरे महलके आस-पास एकत्रित होने लगे। परन्तु उस समय अग्निकी अवस्था उतनी प्रचण्ड नहीं हुई थी। यद्यपि किसी किसी तरफमे ज्वालाएँ खूब निकलने लगी थीं, परन्तु फिर भी, एक-दो दिशाओंकी ओर कुछ शान्ति थी। आसपास जो लोग जमा हुए थे, वह कह रहे थे—"क्या भीतर कोई होगा?" कोई दिखाई तो नहीं देता।" 'यदि कोई होता, तो चिल्लाता।" इत्यादि। परन्तु "आओ, भीतर चलकर देखे" ऐसा किसीके मुखसे भी नहीं निकला। निस्सन्देह, बस्तीमे उस समय ऐसा एक भी मनुष्य न होगा कि, जिसे वह सब हालत देखकर दुःख न हुआ हो। प्रत्येक मनुष्य मन ही मन यह कहकर तडफडा रहा था कि, "हाय! हाय! दुष्टोंने सत्यानाश कर दिया!" आज देशमुख साहबका सत्यानाश हो गया!" "हे ईश्वर, क्या कोई भी इन दुष्टोको दण्ड देनेवाला उत्पन्न न होगा?" इत्यादि। प्रत्येक पुरुष अपने ही आप होंठ चबाते हुए कुढ

हो रहा था। प्रत्येक वृद्ध और युवती स्त्रिया हाथ मल मलकर मुसल्मानो को और उनकी हुकूमतको कोस रही थी, वस्तीमे पानीकी भी कुछ अधिकता न थी; और महलकी आग कोई मामूली आग न थी, जिसको बुझानेमें थोड़े पानीसे काम चल जाता। यही सब सोचकर मानों लोगोंने महलको बुझानेका कोई प्रयत्न नहीं किया। महल जबतक अच्छी तरह जल नहीं उठा, तबतक उन आग लगाने वालोंने भीतर किसीको धँसने नहीं दिया, और जब वह चारों ओरसे खूब जलने लगा, तब किसीको उसके बुझानेका साहस ही न हुआ। जो हो, इसमें सन्देह नहीं, महल जलकर खाक हो गया।

ऊपर बतलाया ही गया है कि महलके दरवाजों, खिड़कियों झरोखों—और जहाँ जहासे प्रकाश अथवा वायुके आने-जानेका रास्ता था—सभी जगहसे ज्वालाएँ बाहर निकल रहीं थीं। और अब तो वायु-के झोंकोंके वेगसे वे इतनी भयंकर रीतिसे लपलपा रही थी कि, यदि उस समय कोई एक-आध बेचारा प्राणी उस आगके बीचमें पड़ कर अपने छुटकारेके लिए रोता-चिल्लाता भी, तो किसीके कानोंमे उसकी आवाज भी न पड़ी होती। परन्तु क्या इस प्रकारसे रोने-चिल्लानेवाला उस समय वहाँ कोई था? हाँ, था। ऐसा जान पडता था कि, कोई उसके भीतर है। क्योंकि उन ज्वालाओंके सों-सों शब्दके भीतरसे, और क्षण क्षणपर "धडाम-धडाम" करके नीचे गिरनेवाले प्रज्वलित काठोंके शब्दके भीतरसे भी, एक-दो अथवा तीन अत्यन्त दीन वाणीपूर्ण मानवी चीखो, स्पष्टतया सुनाई दे रही थी, इसमें सन्देह नही। वे चीखें पहले तो मानो किसी गहरी जगहसे आरही थी; परन्तु अब धीरे-धीरे वे बिल-कुल स्पष्टसी सुनाई देने लगी थीं। वे एक खिडकीसे निकलनेवाली ज्वालाओंके साथ साथ बाहर निकल रही थी, और किसी स्त्रीकी सी जान पड़ती थीं। आसपासके लोगोंको यह भी भास हुआ कि, उस स्त्रीकी चीखोंके साथ ही साथ किसी छोटे बच्चेकी चिल्लाहट भी सुनाई दे रही है। अब क्या कहना है! सभी लोग उस ओर एकत्रित होकर आपसमें शोक करने लगे। भीतर कौन है, यह कौन चीख़ रहा है, इस

विषयमें अनेक लोगोंके अनेक तर्क वितर्क होने लगे। अनेक लोग यह भी कहने लगे कि, भीतर जो कोई हो, उसे बचाना ही चाहिये। परन्तु कहना एक बात है और तदनुसार साहस करके उसको कर दिखलाना दूसरी बात है। दोनोंमें बहुत अन्तर है। लगभग सौ-पचास आदमियोंके मुँहसे उक्त दयाके शब्द निकल रहे थे, पर अग्निके मुखमें प्रवेश करनेके लिये सिर्फ एक ही व्यक्ति आगे बढ़ा। भीतर जाकर इन प्राणियोंको बचाना चाहिए—इस बातका उसने निश्चय कर लिया और—"चाहे जो हो जाय, कहींसे मार्ग निकालकर भीतर घुसूँगा ही—फिर जो कुछ होना हो, सो हो"—इस प्रकारका साहसपूर्ण उच्च विचार उसके हृदयमें उपस्थित हुआ। उस समय अन्यकई लोगोंने उसे पीछे खींचा, किन्तु उसके मनने नहीं माना। उसने सोचा कि, देशमुख साहबका मैंने नमक खाया है, इस समय यदि उनके घरके लोगोंके बचानेमें मेरे प्राण भी चले जायँ, तो कोई हानि नहीं। आज दोपहरको ही मुझे कुछ करना चाहिये था, परन्तु मेरे हाथसे उस समय कुछ भी न होसका, यह अच्छा नहीं हुआ। इस प्रकारके विचार ज्यों-ज्यों उसके मनमें आने लगे, त्यों-त्यों उसका जोश बढ़ता ही गया। वह जल्दीसे महलके चारों ओर चक्कर लगाने लगा। "सटवाजी नायक, तुम इस झगड़ेमें मत पड़ो। व्यर्थके लिए जान मत दो। अब भीतरसे कोई जीवित निकल नहीं सकता।" इस प्रकारके वचन कई बार उसके कानोंमें आये। परन्तु उनको सुननेके लिए इस समय उसके पास कान ही न थे। उसका तन मन-धन, सर्वस्व, उन प्राणियोंके चीत्कारकी ओर लगा था। जिस खिड़कीके पाससे वे चीखें उसके कानोंमें आरही थीं, उसकी ओर बराबर वह दस-बारह मिनटतक देखता रहा। उसको ऐसा भास हुआ कि, जो व्यक्ति ये चीखें मार रहा है, वह कोई स्त्री है, और उसकी गोदमें एक बच्चा है। बस, तुरन्त ही उसके मनमें यह अनुमान भी आया कि, हो न हो, वह स्त्री अहल्या ही है। बस, फिर तो उसे बचानेके लिये उसको और भी अधिक जोश आया। अब उसने इस बातका निश्चय किया कि, जिधरसे आगका जोर कुछ कम है, उसी

ओरसे भीतर घुसना चाहिये। बस, तुरन्त ही उसने अपने शरीरके ऊपरका वस्त्र निकालकर फेंक दिया, और धोती भी खोलकर फेक दी, क्योंकि भीतर लँगोट बँधा हुआ था। इसके बाद उसने एक बार ताल ठोंकी; और यह निश्चय करके कि अब जहाँ आगकी लपटें कुछ कम होंगी, वहींसे भीतर घुसूँगा, वह फिर एक बार महलके आसपास घूमनेको चला। लोगोंने देखा कि, इसका जोश अब फिर बढ़ा, और अब यह अपने प्राणोंकी आहुति देनेही वाला है, इसलिये फिर एक बार उन्होंने उसे समझानेका प्रयत्न किया। इधर सटवाजी आतुर होकर किसी तरफसे मार्ग देखनेके लिये आगे बढ रहा था, अतएव उसने लोगोंकी ओर बिल्कुल ही ध्यान न देते हुए अपनी प्रदक्षिणा पूरी की। अब, भीतर घुसनेके लिए जो एक द्वार उसने देख रखा था, उससे आगे बढ़कर वह कदम रखनेही वाला था कि, लोग उसे पीछे खींचनेका प्रयत्न करने लगे। इतनेमें बेतहाशा दौड़ते आनेवाले घोड़ेकी टापें लोगोंको पीछेसे सुनाई दीं। घोड़ा बातकी बातमें वहाँ आकर ठहर गया, और उसपर जो मनुष्य सवार था, वह एकदम नीचे कूद पड़ा। फिर उसने पासके एक मनुष्यसे डपटकर घोड़ा पकडनेके लिए कहा; और बोला, "क्यो रे, क्या है?" सटवाजी सामने ही भीतर जानेको तैयार था। उसको देखकर उसने उसकी पीठ ठोंकी, और कहा, शाबास! शाबास! तुम और मैं, दोनों, साथ ही भीतर जायगे, ये सब लोग डरपोक और नमकहराम हैं। अरे हरामखोरोंकी औलाद! तुमको स्वय तो साहस नहीं है, और दूसरेको भी पीछे खींचते हो! धिक्कार है, तुम्हारी जिन्दगीको! तभी तो तुम्हारी छातीको रौंदकर मुसल्मान तुम्हारे घरोंमें आग लगाते हैं! गुलामो! तुम कबतक इसी तरह चूड़ियाँ पहने रहोगे?" उस काले कलूटे आदमीने घोड़ेपरसे उतरकर सिर्फ इतना ही कहा फिर तुरन्त ही उसने उस खिडकीकी ओर देखा कि, जिससे अत्यन्त दीन वाणीसे चीखोंकी आवाज़ आरही थी। इसके बाद एकदम उसने प्रत्येक मराठेके शरीरमे जोश उत्पन्न करनेवाले ये शब्द कहे—"हर हर महादेव!" "जय भवानी माता, तुम्हारी जय हो!—" इसके

बाद फिर आगे-पीछे कुछ भी न देखते हुए वे दोनो पासके एक दरवाजेसे भीतर घुसे। उनको घुसते अभी देर नहीं हुई थी कि, एक पटाव जलकर "अर्र्र्र् धम्" करके गिरा हुआ सुनाई दिया। बाहरके लोगोंने समझा कि, यह पटाव उन दोनोके—कमसे कम दोनोंमेंसे एकके शरीरपर तो अवश्य ही गिरा। इसलिये यह आशा किसीको नहीं रही कि, ये दोनों अब जीवित दिखाई देंगे, अथवा कमसे कम इनकी लाशें ही दिखाई देंगी। सबके मनको यही विश्वास हो गया कि जिसको बचानेके लिये ये भीतर गये हैं, उसके सहित ये दोनो ही जलकर खाक हो जायगे। इस प्रकारके विचार मनमे आ रहे हैं, और लोग चिन्तापूर्ण नेत्रोंसे देख रहे हैं कि, इतनेमे जिस खिडकीमे चीखनेकी आवाज आरही थी, उस खिडकी सहित वह दीवाल फटकर गिर पडी, उसके नीचे एक आदमी भी दब गया। कुछ देर बाद जिस छतमें वह खिडकी लगी थी, वह छतकी छत ही ढह गिरी। लोग एकदम वहांसे दूर भागे। अब उसके ऊपरके भाग इतनी जल्दी जल्दी गिरने लगे कि, आसपास चालीस-पचास हाथतक खडे होनेका किसीको साहस न रहा। सब लोग दूर खडे थे, और लम्बी-लम्बी गर्दनें करके तथा आँख फाड-फाडकर इस जिज्ञासाको तृप्त करनेका मार्ग देख रहे थे कि, जो दोनो पुरुष भीतर गये हैं, उनकी क्या दशा होती है—अब वे बाहर आते हैं या नहीं। भीतर जो मनुष्य घुसे थे, आगकी लपटोंमें और धुएँकी गुञ्जारमें पडे सही, परन्त [illegible]य—कभी न डगमगानेवाला, प्राणों पर भी खेल जानेवाला नि[illegible] एक बार किसी बातके पीछे पड जाता है, तब फिर चाहे [illegible] चाहे जहाँ घुसे, सफलता प्राप्त किये बिना, अथवा प्राण [illegible] न नहीं मानता। जिस खिडकीमें चीखनेकी आवाज आई थ[illegible] जिस ओर थी, उसी [illegible] उन्होंने

[illegible]ने कदम ब[illegible] [illegible]तने ही अंगार, [illegible] [illegible]पकको

[illegible]ते हुए [illegible] [illegible]ने, चारों अ[illegible] [illegible] गूँज

[illegible] हाथ [illegible] ई नहीं दे[illegible] [illegible] भय

[illegible]र घुस [illegible] गिरो

आगकी लपटें चाटे जाती थीं; शरीरका एक रोम भी जले बिना नहीं रहा। परन्तु इन सब बातोंकी ओर ध्यान देनेको उन दोनोंकी—विशेषत उस काले-कलूटे व्यक्तिकी—पचेन्द्रियोंको फुरसत कहाँ थी? उनके नेत्रोंको अपने लक्ष्यके अतिरिक्त और कुछ दिखाई ही नहीं देता था। उनकी घ्राणेन्द्रियोंको धुएँसे कुछ भी हानि नहीं पहुँच रही थी उस स्त्रीकी चीखोंके अतिरिक्त उनकी कर्णेन्द्रियोंको और कुछ भी सुनाई नहीं दे रहा था। उनकी त्वचाको ज्वालाएँ चाट रही थीं, पर इसका उन्हें भान भी न था। उनकी सारी इन्द्रियाँ मानो एक अन्तरिन्द्रियमें ही जा लगी थीं। वह काला-कलूटा ज़बरदस्त आदमी खूब आगे बढ़ा चला जा रहा था। दूसरा आदमी उसके पीछे था। वे सब प्रकारके प्रयत्न करते हुए उसी खिड़कीके पास पहुँचे जहाँसे चीखनेकी आवाज आरही थी। वहाँ जाकर वे क्या देखते हैं कि, सचमुच ही एक स्त्री बिल्कुल बेहोश होकर पड़ी है। उसीके पास उसका बालक भी उसी हालतमें पड़ा हुआ है। चीखना न जाने कबका बन्द होचुका था। अब उन्होंने क्षणभर इस बातका विचार किया कि इसे किस प्रकार उठा ले जावें। उस काले पुरुषने देखा कि नीचेकी छत ढक रही है, न जाने किस समय यह बिल्कुल ढह गिरेगी, इसलिये अब इस स्त्रीको उठा ले जानेमें एक क्षणका भी विलम्ब न लगाना चाहिये। बस, तुरन्त ही उस स्त्रीको उठाकर अपने चौड़ेसे कंधेपर रख लिया, और दूसरे हाथसे उस बालकको उठाकर "हर हर महादेव!" "भवानी माताकी जय हो! जयहो!" कहते हुए वह बातकी बातमें उस कमरेसे बाहर निकल पड़ा। उसका कदम उस कमरेसे बाहर निकलनेमें यदि पलभरकी भी देरी लगी होती, तो वह भी उस कमरेके साथ ही साथ अग्निमें गिर पड़ता, परन्तु वह अभी उस कमरेसे बाहर निकला ही था कि, इतनेमें जैसाकि पीछे बतलाया, उस कमरेको छत बिलकुल टहकर गिर पड़ी; और साथ ही पूरा कमरा भी नीचे बैठ गया। इधर वह काला मनुष्य उस कमरेके बाहर निकलते ही अपने साथीसे कहता है, "सटवाजी-राव, अब इधर उधर मत देखो। आगे बढ़कर बाहर निकलनेके लिये रास्ता

ाद फिर आगे-पीछे कुछ भी न देखते हुए वे दोनो पासके एक दर-
ाजेसे भीतर घुसे। उनको घुसते अभी देर नहीं हुई थी कि, एक पटाव
लकर "अर्र्र् धम्" करके गिरा हुआ सुनाई दिया। बाहरके लोगोंने
मझा कि, यह पटाव उन दोनोंके—कमसे कम दोनोंमेंसे एकके
रीरपर तो अवश्य ही गिरा। इसलिये यह आशा किसीको नहीं रही
क, ये दोनो अब जीवित दिखाई देंगे, अथवा कममें कम इनकी लाशें
ी दिखाई देंगी। सबके मनको यही विश्वास हो गया कि जिसको
चानेके लिये ये भीतर गये हैं, उसके सहित ये दोनो ही जलकर खाक
ो जायगे। इस प्रकारके विचार मनमें आ रहे हैं, और लोग चिन्ता-
ूर्ण नेत्रोंसे देख रहे हैं कि, इतनेमें जिस खिडकीमेंसे चीखनेकी आवाज
ा रही थी, उस खिडकी सहित वह दीवाल फटकर गिर पडी, उसके
ीचे एक आदमी भी दब गया। कुछ देर बाद जिस छतमें वह खिडकी
गी थी, वह छतकी छत ही ढह गिरी। लोग एकदम वहांसे दूर भागे।
ब उसके ऊपरके भाग इतनी जल्दी जल्दी गिरने लगे कि, आसपास
ालीस-पचास हाथतक खड होनेका किसीको साहस न रहा। सब लोग
र खडे थे, और लम्बी-लम्बी गर्दनें करके तथा आँखे फाड-फाडकर
स जिज्ञासाको तृप्त करनेका मार्ग देख रहे थे कि, जो दोनो पुरुष
ीतर गये हैं, उनकी क्या दशा होती है—अब वे बाहर आते हैं या
हा। भीतर जो मनुष्य घुसे थे, आगकी लपटोंमें और धुएँकी गुन्जारमें
े सही, परन्तु निश्चय—कभी न डगमगानेवाला, प्राणो पर भी खेल
ानेवाला निश्चय—जब एक बार किसी बातके पीछे पड जाता है,
ब फिर चाहे जहाँ जावे चाहे जहाँ घुसे, सफलता प्राप्त किये बिना,
थवा प्राण दिये बिना, मान नहीं सकता। जिस खिडकीमेंसे चीखनेकी
ावाज आई थी, वह खिडकी जिस ओर थी, उसी ओरको उन्होंने
पने कदम बढाये। मार्गमें कितने ही अंगार, कितने ही दीपकको
ाति जलते हुए काठके टुकडे पडे हुए थे, चारों ओर सब धुआँ गूँज
हा था। दो हाथ आगे भी कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। बडी भय-
र दशा थी। नाक और मुँहमें धुआँ भीतर घुस रहा था, शरीरको

आगकी लपटें चाटे जाती थीं, शरीरका एक रोम भी जले बिना नहीं रहा। परन्तु इन सब बातोंकी ओर ध्यान देनेको उन दोनोंकी—विशेषत. उस काले-कलूटे व्यक्तिकी—पचेन्द्रियोंको फुरसत कहाँ थी? उनके नेत्रोंको अपने लक्ष्यके अतिरिक्त और कुछ दिखाई ही नहीं देता था। उनकी घ्राणेन्द्रियोंको धुएँसे कुछ भी हानि नहीं पहुँच रही थी उस स्त्रीकी चीखोंके अतिरिक्त उनकी कर्णेन्द्रियोंको और कुछ भी सुनाई नहीं दे रहा था। उनकी त्वचाको ज्वालाएँ चाट रही थीं, पर इसका उन्हें भान भी न था। उनकी सारी इन्द्रियाँ मानो एक अन्तरिन्द्रियमें ही जा लगी थीं। वह काला-कलूटा ज़बरदस्त आदमी खूब आगे बढ़ा चला जा रहा था। दूसरा आदमी उसके पीछे था। वे सब प्रकारके प्रयत्न करते हुए उसी खिड़कीके पास पहुँचे जहाँसे चीखनेकी आवाज आरही थी। वहाँ जाकर वे क्या देखते हैं कि, सचमुच ही एक स्त्री बिल्कुल बेहोश होकर पड़ी है। उसीके पास उसका बालक भी उसी हालतमें पड़ा हुआ है। चीखना न जाने कबका बन्द होचुका था। अब उन्होंने क्षणभर इस बातका विचार किया कि इसे किस प्रकार उठा ले जावें। उस काले पुरुषने देखा कि नीचेकी छत ढक रही है; न जाने किस समय यह बिल्कुल ढह गिरेगी, इसलिये अब इस स्त्रीको उठा ले जानेमें एक क्षणका भी विलम्ब न लगाना चाहिये। बस, तुरन्त ही उस स्त्रीको उठाकर अपने चौड़ेसे कंधेपर रख लिया, और दूसरे हाथसे उस बालकको उठाकर "हर हर महादेव!" "भवानी माताकी जय हो! जयहो!" कहते हुए वह बातकी बातमें उस कमरेसे बाहर निकल पड़ा। उसका कदम उस कमरेसे बाहर निकलनेमें यदि पलभरकी भी देरी लगी होती, तो वह भी उस कमरेके साथ ही साथ अग्निमें गिर पड़ता, परन्तु वह अभी उस कमरेसे बाहर निकला ही था कि, इतनेमें जैसाकि पीछे बतलाया, उस कमरेको छत बिलकुल ढहकर गिर पड़ी; और साथ ही पूरा कमरा भी नीचे बैठ गया। इधर वह काला मनुष्य उस कमरेके बाहर निकलते ही अपने साथीसे कहता है, "सटवाजी-राव, अब इधर उधर मत देखो। आगे बढ़कर बाहर निकलनेके लिये रास्ता

करो, मैं उस रास्तेसे तुम्हारे पीछे ही पीछे आता हूँ। जब बिल्कुल दरवाजेके पास पहुँचो, तब इसको और इस बच्चेको तुम ले लो, और इनको कहीं दूर लेजाकर होशमें लानेका प्रयत्न करो। तब तक मैं फिर लौटकर, एक और मेरा काम रह गया है, उसे किये आता हूँ।" ये सब शब्द वह खूब जल्दी-जल्दी और अत्यन्त शान्तिके साथ बोल रहा था, जैसे किसी शान्तिके स्थानमें ही वह चल रहा हो। सटवाजी राव, जो आगे जा रहा था, उसकी उस शान्तिको देखकर कुछ अचम्भेमें भी आया। परन्तु अचम्भेमें ही आकर रह जानेका वह समय नहीं था, और न वह स्थान ही ऐसा था। इसलिये बहुत जल्द वह रास्ता करते हुए आगे बढ़ा। उसके भी साहसकी जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी ही है। क्योंकि मार्गमें कितनी ही बार उसने जलते हुए काठोंको दूर हटा-कर रास्ता निकाला। उस स्त्रीको लिये हुए जो काला मनुष्य पीछे पीछे आ रहा था, उसके साहसकी तो बात ही न पूछिये, क्योंकि उसने आस-पासकी वे भयंकर ज्वालाएँ उस स्त्रीके वस्त्रमें, तथा उसके बालोंमें अथवा उसके बालकके बालोंमें अणुमात्र भी न लगने दीं—इस विषयमें जहाँतक सावधानीसे वह काम ले सकता था, वहाँतक उसने लिया, और सौभाग्यसे उसके उस अपूर्व साहसको सफलता भी प्राप्त हुई। उस स्त्री और बालकको वह अपने कंधेपर इस प्रकार बाहर ले आया कि, अग्नि उनका स्पर्श भी नहीं कर सकी। इसके बाद उनको सटवाजीके सुपुर्द करके स्वयं अत्यन्त फुरतीके साथ पीछे लौट पड़ा। परन्तु इस बातका उसे विचार भी नहीं आया कि, जिस स्त्री और बच्चेको अग्नि-स्पर्शसे बचाकर वह बाहर निकाल लाया है, वे वास्तवमें हैं किस अव-स्थामें?

तेईसवां परिच्छेद।

पुरन्दरका किला।

प्रातःकालका समय है। सूर्यनारायण अब कहीं थोड़े-थोड़े ऊपरको आ रहे हैं। उनके बाल किरण अपने लाल रंगकी छटा किलेके ऊपर

डाल रहे हैं। ऐसे समय हमारे बाबाजी मन ही मन तड़फड़ाते हुए इधर-उधर घूम रहे थे। कोठरीके दरवाजेमें बाहरसे ताला पड़ा हुआ था, और पहरा देनेके लिए दो सिपाही मौजूद थे। कोठरीके अन्दर अबतक अँधेरा ही था। हाँ, एक ओर छोटासा एक झरोखा था, उसमें अवश्य ही उन कोमल सूर्यभगवानका एक छोटासा किरण भीतर घुसकर उस अँधेरेको और भी अधिक दुस्सह बनानेका प्रयत्न कर रहा था। जैसा कि, हमने ऊपर बतलाया, बाबाजी इस समय उसी कालकोठरीमें थे, और मन ही मन कुछ बड़बड़ाते हुए इधर-उधर चक्कर लगा रहे थे। आज दूसरा दिन था, जब कि बाबाजी हनुमानजीके मन्दिरसे पकड़-कर वहाँ लाये गये थे। मार्गमें उन्होंने क्या किया, जो मुसल्मान उनको पकड़े लिये आ रहे थे, उनके द्वारा जब उन्होंने एक मराठा युवतीका अज्ञात अपमान होते हुए देखा, तब उन्होंने क्रोधके आवेगमें किस प्रकार उसकी मरम्मतकी, इत्यादि वृत्तान्त हमारे पाठकोंको मालूम ही है। मुसल्मान सरदारको उनका वह साहस देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ, यही नहीं, बल्कि उनके उस साहस और शूरताको देखकर उसके मनमें पूज्य भाव भी उत्पन्न हुआ। परन्तु केवल आश्चर्य और पूज्य भावमें ही भूलकर वह सरदार उस समय चुप नहीं रह सकता था। इसलिये उसने अपने मुसल्मान सिपाहियोंको पहले कुछ थोड़ा-बहुत धमकाया; और फिर बाबाजीको भी कुछ डाट-डपट दिखलाकर आगे बढ़नेका हुक्म दिया। जिस शंकाके कारण वह मुसल्मान सरदार अपने उस मराठे सरदारको साथ लेकर हनुमानजीके मन्दिरपर गया था, वह शंका अभी उसके मनको टोच रही थी। इस लिये वह यही चाहता था कि, कोई युक्ति करके इस वैरागीको पूरा-पूरा अपने कब्जेमें करके—आवश्यकता हो, तो उसको कष्ट देकर भी—उससे अपनी अभीष्ट जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। अपने इस उद्देश्यको सिद्ध करनेके लिए अब उसके पास एक ही उपाय था, और वह यह कि, बाबाजीको किलेमें कैद कर रखा जाय, और उनको खाने-पीनेको बिल्कुल न देकर, जितना कष्ट दे सकें, दिया जाय; और इस प्रकार जो पता लगाना है, लगा लिया जाय।

हनुमानजीके उस मन्दिरसे पुरन्दरका किला बहुत नजदीक था, और जो काम इस समय उस सरदारको सिद्ध करना था, उसके लिये यह किला पूरा पूरा उपयोगी भी था। किला बीजापुरवालोंके अधिकारमें था। यही नहीं, बल्कि हमारे बाबाजी जिस मुसल्मान सरदारके आज कैदी थे, उसीके हाथमें उस प्रान्तकी सूबेदारी भी थी। किलेदार एक वृद्ध मनुष्य था। उसके तीन लड़के थे, परन्तु तीनों ही पुत्रोंमें परस्पर बहुत बनती नहीं थी, और उस वृद्ध किलेदारको तो आजकलके नवीन छोकरोंकी नवीन चालें बिल्कुल ही पसन्द नहीं थीं। किलेकी स्थिति चूंकि इस प्रकारकी थी, अतएव बाबाजीको कैद कर रखनेमे वहाँ तत्काल ही सब सुविधा हो गई। साथ ही साथ दरबारमे इस आशयका एक पत्र भी भेज दिया गया कि, एक ऐसे गुसाई को पकड़कर किलेमें कैद कर रखा है कि, जिसमे षड्यन्त्रका कुछ पता मिल्नेकी सम्भावना है, इतना ही नहीं, किन्तु जिसको पूरा-पूरा कष्ट पहुंचानेसे बलवाइयों-की—विशेषत· राजा शाहजीके उपद्रवी भयकर कार्यवाइया सारी मालूम पड जायँगी। अस्तु। उस मुसल्मान सरदारके साथ जो मराठा सरदार था। जो कुछ हो रहा था, उसको चुपकेसे देखते रहनेके अतिरिक्त और वह कुछ कर ही नहीं सकता था। उसकी परिस्थिति ही उस समय ऐसी थी। हनुमानजीके मन्दिरमें बाबाजीने जो दो-चार मर्मस्पर्शी वचन उससे कहे थे, वे अबतक उसके हृदममें शूल रहे थे। तिसपर भी जब उसने यह देखा कि, मुसल्मान सरदारने अब बिलकुल ही हमे ताकमे रख दिया, और योंही जिस मुसल्मान सरदारको हमारे साथ कर दिया गया था, वह अब अपना ही हट चलाता है, हमारी बिलकुल परवाह ही नहीं करता, तब उसको बहुत ही सन्तोप हुआ, पर बेचारा करता क्या ? उस समयकी परिस्थिति ही ऐसी थी कि, मुसल्मान सरदारोंके आगे मराठे सरदार किसी गिनतीमे नही थे। दो-चार सरदारोंकी बात जाने दीजिए—जिनकी ईमानदारी और नेकनीयतीका, तथा जिनकी शूरवीरताका भी, बादशाहको अनुभव हो चुका था—बाकी और सर-दारोंके साथ चाहे जो मुसल्मान सरदार अथवा नवाब, चाहे जैसा बर्त-

हार किया करते थे। सच पूछिये, तो उस समय बीजापुर-दरबारसे उस मराठे सरदारको ही इस कामपर भेजा गया था कि, इस समय पूना, सासवड़ और मालव इत्यादिके इलाकोंमें जो बार-बार लूटमार करके प्रजाको कष्ट दे रहे हैं, उन नवयुवक बागियोंका पता लगाकर उसका दमन किया जाय, और वास्तवमें उन मराठे सरदारके साथ मुसल्मान सरदारको सहायताके तौरपर भेजा गया था। परन्तु वह दोनों सरदार जबसे हनुमानजीके मन्दिरपर गये, तबसे मुसल्मान सरदारने कैसा व्यवहार किया, सो हमारे पाठकोंको मालूम ही है। बाबाजीको कैद करनेके बाद सारा अधिकार मुसल्मान सरदारने अपने ही हाथमें ले लिया, और मराठे सरदारको बात ही न पूछने लगा। अस्तु।

ऐसी परिस्थितिमें हमारे बाबाजीको, जैसा कि हमने ऊपर बतलाया, किलेकी एक काल-कोठरीमें कैद कर रखा। बाबाजी उस जगह, मन ही मन तड़फड़ाते हुए अपने कैदखानेमें—जैसे पिंजरेमें कोई शेर बन्द हो, उसी तरह—इधरसे उधर और उधरसे इधर चक्कर लगा रहे थे। उनकी संगिनी—उनके जीवनकी एकमात्र सहेली बस, एक कुबड़ीभर उनके पास थी। उसीको वे बार बार इस हाथसे उस हाथमें और उस हाथसे इस हाथमें ले रहे थे। उसकी ओर एक विशेष अर्थपूर्ण दृष्टिसे देखते, कभी कभी कुछ हँसते, और फिर घडी भरके लिए उसको एक ओर रख देते थे। इस प्रकार उद्वेग-चंचल-वृत्तिमें बाबाजी घूम रहे थे। इतनेमें यदि ज़रासा कहीं कोई खुसफुसा देता, अथवा कोई दरवाजा ही ज़रासा खटका देता, तो चौकन्ने होकर अपनी कुबडी हाथमें ले लेते, और यह देखने लगते कि, क्या कोई अचानक आता तो नहीं है। इस प्रकारकी अवस्थामें जब बाबाजी थे, तब अचानक किलेके नीचेकी ओरसे, कहींसे ज़ोर ज़ोरसे एक डफसा बजता हुआ सुनाई दिया, और ज्यों-ज्यों उसकी आवाज़ उनके कानोंमें आने लगी, त्यों-त्यों वे इस बातके लिए और भी अधिक उत्कण्ठित होते गये कि, देखें, यह डफ़ बजानेवाला हमारी पहचानका ही है अथवा अन्य कोई। बस, जिस झरोखेमें सूर्यदेवता अपने प्रकाशका अणुमात्र अंश बाबाजीको देरहे थे;

उसी झरोखेसे उन्होंने देखनेका प्रयत्न किया कि, देखें, यदि कुछ दीखता हो। पर वहांसे क्या दीख सकता था? हाँ, इतना अवश्य हुआ कि, वहांसे उस डफकी आवाज जरा और स्पष्ट सुनाई देने लगी, और उनको इस बातका अधिकाधिक विश्वास होने लगा कि, यह डफ सच-मच वही है कि, जिसके विषयमें हमको शंका हुई थी। इस बातका विश्वास होते ही उनके चेहरेपर कुछ उल्लासकीसी झलक दिखाई दी। इसके बाद उसी उल्लसित वृत्तिमें कुछ विचारसा करते हुए वे फिर इधर-उधर घूमने लगे।

कुछ देर बाद वह डफ बिल्कुल ही न सुनाई देने लगा। इसलिए उसीके विचारमें वे निमग्न हो गये। आधी घडी हुई, एक घडी हुई—बाबाजी सिवाय इधर-उधर घूमनेके और कुछ नहीं कर सके। इतनेमें उनकी कालकोटरीका दरवाजा खुला, और एक पहरेदार भीतर आया। पहरेदार एकदम उनसे कहता है, "बाबाजी, खाँसाहबकी सवारी बहुत जल्द आपके पास आनेवाली है। इसलिए आप अपना सच्चा सच्चा हाल बतलाकर क्यों नहीं छुटकारा पा लेते?" यह सुनते ही बाबाजी अत्यन्त क्रुद्ध और तुच्छ दृष्टिसे उसकी ओर देखकर मन ही मन कुछ हँसे, और फिर उससे कहते हैं, "अरे, जा, जा। खाँसाहबसे यह सन्देशा कह दे कि, अकेले मत आओ—अपने बाप, दादे, परदादे, जो कोई हों, उनको भी साथ लेते आओ।"

यह सन्देशा सुनकर पहरेदार भी बेचारा कुछ चकराया, पर पीछेसे कुछ हँसा भी, क्योंकि वह जातका मराठा ही था। बाबाजीका कथन सुनते ही वह उनसे कहता है, "बाबाजी, क्यों व्यर्थमें कष्ट उठा रहे हैं? ये मुसल्मान आपको इस प्रकार कभी नहीं छोडेंगे। व्यर्थके लिए आप अपने प्राणोंसे हाथ धो बैठेंगे। इससे तो यही अच्छा है कि, दो-चार सच्ची-झूटी कहकर अपना छुटकारा पा लीजिये।"

बाबाजी एक अक्षर भी न बोलते हुए सिर्फ उसकी ओर देखकर हँसभर दिये। फिर थोडी देर बाद उससे कहते हैं "जा, जा। मुस-ल्मानोंकी पीकदानी उठानेवाले, तेरे समान लोग सामने नहीं आने

चाहिये। जा, मुँह काला कर यहासे। नीचों, चाहे तुम्हारे सामने गाय मारें—यही नहीं, बल्कि तुम्हारे हाथसे पकड़कर मरवावें भी, तो भी तुम यही कहकर टाल देनेवाले हो कि, "जाने दो, क्या हुआ जी!"—ऐसी दशामें मेरे समान वैरागीके चाहे प्राण भी ले लें—फिर भी तुमको कुछ तरस नहीं आयेगा! गौ-ब्राह्मणोंका कष्ट दूर करनेके लिए जो प्रयत्न कर रहा है, अपने प्राणोंको भी न्योछावर करके जो इसके लिये तैयार है, उसीके विरुद्ध सच्ची झूठी करनेके लिए तू उपदेश दे रहा है? तेरी यह जीभ क्यों न काट ली जाय? अरे, धिक्कार है, तेरी जिन्दगीको! जा, जा। अब खड़ा मत हो, मेरी आँखोंके सामने। जा जल्दी! बुला ला, उस खानको, और उसके कहते ही उड़ा दे मेरी गर्दन! नहीं तो, किलेके कोटपरसे ढकेल दे! लेकिन इस समय यहासे चला जा!"

बाबाजीके ये शब्द हमने यहाँ दे दिये हैं, लेकिन उस समय उन्होंने इस प्रकार इनको उच्चारण किया कि, वह पहरेदार चुपकेसे खड़ा हुआ उनको सुनता रहा। बाबाजीकी वाणीमें कुछ ऐसी ओजस्विता भरी हुई थी कि, उसको जो कोई सुने उनके मनपर कुछ असर किये बिना वह रह नहीं सकती थी—बशर्ते कि, "हृदय" जिस चीजको कहते हैं, वह उसमें किसी अशमें मौजूद हो। परन्तु यहाँ तो पहरेदारकी बात थी—फिर भी बाबाजीके उन निन्दायुक्त वचनोंसे उसका दिल बहुत कुछ हिल गया, और वह सचमुच ही एक कदम पीछे चलता हुआ दरवाजेतक गया, और फिर कुछ भी न बोलता हुआ उसके बाहर निकल गया। पहरेदार जब पीछे लौट रहा था, तभी बाबाजीको, उसके चेहरेसे ही, मालूम हो गया कि, हमारी मात्रा इसपर कुछ काम कर गई, और इसलिये बाबाजी, मन ही मन, कुछ हँसकर कहते हैं, "देखना चाहिये, अभी हालमें जो डफ़ सुनाई दिया था, वह यदि सचमुच उसीका डफ़ है, तो आज या कल यहासे निकलनेका कोई प्रयत्न होगा ही, और यदि ऐसा हुआ, तो फिर इस मनुष्यसे अवश्य ही कुछ काम निकलेगा। हमारे कार्यमें जिन मनुष्योंसे कुछ काम नहीं

निकल सकता—ऐसे मनुष्य बहुत थोड़े हैं। दो-चार बूढ़ी खोपड़ियाँ भले ही हों। और दो-चार नवयुवकोंमें भी स्वार्थी निकल ही आवें।"

इसी प्रकारके विचार उनके मनमें आ रहे थे कि, इतनेमें फिर उनको ऐसा भास हुआ कि, अभी जो डफ बजता था, फिर वही बज रहा है। इससे उनको फिर यह जाननेकी इच्छा हुई कि, सचमुच यह वही डफ है या नहीं। बस तुरन्त ही उनके मनमें आया कि, अभी हमने जिस मात्राकी लकीरें घिसकर दी हैं, देखें, उस मात्राने कहाँतक पहरेदारपर काम किया है। यह सोचकर उन्होंने द्वार खटखटाना शुरू किया। कुछ ही देर बाद क्या बात है, सो देखनेके लिये वही पहरेदार भीतर आया। उसे देखते ही बाबाजी उससे कहते हैं, "क्यों जी जमादार! आजकल दिनमें किले पर, जान पड़ता है, तमाशे वमाशे हुआ करते हैं?

पहरेदार आश्चर्यचकित होकर उनकी ओर देखता हुआ कहता है, "क्या? तमाशे? सो भी किलेपर? किलेपर तो कभी तमाशे हुए नहीं। हाँ, किलेदारके एक लड़केको कुछ शौक अवश्य है, सो भी किले-विलेपर कभी नहीं—वहा अपना नीचे बस्तीमें जाकर भले ही कराया-वराया करता हो?"

"हँ? हँ! फिर सुबहके ही पहर यह डफ कहाँ बज रहा है?

"डफ?" पहरेदार कुछ सोचकर कहता है, "डफ! किलेपर तो कहीं डफ-वफ बजता दिखाई नहीं देता। हाँ, नीचे बस्तीमें अवश्य ही एक जोगिन आई है। वही अपना गा-बजाकर नाच रही है। हँ! हँ! भीतरको, उस तरफकी, दीवालके झरोखेमें वह डफ जरूर आपको सुनाई दिया होगा।"

बाबाजी अधिक कुछ नहीं बोले, और भीतर ही भीतर कुछ हँसे। उनके चेहरेमें स्पष्ट दिखाई दिया कि, जो कुछ उनको चाहिये था, सो मिल गया। किन्तु तुरन्त ही उनके मनमें आया कि, यदि हम कुछ नहीं बोलेंगे, तो शायद इसके मनमें शंका न हो जाय, इसलिए फिर

बोल उठे, "अच्छा ! जो डफ सुनाई दिया, सो उस जोगिनका था ? मैंने समझा कि, सभी बातें यहाँ विलक्षण ही होती होंगी। किलेदार ब्राह्मण हैं, परन्तु फिर भी वैरागीको कष्ट दिया जा रहा है, इसीसे समझा कि, शायद दिनको भी तमाशे होते हों ! यह जोगिन क्या कभी किलेपर भी आती है ? अथवा यहाँ उसको आनेकी मनाई है ?

"मनाई कहाँकी महाराज ? ये लोग सभी जगह जाते हैं, थोड़ी देर नाचते-गाते है, जादू-टोना करते हैं, और भिक्षा माँगकर पेट भरते हैं। उनको कोई मनावना नहीं करता। आज जो आदमी यह जोगिन बनकर बस्तीमें आया है, वह दस-पन्द्रह दिनके बीचमें अकसर यहाँ आ जाता है, और भिक्षा माँगकर लौट जाता है।"

बाबाजीकी चेष्टासे मालूम हुआ कि, उनके मतलबकी बात उनको और भी प्राप्त हुई। कह नहीं सकते कि, उस जोगिनके किलेपर आनेसे उनका तात्पर्य क्या था !

जो हो, बाबाजीकी और पहरेदारकी इसी प्रकार कुछ देरतक बातचीत होती रही। इसके बाद बाबाजी फिर उससे कहते हैं, "क्यों जमादार, यहाँसे छुटनेमें यदि तुमने हमको सहायता दी—नहीं, मैं यह नहीं कहता कि, तुम हमको सहायता दो ही—पर, बात कहता हूँ, मान लो, तुमने दी, तो ये लोग तुमको बड़ी सजा देंगे ? हमपर तो बड़ी भारी नजर रखनेका तुमको हुक्म होगा ? रखो भाई ! हम तुम्हारे हाथमें ही आ फँसे हैं ! तुम जो चाहो, सो कर सकते हो ! पर हमारे पंजेमें यदि तुम कभी फँस गये—फँसते काहेको हो !—तो हम तुमको सब तरहसे छोड़ देंगे ! पर तुम भला ऐसा कैसे कर सकते हो ? यदि कहें कि, तुम सिर्फ देखी-अनदेखी ही कर जाओ, और हम अपना छूट जानेका प्रयत्न कर लें, तो भी शायद तुम न सुनोगे ! पर तुम्हारा भी इसमें क्या दोष ? हमको यदि तुम सहायता भी दोगे, तो हमारी जगह तुम्हींको सूली देंगे ! अजी ये मुसल्मान भाई हैं ! कुछ पूछो मत, न जाने क्या करें और क्या न करें ! कहो, जो कुछ हम कहते हैं, सच है न ? देखो, सुबहसे चार बार चिलमकी तलब लग चुकी, पर कहीं मिली नहीं। जाओ जरा, नीचे

वस्तीमे यदि मिल जाय, तो एक कोरी चिलम और थोडीसी ताजा तमाखू ही ला दो ! और कुछ नहीं, तो न सही—इतना तो काम कर दो !"

बाबाजीका बोलना अभी बन्द नही हुआ था कि, इतनेमें किसीने दरवाजा खटकाया। बाबाजी एकदम चुप हो गये। जमादार फिर तुरन्त बाहर चला गया, और किलेदार स्वय भीतर आया।

चौबीसवां परिच्छेद।

जोगिनका फेरा।

किलेदार एक बिलकुल वृद्ध पुरुष था। उसकी अवस्थाने तो बुढ़ापेकी छाया उसकी सूरतपर डाली ही थी, किन्तु उसके गालोंपर जो झुर्रिया और गड्ढे पड़ गये थे, वे केवल उसकी अवस्थाके ही नही थे। वास्तवमें जान पड़ता था कि, चिन्तासे भी उसकी सूरतपर अपना काफी पराक्रम दिखलाया है। उसकी दृष्टि मन्द पड गई थी, और उसके कदम भी कुछ तेज नही पड़ते थे। उस पुरुषकी ओर देखनेसे स्वाभाविक ही ऐसा जान पड़ता था कि, चिन्ताने इसे खूब सताया है। सूरत उसकी बिलकुल सौम्य और सरल जान पड़ती थी। उसमें कपट इत्यादिकी रेखा अणुमात्र भी दिखाई नहीं देती थी। सिरमें सफेद पगडी, शरीरमें एक बाराबन्दी और ऊपरसे एक चदरा डाले हुए था। वह भीतर ज्यो ही आया, त्यों ही पहरेदारने एक मसनद और एक गद्दी दरवाजेके पास लाकर रख दी, और दरवाजा प्राय. खुला ही रखा, तथा स्वय पास ही खडा रहा। पीछेमे पानका सामान—एक बटुवेमे ही—और एक छोटा-सा खलबत्ता हाथमें लिये हुए अर्दली दौड़ता हुआ आया। गद्दी, जो वहाँ पड़ी हुई थी, उसपर पेर रखते ही अर्दली और पहरेदारोंकी ओर दृष्टि फेंककर वह वृद्ध पुरुष उनसे कहता है, "देखो, तुम दोनों यहाँसे बहुत दूर चले जाओ। यहाँ रहनेकी जरूरत नहीं है। जा, शान्ताराम, तू भी जा। आवश्यकता पड़नेपर मै बुला लूँगा।" दोनों वहाँसे बहुत दूर जाकर एक वृक्षके नीचे बैठ गये। और दस पाच मिनट भी नहीं हुए

थे कि, शान्तारामकी थैली और जमादार साहबकी हुक्की निकली। फिर क्या पूछना है? किसी एक रूपमें ही तमाखू लोगोंको मोहित करनेके लिए काफी है—फिर वहाँ तो दो-दो रूपोंमें मनमोहिनी सुरती आ उपस्थित हुई। वे दोनों अपनी गप-शपमें लग गये।

इधर किलेदार अपनी मसनदको टेककर बैठ गया; और फिर बिलकुल सौम्यताके साथ हमारे बाबाजीसे बोला, "बाबाजी, आप इनके पंजेमें कहाँसे फँस गये?"

"मैं? मैं ही क्या—महाराज, हमारा सारा धर्म, हमारा सारा देश, सारे गौ-ब्राह्मण इनके पंजेमें फँसे हुए हैं—फिर मुझ गरीबकी क्या कथा? आज चाहे जिसको, चाहे जिस समय, पकड़कर वे फाँसीपर लटका रहे हैं—फिर मुझ गरीबकी वहाँ कौनसी बात है? ऐसा ही कुछ मनमें आया, मैं मन्दिरमें मिल गया, पकड़ लाये, और यहाँ बाँध दिया! बादशाही अमल ठहरा, नवाबी है ही, चाहे जो कोई हो, कौन पूछता है कि, तुम कहाँके हो, कौन हो।"

बाबाजी जब कि यह कह रहे थे, किलेदारकी सारी नजर उनके चेहरेकी ओर थी। उनके शब्द सुननेकी ओर उसका ध्यान था, अथवा नहीं, इसमें शंका ही है। बाबाजी जब कि उपयुक्त बात कह रहे थे; और फिर जब कि उनकी बात खतम भी हो गई, किलेदार कुछ देरतक चुप बैठा था। हाँ, उसकी नजर बाबाजीके चेहरेसे बिलकुल नहीं हटी। बाबाजीका कथन समाप्त हो गया, और जब वे चुप हो गये, इसके बहुत देर बाद किलेदारने एक लम्बीसी साँस ली, और फिर बोला, "बाबाजी, आपको जिस सन्देहसे पकड़ लाये हैं, उसमें क्या कुछ भी सत्यता है? आप जिस मन्दिरमें रहते हैं, वहाँ कुछ लोग इकट्ठे होते हैं, और आप लोग वहाँ कुछ गुप्त मन्त्रणा किया करते हैं—क्या यह सच है?" ये प्रश्न किलेदारने बिलकुल ही निर्बल आवाजसे और चुपकेसे पूछे। उन प्रश्नोंके उत्तर क्या मिलेंगे, सो मानों वह पहलेहीसे जानता था। वे उत्तर सुनने ही चाहिए, अथवा बाबाजीसे वे उत्तर उसको मिलने ही चाहिए—ऐसी कुछ उसकी अपेक्षा दिखाई नहीं दी। हाँ, सच्चा हाल

क्या है, मानो सो जाननेके लिए ही उसकी वह दृष्टि, जो कि दूरसे वस्तु देखनेमें तो मन्द थी, पर थी बड़ी गहरी—और विशेषत चेहरेकी ओर देखनेमें अन्त:करणमें, भीतर, बहुत गहरी थी—देखनेमें बड़ी तीक्ष्ण थी—सो बाबाजीके चेहरेकी ओर लगी थी। बाबाजी भी मानो उस बातको समझ गये, और इसीलिए, ऐसा जान पड़ा कि, वे इस बातका प्रयत्न करने लगे कि, जो चेष्टा उनकी थी, वही कायम रहे, और जहाँ-तक हो सके उनका चेहरा किलेदारकी दृष्टिमें बराबर पड़ने ही न पावे। अबतक बाबाजी सबके सामने बिल्कुल सीधी निगाह रखकर जिस प्रकार उत्तर देते थे, उस प्रकार इस समय उनकी स्थिति दिखाई नहीं दी। वे किलेदारके सामने, जहाँतक हो सकता था, निगाहमें निगाह नहीं भिड़ाते थे। बराबर दो मिनट—दो मिनट क्यों, एक मिनट भी उन्होंने किले-दारके मुँहकी ओर नहीं देखा। किलेदारकी बात बिल्कुल इससे भिन्न थी। वह जो कुछ कह रहा था सो तो बिल्कुल यों ही, किन्तु देख बरा-बर रहा था। ऐसा जान पड़ता था कि, मानो वह बाबाजीको खास तौरपर देखनेके लिए ही आया था—बातचीत करनेके लिए नहीं।

फिर भी बाबाजीने एक ओर देखते हुए, उसके प्रश्नोंके उत्तर शान्तिपूर्वक दिये, "महाराज, वहाँ और कौन लोग होंगे? और गुप्त - णा किस बातकी होगी। मामूलीसी बातको व्यर्थके लिए इतना बड़ा रखा है। आप जानते ही वह पुराना हनुमानजीका मन्दिर है। उसमें आज पाँच-छै व हूँ। वहाँ मन्दिरके साथ एक बड़ा-ा प्रागण भी है। मेरे ोई पाथस्थ वैरागी वहाँ आ जाता

एक द होता है, रहता है, और फिर

नि है, और फिर मे व

मने दीपक लगा

रखने पड़े, ए

प्रसाद न

रहा।

वहाँ आते रहते हैं। वहाँ एक छोटासा अखाड़ा भी बनाया है। इधर मावलके लड़के हैं ही क्या ? फिर भी उनके इकट्ठे होनेका इतना भय माना गया है। वे वहाँ करते ही क्या हैं ? हाँ, कभी कुश्ती लड़ते हैं ; पठा-बनेठी, मुद्गर, लेजम इत्यादिकी कसरत करते हैं इससे अधिक और क्या है ? मेरे समान वैरागीसे गुप्त मन्त्रणा करने कौन आवेगा ? और गुप्त मन्त्रणा करेगा किस बातकी ?" इतना कहकर बाबाजी हँसे, और उन्होंने सीधो निगाहसे—तो क्या ?—किन्तु धीरेसे ही तिरछी नजर करके किलेदारकी ओर देखा, सो केवल यह जाननेके लिए कि, हमारे कथनका उसपर क्या प्रभाव पड़ा, वह कहाँ तक उसके ध्यानमें आया, और सच मालूम हुआ ? परन्तु शायद उनकी वह दृष्टि बिल्कुल विफल हुई। क्योंकि किलेदारके उस चिन्तानिमग्न चेहरेसे इस बातका बोध अणुमात्र भी नहीं हो सकता था कि, बाबाजीके कथनका उसके हृदयपर क्या प्रभाव पड़ा, उनका कथन उसे कुछ सत्य मालूम हुआ, अथवा नहीं। बाबाजीकी कोठरीमें वह जिस समय आया था, उस समय जैसा उसका चेहरा था, वैसा ही अब भी मौजूद था—उसमें कुछ भी अन्तर दिखाई नहीं पड़ा। इससे तुरन्त ही बाबाजीके ध्यानमें आ गया कि, हम जिससे बातचीत कर रहे हैं, वह कोई मामूली आदमी नहीं है, किन्तु वह एक ऐसा आदमी है कि, जो अपने हृदयका अभिप्राय ऊपरसे प्रकट नहीं होने दे सकता।

अभी ऊपर हमने बतलाया कि, बाबाजीके कथनका किलेदारके मनपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा—और यदि पड़ा भी हो, तो कमसे कम उसके चेहरेपर तो उसकी अणुमात्र भी छाया दिखाई नहीं दी। परन्तु हमारे इस कथनमें थोड़ीसी भूल है। क्योंकि कुछ प्रभाव पड़ा सही, किन्तु वह उसकी चेष्टामें नहीं, बल्कि व्यवहारमें, क्योंकि ऐसा जान पड़ा कि, अबतक वह उस वैरागीकी ओर जितनी आतुरतासे देखता था, उससे कहीं अधिक आतुरताके साथ वह अब उसकी ओर देखने लगा। बाबाजीके कथनमें तो ऐसी कोई बात ही दिखाई नहीं दी कि, जिससे किलेदारपर वैसा प्रभाव पड़ता, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि, उनका

कथन समाप्त होनेके बादसे ही वह और भी अधिक उत्कण्ठाके साथ उनके चेहरेकी ओर देखने लगा। इस रीतिसे किलेदार थोड़ी देरतक एकटक उनकी ओर देखता रहा। फिर इसके बाद वह उनसे कहता है, "बाबाजी, आप वैरागी कबसे हुए? आपकी उम्र क्या है? आप कहाँ कहाँ घूमे? आपकी स्थिति क्या है? सच बताइये।"

इतने प्रश्न करके वह फिर बाबाजीकी ओर गौरसे देखने लगा। इन प्रश्नोंको सुनते ही—और विशेषत. इन प्रश्नोंके पूछनेके बाद वह किलेदार जिस रीतिसे बाबाजीकी ओर देख रहा था, उसको देखते ही—ऐसा जान पड़ा कि, बाबाजीके मनमें कोई भारी आशका उत्पन्न हुई। "मुझे जो भय हो रहा था, वह कहीं सच तो नहीं है? अबतकके प्रश्न तो ठीक थे, परन्तु पीछेसे जो प्रश्न किये, वे निस्सन्देह कुछ भिन्न ही विचारोंसे किये गये। क्या इसने मुझे पहचान लिया? शायद पहचान लिया हो। अन्यथा ऐसे प्रश्नोंकी वास्तवमें आवश्यकता ही क्या थी? अबतकके प्रश्न तो ठीक थे, पर ये पीछेसे जो बात पूछीं, सो किस कारणसे?"

इस प्रकारके विचार बाबाजीके मनमें आये, और उनकी चेष्टासे ऐसा मालूम हुआ कि, जैसे वे कुछ चिन्तातुरसे हो। अस्तु। क्षणभर तो उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया, चुपके बैठे हुए नीचेकी ओर देखते रहे। परन्तु फिर सोचा कि, यदि हम इसी प्रकार चुप रहेंगे, तो किलेदारके मनमें और भी व्यर्थके लिये शका आवेगी। और अबतक यदि उसे कोई शका न आई होगी, तो अब हम अपनी तरफसे ही मानो उसका बीज बोयेंगे। यह सोचकर उन्होंने धीरेसे ही गर्दन ऊपर उठाकर कहा,—

"महाराज, मेरे समान वैरागीके विषयमें आपके समान पुरुषको ऐसे प्रश्न करनेसे क्या तात्पर्य? कौन किस कारण घरसे निकलकर वैरागी बन जाता है, इसका क्या ठिकाना? पर मैं वैसा वैरागी नहीं हूँ। मेरे माता पिता वास्तवमें छुटपनमें ही स्वर्गवासी हुए। घरमें सोलह आने दरिद्रता! पालन-पोषण करनेवाला कोई नहीं। ऐसी दशामें यो

ही एक स्वामीजी मुझे मिल गये, और तभीसे मैं इस दशामें हूँ। मेरी अवस्था आज सचमुच क्या है, सो भी ठीक-ठीक कह नहीं सकता। जिसने मेरा पालन-पोषण किया, वह बेचारा भी चल बसा। तबसे मैं ऐसा ही सब तीर्थोंमें घूमता हुआ, और जहाँ मन भाया, वहाँ उतने ही दिन रहता हुआ, समय व्यतीत कर रहा हूँ। ऐसी दशामें मैं आपके प्रश्नोका उत्तर क्या दूँ?"

बाबाजी ये सब बातें कह रहे थे सही, परन्तु किलेदारकी ओर उन्होंने एक बार भी सीधी निगाहसे नहीं देखा। हाँ, किलेदारकी दृष्टि अवश्य ही बराबर उन्हींकी ओर लग रही थी। इतनेमें उनकी कोठरीसे लगभग पन्द्रह-बीस हाथके अन्तरपर ही फिर उस डफकी आवाज आने लगी, जिसे बाबाजी थोड़ी देर पहले सुन रहे थे। इसलिये बाबाजीने बड़ी फुरतीके साथ—हमारे सामने किलेदार बैठा हुआ है, इसका भी भान न रखते हुए—उठकर दरवाजेके बाहर झाँककर देखा। देखनेके साथ ही जो कुछ उनकी निगाहमें आया, उसे देखकर वे आनन्दितसे दिखाई दिये, और यह किलेदारने भी जान लिया। परन्तु उसने किसी प्रकारकी व्यग्रता प्रदर्शित नहीं की। सूक्ष्म दृष्टिसे यदि किसीने उस समय उसकी ओर देखा होता, तो उसके उस चेहरेपर, जो सदासे चिन्ताग्रस्त था, उसको अत्यन्त सूक्ष्मसी स्मितछाया अवश्य दिखाई दी होती, यही नहीं, बल्कि उसकी दशा उस समय ऐसी दिखाई दी कि, जैसे किसी मनुष्यको बहुत देरसे किसी बातके विषयमें शंका हो, और फिर वह अचानक, किसी अनपेक्षित कारणसे, दूर हो जाय। परन्तु यह सब एक आधे क्षणमें ही चेहरेपरसे न जाने कहाँका कहाँ चला गया; और हमारे बाबाजी ज्यों ही मुड़कर देखते हैं, त्यों ही फिर किलेदारकी चेष्टा, जैसी पहले थी, वैसी ही फिर दिखाई दी! उसपर मुस्कुराहटकी, अथवा अन्य किसी प्रकारकी भी छाया अणुमात्र भी उनको दिखाई नहीं दी। बाहर बड़ा गोलमाल मचा। शान्ताराम और जमादार साहब, दोनों ही पेड़के नीचे बैठे हुए तमाखूकी पिचकारियाँ मार रहे थे, और हुक्केके कर्णमधुर गुड़गुड़ शब्दोंसे मोहित होकर इधर-उधरकी गप शप-

में बिलकुल तल्लीन हो रहे थे। इस कारण, जान पड़ता है, आसपास-की उन्हें कोई खबर ही न रही। क्योंकि वह जोगिन अपने पैरोंके घुँघरू बजाती हुई, और कमरकी करधनीकी रुनझुन आवाज करती हुई, तथा मुखसे हाँ हूँ करती हुई बिलकुल उसके पास ही आ पहुँची, परन्तु फिर भी उनको दिखाई नहीं दी। उसने अपनी एक विशेष प्रणालीके अनुसार अपने डफपर थाप दी, और अपना गाना शुरू किया। तब कहीं बाबाजीके साथ ही साथ उन दोनोंकी निगाह भी उसकी ओर गई। उसको देखते ही अब उन दोनोंको इस बातकी आतुरता हुई कि, इसकी ओर दौड़कर शीघ्र ही इसको यहांसे भगाना चाहिये। तदनुसार उन्होंने किया भी, पर जोगिन उनको काहेको सुनती है—वह उलटे और उनको गालियाँ देने लगी—किसी प्रकार वहांसे नहीं टली, और पूजाके लिये उनसे अनाज तथा पैसे माँगने लगी। वे उसे भगाने लगे, पर वह एक कदम भी वहांसे नहीं टली। दोनों ओरसे बड़ी देरतक रगट भगट होती रही। परन्तु जोगिनके उस विचित्र गाली-गलोजके कारण, जान पड़ता है कि, उन दोनोंको, उसे धक्के लगाकर निकाल देनेका, साहस नहीं हुआ। शान्ताराम जमादारके ऊपर और जमादार शान्तारामके ऊपर नाराज होने लगे। वह उसको निर्बल बतलाने लगा, और यह उसको। परन्तु इस बातका साहस किसीको न हुआ कि, उस जोगिन बने हुए मनुष्यको पकड़कर बाहर निकाल दे। दोनों ही उससे चिल्ला चिल्लाकर कहते कि, "अरे चुप, किलेदार साहब भीतर बैठे हैं, वे पास ही बैठे हैं।" परन्तु वह वहांसे टला नहीं। वह आनन्दपूर्वक डफ बजाता, उसके तालपर नाचता, और अपनी कर्कश वाणीसे अनेक चेष्टाएँ करता था। बाबाजीने किलेदारसे बातचीत करते करते फिर एक बार दरवाजेके पास आकर झाँककर देखा। जोगिनकी दृष्टि भी बाबाजीकी ओर गई। उसने अपनी गर्दन एक बार किसी विचित्र आशयसे हिलाई, और फिर धीरेसे ही उसने एक एक कदम पीछे हटाना शुरू किया। उसका एक एक कदम ज्यों ज्यों पीछे हटने लगा, त्यों त्यों शान्ताराम और जमादार भी उसकी ओर दौड़ने और उसे धकने भकने

लगे। जोगिन अपनी कर्कश वाणीसे उनको कोसती जाती थी। वह कहती थी कि, अगली बार जब मैं आऊँगी, उस समय यदि तुमने हमको अच्छी भिक्षा न दी, सूपभर अनाज यदि पूजाके लिए न दिया, तो तुम्हारा, तुम्हारे बाल-बच्चोंका, तुम्हारे घर-द्वारका, नाश हो जायगा। इस प्रकारकी धमकी देती हुई वह वहांसे चलती बनी।

जोगिन बहुत देरतक किलेपर अपना फेरा लगाती रही, इसके बाद नीचे उतरी। नीचे बस्तीमें जाकर भी वह बहुत देरतक नाचती-गाती और अपनी विचित्र विचित्र करामातें दिखलाती रही। फिर पाँच-छै आदमियोंसे कुछ इधर-उधरकी बातें करके वह वहांसे लौट पड़ी। बस्तीसे जब बहुत दूरपर वह जोगिन निकल गई, और जब यह विश्वास हो गया कि, अब दो-चार कोसतक यहाँपर कोई मनुष्य दिखाई नहीं देता, तब वह आप ही आप बड़े जोरसे हँसी, और बोली, "जो कार्य बतलाया गया था, सो कैसे होगा, इस बातका बड़ा भय मालूम हो रहा था, किन्तु देवीजीकी कृपासे काम तो सब हो गया। आखिर उनको लाकर कैद कर दिया! अच्छा, अब जाता हूँ; और सलाम करके सारा समाचार बहुत जल्द देता हूँ।" यह कहकर वह जोगिन फिर अपने पैरोंके घुँघरुओं और कमरकी करधनीकी ध्वनिपर वहाँसे आगे बढ़ी।

इधर किलेदारने बाबाजीकी वह सारी चेष्टा देखकर, जैसा कि, हमने पीछे बतलाया, इस प्रकारकी मृदु मुस्कुराहट प्रदर्शित की, कि जो किसीके ध्यानमें नहीं आ सकती थी, त्यों ही उसने तुरन्त अपनी उस मुस्कुराहटको अपने उसी सदैवके चिन्तामग्न मुखमण्डलमें विलीन कर लिया, और फिर पूर्ववत् बाबाजीकी ओर देखने लगा। उस समय यह बात स्पष्ट दिखाई दे रही थी कि, किलेदार कोई बहुत महत्वपूर्ण प्रश्न बाबाजीसे करना चाहता है, पर साथ ही इस विवेचनामें भी पड़ा हुआ है कि, वह प्रश्न करूँ, अथवा न करूँ? यह तो स्पष्ट ही था कि, किलेदार इस समय वहाँ अपनी इच्छासे नहीं आया था। उसके किलेपर जो मुसल्मान सरदार उस समय उपस्थित था, उसीने शायद उसको,

बाबाजीसे मीठी-मीठी बातें करके सब भेद मालूम कर लेनेके लिए भेजा होगा। परन्तु किलेदारने अपने चातुर्यसे यह प्रकट न होने देनेका प्रयत्न किया कि, वह किस हेतुसे और किसका भेजा हुआ आया है। बाबाजी की ओर चार-पॉच बार जिस दृष्टिसे उसने देखा था, उससे यह भी प्रकट होता था कि, बाबाजीके विषयमें जो कुछ पूछताछ वह कर रहा है, उसमें उसका निजी भी कोई उद्देश्य अवश्य है। अस्तु। उससे हमे यहॉपर कोई मतलब नहीं।

पॉच मिनट हुए, दस मिनट हुए, घडी हुई, दो घडी हुई, किलेदार न तो वहॉसे टला, और न बाबाजीसे कुछ बोला ही। सिर्फ वह उनकी ओर देखभर रहा था। बाबाजी भी बीच-बीचमे उसकी ओर देखते जाते, और ज्यो ही उनको मालूम होता कि, किलेदारकी अन्त करणभेदी दृष्टि उनकी ओर अभी लगी हुई है, त्यों ही वे अपनी दृष्टिको फिर नीचे कर लेते थे। और भी थोडासा समय व्यतीत हुआ, पर पूर्वकी दशामे कोई परिवर्तन नहीं हुआ। अन्तमे बाबाजी किलेदारसे नम्रतापूर्वक कहते हैं, "महाराज, यदि आप मुझसे किसी बातका पता लगानेके लिए बैठे हो, तो • "

"आपका प्रयत्न व्यर्थ है।" यही तो है न आपका कहना ‹ किलेदारने तुरन्त ही पूछा, और इसके बाद फिर वह बाबाजीकी ओर अत्यन्त सूक्ष्म और अन्त करणभेदी दृष्टिसे देखने लगा। उस समय उसके उस देखनेमें मुस्कुराहटकी अत्यन्त सूक्ष्म छाया भी दिखाई दे रही थी। उस किलेदारका गत घण्टे-डेढ घण्टेका सारा व्यवहार देखकर कोई भी कह सकता था कि, यह किलेदार अत्यन्त गहरा और असाधारण राजनीतिज्ञ होना चाहिये। इसके सिवाय बाबाजीके व्यवहारसे भी यह बात छिपी नहीं थी कि, उनको भी किलेदारकी गहराई और उसकी राजनीतिज्ञतामे किसी प्रकारका सन्देह नहीं था।

किलेदारके उक्त शब्द सुनते ही बाबाजी कुछ भौचक्केसे दिखाई दिये किन्तु फिर तुरन्त ही उससे कहते हैं, हॉ, हॉ, मेरा कहना यही है, क्योंकि आप जो कुछ पूछ रहे हैं, उस बातका ज्ञान मुझे बिल्कुल ही

हीं है। मैंने आपसे पहले ही कह दिया कि, मैं एक वैरागी हूँ। आज यहाँ हूँ तो कल और कहीं हूँ। ऐसी दशामें मुझे मालूम ही क्या हो सकता है? व्यर्थके लिए आपने मुझ गरीबको कैद कर रखा है। देखिये, यदि कुछ दया आजावे तो! जितनी शीघ्रतासे छोड़ देंगे, उतना ही अच्छा होगा।"

किलेदार फिर कुछ विचित्रसी दृष्टिसे उनकी ओर देखता हुआ कहता है, "हाँ, बाबाजी, आपको जितनी ही जल्दी छोड़ दिया जाय, उतना ही अच्छा, सो मैं भी जानता हूँ। और मेरे हाथमें यदि यह होता, तो मैंने कभीका आपको छोड भी दिया होता, पर मैं ठहरा केवल ताबेदार। कममे कम जबतक यह सरदार यहाँ है, तबतक तो मैं सचमुच ही ताबेदार हूँ!" इतना कहकर उसने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ा। उस निःश्वासका अर्थ बाबाजीके ध्यानमें नहीं आया। बाबाजीने समझा कि, शायद यह मुसल्मानोंकी नौकरीमें है, इसीलिये इसे बुरा मालूम हुआ हो। परन्तु ऐसा नहीं हो सकता, सो भी उनको मालूम था। क्योंकि बाबाजीकी सच्ची पहचान चाहे किलेदारको न हो, किन्तु किलेदारका पूरा-पूरा हाल बाबाजीको मालूम था। वे जानते थे कि, कुछ मराठे वृद्ध सरदार ऐसे हैं कि जो राजभक्ति और स्वामिभक्तिको ही अपने जीवनका मुख्य व्रत समझते हैं; और जिनका कि, यह खयाल है— मुगलोंका राज्य हमारे लिए परमेश्वरने ही दिया है, हम उनके चाकर हैं, और उन्हींका नमक खाते हैं, इसीलिए उनके साथ कभी नमक-हरामी न करना चाहिये, इसीमें परम पुरुषार्थ है। बस ऐसे ही विचार-वाले सरदारोंमेंसे पुरन्दरका किलेदार भी एक व्यक्ति था; और बाबाजी-को भली भाँति यह बात मालूम थी। इसलिए किलेदारके उस निःश्वास-को सुनकर पहलेपहल उनको जो सन्देह हुआ, उसको उन्होंने, उपर्युक्त विचारसे, तुरन्त ही निराधार समझा।

किलेदार फिर उनसे कहता है, "तो क्या जिस बातका पता लेनेके लिए यह सरदार यहाँ आया है, उस बातके विषयमें आपको कुछ भी ज्ञान नहीं? यों ही पकड़ लाये गये? अच्छा! और आप अपना भी

कि, यह वैरागी इतना साहसी है ? अथवा जब कि बाबाजीको वह पकड़े लिये आता था, उस समय मार्गमें जो घटनाएँ हुई थीं, उनकी याद क्या उसको नहीं थी ? जो कुछ भी हो, लेकिन इस समय वह हट गया अवश्य, फिर भी मुँहसे—"इसी समय मार डाला होता, लेकिन तेरे शरीरको यातनाएँ देकर अभी सब बातें तुझसे मालूम करनी हैं, इसलिये छोड़े देता हूँ" इस प्रकार कुछ बड़बड़ाते हुए वह अपनी जगहपर जाकर बैठ गया। इसके बाद तुरन्त ही फिर उसने आसपासके लोगोंकी ओर देखकर यह हुक्म दिया, "अभी मेरे आगे इसके हाथों-पैरोंमें बेड़ियाँ डाल दो।" अब चुप बैठनेके सिवाय बाबाजी और कर ही क्या सकते थे ? किलेदार उस समय वहाँ न था। सिपाहियोंने सूबेदारका हुक्म पाकर बड़ी भारी बेड़ियाँ लाकर, उनको बाबाजीके हाथों और पैरोंमें जड़ दिया। जिस समय कि, यह सब हो रहा था, बाबाजीकी दृष्टि पहलेहीकी भाति अत्यन्त क्रुद्ध दिखाई दे रही थी। किन्तु उस समय उन्होंने एक अक्षर भी मुँहसे नहीं निकाला। उन्हें पूरे तौर पर मालूम था कि, इस समय हमारी एक भी न चलेगी। बेड़ी इत्यादि पहनानेका सस्कार जब यथोचित रूपसे हो चुका, तब यह हुक्म हुआ कि, इसे एक तहखानेमें लेजाकर ऐसी कोठरीमें बन्द करो, जहाँ पूरा पूरा अन्धकार हो। इसके बाद किलेपरके मराठे सिपाहियोंको चार-छ चुनी हुई गालियाँ सुनाकर अपने साथ मुसल्मान सिपाहियोंको उस तहखानेपर पहरा देनेके लिये नियुक्त किया। यह सारा हुक्म फर्माते देर नहीं हुई कि, तुरन्त ही अमलमें भी लाया गया। और इस प्रकार बाबाजीकी स्थिति पहलेसे भी अधिक दु खजनक हो गई।

दूसरे दिन भी सुबह, पहले ही दिनकी तरह, कुछ देर किलेके नीचेकी बस्तीमें, और कुछ देर किलेके ऊपर भी जोगिनका डफ खूब बजा। पर बाबाजीके कानतक उसकी आवाज नहीं पहुँची, और न जोगिनकी ओर देखनेको ही उन्हें मिला। जोगिन भी उनके दर्शन चाहती थी, पर उसे भी वे नहीं मिले। उस दिन किलेके ऊपर जोगिनका डफ चारों ओर खूब जोर जोरसे बजा, और उसने अपने घुँघरुओंके तालपर ताण्डव

भी अनेक प्रकारसे किये। इतनी देर जोगिन भी पहले कभी किलेपर नहीं रही थी! कुछ देर वाद उसने शान्ताराम और जमादारको भी ढूँढ़ निकाला; और फिर उनके आसपास वहुत देरतक अपना ताडव करती रही। इसके वाद अपनी नाराज़गीका वहुतसा डर दिखलाकर वावाजीके विषयमें अप्रत्यक्ष प्रश्न किये; और जितनी कुछ जानकारी मिल सकती थी, सो सव प्राप्त करके अन्तमें उदास होकर वह वहासे चल दी। मार्गमें जाते हुए पिछले दिन जिस प्रकार जोगिन हँसी थी, वैसी आज नहीं हँसी, और न कहीं जाकर आज उसने भिक्षा इत्यादि माँगनेका प्रयत्न किया।

पचीसवां परिच्छेद

ज़वरदस्तीकी सरदारी

आज कई दिन हुए, हमने अपने सुमान दादाको और गोटेश्वरके मन्दिरके पास करीमवख्श इत्यादिको छोड़ा था। सो अव पाठकवृन्द उनका अगला वृत्तान्त जाननेके लिये वहुत ही उत्सुक होंगे। इसलिये अव वावाजीको तो उनकी कालकोठरीमें और जोगिनको उसके रास्तेपर ही छोड़कर पाठकोंको उसी ओर ले चलें।

पाठकोंको स्मरण ही होगा कि, वहाँ तम्वूमें एक तरुण मुसल्मान सरदार वैठा था। जिसके सामने एक ओर, रास्तेमें कैद किया हुआ, सुमान खड़ा था; और दूसरी ओर एक नवयुवक मराठा विराजमान था। सुमान मराठे नवयुवकको देख देख कर आश्चर्यचकित होता हुआ घवड़ासा रहा था; और वह नवयुवक मराठा भी सुमानको देख देखकर, धीरे धीरे, अपनी गम्भीरताको छोड रहा था। उस मुसल्मान सरदारके दोनों नौकर—अहमद और करीमवख्श—वरावर उस मराठे नवयुवककी ओर देख रहे थे। कह नहीं सकते कि, उनके मनमें क्या शंका आ रही थी। किन्तु कोई शंका आ जरूर रही थी। क्योंकि करीमवख्शने उस मराठे नवयुवकसे स्पष्ट ही कह दिया था कि, जवतक

खाँसाहब न आजावें, आप मन्दिरसे न जावें—आपने अपने विषयमें जो वृत्तान्त बतलाया है, वह सच नहीं मालूम होता। सुभानको देखते ही उस मराठे नवयुवकका चित्त चकराया, और ऐसा मालूम हुआ कि खान भी इस बातको ताड गया। क्योंकि सुभानको जो कुछ पूछनेके लिये उसने बुलाया था, सो पूछना तो एक ओर रहा—खान एकटक उस नवयुवक पुरुषकी ओर, और बीच-बीचमें सुभानकी ओर देखने लगा। परन्तु खान एक खानदानी आदमी था, बहुत जल्द अपने भानपर आ गया, और उस नवयुवक मराठेसे, बडे अदबके साथ—ऐसे अदबके साथ, जो किसी खानदानी पुरुषकी ही योग्य था—यह कहकर अपने पास बैठनेकी प्रार्थना की कि, "आइये जनाब, बैठिये साहब!" नवयुवकने भी देखा कि, अब कोई इलाज नहीं है, बैठना ही पडेगा, तब बहुत ही बेमनसे, वह भी, बड़े अदबके साथ, खानसे कुछ दूर, वीरासन लगाकर, बैठ गया। अब खानकी, आँखें भी, अहमद और करीमबख्शकी ही भाति, उस नवयुवककी सूरतकी ओर लगीं, जो कि स्वाभाविक ही एक अत्यन्त सुन्दर युवक था, किन्तु उस समय कुछ घबड़ाया हुआ सा दिखाई देता था। सुभानकी नजर भी, यद्यपि बिलकुल एकटक तो नहीं, फिर भी बीच बीचमें उस तरुण मराठेकी ओर मुड़ अवश्य जाया करती थी, और जब जब उसकी दृष्टि इस प्रकार मुड़ती, तब तब यह स्पष्ट दिखाई देता था कि, जैसे इसके हृदयमें कोई भय उत्पन्न हो रहा हो! इस प्रकारका भय उसे क्यों मालूम हो रहा था, इस बातका ज्ञान होना इस समय हमारे लिये कठिन है। जो हो। खानने अब यह सोचा कि, हम कुछ भी न बोलते हुए, एकटक इस व्यक्तिकी ओर देख रहे हैं—यह कुछ अच्छी बात नहीं है, और इसी कारण शायद वह सुभानकी ओर को मुडा, और एकदम उससे बोला, "क्यों बे, तू कोन है? कहाँका रहनेवाला है?"

सुभान पहले हीसे जानता था कि, इस प्रकारके प्रश्न हमारे सामने अवश्य आवेंगे, इसलिये उक्त प्रश्नोंके कानमे पडते ही वह कहता है, "सरकार, मे अपना यों ही इधर गाँवको जा रहा था, रास्तेमे बिना

कारण पकड़कर आपके सामने ला खड़ा किया गया। मैं एक गरीब आदमी हूँ; और यों ही अपने कामसे रास्ते रास्ते जा रहा····· ”

सुमान क्या कह रहा था, इसकी ओर खानका बिलकुल ही ध्यान न था। उसका सारा ध्यान सामने बैठे हुए नवयुवक मराठेकी सूरतकी ओर था। हाँ, उस तरुण मराठेका ध्यान अवश्य ही सुमानकी ओर पूरा पूरा था कि, वह क्या कर रहा है। इस कारण, मानो उस बेचारे-को इस बातका भान भी न था कि, हमारी ओर अन्य लोगोंका ध्यान है; वे हमारी ओर बराबर एकटक देख रहे हैं। खानका ध्यान यद्यपि सुमानकी ओर नहीं था, तथापि अहमद और करीमबख्शका भी नहीं था, सो बात नहीं। उसने उपर्युक्त उत्तर ज्यों ही दिया, त्यों ही अहमद हँसा; और बोला, "ओ हो! क्या बात है! हमको तू छोटे-छोटे बच्चे ही समझता है! तू नौकर किसका है? जा कहा रहा था, सो भी बतलायेगा या नहीं?"

अहमदके इस कथनसे खानका ध्यान फिर सुमानकी ओर गया; और वह उसकी ओर देखकर तथा गर्दन हिलाकर कहता है, "बेशक! बेशक! तू सब बतला, किसके कामपर जा रहा था? किस कामके लिये जा रहा था? कहा जा रहा था? सच बतला देगा, तो कुछ छूटनेकी आशा भी है, अन्यथा बहुत जल्द नीचे सिर और ऊपर पैर करके तुझे चार-छ घड़ी उस वृक्षमें लटकता रहना पड़ेगा।" खानका कथन अभी समाप्त ही हुआ था कि, अहमद उसकी बातमें बात मिलाकर कहता है, "और इतनेसे भी यदि न सुनेगा, तो सीधी तरफसे गलेमें रस्सी बाँधकर लटकाया जायगा।" यह कहकर वह आप ही आप जोरसे हँसा। खानने कुछ तिरस्कार-दृष्टिसे उसकी ओर देखा, फिर तुरन्त ही अपने चेहरेपर थोड़ीसी मुस्कुराहट लाकर उस मराठे सरदारकी ओर मुड़कर कहता है, "अजी जनाब, आपको मैंने बहुत देरसे यहाँ बैठा रखा है, इस तकलीफके लिए माफ हो आपसे यदि पहले ही बातचीत कर ली होती, तो आपको यहाँ इतनी देर बैठना न होता, और मैं चाहता हूँ कि, आप कुछ देर मेरे पास रहें, क्योंकि आपसे मुझे बहुतसी बातचीत

करनी है। आप कहाँ रहते हैं? इधर कहाँ जा रहे थे? आपकी तारीफ क्या है? इत्यादि प्रश्न करनेकी मुझे आज्ञा हो।"

खान जब यह कह रहा था, ऐसा जान पड़ा कि, जैसे उस नवयुवककी चित्तवृत्ति कुछ अत्यन्त विलक्षणसी हो गई हो। उसकी सूरत कुछ भौंचक्कीसी हो गई, और ऐसा मालूम हुआ कि, जैसे उसे यही न सूझता हो कि, अब क्या उत्तर देवें। खानकी बात समाप्त होतेही उसने उसकी ओर सीधी नजरसे देखनेका बहुत कुछ प्रयत्न किया, और अन्तमें उस प्रयत्नमें उसे थोड़ी बहुत सफलता भी प्राप्त हुई, तब वह धीरेहीसे कहता है, "सरदार साहब, मैं एक मामूली आदमी हूँ, अपनी स्त्री लिये हुए दूसरे गाँवको जारहा था, मार्गमें विश्राम लेनेके लिए इस मन्दिरमें आ बैठा, इतनेमें आपके ये लोग आकर मेरी पूँछ-ताछ करने लगे। मैं जो कुछ बतलाना था, बतला चुका, किन्तु इन लोगोंको सन्तोष नहीं हुआ। इन्होंने मुझसे कहा कि, "खाँसाहब जबतक न आजावें, तुम यहीं बैठो। वे जब आवेंगे, तब तुमसे पूँछ-ताछ लेंगे, फिर तुम जाना।" मैं अकेला था। ये कई लोग थे। मैं लाचार होकर बैठ गया। अब आप मुझे यहाँसे जाने देंगे, ऐसी आशा है।"

उस मराठे नवयुवकका यह कथन सुनकर खान कुछ मुस्कुराया; और फिर बोला, "अहाहा! आपका बोलनेका ढग कितना सुन्दर है! आपकी बातोंमें कितना मिठास है! और आपकी आवाज तो इतनी मीठी है कि, कुछ पूछिये ही नहीं! वाह यार! वाह! ऐसी मीठी जबान तो कभी सुनी ही न थी! भाई बोलिये! और कुछ बोलते रहिये।"

खानका यह भाषण सुनते हुए अहमद और करीमबख्श, एक दूसरेकी ओर, छिपकर, परन्तु आशयपूर्ण नजरसे, बराबर देखते जाते थे, और हँसते भी जाते थे। यही नहीं, बल्कि हँसोड़ अहमद धीरेसे ही करीमबख्शसे कहता है, "यार, यह तो खूब मौज हुई।" करीमबख्श कुछ नहीं बोला। वह अपने मालिकके मुखकी ओर देख रहा था। खान उस नवयुवक मराठेकी ओर देखकर कहता है, "आपने इन लोगोंको जो वृत्तान्त बतलाया, वही आपको फिर बतलानेका कष्ट देता हूँ, इसके

लिये माफ किया जाऊँ । इन लोगोंने यदि आपके साथ कोई बेअदबी-का वर्ताव किया हो, तो मैं इनको सजा दूँगा—"

इतना कहकर वह करीमबख्शकी ओर मुड़ा, और उससे कहता है, क्यों करीमबख्श, अबे अहमद ! तुमने इनके साथ कोई बेअदबीका वर्ताव किया ? सच बोलो ?" करीमबख्श और अहमद, दोनों—"नहीं, खा साहब !" कहकर एक दूसरेकी ओर फिर देखने लगे। अब वह नवयुवक क्या करे सो उसकी कुछ समझहीमें न आया। करीमबख्शको उस समय जो उत्तर उसने दिये थे, वही फिर दिये, और कहा कि, "मैं एक मामूली आदमी, अपनी स्त्रीको लेकर, एक दूसरे गाँव जारहा था।' परन्तु यह सुनकर खानकी चेष्टापर भी कोई विश्वासकी झलक दिखाई नहीं दी। ऐसा जान पड़ा कि, उसको भी ऐसा ही विश्वास हुआ कि, वह नवयुवक कुछ छिपाता अवश्य है। परन्तु अपने शब्दोंसे उसने इस बातको प्रकट नहीं किया, और कुछ मुस्कुराते हुए कहा, "आप इस प्रकारसे, बिना किसी लवाजमाके, और बिना किसीको साथ लिये, अकेले जनानेको लिये जारहे हैं, यह ठीक नहीं है। आजकलके दिन बहुत बुरे हैं। क्या आप जानते नहीं है ? आजकल चारों ओरसे लूटमार मची हुई है। इसके सिवाय आप कहते हैं कि, आप एक मामूली आदमी हैं, पर सचमुच ही यदि आप ऐसे ही हैं, तो अब, जब कि मुझसे आपकी मुलाकात होचुकी है, आपका ऐसा कहना मुझे उचित नहीं दिखाई देता। आप अब कहीं न जावें। मेरे ही साथ रहें। मैं बादशाहसे आपकी मुलाकात करा दूँगा, और आपको एक अच्छीसी सरदारी दिला दूँगा। आजसे मैं आपको अपना दोस्त समझता हूँ। आप भी वैसा ही मुझे समझें।"

खान जब यह सब कह रहा था, तब उसकी चेष्टासे स्पष्ट मालूम होरहा था कि, यह सब वह हृदयपूर्वक कह रहा है। परन्तु साथ ही यह भी स्पष्ट दिखाई देरहा था कि, उसके इस कथनमें कोई और भी उद्देश्य अवश्य है। नवयुवक उसके इस कथनको सुनकर बड़े गोलमालमें पड़ा। और अब क्या करे, सो मानो कुछ उसे सूझने ही न लगा। वह अत्यन्त

सूक्ष्म आवाजसे इस प्रकार कुछ गुनगुनाया, "मुझको सरदारी क्यों ? आपने कृपा की मुझे अपना दोस्त बनाया, इतना ही काफी है। सरदारी प्राप्त करनेकी मुझमें योग्यता नहीं।" इत्यादि। किन्तु उसके इस गुन-गुनानेका कोई उपयोग न हुआ, और न होता हुआ दिखाई दिया। वह ज्यों-ज्यों "नही-नही" कहता, त्यों-त्यो ऐसा मालूम होता कि, खानका प्रेम उसपर और भी बढता जा रहा है। अन्तमें उसने यही आग्रह किया कि, आप कही न जावें, और सदैव मेरे ही साथ रहें। उस मराठे नवयुवकको भी यही मालूम हुआ कि, अब पिंड नही बचता, ऐसा जान पडता है कि, इसके आग्रहके अनुसार करना ही पड़ेगा। नवयुवक बड़े चक्करमें पडा कि, इस पेंचसे—इस विचित्र प्रसंगसे—अब मैं छूटूं कैसे ? कुछ उसकी समझहीमें न आया। उस पेंचसे छूटनेके लिए वह आतुर अवश्य दिखाई दिया।

बहुत देरतक वह कुछ भी न बोलते हुए, खिन्नवदन होकर नीची, गर्दन किये बैठा रहा। खानके समान, बादशाहका एक कृपापात्र यह आग्रह कर रहा है कि, 'आप मेरे साथ चलें, और मुझे अपना दोस्त समझें।"—इसपर वास्तवमें आनन्द होना चाहिये, सो तो एक ओर रहा, वह बेचारा बड़े संकटमें पडा—सो क्यों ? कह नही सकते! अहमद और करीम उसकी वह अवस्था देखकर एक दूसरेकी ओर धीरेसे ही दृष्टि फेंकते और कुछ हँसते भी, मानो उनको यह सब देखकर बडा आनन्द आ रहा था। अस्तु। अन्तमें खान उस नवयुवकसे कहता है, "अजी साहब, आप इतने संकटमें क्यों पड गये ? जो बात मैं कहता हूँ, वही यदि किसी दूसरेसे कही होती, तो वह अपनेको न जाने कितना सौभाग्यवान् समझता! पर आप तो मेरी बात सुनकर बिलकुल खिन्नसे दिखाई देते हैं! क्यों, मुझे दोस्त कहना क्या आपको तुच्छ मालूम होता है ? बादशाहकी कृपा क्या आपको नहीं चाहिये ? आप खुले दिलसे कहिये। वह चिन्ता यदि किसी मनुष्यके हाथसे दूर होने योग्य होगी, तो मैं उसे अवश्य दूर करूँगा। किन्तु आप मुझे छोडकर अब और कही न जावें। आपको यदि स्त्रीको कहीं पहुँचाना हो, तो मैं अपने

आदमी साथ देकर अभी पहुँचाये देता हूँ। आप यदि साथ रखना चाहते हों, तो साथ ही ले चलिये। घरके लोगोंको सन्देशा भेजना चाहते हों, तो साडिनीसवार मौजूद है।"

खान इतनी उत्कंठासे कह रहा था कि, अहमद करीमबख्शके कानमें खुसफुसाकर कहता है, "वाह! यार वाह! दीवाने तो हो गये!" इसके बाद फिर वह तुरन्त ही उस नवयुवककी ओर, बड़ी विचित्र भांतिसे, हाथ मटकाकर कहता है, "वाह! वाह!" मराठा नवयुवक फिर कुछ नहीं बोला। खानने उसके न बोलनेको ही सम्पति समझा; और हुक्म दिया कि, इनका सब प्रकारसे उत्तम प्रबन्ध रखो। इसके सिवाय उसने उसके साथकी स्त्रीके लिए अलग रावटी और कनातका प्रबन्ध कर देनेके लिये भी ताकीद कर दी। सुमानको उसीकी तैनातीमें रखकर हुक्म दिया कि, अगले मुकामपर तुम फिर सामने हाजिर हो। हाँ, छावनीके बाहर जानेके लिये उसे पूरी मुमानियत कर दी गई।

कह नहीं सकते, क्या कारण था; परन्तु सुमानने जब यह सुना कि, मुझे यह नवीन नौकरी मिली, तब उसके चेहरेपर—उस दशामें भी—कुछ सन्तोषकी छाया अवश्य दिखाई दी।

छब्बीसवां परिच्छेद

रास्तेमें बतलाता हूँ

अत्यन्त घना जंगल है, और उसमें चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखाई दे रहा है। उस जगलमें बरगद, पीपल, पाकर, अशोक इत्यादिके इतने घने वृक्ष थे कि, उनके अन्दरसे रास्ता निकालना असम्भव था। बीजापुरके बादशाहके यहाँ अनेक सरदारोंने प्रार्थना की थी कि, यह जंगल यदि कटवा न डाला जायगा, तो बटमार, लुटेरे; और ठग इत्यादि लोगोंको खूब बन आवेगी। उस समय ऐसे लोगोंके लिये यह जंगल बहुत अच्छा उपयोगी था। इसी जंगलमें कई बार लोगोंने बादशाही खजानेको लूट लिया; और कुछ पता न चला। कई

सूक्ष्म आवाजसे इस प्रकार कुछ गुनगुनाया, "मुझको सरदारी क्यों? आपने कृपा की मुझे अपना दोस्त बनाया, इतना ही काफी है। सरदारी प्राप्त करनेकी मुझमें योग्यता नहीं।" इत्यादि। किन्तु उसके इस गुन-गुनानेका कोई उपयोग न हुआ, और न होता हुआ दिखाई दिया। वह ज्यों ज्यों "नहीं-नहीं" कहता, त्यों-त्यों ऐसा मालूम होता कि, खानका प्रेम उसपर और भी बढता जा रहा है। अन्तमें उसने यही आग्रह किया कि, आप कहीं न जावें, और सदैव मेरे ही साथ रहें। उस मराठे नवयुवकको भी यही मालूम हुआ कि, अब पिंड नहीं बचता, ऐसा जान पडता है कि, इसके आग्रहके अनुसार करना ही पडेगा। नवयुवक बड़े चक्करमें पड़ा कि, इस पेंचसे—इस विचित्र प्रसंगसे—अब मैं छूटूँ कैसे? कुछ उसकी समझहीमें न आया। उस पेंचसे छूटनेके लिए वह आतुर अवश्य दिखाई दिया।

बहुत देरतक वह कुछ भी न बोलते हुए, खिन्नवदन होकर नीची, गर्दन किये बैठा रहा। खानके समान, बादशाहका एक कृपापात्र यह आग्रह कर रहा है कि, 'आप मेरे साथ चलें, और मुझे अपना दोस्त समझें।"—इसपर वास्तवमें आनन्द होना चाहिये, सो तो एक ओर रहा, वह बेचारा बडे संकटमें पडा—सो क्यों? कह नहीं सकते! अहमद और करीम उसकी वह अवस्था देखकर एक दूसरेकी ओर धीरेसे ही दृष्टि फेंकते और कुछ हँसते भी, मानो उनको यह सब देखकर बडा आनन्द आ रहा था। अस्तु। अन्तमें खान उस नवयुवकसे कहता है, "अजी साहब, आप इतने संकटमें क्यों पड गये? जो बात मैं कहता हूँ, वही यदि किसी दूसरेसे कही होती, तो वह अपनेको न जाने कितना सौभाग्यवान् समझता! पर आप तो मेरी बात सुनकर बिलकुल खिन्नसे दिखाई देते हैं। क्यों, मुझे दोस्त कहना क्या आपको तुच्छ मालूम होता है? बादशाहकी कृपा क्या आपको नहीं चाहिये? आप खुले दिलसे कहिये। वह चिन्ता यदि किसी मनुष्यके हाथसे दूर होने योग्य होगी, तो मैं उसे अवश्य दूर करूँगा। किन्तु आप मुझे छोडकर अब और कहीं न जावें। आपको यदि स्त्रीको कहीं पहुँचाना हो, तो मैं अपने

आदमी साथ देकर अभी पहुँचाये देता हूँ। आप यदि साथ रखना चाहते हों, तो साथ ही ले चलिये। घरके लोगोंको सन्देशा भेजना चाहते हों, तो साडिनीसवार मौजूद है।"

खान इतनी उत्कंठासे कह रहा था कि, अहमद करीमबख्शके कानमें खुसफुसाकर कहता है, "वाह! यार वाह! दीवाने तो हो गये!" इसके बाद फिर वह तुरन्त ही उस नवयुवककी ओर, बड़ी विचित्र भांतिसे, हाथ मटकाकर कहता है, "वाह! वाह!" मराठा नवयुवक फिर कुछ नहीं बोला। खानने उसके न बोलनेको ही सम्पति समझा; और हुक्म दिया कि, इनका सब प्रकारसे उत्तम प्रबन्ध रखो। इसके सिवाय उसने उसके साथकी स्त्रीके लिए अलग रावटी और कनातका प्रबन्ध कर देनेके लिये भी ताकीद कर दी। सुभानको उसीकी तैनातीमें रखकर हुक्म दिया कि, अगले मुकामपर तुम फिर सामने हाजिर हो। हाँ, छावनीके बाहर जानेके लिये उसे पूरी मुमानियत कर दी गई।

कह नहीं सकते, क्या कारण था; परन्तु सुभानने जब यह सुना कि, मुझे यह नवीन नौकरी मिली, तब उसके चेहरेपर—उस दशामें भी—कुछ सन्तोषकी छाया अवश्य दिखाई दी।

छब्बीसवां परिच्छेद

रास्तेमें बतलाता हूँ

अत्यन्त घना जंगल है, और उसमें चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखाई दे रहा है। उस जंगलमें बरगद, पीपल, पाकर, अशोक इत्यादिके इतने घने वृक्ष थे कि, उनके अन्दरसे रास्ता निकालना असम्भव था। बीजापुरके बादशाहके यहाँ अनेक सरदारोंने प्रार्थना की थी कि, यह जंगल यदि कटवा न डाला जायगा, तो बटमार, लुटेरे; और ठग इत्यादि लोगोंकी खूब बन आवेगी। उस समय ऐसे लोगोंके लिये यह जंगल बहुत अच्छा उपयोगी था। इसी जंगलमें कई बार लोगोंने बादशाही खजानेको लूट लिया, और कुछ पता न चला। कई

बार ऐसा भी हुआ कि, उस मार्गसे जब बादशाही सेना निकली, तब मराठे बदमाशोंने, जो उसी जंगलमें छिपे बैठे रहते थे, उसपर अचानक छापा मारा, और सिपाहियोंको मार काट टुकड़े टुकड़े कर डाला, तथा एक-दो बडे सरदारोंको तो तिल तिल काटकर चटनी बना दिया ! परन्तु इन सब बातोंकी ओर किसीने ध्यान नहीं दिया। बीजापुरकी बादशाहत मानो उस समय एक दूसरी अन्धेरनगरी ही बनी हुई थी। किसीकी कोई परवा नहीं करता था। जो बादशाहका कृपापात्र बन गया, वही सच्चा बादशाह ! हिन्दुओंको यदि किसी बातमे कोई तकलीफ होती, तो कोई सुनवाई नहीं हो। हाँ, मुसल्मानोंमेंसे यदि किसीको कुछ शिकायत होती, तो उसकी सुनवाई महीना-पन्द्रह दिनमें हो जाती थी, और उसको पूरा पूरा न्याय मिलता था। अवश्य ही यह दशा शोचनीय थी, परन्तु इसमे आगे चलकर बहुत लाभ हुआ। अस्तु।

ऊपर जिस जगलका जिक्र किया, वह पूनेसे कोई तीस बत्तीस कोस पर बीजापुरके मार्गपर था। इस जगलमें हिंस श्वापद—खूनी जानवर—भी बहुतायतसे थे। इनके सिवाय कुछ मानवी प्राणी भी वहाँ इस प्रकारके बसते थे कि, जो क्रूर बन गये थे—फिर चाहे वे राज्यके अत्याचारसे वैसे बन गये हों, अथवा खानेको नहीं मिलता था इस कारणसे तथा उनकी मातृभूमि और स्वधर्मकी उस समय विडम्बना की जा रही थी, और जो कि उनको सहन नहीं होती थी—इस कारणसे वे क्रूर बन गये हों। परन्तु इस प्रकारके कुछ क्रूर मनुष्य वहाँ थे अवश्य ! जगलमें चारों ओर लगभग कोस कोस, डेढ़ डेढ कोस घनी झाड़ियाँ छोड़कर, बिलकुल बीचों बीच, लगभग पाव मील क्षेत्रफलका स्थान कुछ साफ-सूफ किया हुआ था। बस, इसी जगह हमको इस समय जाना है। इस अवसरपर इस जगह कोई मामूली चोर अथवा डाकू नहीं है—वही हमारे पुराने परिचित चार आदमी बैठे हैं। वे चार आदमी पाठकोंको पहले-पहल श्रीधर स्वामीके मन्दिरके मुँहारेमे मिले थे। उस समय उनकी जैसी चेष्टा दिखाई दे रही थी, उससे इस समय, उनकी बहुत ही भिन्न दिखाई दी। उनमें जो तेजस्वी नेत्रोंवाला ठिगना नवयुवक था,

उसकी चेष्टा कुछ क्रोध, कुछ खेद, कुछ दृढ़ता; और कुछ तिरस्कार इत्यादि विचारोंकी छायासे बिलकुल व्याप्त दिखाई दे रही थी। वह इस समय अपने मस्तकमें बहुतसी शिकनें डाले हुए, किसी अत्यन्त गहन विचारमें, मन ही मन, निमग्नसा दिखाई दे रहा था। ये लोग इस समय उपर्युक्त स्थानमें, एक वृक्षके नीचे, कम्बलपर बैठे थे; और अपने अपने घोड़े उन्होंने वहीं, थोड़ी दूरपर, एक वृक्षके नीचे बाँध दिये थे। उन लोगोंमेंसे एक मनुष्यकी क्या स्थिति थी, सो अभी बतलाई। बाकी तीनों मनुष्य भी पहले ही मनुष्यकी भाति, अत्यन्त दुःखी होकर, गर्दन नीची किये हुए, चुप बैठे थे। उन तीनोंमें एक तो हमारा वही सिपाही जवान था और शेष दो उस तेजस्वी तरुण पुरुषके मित्र हैं, सो भी पाठकोंको मालूम ही है। अस्तु। जैसा कि हमने ऊपर बतलाया, उसी अवस्थामें वे चारों बहुत देरतक बैठे रहे; और कोई किसीसे कुछ नहीं बोला। लेकिन यह स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि, प्रत्येक कुछ न कुछ कहनेके विचारमें है। अन्तमें वह तेजस्वी नवयुवक एकदम औरोंकी ओर देखकर कहता है, "क्यों? श्रीधर स्वामीके हाथों और पैरोंमें मन मनभरकी हथकड़ी और बेड़ी डाल दी गई; और वे पुरन्दरके समान निकटके ही किलेमें कालकोठरीमें हमारे लिये डाल दिये गये; और फिर भी हम यहाँ चुपचाप बैठे हैं! धिक्कार है—इससे अधिक और लज्जाकी बात क्या हो सकती है! इससे तो हम हाथोंमें चूड़ियाँ पहनकर चुपचाप घरमें बैठे रहें तो अच्छा!"

ये शब्द इतने तिरस्कार और दुःखके साथ उस पुरुषने उच्चारण किये कि, जिससे स्पष्ट मालूम होता था कि, उसको अपने मनमें, स्वयं अपने विषयमें ही, अत्यन्त तिरस्कार उत्पन्न हो चुका था। इसके सिवाय उसने उपर्युक्त वाक्य उच्चारण भी कुछ ऐसी विचित्र आवाजसे किये कि, सुननेवाले उन तीनोंके हृदयमें वे बिलकुल भिद गये। उसमें भी येसाजीको तो उससे बहुत ही खेद हुआ। क्योंकि उन्होंने स्वाभाविक ही सबके सामने यह प्रतिज्ञा कर ली थी कि, श्रीधर स्वामीको दूसरे ही दिन छुड़ा लाऊंगा! वह प्रतिज्ञा आज बिलकुल व्यर्थ

गई, और आज गर्दन नीची करके बैठनेकी नौबत आई। इस बातपर उन्हें अत्यन्त दुःख हुआ। पहले दिन जोगिन जब पुरन्दरके किलेपर अपना फेरा डालकर वापस आई, और येसाजीसे मिल कर वहाँका समाचार बतलाया, तब उन्हें अपनी प्रतिज्ञाके पूर्ण होनेका बहुत ही विश्वास और उत्साह हुआ, और उन्होंने इस बातका भी विचार किया कि, अमुक मार्गसे जाकर अमुक युक्ति करेंगे, और दूसरे ही दिन, उसी युक्तिके अनुसार, श्रीधर स्वामीको छुड़ा लेंगे। इसके बाद उन्होंने फिरसे जोगिनको किलेपर एक चक्कर लगा और सब हालचाल देख आनेके लिये कहा, और जतलाया कि, हम मार्गमें तुम्हें अमुक वृक्षके नीचे मिलेंगे वहीं आकर सब वृत्तान्त बतलाना। तदनुसार जोगिन दूसरे दिन फिर गई, और वहाँ जो बात हुई थी, सब आकर येसाजीको उसी वृक्षके नीचे मार्गमें बताई। वह बात क्या थी, सो सब पाठकोंको मालूम ही है। उसे सुनते ही येसाजीको बहुत खेद हुआ। उन्होंने समझा था कि, श्रीधर स्वामीकी जो स्थिति पिछले दिन थी, वही यदि अब भी होगी; तो बातकी बातमें उनको छुड़ा लावेंगे। पर अब वह हालत नहीं रही। हमारे आलस्यके कारण श्रीधर स्वामी आज इस दशाको प्राप्त हुए—उनके इन कष्टोंका कारण मैं हूँ—बस, यही सोचकर येसाजीको अत्यन्त पश्चात्ताप हुआ। एक तो पहले ही उनकी चित्तवृत्ति इस प्रकार पश्चात्तापपूर्ण थी—फिर जैसा कि हमने ऊपर बतलाया, उस तेजस्वी नवयुवकके उपर्युक्त वचनोंसे तो उनका हृदय और भी अधिक दुःखी हुआ। वे चुपचाप नीची गर्दन किये हुए चिन्तामें बैठे रहे। क्या कहें, सो उन्हें कुछ नहीं सूझा। इसके सिवाय वे यह भी जानते थे कि, यदि इस समय कुछ कहेंगे भी, तो अच्छा नहीं लगेगा। हाँ, हमारा सिपाही जवान अवश्य ही कुछ कहनेके विचारमें था। उसके होंठ फड़क रहे थे, और बोलनेकी इच्छा वह बहुत प्रयासके साथ दाब रहा था, इतनेमें उस तेजस्वी नवयुवककी तीक्ष्ण दृष्टि, उसी समय, उस ओर झुकी, और देखा कि, उसके मनमें कोई महत्वपूर्ण विचार आ रहा है, और वह यही सोच रहा है कि, "कहूँ या न कहूँ।" यह देखकर स्वाभाविक

ही वह उससे बोला, "भाई, तुम्हारे मनमें कोई विचार आया है, ऐसा जान पडता है, सो क्या है? बतलाने योग्य हो, तो बतला न डालो?" यह सुनकर वह जवान कुछ हँसा, और फिर तुरन्त ही कहता है, "महाराज, और क्या बतलाऊँ—मुझे यदि आज्ञा हो, तो सचमुच ही मैं तीन दिनके अन्दर श्रीधर स्वामीके चरणोंके दर्शन आप सबको करा दूँगा।"

"क्या? तुमको तो इधरके प्रान्तकी कुछ बहुत जानकारी भी नहीं है, और तुम यह काम करनेकी प्रतिज्ञा करते हो? इधरकी कठिनाइयाँ क्या हैं इसकी क्या तुमको कुछ कल्पना है? पुरन्दर एक बडा विचित्र किला है। उसमें प्रवेश करना कुछ हँसी खेल नहीं है। फिर स्वामीजीके हाथों-पैरोंमें मन-मनकी हथकड़ी बेड़ी डालकर उनको कालकोठरीमें, तहखानेके अन्दर, बन्द कर रखा है—वहाँसे तुम कैसे छुड़ा लाओगे? मेरी समझमें नहीं आता। यह बात केवल शूरताके बलपर नहीं हो सकती इस प्रान्तकी—विशेषत. पुरन्दर और उसके आसपासके प्रदेशकी—जिसे पूर्ण जानकारी होगी, और जो सब प्रकारके दावपेंचोंमें पूर्ण दक्ष होगा, उसीसे यह काम हो सकेगा। तुम्हारे समान पुरुषसे यह कैसे होगा? [ऐसाजीकी ओर कुछ आख मटकाकर] हमारे ऐसाजीके समान सुदक्ष वीरने जिस बातकी प्रतिज्ञा की; और वह पूरी नहीं होसकी, वह बात तुम्हारे समान नवीन पुरुषसे कैसे बन पड़ेगी? मेरी समझमें नहीं आता।"

यह अन्तिम कथन सुनकर येसाजीको और भी खेद हुआ। परन्तु वे कुछ बोले नहीं। वे जैसे अभीतक चुप बैठे थे, वैसे ही बैठे रहे। इतनेमें वह सिपाही उस तेजस्वी पुरुषकी ओर मुड़कर फिर कहता है, "आपकी आज्ञासे मैं सब कुछ कर सकूँगा। चाहे जो करूँ; परन्तु श्रीधर स्वामीको आपके पास लाकर उपस्थित करूँगा, आज्ञा भर चाहिए। मैं जबसे आपके पास आया, कोई भी काम नहीं कर दिखाया सो आज कुछ कर दिखलाऊँ, यही इच्छा है। यह पूर्ण होना आपकी आज्ञा और आशीर्वाद पर अवलम्बित है। जब मैंने एक बार कह दिया

गई, और आज गर्दन नीची करके बैठनेकी नौबत आई। इस बातपर उन्हें अत्यन्त दुःख हुआ। पहले दिन जोगिन जब पुरन्दरके किलेपर अपना फेरा डालकर वापस आई, और येसाजीसे मिल कर वहाँका समाचार बतलाया, तब उन्हें अपनी प्रतिज्ञाके पूर्ण होनेका बहुत ही विश्वास और उत्साह हुआ, और उन्होंने इस बातका भी विचार किया कि, अमुक मार्गसे जाकर अमुक युक्ति करेंगे, और दूसरे ही दिन, उसी युक्तिके अनुसार, श्रीधर स्वामीको छुडा लेंगे। इसके बाद उन्होंने फिरसे जोगिनको किलेपर एक चक्कर लगा और सब हालचाल देख आनेके लिये कहा, और जतलाया कि, हम मार्गमे तुम्हें अमुक वृक्षके नीचे मिलेंगे वही आकर सब वृत्तान्त बतलाना। तदनुसार जोगिन दूसरे दिन फिर गई, और वहाँ जो बात हुई थी, सब आकर येसाजीको उसी वृक्षके नीचे मार्गमें बताई। वह बात क्या थी, सो सब पाठकोको मालूम ही है। उसे सुनते ही येसाजीको बहुत खेद हुआ। उन्होंने समझा था कि, श्रीधर स्वामीकी जो स्थिति पिछले दिन थी, वही यदि अब भी होगी; तो बातकी बातमें उनको छुड़ा लावेंगे। पर अब वह हालत नहीं रही। हमारे आलस्यके कारण श्रीधर स्वामी आज इस दशाको प्राप्त हुए—उनके इन कष्टोंका कारण मै हूँ—बस, यही सोचकर येसाजीको अत्यन्त पश्चात्ताप हुआ। एक तो पहले ही उनकी चित्तवृत्ति इस प्रकार पश्चात्तापपूर्ण थी—फिर जैसा कि हमने ऊपर बतलाया, उस तेजस्वी नवयुवकके उपर्युक्त वचनोसे तो उनका हृदय और भी अधिक दुःखी हुआ। वे चुपचाप नीची गर्दन किये हुए चिन्तामे बैठे रहे। क्या कहें, सो उन्हें कुछ नहीं सूझा। इसके सिवाय वे यह भी जानते थे कि, यदि इस समय कुछ कहेंगे भी, तो अच्छा नहीं लगेगा। हाँ, हमारा सिपाही जवान अवश्य ही कुछ कहनेके विचारम था। उसके होंठ फड़क रहे थे, और बोलनेकी इच्छा वह बहुत प्रयासके साथ दाब रहा था, इतनेमे उस तेजस्वी नवयुवककी तीक्ष्ण दृष्टि, उसी समय, उस ओर झुकी, और देखा कि, उसके मनमे कोई महत्त्वपूर्ण विचार आ रहा है, और वह यही सोच रहा है कि, "कहूँ या न कहूँ।" यह देखकर स्वाभाविक

ही वह उससे बोला, "भाई, तुम्हारे मनमें कोई विचार आया है, ऐसा जान पड़ता है, सो क्या है? बतलाने योग्य हो, तो बतला न डालो?" यह सुनकर वह जवान कुछ हँसा, और फिर तुरन्त ही कहता है, "महाराज, और क्या बतलाऊँ—मुझे यदि आज्ञा हो, तो सचमुच ही मैं तीन दिनके अन्दर श्रीधर स्वामीके चरणोंके दर्शन आप सबको करा दूँगा।"

"क्या? तुमको तो इधरके प्रान्तकी कुछ बहुत जानकारी भी नहीं है; और तुम यह काम करनेकी प्रतिज्ञा करते हो? इधरकी कठिनाइयाँ क्या हैं इसकी क्या तुमको कुछ कल्पना है? पुरन्दर एक बड़ा विचित्र किला है। उसमें प्रवेश करना कुछ हँसी खेल नहीं है। फिर स्वामीजीके हाथों-पैरोंमें मन-मनकी हथकड़ी बेड़ी डालकर उनको कालकोठरीमें, तहखानेके अन्दर, बन्द कर रखा है—वहाँसे तुम कैसे छुड़ा लाओगे? मेरी समझमें नहीं आता। यह बात केवल शूरताके बलपर नहीं हो सकती इस प्रान्तकी—विशेषतः पुरन्दर और उसके आसपासके प्रदेशकी—जिसे पूर्ण जानकारी होगी, और जो सब प्रकारके दावपेंचोंमें पूर्ण दक्ष होगा, उसीसे यह काम हो सकेगा। तुम्हारे समान पुरुषसे यह कैसे होगा? [ऐसाजीकी ओर कुछ आंख मटकाकर] हमारे ऐसाजीके समान सुदक्ष वीरने जिस बातकी प्रतिज्ञा की, और वह पूरी नहीं होसकी, वह बात तुम्हारे समान नवीन पुरुषसे कैसे बन पड़ेगी? मेरी समझमें नहीं आता।"

यह अन्तिम कथन सुनकर येसाजीको और भी खेद हुआ। परन्तु वे कुछ बोले नहीं। वे जैसे अभीतक चुप बैठे थे, वैसे ही बैठे रहे। इतनेमें वह सिपाही उस तेजस्वी पुरुषकी ओर मुड़कर फिर कहता है, "आपकी आज्ञासे मैं सब कुछ कर सकूँगा। चाहे जो करूँ; परन्तु श्रीधर स्वामीको आपके पास लाकर उपस्थित करूँगा, आज्ञा भर चाहिए। मैं जबसे आपके पास आया, कोई भी काम नहीं कर दिखाया सो आज कुछ कर दिखलाऊँ, यही इच्छा है। यह पूर्ण होना आपकी आज्ञा और आशीर्वाद पर अवलम्बित है। जब मैंने एक बार कह दिया

कि, यह काम करूँगा, तब मरनेतक पीछे नहीं हटूँगा, आप विश्वास रखें। या तो इस प्रयत्नमें मरूँगा, या श्रीधर स्वामीको आपके पास लेकर आऊँगा, और कुछ आप न समझें। आपका अनुमोदन, आपकी आज्ञाभर चाहिये।"

"तुम्हारी शूरता और तुम्हारी दृढताके विषयमें कभी मेरे मनमें शंका नहीं हुई। बस, बात एक ही है—जैसीकि तुम्हारी इच्छा है, उसके अनुसार तुमको यह कार्य सौंपनेके लिए मेरा मन तैयार नहीं होता, और यह सिर्फ इसी कारण कि, तुम्हे इस प्रदेशकी अभी पूरी जानकारी नहीं है। यदि होती, तो मैंने तुम्हारे समान उत्साही पुरुषको निराश कभी न किया होता। अब आज मैं स्वयं ही इस कामपर जाऊँगा। स्वामीजीके समान सत्पुरुषकी हमारे पीछे ऐसी दुर्दशा हो, इससे अधिक लज्जाकी और क्या बात हो सकती है? गो-ब्राह्मणोंको कष्ट न हो, उनको जो आजकल कष्ट हो रहा है, उससे छुटकारा हो, इसीलिये तो हमने यह सारा प्रयत्न शुरु किया है। फिर जिन्होंने हमपर आजतक अनेक उपकार किये, आजतक हमारे लिए कितनी ही कार-स्थानियाँ कीं, कितने ही कामोंमें हमको सलाह-मशविरे दिये, वे स्वयं ही संकटमें—और फिर हमारे ही लिये—पड़े हैं, और हम इधर उधर करते हुए चुप बैठे हैं, यह कितनी बुरी बात है। भवानी माताने—जिस दिन वे पकड़े गये, उसके दूसरे ही दिन—सन्ध्या समय, मुझसे कहा था कि, स्वामीजीका बालबाका भी न होगा, और तुमको फिर दर्शन उनके होंगे—हां, प्रयत्न भारी करना पड़ेगा। मैंने बहुत बार विचार किया, पर समझमें नहीं आया कि, किसी सहज उपायसे यह कार्य हो सकेगा। कोई भारी युक्ति किये बिना उनके छूटनेकी आशा नहीं। सो क्या करना है, और क्या नहीं यह सारा मेरे मनमें बिलकुल निश्चिन्त हो चुका है। पुरन्दरका किला तो आज हमलोग जीत नहीं सकते। निस्सन्देह, किला तो हम नहीं जीत सकते, पर श्रीधर स्वामीका छुड़ाना आवश्यक है। मैंने अपने मनमें सारी योजना पूरी पूरी निश्चित कर रखी है। उस योजनामें एक छोटीसी बातकी कमी है। किलेकी जान-

कारी तो मुझे पूरी-पूरी है; और इन दोनोंको भी है। किन्तु "आगे वह नवयुवक कुछ कहनेवाला था कि, इतनेमें दूर, कहीं, किसी मनुष्यके आनेकासा आभास हुआ। तुरन्त ही उसने अपनी तलवार सम्हाली, और फुर्तीके साथ खडा होकर कहता है, "कोई मनुष्य हमपर नजर तो नहीं रख रहा है? इस समय यदि हमारे विचारोंको जरा भी किसीको पता चल गया, तो बड़ी कठिनाई उपस्थित हो जायगी। हमारी सच्ची शक्ति इसीमें है कि, हमारी सब बातें गुप्त रहें, और मशविरा ठीक ठीक हो। क्यों, येसाजी, तानाजी, अरे तुम आज मौन क्यों धारणकिये हुए हो? येसाजी, अरे तुम्हारी प्रतिज्ञा पूरी नहीं हुई, तो तुम इतने खिन्न क्यों हो रहे हो? आजतक हम लोगोंने न जाने कितने विचार किये, और कितने ही विफल हुए। पर क्या कभी भी उनके लिये खेद माना, जो आज मानें? भवानी माताकी कृपा है। उनका जो कुछ कहना है, वही सच होगा। श्रीधर स्वामीका अवश्य हमको फिर दर्शन होगा। इसकी तुम बिल्कुल चिन्ता न करो।"

इसके बाद फिर उसको किसी मनुष्यके आनेकीसी आहट सुनाई दी, और वह बोला, कोई नजर रखनेके लिये आया होगा, इसलिये अब हमको यहाँसे चल ही देना चाहिए, अथवा वह कौन मनुष्य है, इसका पता लगाना चाहिये। यह हम लोगोंका सदैवका स्थान है। यहाँ यदि और किसीका प्रवेश हो गया, तो सारी मन्त्रणा मिट्टीमें मिल जायगी।" इतना उसने कहा ही था कि, इतनेमें उस मनुष्यके आनेकी आहट और भी पास सुनाई देने लगी, जिससे वह तेजस्वी तरुण सिपाही अपनी तलवार सम्हालकर आगे लपका; और यह देखकर कि, दूरपर वृक्षकी ओटसे, कोई मनुष्य भाग रहा है, वह उसको मारने दौड़ा। परन्तु उस आगत मनुष्यने—"मैं यमाजी आपका—मैं आपका—" ये शब्द कहे; और फिर आगे आकर चरणोंके सामने लोटते हुए बोला—"महाराज, आज रातको हथकड़ी-बेड़ियों सहित, निस्सन्देह, बाबाजीको कोटके ऊपर से ढकेल देनेका हुक्म हो चुका है। आप यदि शीघ्रता करेंगे तो···"

उसकी बात अभी खतम भी नहीं होने पाई थी कि, वह तेजस्वी

तरुण सिपाही एकदम लपककर घोड़ेपर आरूढ हुआ, और घोडेको बेत-हाशा छोड़ दिया। हाँ, उस समय इतने शब्द उसके मुँहसे सुनाई दिये—"चलो क्या करना है, सो मैं रास्तेमें तुमको बताता हूँ। अरे इन दुष्टों · · "

आगेके शब्द घोड़ेपर सवार होनेमें उसके मुखसे ठीक-ठीक निकले ही नहीं। चारों वायु-वेगसे घोडे दौडाते हुए निकल गये।

सत्ताईसवां परिच्छेद।

"कोट पर ले गये।"

पिछले परिच्छेदमें जिस दिनका जिक्र हुआ, उसी दिनके सध्या-कालमें एक बुड्ढा घसियारा और उसकी घसियारिन, दोनो सिर पर बड़े बड़ दो घासके गठ्ठे लिये हुए पुरन्दरकिलेके नीचे बस्तीमे आये। वे प्रत्येक आदमीके सामने अत्यन्त दीनवाणीसे पुकारते जाते थे। "अरे घास ले लो, दयावान माई बाप! घास ले लो! घरमें लड़के-बच्चे भूखो मरे जाते हैं, हमको कुछ खाने पीनेको दे दो!" उनका वेश क्या था? सच पूछिये, तो बुड्ढीकी कमरपर समूचा वस्त्र भी नहीं था, बदनके ऊपरके हिस्सेकी बात ही क्या कहना! एक कुर्ता पहने थी, पर वह भी बिलकुल चिथड़ा जान पड़ती थी, और शरीर इतना काला कि, जसे कोयलेसे पोता हो। बुड्ढेके एक हाथमें लाठी, और सीरपर बडा भारी बोझा! बुड्ढा जरा कसा हुआ गठीला दिखाई देता था, पर था आखिर बुड्ढा ही! शरीरपर एक लँगोठीको छोड़कर दूसरा वस्त्र नहीं। हजामत कुछ कुछ बढी हुई। और बोझा इतना भारी लिये कि, झुकनेसे मानो पीठ ही मुड़ी जाती हो! अन्तमे जब देखा कि, उस बस्तीमें घास कोई नहीं लेता और सूर्यास्तका समय आगया, क्षण क्षणपर अन्धकार घना होता जा रहा है, तब वह बुड्ढी अपने बुड्ढेसे कहती है, "अब चलो किलेके ऊपर चलें। वहाँ घुड़सालमें चारा बहुत लगता है, चलकर वहीं बेचें।"

ये शब्द उनके मुँहसे निकले ही थे कि, इतनेमें बुड्ढेने धड़ामसे अपना गट्ठा नीचे डाल दिया, और क्रोधसे उस बुड्ढीकी ओर दौड़कर बोला, "जा, जा, रॉंड कहींकी! कहाका झगड़ा लगाया! चार गाव दौड़ाकर मार डाला; और कहती है, चलो किलेके ऊपर·· " फिर क्या पूछना है! दोनोंमें खूब झगड़ा मच गया! बुड्ढा क्रोधमें आ आकर बोल रहा था; और बुड्ढी भी उसका जवाब उसीकी ओर लपक-लपककर देरही थी। बडा शोरगुल उन्होंने मचा दिया। लोग इकट्ठे हो गये। बुड्ढी अपना बोझा नहीं उतारती, कहती कि, किलेपर जाऊँगी। इधर बुड्ढा अपना बोझा उठाताही नहीं था। वह कहता कि, यहीं हम पटेलजीके यहाँ, रोटी लेकर, दे देंगे। अन्तमें न उसने सुना; और न उसने। तब बुड्ढी यह कहकर कि, मैं अकेली ही जाती हूँ, वहासे चल दी। बुड्ढा जहाँ का तहाँ ही बैठा रहा। शामका वक्त था। किलेपर उसे जाने कौन देता है? पर उसका पक्का निश्चय कि, मैं अपना बोझा बिल्कुल ऊपर लेजाकर घुड़सालमें ही बेचूँगी। किलेके चढ़ावपर जाकर अब वह ऊपर चढना शुरू करनेहीवाली थी कि, पहरेदारोंने उसे रोका; पर वह काहेको मानती है—बड़ी उस्ताद बुड्ढी! अपनी उसी अमंगल भाषामें ऐसी बुरी-बुरी गालियाँ देने लगी कि, कुछ पूछो ही मत! स्त्री ठहरी, उसके शरीरको हाथ कौन लगावे? अन्तमें एक मनुष्य बोला, "अरे जाने दो रॉंड़को, ऊपरसे लौटेगी जूते खाकर!" तब तो पूछो मत। इसी "रॉंडको" शब्दको लेकर गालियोंकी बौछार शुरू की; परन्तु कदम एक भी पीछे नहीं उठाया—बराबर ऊपर ही चढ्ती जाती थी। किसीको भी हिम्मत न हुई कि उसको पकड़कर पीछे खींच ले। वही बड़ी तेजीके साथ ऊपर चली जा रही थी। बीचमें जहाँ जहाँ पहरा लगता था, सब जगह पहरेदार लोग उसको रोकते, परन्तु वह अपनी जिह्वाको कमान लचाकर गालियोंकी बाणवर्षा करती ही जाती थी; यही नहीं, बल्कि जब कोई उसके पास पकड़ने आता वह ऐसी गालियाँ देती कि, कुछ पूछो ही मत। इतना ही क्यों? बल्कि उलटे उसीकी ओर दौड़ती; और कहती कि, "अच्छा लो, मुझे ढकेल दो! परन्तु

रुए सिपाही एकदम लपककर घोड़ेपर आरूढ़ हुआ, और घोड़ेको बेत-गशा छोड़ दिया। हाँ, उस समय इतने शब्द उसके मुँहसे सुनाई देये—"चलो क्या करना है, सो मैं रास्तेमें तुमको बताता हूँ। अरे इन दुष्टों · · "

आगेके शब्द घोड़ेपर सवार होनेमें उसके मुखसे ठीक-ठीक निकले ही नहीं। चारों वायु-वेगसे घोड़े दौड़ाते हुए निकल गये।

सत्ताईसवां परिच्छेद।

"कोट पर ले गये।"

पिछले परिच्छेदमें जिस दिनका जिक्र हुआ, उसी दिनके सध्या-कालमें एक बुड्ढा घसियारा और उसकी घसियारिन, दोनों सिर पर बड़े बड़ दो घासके गठ्ठे लिये हुए पुरन्दरकिलेके नीचे बस्तीमें आये। वे प्रत्येक आदमीके सामने अत्यन्त दीनवाणीसे पुकारते जाते थे। "अरे घास ले लो, दयावान माई बाप! घास ले लो! घरमें लड़के-बच्चे भूखों मरे जाते हैं, हमको कुछ खाने पीनेको दे दो!" उनका वेश क्या था? सच पूछिये, तो बुड्ढीकी कमरपर समूचा वस्त्र भी नहीं था, बदनके ऊपरके हिस्सेकी बात ही क्या कहना! एक कुर्ता पहने थी, पर वह भी बिलकुल चिथड़ा जान पड़ती थी, और शरीर इतना काला कि, जैसे कोयलेसे पोता हो। बुड्ढेके एक हाथमें लाठी, और सीरपर बड़ा भारी बोझा! बुड्ढा जरा कसा हुआ गठीला दिखाई देता था, पर था आखिर बुड्ढा ही! शरीरपर एक लँगोटीको छोड़कर दूसरा वस्त्र नहीं। हजामत कुछ कुछ बढी हुई। और बोझा इतना भारी लिये कि, झुकनेसे मानो पीठ ही मुड़ी जाती हो! अन्तमें जब देखा कि, उस बस्तीमें घास कोई नहीं लेता और सूर्यास्तका समय आगया, क्षण क्षणपर अन्धकार घना होता जा रहा है, तब वह बुड्ढी अपने बुड्ढेसे कहती है, "अब चलो किलेके ऊपर चलें। वहाँ घुड़सालमें चारा बहुत लगता है, चलकर वहीं बेचें।"

ये शब्द उनके मुँहसे निकले ही थे कि, इतनेमें बुड्ढेने घड़ामसे अपना गट्ठा नीचे डाल दिया; और क्रोधसे उस बुड्ढीकी ओर दौड़कर बोला, "जा, जा, रौंड़ कहींकी ! कहांका झगड़ा लगाया ! चार गाव दौड़ाकर मार डाला; और कहती है, चलो किलेके ऊपर···" फिर क्या पूछना है ! दोनोंमें खूब झगड़ा मच गया ! बुड्ढा क्रोधमें आ आकर बोल रहा था; और बुड्ढी भी उसका जवाब उसीकी ओर लपक-लपककर देरही थी। बड़ा शोरगुल उन्होंने मचा दिया। लोग इकट्ठे हो गये। बुड्ढी अपना बोझा नहीं उतारती, कहती कि, किलेपर जाऊँगी। इधर बुड्ढा अपना बोझा उठाताही नहीं था। वह कहता कि, यहीं हम पटेलजीके यहाँ, रोटी लेकर, दे देंगे। अन्तमें न उसने सुना; और न उसने। तब बुड्ढी यह कहकर कि, मैं अकेली ही जाती हूँ, वहासे चल दी। बुड्ढा जहाँ का तहाँ ही बैठा रहा। शामका वक्त था। किलेपर उसे जाने कौन देता है? पर उसका पक्का निश्चय कि, मैं अपना बोझा बिल्कुल ऊपर लेजाकर घुड़सालमें ही बेचूँगी। किलेके चढ़ावपर जाकर अब वह ऊपर चढ़ना शुरू करनेहीवाली थी कि, पहरेदारोंने उसे रोका, पर वह काहेको मानती है—बड़ी उस्ताद बुड्ढी ! अपनी उसी अमंगल भाषामें ऐसी बुरी-बुरी गालियाँ देने लगी कि, कुछ पूछो ही मत ! स्त्री ठहरी, उसके शरीरको हाथ कौन लगावे? अन्तमें एक मनुष्य बोला, "अरे जाने दो रौंड़को, ऊपरसे लौटेगी जूते खाकर।" तब तो पूछो मत। इसी "रौंड़को" शब्दको लेकर गालियोंकी बौछार शुरू की; परन्तु कदम एक भी पीछे नहीं उठाया—बराबर ऊपर ही चढ़ती जाती थी। किसीको भी हिम्मत न हुई कि उसको पकड़कर पीछे खींच ले। वहो बड़ी तेजीके साथ ऊपर चली जा रही थी। बीचमें जहाँ जहाँ पहरा लगता था, सब जगह पहरेदार लोग उसको रोकते; परन्तु वह अपनी जिह्वाको कमान लचाकर गालियोंकी वाणवर्षा करती ही जाती थी; यही नहीं, बल्कि जब कोई उसके पास पकड़ने आता वह ऐसी गालियाँ देती कि, कुछ पूछो ही मत। इतना ही क्यों? बल्कि उलटे उसीकी ओर दौड़ती; और कहती कि, "अच्छा लो, मुझे ढकेल दो ! परन्तु

स्त्रीके मुँह कौन लगता ? सब हैरान होकर यही कहते कि, "जाने भो दो, ऊपर कोई पकड़ेगा ही।" करते क्या ? बस, इसी प्रकार वह ऊपर चढ़ती जा रही थी।

इधर वह बुड्ढा घसियारा पटेलजीके घरके पास अपना बोझा डालकर बैठा था। वहाँ वह अत्यन्त दीनवाणीसे कह रहा था—"आप मेरा बोझा लेकर रातको मुझे सोनेकी जगह और थोड़ीसी रोटी दे दीजिये।" फिर कहने लगा, "आपका कुछ काम हो, तो मैं कर दूँ, लेकिन रातको ठहरनेकी जगह दे दीजिये।" बस, इसी भाति बातें बनाकर और अपनी बुढ़ियाके हठीलेपनपर कुछ बक-झककर उसे पटेलजीकी पशुशालाके पास बोझा डाल दिया, और घुड़साल तथा पशुशालाके बीचमें जो घास रखनेका स्थान बना था, वहां अपनी साथरी बिछा दी। उधरसे कोई कहता है, "अरे, यहाँ मत सो।" पर वह इतनेमें लुढ़क ही गया। कहने लगा, "अजी सरकार, एक रातके लिए तो जगह दीजिये। वह बुढिया हठ करके किलेपर चली गई, मेरे पैरोंमे बल नहीं रहा, नहीं तो मैं भी चला जाता।" बस, इस प्रकार कहते हुए, वह मानो घरकी ही तरह लोटने लगा। उसकी वह ढिठाई देखकर फिर कोई कुछ नहीं कह सका। उसने तो ढिठाईका यहाँतक कमाल कर दिया कि, जैसे कोई पशुशालाका या घुड़सालका नौकर ही हो। किसीसे कहता कि, निकालो डफली, मैं लावनी गाता हूँ और अपने उस बेसुरे गलेसे उलटी-सीधी भाषामें गीत गाने भी लगा। यहाँतक कि जब गट्टी जम गई, तब फिर क्या पूछना है!

बुड्ढा बड़ा तालबेली है, यह समझकर लोग उससे हँसी मजाक भी करने लगे। किसीने उसे चिल्ममें रखनेको तमाखू दी, कोई उसे यह कहकर कि, "अच्छा एक गीत और गाओ।" उससे बार बार गानेका आग्रह करने लगे। आखिर बुड्ढेका सब हिसाब जम गया। रातके लिये रोटी भी उसे मिल गई।

इधर बुढ़िया चढ़ती चढ़ती ऊपर जा रही थी। बीचमें उसे बहुत लोगोंने बाधा दी, परन्तु उसके जिह्वालके सामने कोई टिक नहीं सका।

टिकता कैसे ? उसके शरीरको कोई हाथ लगा ही नहीं सकता था। एक-बार एक आदमीने अपने हाथसे उसकी बाँह पकड़ ली, तो गालियाँ देकर लगी शंखध्वनि करने! आखिर उसको छोड़ना ही पड़ा, और वह फिर आगे चल दी। अन्तमें वह ऊपरके वड़े दरवाजेके पहरेतक पहुँची। वहाँ नीचेके सब दरवाजोंसे भी अधिक उसने गोलमाल मचाया, और अपना प्रवेश कर ही लिया। उसने वहाँ क्या क्या करनेकी धमकी दी; और वह सब कर सकती हूँ, अथवा नहीं—इसका नमूना दिखानेके लिए उसने वहाँ क्या क्या कर दिखाया, इत्यादि बातोंका वर्णन करते रहनेकी यहाँ कोई आवश्यकता दिखाई नहीं देती; और यदि कुछ हो भी तो उसका वर्णन करना इष्ट भी नहीं है। यहाँपर सिर्फ इतना ही बतलाना काफी होगा कि, वह बुढ्ढी, जहाँतक उससे होसका, सब प्रकारका प्रयत्न करके अन्तिम दरवाजा भी पार कर गई; और एकदम घुड़सालकी ही ओर जा पहुँची। मुख्य द्वारको उल्लंघन करनेके बाद घुड़सालतक जानेमें उसे कोई विघ्न उपस्थित नहीं हुआ। क्योंकि सबने यही खयाल किया कि, घुड़सालमें घासका बोझा मँगाया गया होगा, तभी तो यह लाई है; और इसी कारण किसीने उसकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। बुढिया इस प्रकार—जैसे यहाँकी सब जानकारी रखती हो—इधर-उधर घुमती हुई सीधी घुड़सालमें पहुँची, और वहाके अधि-कारीसे, घास लेकर रोटी देनेके लिए, आग्रह करने लगी। इसके सिवाय, अपने पतिसे भी अधिक ढिठाई दिखलाकर रातभर वहीं टिकनेका उसने सुभीता कर लिया। अनेक इधर-उधरकी बातें कहकर उसने वहाके लोगोंको त्रस्त कर छोड़ा। अन्तमें जब उसने देखा कि, अब यदि अधिक कुछ कहूँगी, तो ये लोग यहासे अवश्य भगा देंगे, तब उसने फिर अपना बोलना कुछ कम कर दिया। वहासे उसे भगा देनेके लिए अनेक लोगोंने अनेक प्रयत्न किये, पर कोई लाभ न हुआ। इस प्रकार धीरे-धीरे कुछ रात भी गई।

इसी रातको आधीके रातके लगभग श्रीधर स्वामीको कोटके ऊपर-से ढकेलकर मार डालनेका निश्चय किया गया था; पर यह बात वहाके

बहुतेरे लोगोंको मालूम नहीं थी। ज्यों-ज्यों रात जाने लगी, त्यों त्यों श्रीधर स्वामीके पहरेदार अत्यन्त क्रूरतापूर्वक उनको गालियाँ देते हुए यह कहने लगे कि, "अब तुम्हारा अन्तकाल आगया है, अब भी पूरा पता देकर छूट जाओ।" इस प्रकार भय दिखलाते हुए, बाहरसे ही नाना प्रकारसे उनको तंग कर रहे थे। एक मुसल्मान सिपाहीने तो एक झरोखेसे उनके ऊपर थूक भी दिया। यह देखते ही मराठे सिपाहीने उस मुसल्लेको डाँटा। दोनोंमें झगड़ा शुरू हो गया—यहाँतक कि मार-पीटकी भी नौबत आ जाती, पर मराठा सिपाही बेचारा अकेला था, और मुसल्मान दो-तीन थे। बाबाजी बेचारे गर्दन नीची किये हुए भीतर चुपके बैठे थे। करते ही क्या? उस समय उनके मनमें क्या-क्या विचार आरहे होंगे? देखो, हम इस दशामें पड़े हुए हैं, और हमको कोई छुड़ानेके लिये प्रयत्न नहीं करता! क्या हम इन मुसल्मानोंकी कैदमें रहकर इसी प्रकार पच पचकर मरेंगे—अथवा जैसा कि ये धमकी देते हैं, हमको सचमुच ही अब कोटके ऊपरसे ढकेलकर प्राण ले लेंगे? बस, इसी प्रकारके विचार मनमें आनेसे उनका चित्त खिन्न हो रहा था। जब कि, वे इस प्रकार अत्यन्त दुःखद विचारोंमें निमग्न थे, एकाएक बाहरके लोगोंके मुखसे कुछ शब्द उनके कानोंमें पड़े। जिस प्रकार पिंजरेमें पड़े हुए शेरकी अत्यन्त हीन दशा हो जाती है, उसी प्रकार बेचारे बाबाजीकी भी हो रही थी। जो शब्द उन्होंने अभी कानोंसे सुने थे, वे इतने त्वेषजनक थे कि, यदि बाबाजी उस समय अपनी उस हीन अवस्थामें न होते, तो एक-दो मुसल्मानोंको अवश्य ही उन्होंने कब्रका रास्ता दिखलाया होता। परन्तु उस समय वे कैदोकी हालतमें थे—हाथों और पैरोंमें भयकर हथकड़ियाँ बेड़ियाँ पड़ी हुई थीं—फिर भी उनको इतना त्वेष आया कि, उन्होंने क्रोधमे दाँतोंसे होंठ चबाकर ज्यों ही धड़से अपने हाथ पैर पटके, त्योंही जमीनतक हिल उठी। उनके पैरोंमें अवश्य कुछ चोट आई, पर इसकी उन्होंने परवा नहीं की। इसी प्रकार होंठ भी उन्होंने दाँतोंसे ऐसे चबाये कि, शायद खून निकलनेतककी नौबत आगई। उनकी आँखोंसे मानो आगकी चिनगारियासी निकलने

लगीं; और सदैवकी भाति वे अपनी कुबड़ी ढूँढने लगे, पर कुबड़ी वहाँ थी कहाँ ? वह तो कभीकी उनके हाथसे छिना ली गई थी। शक्तिहीन क्रोध क्या कर सकता था ? "इस वैरागीको कोटके नीचे ढकेलनेके पहले, आओ, इसके मुँहमें हम गोमास डालें, और इसको मुसल्मान बनावें।"—ये शब्द बाहरके जिस मुसल्माननने कहे थे, उसीके ऊपर बाबाजी चड़बड़ा रहे थे। पर करते क्या ? सिर्फ उन्होंने यह निश्चयभर मनमें कर लिया कि, मौका आनेपर, ऐसी दशामें भी, कमसे कम एक को तो अवश्य ही उलटा दूँगा; और यह दिखला दूँगा कि, सच्चे हिन्दूधर्म क्या तेज होता है। धीरे धीरे आधी रातका समय ज्यों-ज्यों निकट आने लगा, त्यों-त्यों उन मुसल्मान पहरेदारोंकी छेड़छाड़ अधिकाधिक बढ़ने लगी। कुछ देर बाद किलेदार तथा कुछ एक, दो आदमी बाबाजीकी कोठरीकी ओर आये। किलेदारका चेहरा बिल्कुल उदास होरहा था। यहाँतक कि उसपर बिल्कुल मुर्दनीसी छाई हुई थी। उसके कदम इस प्रकार पड़ रहे थे, जैसे किसी मनकी बेड़ियाँ डाले हुए मनुष्यके पड़ रहे हों। बीच-बीचमें वह दीर्घ निःश्वास छोडता जाता था, सो इस प्रकार, जैसे उसके प्राण ही निकल रहे हों! जैसे उसको अत्यन्त—अत्यन्त ही शोक हो रहा हो! किलेदार साहब साथके लोगोंसे कुछ बोलते नहीं थे—चुपके चले आरहे थे। अन्तमें जब बिल्कुल कोठरीके पास ही आगये, तब उनको देखकर एक पहरेदार तुरन्त ही उठा, और कोठरीका दरवाजा खोल्ने लगा। उस समय किलेदार साहबने अपने साथके एक मनुष्यसे कहा, "कुशाबा, जो कुछ कहना हो, फिर अब तू ही कह ले, मेरा···" इसके आगे मानो वे एक अक्षर भी नहीं बोल सके इतनेमें दरवाजे खुल जानेसे उनके साथकी मशालका उजेला भी कोठरीके अन्दर गया और बाबाजी, जो दरवाजेके पास ही बैठे हुए थे, उनके मुखपर पड़ा। इससे उनका वह अत्यन्त त्रस्त, क्रुद्ध; और कुछ खिन्नसा चेहरा उन लोगोंको दिखाई दिया। उसे देखते ही किलेदारके शरीरपर रोमाञ्च हो आया। यही नहीं, बल्कि उनकी आँखोंमें जैसे आँसु भी आगये हों, ऐसा भास हुआ।

क्योंकि मशालके उजेलेसे उनकी आँखोंमें पानीकी झलक दिखाई अवश्य दी। लोगोंके भीतर आते ही बाबाजीने अपनी स्तब्ध दृष्टिसे सिर्फ एक बार उनकी ओर देखा। मुँहसे एक शब्द भी उच्चारण नहीं किया हाँ, कुशाबा अवश्य ही आगे होकर बोला, "बाबाजी अब प्राण जानेका समय आगया, अब तो कुछ कह दो। नहीं तो व्यर्थके लिये मरोगे, और कुछ नहीं।" बाबाजी कुछ नहीं बोले। फिर कुशाबा उनसे कहता है —

"देखो, तुम वैरागी हो। आज हमारे किलेपरसे एक वैरागी व्यर्थके लिये ढकेला जाकर प्राणोंसे हाथ धो बैठेगा। हमको एक वैरागीकी हत्या लगेगी, यही सोचकर किलेदार साहबको आज दो दिनसे नींद नहीं आरही है। सच्ची सच्ची बात यदि तुम बतला दोगे, तो ये कुछ विनय-प्रार्थना करके तुमको छुड़ा देंगे। तुमको यदि कुछ भी मालूम न हो, तो सच्चे-झूठे ही दो-चार नाम बतलाकर अपना छुटकारा पा लो। लेकिन व्यर्थके लिये हमारे किलेपरसे तुम्हारी हत्या न होनी चाहिये। कहो, जो कुछ कहना हो। कमसे कम इतना तो प्रकट करो कि, आज नहीं कल परसों बतलावेंगे—फिर··· ··"

परन्तु बाबाजीके स्तब्ध देखते रहनेके अतिरिक्त और कुछ भी उत्तर उसके इस सारे कथनका नहीं मिला। ऐसा जान पड़ा कि, ज्यों ज्यों अधिकाधिक समय जाने लगा, त्यों-त्यों उनमें और भी अधिक शान्ति आने लगी। कुशाबाने बार-बार उनसे कहा कि, "तुम कुछ नहीं बोलेंगे, तो इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा। इसलिये तुम कुछ कहो अवश्य। नहीं तो खाँ साहब स्वयं कोटपर खड़े होकर तुमको नीचे ढकेलनेका घोर कर्म अपने सामने ही करावेंगे।" कुछ नहीं, सब व्यर्थ! बाबाजीने मुख ही नहीं खोला। कुशाबाने साम, दाम, दण्ड, भेद इत्यादि चारों प्रकारसे समझाया, और सिर्फ अपने भिन्न-भिन्न दृष्टिक्षेपोंसे ही किलेदारने भी बाबाजीपर आनेवाले भावी संकटका महत्व दर्शाया, पर सब व्यर्थ। उसके मुखसे एक चकार शब्द भी नहीं निकला। अन्तमें वे दोनों हैरान होगये। समझा कि, अब कोई भी उपाय बाकी नहीं रहा। और यह

कहते हुए कि, "क्या किया जाय, तुम्हारा भाग्य" वे वहाँसे चलने लगे। किन्तु किलेदारका पैर वहाँसे नहीं उठता था; और जो आँसू अबतक केवल उनकी आँखोंमें ही थे, वे अब दो बड़े-बड़े बिन्दुओंके रूपसे एकदम बाहर निकल आये। परन्तु किलेदारने उन्हें इतनी जल्दी से पोंछ डाला कि, उनका आना शायद किसीको मालूम भी न हुआ होगा। हाँ, बाबाजीकी दृष्टिसे वे नहीं छिप सके। यही नहीं, बल्कि उनको देखकर, ऐसा मालूम हुआ कि, स्वयं उनके नेत्रोंमें भी वैसे ही आँसू आनेको हुए। किलेदार साहब अत्यन्त कष्टसे वहाँसे पैर उठाकर चलने लगे। कोठरीसे बाहर आनेतक उन्होंने कई बार बाबाजीकी ओर देखा होगा, पर इससे लाभ क्या? अन्तमें जब वे बिलकुल चलने ही लगे, तब उनसे नहीं रहा गया। वे कुछ ठिठकसे गये, और बाबाजीकी ओर मुड़कर बोले, "क्यों? फिर? प्राणोंकी कुछ भी परवा नहीं? खाँ साहबने हुक्म दे दिया है, उसमें अब उनकी ओरसे कोई भी दया-मया नहीं होगी। इसीलिये कहता हूँ, जरा सोच लो,·· ·· कहो, तो एक-दो दिनकी मुद्दत दिला दूँ। मैं उनसे कह देता हू कि, वह कल सब कुछ बतला देगा······"

ये अन्तिम शब्द किलेदारके मुखसे अभी पूरे-पूरे निकले भी नहीं थे कि, बाबाजी बहुत जल्द उनकी ओर मुँह करके जोरसे कहते हैं, "नहीं नहीं! जो आज वही कल! और जो कल वहीं परसों। तुम एक अक्षर भी न बोलो! जब कोई बतलानेकी बात मेरे पास है ही नहीं, तब बतलाऊँ क्या? बस, बार बार वही मरनेका डर ही तो? आजतक मेरे समान न जाने कितने मर गये! जाओ, और खानसे कह दो कि, खुशी-से चला आवे, और उसको जो कुछ करना हो, सो करे। मैं, मृत्युको डरूँगा! मृत्युहीको मुझसे डरना चाहिये—मृत्युको!"

इतना कहकर उन्होंने फिर अपने होठ ऐसी मजबूतीसे बन्दकर लिए कि, जैसे बिलकुल सी डाले गये हों। इसके बाद फिर वे पहलेहीकी भाँति उदास दृष्टिसे बैठकर देखने लगे। कुशावाने अपनी चपट पञ्जरी फिर शुरू की। किलेदारने भी संक्षिप्त शब्दोंसे, अर्थपूर्ण दृष्टिसे अपना

मनोगत भाव बाबाजीसे प्रगट किया, पर कोई परिणाम न निकला। बाबाजी किसी पाषाण-मूर्तिके सदृश अचल रहे।

अन्तमें वे दोनों चले गये, और कुछ ही देर बाद खान, चार-पाँच मनुष्योंके साथ, फिर किलेदार साहबको, और उनके साथवाले पहलेके ही दोनों मनुष्योंको लेकर आया। खानके आते ही पहरेदारो और मशालचियोंकी बडी गडबडी मची, शीघ्र ही कोठरीका दरवाजा खोला गया। खानके लिये एक उच्चासन लाया गया था, जिसपर वह बैंठा। उसका हुक्म छूटनेकी देर थी कि, दो-सिपाही जाकर बाबाजीको बाहर ले आये। बाहर लानेके पहले एक मुसल्मान पहरेदारने बाबाजीसे यह कहकर कि, "उठ बे उठ, वैरागी बना फिरता है!" उन्हें लात मारनेके लिये पैर आगे बढ़ाया। बाबाजीने अपने हथकडी भरे हुए हाथसे उसको ऐसा तमाचा मारा कि, उसकी कनपटी सुर्ख पढ गई। इससे वे लोग और भी अधिक चिढ गये, परन्तु बाबाजीको इसकी बिलकुल परवा नहीं हुई। वे धीर और शान्त दृष्टिसे देखते हुए तथा गम्भीरताके साथ बाहर आये। खानने उनके ऊपर बुरी बुरी गालियोंकी बौछार शुरू की, किन्तु उनका ध्यान ही उस ओर न था। उनका ध्यान बारम्बार किलेदार साहबके चेहरेकी ओर जाता था। क्योंकि उनका चेहरा इस समय इतना गिर गया था कि, कुछ कहा नहीं जा सकता। उनकी आँखें भी बिलकुल दु:खसे भरी हुई दिखाई दे रही थी। ऐसा मालूम होता था कि, उनके ऊपर कोई बडा सकटसा आनेवाला है। इधर खानकी बडबड जारी ही थी। उसने बाबाजीसे बहुत कुछ डरा-धमकाकर पूछना चाहा, पर बाबाजीने उसकी एक बातका भी जवाब नहीं दिया। अन्तमें उसने बाबाजीको कोटके ऊपर ले चलनेका हुक्म दिया। दो-तीन सिपाहियोंने बाबाजीको पकड़ा, और किलेकी पिछली ओर जिस कोटपरसे उनको ढकेलनेका निश्चय किया गया था, और जहाँसे अबतक कितने ही लोगोंको ढकेलकर उनके प्राण लिये जाचुके थे, वही बाबाजीको भी ले चले। बाबाजी बिलकुल धीर-प्रशान्त थे। किसी प्रकारकी घबडाहट उनके चेहरेपर दिखाई नहीं पड़ती थी। हाँ, मुखसे "जय रघुवीर" "जय

गुरुदेव" का उच्चारण कर रहे थे। इतनेमें कोटसे दो हाथके अन्तरपर ले जाकर उन्हें खडा किया गया।

अट्ठाईसवां परिच्छेद।

छुटकारा।

जैसा कि ऊपर बतलाया, जब कोटसे दो हाथके अन्तरपर बाबाजी-को ले जाकर खड़ा किया, तब इसके बाद खान फिर एकबार उनके पास आया, और अपनी उद्दण्ड वाणीसे दो-चार कटुवचन सुनाते हुए बाबाजीसे कहा, "बतला, नहीं तो तू आज यहाँसे जिन्दा छूटकर नहीं जा सकता।" बाबाजीने केवल तिरस्कारपूर्ण दृष्टिसे उसका अधिक्षेपमात्र किया। मुँहसे एक अक्षर भी नहीं निकला। किलेदार खानके पास ही खड़ा था। उस बुड्ढेके अन्तःकरणमें, उस समय, ऐसा जान पड़ता था कि, कोई अत्यन्त खिन्न विचार आ रहे हैं। इसके सिवाय उसकी चेष्टासे यह भी दिखाई दिया कि, जैसे वह कुछ कहना चाहता हो, पर कहनेकी हिम्मत न पडती हो। आखिर जब उससे न रहा गया, तब दिलको कडा करके सर्जे खाको सलाम करते हुए, रूमालसे हाथ बाँध-कर, वह बोला, "हजरत! इस वैरागीको आप बिना कारण दण्ड दे रहे हैं। मैंने और आपके साथ जो ये मुरारसाहबके भतीजे आये हैं, इन्होंने; और इस कुआवेने, इन सबने मिलकर बहुत कुछ पूछा-बताया; पर वैरागी कुछ भी बतला नहीं सका, इसलिये प्रार्थना है कि, वैरागी-की हत्या जैसे आजतक कभी नहीं हुई, वैसे ही आज भी न हो। वैरागी सच्चा वैरागी दिखाई देता है—फिर आगे आपकी मर्जी—"

किलेदारके मुँहसे आगे और कोई शब्द ही न निकले; और यदि कुछ निकले भी तो वे स्पष्ट सुनाई नहीं दिये। अस्तु। इसके बाद वह बराबर बाबाजीकी ओर देखता हुआ खड़ा रहा। सर्जे खाने किलेदारकी उपर्युक्त बात सुनकर कुछ तिरस्कारसा दिखलाया, और तुरन्त ही उससे बोला, "तुम सभी एक हो। किन्तु मैं कभी तुम्हारी ऐसी बातोंमें नहीं

आऊँगा। चाहे तुम हो, चाहे मेरे साथ आये हुए ये मुरार साहबके भतीजे हो, सब एक ही हैं। और तुम ऐसे लोगोंको बचाना अवश्य चाहोगे। पर मैं एक भी न सुनूँगा। क्योंकि मुझको विश्वास हो चुका है कि, इस वैरागीको सब बातें पूरी पूरी मालूम हैं। यही नहीं, बल्कि इसको उस मन्दिरमें ही किसी विशेष उद्देश्यसे रखा है—अन्यथा इसकी कुबडीमें गुप्तीकी क्या जरूरत थी? आजकल तुम मराठे सरदारों और किलेदारोंने बादशाह सलामतके पास तो अपना विश्वास जमा रखा है, और मेरे समान सरदारोंके साथ अपने नौकरोंकासा बर्ताव करते हो, और इस प्रकार तुम लोगोंने ऐसे ऐसे बागियोंको लूट-मार मचानेके लिये एक प्रकारसे स्वतन्त्रतासी दे रखी है। इसीका तो यह फल है। ये हज-रत, सरदार शिवदेवराव—मुरार साहबके भतीजे हैं, इसलिए ये समझते हैं कि, बस, हम जो कुछ करें, वही ठीक है। परन्तु हनुमानजीके मन्दिर-में जब इन्होंने इस वैरागीसे कुछ गुन-गुनाकर गुप्त रूपसे बातें कीं, और मुझे बाहर रख दिया, तभी मैं समझ गया! लेकिन कुछ बोला नहीं। फिर यहाँ जबसे आया तबसे तुम लोग जो व्यवहार कर रहे हो, उससे तो मुझे पूरा पूरा विश्वास हो गया है कि, तुम लोग इस वैरागीको छोड़ देना चाहते हो। नमकहरामी तो तुम लोगोंकी नस नसमें भरी है। ठीक है। धीरे-धीरे ये सारी कार्रवाइयाँ प्रकट हो जायंगी, और प्रत्येक किलेकी जाँच की जायगी। मैं यहासे जाते ही तुम लोगोका सब हाल बतलाऊँगा। अब मैं एक भी नहीं सुननेका। तुम सब लोग यहासे चले आओ। मै स्वय अब यहाँ रहूँगा, और अपनी आँखोके सामने इसके मुँहमें गोमास डलवाकर इसे मुसल्मान बनाऊँगा और तब फिर इसे कोटके नीचे ढकेलूँगा। इतना किये बिना मै यहासे उठ नहीं सकता। तुमको देखना न हो, तो जाओ, चले जाओ, नमकहरामो कहींके!" बस किलेदारका सारा शरीर जल उठा, उस बुड्ढेका क्रोध सम्हाले नहीं सम्हला, और वह एकदम आगे बढकर, अत्यन्त क्रोधके कारण टूट टूटकर निकलनेवाले शब्दोंमें कहता है। "दे-देखता हूँ ·· कै कसे तू इसे ढकेलता है, किला मेरा है, और आज इस घड़ीतक तो

मेरा ही अमल है। इस अमलमें, जो चाहूँगा, मैं करूँगा। तू कहासे आया? देखता हूँ, तू कैसे इसे ढकेलता है! मैं अवश्य, तेरे समान प्रत्यक्ष कालके जबड़ेसे, उसे निकालूँगा। देखता हूँ, कौन माईका लाल है, जो मेरे सामने इसको ढकेले!"

ये शब्द बिल्कुल स्वाभाविक रूपमें यहाँ दिये हैं; परन्तु वह बुड्ढा जब इन शब्दोंका उच्चारण कर रहा था उस समय उसकी दशा देखने योग्य थी—मानो प्रत्यक्ष जमदग्निने ही उसके शरीरमें संचार किया हो! सब लोग उसका वह क्रोध देखकर बिल्कुल स्तब्ध हो गये। प्रत्येक आदमी बिल्कुल स्तब्ध रूपसे एक दूसरेकी ओर देखता हुआ खड़ा था; परन्तु सर्जे खाँ, ऐसा जान पड़ा कि, बड़े आश्चर्यमें आ गया है। परन्तु उसका वह आश्चर्य बहुत जल्द अब क्रोधके स्वरूपमें परिणत हो गया। यहाँ तक कि वह अत्यन्त चड़फड़ाकर उस बुड्ढेकी ओर दौड़ा; और कहता है, "तू समझता है कि, मैं तेरी ऐसी धमकी या डाँटसे डर जाऊँगा? इस प्रकार यदि हम डर जाते, तो हमारा राज्य ही यहाँ कभी न हुआ होता। जा, यहासे चुपकेसे चला जा। और तुम सभी यहासे चले जाओ। अब मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि, तुम सब लोग बल्वाइयोंकी तरफ़ देखी-अनदेखी करते हो—यही नहीं, बल्कि ऐसा जान पढता है तुम सब भीतरसे उनमें मिले हो। तुम क्या समझते हो कि, यह मैं नहीं जानता कि, राजा शहाजी भी भीतरसे अपने लड़केको मदद दे रहे हैं? चलो, जाओ!"

बस! इस अन्तिम कथनसे तो हद हो गई। बुड्ढेके क्रोधकी सीमा न रही। उसने कुशावाके हाथकी तलवार छीनकर तड़ाकसे निकाल ली; और एकदम सर्जेखाँकी ओर झपटा। एक क्षणका भी यदि विलम्ब हो गया होता, तो सर्जेखाँ उस बुड्ढेकी तल्वारके घाट उतर जाता, पर सरदार शिवदेवरावने आगे बढ़कर उस बुड्ढेको पीछे खींच लिया। कुशावा इत्यादि अन्य लोग भी दौढ पड़े, और सबने मिलकर बुड्ढेको रोक लिया। उसने बहुत कुछ कहा—"छोडो! छोड़ो! कौन नमकहराम है, सो मैं इसे दिखला दूँ!···जहाँ राज्य दबानेको मिले, वहाँ उसे

भेजूँ होगा, इसके सिवाय, जैसा कि मुझे भारी सन्देह है, तेरे मन्दिरको भी जडमे खोद डालूँगा। कभी नहीं छोड़ूँगा। बतला व्यर्थके लिये अपने प्राण मत गमा।" फिर भी बाबाजीके मुँहसे एक शब्द भी नहीं निकला। हॉ, सिर्फ इतना अवश्य दिखाई दिया कि, उनके नेत्रोंसे कुछ ऑसूसे निकल रहे हैं। परन्तु सर्जेखाको वे भी दिखाई नहीं दिये। दिखाई देते, तो शायद उसे कुछ आशा उत्पन्न होती, और उसने अपने प्राणदण्डके हुक्मको, शायद कुछ कालके लिए मुलतवी भी कर दिया होता, पर ऐसा कुछ नही हुआ। उसने जब पूरे तौरसे जान लिया कि, अब हमारी धमकी अथवा डरवानेसे कोई लाभ नहीं होता, तब उसने अत्यन्त क्रूरताके साथ—"जाने दो सालेको फेंक दो!" कहकर हुक्म दिया। परन्तु इतनेमे कोटके नीचेकी ओरसे कुछ खरभरानेकीसी आवाज आई, जिसे सुनकर खानके सिपाही कहते हैं—"यह क्या? यह क्या?" परन्तु देखते हैं, तो वहॉ कुछ नहीं है! सर्जेखाने उनको दो-चार अश्लील गालियॉ सुनाकर फिर उन्हें वही हुक्म दिया। इतनेमें पीछेकी ओरसे एकदम बडा भारी गुलगपाड़ा और कोलाहलसा कानोंमें सुनाई दिया। सब लोग पीछे मुडकर देखते हैं, तो घुड़सालके पास घासका जो बड़ा-भारी गञ्ज था, उसमें एकदम खूब जोरकी आग लगी हुई है, और घुड़सालके आसपास जो छप्पर था, वह भी आगमे जल रहा है। यही नहीं, बल्कि किलेके नीचे पटेलके घरमें तथा उसके घासके जखीरेमे और आसपासकी अन्य दस-पॉच झोंपड़ियोंमें भारी आग लग रही है! जब ऐसा मौका उपस्थित हो गया, तब तमाशबीनोंमेसे तो कोई भी आदमी वहॉ, बाबाजीकी वध क्रिया देखनेके लिए, खड़ा नही रह गया, सब उस आगकी ओर दौड़े। इतनेमे एक और प्रकरण उपस्थित हुआ—अर्थात् सरदार सर्जेखा किलेके जिस भागमें ठहरा था, उसमे भी आग लगी। इस प्रकार जब सभी मार्केके स्थानोंमें आग लग गई, और हवाके वेगसे वह फैलने भी लगी, तब फिर क्या पूछना है! जिसको देखो, वही उसी ओरको दौडा चला जा रहा है। घुड़सालके पास पानीके कुछ कुण्ड थे, उनसे आग बुझानेका बहुत कुछ प्रयत्न शुरू हुआ, पर हवाकी मारके

आगे पानीकी मार क्या काम कर सकती थी ? आगका स्वरूप बहुत ही विलक्षण दिखाई दिया। नीचेकी बस्तीमें भी वही दशा हुई। चारों ओर हाहाकार मच गया। कोई किसीकी नहीं सुनता था। उस समय आज कलकी तरह पहरा-चौकी इत्यादि बहुत कड़े नहीं थे। यही नहीं, बल्कि किलेकी पहरेदारीमें तो बहुत कुछ अन्धाधुन्धी चला करती थी। इसलिए किसी पहरेपर कहीं कोई सिपाही इत्यादि नहीं रहा, सबलोग जल्दीसे जल्दी, कुछ तो नीचे बस्तीमें, और कुछ ऊपर किलेपर, आगकी मौज देखनेको चले गये। सब दरवाजे जैसेके तैसे खुले पड़े रहे। ऐसी दशा जब बड़े दरवाजोंकी हुई, तब किलेकी पीछेकी क्या अवस्था हुई होगी, सो पाठकगण स्वयं ही सोच सकते हैं। आग लगनेका जिस समय गुल-गपाड़ा मचा, उस समय सर्जेखा, उसके दो-चार हस्तक, और बाबाजी-बस, यही दो-चार लोग कोटके पास थे। इधर आगका गोलमाल मचते अभी देर नहीं हुई थी, और सर्जेखा तथा उसके आदमियोंका ध्यान अभी उसी ओर गया ही था कि, इतनेमें कोटके नीचेकी ओरसे, बिल्कुल ही, मशालेंसी जलती हुई एकदम दिखाई पड़ीं, और लगभग पचीस आदमी उसी ओरसे एकदम, जल्दी जल्दीसे, ऊपर चढ़ते हुए दिखाई दिये। अब खांसाहबका ध्यान आगकी ओरसे हटकर, वैतालगणके दीपकोंकी भाँति जलती हुई, उन मशालोंकी ओर आकर्षित हुआ; और एकदम वे कहते हैं—"तोबा! तोबा! यह क्या ? यह क्या!" उनके मुखसे ये शब्द निकलते अभी देर नहीं हुई थी कि, वे आदमी एकदम ऊपर आ गये, और उनमेंसे चार आदमियोंने—आदमियोंके रूपमें उन्हीं वैतालोंने—खाँसाहबको चारों ओरसे घेर लिया। दूसरे दो-तीन मुसल्मान, जो खासाहबके सिपाही थे, चिल्लानेहीवाले थे कि, उनके मुँहमें घासके गूँजे ठूँस दिये गये, और उनके हाथपैर बाँध दिये गये। इसके बाद बहुत जल्द चार-पाँच आदमियोंने मिल्कर बाबाजीकी जंजीर खोलना और हथकड़ी बेड़ी काटना आरम्भ किया। किलेके ऊपर और नीचे आग लग ही रही थी, और उसके बुझानेमें सब लोग फँसे थे, इसलिए पिछली ओरसे धावा करनेवाले उन लोगोंको इस बातका कोई

संशय नहीं था कि, बस्ती या किलेके अन्य लोग, कोई दौड़कर हमारे पास आवेंगे, और हमारे कार्यमें बाधा डालेंगे। किन्तु, इसके विरुद्ध, उनको इस बातका पूरा विश्वास था कि, हमको जो कुछ कार्य करना है, सो बिलकुल ठीक और निर्विघ्नरूपसे ही कर सकेंगे। बस, इसी पक्के विश्वाससे, वे निर्भयतापूर्वक अपना काम कर रहे थे। उन्होंने सावकाश, बाबाजीको अणुमात्र भी तकलीफ न देते हुए, उनके हाथों और पैरोंकी बेड़ियाँ काटनेका उद्योग प्रारम्भ किया, परन्तु मुँहसे एक अक्षर भी उच्चारण नहीं किया। आये वे इतने चुपकेसे कि, जैसे पचास साठ चूहे जल्दी-जल्दीसे किसी पर्वतपर चढ आवें—बस, ऐसा ही उनका आना मालूम हुआ! उन्होंने जिस उद्योगका प्रारम्भ किया था, उसे पूर्ण कर लिया। बाबाजीको मुक्त किया। चार-पाँच जनोंने उन्हें उठाया, और फिर उनके आगे साष्टांग नमस्कार किया। यह सब घटना देखकर बाबाजी इतने अचम्भित हो गये कि, उनको एक अक्षर निकालनेका भी भान नहीं रहा। वे यह सारी लीला स्तब्ध होकर देखते रहे। अस्तु। बाबाजीके मुक्त होते ही सब लोगोंने उनके चरणोंकी बन्दना की, और फिर एक जबरदस्त आदमीने उनको अपने कन्धेपर चढाया, तथा दो और आदमी संरक्षणार्थ उनके साथ हो लिये। इस प्रकार तीन आदमी, बातकी बातमें, जिस मार्गसे आये थे, उसी मार्गसे उतरे, और इसके साथ ही "हर हर महादेव! जय भवानी माताकी!" इत्यादि शब्दोंकी सबने मिलकर घोषणा की। जो लोग शेष रह गये, उन्होंने सर्जेखाको कोटपरसे ढकेलनेका विचार शुरू किया। सर्जेखा पहलेहीसे जानता था कि, अब मेरी कुशल नहीं है। उसने सोचा कि, मेरे हाथका शिकार इन पहाड़ी चूहोंने एक विचित्र तरहसे उड़ा लिया, अब ये मुझे क्या जीता छोड़ेंगे? अवश्य ही यह आशा अब उसे नहीं रही थी, परन्तु जीवनकी आशा भी एक बड़ी जबरदस्त होती है। जबतक शरीरमें प्राण मौजूद हैं, तबतक वह किसी प्रकार भी नहीं जाती। 'जबतक स्वासा, तबतक आसा' के न्यायसे सर्जेखाने भी सोचा कि, शायद मेरे घुड़की-

धमकी दिखलानेसे—अथवा कमसे कम हाथपैर जोड़कर चिरियाँ-बिनती करनेसे ही—ये मुझे छोड़ दें। अस्तु।

उन लोगोंने ज्यों ही देखा कि, बाबाजी अब बहुत दूरतक निकल गये, तब उन्होंने सर्जेखाको उसकी जगहसे उठाया, और एकदम यह कहकर कि, "तू ब्राह्मण साधुको सता रहा था, अब तुझको नीचे डालते हैं, छोड़ते नहीं।" उसको बिलकुल कोटके किनारेपर ले गये। परन्तु इतनेमें वह बहुत लाचारी दिखलाकर चिरियाँ-बिनती करने लगा, तब उन लोगोंमेंसे एक तेजस्वी तरुण-पुरुष आगे आया, और एकदम उन लोगोंसे बोला, "गाफिल आदमीको पकड़कर उसका वध करना हिन्दुओं का व्रत नहीं है। जा, तुझको जीवनदान दिया जाता है। लेकिन अगर फिर कहीं, लड़ाईमें, इनमेंसे किसीकी तलवारके सामने तू आ गया तो, जीता नहीं बचेगा, यह अच्छी तरह समझ ले।" उस पुरुषके मुखसे इन शब्दोंके निकलते ही वे लोग, जो सर्जेखाको कोटके किनारेपर ले गये थे, उसे पीछे हटा लाये। इसके बाद उसके हाथ-पैर उन्होंने उसी जंजीरसे जकड़ दिये, जिससे बाबाजी जकड़े हुए थे। इसके बाद फिर वे सब एक बार "हर हर महादेव! भवानी माताकी जय!" का घोष करते हुए, जिस मार्गसे आये थे, उसी मार्गसे चले गये।

उन्तीसवां परिच्छेद

इधर क्या और उधर क्या?

श्रीधर स्वामीको जब कि वे लोग इस प्रकार छुड़ा रहे थे, उधर घुड़सालकी ओर एक और कोलाहल मच रहा था, और उधर जितना कोलाहल मच रहा था, उतनी ही इधरके हमारे आगन्तुक लोगोंको और भी सुविधा हो रही थी। वे अपना कार्य बिलकुल निर्विघ्न रूपसे पूरा कर ले गये। उस किलेपरसे नीचे ढकेलकर किसी साधुका वध किया जावे, यह किलेके एक व्यक्तिको भी अच्छा नहीं लग रहा था, परन्तु

सत्ताके आगे विवेकका क्या काम ? अथवा यों कहिये कि, कोई भी सद्गुण सत्ताके सामने नहीं चलता, और यही बात आखिरमें सच निकली। प्रत्येक अपने मन ही मन डरता रहा। बादशाहने वास्तवमें शिवदेवरावको ही मुख्यतः इधर भेजा था कि, तुम जाकर यह देखो कि, "राजा शहाजीकी नष्ट सन्तान" ने उधर क्या गोलमाल मचा रखा है, और सर्जेखॉको उसने सिर्फ इसी एक बाह्य उद्देश्यसे भेजा था कि, मराठे सरदारके साथ-साथ एक मुसल्मान भाई भी रहना चाहिये। शिवदेवरावको वास्तवमें मुरार जगदेवरावका बड़ा भारी सहारा था; क्योंकि मुरार साहब ही उस समय अधिकाशमें बीजापुरके प्रति-बादशाह अर्थात् राज्यके कर्त्ता-धर्त्ता थे। परन्तु अपनी जातिकी बात ही भिन्न होती है, और सोई हुआ। सर्जेखाँ शिवदेवरावका मातहत बनाकर भेजा गया था, पर बन गया मुखिया! वह शिवदेवरावकी बात ही न पूछने लगा, और जो मनमें आया, वही करने लगा। इधर शिवदेवरावको यह साहस न हुआ कि, फटकारकर उससे कह देते कि, "जो कुछ हमारे मनमें आयगा, सो करेंगे, तुम चुपके देखो।" क्योंकि वे डरते थे कि, कहीं सर्जेखॉ जाकर यह शिकायत न कर दे, जो बादशाह व्यर्थके लिये हमपर नाराज़ हो जाय। यदि कहीं उसने हमारी शिकायत कर दी, तो हम क्या कर लेंगे ? बस, बात यही थी। वास्तवमें सर्जेखॉ जबसे श्रीधर स्वामीको उस मन्दिरसे कैद कर लाया, तबसे, और जबतक वह उन्हें कोटपरसे ढकेल्कर मार डालनेको तैयार हुआ, तबतक बराबर उसने किसी बातमें भी शिवदेवरावकी एक भी नहीं चलने दी, और फिर उसमें भी दिल्लगी यह कि, किलेदार साहब उसके सामने हाथ-पैर जोड़ते रहे, उसपर अपना अधिकार भी जताया, और कहा कि, बाबा-जीको छोड़ दो, सब प्रकारसे उन्होने सर्जेखॉको समझाया-बुझाया, फिर भी उसने नहीं सुनी। तब उस बेचारे (किलेदार) ने यह सोचकर अपने मनको समझाया कि, "अब क्या किया जाय, बाबाजीको छुड़ाने-के लिये और अधिक जोर यदि हम देते हैं, तो दरबारमें मानो यह संशय सबके मनमें और पैदा करनेका मौका देते हैं कि, हम इन बागी

लोगोंकी प्रत्यक्ष रूपसे सहायता कर रहे हैं। इसके सिवाय, हमने पहले-हीसे कुछ बातोंमें इसके मनके अनुसार कार्य नहीं किया है, सो यह और नाराज हो गया। इसलिये अब देखना चाहिये कि, उसका क्या परिणाम होता है; और क्या नहीं!

अस्तु। इस प्रकारकी सारी परिस्थिति उस समय उपस्थित थी। इसके सिवाय यह विचार भी उस समय सबके मनको दुःख दे रहा था कि, हमारे किलेपरसे आज प्रत्यक्षतया एक ब्राह्मण साधुकी व्यर्थमें हत्या हो रही है; और उसमें भी दूसरी ओर भयंकर आग लग रही थी। यही कारण था कि, सर्जेखाके जोर जोरसे चिल्लाकर बुलानेपर भी उपर्युक्त तमाशबीनोंमेंसे किसीने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया; और सब आगकी ओर ही दौड़ पडे। आगकी ओर दौड़नेके बाद पीछे इधर क्या हुआ, सो पाठकोंको मालूम ही है। सर्जेखाँ जंजीरसे जकड़ दिया गया, और उसके साथी सिपाहियोंके मुँहमें गूंजा ठूँसकर उनके भी हाथ-पैर बाँध दिये गये। ऐसी दशामें वे सभी छटपटाते हुए पड़े थे। सर्जेखाँका वह शक्तिहीन क्रोध तो उस समय देखने ही योग्य था। पहले-पहल, जब वैतालवृन्दकी वे मशालें उसको एकाएक दिखाई दीं, और फिर जब वे बिलकुल उसके पास आने लगीं, तब तो पहलेपहल बहुत देरतक उसे यही नहीं मालूम हुआ कि यह बला क्या है? उसके विषय-में कुछ विचार उसके मनमें आनेहीवाला था कि, इतनेमें उधर आग लगनेका गोलमाल मच उठा; और उसी ओर उसका ध्यान चला गया। इसके बाद फिर वह उधरसे अपने सामनेके कार्यकी ओर ध्यान देता, किन्तु बैतालोंकी मशालें बिल्कुल नजदीक ही आगई, और उसके सिपा-हियोंको वहीं जमीनमें लुढ़काकर स्वयं उसको भी चारों ओरसे घेर लिया। यह सब घटना इतनी शीघ्रतापूर्वक हुई कि, उस बेचारेको यह सोचने-तकका अवसर नहीं मिला कि, यह हुआ क्या—और कैसे? अस्तु। फिर—हमारे चक्करमें मत आना—इस प्रकारकी धमकी देकर वे लोग बातकी बातमें वहासे गायब हो गये, और तब कहीं उस बेचारेको, अपंगअवस्थामें पड़े हुए, उन बातोंके विषयमें विचार करनेका अवसर

मिला कि, जो उस समय हुई थीं। इधर किलेपरके लोगोंने भी, शीघ्रता-पूर्वक उसकी ओर आनेकी विशेष आतुरता नहीं दिखलाई। बात यह थी कि, उनका सारा ध्यान उस भयकर रूपमे भमकनेवाली आगकी ओर लगा था। आग लगी कैसे ? और वह एकदम नीचेकी बस्तीमें और ऊपर किलेपर—दोनों जगह एक ही समयमें कैसे भड़क उठी ? इस बातका किसीको पता नहीं चला। आग भड़की भी, सो कुछ एक जगह नहीं भड़की। घुड़सालके आसपास एकदम चारों ओरसे भड़की। वास्तवमें यह घटना हुई कैसे ? बस, इसी बातपर सिपाही लोग अचम्भा करते रहे। अभी लड़ती झगड़ती हुई जो घसियारिन ऊपर आई थी, उसीका तो यह काम नहीं है ? यह विचार सिर्फ एक ही व्यक्तिके मनमें आया, और बस, तुरन्त ही वह उसका पता लगाने लगा। पर उस गड़बड़में उसका कहाँ पता लगता है ? इसके सिवाय, उस भयंकर गोल-मालसें ऐसे क्षुद्र व्यक्तिका अधिक पता भी कौन लगाता है ? जो हो, सच्चा कारण कोई बतला नहीं सका। लोगोंने अपनी ओरसे खूब परिश्रम किया, और ज्यों-त्यों करके आग बुझानेका प्रयत्न किया, पर उसमें सफलता प्राप्त करने उन्हें बहुतसा वक्त लगा। कुछ जानवर जल गये; पर उस समयकी उस हवासे जितना नुकसान होना चाहिये था, उतना नहीं हुआ। परमात्माने कृपा की। परन्तु उस आगके बुझाने इत्यादिमें लगभग पहर-डेढपहर लग गया। अब लोगोंको याद आई कि, बाबाजी कोटपरसे गिराये जानेवाले थे। परन्तु साथ ही उन्होंने सोचा कि, सर्जे-खॉ अबतक कभीका अपना वह घोर कर्म करके अपने बँगलेमें आ गया होगा। इधर किलेदार साहब आगकी उस भीषणताके समयमें भी बाहर इधर-उधर कहीं दिखाई नहीं दिये। उस बुड्ढेने ज्यों ही देखा कि, बाबाजीको छुड़ानेका उसका प्रयत्न व्यर्थ गया, त्यों ही वह अत्यन्त दु:खी होकर वहासे चल दिया। वह अपने महलमें जाकर अपने पलंग-पर पड़ रहा। उसका चित्त बहुत ही अशान्त हो गया था। इसलिये वह बराबर तड़फड़ाता हुआ, और लम्बी सासें भरता हुआ पड़ा रहा। किलेके विषयमें उत्तरदायित्व उसीपर था, परन्तु फिर भी, ऐसा जान

पड़ा कि, उस भयंकर आगको उसने कोई भी महत्व नहीं दिया। हाँ, उसने अपने आदमी कुशावासे उसके विषयमें कहकर आग बुझानेका सारा प्रबन्ध उसीके सिपुर्द कर दिया था, और आप स्वयं, जैसा कि अभी बतलाया, अपने निजी कमरेमें जाकर पलंगपर पड़ रहा था। वह वहाँ पड़ा था सही, किन्तु उसका सारा चित्त उसी कोटकी ओर था, जहाँ वे दुष्ट बावाजीको ढकेलनेके लिये ले गये थे। कहीं कुछ खटका होता, अथवा कोई आवाज होती; तो बस, उसे यही खयाल हो आता कि, अब बावाजी नीचे गिराये गये, उन्हींकी यह आवाज है—वही नीचे गिरते हुए चिल्ला रहे हैं, उन्हींकी यह मृत्यु-समयकी चिल्लाहट है, जिसको मैं सुन रहा हूँ। बस, जहाँ खयाल किलेदार साहबको हो आता, वहीं वे बिलकुल भौंचक्केसे हो जाते थे। उनकी यह दशा थोड़ी देरतक रही, परन्तु फिर एकबार उनसे रहा ही नहीं गया; और वे उठकर एकदम उसी ओर चल दिये। जिस समय वे अपने कमरेसे उधरकी ओर चले, उस समय आगका उपद्रव कुछ कम नहीं हुआ था। उनके मनमें शायद उस समय यह भी आया कि, अब यदि हम जायगे भी, तो कोई लाभ नहीं होगा, परन्तु फिर तुरन्त ही शायद उन्होंने यह भी सोचा कि, चलो एक दफा प्रयत्न करके और देखें, शायद अभी बावाजीको 'कढ़ेलोट' न किया हो। बस, यही सोचकर उन्होंने अपनी तलवार उठाई। तुरन्त ही अपनी कमर बाँधी। उस अवस्थामें वह वृद्ध अत्यन्त क्रूर दिखाई पड़ने लगा। ऐसा जान पड़ा कि, मानो उसके बुड्ढेपनने इस समय उसको बिल्कुल ही छोड़ दिया हो, उसके शरीरमें मानो अब युवावस्थाका जोश आ गया हो। आगे-पीछे वह कुछ भी न देखते हुए, जल्दी-जल्दी कदम बढाते हुए, उसी कोटकी ओर चला। वह बार-बार अपनी तलवारकी मूठ मजबूतीसे पकड़ता,·· दूसरा हाथ म्यानको पकड़नेके लिये आगे बढ़ता। इससे यह स्पष्ट मालूम होता था कि, उसके मनमें रह रहकर शायद यह विचार भी आ रहा था कि, "मौका आ जायगा, तो अब तलवारके उपयोगसे भी अपना काम निकालेंगे।" विचार कोई भी आ रहे हों—उन्हीं जोशमें वह उस समय उस 'कढ़े-लोट' करनेकी जगहकी ओर जा

मिला कि, जो उस समय हुई थीं। इधर किलेपरके लोगोंने भी, शीघ्रता-पूर्वक उसकी ओर आनेकी विशेष आतुरता नहीं दिखलाई। बात यह थी कि, उनका सारा ध्यान उस भयंकर रूपसे भमकनेवाली आगकी ओर लगा था। आग लगी कैसे? और वह एकदम नीचेकी बस्तीमें और ऊपर किलेपर—दोनों जगह एक ही समयमें कैसे भड़क उठी? इस बातका किसीको पता नहीं चला। आग भड़की भी, सो कुछ एक जगह नहीं भड़की। घुड़सालके आसपास एकदम चारों ओरसे भड़की। वास्तवमें यह घटना हुई कैसे? बस, इसी बातपर सिपाही लोग अचम्भा करते रहे। अभी लड़ती झगड़ती हुई जो घसियारिन ऊपर आई थी, उसीका तो यह काम नहीं है? यह विचार सिर्फ एक ही व्यक्तिके मनमें आया, और बस, तुरन्त ही वह उसका पता लगाने लगा। पर उस गड़बड़में उसका कहाँ पता लगता है? इसके सिवाय, उस भयकर गोल-मालमें ऐसे क्षुद्र व्यक्तिका अधिक पता भी कौन लगाता है? जो हो, सच्चा कारण कोई बतला नहीं सका। लोगोंने अपनी ओरसे खूब परि-श्रम किया, और ज्यों-त्यों करके आग बुझानेका प्रयत्न किया, पर उसमें सफलता प्राप्त करने उन्हें बहुतसा वक्त लगा। कुछ जानवर जल गये; पर उस समयकी उस हवासे जितना नुकसान होना चाहिये था, उतना नहीं हुआ। परमात्माने कृपा की। परन्तु उस आगके बुझाने इत्यादिमें लगभग पहर-डेढपहर लग गया। अब लोगोंको याद आई कि, बाबाजी कोटपरसे गिराये जानेवाले थे। परन्तु साथ ही उन्होंने सोचा कि, सर्जे-खाँ अबतक कभीका अपना वह घोर कर्म करके अपने बँगलेमें आ गया होगा। इधर किलेदार साहब आगकी उस भीषणताके समयमें भी बाहर इधर-उधर कहीं दिखाई नहीं दिये। उस बुड्ढेने ज्यों ही देखा कि, बाबाजीको छुड़ानेका उसका प्रयत्न व्यर्थ गया, त्यों ही वह अत्यन्त दुःखी होकर वहांसे चल दिया। वह अपने महलमें जाकर अपने पलग-पर पड़ रहा। उसका चित्त बहुत ही अशान्त हो गया था। इसलिये वह बराबर तड़फड़ाता हुआ, और लम्बी सासें भरता हुआ पड़ा रहा। किलेके विषयमें उत्तरदायित्व उसीपर था, परन्तु फिर भी, ऐसा जान

पड़ा कि, उस भयंकर आगको उसने कोई भी महत्व नहीं दिया। हाँ, उसने अपने आदमी कुशावासे उसके विषयमें कहकर आग बुझानेका सारा प्रवन्ध उसीके सिपुर्द कर दिया था, और आप स्वयं, जैसा कि अभी वतलाया, अपने निजी कमरेमें जाकर पलंगपर पड़ रहा था। वह वहाँ पड़ा था सही, किन्तु उसका सारा चित्त उसी कोटकी ओर था, जहाँ वे दुष्ट वावाजीको ढकेलनेके लिये ले गये थे। कहीं कुछ खटका होता, अथवा कोई आवाज होती, तो वस, उसे यही खयाल हो आता कि, अब वावाजी नीचे गिराये गये, उन्हींकी यह आवाज है—वही नीचे गिरते हुए चिल्ला रहे हैं, उन्हींकी यह मृत्यु-समयकी चिल्लाहट है, जिसको मैं सुन रहा हूँ। वस, जहाँ खयाल किलेदार साहवको हो आता, वहीं वे बिलकुल भौंचक्केसे हो जाते थे। उनकी यह दशा थोड़ी देरतक रही, परन्तु फिर एकवार उनसे रहा ही नहीं गया; और वे उठकर एकदम उसी ओर चल दिये। जिस समय वे अपने कमरेसे उधरकी ओर चले, उस समय आगका उपद्रव कुछ कम नहीं हुआ था। उनके मनमें शायद उस समय यह भी आया कि, अब यदि हम जायंगे भी, तो कोई लाभ नहीं होगा; परन्तु फिर तुरन्त ही शायद उन्होंने यह भी सोचा कि, चलो एक दफा प्रयत्न करके और देखें, शायद अभी वावाजीको 'कड़ेलोट' न किया हो। वस, यही सोचकर उन्होंने अपनी तलवार उठाई। तुरन्त ही अपनी कमर वाँधी। उस अवस्थामें वह वृद्ध अत्यन्त क्रूर दिखाई पड़ने लगा। ऐसा जान पड़ा कि, मानो उसके बुड्ढेपनने इस समय उसको विल्कुल ही छोड़ दिया हो, उसके शरीरमें मानो अव युवावस्थाका जोश आ गया हो। आगे-पीछे वह कुछ भी न देखते हुए, जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाते हुए, उसी कोटकी ओर चला। वह वार-वार अपनी तलवारकी मूठ मजबूतीसे पकड़ता,...दूसरा हाथ म्यानको पकड़नेके लिये आगे वढ़ता। इससे यह स्पष्ट मालूम होता था कि, उसके मनमें रह रहकर शायद यह विचार भी आ रहा था कि, "मौका आ जायगा, तो अव तलवारके उपयोगसे भी अपना काम निकालेंगे।" विचार कोई भी आ रहे हों—उन्हीं जोशमें वह उस समय उस 'कड़े-लोट' करनेकी जगहकी ओर जा

रहा था। बेचारा कदम कदमपर यह सोचते हुए ठिठक जाता कि, किसी की चिल्लाहट तो सुनाई नहीं दे रही है? अब किसीके रोनेकी आवाज तो नहीं आ रही है? बीच बीचमें, हमारे हमेशाके पुकारनेके नामको लेकर, कोई करुण स्वरसे पुकार तो नहीं रहा है? बस, इसी प्रकारकी बातें मनमें ला लाकर वह बीच-बीचमें ठिठकता जाता था। उसकी उस समयकी हालतसे यह भी मालूम हुआ कि, उसको इस बातकी बड़ी उत्कंठा थी कि, उसको उस हालतमें कोई देखने न पावे। ज्यों-ज्यों वह वधस्थलकी ओर बढ़ता गया, त्यों-त्यों और भी उत्सुकताके साथ आहट लेने लगा, पर कुछ सुनाई नहीं दिया। तब—"हो गया, जान पड़ता है, बेईमानोंने ढकेल दिया! हाय ·· ··जिस तरह मैं ·····उसी जगहसे मेरे···· · मेरे ·· · उसके मा · ·· देखते ·····उसका कड़े लोट हो; और मैं कुछ न कर सकूँ! अरे खूसट, तेरे इस बुढ़ापेको आग नहीं लग गई?"—इस प्रकारसे कुछ गुनगुनाता और फिर आगे चलता। उधर आगकी ओर इतना कोलाहल मच रहा था, पर उसका ध्यान उसकी ओर बिल्कुल नहीं था। सारा तनमन उसका उसी वधस्थलकी ओर था। अस्तु। इस प्रकार कुछ देर बाद वह उस कोटके बिल्कुल पास पहुँच गया, तो क्या देखता है कि, सर्जेखा पड़ा हुआ छटपटा रहा है, उसके हाथ-पैर जजीरसे बिल्कुल जकड़े हुए हैं, जिनको क्रोधमें आकर वह पटक रहा है, और "या अल्ला! बिस्मिल्ला!" करके जोर जोरसे बिलख रहा है! कहाँ तो वह दूसरी आवाजोंके सुननेकी अपेक्षा करता हुआ आ रहा था, पर यहाँ उलटे सर्जेखाँका बिलखनामात्र उसके कानोंमें पड़ा। "यह क्या गोलमाल हुआ?" सोचकर किलेदार साहब स्वाभाविक ही थोड़ी देरके लिये वहीं ठिठक गये। सर्जेखाकी आवाज तो उन्होंने पहचानी, पर यह उनकी समझमें नहीं आया कि, सर्जेखाके इस प्रकार बिलखनेका कारण क्या है? और यह बात क्या हुई? जो हो, वे अपनी तलवार बढ़ाकर और भी आगे चले। रात उजेली न होनेके कारण उन्हें अच्छी तरह कुछ दिखाई नहीं देता था—फिर उनकी दृष्टि भी बुढ़ापेके कारण कुछ मन्द थी, इसलिए जो कुछ थोड़ा बहुत दिखता

भी था, उससे कुछ लाभ नहीं होता था। बहुत देर जब इधर-उधर घूमकर उन्होंने देखा, तब उन्हें इतना स्पष्ट दिखाई दिया कि, सर्जेखाके मनके अनुसार होना तो एक ओर रहा, उलटे उसीको किसीने जंजीरों से जकडकर डाल दिया है। किलेदारको यह कैसे मालूम हुआ कि, सर्जेखाके मनके अनुसार कार्य नहीं हुआ? स्वयं सर्जेखाके उद्‌गार ही उपर्युक्त बातको प्रकट कर रहे थे, क्योंकि उस समय वह यही बड़बड़ा रहा था कि, 'अरे दुश्मन! इस समय तो तुझको छुड़ा ले गये, पर अब सर्जेखाँसे मुकाबिला है!" 'तुझको इस समय छुड़ा ले गये।" इन शब्दोंके सुनते ही किलेदार साहबको जो आनन्द हुआ, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। उनके चेहरा एकदम प्रफुल्लित हो उठा। "अच्छा! तो उसे वे छुडा ले गये? वह छुट गया!" पहलेपहल तो उन्हें यह सच भी नहीं जान पड़ा। परन्तु इस बातकी सहायताका प्रत्यक्ष प्रमाण उनके सामने ही मौजूद था। जिन जन्जीरोंसे बाबाजी जकड़े हुए थे, उन्हींसे बँधा हुआ सर्जेखा तड़फड़ा रहा है, और उसके साथके सिपाही भी हाथों-पैरोंमे बँधे हुए पड़े हैं, और उनके मुँहमें घासके गूँजें ठूंसे हुए हैं। इससे अधिक और प्रत्यक्ष प्रमाण क्या चाहिए? वह सारी दशा जब पूर्ण रूपसे किलेदारके ध्यानमें आ गई, तब उनके मनमें यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि, अब आगे क्या करना चाहिए? पहला विचार अवश्य ही उनके मनमें यह आया कि, जबतक और कोई आदमी आकर देख न लें, तबतक इस बदमाशको ऐसा ही पड़ा हुआ, तड़फड़ाते हुए, लुढकने क्यों न दें? और हम यहाँसे चले जावें! किन्तु वृद्धावस्थामें इस प्रकारके उपद्रवपूर्ण और निर्दययुक्त विचार बहुत थोडी देर मनमें टिकते हैं। वही हाल किलेदारका भी इस समय हुआ। उन्होंने सोचा कि, जो भय था, सो तो निकल गया, अब हमें अपने कर्तव्यपर ही आरूढ़ होना चाहिए। यह विचार उनके मनमें आया; और इसीकी विजय भी हुई। खानके पास जाकर उन्होंने पूछा, "यह क्या हुआ? यह कौनसी विचित्र घटना हुई?" स्वाभाविक ही खानकी इन प्रश्नोंसे, मृत्युसे भी ज्यादा दुःख हुआ। उसने दाँतोंसे होंठ चबाते हुए अपना वृथा त्वेष भी

दिखलाया। उस समय उसके मुखसे जो शब्द निकले, वे ये थे:—"तुम सभी हरामखोर हो! क्या तुम समझते हो कि, मैं कुछ जानता नहीं? जल्दी हमारे हाथपैर छुड़वाओ, मैं सब बतलाता हूँ। इस हरामखोरीका भी कुछ ठिकाना है! नमकहराम! हमारा ही नमक खाकर हमारी ही जान लेना चाहते हो? इन सब बलवाइयोंसे तुम मिले हो। सब लोग उनमे शामिल हैं! क्या मैं जानता नहीं? पहलेसे उनको बुलाकर यहाँ बैठा किसने रखा? आगका निमित्त किसने किया? ऐन मौकेपर यहाँसे भग कैसे गये?...." इस प्रकार बराबर उसकी बक-झक जारी रही। वह भलीभाँति जानता था कि, हम इस दशामें भी चाहे जितनी हृदय-वेधक बातें इनको कह लेंगे, फिर भी प्रत्यक्षरूपसे हमारे साथ कोई अत्याचार करनेकी इनमें शक्ति नहीं है, और यदि हो भी तो इनको उसका साहस नहीं हो सकता। किलेदार साहब विशेषत. अपने इसी आनन्दमें थे कि, जो कुछ वे चाहते थे, सो अचानक आप ही हो चुका था। इसलिए उन्होंने सर्जेखाकी उन बातोंकी ओर जरा भी ध्यान नहीं दिया, और जोर जोरसे दूसरे आदमियोंको पुकारकर, किसी तरह, एक बार उसको उस बन्धनसे मुक्त किया। बन्धन-मुक्त होते ही सर्जेखाका वह क्रोध और भी भयंकर रूपमे भड़का, तथा वह और भी तेजीके साथ बक-झक करने लगा। उस समय उसको उचित था कि, वह इस बातकी पहले जाँच करता कि, आग कैसे लगी—सो तो एक ओर रहा, पहले हनुमानजीका मन्दिर ही गिरवा देनेकी बात उसने निकाली। शिवदेवराव और किलेदार, दोनों ही उसका विरोध करने लगे। फिर क्या कहना है? वह और भी अधिक बमका! परन्तु कर क्या सकता था? हनुमान-जीका वह मन्दिर एक अत्यन्त प्राचीन मन्दिर था—कोई भी समझदार हिन्दू, जिसमें कुछ भी हिन्दुत्वका अभिमान होगा, उसको गिरानेका अनुमोदन नहीं कर सकता था। सर्जेखा केवल अपनी इच्छासे उसे गिरवा सकता था, पर उसे यह अच्छी तरह मालूम था कि, इस बातमें हमारी एक भी नहीं चल सकती। मन्दिरकी बात आ पड़नेपर शिवदेव-राव और किलेदार एक होकर हमको अवश्य ही नीचा दिखावेंगे, और

यह बात हमारे लिये ठीक नहीं। सर्जेखाँ एक बड़ा होशियार और दूर-दर्शी राजनीतिज्ञ था। इसलिए सब बातोंपर खयाल दौड़ाकर अन्तमें उसने यह विचार किया कि, पहले यह जो घटना हुई है, उसीको, और नमक मिर्च मिलाकर हुजूरके सामने पेश करना चाहिये। इसके बाद फिर सैन्यदल लेकर हम इस प्रान्तमें आवें, और इन सबकी खूब खबर लें। यह सोचकर वह शिवदेवरावको लेकर किलेसे चल दिया। इस पन्द्रह दिनमें ही हम इनको नीचा दिखावेंगे, ऐसी आशा करके सर्जेखाने वहाँसे कूच किया। अस्तु। हमको सर्जेखा, किलेदार; और किलेको भी वहीं छोड़कर बाबाजीको छुड़ा लानेवाले लोगोंकी तरफ आना और देखना चाहिए कि, उनका क्या हाल हुआ!

❀ ❀ ❀

बाबाजीको जो लोग छुड़ा लाये थे, वे बड़े आनन्दसे उछलते कूदते हुए, किलेके उस विकट पश्चात्-मार्गसे, एकदम निकल गये। जो दो आदमी बाबाजीको अपने कंधोंपर उठा लाये थे, वे बातकी बातमें किलेके नीचे आ पहुंचे, और जबतक अन्य लोग भी न आपहुँचे, वहीं कुछ विश्राम लेनेको ठहर गये। जैसा कि पिछले परिच्छेदमें बतलाया, बाकी लोग भी, सर्जेखाँकी उस प्रकार दुर्दशा करके, बहुत जल्द वहाँ पहुँच गये। इस तरह जब सब लोग नीचे एक जगह जमा हो गये, तब उन सबकी ओर उस तेजस्वी और तरुण वीर, नायकने, एक बार देखकर, सिर्फ इतना ही कहा, "शाबाश!" इसके बाद उसने तीन चुने हुए लोगोंकी ओर उँगली दिखाकर इशारा किया कि, ये लोग तो मेरे साथ आवें, ओर बाकी यहाँसे, इसी क्षण, गायब हो जावें, और फिर परसोंके दिन रातको, हमेशाकी तरह, अपने सुरागाँवके जंगलमें जमा हों। उस युवक वीरके मुखसे "शाबाश!" ये अक्षर ज्यों ही बाहर निकले, त्यों ही आसपास जमा हुए उन लँगोटिये जंगली लोगोंके चेहरे अत्यन्त प्रफुल्लित हो गये। हमारे खयालसे, उस वीरने उनकी प्रशंसामें चाहे एक लम्बा चौड़ा व्याख्यान भी दे दिया होता, तो भी उनके चेहरेपर वह प्रफुल्लता दिखाई न पड़ती, जो केवल एक शब्दसे दिखाई पड़ गई!

देते हो, अभी रेख भी नहीं आई है, सो तुम घसियारिन बन जाओ। अपने गुरुका, ब्राह्मणोंका, त्राण करनेके लिये, कुछ भी करना पड़े, कोई परवा नहीं। इस प्रकार भेष बनाकर, सिरपर घासके बोझ रखकर, शामके पहर किलेके नीचे जाओ। वहाँ जाकर इस बातका पहले एक झूठा हीं झगड़ा उपस्थित करो कि, घासके गट्ठे किलेपर बेचे जाय या नीचे बस्तीमें। फिर यमा, इस बातपर रूठकर, कि हम ऊपर नही जावेंगे, नीचे ही रह जावे। तुम ऊपर जानेकी जिद्द करके ऊपर चले जाओ। तुम नक्काल भी अच्छे हो। किसीकी भी नकल उतारना तुमको बहुत अच्छा आता है। देखो, जोगिनकी नकल तुमने यमाको कैसी अच्छी सिखाई है। सो यदि तुम्हीं ऊपर जाओगे, और सो भी घसियारिनका भेष लेकर, तो तुमको स्त्री समझकर कोई विशेष रोकेगा भी नहीं, यमासे कहना कि, तू नीचेकी बस्तीमें पटेलकी घुड़सालमें जाकर रह; और तुम सीधे ऊपर चले जाना, और जिस तरहसे हो सके, किलेपरकी घुड़सालमें जाकर रहना। और जब चार-पाँच घड़ी रात जावे, तब एकदम दोनों जने दोनों जगह आग लगा देना। इधर किलेके पीछेकी ओर से मैं, तानाजी और हमारे ये नवीन साथी, कुछ चुने हुए लोगोंके साथ, शामसे ही, आधेसे अधिक पहाडी चढकर चुपकेमे बैठ रहेंगे। और जहाँ तुमने आग लगाई और उसकी पहली बमकारी हमें दिखाई दी कि, हम ऊपर जाकर सारा काम ठीक ठीक करके नीचे आ जावेंगे। बस, जैसाकि हमने बतलाया, इसके अनुसार यदि सब बातें ठीक-ठीक होंगी, तो फिर स्वामी महाराजका छुटकारा होनेमे विलम्ब नहीं लगेगा, और यदि इसमें कुछ भी कसर पड़ गई, तो सब खेल बिगड़ जायगा।" शिवबाकी ये बातें सुनकर येसाजीने कुछ आनाकानी की। ऐसा जान पडा कि, घसियारिनका भेष धरना उनको प्रशस्त नहीं जान पडा। राजा शिवबाने तुरन्त ही इस बातको ताड़ लिया, और बोले, "येसाजी, आगा-पीछा सोचनेका यह मौका नहीं है। तुमको यदि इसमें कुछ हीनता मालूम हो, तो तुम इधर किलेपरका काम सम्हालो,—मैं यमाजीके साथ घसियारिन बनकर जाऊँगा, और वह

काम कर आऊँगा।" तव येसाजीने स्वीकार कर लिया; और यमाजीको साथ लेकर अपने कामको चले गये। उनको अव यहाँ आ जाना चाहिये, अभीतक आये नहीं, इसीका मुझे आश्चर्य है।" तानाजीने यह विचित्र वृत्तान्त संक्षेपमें वतलाया कि, इतनेमें येसाजी उनके सामने आकर खड़े हो गये। उनको देखते ही वावाजीने "आओ आग लगाऊँ!" कहकर उनकी हँसी की; और शिववाकी अद्भुत युक्तिपर आश्चर्य प्रकट किया। इस प्रकार सम्पूर्ण कार्यवाहीके उत्तम रीतिसे पूर्ण होनेपर आनन्द मनाते और हँसते-हँसाते हुए उन सवने थोड़ासा समय व्यतीत किया। इसके वाद वावाजी कुछ गम्भीर चेष्टा करते हुए वोले, "अच्छा, जो कुछ हुआ, सो तो अच्छा हुआ। पर अव आगेका भी विचार करना आवश्यक है। क्योंकि अगले विचारपर ही हमारी सारी इमारत अवलम्बित है। सर्जेखाको हम लोगोंने सोलह आना नीचा दिखाया, इसलिए अव वह कुछ किये विना न रहेगा। मन्दिरसे हमारा कोई पक्का सम्बन्ध है, इस वातका उसे पूर्ण विश्वास हो गया है। दो-तीन वार उसने मेरे सामने ही मुझे यह स्पष्ट धमकी दी थी कि, मन्दिर गिराकर धूलमें मिला देंगे; और उसके नीचे जो कुछ होगा, उसे देखेंगे। अव, जवकि हम लोगोंने उसे नीचा दिखाया है, यह वात और भी प्रकट हो जाती है कि, हमारा सम्वन्ध उस मन्दिरसे अवश्य है। इसलिए, आज नहीं तो कल, वह अपने कहनेके अनुसार करेगा अवश्य, इसमें तिलमात्र भी शंका नहीं। सो, अव हमको, उसके वैसा करनेके पहले ही, कहीं न कहीं कोई भारी काम कर दिखलाना चाहिये। मुगलोंके हाथमें आज-दिन कितने ही किले हैं। उनमेंसे दो-चार—कमसे कम एक तो फिलहाल अवश्य ही—अव हमारे हाथमें आवे, तव काम चले—इसके विना काम चल नहीं सकता। इसलिए आजकी इस वैठकमें इस वातका निश्चय अवश्य हो जाना चाहिये कि, कोई एक किला अवश्य हम जीत लें; और फिर इस वातका भी निश्चय हो जाय कि, वह किला कौनसा हो। इसमें सन्देह नहीं कि, यह वात कठिन अवश्य है; पर साथ ही यह

भी है कि, एक बार प्रयत्न करनेपर सफलता अवश्य मिलेगी। और यदि किला हम नहीं लेंगे, तो आगेके काममें बड़ी कठिनाई होगी . ”

जबकि उपर्युक्त सम्पूर्ण भाषण हो रहे थे, वह तेजस्वी पुरुष—जिसका कि हमने तानाजीके भाषणमें, कुछ समय पहले 'शिवबा' के नामसे पाठकोंको परिचय कराया है—चुपसे सुन रहा था। बीचमें उसने एक अक्षर भी उच्चारण नहीं किया। ऐसा जान पडता था कि, उसका सारा चित्त किसी अत्यन्त महत्वके विचारमें लगा हुआ था। बाबाजीका कथन जब समाप्त हो चुका, तब वे बिलकुल ध्यान लगाकर शिवबाकी ओर देखने लगे। तानाजीके मुखसे अभी हालमें ही उन्होंने जो वृत्तान्त सुना था, वह अभी उनके मनमें बना हुआ था, और उसीसे उनके मनमें उस नवयुवककी युक्ति, बुद्धि, और साहसके विषयमें अत्यन्त आदर-भाव उत्पन्न हो रहा था। बस, उसी आदर-भावमें आकर बाबा-जी इस समय उसकी ओर बहुत ही दत्तचित्त होकर देख रहे थे। क्योंकि उनके चेहरेपर आदर-भाव-प्रदर्शक कुछ मन्द मुसकान दिखाई पड रही थी। उस समय उन्होंने यही समझा कि, अब यह कोई उत्तम युक्ति और साहसका कार्य निकालकर कोई किला लेनेके विचारमें निमग्न है। और फिर वे अत्यन्त आतुरताके साथ यह प्रतीक्षा करने लगे कि देखें, अब यह किस समय क्या कहता है। इस समय प्रत्येकके मनमें वही विचार बार-बार आ रहे थे। और यह कहनेमें कोई अतिशयोक्ति न होगी कि, शिवबाके अन्त:चक्षुओंके सामने तो दक्षिण महाराष्ट्रके सम्पूर्ण किले, एकके बाद एक, दिखाई पड़ रहे थे, और अपने अपने अच्छे गुण और लाभ, तथा बुरे गुण और हानियाँ उसके सामने रख रहे थे। राजा शहाजीकी जागीरके प्रान्तोंमेंसे, कौन-कौन प्रान्तसे कौन-कौन किला कितने कितने अन्तर पर है, कौन कौनसा किला किन-किन बातोंमें हमारे लिए विशेष सुविधाजनक होगा, इत्यादि सब बातोंका पूर्णतया मनन शिवबा के मनमें उस समय हो रहा था। प्रत्येक किलेकी उसको जानकारी भी बहुत अच्छी थी। पुरन्दरका किला लेनेकी उसको बहुत दिनसे इच्छा थी। इसलिए उसने सोचा कि, यह किला हमारे लिये सब प्रकारसे

सुभीतेका और अत्यन्त मजबूत भी है। परन्तु साथ ही साथ उसके मनमें यह भी आया कि, पुरन्दरका किलेदार हमारे पिताजीका बहुत पुराना साथी है, उसके साथ उनका स्नेह भी बहुत जबरदस्त है। ऐसी दशामें एक मित्रका लड़का दूसरे मित्रके किलेपर धावा करके उसको जीते; और उसको कैद इत्यादि करे—यह कुछ ठीक नहीं जँचता—ऐसी बात भी मनमें न लाना चाहिए। इसके सिवाय, किला लेनेका प्रयत्न भी यह पहला ही होगा, सो ऐसे भारी और विकट किलेपर पहले ही पहल हाथ डालना, यह भी उचित दिखाई नहीं देता। वास्तवमें हमको किला जो इस समय लेना चाहिये, वह चाहे विशेष महत्वका न हो। पर उपयोगिताकी दृष्टिसे अच्छा होना चाहिये। इसलिए हमको ऐसा कोई किला सोचना चाहिये कि, जिससे हमारे काममें सहायता पूरी-पूरी मिले। यह सोचकर उसने पुरन्दके किलेकी अपनी दृष्टिके सामनेसे हटा दिया। और एकके बाद एक, इस प्रकार अन्य अनेक किलोंके विषयमें मन ही मन विचार करने लगा, पर कोई बात निश्चित न हो सकी। इतनेमें स्वामी महाराज उसकी पीठपर हाथ मारकर कहते हैं, "क्यों शिवबा, किसी किलेका निश्चय नहीं हुआ? मेरे मनमें एक किला आता है; और उस किलेके मालिक भी यहीं बैठे हैं। कह नहीं सकते, उनको यह विचार कहाँतक पसन्द आयेगा।" यह कहकर बाबाजीने उस सिपाही जवानकी ओर अत्यन्त सहेतुक दृष्टिसे, मुस्कुराते हुए देखा। इसपर वह युवक सिपाही भी बाबाजी तथा शिवबा राजाकी ओर देखकर कहता है, "मैं भी यही कहनेवाला था। उस किलेको जीतनेका यदि विचार किया जायगा, तो बातकी बातमें काम फतह हो जायगा। इसके सिवाय उस किलेपर, सब प्रकारकी सुविधाएँ—जो कुछ हमारे लिए आवश्यक हैं—सहज ही में हो सकती हैं। किला जीतनेमें यदि किसी भेदनीतिकी आवश्यकता होगी, तो वह भी सहजमें सिद्ध हो जायगी। कुछ देर नहीं लगेगी। सूर्याजी और मैं, दोनों इस कामको बातकी बातमें कर डालेंगे, मैं उनको इधर लानेवाला भी हूँ..."

उस सिपाही जवानकी बात अभी खतम नहीं होने पाई थी कि;

इतनेमें एक मनुष्य—जो उस गुफाके बाहर घोड़े पर सवार होकर पहरा दे रहा था—भीतर आया, और तानाजीके कानमें कोई समाचार बतलाया। उसे सुनते ही तानाजीने बाबाजीके कानमे कुछ कहा, और राजा शिवबाकी आज्ञा लेकर वहासे चले गये। इसके बाद, शीघ्रतापूर्वक वे गुफाके द्वारपर आकर देखते हैं, तो वहाँ एक वैरागी खड़ा हुआ है। तानाजी उसके पास गये। दोनोंमे कुछ देरतक अत्यन्त धीमी आवाजमें बातचीत होती रही। उस बातचीतको सुनकर तानाजीका चेहरा एकाएक बहुत ही चिन्ताग्रस्त हुआ, और वे वसे ही उलटे पैरों फिर गुफामें वापस आये। तानाजी जितनी तेजीके साथ पहले गुफासे बाहर गये थे, उतनी तेजीसे उनके कदम अबकी वार नहीं उठे। क्योंकि उस वैरागीने आकर उनको जो हाल बतलाया, वह बहुत ही खेदजनक जान पड़ता था, और साथ ही साथ क्रोधोत्पादक भी। अभी वरागीने जो हाल बतलाया, वह भीतर जाकर "उसके सामने" क्योकर बतलावें? बस, यही प्रश्न उनके मनमे बारम्बार आ रहा था। पर धीरे-धीरे वे तो जा अवश्य ही रहे थे। फिर भी अन्तमे, कुछ देर बाद, वे पहुँचे; और भीतर जाकर बाबाजीको एक ओर बुलाया, तथा उनको वह सब समाचार उन्होंने कानमें बतलाया।

तीसवां परिच्छेद

नवयुवक सरदार

तानाजीने बाबाजीके कानमें आकर जो वृत्तान्त बतलाया, वह अवश्य ही कोई अत्यन्त विलक्षण होना चाहिये; क्योंकि उसको सुनते ही बाबाजीकी चेष्टा भी कुछ त्रस्त और खिन्नसी हो गई। उन्होंने तानाजीसे एक दो प्रश्न भी किये, और ज्यो ही उनके उत्तर तानाजीसे उनको मिले, त्यों ही उनके मस्तकमे और भी अधिक विचारकी शिकनें पड़ गई। वे बार-बार उस सिपाही जवानकी ओर देखते, और अन्दर ही अन्दर कुछ गुनगुनाते। इसके बाद फिर एकदम वे तानाजीसे

पहलेहीकी भांति धीमे स्वरसे कहते हैं:—"एक तरहसे जो बात हुई, यह हमारे लिये अनुकूल ही हुई; क्योंकि पहलेकी परिस्थितिमें हमारे कार्यमें बहुत कठिनाई उपस्थित हुई होती। परन्तु यह दूसरा हाल जो बतलाया, सो भी चिन्ताजनक अवश्य है।" इतना कहकर फिर उन्होंने, अपनी दाढ़ीपर हाथ फेरते हुए, एक बार, चिन्तायुक्त चेष्टासे, सब लोगोंकी ओर, विशेषतः उस जवानकी ओर, देखा। उस बेचारेको क्या मालूम कि, यह सब क्या बात है। यही नहीं, बल्कि शायद उसके मनमें यह शंकातक न आई होगी कि, ये धीरे-धीरे जो बातें हो रही हैं, उनसे उसका भी कोई सम्बन्ध है। येसाजी कुछ अपने ही विचारमें निमग्न थे। शिवराज भी पहलेहीकी भांति बराबर अपने विचारोंमें निमग्न दिखाई दिया। तानाजी और बाबाजी अपने इसी विचारमें थे कि, जो समाचार अभी हमारे कानोंमें पड़ा है, वह बतलाया जाय या नहीं; और यदि बतलाया जाय, तो क्योंकर और किस कदर। अन्तमें दोनों किसी निश्चयपर पहुँचे। और उस सिपाही जवानको अपने पास बुलाकर, जो समाचार अभी आया था, धीरेसे बतलाया। उसे सुनते ही वह एकदम अत्यन्त सन्तप्त हो उठा। उसका सर्वांग—विशेषतः उसका मुख, उसकी चेष्टा; और उसकी आँखें सन्तापसे इतनी आरक्त हो गईं कि, बाबाजी और तानाजी, जो कि बिल्कुल उसके पास ही खड़े थे, उन्होंने यही समझा कि, न जाने अब यह क्या कर डाले—इसका कुछ ठिकाना नहीं।

"मैंने समझा ही था। हजार बार मैंने उन्हें जतलाया था—हजार बार मैंने उनसे कहा था, कि चाहे भिक्षा माँगनेकी ही नौबत क्यों न आजावे, तो भी अच्छा, पर इन हरामखोरोंकी नौकरी करना उचित न होगा। पर उन्हें वह विचार ही पसन्द न आया। उलटे मुझीको—"तू नमकहराम है, मेरे नामको बट्टा लगानेके लिए उपजा है कहकर गाली देने लगते थे। अब उनकी भी आँखें खुल गईं, सो अच्छा ही हुआ। स्वामी महाराज, इस बातको सुनकर तो आनन्दित होना चाहिये, सो आप चिन्तातुर क्यों दिखाई देते हैं? घड़ीभर पहले जिस बातके

लिये हम विचार कर रहे थे, उसके लिए तो अब रास्ता ही खुल गया। पहले तो इस काममें बड़ी कठिनाई थी, क्योंकि जबतक उनके शरीरमें प्राण रहते, कभी भी किला उन्होंने अपने हाथसे जाने न दिया होता। अवस्थामें वे अवश्य बुड्ढे हैं, पर उनका क्रोध, वीरता, और पराक्रम जैसेका तैसा बना है। इस बातका अनुभव प्रायः बहुतसे लोगोंको है। जो बात एक बार उनके मुखसे निकल जाती है, वह फिर त्रिकालमें भी कोई मेट नहीं सकता। वे यदि हमारे अनुकूल हो जावें, तो शिवराजके इच्छानुसार स्वराज्य संस्थापित होनेमें एक पलभरका भी विलम्ब न लगे। किन्तु—यह 'किन्तु' ही बड़ा बुरा है। किन्तु राजभक्ति उनकी नस नसमें इतनी समाई हुई है, कि हुजूर यदि, बीजापुर जानेपर, उनसे स्वयं अपने हाथसे ही अपनी गर्दन उडानेको कहें, तो भी वे उडानेमें नहीं चूकेंगे। मान लो, मैं कल इन दुष्टोंके पजेमें पड जाऊँ, और वे मुझे बीजापुर ले जाकर उनके सामने खडा करें, और अपने हाथसे उनको मेरी गर्दन काटनेका हुक्म दिया जाय, तो वे एक हाथसे आँसू पोंछते हुए, दूसरे हाथसे मेरी भी गर्दन उड़ानेमें कसर न करेंगे। अरेरेरे! ऐसे स्वामिभक्तको इन दुष्टोंने कुछ भी न समझा, और उनका इस प्रकार अपमान किया! हे ईश्वर, इस नरकयातनासे क्या हम भी कभी बाहर होंगे?....."

इसमेंसे अन्तिम कथन बाबाजीको अथवा अन्य किसीको सम्बोधन करके, नहीं कहा गया था। किन्तु ये उसके हार्दिक उद्गार थे, जो उसके मनमें सध नहीं सके—और जब हृदय भेदकर बाहर निकलने लगे, तब जिह्वाके द्वारा उसने उनको बाहर प्रकट कर दिया। यह बात उस समय उसकी चेष्टापरसे ही मालूम हो गई। इतना बोलनेके बाद फिर बहुत देरतक वह एक अक्षर भी नहीं बोला। उसका मन अपने उन विचारोंमे पूर्णतया ग्रस्त था। हम कौन हैं, क्या करते हैं, हमारे सामने कौन है, और कुछ समय पहले हम क्या विचार कर रहे थे, इत्यादि बातोंका मानो उस समय उसे कुछ ध्यान ही न रहा। वह शून्यदृष्टिसे चारों ओर देखने लगा। इस प्रकार जब बहुतसा समय

व्यतीत हो गया, तब फिर वह बावाजीकी ओर मुड़कर पूछता है, "आखिर उनको पकड़कर बीजापुर ले ही गये ? पर····· पर—" उसको जो कुछ कहना था, उसके विषयमें मानो अब वह इस विचारमें पड़ा कि, कहूँ या न कहूँ, और फिर वह एक सहेतुक दृष्टिसे बावाजी-की ओर देखताभर रहा। बावाजीकी भी चेष्टासे यह दिखाई दे रहा था कि, मानो जो कुछ वह कहनेवाला था, उसे वे तुरन्त ही ताड़ गये; परन्तु फिर भी वे मानो इस बातका प्रयत्नसा कर रहे थे, कि जहाँतक हो सके, यह इसे मालूम न होने पावे, और इसीलिये वे उसे टालने अथवा छिपानेकी चेष्टा कर रहे थे। तानाजीकी चेष्टा भी कुछ इसी प्रकारकी दिखाई दे रही थी। परन्तु अन्तमें उस सिपाहीने बावाजीकी ओर फिर एक बार देखकर स्पष्ट शब्दोंमें पूछा, "उनको पकड़ ले गये ? और बाकी लोगोंको भी क्या पकड़ ले गये ?"

बावाजी एक अक्षर भी नहीं बोले। अतएव वह बहुत ही उत्कंठित और अधीरसा दिखाई दिया। बावाजीकी चेष्टासे उसको यह अनुमान हुआ कि, कोई अनिष्ट घटना अवश्य घटी है, इसलिये वह फिर उनसे कुछ त्रस्त स्वरमें कहता है, "कहिये, कहिये। जो बात है, उसके स्पष्ट मालूम हो जानेसे मुझे उतना दुःख नहीं होगा, जितना आपके इस न बोलनेसे हो रहा है। साफ साफ बतलाइये, जो आपने सुना हो। मुझे संशयमें न डाले रखिये। वे नीच हरामखोर क्या करेंगे और क्या नहीं इसका कुछ ठीक नहीं। बतलाइये, उनके साथ साथ क्या मेरी पत्नीको भी पकड ले गये ? उन्होंने उसका भी अपमान किया ? क्यों ? स्वामी महाराज, बतलाते क्यों नहीं ? परन्तु बतलानेकी क्या जरूरत है ? आपके इस न बोलनेसे ही मेरे प्रश्नोंका उत्तर मिल गया। अच्छा है। अब मैं आपको नमस्कार करता हूँ; और अभी वापस जाता हूँ। मुझे बड़ी आशा थी कि, आपके समान सज्जनोंके साथसे स्वधर्म और स्वदेशकी सेवाका कुछ कार्य मेरे इस जीवनसे हो सकेगा। पर मालूम होता है, भाग्यमें लिखा नहीं। बस, अब मैं ऐसा ही लौट जाऊँगा; और उनको तथा पत्नीको छुड़ाकर ही रहूँगा,

लिये हम विचार कर रहे थे, उसके लिए तो अब रास्ता ही खुल गया। पहले तो इस काममें बडी कठिनाई थी, क्योंकि जबतक उनके शरीरमें प्राण रहते, कभी भी किला उन्होंने अपने हाथसे जाने न दिया होता। अवस्थामें वे अवश्य बुड्ढे हैं, पर उनका क्रोध, वीरता, और पराक्रम जैसेका तैसा बना है। इस बातका अनुभव प्रायः बहुतसे लोगोंको है। जो बात एक बार उनके मुखसे निकल जाती है, वह फिर त्रिकालमें भी कोई मेट नहीं सकता। वे यदि हमारे अनुकूल हो जावें, तो शिवराजके इच्छानुसार स्वराज्य सस्थापित होनेमें एक पलभरका भो विलम्ब न लगे। किन्तु—यह 'किन्तु' ही बड़ा बुरा है। किन्तु राजभक्ति उनकी नस नसमें इतनी समाई हुई है, कि हुजूर यदि, बीजापुर जानेपर, उनसे स्वयं अपने हाथसे ही अपनी गर्दन उड़ानेको कहें, तो भी वे उडानेमें नहीं चूकेंगे। मान लो, मैं कल इन दुष्टोंके पजेमें पड़ जाऊँ, और वे मुझे बीजापुर ले जाकर उनके सामने खडा करें, और अपने हाथसे उनको मेरी गर्दन काटनेका हुक्म दिया जाय, तो वे एक हाथसे आँसू पोंछते हुए, दूसरे हाथसे मेरी भी गर्दन उड़ानेमें कसर न करेंगे। अरेरेरे! ऐसे स्वामिभक्तको इन दुष्टोंने कुछ भी न समझा; और उनका इस प्रकार अपमान किया! हे ईश्वर, इस नरकयातनासे क्या हम भी कभी बाहर होंगे?...."

इसमेंसे अन्तिम कथन बाबाजीको अथवा अन्य किसीको सम्बोधन करके, नहीं कहा गया था। किन्तु ये उसके हार्दिक उद्गार थे, जो उसके मनमें सध नहीं सके—और जब हृदय भेदकर बाहर निकलने लगे, तब जिह्वाके द्वारा उसने उनको बाहर प्रकट कर दिया। यह बात उस समय उसकी चेष्टापरसे ही मालूम हो गई। इतना बोलनेके बाद फिर बहुत देरतक वह एक अक्षर भी नहीं बोला। उसका मन अपने उन विचारोंमे पूर्णतया ग्रस्त था। हम कौन हैं, क्या करते हैं, हमारे सामने कौन है, और कुछ समय पहले हम क्या विचार कर रहे थे, इत्यादि बातोंका मानो उस समय उसे कुछ ध्यान ही न रहा। वह शून्यदृष्टिसे चारों ओर देखने लगा। इस प्रकार जब बहुतसा समय

व्यतीत हो गया, तब फिर वह बावाजीकी ओर मुड़कर पूछता है, "आखिर उनको पकड़कर बीजापुर ले ही गये ? पर······पर—" उसको जो कुछ कहना था, उसके विषयमें मानो अब वह इस विचारमें पड़ा कि, कहूँ या न कहूँ, और फिर वह एक सहेतुक दृष्टिसे बावाजीकी ओर देखताभर रहा। बावाजीकी भी चेष्टासे यह दिखाई दे रहा था कि, मानो जो कुछ वह कहनेवाला था, उसे वे तुरन्त ही ताड़ गये; परन्तु फिर भी वे मानो इस बातका प्रयत्नसा कर रहे थे, कि जहाँतक हो सके, यह इसे मालूम न होने पावे; और इसीलिये वे उसे टालने अथवा छिपानेकी चेष्टा कर रहे थे। तानाजीकी चेष्टा भी कुछ इसी प्रकारकी दिखाई दे रही थी। परन्तु अन्तमें उस सिपाहीने बावाजीकी ओर फिर एक बार देखकर स्पष्ट शब्दोंमें पूछा, "उनको पकड़ ले गये ? और बाकी लोगोंको भी क्या पकड़ ले गये ?"

बावाजी एक अक्षर भी नहीं बोले। अतएव वह बहुत ही उत्कंठित और अधीरसा दिखाई दिया। बावाजीकी चेष्टासे उसको यह अनुमान हुआ कि, कोई अनिष्ट घटना अवश्य घटी है, इसलिये वह फिर उनसे कुछ त्रस्त स्वरमें कहता है, "कहिये, कहिये। जो बात है, उसके स्पष्ट मालूम हो जानेसे मुझे उतना दुःख नहीं होगा, जितना आपके इस न बोलनेसे हो रहा है। साफ साफ बतलाइये, जो आपने सुना हो। मुझे संशयमें न डाले रखिये। वे नीच हरामखोर क्या करेंगे और क्या नहीं इसका कुछ ठीक नहीं। बतलाइये, उनके साथ साथ क्या मेरी पत्नीको भी पकड़ ले गये ? उन्होंने उसका भी अपमान किया ? क्यों ? स्वामी महाराज, बतलाते क्यों नहीं ? परन्तु बतलानेकी क्या जरूरत है ? आपके इस न बोलनेसे ही मेरे प्रश्नोंका उत्तर मिल गया। अच्छा है। अब मैं आपको नमस्कार करता हूँ; और अभी वापस जाता हूँ। मुझे बड़ी आशा थी कि, आपके समान सज्जनोंके साथसे स्वधर्म और स्वदेशकी सेवाका कुछ कार्य मेरे इस जीवनसे हो सकेगा। पर मालूम होता है, भाग्यमें लिखा नहीं। बस, अब मैं ऐसा ही लौट जाऊँगा; और उनको तथा पत्नीको छुड़ाकर ही रहूँगा,

अथवा इस प्रयत्नमें अपने प्राण दे दूँगा। यही मेरा मुख्य कर्तव्य है। मैं मराठेका बच्चा हूँ। अपने कुटुम्बका अपमान मैंने अपने कानों सुना है—अब, जबतक मेरी भुजाओंमें बैल है—नहीं नहीं, जबतक इस शरीरमें प्राण है—तबतक चुप नहीं बैठनेका…"

उसका यह भाषण बराबर जारी रहा। परन्तु बाबाजी अथवा तानाजी, दोमेंसे किसीने भी, बहुत देरतक, उसको समझानेका प्रयत्न नहीं किया। क्योंकि बाबाजी यह भलीभाँति जानते थे कि, इस खबरको सुनकर इसे बड़ा गहरा शोक हुआ है, और उसका आवेग जबतक एकबार इसके शब्दोंसे निकल नहीं जायगा, और उसका जोर कम नहीं हो जायगा, तबतक हमारे समझानेका कोई फल नहीं होगा। इस कारण उन्होंने उसको खूब बोलने दिया। फिर जब बोलते-बोलते वह किसी हदतक पहुँचा तब बाबाजी उसे कहते हैं, 'अरे, क्या तू समझता है कि, ऐसी दुष्ट वार्ता केवल बतलाकर ही हम रह जाते? पगले, तेरी स्त्री काफी चतुर है। वह उनके हाथ आई ही नहीं। पहले ही दिन वह कहीं चली गई। कहाँ गई, यह अभी मालूम नहीं हुआ। इसलिए अब तू पागलपनका कुछ भी विचार अपने मनमें मत ला। यह अपमान केवल तेरा ही नहीं—हम सबका, सारे महाराष्ट्रका, और सारे मराठोंका है, यह तू अभी अच्छी तरह समझ। तेरी पत्नी कहाँ पर, किस दशामें है, यह दो दिनके अन्दर ही तुझे मालूम हो जानेका मैंने प्रबन्ध कर दिया है। तू रत्तीभर भी इसकी चिन्ता मत कर। इसके सिवाय, तेरी स्त्री ऐसे-वैसे घरकी नहीं है—वह यादवोंकी लड़की है—अपमानका मौका आनेपर प्राणतक त्याग देगी, परन्तु अपना व्रत रखेगी, इस बातका क्या तुझे विश्वास नहीं?"

इधर जब कि यह सब बातचीत हो रही थी, दूसरी तरफ दो आदमियोंने—शिवबा और येसाजीने—अपने विचारोंसे फुरसत पाई; और उस तरफ सिपाही जवान तथा बाबाजीकी जब जोर जोरसे बातें होने लगीं, तब उनका ध्यान भी उधर आकर्षित हुआ, और वे चुपकेसे सुनते रहे। जो बातें उधर हो रही थीं, उनका बहुत कुछ अनुमान

उनको हो ही गया होगा; परन्तु अब मानो वे इसी विचारमें थे कि, बीचमें एकदम जाकर हम उनकी बातोंमें शामिल हों या नहीं। इधर वह सिपाही, जो कि शोकमे बिल्कुल उद्विग्न हो रहा था, ऐसा जान पड़ा कि, उसका चित्त अब कुछ स्थिर हुआ। बाबाजीके ध्यानमें ज्यों-ज्यों यह बात आती गई कि, अब उसका शोकावेग धीरे-धीरे दूर होता जा रहा है, त्यों-त्यों उन्होंने अपने समाधानकारक वचन कहने शुरू किये—"तेरा और इन लोगोंका, अब सबका उद्देश्य एक ही है। जो तेरा मानापमान, जो तेरे चित्तकी चिन्ता, वही मानापमान और वही चिन्ता इन सबकी है, यह तू अच्छी तरह समझ। तू जिस बातकी इतनी चिन्ता कर रहा है, उतनी चिन्ता करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। तेरी स्त्री सचमुच ही उस समय किलेपर नहीं थी। वह एक दिन पहले ही, अपनी दासीके साथ वहाँसे चली गई थी। बहुत करके वह अपने नैहर-को ही गई होगी; और फिर, मैं इस बातका वचन देता हूँ कि, तीन दिनके अन्दर ही उसका पूरा पता लगा दूँगा।"

सिपाहीकी उस समय जो चेष्टा हो रही थी, उससे यह नहीं कहा जा सकता था कि, बाबाजी यह जो कुछ कह रहे थे, उसकी ओर उसका ध्यान भी होगा अथवा नहीं। क्योंकि ऐसा जान पड़ता था कि वह अपने मन ही मन कोई विचार करनेमें निमग्न है। स्वामीजी बहुत देरतक, अपनी ओरसे समाधानकारक वचन कहते थे, कह रहे थे। फिर, जैसे उनके मनमें यह बात आई कि, देखो, हम क्या विचार कर रहे थे; और बीचमें यह क्या अरिष्ट उपस्थित हुआ, अतएव वे किंचित् खिन्न और त्रस्तसे दिखाई दिये। इसके बाद, फिर सिपाहीको सम्बोधन करते हुए उन्होंने कहा, "देख, शिवबासे मैं तीन दिनके अन्दर ही उसका पता लानेका वचन दिलाता हूँ—तू घबड़ा मत। मराठेके बच्चेको ऐसा घबड़ाना उचित नहीं।" येसाजीने उससे भी यही कहा। तब कहीं उसका चित्त शान्त हुआ। और फिर सब लोग अपने अगले विचारपर आये। तानाजीको गुफाके द्वारपर जो बैरागी आकर मिला था, उसने अपनी गत सप्ताहकी सारी कार्यवाहीका विवरण बतलाया

था, और इस सप्ताहमें जिन बातोंका वह पता लगा सका था, उन सबका वृत्तान्त उसने बतलाया था। क्योंकि आज कितने ही दिनोंसे इस बातका प्रबन्ध हो चुका था, कि महाराष्ट्रमें जहाँ कहीं कोई बात हो, तुरन्त उसका पक्का पता मिल जाय, और उससे जिस समय जो लाभ उठाया जा सके, उठा लिया जाय। स्वामीजीका उपदेश था कि महाराष्ट्रके सम्पूर्ण किलेपर—स्वयं बीजापुरमें, नहीं, नहीं, बड़े बड़े मुगल सरदारों और मराठे सरदारोंके घरानोंमें भी—समय समयपर जो घटनायें हों, उन सभीका जबतक हमको ठीक पता नहीं मिलता रहेगा, हमारा काम नहीं होगा। बस, अपने इसी उपदेशके अनुसार उन्होंने चारों ओरका पता रखनेके लिये, संन्यासी, वैरागी, इत्यादि लोगोंमेंसे कुछको अपनी मण्डलीमें मिला लिया था, और उन्हींको, अपना उपर्युक्त उद्देश्य सिद्ध करनेका साधन बनाया था। किस किलेपर क्या घटनाएँ हुईं अथवा होनेवाली हैं, किस मुगल सरदारने किसका किस प्रकार, अपमान किया, किसका क्या हुआ, दरबारमें किसके विषयमें क्या-क्या चर्चा हुई, इत्यादि बातोंके विषयमें, जिस रीतिसे ठीक ठीक पता लग सकता था, उसी रीतिसे प्रयत्न करनेमें स्वामीजी अत्यन्त निपुण थे। जिस वैरागीने आकर समाचार बतलाया, वह भी स्वामीजीके उन्हीं साधनोंमेंसे एक था। उसने आज किस किलेके विषयमें समाचार लाकर दिया, सो हमारे चतुर पाठकोंने ताड़ ही लिया होगा। बीजापुरका मुसल्मान सरदार रणदुल्लाखां, सुलतानगढके किलेदारको अधिकारच्युत करके कैद कर लेजानेको आया था, और सुभान तथा श्यामा, जब कि किलेदारका पत्र लेकर देशमुखके यहाँ जा रहे थे, तब उन्होने जिस गोटेश्वरके मन्दिरमें रात बिताई, उसी मन्दिरके पास, दूसरे दिन सुबह आकर, उसने अपनी छावनी डाली थी। इसका स्मरण हमारे पाठकोंको अवश्य ही होगा। वहाँसे अपनी छावनी उठाकर फिर वह सीधा सुल्तानगढके किलेपर पहुँचा। खानके किलेपर पहुँचते ही, उस समयके नियमानुसार, किलेदार रुमालसे हाथ बाँधकर उसके स्वागतको आया। सरदार रणदुल्लाखाँ उम्रमें बिल्कुल छोटा था, पर विचारमें बड़ा गम्भीर था;

और उसकी, कर्तव्यदक्षता भी विशेष प्रसिद्ध थी, अतएव बादशाहका उसपर बड़ा विश्वास था। यही कारण था कि बीजापुरमें, मुरार जगदेव-रावकी तरह, उसका भी अच्छा प्रभाव था। इसके सिवाय, स्वभावमें भी वह एक अच्छा मनुष्य था। सद्‌गुणोंकी कदर करता था। किलेदार साहब जब उसके सामने आये, तब उसने स्वयं आगे बढ़कर उनके हाथ पकड़े, और बोला, "किलेदार साहब, मैं हुक्मका गुलाम हूँ—इसलिये हुक्म बजाने आया हूँ। आप यह बिलकुल न सोचें कि, मेरे हाथसे आपका किसी प्रकार अपमान होगा। आप सिर्फ हुक्मके अनुसार मेरे साथ चलें। आपकी इज्जत और प्रतिष्ठाके अनुसार ही मैं आपको ले चलूँगा। इसके सिवाय मैं इस बातकी खबरदारी रखूँगा कि, आपके पीछे यहाँ किसीको कोई कष्ट न हो।" उसका यह अदबका भाषण सुनकर किलेदार साहबको बड़ा आश्चर्यसा हुआ। क्योंकि ऐसा खयाल उनको स्वप्नमें भी न था कि, मुसल्मान सरदार, जो कि हमको कैद करने आया है, हमारे साथ ऐसा अदबका बर्ताव करेगा। खानने जब पहले ही इस प्रकार बर्ताव किलेदारके साथ किया, तब उसके सिपाहियों-को यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ—मालिकने जब स्वयं ही इस प्रकारका बर्ताव किया, तब उसके सिपाही क्या कर सकते थे? खान किलेपर बिलकुल ही मुकाम नहीं करना चाहता था, इस कारण उसने अपना सारा खेमा नीचे ही रखा। जिस नवयुवक मराठे सरदारको उसने पिछले मुकाम पर अपना कृपापात्र बनाया था, वह भी उसके खेमेके साथ था। खानने उससे अपने साथ किलेपर चलनेके लिए बड़ा आग्रह किया, पर उसने यह बात स्वीकार नहीं की। इसलिए यह कह-कर कि, अच्छा, जो कुछ करना है, मैं ही बहुत जल्द करके आता हूँ, वह ऊपर चला गया। इधर नीचे जो तम्बू लगा हुआ था, उसमें वह नवयुवक मराठा सरदार, जिसपर कि जबरदस्तीकी सरदारी लादी गयी थी, अत्यन्त विचारमें निमग्न इधर-उधर घूम रहा था। उसके मनमें जो विचार इस समय आ रहे थे, बहुत ही उद्वेग उत्पन्न करनेवाले मालूम होते थे। क्योंकि, ऐसा दिखाई दिया कि, बार बार वह बीच

बीचमें, अपने आँसू, जो कि उसके नेत्रोंसे निकल रहे थे, पोंछ रहा था। साथ ही बीच बीचमे वह दीर्घ नि:श्वास भी छोड़ता जाता था। "प्रसंग बहुत ही विकट है, और अब बहुत जल्द जो प्रसंग आनेवाला है, वह तो बहुत ही विकट होगा, इसमें सन्देह नहीं। भाग जावें तो यह भी सम्भव नहीं। ऐसी दशामें करना क्या चाहिये?" इस आशयके उद्गार उसके मुँहसे, उस थोड़े समयके बीचमें ही, न जाने कितनी बार निकले होंगे। "करने कुछ जाओ, और होता कुछ है! ऐसा प्रसंग आजतक किसीपर भी न आया होगा। न आया होगा क्यों? सचमुच ही नहीं आया। किन्तु इस विचित्रतापर आश्चर्य करते रहनेसे क्या लाभ? किसी न किसी उपायकी योजना करनेसे ही काम चलेगा।" इस प्रकारके भी विचार और उद्गार उसके मनमे मानो आ रहे थे। उसे यह भी मालूम था कि, हमारी सब बातोंके ऊपर दूसरेकी निगह बानी है। यहाँ तक कि, वह जानता था कि, हम जो कुछ अपने आपसे कह रहे हैं, वह भी किसी अनर्थका कारण हो सकता है। इसलिये उसने सोचा कि, जो कुछ करना हो, अत्यन्त सोच विचार करके करना चाहिये। ये सब बातें मनमे लाकर ही वह वहाँपर पूरी सावधानीका बर्ताव कर रहा था। ऐसी दशामे भी, कह नहीं सकते, उसपर ऐसा कौनसा प्रसंग गुजर रहा था। जो हो।

विचार करते करते कोई युक्ति उसे सूझी, और उसके सचिन्त चेहरेपर कुछ मुस्कुराहटकी झलक दिखाई दी। जिस प्रसंगके आनेसे उसका अत्यन्त कष्टकी सम्भावना जान पड़ती थी, उसको टालनेके लिए कोई युक्ति उसे सूझ पड़ी। इससे उसके मनको जो कुछ थोड़ासा आनन्द हुआ, उसीका बाह्य चिन्ह उसके चेहरेपर उस मन्द स्मितके स्वरूपमे प्रकट हुआ। युक्ति सूझी सही, पर ज्यों ज्यों अधिकाधिक समय जाने लगा, त्यों त्यों मानो यह शंका भी उसके मनमे आने लगी कि देखना चाहिये, यह युक्ति हमारे मनके अनुसार कहाँतक सफल होती है।

———

इकतीसवां परिच्छेद

खानकी रात कैसे बीती ?

इधर रणदुल्लाखाँ और किलेदार साहबकी—जैसा कि पिछले परिच्छेदमें बतलाया—जब वह आगत स्वागतकी भेंट हो चुकी, तब वे दोनों बहुत देरतक, एकान्तमें कुछ बातचीत करते रहे। बातचीत समाप्त होनेपर जब अन्य लोगोंको उस कमरेमें आनेकी इजाजत हुई, तब लोगोंने देखा कि, दोनोंके चेहरे बिल्कुल हास्यपूर्ण हैं; और इस कारण, रणदुल्लाखाके देखते ही किलेपरके लोगोंमें जो एक प्रकारका यह आतंक छा गया था कि, "अब किलेपर कोई भयंकर हलचल होगी, बड़ा उपद्रव मचेगा, "सो आतंक, यद्यपि बिल्कुल तो नहीं, फिर भी बहुत कुछ अंशमें कम हो गया। यह सब हालत देखकर अन्य सब लोगोंको बहुत सन्तोषसा हुआ। सिर्फ एक व्यक्तिको अवश्य, मानो यह देखकर ही कि, यह सारा हाल हमारी आशाके बिलकुल विरुद्ध हुआ, बहुत बुरा मालूम हुआ। वह व्यक्ति कौन था ? पाठकोंने प्रायः ताड़ ही लिया होगा। इसलिए अब विशेष स्पष्ट करके बतलानेकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती। लोगोंको यह स्पष्ट दिखाई दिया कि, किलेदार साहब कुछ दिनके लिये बीजापुर जा रहे हैं, और इसके अतिरिक्त अन्य कोई क्रान्ति होनेका रंग दिखाई नहीं देता। रणदुल्लाखाने बहुत देरतक किलेपर मुकाम किया। अन्तमें यह निश्चित हुआ कि, दूसरे दिन किलेदार साहब कुछ दिनके लिए बीजापुरके लिये कूच करेंगे। इसके बाद खान अपनी छावनीमें नीचे वापस आगया। वह मराठा सरदार, जिसको कि खानने अभी हालहीमें अपना कृपापात्र बनाया था, इस बातके लिए बड़ा उत्सुक दिखाई दिया कि, खाँसाहब कब नीचे आवें; और उनकी हमारी मुलाकात हो। इधर खाँसाहब जब नीचे आये, उनको भी मानो अपने नवीन मित्रसे मिलनेकी बड़ी भारी उत्कण्ठा हुई। क्योंकि नीचे आते ही उन्होंने यह सन्देशा भेजा कि, "सरदार साहब

क्या करते हैं? विशेष काममें न हों, तो उनसे मुलाकात करनेकी हमारी बड़ी इच्छा है।" सन्देशा पाते ही सरदार साहब उठकर रणदुल्लाखाके पास आये, और बडे अदबसे मुजरा करके दूर बैठ गये। यह देखकर खाँसाहब उनकी ओर देखकर हँसते हुए कहते हैं, "क्यों सरदार साहब, मैं आपको अपना पक्का दोस्त समझता हूँ, और आप यह दूजा भाव रखते हैं—आप ऊपर नहीं चले, इसलिए वहाँका सब वृत्तान्त बतलानेके लिये ही मैंने आपको इस समय बुलाया है। आज ऊपर जाकर किलेदार साहबकी मैंने पूरी-पूरी इज्जत-प्रतिष्ठा रखी, और कहा कि, क्या बतलाऊँ साहब, मैं हुक्मका गुलाम हूँ। किलेको अपने अधिकारमें लेकर आपको कैद कर ले जानेका मुझे हुक्म हुआ है। उस हुक्मकी तामील करना आवश्यक है। पर मैं आपको अपने पिताके तुल्य समझता हूँ। आप बिना किसी सकोचके मेरे साथ चलें। बीजापुर पहुँचनेपर भी आपकी इज्जत और प्रतिष्ठामें किसी प्रकारका धक्का न लगने पावेगा और जहाँ तक हो सकेगा, आपके रहनेका प्रबन्ध भी उत्तम रखा जायगा, इसका दायित्व मे अपने ऊपर लेता हूँ। मैंने ज्यों ही उनसे ऐसा कहा, उनको बड़ा आनन्द हुआ। इसके बाद बहुत देरतक हम दोनों अनेक प्रकारकी बातचीत करते रहे। उनके पुत्र नानासाहबके विषयमें भी बातचीत निकली थी। उससे मालूम हुआ कि, किलेदार साहब यह जानते हैं कि, नानासाहबकी उद्दण्डताके कारण ही आज उनपर ऐसी नौबत आई। नानासाहब इस फन्देमे न पड़कर यदि बीजापुर चले जाते, तो हुजूरकी तरफसे उनकी बड़ी मान प्रतिष्ठा होती; पर क्या किया जाय, उनकी बुद्धि ही विपरीत हो गई, इसके लिये कोई उपाय नहीं। मे स्वय वहाँ था, बातकी बातमे उनके गुणोंकी कदर होती, और उनकी उन्नति हो गई होती।"

कह नहीं सकते, क्या कारण था, रणदुल्लाखाने जब अन्तमें नानासाहबके विषयमे बात निकाली, तब वह बारम्बार अपने साथीके चेहरेकी ओर देखता जाता था, और जब रणदुल्लाखाँ उसके चेहरेकी ओर देखता, और यह बात उस सरदारके ध्यानमे आती, तब उसकी

नजर बचानेकासा प्रयत्न करता था। क्लिपेरका सब वृत्तान्त बतला चुकनेके बाद रणदुल्लाखाने उससे स्वाभाविक ही पूछा, "आप किलेपर सुबह क्यों नहीं चले।" सरदारने पहले तो "यों ही, कोई बात नहीं" कहकर मौका टाल दिया; पर फिर, जब खानने यह कहा कि, "कोई हानि नहीं, कल सुबह उनसे आपकी मुलाकात कराऊँगा, क्योंकि अब बीजापुरतक वे हम लोगोंके साथ ही रहेंगे," तब सरदार साहब कहते हैं, "नहीं, नहीं। मेरी और उनकी मुलाकात आप, जहाँतक हो सके, न करावें; बल्कि न कराना ही अच्छा होगा। क्योंकि मुझको वे जानते नहीं; और न मुझपर उनका कोई प्रेम है। बल्कि मुझको देखते ही शायद उनको क्रोध भी आजावे, क्योंकि उनका खयाल है कि, जिनके कारण उनके ऊपर आज यह नौबत आई, वे मेरे ही बहकानेसे बिगड़ गये हैं। इसलिए कृपा कीजिये, और ऐसा मौका न लाइये कि, जिससे मेरी उनकी आमने-सामने मुलाकात हो जाय। यही आपसे प्रार्थना है। मैंने आपसे बहुत बार निवेदन किया कि, अब मुझे आप अपने घर जाने दीजिये, पर आपने स्वीकार नहीं किया, मैं लाचार हो गया। पर इतनी प्रार्थना तो आप अवश्य स्वीकार करें।"

इतना कहकर वह रणदुल्लाखाके चेहरेकी ओर आतुरतासे देखने लगा। उसका कथन—विशेषतः उसका अन्तिम वाक्य अभी समाप्त न होने पाया था कि, रणदुल्लाखाँ एकदम उससे कहता है, "आपकी मर्जीके विरुद्ध मैं आपको सरदारी दे रहा हूँ, इसपर आपको इतना बुरा लगनेका कोई कारण नहीं। क्योंकि आपके अन्दर सरदारोंके योग्य सभी सद्गुण मौजूद हैं; और मैं नहीं चाहता कि, उनका कोई उपयोग न हो। इसलिये मैं आपसे यह आग्रह कर रहा हूँ। आपने जैसा कि पहले स्वीकार किया है, मेरे साथ बीजापुर तक तो अवश्य ही चलें। वहाँ आपकी कैसी क्या मान-प्रतिष्ठा होती है, सो देखिये। फिर यदि आपको वहाँ रहना पसन्द न आवे, तो आप खुशीसे लौट आइये। पर इस समय तो जानेकी बात न निकालिये। क्योंकि जानेकी बात जब आप निकालते हैं, तभी मेरे मनमें आता है

क्या करते हैं? विशेष काममें न हों, तो उनसे मुलाकात करनेकी हमारी बड़ी इच्छा है।” सन्देशा पाते ही सरदार साहब उठकर रणदुल्लाखाके पास आये, और बडे अदबसे मुजरा करके दूर बैठ गये। यह देखकर खाँसाहब उनकी ओर देखकर हँसते हुए कहते हैं, “क्यों सरदार साहब, मैं आपको अपना पक्का दोस्त समझता हूँ, और आप यह दूजा भाव रखते हैं—आप ऊपर नहीं चले, इसलिए वहाँका सब वृत्तान्त बतलानेके लिये ही मैंने आपको इस समय बुलाया है। आज ऊपर जाकर किलेदार साहबकी मैंने पूरी-पूरी इज्जत-प्रतिष्ठा रखी, और कहा कि, क्या बतलाऊँ साहब, मैं हुक्मका गुलाम हूँ। किलेको अपने अधिकारमें लेकर आपको कैद कर ले जानेका मुझे हुक्म हुआ है। उस हुक्मकी तामील करना आवश्यक है। पर मैं आपको अपने पिताके तुल्य समझता हूँ। आप बिना किसी सकोचके मेरे साथ चलें। बीजापुर पहुँचनेपर भी आपकी इज्जत और प्रतिष्ठामें किसी प्रकारका धक्का न लगने पावेगा और जहाँ तक हो सकेगा, आपके रहनेका प्रबन्ध भी उत्तम रखा जायगा, इसका दायित्व मै अपने ऊपर लेता हूँ। मैंने ज्यों ही उनसे ऐसा कहा, उनको बड़ा आनन्द हुआ। इसके बाद बहुत देरतक हम दोनों अनेक प्रकारकी बातचीत करते रहे। उनके पुत्र नानासाहबके विषयमें भी बातचीत निकली थी। उससे मालूम हुआ कि, किलेदार साहब यह जानते हैं कि, नानासाहबकी उद्दण्डताके कारण ही आज उनपर ऐसी नौबत आई। नानासाहब इस फन्देमे न पडकर यदि बीजापुर चले जाते, तो हुजूरकी तरफसे उनकी बड़ी मान प्रतिष्ठा होती; पर क्या किया जाय, उनकी बुद्धि ही विपरीत हो गई, इसके लिये कोई उपाय नहीं। मे स्वय वहाँ था, बातकी बातमे उनके गुणोंकी कदर होती, और उनकी उन्नति हो गई होती।”

कह नहीं सकते, क्या कारण था, रणदुल्लाखाने जब अन्तमें नानासाहबके विषयमे बात निकाली, तब वह बारम्बार अपने साथीके चेहरेकी ओर देखता जाता था, और जब रणदुल्लाखाँ उसके चेहरेकी ओर देखता, और यह बात उस सरदारके ध्यानमे आती, तब उसकी

नजर बचानेकासा प्रयत्न करता था। किलेपरका सब वृत्तान्त बतला चुकनेके बात रणदुल्लाखाने उससे स्वाभाविक ही पूछा, "आप किलेपर सुबह क्यों नहीं चले।" सरदारने पहले तो "यों ही, कोई बात नहीं" कहकर मौका टाल दिया; पर फिर, जब खानने यह कहा कि, "कोई हानि नहीं, कल सुबह उनसे आपकी मुलाकात कराऊँगा, क्योंकि अब बीजापुरतक वे हम लोगोंके साथ ही रहेंगे," तब सरदार साहब कहते हैं, "नहीं, नहीं। मेरी और उनकी मुलाकात आप, जहाँतक हो सके, न करावें; बल्कि न कराना ही अच्छा होगा। क्योंकि मुझको वे जानते नहीं; और न मुझपर उनका कोई प्रेम है। बल्कि मुझको देखते ही शायद उनको क्रोध भी आजावे, क्योंकि उनका खयाल है कि, जिनके कारण उनके ऊपर आज यह नौबत आई, वे मेरे ही बहकानेसे बिगड़ गये हैं। इसलिए कृपा कीजिये, और ऐसा मौका न लाइये कि, जिससे मेरी उनकी आमने-सामने मुलाकात हो जाय। यही आपसे प्रार्थना है। मैंने आपसे बहुत बार निवेदन किया कि, अब मुझे आप अपने घर जाने दीजिये, पर आपने स्वीकार नहीं किया, मैं लाचार हो गया। पर इतनी प्रार्थना तो आप अवश्य स्वीकार करें!"

इतना कहकर वह रणदुल्लाखाके चेहरेकी ओर आतुरतासे देखने लगा। उसका कथन—विशेषतः उसका अन्तिम वाक्य अभी समाप्त न होने पाया था कि, रणदुल्लाखाँ एकदम उससे कहता है, "आपकी मर्जीके विरुद्ध मैं आपको सरदारी दे रहा हूँ, इसपर आपको इतना बुरा लगनेका कोई कारण नहीं। क्योंकि आपके अन्दर सरदारोंके योग्य सभी सद्गुण मौजूद हैं; और मैं नहीं चाहता कि, उनका कोई उपयोग न हो। इसलिये मैं आपसे यह आग्रह कर रहा हूँ। आपने जैसा कि पहले स्वीकार किया है, मेरे साथ बीजापुर तक तो अवश्य ही चलें। वहाँ आपकी कैसी क्या मान-प्रतिष्ठा होती है, सो देखिये। फिर यदि आपको वहाँ रहना पसन्द न आवे, तो आप खुशीसे लौट आइये। पर इस समय तो जानेकी बात न निकालिये। क्योंकि जानेकी बात जब आप निकालते हैं, तभी मेरे मनमें आता है

कि, मैं तो आपके साथ इतना प्रेमका बर्ताव करता हूँ; और आपका विश्वास मुझपर बिलकुल नहीं जमता।"

इस प्रकार जब रणादुल्लाखाने कुछ तेजीके साथ कहा, तब हमारे सरदार साहब कुछ चकितसे दिखाई दिये। इसके बाद कुछ देरतक इधर-उधरकी और गप-शप हुई, फिर खासाहबके "बैठिये, बैठिये" कहकर आग्रह करनेपर भी हमारे सरदार साहब उठकर अपने तम्बूमें चले आये। अब रात बहुत हो चुकी थी। अहमद भीतर आकर खाँसाहबसे "खाना तैयार है" कहकर चला गया। परन्तु खासाहबका मन उस समय कुछ अंशमें अस्वस्थसा दिखाई दिया—कह नहीं सकते कि; उस मराठे सरदारसे अभी इतनी देरतक जो बातचीत हुई, उस कारणसे, अथवा अन्य किसी कारणसे—चाहे जो कारण हो, किन्तु खासाहबका चित्त उस समय कुछ अशान्त अवश्य था। इसलिये उन्होंने नौकरसे कहला भेजा कि, हमे भूख नहीं है, और फिर कपड़े इत्यादि निकालकर पलँगपर जा लेटनेकी तैयारी करने लगे। निद्राकी जितनी कुछ बाह्य तैयारी करनी चाहिये, उतनी सब उन्होंने की। ऊँचे और विस्तीर्ण पलँग पर घुटनोंतक ऊँचा परोंका गद्दा पड़ा हुआ था, उसपर लेटकर तकियेपर सिर रखे हुए घण्टों वे निद्रादेवीकी आराधना करते रहे। परन्तु कुछ लाभ न हुआ—सारा समय उन्हें करवटें बदलते ही बिताना पड़ा। उस समयकी उनकी सारी चेष्टाओंसे यही प्रतीत हो रहा था कि, नींद उनको किसी प्रकार भी नहीं आ रही है। ऐसी अस्वस्थ अवस्थामें भी कितनी देर पड़े रहते? अन्तमे बेचारा उठा, और कुछ देरतक पलँगपर ही बैठा रहा। पर उस अवस्थामें भी चैन नहीं! अन्तमें पलँगपरसे भी उठा, और तम्बूके द्वारपर आकर आकाशमे टिमटिमाते हुए तारागणोंकी ओर देखता हुआ चुपके खड़ा रहा। कितनी ही बार उसने दीर्घ निःश्वास छोड़े, और उसी दरवाजेपर खड़े हुए, कमसे कम, बीस-पचीस बार उसने उस मराठे सरदारके तम्बूकी ओर देखा होगा, पाँच बार अपनी उस खड़े रहनेकी जगहसे उस तम्बूकी ओर जानेको अ होगा। क्योंकि उस तम्बूकी ओर नजर रखकर कई बार

उसके कदम अपने-तम्बूसे बाहर निकले; परन्तु बहुत जल्द फिर उसने उनको पीछे हटाला लिया। इसी प्रकार उसने पलँगसे लेकर तम्बूके द्वारतक और तम्बूके द्वारसे लेकर पलँगतक, अनेक चक्कर लगाये। इसके बाद फिर खासाहब मानो अपने विचारमें ही निमग्न होकर चुपके खड़ेसे हो गये। उस समय चाहे आस-पास कोई आया गया भी होता, तो भी उनके खयालमें न आया होता। न जाने ऐसा कौनसा विचार उनके मनमें आ रहा था! जो विचार उस समय उनके मनमें आ रहा था, वह खेदप्रद अवश्य था, इसमें सन्देह नहीं, क्योंकि उनके चेहरेपर खिन्नताके अतिरिक्त और किसी विचारकी छाया दृष्टिगोचर नहीं हो रही थी।

इस प्रकार जब कि खांसाहब स्तब्ध खड़े हुए थे, उनके तम्बूमें कोई व्यक्ति आया; और बिल्कुल उनके पास ही आकर ये शब्द उच्चारण किये, "अजी हजरत, आज आपकी यह क्या हालत हो रही है? रोज आप इसी वक्त गहरी नींदमें हुआ करते थे, पर आज क्या हो गया?" इन शब्दोंके कानमें पड़ते ही खाँसाहब एकदम चौंक पड़े; और उक्त व्यक्तिकी ओर विचित्र दृष्टिसे देखने लगे। यह कौन व्यक्ति है, क्या कह रहा है, सो मानो कुछ उनकी समझ ही में न आया। बहुत देर जब वे उस व्यक्तिकी ओर उसी दृष्टिसे देख चुके, तब एकदम, जैसे होशमें आकर, उन्होंने उस व्यक्तिको पहचाना; और फिर बोले, "अहमद, तू क्या मुझपर नजर रख रहा है? मैं किस समय क्या काम करता हूँ, उसपर क्या तेरी नजर रहती है? तू अपनी रावटी छोडकर इधर क्यों आया? तुझे आये कितनी देर हुई? आनेका कारण?"

इस प्रकार, अत्यन्त त्रस्त स्वरसे, उन्होंने एकके बाद एक, अनेक प्रश्न अहमदसे किये। वह बेचारा घबड़ा गया; और जब उन प्रश्नोंका प्रवाह बन्द हुआ; और उससे कुछ फुरसत मिली, तब वह हाथ जोड़कर बोला—"सरकार, मैं यों ही अपनी रावटीसे बाहर निकला; और आपकी आहट मेरे कानोंमें गई। सोचा कि, शायद आपको किसी चीजकी जरूरत हो, इसलिए आपके तम्बूकी तरफ चला, लेकिन देखा कि, आप

न जाने कितनी देरसे तम्बूके द्वारपर ही खड़े हैं। इस पर यों ही मुझे यह लालसा हुई कि, देखें, इतनी रातको आप यहाँ खड़े हुए क्या कर रहे हैं? यह भी समझा कि, शायद आप मुझे ही पुकारनेके लिए द्वारपर आये हों, इसलिए जब आपकी ओर देखने लगा, तब आपके चेहरेकी रगत कुछ और ही दिखलाई दी। मैं उसी वक्त आकर आपसे अर्ज करनेवाला था, पर यह समझकर कि आप कहीं नाराज न होने लगे, मैं इतनी देर ठहर गया। अन्तमें जब इस फर्माबरदार नौकरसे बिलकुल ही रहा नहीं गया, तब आगे बढकर आपसे अर्ज किया। यदि इसको बतलाने लायक कोई काम हो, तो हजूर फरमावें। ऐसा नहीं कि, मैंने आपका दिल ताड़ न लिया हो। पर जबतक आप इजाजत न दें, मैं कुछ कह नहीं सकता, यह बिलकुल यकीन रखिये।"

अहमद जब कि इस प्रकार अपना लम्बा-चौड़ा तुम्मार बाध रहा था, खासाहबका ध्यान अधिकाशमे उस ओर नहीं था। परन्तु ज्योंही उन्होंने अहमदके मुखसे अन्तिम वाक्य सुना, त्यों-ही एकदम उनका ध्यान आकर्षित हुआ, और वे तुरन्त ही उसकी ओर देखकर बोले, "क्यों? मेरे मनमें क्या है, जो तूने ताड़ा है? अहमद, यह यदि सच है, तो कहना चाहिये कि, मुझसे भी अधिक तुझको मेरे मनकी जानकारी है। क्योंकि मेरे मनमे क्या है, सो मुसे ही ठीक-ठीक इस समय मालूम नहीं हो रहा है।"

इतना कहकर उन्होंने एकदम एक लम्बीसी सास छोड़ी, और फिर बहुत देरतक अहमदकी ओर शून्यदृष्टिसे देखते हुए खड़े रहे। अहमदने, मानो यह समझकर ही कि, मेरे बोलनेका यही अच्छा मौका है, खासाहबकी ओर देखकर कहा, "गरीबपरवर, उस तम्बूकी ओर जाकर अपने नवीन दोस्तसे बातचीत करनेकी क्या आपको इच्छा नहीं हुई? आपने इसी उद्देश्यसे न जाने कितनी बार तम्बूसे बाहर कदम निकाला और फिर पीछे हटाया।" ये वाक्य बोलते समय अहमद ऐसी कुछ विचित्र रीतिसे हँसा कि, उसका वह हँसना यदि और किसीने देखा अथवा सुना होता, तो उसे थोड़ा बहुत क्रोध उसपर अवश्य आया होता।

क्योंकि उसके उस हँसनेमें कोई बहुत ही गूढ़ अभिप्राय अवश्य था, जो स्पष्ट दिखाई दिया।

कह नहीं सकते कि, उसका वह हँसना और बोलना खासाहबके कानोंमें पड़ा, अथवा नहीं! क्योंकि उनका ध्यान उस ओर नहीं था। वे किसी अपने ही विचारमें निमग्न थे। ऐसा यदि न होता, तो अहमद के उक्त कथनसे उनको भी क्रोध आये बिना नहीं रह सकता था। फिर भी इसके कथनमेंसे कोई-कोई शब्द उनके कानोंमें अवश्य पड़े होंगे। क्योंकि उसका कथन समाप्त होनेके बाद कुछ देरतक वे चुपके खड़े रहे, और फिर अन्तमें उन्होंने कहा, "अहमद, तू यह कहता है कि, मेरे मनके सारे उद्देश्य तूने ताड़ लिये हैं? तू क्या यह कह सकता है कि, मेरे अस्वस्थ होनेका कारण तेरे ध्यानमें आ गया है? अच्छा, तो तू बतला तो सही कि, मैं इतना अस्वस्थ क्यों हूँ? अरे मूर्ख, मैं अस्वस्थ नहीं हूँ। अस्वस्थ होनेका कोई कारण भी नहीं। यों ही गत सप्ताहमें जो मुझे हैरानी उठानी पड़ी है, और जो परिश्रम मुझसे हुआ है, उसीके कारण मुझे नींद नहीं आई, और मैं इधर-उधर टहल रहा था। तेरे मनमें यदि कोई शंका आई हो, तो बिलकुल छोड़ दे। बिलकुल चुपकेसे अपनी रावटीमें जाकर सो।" यह सुनकर अहमद फिर हँसा, और उनसे बोला, "हुजूर, यह बन्दा आपकी ऐसी बातोंमें नहीं आ सकता। आपके मनको कोई बात बहुत दुःख दे रही है, इस विषयमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं। गरीबपरवर, आपका प्रेम इस नवीन मराठे दोस्तसे बहुत हो गया है; और इसी कारण तो आप इतने बेचैन नहीं हो रहे हैं?"

इतना कहकर अहमदने अपनी जीभ दातोंतले दबाई। मानो उसने यह समझा कि, हम आवश्यकतासे अधिक बोल गये। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि, जो कुछ उसने कहा, सो जान बूझकर ही कहा। कुछ समय पहले भी उसने इसी आशयके वाक्य कहे थे, और उनको कहते समय वह एक विचित्र तरहसे हँसा था, इत्यादि बातें पाठकोंको अभी भूली नहीं होंगी। उस समय उसके वे शब्द खानके कानोंमें नहीं पड़े थे। पर अबकी बारके शब्द वैसे नहीं थे। इस बारके शब्द खानके कानमें

पूर्ण रूपसे पढ़े, और एकदम उसका चेहरा भी बदल उठा। वह इतना क्रुद्ध दिखाई दिया कि, उसके मुँहसे शब्द भी न निकलने लगा, और शब्द निकलने योग्य स्थितिमें वह आनेहीवाला था कि, इतनेमें विवेकने भी उसके मनमें प्रवेश किया, और उसमें कुछ मृदुतासी ला दी। बस, तुरन्त ही उसने सोचा कि, हमारे सच्चे विचार जब इसको मालूम हो गये हैं, तब फिर इसपर क्रोध करनेसे क्या लाभ? परन्तु ठीक ठीक कह नहीं सकते कि, उसने यही सोचा, अथवा और कुछ—हाँ, इतना अवश्य हुआ कि, उसके चेहरेपर पहले जो क्रोध दिखाई दिया था, वह उसके कथनमें दिखाई नहीं दिया। क्योंकि धीरेसे उसने अहमदसे इतना ही कहा, "अहमद, तू क्या कह रहा है—कुछ होशमें भी है? और कोई मालिक होता, तो तुमको इस समय उसने बड़ी भारी ताड़ना दी होती। जा, अब तू यहासे चला जा। फिर यदि तूने इस विषयमें मुझसे, अथवा और किसीसे एक अक्षर भी कहा, तो तुझको जानसे मार डालूँगा! अच्छी तरह समझ लेना। जा, अब यहासे टल जा।"

परन्तु ढीठ अहमद वहासे एकदम भी नहीं हिला, वहीं खड़ा रहा; और फिर खानसे बोला, "परन्तु सरकार, जो बात बिलकुल अपने हाथकी है, उसके लिए इतनी बेचैनी और इतने विचारकी आवश्यकता ही क्या है? आपकी आज्ञा हो, तो मैं··" आगे उसने क्या कहा, सो, ऐसा जान पड़ा कि, खाँसाहबको, जो कि क्रोधसे बिलकुल अधीर हो गये थे, सुनाई ही नहीं दिया।

बत्तीसवां परिच्छेद

शाजापुर जानेपर

खान क्रोधसे इतना पागल हो गया कि, न सिर्फ उसे कानोंमे सुनाई ही दिया, बल्कि आँखोंमे दिखाई भी नहीं दिया। वह अहमदकी सूरतकी ओर किस नजरसे देखने लगा सो उसको ही मालूम! आजतक उसको उसके मालिकने ऐसी दृष्टिसे कभी भी नहीं देखा था।

खानका क्रोध इतना बढ़ा हुआ दिखाई दिया कि, उसके मुँहसे एक शब्द भी नहीं निकल सका। वह कुछ कहना अवश्य चाहता था, यही नहीं, बल्कि बोलनेके लिए उसके होंठ आतुरसे हो रहे थे, पर एक शब्द भी मुँहसे नहीं निकलता था। लगभग एक मिनट वह उसी दृष्टिसे अहमदकी ओर देखता रहा। इसके बाद फिर खानने शब्द, जो बहुत देरसे संचितसे हो रहे थे, एकदम उसके मुखसे बाहर निकले;—अहमद, मैं खूब जानता हूँ कि, आज अनेक वर्षसे तेरे बापके साथ ही साथ तेरे घरके सब लोग मेरे घरमें बड़ी ईमानदारीसे नौकरी करते आते हैं; और इसी कारण आज मैं तुझे माफ करता हूँ, नहीं तो मार ही डाला होता। तू अपने मालिकको अच्छी तरह जानता नहीं है; और इसीलिए अन्य मालिकोंकी भाति उसे समझकर तू इस समय इतना भ्रममें पड़ गया। बस, इसी खयालसे आज मैं तुझे छोड़ देता हूँ। परन्तु आगेसे फिर कभी तूने यदि ऐसी ढिठाई दिखलाई, तो जानसे मार डालूँगा। पहलेसे ही तू इस सम्बन्धमें क्या क्या खयाल करता आया है, सो, ऐसा नहीं कि, मेरे ध्यानमें न हो। इसलिए अब तू बस, मेरी आँखोंके सामनेसे टल जा। और आगे तू इस विषयमें यदि मुझसे एक अक्षर भी कहेगा, अथवा और किसीसे कहा—ऐसा मैं सुनूँगा तो तुझे जीता ही गड़वा दूँगा, यह तू अच्छी तरह समझ ले।"

यह सब कहते हुए खानने इतनी शान्ति धारण की थी कि, उस समयके उसके क्रोधको देखते हुए यही आश्चर्य करना पड़ता था कि, इतनी शान्ति वह धारण कैसे कर सका। उसने जो शब्द उच्चारण किये, वे शान्तिपूर्ण तो अवश्य थे; परन्तु वे इस प्रकारकी आवाजमें उच्चारण किये गये थे कि, जिससे अहमदके मनपर यह पक्का विश्वास हो सकता था कि, मौका आनेपर हमारा मालिक इनमेंसे एक एक शब्दको सच कर दिखलानेमें चूक नहीं सकता। इसलिए अब आगे उसको ढिठाई दिखलानेका साहस नहीं हुआ; बल्कि इस बातपर अब उसे आश्चर्यसा हुआ कि, इतना होनेपर भी मैं बचकर कैसे जा रहा हूँ। स्वामीका कथन समाप्त होते ही अहमद कुछ घबड़ासा गया; और

फिर वहांसे चलता बना। उसके जानेके बाद खान मानो और भी अधिक अस्वस्थसा हुआ, और बराबर, पहले ही की भांति, वह अपने तम्बूमें इधरसे उधर चक्कर लगाने लगा। उस समय ऐसा जान पड़ा कि, मानो कुछ अत्यन्त खेदजनक विचारोंने आकर उसके मनको उद्विग्न कर डाला हो।

मनुष्य जब अपने विचारोंसे बहुत ही उद्विग्न हो जाता है, तब कभी कभी उसके विचार—उसको न मालूम होते हुए—उसके मुँहसे अचानक बाहर निकलने लगते हैं। वास्तवमें, ऐसे समयमें, उसके विचार इतने कुछ क्षुब्ध हो जाया करते हैं, कि वे शब्दोंके रूपमें आप ही आप बाहर निकलने लगते हैं। बस, खाँसाहबकी भी उस समय यही हालत थी। अव्वल तो उनको नींद नहीं आई थी, और फिर उसमें भी विचारोंने जोर मारा! फिर क्या पूछना है। मानो, जल्दी जल्दी इधरसे उधर बार बार चक्कर लगानेके कारण ही थककर वे अपने पलंगपर जा पड़े। और फिर आप ही आप कहते हैं, "आजतक मैं ऐसी बातोंको बिल्कुल काल्पनिक ही समझता था। परन्तु, देखो तो, केवल चार आँखें होनेसे ही यह हालत! अबतक मैं इसको बिलकुल असम्भव समझता था, पर अब तो यह प्रत्यक्ष अनुभव है!···परन्तु नहीं। यह रणदुल्लाखाँ ऐसी नीचता कभी नहीं करेगा। "सगतिसे वंचित न हो, सहवास न छूटे—" बस, इतने ही के लिए अबतक जैसा बहाना दिखलाता आया, वैसा ही दिखलाता रहूँगा, इसके अधिक और कुछ मैं जानता हूँ—सो प्रकट ही न करूँगा। परन्तु ·····परन्तु इससे अधिक यदि मेरे हृदयमें कोई विचार आने लगेगा, तो यह शस्त्र, जो मैंने दूसरेपर चलानेके लिए हाथमें धारण किया है, अपने ही ऊपर चला लूँगा। इसमें जरा अन्तर नहीं पड़ेगा!"

इतना कहकर उसने एक अत्यन्त लम्बीसी साँस छोडी। और नींद आनेके लिए फिर वह सब प्रकारके प्रयत्न करनेमें निमग्न हुआ। उसके अन्तिम निश्चयने मानो उसके ऊपरका बड़ा भारी बोझा हलका कर दिया। क्योंकि नींदके लिए वह जो प्रयत्न कर रहा था, उसमें सुबहकी

ठण्ढी हवाने भी सहायता दी; और बहुत जल्द उसे गहरी निद्रा आ गई। उस निद्राके समय यदि कोई वहाँ होता, और वह बराबर उस निद्रानिमग्न खानके चेहरेकी ओर देखता रहता, तो अवश्य ही उसे यह दृष्टिगोचर होता कि, खानका मन, उस निद्रामें भी, विचारमग्न है; परन्तु हाँ; उस दशामें, उसके विचार कुछ उद्वेगकारक और कुछ सुखकारकसे हैं। अस्तु।

खानने पिछले दिन, जैसा कि मराठे सरदारसे कहा था, तदनुसार ही सब बातें हुईं। खान किलेदार साहबको लेकर चला। मराठे सरदारने जैसा कि पिछले दिन खाँसाहबसे वचन ले लिया था, उसके अनुसार ही, किलेदार साहबसे उन्होंने उसकी मुलाकात न होने देनेके लिए पूरी पूरी सावधानी रखी। सच तो यह था कि, उस मराठे सरदारपर खाँसाहबकी इतनी भक्ति हो गई थी कि, वह जो कुछ कहता, वही खाँसाहब करते जाते, उसके विरुद्ध कुछ भी नहीं करते। अभी हमने बतलाया कि, उन्होंने उस मराठे सरदारको किलेदारकी मुलाकातसे बचानेकी सावधानी रखी—यह नहीं, बल्कि उस मुलाकातका मौका न आने पावे, इसके लिए उन्होंने एक एक मुकाम आगे-पीछे रखनेका भी प्रबन्ध किया। मराठे सरदारको उन्होंने, अपने साथके बहुतसे लश्करके सहित, एक मुकाम आगे रवाना कर दिया। हाँ, उससे यह वचन पूरे तौरपर ले लिया कि, वह उनको छोड़कर और कहीं चला न जावे। खाँसाहब अच्छी तरह समझते कि, अब इसपर विश्वास रखनेमें कोई हानि नहीं। उन्होंने जिस समय उसको एक मुकाम आगे भेजनेका विचार निश्चित किया, उस समय उनको बहुत बुरा मालूम हुआ।

उनके चित्तको इस बातका बड़ा खेद हुआ कि, अब बीजापुरतक मार्गमें हमारे मित्रकी संगति छूटती है। परन्तु उन्होंने सोचा कि, हमारा मित्र किलेदारसे मिलना नहीं चाहता, और मार्गमें किलेदार, तथा हम सब जब एकत्र रहेंगे, तब यह सम्भव नहीं कि, एक बार भी किलेदारसे उसकी भेंट न होने पावे। ऐसी दशामें, इतना मित्र-वियोग सहन कर

लेनेमें कोई हानि नहीं, उसको राजी रखना चाहिये। बस, यही सब सोचकर उसने उपर्युक्त रीतिसे मराठे सरदारसे वचन लेकर, अपने और उसके बीच एक मुकामका अन्तर रख दिया।

मार्गमें कोई विशेष घटना नहीं हुई; और रणदुल्लाखा अपने सब लोगोंके साथ बीजापुर पहुँच गया। वहाँ पहुँचनेपर खासाहबने अपने नवीन मित्रका, उसके जनाने सहित, एक अलग स्थानमें रहनेका उत्तम प्रबन्ध कर दिया। हॉ, सरदार साहबसे गप-शप करनेके लिए बहुधा—जब-जब अवकाश मिलता, तभी—अथवा यों कहिये कि, जब-जब अवकाश निकाल सकते, तब-तब—खासाहबकी सवारी उनके पास जाया करती थी।

इधर खासाहबने किलेदार साहबके रहनेका भी बहुत उत्तम प्रबन्ध कर दिया। और यथा समयपर हुजूरके कानोंमें यह समाचार भी पहुँचा दिया कि, हम उनको ले आये—अथवा यों कहिये कि, कैद कर ले आये—बादशाहके ध्यानमें यह बात जमी थी कि, देखो, हमारे हजार बार कहनेपर भी किलेदारने अपने लड़केको हमारे पास दरबारमें नहीं भेजा; और ज्यों ही यह खबर लगी कि, हम उसे बुलानेके लिये आदमी भेजते हैं, त्यों ही न जाने कहाँ भगा दिया। बस, इसी कारण वह किलेदारपर बहुत नाराज था, और उस नाराजीका ही यह परिणाम था कि, आज उनके हाथसे किलेका सारा अधिकार छीन लिया गया, और उनको कैद होकर बीजापुर आना पड़ा। उनके हाथसे किलेका अधिकार छीनकर उनको कैद कर ले आनेका कार्य पहले सैयदुल्लाखाको देनेका निश्चय किया गया था, और सैयदुल्लाखा भी इस कार्यके लिए बहुत उत्सुक था, क्योंकि किलेदार रंगराव अप्पाके विषयमें, इसी खास उद्देश्यसे, उसीने बादशाह का मन कलुषित कर रखा था। परन्तु जब उस कामपर उसे भेजनेका मौका आया, तब बादशाहने सोचा कि, रणदुल्लाखाको स्वयं ही जाना चाहिए, और उसीको उसने सुलतानगढ़ भेज दिया, तथा सैयदुल्लाखा-को दूसरी तरफ अन्य किसी कामपर भेज दिया। हम पहले ही कह चुके

हैं कि, रणदुल्लाखां एक बहुत अच्छे स्वभावका मनुष्य था; बल्कि यों कहना चाहिये कि, उस समयके मुसल्मान सरदारोंमें वह एक अपवाद-स्वरूप था। उसे दरबारके अनेक सरदारोंकी कार्यवाही बिल्कुल ही पसन्द न आती थी। किन्तु वह अच्छी तरह जानता था कि, हजूरके सामने यदि दूसरोंके विषयमें बार-बार कुछ कहेंगे, तो उसका अच्छा परिणाम होना तो एक ओर—कुछ बुरा ही होगा, और इसीलिए वह दूसरोंके झगड़ेमें कभी नहीं पड़ता था। वह जाता था कि, जहाँ हम दूसरोंके झगड़ेमें पड़े; और बादशाहको यह पसन्द न आया, तो वह हमींपर नाराज हो जायगा; और यह एक प्रकारसे, बिना कारण, अपने पैरमें आप कुल्हाड़ी मारनेके समान होगा। इसके सिवाय, आज हमारा दरबारमें जो कुछ प्रभाव है; और जिसके कारण हम, कमसे कम, दूसरों का कुछ भला कर सकते हैं, सो जायगा। बस, यही सब बातें मनमें लाकर वह कभी दूसरोंके विवादमें नहीं पड़ता था। स्वयं बादशाह भी यह बात भलीभाँति जानता था कि, चाहे हम कहें भी, फिर भी रण-दुल्लाखा किसी निन्दनीय कार्यमें हाथ नहीं डालेगा; और इसी कारण बादशाह ऐसे ही कामोंमें उसकी योजना करता था कि, जो बिल्कुल सरलताके साथ करने योग्य होते थे। बादशाहके मनमें था कि, किलेदार ज्यों ही लाया जाय, उसको जेलमें डालकर नाना भातिके कष्ट दिये जायँ, अथवा यों कहिये कि, सैयदुल्लाखाने उसके मनको ऐसा सुझा दिया था। जो हो। मुरार जगदेव और रणदुल्लाखाका प्रभाव उस समय बादशाहपर विशेष था, परन्तु सैयदुल्लाखाने भी अब धीरे-धीरे अपना प्रभाव उसपर जमाना प्रारम्भ किया था। सैयदुल्लाखाका नाम इतिहासमें प्रसिद्ध नहीं है; पर यह ध्यानमें रखना चाहिये कि, उसका अनिष्ट प्रभाव बादशाहपर दिन-दिन बढ़ता जाता था, और अनेक बातों में उस प्रभावका बुरा परिणाम भी हुआ। सैयदुल्ला पहले एक सरदार-खानदानमें अर्दलीका काम करता था; परन्तु कुछ समय बाद वह बाद-शाहकी अर्दलीमें आगया। फिर अर्दलीसे शीघ्र ही सरदार बनकर "सरदार सैयदुल्लाखां" होगया। वह बादशाहको सदैव यही सुझानेका

यत्न करता कि, मुरार जगदेव, राजा शहाजी भोसले, और रणदुल्लाखा इत्यादि लोग बीजापुर राज्यका अनिष्ट चिन्तन करते रहते हैं। वे नहीं चाहते कि, मराठे बागी, जो नवीन हो उभड रहे हैं, उनका दमन हो। और यही कारण है कि, राजा शहाजीका लड़का उन्मत्तताका बर्ताव कर रहा है, और सुल्तानगढ़के किलेदारका लड़का जो जो अनर्गल व्यवहार करता है, इसका भी कारण यही है। सैयदुल्लाखाने इस बातका भी प्रबन्ध कर रखा था कि, सुल्तानगढ़पर यदि छोटीसे छोटी भी कोई घटनाएँ हों, तो उनका समाचार उसे बराबर मिलता रहे, और इस कामके लिये उसने उस किलेपर सर्फोंजी [जिसका कि स्मरण पाठकोंको होगा] की नियुक्ति कर रखी थी। सर्फोजी सैयदुल्लाखाका ही आबुर्दा था, और यही वहाका सब हालचाल समय समयपर सैयदुल्लाखाको दिया करता था। सैयदुल्लाखाकी बड़ी इच्छा थी कि, सुल्तानगढपर जाकर रंगराव-अप्पाको, तथा और भी एक व्यक्तिको, पकड लानेका उसे मौका मिले। परन्तु यह मौका उसे नहीं मिला, सो पाठकोंको मालूम ही है। नाना-साहबकी और उनके पिता रंगराव अप्पासाहब, इन दोनो पिता-पुत्रके बीचमें जो बात होती, वह जैसीकी तैसी सर्फोजीके द्वारा सैयदुल्लाखाको मालूम होजाया करती थी। सर्फोंजीकी भारी महत्वाकाक्षा यह थी कि, रंगरावअप्पाके हाथसे किलेदारी जाकर, सैयदुल्लाखाको मिहरबानीसे, उसके पास आवे। सैयदुल्लाखाका एक और आबुर्दा था, और वह वही, जो धारगाँवके देशमुख साहबके महलोंमे मारा गया। वही समय समयपर सुलतानगढ आता, और सफोजीको एकान्तमे लेजाकर सब खबर पूछता था। यही नहीं, बल्कि यदि उसको सुलतानगढपर अपनी इच्छाके अनुसार और भी कोई घटनाएँ घटित करानी होतीं, तो उनके लिए भी वह सफोजीको तैयार करता रहता था। यहाँ यह भी बतला देना आवश्यक है कि, सैयदुल्लाखाकी दृष्टि नानासाहबकी स्त्रीपर भी बहुत दिनसे थी। उसने एक बार उसे उसके नैहरमे देखा था, और एक बार वह खास तौरपर केवल इसी कामके लिये छिपकर सुलतानगढ-पर भी गया था, तब भी उसने उसे देखा था। सुलतानगढके किलेदार

और विशेषतः नानासाहबके विषयमें, तभीसे उसके मनमें वैरभाव उपस्थित हुआ। उस वैरभावका कारण क्या था, सो विस्तारके साथ बतलानेका कोई प्रयोजन नहीं है। यहाँ सिर्फ इतनाही बतला देना पर्याप्त होगा, कि वह कारण उसके हृदयपर ही नहीं, किन्तु उसके शरीरपर भी अपना काम कर चुका था। ऊपर हमने बतलाया है कि, सैयदुल्लाखाकी यह बड़ी इच्छा थी कि, वह स्वयं सुलतानगढ़पर जावे, और वहाँके किलेदारको कैदकर ले आवे। इसके साथ ही अपने दूसरे इष्ट कार्यके सिद्ध हो जानेका भी उसे पूरा भरोसा था। बादशाहकी ओरसे किलेदारके पास जो अग्रिम खरीता गया था, उसमें भी यही सूचित किया गया था कि, सैयदुल्लाखा आपके पास आवेगा; और कई कार्योंके विषयमें आपसे जवाब तलब करेगा, सो आप यथोचित रूपसे उसे उत्तर दें, और जो आज्ञा वह देवे, उसको हुजूरकी ही आज्ञा समझकर ठीक-ठीक उसका पालन करें। यही आशय उस खरीतेमें प्रकट किया गया था। सो, रंगराव अप्पा भली-भाति जानते थे कि, इसका परिणाम क्या होगा, इसलिए उन्होंने भी, इधर-उधर चिट्ठियाँ इत्यादि भेजकर, जो कुछ प्रबन्ध उनको अपनी ओरसे करना था, किया था। सैयदुल्लाखा भी, यह समझकर कि, अब हमारे मनोरथ पूर्ण होनेमें देर नहीं, बड़ा आनन्दित हुआ था, उसने सुल्तानगढ़के किलेदारके साथ ही साथ सूर्याजीके पिता, धारगावके देशमुखको भी कैदकर लेआनेका षड्यन्त्र रचा था। इसमें उसने प्रकट तो यह किया था कि, नानासाहबकी भाति सूर्याजी भी उन्मत्त होगया है, और ये दोनों मिलकर बहुत जल्द राज्यके विरुद्ध बगावत करनेवाले हैं, किन्तु वास्तवमें सच्चा उद्देश्य, देशमुखको कैद करानेमें उसका यही था कि, उसके आबुर्देकी इच्छा पूर्ण हो। इधर जब सुलतानगढ़पर जानेका मौका आया, तब बादशाहका कोई अत्यन्त निजी काम निकल आया जिसको सैयदुल्लाखाके अतिरिक्त और कोई कर ही नहीं सकता था, इसलिए उसको बादशाहने रख लिया, और उसकी जगह रणदुल्लाखाँको वहाँ भेज दिया। इससे बेचारे सैयदुल्लाखाँका बहुत ही मनोभंग हुआ। हाँ, उसके आबुर्देका वैसा नहीं हुआ; क्योंकि देशमुखके महलोंमें अपना

इष्ट कार्य्य सिद्ध करनेको जानेके लिये उसे अवसर मिल गया, परन्तु वहाँ उसकी क्या दशा हुई, सो पाठक जानते ही हैं।

बीजापुरका खरीता जब रंगराव अप्पाके हाथमें पहुँचा, तब उन्होंने इस बातकी थोड़ी-बहुत सावधानी अवश्य रखी कि, इसका वृत्तान्त किसी-को मालूम न होने पावे, परन्तु फिर भी उनकी पतोहूको उसका हाल मालूम हो गया, और वह जल्द मौका पाकर रात ही रात, एकाएक गायब हो गई, और यह बात पाठकोंके ध्यानमें अवश्य होगी। उस स्त्रीको कुछ पिछले प्रसगोंसे (जिनका कि वृत्तान्त आगे आवेगा) यह अच्छी तरह मालूम हो गया था कि, सैयदुल्लाखाँ किस तरहका मनुष्य है, और वह मुख्यतः किस उद्देश्यसे सुलतानगढपर इस समय आ रहा है। और इसीलिए उसने आत्मरक्षाके हेतुसे, जो युक्ति उसकी दृष्टिसे उसे उत्तम दिखाई दी, उसका अवलम्बन किया। वह युक्ति कौनसी ? यही कि, सैयदुल्लाखाके आनेके एक दिन पहले ही वह अपनी दासीको साथ लेकर गुप्त रूपसे अपने नैहर चली जाय।

अस्तु। सैयदुल्लाखाने जब यह देखा कि, उसका उद्देश्य सिद्ध नहीं हुआ, बल्कि रणदुल्लाखाके समान मनुष्य कि जिसपर उसका कुछ भी वस नहीं चल सकता था, उसके इष्ट कार्यपर भेज दिया गया, तब उसका हृदय बहुत ही सन्तप्त हुआ। फिर उसमें भी जब उसने देखा कि, एक ऐसा व्यक्ति, जो कि उसकी नाकका बाल था, देशमुखके महलोंमें मार डाला गया, तब तो उसके सन्तापकी सीमा ही न रही।

हमारे इस कथानककी अधिकाश घटनाएँ अब बीजापुरके मुकाम-पर ही घटित होगी। पिछले परिच्छेदोंमें हमने सैयदुल्लाखाँ और उसकी कारस्तानियाँ, तथा रणदुल्लाखाँ और उसका वृत्तान्त पाठकोंके सामने उपस्थित किया है। अस्तु, पिछले परिच्छेदमें यह भी बतला चुके हैं कि, रणदुल्लाखाने सुल्तानगढ़से वापस आकर बादशाहको वहाँका सब वृत्तान्त बतलाया। उन्हीं दिनोंके लगभग सर्जेखाँ भी शिवदेवरावके साथ बीजापुर आ पहुँचा। सर्जेखासे पाठक भलीभाति परिचित हैं।

इस सरदारको बादशाहने शिवदेवरावके साथ, उसपर गुप्त नजर रखनेके लिए, भेजा था। बात यह थी कि, सैयदुल्लाखाने ही बादशाहको यह सुझाया था कि, सासवड़ और पुरन्दरकी ओर राजा शहाजीके लड़के अन्य कुछ बागियोंने बड़ा उपद्रव मचा रखा है, सो उसीकी जाँचके लिये—कि यह बात क्या है, मुरार जगदेवके द्वारा शिवदेवराव भेजा गया था। शिवदेवराव और सर्जेखाँकी कैसी क्या पटी, उन दोनोंके उक्त धावेंमें क्या-क्या घटनाएँ हुईं, सो सब पाठकोंको विस्तार-पूर्वक मालूम हैं। सच तो यह था कि, मुरार जगदेवरावका बीजापुरके दरबारमें जो प्रभाव था, सैयदुल्लाखाँ उससे बहुत जला करता था; और इस कारण सदा उसका यही प्रयत्न रहता कि, मुरार जगदेवका बादशाहपर जो प्रभाव है, वह जहाँतक कम किया जा सके, वहाँतक कम किया जाय। परन्तु मुरार जगदेव चूँकि बीजापुर राज्यका बहुत पुराना और ईमानदार नौकर था, इसलिए उसकी सलाहके विरुद्ध कोई भी काम करना स्वयं बादशाहके लिये भी कठिन था। उत्कृष्ट कार्योंमें काम देनेवाले दो थे—एक मुरार जगदेव और दूसरा रणदुल्लाखाँ; और अवाच्य कामोंमें, जिसका सदैव उपयोग होता था, तथा इसी एक बातके कारण जिसका प्रभाव बादशाहपर पड़ता था, वह था सैयदुल्लाखाँ। बस, इसी त्रिकूटके बीचमें फँसकर बादशाहकी एक बड़ी विचित्रसी दशा हो रही थी। रणदुल्लाखाँ और मुरार जगदेव, इन दोनोंको एक ही कहा जाय तो भी कोई हानि नहीं; क्योंकि उनके पिताका परस्पर अत्यन्त स्नेह था; और इस कारण मुरारपन्त जो कुछ करते, रणदुल्लाखाँ उसे कभी न टालता; और रणदुल्लाखाँ जो बात कहता, मुरारपन्त भी उसे पूर्ण करनेको तत्पर रहते। मतलब यह कि, दोनोंकी गट्टी खूब जम गई थी। बादशाहका भी झुकाव इन्हीं दोनोंकी ओर था; परन्तु कुमार्गमें चूँकि सैयदुल्लाखाँका प्रभाव विशेष था, इस कारण उसकी भी बात बादशाहको माननी पड़ती थी। साराश यह कि, मुरारपन्त और रणदुल्लाखाँ एक ओर थे, और सैयदुल्लाखाँ दूसरी ओर। इन दोनोंका सदैव यह प्रयत्न रहता कि, राज्यका प्रबन्ध उत्तम

रीतिसे चलता रहे, और जो मराठे सरदार राज्यकी सेवामें हैं, उनका मन जहाँतक सन्तुष्ट रहे, वहाँतक अच्छा। दोनोंका उद्देश्य यही था कि, मराठे सरदारोंका मन बिना कारण बिगड़ने न पावे, और उनकी राज्यभक्ति जहाँतक कायम रखी जा सके, इसका प्रयत्न किया जावे। परन्तु सैयदुल्लाखाँका यह उद्देश्य नहीं था। उसका उद्देश्य यह था कि, जहाँतक हो सके, अपना प्रभाव बढाया जाय, और प्रधान-मन्त्रीका अधिकार जितनी शीघ्रतासे हो सके, अपने हाथमें आ जाय, तथा मराठोंका प्रभाव बिल्कुल नष्ट करके सब जगह अपना ही प्रभाव रहे; और अपने ही आबुर्दे जहाँ तहाँ रखे जावें। मुरारपन्त और रणदुल्ला-की इच्छा यह थी कि, जहाँतक मिल सकें, अच्छे अच्छे आदमी राज्यके अधिकारपर रखे जावें। क्योंकि मुरारपन्त यह अच्छी तरह जानते थे कि, आजकल मुसल्मानोंके अत्याचारोंके कारण मराठी प्रजामें असन्तोष अत्यधिक फैल रहा है, शिवाजीके समान नवयुवक मराठे बगावत करने-को खड़े हुए हैं, सो केवल यों ही नहीं—और इसीलिये उन्होंने सोचा कि, शिवाजीके समान प्रबल व्यक्तिके दमन करनेका सबसे पहला उपाय यही है कि, मराठे सरदारोंको—विशेषकर उन सरदारोंके युवक लड़कों-को सन्तुष्ट रखा जाय। इस कारण सदैव वे ऐसी बातोंके प्रयत्नमें रहते कि, ऐसे खान्दानी नवयुवकोंको दरबारमे बुलाकर उनकी इज्जत प्रतिष्ठा की जाय, और अच्छे-अच्छे ओहदे देकर उनको बहादुरी और जिम्मे-वारीके काम बतलाये जायँ। मुरारपन्त सदैव बादशाहसे कहते रहते कि, "इन सरदारो अथवा किलेदारोंके हाथसे यदि कभी कोई प्रमाद हो जाय, तो उनको क्षमा करना चाहिये। यह मौका उनके मनको दुखाने-का नहीं है, नित्य हम सुनते रहते हैं कि, शिवाजीने विद्रोह मचा रखा है, हमारे प्रान्तमें वह बडा उपद्रव कर रहा है, पर इसमें बहुत कुछ अतिशयोक्ति है। राजा शहाजीके हाथसे उसको एक धमकीका पत्र लिखा दिया जाय, बस काम हो जायगा। उसके लिए फौज-फाँटा भेजकर अनावश्यक महत्व देनेमे कोई तात्पर्य नहीं।" मुरारपन्तकी यह सलाह अत्यन्त चातुर्यपूर्ण थी, सो सभी जान सकते हैं। परन्तु सैयदुल्ला-

खाँको, जो कि अपने सामने किसीको समझता ही नहीं था, उसकी उत्कृष्टता कैसे मालूम हो सकती ? वह मालूम हुई हो, चाहे न मालूम हुई हो—परन्तु उसने उसका निराला ही अर्थ निकालकर बादशाहको यह सुझाया कि, मुरारपन्तका इसमें यह हेतु है कि, मुसल्मानोंकी बादशाहत डूबकर मराठोंके हाथमें चली जाय। इसलिये राजा शहाजीको, उसके लड़केके उपद्रवोंपर, यदि इस समय सजा न दी जायगी, और उस लड़केको पकड़कर यदि नष्ट न कर दिया जायगा, तो आगे बहुत बड़ा अनर्थ उपस्थित होगा। इसके सिवाय, सुल्तानगढ़के किलेदार और उसके लड़के, तथा धारगाँवके देशमुख तथा उसके लड़केको भी कैद करके जेलमें डाल देना चाहिये। अब बादशाह, किसकी न सुने, सो कुछ उसकी समझमें न आता; क्योंकि बादशाहके पास अपनी निजकी अकल अपनी जरूरतभरके लिए ही थी! सैयदुल्लाखाँ जब पास होता, तब वह अपना कथन उसके दिमागमें भर देता; और जब उसको सोचकर बादशाह वैसा करनेके लिए मुरारपन्तके सामने बात निकालता, तब मुरारपन्त बड़ी चतुराई और अदबके साथ उसका खण्डन कर देते। यही हाल बहुत दिनोंतक होता रहा। सैयदुल्लाखाँ बड़ा आग्रही और दृढ़प्रयत्नी मनुष्य था। उसने सोचा कि, ऐसे काम नहीं चलेगा, बादशाहके यहाँ हमारी चल सके—इसके लिये अब कोई अच्छी-सी युक्ति करनी चाहिये। बस, यही सोचकर उसने, बादशाहसे न बतलाते हुए ही, सुल्तानगढ़की, धारगाँवके देशमुखके यहाँकी; और सासवड़की ओरकी, सब छोटी-मोटीतक खबरें मँगानेका प्रबन्ध किया। सुल्तानगढ़के किलेपर सर्फोजीको फोड़कर उसके द्वारा वह वहाँकी सब खबरें जान लेता; और फिर उनको, और भी नमकमिर्च मिलाकर, प्रतिदिन बादशाहको बतलाता रहता। इसी प्रकार धारगाँवके देशमुखके यहाके भी सब समाचार वह बादशाहको देता रहता। सासवड़की ओरका ठीक-ठीक समाचार उसे कभी प्राप्त नहीं हुआ। हाँ, जो कुछ प्राप्त भी होता था, वह संशयात्मक होता था; इसलिये उसमें और भी नमक-मिर्च मिलाकर उसे वह निश्चयात्मक स्वरूप देता; और तब फिर उसको बादशाहके सामने

कहता था। इस प्रकार वह बहुत दिनतक करता रहा; और इधर मुरारपन्त तथा रणदुल्लाखाँको उसकी इस भीतरी कार्रवाईका ठीक ठीक पता नहीं था, इस कारण उनकी ओरसे उसका कोई प्रतिकार भी नहीं हो सका। परिणाम यह हुआ कि, बादशाहके मनमें यह बात बिलकुल बैठ गई कि, उक्त तीनों स्थानोंकी ओर किसी आदमीको भेजकर उसका कुछ बन्दोबस्त करना चाहिये। सैयदुल्लाखाँकी सलाहके अनुसार उसने इस कामके लिये तीन आदमियोंकी तजवीज भी कर ली। वे ये थे— सैयदुल्लाखाँ खुद, सर्जेखाँ और प्यारेखाँ। सर्जेखाँको शिवाजीके प्रान्तमें भेजना निश्चित हुआ। सुलतानगढ़पर सैयदुल्लाखाँ खुद जानेवाला था, और प्यारेखाँको देशमुखके महलोंमें भेजना निश्चित हुआ। राजा शहाजीपर बादशाहकी अच्छी कृपा थी? इधर मुरारपन्त और शहाजीका तो पूरा-पूरा स्नेह था ही। इसलिये मुरारपन्तको जब उपर्युक्त बातोंका पता चला, तब उन्होंने बादशाहको कहा कि, आप यदि ऐसा करेंगे, तो व्यर्थके लिये राजा शहाजीका चित्त दुःखित होगा, इसलिये आप ऐसा न करें, तो अच्छा। राजासाहब आपके बहुत पुराने और ईमानदार कार्यकर्त्ता हैं। उनको व्यर्थके लिये कष्ट देना राजनीतिज्ञताकी दृष्टिसे उचित न होगा। उस तरफका समाचार लानेके लिये यदि किसी मनुष्यको भेजनेकी आवश्यकता ही हो तो मैं अपना एक विश्वासपात्र आदमी भेजता हूँ। लेकिन सर्जेखाँके समान आदमीको उधर भेजना ठीक न होगा। इस प्रकार मुरारपन्तने जब बादशाहको बहुत कुछ समझाया, तब बादशाहको उनके कथनकी सत्यता तो प्रतीत हो गई; पर सैयदुल्लाखाका मनोभंग भी उससे नहीं हो सकता था। इसलिये अन्तमें यही निश्चय हुआ कि, मुरारपन्तका आदमी मुखिया बनकर जावे, और सर्जेखाँ उसके साथ रहे। सैयदुल्लाखाँको अवश्य ही यह बात पसन्द न आई, परन्तु फिर भी उसने यह सोचकर इस प्रस्तावका अनुमोदन कर दिया कि, बिलकुल ही न होनेसे यही अच्छा कि हमारा आदमी साथ तो रहेगा, तब अवश्य ही वह मुरारपन्तके आदमीकी एक भी न चलने देगा। सुल्तानगढ़पर वह स्वयं जानेवाला था, परन्तु यह

भी न हो सका, और वहाँ भी मुरारपन्तका ही साथी रणदुल्लाखाँ भेजा गया। परन्तु इस विषयमें, पहले उसे कोई विशेष बुरा नहीं लगा; क्योंकि उसने सोचा कि, हम स्वयं यदि वहाँ गये होते, तो तुरन्त ही हमारा मनोरथ पूर्ण हुआ होता। परन्तु अब, बहुत होगा, तो थोड़ी देर लग जायगी; किन्तु बादशाहके जिस निजी आवश्यक कार्यके कारण हमारा जाना वहाँ नहीं होता, उसको यदि हम कर लावेंगे, तो बादशाह-की मर्जी हमपर और भी अधिक हो जायगी; और तब फिर अपना कार्य सिद्ध करनेमें और भी सुभीता हो जायगा। बस, यही सब सोचकर उसने उस समय धैर्य धारण किया। जो मुख्य कार्य उसे सिद्ध करना था, उसके विषयमें उसका यह विचार था—विचार ही नहीं, बल्कि उसे विश्वास भी था कि; रणदुल्लाखां जब किलेदार और उसके कुटुम्ब-के सब लोगोंको कैद करके बीजापुर ले आवेगा, तब भी हमारा वह कार्य अवश्य सिद्ध हो सकेगा। परन्तु जब उसने देखा कि, रणदुल्लाखा सिर्फ किलेदारको ही कैद करके बीजापुर ले आया है; और उसकी पतोहूको उसके साथ नहीं लाया, तब जैसा कि हमने पिछले परिच्छेदमें बतलाया, उसको बहुत ही सन्ताप हुआ। उस समय उसको इतना दुःख हुआ कि, रणदुल्लाखाँ उसकी आँखोंमें काटेकी तरह चुभने लगा। उसने सोचा कि, रणदुल्लाखाको मार डालूँ या क्या करूँ? फिर उसने इस बातका पता लगाया कि, वह तरुणी इस समय है कहाँ? किलेपर ही है या रणदुल्लाखा स्वयं अपने लिये उसे उड़ा लाया? अन्तमें उसको पता लगा कि, रणदुल्लाखाँ जिस समय किलेपर गया, उस समय वह किलेपर थी ही नहीं—एक दिन पहले ही अपने पिताके घर चली गई थी! अस्तु। इसके बाद, जब उसको यह मालूम हुआ कि, रण-दुल्लाखाने किलेदारके साथ बहुत ही प्रेम और अदबका बर्ताव किया, तब उसने रणदुल्लाखासे ही बदला लेनेका निश्चय किया। साथ ही यह भी उसने प्रतिज्ञा की कि, किलेदारको अपने अधिकारमें लेकर उसको कैदखानेमें डाल दूँगा, और नाना प्रकारकी यातनाएँ देकर जानसे मार डालूँगा—यही नहीं, बल्कि उसके समधीका, अर्थात् नानासाहबके

श्वसुरका भी, घर-द्वार लूटकर कुटुम्ब सहित उसको पकड़ लाऊँगा ; और इस प्रकार अपनी इच्छाको तृप्त करूँगा।

उधर सर्जेखाने भी बीजापुर आते ही सैयदुल्लाखाको अपना सब वृत्तान्त बतलाया। शिवदेवरावकी और हमारी किस प्रकार नहीं पटी, शिवदेवराव हमको बाहर ही रखकर अकेला किस प्रकार हनुमानजीके उस सशयात्मक मन्दिरमें गया, वह हमको किस प्रकार धोखा देना चाहता था, परन्तु हम उसके धोखेमें नहीं आये, और बाबाजीको किस प्रकार कैद कर लिया, कैद करनेपर जब उसको पुरन्दरके किलेपर ले आये, तब शिवदेवराय और किलेदार दोनो किस प्रकार बागियोंसे मिल गये, हमसे न पूछते हुये उस बैरागीसे मिले, और उसको छुड़ानेके लिये हमसे किस-किस प्रकारसे प्रार्थना की, अन्तमें फिर किस प्रकार उद्दण्डताकर व्यवहार किया, बागियोंको किस प्रकार पहले ही समाचार देकर ऐन मौकेपर किस प्रकार उस बागी वैरागीको छुड़ा लेनेका प्रयत्न किया, घुड़सालमें खास तौरपर आग किस प्रकार लगा दी गयी, वैरागीको कडेलोट करनेतककी सब तैयारी जब कि हमने कर ली, तब किस प्रकार, आगेका सब हाल जानकर, उन दोनोंने हमको अकेला ही उस कोटकी तरफ छोड़ दिया, और फिर शत्रु लोग एकाएक छापा मारकर किस प्रकार उस वैरागीको छुड़ा ले गये, तथा हमारे जो सिपाही थे, उनको जानसे मार डाला—हाँ, हम केवल अपनी बहादुरीसे बच गये, इत्यादि बातें उसने उसी तरहसे नहीं बतलाई, जैसी कि हुई थीं, बल्कि जैसी उसके मनमें आई, वैसी और कुछ नमक-मिर्च मिलाकर, तथा अपनी कुछ बड़ाई मारते हुए, बतलाई। सैयदुल्लाखाको और क्या चाहिए? उसका मुख्य उद्देश्य तो यही था कि, मुरारपन्तका प्रभाव बादशाहके ऊपरसे जितना कम किया जासके, कम करना चाहिए, और इस उद्देश्यको सिद्ध करनेके लिए उसने यह मौका बहुत अच्छा देखा। उसने इस बातका तो निश्चय कर ही लिया कि, इस मौकेसे जितना लाभ उठाया जासके, उठाना चाहिये—इसके सिवाय, उसने एक अच्छा अवसर पाकर बादशाहके कानोंमें भी ये बातें डाल दी कि, देखिये,

मुरारपन्तके भेजे हुए आदमी, शिवदेवरावने, बागियोंसे मिलकर किस प्रकार नीचताका व्यवहार किया, और सर्जेखाके साथ भयंकर विश्वास-घातका वर्ताव किया, इत्यादि। उन्हीं दिनोंके लगभग एक और भी ऐसा कारण उपस्थित होगया था कि, जिससे वादशाहपर सैयदुल्लाखा-का प्रभाव पहलेसे कुछ अधिक वढ गया था। इन्हीं सब कारणोंसे उस समय बादशाहके मनपर उसकी वार्तोका अधिक प्रभाव पडा; और विषका पहला बीज बोया गया।

तैंतीसवां परिच्छेद।

कुछ अन्य लोग।

(१)

बीजापुरकी बहुत बड़ी इमारत—गोलगुम्बज—अभी पूरी-पूरी तैयार नहीं हुई थी, उसका काम जारी था, और उससे हजारों लोगोंका पेट भरता था। इसी प्रकार और भी कितने ही नवीन-नवीन बाजार बसानेके लिए तेजीमे प्रयत्न होरहा था। नगर उस समय वैभवके अत्यन्त उच्च शिखरपर पहुँच चुका था। बादशाह और उसके अमीर-उमरा अपने अपने अन्त.पुरोंमें केवल ऐश आराम करनेमें निमग्न थे, वादशाहक यह स्वप्नमें भी ज्ञान नहीं था कि, हमारे अमीर-उमरावोंसे हमारी हिन्दू-प्रजाको कितना कष्ट होरहा है, और यदि उससे जाकर इस विषयमें कोई कुछ कहता भी तो कोई परवा नहीं करता था। मतलब यह कि, क्या बादशाह, और क्या उसके सभी अमीर-उमरा इस प्रयत्नमें रहते कि, जो स्त्री नजर तले पड जावे, उसीको प्राप्त किया जाय। इधर सैयदुल्ला-खा नाना प्रकारकी कपटयुक्तिया करके रम्भावतीके समान अनेक सुन्दरी युवतियोंको अपने जालमें फँसा लाता, और उन्हें बादशाहको समर्पित करता, बादशाह भी अपने इसी भोग-विलासमें लिप्त रहता। बस, इसी सम्बन्धकी कारस्तानियाँ उस समय बीजापुरमें जारी रहती थीं। इनको छोड़कर राज्य-प्रबन्ध विषयक कार्यवाहिया मानों उस समय वहाँ बिलकुल

थी ही नहीं। सो, इस प्रकारके बीजापुर नगरमें प्रविष्ट होकर उसका सारा रंगढग देखनेमे अभी हम नहीं फँसना चाहते। किन्तु, इसके पहले, कुछ और भी ऐसे पात्र हैं कि, जिनका हाल हवाल देखनेके लिए हम अपने पाठकोको ले चलना चाहते हैं। बीजापुरकी बडी बड़ी दरगाहें, बड़ी-बड़ी मसजिदें, अमीर-उमरावोंके बडे-बड़े महल, इत्यादि इमारतें देखनेके लिए पहले हम अपने पाठकोंको नहीं ले चलेंगे, और न मुहम्मदशाह बाजार और इलाका-बाजारके समान बडे-बड़े चौकोंकी ही सैर करावेंगे। इसके सिवाय रण-दुल्लाखाँ और उसके नवीन मित्र (उस मराठे सरदार), रंगराव अप्पा, सैयदुल्लाखाँ, सर्जेखाँ और स्वय बादशाह इत्यादिकी भी कारस्तानियोंमें अभी हम पाठकोंको नहीं डालेंगे—किन्तु अभी तो उनको उस वटवृक्षके नीचेवाली झोपड़ीके लोगोंके पास ले चलेंगे, जो धारगाँवसे कुछ मीलकी दूरीपर थी। पाठकोंको स्मरण होगा कि, बरगदके नीचेकी उस झोपड़ीमें जो एक वृद्ध मनुष्य रहता था, उसके पास जानेके लिये सूर्याजीने श्यामासे कहा था। उन्होंने श्यामाको जो अन्तिम सन्देशा दिया था, उसका पूर्वार्द्ध यही था कि, तू किसी प्रकार मेरी स्त्री और बच्चेको घोटेपर बैठाकर उस झोपड़ीमें ले जा, और वहाँ जो बुड्ढा रहता है, उसका पहचानके तौरपर यह कटार और तावीज देना, तथा उसे यह सन्देशा बतलाना कि, "सूर्याजीने अपनी स्त्री और लड़केको तुम्हारे सिपुर्द किया है।" परन्तु सूर्याजीकी इच्छाके अनुसार श्यामा उनको वहाँ ले नहीं जा सका। इसके बाद वे दोनों आगके बीचमें पड गये। परन्तु श्यामाने उस झोपडीमे आकर उनका समाचार पहले ही दे दिया था, इस कारण उस बुड्ढेने एक कालाकलूटा आदमी वहाँ भेजा, और उसने जाकर उस आगमे उन दोनोके प्राण बचाये। अस्तु। ये सब बातें पाठकोंको मालूम ही हैं। यहाँपर सिर्फ इतना ही बतलाना आवश्यक है कि, उपर्युक्त घटनाओंके हो जानेके कोई पाँच-छै दिन बाद आज हम फिर उस झोपडीपर जा रहे हैं। जिस समय वहाँ पहुँचकर देख रहे हैं, वह बुड्ढा अकेला ही वहाँपर है, और मन ही मन

कोई अत्यन्त उद्वेगकारक विचार कर रहा है। यह वास्तवमें हमको जितना बुड्ढा दिखाई दे रहा है, उतना नहीं है; और यह बात उसके चेहरेकी कुछ रेखाओंसे सहज ही दिखाई पड रही है। ऐसा जान पड़ता है कि, अवस्थाका प्रभाव उसपर उतना नहीं पडा है, जितना चिन्ता और दुःखका; और इसी कारण उसकी शक्तिका इतना ह्रास हो गया है। अस्तु। इस समय भी उसका चित्त किसी भारी चिन्तामें ही निमग्न हो रहा था। ऐसा जान पड़ता था कि, वह किसीकी प्रतीक्षा कर रहा है। जरा कहीं कोई चीज खटकती कि, वह बाहर सिर निकालकर देखने लगता, और जब किसीको न देखता, तब निराश होकर पीछे हट जाता। इसके बाद फिर वह अपनी दीन झोपड़ीमें इधरसे उधर चक्कर मारने लगता। ऐसा करते करते वह आप ही आप कुछ गुनगुनाने लगा।

"ईश्वरकी गति कैसी विचित्र है। चार वर्ष पहले मेरी क्या हालत थी; और आज क्या हो गई? जिन दुष्टोंने मुझपर ऐसा प्रसग उपस्थित किया है, उनके कलेजेका खून चूस लेंगे, तभी हम दोनों संसारमें रहेंगे'—इस प्रकारकी प्रतिज्ञा की थी, सो क्या अब व्यर्थ जायगी? आजतक तो कोई बात हमसे नहीं हो सकी, जिससे उस प्रतिज्ञाके पूर्ण होनेके कोई लक्षण दिखाई देते; बल्कि चोरोंकी तरह आज कितने ही वर्षोंसे इसी झोपड़ीमें मुँह काला किये हुए बिता रहे हैं। इससे तो यही अच्छा होता कि, हम दोनों ही कुएँमें जाकर डूब मरते! आह! (दाँतोंसे होंठ चबाकर) कभी वह कलेजा चूसनेको मिलेगा? दुष्टोंने घर-द्वार, जागीर-माफी इत्यादि सबका नाश कर दिया, और हमको इस देशमें ला छोड़ा! यह लड़की ही कुछ सुखमें रही। इसीमें आनन्द मानकर अब हम केवल बदला लेनेकी ही चिन्तामें थे। इतनेमें लड़कीके सुखका भी नाश किया! अब यह काहेको जिन्दा रहेगी? मुझे तो कुछ भी आशा नहीं। पर, अबतक राणू क्यों नहीं आया? और यह छोकरा श्यामा भी न जाने किधर चला गया, उसका भी पता नहीं। यह एक बड़ी बला आई! कुटुम्ब बढ़ता जा रहा है; और इससे तो हमारे स्थानका पता चल जानेका भय है······"

इस प्रकार बुड्ढेके मनमें बराबर विचार आ रहे थे और उनके कारण उनका मस्तक इतना सन्तप्त हो उठा था कि, मस्तकके दोनों ओरकी नसें बिलकुल फूल गई थीं। इस प्रकार बहुत देरतक विचार करते रहनेके बाद सचमुच ही किसी मनुष्यके आनेकी आहट उसे सुनाई दी। तुरन्त ही दरवाजेको जरा खोलकर देखा, तो वही काला-कलूटा मनुष्य, जो कि देशमुखके महलोंसे सूर्याजीकी स्त्री और बच्चेको आगके मुखसे निकाल लाया था, सामने ही बिलकुल दरवाजेके पास आ गया। बुड्ढेने उसको देखते ही तुरन्त दरवाजा खोल दिया, और उसको भीतर लेकर "कहो, कुछ आशा है ?" कहकर पूछा। उसका उत्तर जितनी जल्दी मिलना चाहिये था, उतनी जल्दी नहीं मिला—यही नहीं, बल्कि उस बुड्ढेको, जो कुछ उत्तर पानेके लिये बड़ा आतुर हो रहा था, फिर प्रश्न करना पड़ा "क्यों ? बोलता क्यों नहीं ? क्या कुछ आशा नहीं ?" यह प्रश्न होते ही, मानो यह सोचकर कि, अब कुछ उत्तर देना ही चाहिये, वह आदमी कहता है, "नहीं, बिलकुल निराश होनेकी आवश्यकता नहीं, परन्तु • •••"

इस "परन्तु" में जितना अर्थ था—कमसे कम जितना उस बुड्ढे-ने समझा—उतना अर्थ उसके पिछले वाक्यमें नहीं था, सो स्पष्ट ही था। उसका उक्त वाक्य सुनते ही बुड्ढा एकदम कहता है, मैंने तो पहले ही समझा था। जिस दिन वह भयंकर प्रसंग आया, जिस दिन हमारे महलोंमें घुसकर हमारे देखते-देखते (दाँतोंसे होंठ चबाकर) आह ! हमारे •• ••"

शोक और सन्तापके विकारोंने मानो उस बुड्ढेकी जिह्वामें बिलकुल शक्ति ही नहीं रखी, और उसके मुँहसे कोई शब्द नहीं निकल सका। आँखें लाल-सुर्ख हो गईं, और उनसे पानी भी बहने लगा। यह देख-कर वह काला-कलूटा आदमी कुछ पछताया कि, यदि हमने कुछ भी न कहा होता, तो ही अच्छा था। परन्तु फिर इसके बाद वह उस बुड्ढेसे कहता है, 'सचमुच ही मैं कहता हूँ इतना निराश होनेका कोई कारण नहीं। और यदि कोई कारण भी हो, तो दादा, आप ही

जब ऐसा करने लगेंगे, तब मैं अकेला क्या कर लूँगा ? आप जानते ही हैं कि, हम लोगोंकी दशा कितनी विचित्र हो रही है। हमको अपनी प्रतिज्ञा किसी न किसी प्रकार पूरी करनी है। इसलिये आप यह चिन्ता, यह खेद, बिलकुल छोड़ दें; और जैसा कि आप कहा करते हैं, परमात्मापर विश्वास रखकर आगेके कार्यको देखें। मेरा तो ऐसा खयाल है कि, इस समय चाहे कोई विशेष आशा दिखाई न देती हो, फिर भी वे दोनों अन्तमें बच जरूर जायंगे; क्योंकि यदि उनको बचना न होता, तो मेरे हाथों उस भयंकर आगसे ही उनका छुटकारा कैसे होता ? आप सोचिये। हम लोग किस दशामें हैं, उसपर जरा गौर कीजिये। हमको जो कुछ करना है, सब गुप्त रूपसे करना है। और उसमें भी यदि आप धैर्य छोड़ देंगे, तो कैसे काम चलेगा ? चलिये, मैं आपको वहीं ले चलनेके लिये इस समय आया हूँ। आइये, वहाँ चलें; और रात-दिन प्रयत्न करके, जिस तरहसे हो सके, उनके प्राण बचावें और आप शोक न करें।"

बुड्ढेका ध्यान उस मनुष्यके कथनकी ओर था, अथवा नहीं, कुछ कहा नहीं जा सकता। वह बिलकुल शून्य और भयंकर दृष्टिसे एक ओर देख रहा था। उसकी चेष्टासे स्पष्ट मालूम हो रहा था कि, उसके मनमें कोई अत्यन्त ही क्रूर विचार आ रहे हैं। उसका सारा चित्त उनकी ही ओर लग रहा था। इसलिये, पास ही खड़े हुए उस मनुष्यने उपर्युक्त जितने शब्द कहे, उनमेंसे एक भी मानो उसके हृदयमें नहीं पैठा। क्योंकि वह उन्हीं विचारोंके आवेगमें एकदम उस मनुष्यसे कहता है, "हम दोनों और वे दोनों तथा वह छोटा बच्चा—ये सब एक ही झोपड़ीमें बन्द होकर यदि उसमें आग लगा लेवें, तो क्या बुरा ? बतला, अब हम अपनी प्रतिज्ञा किस प्रकार पूर्ण कर सकते हैं ? यह कुछ नहीं हो सकता। मेरी इन नष्ट आँखोंके देखते-देखते अभी न जाने कौन कौन विपदाएँ आवें ! जा, अब तू ही वहाँ जा। मैं अब चाहे जहाँ जाकर, चाहे जो कर लूँगा।" इतना कहकर सचमुच ही वह पागलकी भाँति झोपड़ीके बाहर निकल पड़ा। उसकी वह विचित्र

इस प्रकार बुड्ढेके मनमें बराबर विचार आ रहे थे और उनके कारण उनका मस्तक इतना सन्तप्त हो उठा था कि, मस्तकके दोनों ओरकी नसें बिलकुल फूल गई थीं। इस प्रकार बहुत देरतक विचार करते रहनेके बाद सचमुच ही किसी मनुष्यके आनेकी आहट उसे सुनाई दी। तुरन्त ही दरवाजेको जरा खोलकर देखा, तो वही काला-कलूटा मनुष्य, जो कि देशमुखके महलोंसे सूर्याजीकी स्त्री और बच्चेको आगके मुखसे निकाल लाया था, सामने ही बिलकुल दरवाजेके पास आ गया। बुड्ढेने उसको देखते ही तुरन्त दरवाजा खोल दिया, और उसको भीतर लेकर "कहो, कुछ आशा है?" कहकर पूछा। उसका उत्तर जितनी जल्दी मिलना चाहिये था, उतनी जल्दी नहीं मिला—यही नहीं, बल्कि उस बुड्ढेको, जो कुछ उत्तर पानेके लिये बड़ा आतुर हो रहा था, फिर प्रश्न करना पड़ा "क्यों? बोलता क्यों नहीं? क्या कुछ आशा नहीं?" यह प्रश्न होते ही, मानो यह सोचकर कि, अब कुछ उत्तर देना ही चाहिये, वह आदमी कहता है, "नहीं, बिलकुल निराश होनेकी आवश्यकता नहीं, परन्तु ···· "

इस "परन्तु" में जितना अर्थ था—कमसे कम जितना उस बुड्ढेने समझा—उतना अर्थ उसके पिछले वाक्यमें नहीं था, सो स्पष्ट ही था। उसका उक्त वाक्य सुनते ही बुड्ढा एकदम कहता है, मैंने तो पहले ही समझा था। जिस दिन वह भयंकर प्रसंग आया, जिस दिन हमारे महलोंमें घुसकर हमारे देखते-देखते (दाँतोंसे होंठ चबाकर) आह! हमारे ···"

शोक और सन्तापके विकारोंने मानो उस बुड्ढेकी जिह्वामें बिलकुल शक्ति ही नहीं रखी, और उसके मुँहसे कोई शब्द नहीं निकल सका। आँखें लाल सुर्ख हो गईं, और उनसे पानी भी बहने लगा। यह देखकर वह काला-कलूटा आदमी कुछ पछताया कि, यदि हमने कुछ भी न कहा होता, तो ही अच्छा था। परन्तु फिर इसके बाद वह उस बुड्ढेसे कहता है, "सचमुच ही मैं कहता हूँ इतना निराश होनेका कोई कारण नहीं। और यदि कोई कारण भी हो, तो दादा, आप ही

जब ऐसा करने लगेंगे, तब मैं अकेला क्या कर लूँगा ? आप जानते ही हैं कि, हम लोगोंकी दशा कितनी विचित्र हो रही है। हमको अपनी प्रतिज्ञा किसी न किसी प्रकार पूरी करनी है। इसलिये आप यह चिन्ता, यह खेद, बिलकुल छोड़ दें, और जैसा कि आप कहा करते हैं, परमात्मापर विश्वास रखकर आगेके कार्यको देखें। मेरा तो ऐसा खयाल है कि, इस समय चाहे कोई विशेष आशा दिखाई न देती हो, फिर भी वे दोनों अन्तमें बच जरूर जायंगे; क्योंकि यदि उनको बचना न होता, तो मेरे हाथों उस भयंकर आगसे ही उनका छुटकारा कैसे होता ? आप सोचिये। हम लोग किस दशामें हैं, उसपर जरा गौर कीजिये। हमको जो कुछ करना है, सब गुप्त रूपसे करना है। और उसमें भी यदि आप धैर्य छोड़ देंगे, तो कैसे काम चलेगा ? चलिये, मैं आपको वहीं ले चलनेके लिये इस समय आया हूँ। आइये, वहाँ चलें, और रात-दिन प्रयत्न करके, जिस तरहसे हो सके, उनके प्राण बचावें और आप शोक न करें।"

बुड्ढेका ध्यान उस मनुष्यके कथनकी ओर था, अथवा नहीं, कुछ कहा नहीं जा सकता। वह बिल्कुल शून्य और भयंकर दृष्टिसे एक ओर देख रहा था। उसकी चेष्टासे स्पष्ट मालूम हो रहा था कि, उसके मनमें कोई अत्यन्त ही क्रूर विचार आ रहे हैं। उसका सारा चित्त उनकी ही ओर लग रहा था। इसलिये, पास ही खड़े हुए उस मनुष्यने उपर्युक्त जितने शब्द कहे, उनमेंसे एक भी मानो उसके हृदयमें नहीं पैठा। क्योंकि वह उन्हीं विचारोंके आवेगमें एकदम उस मनुष्यसे कहता है, "हम दोनों और वे दोनों तथा वह छोटा बच्चा—ये सब एक ही झोपड़ीमें बन्द होकर यदि उसमें आग लगा लेवें, तो क्या बुरा ? बतला, अब हम अपनी प्रतिज्ञा किस प्रकार पूर्ण कर सकते हैं ? यह कुछ नहीं हो सकता। मेरी इन नष्ट आँखोंके देखते-देखते अभी न जाने कौन कौन विपदाएँ आवें! जा, अब तू ही वहाँ जा। मैं अब चाहे जहाँ जाकर, चाहे जो कर लूँगा।" इतना कहकर सचमुच ही वह पागलकी भाँति झोपड़ीके बाहर निकल पड़ा। उसकी वह विचित्र

हालत देखकर वह दूसरा आदमी भी उसके पीछे ही पीछे बाहर निकला, और बड़ी कठिनाईसे उसने उसको रोककर, "दादा", "दादा", कहकर स्थिर किया। बुड्ढेके उस भयकर उद्वेग और कोपका आवेग ज्यों ही एक बार दूर हुआ, वह बिलकुल किसी गोकी तरह दीन दिखाई देने लगा, और फिर वह अपने उस साथीके साथ, जिधर वह चला, जाने लगा—मानो अब उसका निजका अपना कोई विचार उसके पास रहा ही नहीं। वह युवक उसका हाथ पकड़कर अपने अभीष्ट स्थानकी ओर लिये जा रहा था। उस समय वे दोनों अपनी झोपड़ीसे और भी अधिक घने जगलके अन्दर प्रवेश कर रहे थे। न जाने वे अपना रास्ता वहाँसे किस प्रकार निकाल रहे थे? दूसरा यदि और कोई होता, तो उसको उन घनी झाड़ियोंमें कुछ दिखाई भी न दिया होता। परन्तु आगे-आगे वह युवक और पीछे पीछे बुड्ढा, दोनों उस विकट मार्गसे ऐसे चले जा रहे थे, जैसे अपने घरमे ही घूम रहे हों। इस प्रकार चलते चलते, अनेक मोड़ोंमेंसे, फिर वे एक दूसरी झोपड़ीके पास आये। झोपड़ीके अन्दर एक बहुत ही धीमा दीपक, टिम टिम करता हुआ—मानो अपनी उस अत्यन्त धीमी रोशनीसे—अन्दरके अन्धकारकी सघनताको और भी अधिक विशेष रूपसे प्रत्यक्ष करनेका प्रयत्न कर रहा था। अस्तु। उन दोनोंके आनेकी आहट पाते ही बड़ी फुर्तीके साथ एक छोकरा बाहर निकला, जिसे देखते ही उस युवकने कहा, "श्यामा, कोई विशेष बात तो नहीं?" वह तुरन्त उत्तर देता है, 'कोई बात नहीं। बक झक तो अब बिलकुल बन्द है। हाँ, बच्चेकी हालत बहुत बुरी दिखाई देती है। उसको जो हिचकियाँ आ रही हैं, सो तो ···" आगे वह कुछ कहनेहीवाला था कि, इतनेमें वह युवक और बुड्ढा, दोनों झोपड़ीके अन्दर धीरेसे पहुँच भी गये। देखते हैं, तो उस बच्चेको उलटी सासें चल रही हैं, और प्रत्येक उसासके साथ उसका पेट और छाती ऊपर उठ रहे हैं। बुड्ढेने पहली ही नजरसे उस बच्चेका भविष्य ताड़ लिया। फिर शीघ्र ही आगे बढ़कर उसने बच्चेको उठा लिया, और गोदमें लेकर इधर-उधर हिलाने लगा। कुछ समय बाद उसके

पेटके वार वार ऊपर उठनेका वेग धीरे-धीरे कम होने लगा। उसके हाथ-पैर पहलेसे भी अधिक टेढे हो गये; और उसकी घवराहट वढ़ गई। वह इतना जोरसे चीख मारता और ऐसा मालूम होता कि, उसके प्राण निकले जा रहे हैं। उस समय स्पष्ट ही ऐसा जान पड़ा कि, अभीतक उस वच्चे और उसकी मातापर जो भयंकर संकट आये थे, उनसे तो वह वच गया था; पर अव वच नहीं सकता। उसकी जननी भी विल्कुल वेहोश पड़ी थी, और ऐसा जान पड़ता था कि, उसकी भी हाल्त वहुत खराव हो रहा है। झोपड़ीके एक दूसरे कोनेमें एक और भी मनुष्य वैसी ही वुरी हाल्तमें पड़ा हुआ था। सच तो यह था कि, वह झोपडी उस समय एक अस्पताल ही वन रही थी, सव वीमार ही वीमार दिखाई देते थे। वह छोकरा वार वार उस कोनेवाले मनुष्यके पास जाता, वहाँ कुछ समयतक आहटसी लेता; और फिर उस स्त्रीके विछौनेके पास आता, वहाँ भी कुछ कान लगाकर सुनता, और फिर उस वुड्ढेके पास आता, जो उस वच्चेको कंधेमें लगाये इधरसे उधर घूम रहा था। इस प्रकार कुछ समय वाद उस वच्चेने एक भयंकर चीख मारी कि, जिसे सुनते ही वह स्त्री, जो अवतक विलकुल निश्चेष्ट, मृतवत् पड़ी थी, एकदम चिहुँक उठी; और ये शब्द उसके मुखसे निकलते हुए सुनाई दियेः—"अँः अँः! कहाँ है मेरा वच्चा! दुष्टने मार ही डाला, जान पड़ता है! अरे दुष्ट! मैं स्त्रीकी जात हूँ, इसलिये मुझे···" अगले शब्द मानो उसके होठोंमें ही रह गये, कमसे कम वाहर तो सुनाई नहीं दिये। ऐसा जान पड़ा कि, कुछ देरतक वह अपने अन्दर ही अन्दर कुछ गुनगुनातीसी रही। वीच वीचमें वह अधूरीसी कुछ उठती और "कहाँ है मेरा वच्चा? कहा हैं वे?" ये शब्द कहती, और शून्य तथा क्रूर-दृष्टिसे इधर-उधर देखने लगती। वीचमें कभी हँस देती, और कुछ गानासा गाने लगती। सच तो यह था कि, उस समय उसकी ऐसी दशा नहीं थी कि, वह अपने वच्चे की वास्तविक दशाको ध्यानमें ला सकती।

वुड्ढा, जो अभीतक उस वच्चेको लिये घूम रहा था, एकदम वैठ गया। वच्चेको अन्तिम हिचकी आई, और उसके प्राण निकल गये।

बुड्ढेको मालूम ही था कि बच्चा बच नहीं सकता—बुड्ढा और वह युवक दोनों ही जानते थे कि, आज नहीं तो कल इस बच्चेका अन्त होनेहीवाला है। इतना ही क्यों? बल्कि उस झोपड़ीमें कदम रखते ही जिस समय उनकी दृष्टि उस बच्चेके मुखकी ओर गई थी, उसी समय उन्होंने जान लिया था कि, यह अब घडी दो घड़ीका ही मेहमान है। इस प्रकार यद्यपि उनके मनकी सारी तैयारी हो चुकी थी, फिर भी शोककी विह्वलता, जो उस मौकेपर आनेको थी, आये बिना रुक थोडे हो सकती थी? बुड्ढेने ज्यों ही देखा कि, बच्चेके प्राण निकल गये, उसे अत्यन्त शोक हुआ, और एकदम नीचे बैठकर उसने अपनी गर्दन घुटनोंके अन्दर कर ली। बच्चेको आगे डाल लिया। यह देखकर उस युवकको और श्यामाको भी बड़ा भारी दुःख हुआ। आगसे वह माता, और उसका बालक, जबसे छूटकर आये थे, विशेषकर बालककी सेवा-शुश्रूषा श्यामा ही किया करता था। बुड्ढा दो-तीन बार उसके मुँहमें दूध डाल जाया करता था, और सारा दिन श्यामा उसकी देखभाल रखता था। यही नहीं, बल्कि श्यामा बार-बार बुड्ढेसे कहा करता कि, आप यदि मुझे जाने दें, तो मैं अपनी माँको ले आऊँ। वह यदि आगई, तो इस बच्चेकी और इसकी माताकी भी देखभाल उत्तम रीतिसे होसकेगी। पर बुड्ढेने किसी प्रकार उसकी बात स्वीकार नही की। श्यामा भी उस बच्चेको, उस दीन-दशामें, छोड़कर जा नही सका, तीनोंने मानों बीमारोंकी देखभाल अपने हाथमे ले रखी थी। श्यामा बच्चेको सम्हालता, बुड्ढा उसकी माताकी देखभाल करता, और वह युवक उस तीसरे आदमीकी शुश्रूषामें लगा रहता था। अब बच्चा जब नहीं रहा, श्यामाको इतना दुःख हुआ कि, जिसका वर्णन नही किया जा सकता। बुड्ढेकी हालत तो बहुत ही खराब दिखाई पडी। इतनेमें कुछदेर बाद, वह युवक मनुष्य उस बुड्ढेसे कहता है, "दादाजी, अब चुप बैठनेसे क्या होगा? आगेका प्रबन्ध करना चाहिए।" बुड्ढा कुछ नहीं बोला। सिर्फ उसने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ा, और उस बच्चेकी ओर अपनी उस दृष्टिसे कि, जो दुःखके मारे मन्द होरही थी, एकटक

देखने लगा। युवकने कुछ देर प्रतीक्षा की, और फिर कुछ बोल्नेको हुआ—इतनेमें बुड्ढा अचानक कहता है, "राणू, तो अब अपने वंश-का, अपने नाते-गोतेका, सबका ही, सत्यानाश होनेवाला है? सोचा था कि, इतना अंकुर ही बच जायगा, सो भी परमात्माको मंजूर नहीं हुआ! अस्तु। कोई हानि नहीं! अब देखना चाहिए, इन दोनोंका क्या होता है। जो कुछ होनेवाला है, सो तो प्रत्यक्ष है ही, पर सिर्फ आशाभर है। अब, जाओ, इसको लेजाओ, और तुम तथा श्यामा, दोनों ही, जो कुछ करना हो, करो। मुझसे तो अब अपनी जगहसे उठा भी नहीं जाता। सचमुच ही यदि इस बच्चेको सम्हाल्नेके लिए कोई स्त्री होती, तो शायद यह बच जाता; पर अब क्या? हे ईश्वर! अब, जब यह अच्छी होगी, जब यह होशमें आवेगी, तब यह पूछेगी कि, हाय! मेरा बच्चा कहाँ! उस समय हम·· हाय! हाय! उस समय हम इसको क्या जवाब देंगे? होशमें आते ही, पहले, यदि उसको यह खबर सुनाई जायगी, तो इसकी क्या दशा होगी? अवश्य ही यह फिर पागल होजायगी। हे ईश्वर! तूने क्या मुझको यही सब देखनेके लिये जीवित रखा है? यह तो सब तूने किया, अब मेरी प्रतिज्ञा ही पूर्ण होजाय, तो भी मैं अपने जीवनको सफल समझूँ···किन्तु आशा कहाँ है?" बुड्ढेने उपर्युक्त शब्द एक प्रकार-से अपने आपसे ही और अधूरेसे उच्चारण किये। क्योंकि उपर्युक्त वाक्योंमेंसे अधिकांश भाग उसने अपने होठोंके अन्दर ही धीरेसे उच्चा-रण किया। युवकने उपर्युक्त कथनकी ओर पूरा पूरा ध्यान दिया हो, अथवा न दिया हो, किन्तु उस वृद्धका कथन समाप्त होनेके बाद ही वह कहता है, "दादा, इसकी आप बिल्कुल चिन्ता न करें। उस दुष्टके-रक्तसे मैं अपने हाथ रंगे बिना न रहूँगा जब ऐसा मैं करूँ, तभी मराठे का सच्चा पुत्र कहलाऊँ। यह मैंने प्रतिज्ञा की है, और इसको जबतक पूर्ण नहीं कर लूँगा, चाहे मृत्यु भी मुझे क्यों न लेनेको आवे, मैं उससे भी भिड़ूंगा। अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण होती हुई देखनेके लिये आप यदि जीवित रहें, तब तो ठीक ही है; परन्तु यदि ईश्वरने वैसा नहीं भी होने दिया, तो उस हरामखोरका वध करके, नहीं नहीं, तिल-तिलके

समान उसके टुकड़े करके, उसके रक्तसे नहाया हुआ, मैं स्वर्गमें आऊंगा, और इसकी खबर आपको दूंगा।" इनमेंसे अन्तिम वाक्य जब उसके मुँहसे निकलने लगे, तब इतना जोश आगया कि, उसे प्रत्यक्ष देखनेवाले श्यामाके अतिरिक्त और कोई उसकी कल्पना भी नहीं कर सकता। उसने अपने दाँतोंमें नीचेका होठ इतने जोरमें दबाया कि, मानो अपने शत्रुका कलेजा ही उस समय उसके दाँतों तले पड़ गया हो! हमको इस समय करना क्या है, सो मानो उस समय बिलकुल ही भूल गया। इतनेमें उसके सन्तापका जोर कुछ कम हुआ—सो उसको मानो और भी अधिक बढानेहीके लिये, बुड्ढा, एक लम्बी-सी साँस छोड़कर, कहता है, "ऐसा तुम कहते अवश्य हो, पर जब हो जाय, तभी ठीक।"

उसके ये शब्द उस युवककी भड़कती हुई क्रोधाग्निपर घृताहुतिका काम कर गये, क्योंकि इन शब्दोंसे उस युवकका क्रोध इतना भड़का कि, वह सब कुछ भूलकर एक निराला ही प्राणी बन गया। यों तो उसकी आँखें पहले ही काफी विस्तीर्ण थीं, पर अब क्रोधके मारे ऐसी बढ गईं कि, मानो उसकी पुतलियाँ आँखोंसे बाहर निकली पड़ती थीं! सुर्ख ये इतनी हो गयी थीं कि, जैसे जलते हुए अंगारे। उसके बाल, जो स्वाभाविक ही कुछ रूखे थे, सिरपर बिलकुल सीधे खड़े हो गये। वास्तवमें वह इतना क्रूर और क्रुद्ध दिखाई पड़ने लगा, ऐसा जान पड़ा कि, मानो इस क्रोधके आवेशमें वह न जाने क्या कर डालेगा! यही सब देखकर वह बुड्ढा कुछ चोकन्नासा हुआ, और फिर उसको शान्त करनेके लिये कुछ कहने ही वाला था, कि, इतनेमें वह युवक, क्रोधके कारण कर्कश होजाने वाली अपनी वाणीमें, कहता है, "दादा, यदि आप इतने निराश हो चुके हैं, और अपने बच्चेकी बहादुरीके विषयमें यदि इतना संशय आपके मनमें उत्पन्न हो चुका है, तो मैं कहता हूँ—सुनिये—अच्छी तरह सुनिये—यदि आपके वीर्यमें मैं [illegible]पन्न हूँ—असली मराठेके वीर्यका यदि मैं हूँ—तो आजसे तीन [illegible]नेके अन्दर ही दादा, आजसे तीन—तीन ही महीनेके अन्दर,

उस दुष्टके, तिल तिलके समान, टुकड़े कर डालूँगा, उसके उस चाण्डाल-रक्तसे नहाऊँगा, और अपने हाथ लालसुर्ख करके लातकी ठोकरसे ही उसका सिर उड़ाता हुआ आपके सामने लाऊँगा, और तब आपको प्रणाम करूँगा। यदि आजसे तीसरे महीनेके दिवसान्ततक मैं आपके पास न आऊँ, तो समझ लीजियेगा कि, मैं मर गया, और प्रतिज्ञा-भंगके पातकसे न सिर्फ अपने ही मुखमें, किन्तु अपने बयासी पीढ़ियोंके, पुरखोंतकके मुखमें कालिख लगाई, और उस दशामें फिर आप समझ लीजियेगा कि मैं कहीं जगलमें पड़ा हुआ सड़ रहा हूँ; और स्यार तथा गिद्ध मेरे शरीरके टुकड़े-टुकड़े करके खा रहे हैं—बस, इससे अधिक और मेरे जीवनका उस समय क्या होगा? हाँ, तीन महीनेतक आप इस बातका कुछ भी पता न लगाइयेगा कि, मैं कहापर हूँ, और क्या करता हूँ। इन्हीं दोनोंकी सेवामें रहिये, आप खुद यदि बीमार पड़ जावें, यदि मरनेपर भी आ रहें, तो भी शरपजरमें पड़े हुए भीष्मकी भाति, तीसरे महीनेके अन्तिम दिनके सूर्यास्ततक मेरी प्रतीक्षा करें। अब मैं इस बालकका शव जंगलमें लिये जाता हूँ, और इसकी अन्त्यक्रिया करता हूँ······हाँ, हाँ, इसको लेकर जहाँ मैं बाहर गया, फिर प्रतिज्ञा पूरी किये बिना आपको यह मुख नहीं दिखाऊँगा। नहीं, नहीं। कुछ मत बोलिये। जो प्रतिज्ञा मराठेके मुखसे निकल चुकी, अब त्रिकालमें भी उसमें अन्तर पड़ नहीं सकता।"

बस, इतना कहकर वह चुप हो गया। फिर हर प्रकारसे उसने अपने क्रोधको सम्हाला; और नीचे झुककर उस बालकके शबको उठा लिया। श्यामासे उसने अपने पीछे-पीछे कुदाल और लालटेन लेकर आनेको कहा, और स्वयं दरवाजेके बाहर निकला।

अबतक जो कुछ हुआ, उसे देखकर वह वृद्ध पुरुष बिल्कुल भौंचक्कासा रह गया; और स्तब्ध बैठा रहा। यह क्या हुआ? इसका परिणाम क्या होगा? यह हमारे सामनेसे प्रतिज्ञा करके जा रहा है—अब यह क्या करेगा? और इन सब बातोंका अन्त क्या होगा? यह कुछ भी उसकी समझमें न आया। वह जैसा नीची गर्दन किये हुए

पहले बैठा था, वैसा ही चुप बैठा रहा। उस दशामें वह कितनी देर, किस प्रकार, बैठा रहा, सो कुछ उसके ध्यानमें न आया। वह स्त्री, जो एक पलगपर पडी हुई थी, फिर एक बार उठी, और शून्य तथा भयकर दृष्टिसे इधर उधर देखकर जोरसे बोली, "क्यों? मेरे बच्चेकी गर्दनपर पैर रखकर दुष्टने उसे कुचल ही डाला?" यह कहकर वह फूट फूटकर रोने लगी, और फिर सन्तापवायुके झोंकेमें ही उठकर वह पलंगके नीचे आई, तथा एकदम चीख मारती हुई पलंगपर और उसके नीचे टटोलनेसी लगी। वह बीच बीचमें रोती, चिल्लाती, अथवा चीखती। यह देखते ही बुड्ढा उठा, और उसको पकड़कर सम्हालने लगा, पर उसका यह कथन बराबर जारी रहा—"मेरा बच्चा कहाँ है? अरे कहाँ है मेरा लाल! दे दो मुझको। ले गया दुष्ट, जान पडता है! डाल दिया कहीं खन्दकमें? अरे दुष्ट, मर जा! आग नहीं लग गई तेरे हाथोंमें?... " ये, और इसी प्रकारके अन्य भी अनेक शब्द, बराबर उसके मुखसे निकल रहे थे। हाथ पैर भी बराबर वह पटक रही थी, और उठकर कहीं भागना चाहती थी। लगभग पन्द्रह-बीस मिनट पहले वह इतनी विलक्षण अवस्थामें थी कि, उसके लिये यह कहनातक कठिन था कि, यह जिन्दा है, अथवा मुर्दा—सो अब उसके शरीरमे इस समय इतनी शक्ति न जाने कहासे आ गई! बुड्ढा उसको सम्हाल ही न सका। उधर एक ओर जो एक तीसरा मनुष्य बीमार पडा था, उसको इस सारे शोरगुलसे बडी तकलीफ होने लगी। इसलिए अब बुड्ढा बेचारा इस चिन्तामें पड़ा कि, ऐसी भयकर दशामे वह अकेला क्या करे, और क्या न करे—उस समय उसके मनकी जो दशा हुई होगी, उसकी पाठकगण स्वय ही कल्पना करें। दो बीमार उस भयकर दशामे पड़े हैं, और सम्हालनेवाला एक!

इस प्रकारकी दशा वहाँ बीत रही थी, इतनेमे श्यामा अकेला ही कुदाल इत्यादि लेकर वापस आया। उसे देखते ही बुड्ढेने "तेरे साथ गया हुआ हमारा लड़का कहाँ है?" यह जतलानेवाली प्रश्नबोधक दृष्टिसे उसकी ओर देखा। श्यामा भी मानो उसका आशय समझ गया,

और कुदाल इत्यादि नीचे रखते ही बोला "वे चले गये। जैसा उन्होंने यहाँ कहा था, वैसा ही किया। शवको गाड़नेके लिये उन्होंने वड़ा गहरा गड्ढा खोदा, उसमें शवको पूर दिया, और फिर मुझसे लौट जानेको कहकर स्वयं वैसे अँधेरेमें ही जाने कहाके कहा गायव हो गये। मैंने वहुत पुकारा, पर कोई फल न हुआ!"

श्यामाके मुखसे ये शब्द सुनते ही पहले तो वुड्ढेने सोचा कि, हम भी उसके पीछे ही पीछे जाकर उसको पकड़ें; और आग्रह करके लौटा लावें, पर फिर उसने सोचा कि, अव उसका लौटना विलकुल असम्भव है, इसलिये उसने उस विचारको छोड़ दिया। हाँ, श्यामाकी सहायतासे उसने फिर उस स्त्रीको वड़े कष्टसे सम्हालकर पलंगपर सुला दिया। इधर उसकी सनक भी अव कुछ कम हो रही थी, अतएव उसने भी विशेष हाथ-पैर नहीं चलाये। हाँ, मुँहसे अवश्य कुछ, पहलेकी भाति, वड़वड़ा रही थी। कुछ देर वाद वह वड़वड़ाना भी वन्द हुआ; और विलकुल निश्चेष्ट होकर पड रही। इतनेमें उस दूसरे पलगपर पड़े हुए मनुष्यने ऊपर मुँह उठाकर "पानी" का शब्द कहा। इसलिये उसकी ओर जाकर उस वुड्ढेने उसके मुँहमें चार चम्मच पतला सावूदाना डाल दिया। इसके वाद वह फिर उस स्त्रीके पास आकर वैठ गया। क्षणमात्र चुप वैठनेके वाद फिर एकदम वह श्यामासे कहता है, "वेटा, चलते समय उसने और भी कोई सन्देशा मुझे वतलानेके लिये कहा था?" "कोई विशेष नहीं" कहकर श्यामाने उत्तर दिया कि, "हाँ, इतना अवश्य कहा था कि, 'दादासे कह देना कि, आजसे तीन महीनेके अन्तिम दिनतक हमारा रास्ता देखें। इस वीचमें यदि न आवें; तो समझ लें कि मर गया। इसके वाद फिर उन्होंने मुझसे कहा कि, 'श्यामा, दादा अकेले हैं; और वे दोनों रोगशय्यापर पड़े हैं, इसलिये तू अव अपनी माँको जरूर ले आना' सो आप क्या कहते हैं? क्या मैं जाऊँ? मैं दो दिनके अन्दर ही उसको लिये आता हूँ। सव हाल वतलानेपर वह तुरन्त ही चली आवेगी···पर, हाँ, एक वात वतलाना तो मैं भूल ही गया। चलते-चलते उन्होंने एक वार अपने ही आप यह

भी कहा था कि, "अब मैं बीजापुरको जाऊँगा, और उस दुष्ट चाण्डालका पता लगाऊँगा, और एक बार जहा उसका पता चल गया, फिर उसके पीछे ही पीछे छायाकी तरह घूमूँगा, तथा फिर कोई मौका पाकर अपना काम पूरा करूँगा।"

श्यामाके इस कथनकी ओर बुड्ढेका परा ध्यान था, और यह बात स्पष्ट दिखाई दे रही थी, परन्तु साथ ही साथ यह भी जान पडता था, उसके मनमे और भी कोई विचार अवश्य ही आ रहे हैं। क्योंकि श्यामाकी बात खतम होते ही वह उसपर कुछ भी नहीं बोला, और बिलकुल चुप बैठा रहा। बेचारा श्यामा भी यह सोचता हुआ कि, अब क्या करें, वहाँसे उठकर उस दूसरे मनुष्यकी चारपाईके पास जा बैठा। छोकरेका मन बहुत ही दु:खी हो रहा था। उसकी अवस्था ही अभी क्या थी—फिर उसमें भी गत महीने सवा महीनेके अन्दर उसकी परिस्थितिमें अनेक परिवर्तन हुए थे, परन्तु उस लड़केके चरित्रमे ही यह खूबी थी कि, उनसे उसका उत्साह और भी बढ़ रहा था। यह बुड्ढा कौन है? वह दूसरा युवक कौन है? धारगाँवके देशमुखसे इनका क्या सम्बन्ध है? सूर्याजीका सन्देशा हमने ज्यों ही इस बुड्ढेको आकर बतलाया, और उनकी दी हुई निशानी दिखलाई, त्यों ही अत्यन्त सहानुभूतिमें आकर इस बुड्ढेने उस युवकको क्यों बुलाया? इत्यादि प्रश्नोंका खुलासा श्यामाके मनमें हो चुका था। इसके सिवाय, सूर्याजीकी पत्नीके विषयमें इतनी खबरदारी रखने, और जलती हुई आगमें पैठकर उसके प्राण बचाने, इत्यादिके विषयमें भी अब उसे कोई सन्देह नहीं रह गया था। परन्तु अब बहुत देरसे वह इन बातोंके सोचनेमे लगा था कि, इस बुड्ढे और उस युवकमे जिस प्रतिज्ञाके विषयमे बातचीत हुई, वह प्रतिज्ञा किस बातकी? किसके रक्तमे स्नान करनेका उन्होने बीड़ा उठाया है वह कौन है? इन बातोंके सोचने-विचारनेमे उसने बहुत कुछ कोशिश की, बहुत कुछ अपने मस्तिष्कको परिश्रम दिया, पर कोई लाभ न हुआ। हाँ, इतना उसको अवश्य विश्वास था कि, ये मनुष्य जैसे दिखाई देते हैं वैसे नहीं हैं। वास्तवमें ये कोई बड़े मनुष्य हैं, और किसी कारणवश

ऐसी दशाको प्राप्त हुए हैं। सूर्याजी और उनकी पत्नीके विषयमें भी उन दोनोंमे परस्पर जो बातचीत हुई थी, उसमे भी श्यामाने यही समझा था कि, ये दोनों कोई कुलीन और बड़े घरानेके मनुष्य हैं। परन्तु ये अज्ञातवासमें क्यों हैं? इनकी शत्रुता किससे हैं? इनकी यह प्रतिज्ञा क्यों है? ये थे कहाँ? इत्यादि बातोंके जाननेकी उसे इच्छा थी, सो वह जान नहीं सका, इस कारण उसका चित्त कुछ विचारपूर्ण हो रहा था। इतने में उस बुड्ढेके मनमें न जाने क्या विचार आया, और वह एकदम उससे बोला, "श्यामा, तू किसका लड़का है? कहाँसे भूलकर यहाँ आ गया, और हमारे चक्करमें आ फँसा। देख, तेरी माँ क्या कहती होगी? उसकी क्या दशा हुई होगी? सुभानको तो वे दुष्ट पकड़ ही ले गये होंगे? सो वह तेरी कुछ हाल तेरी माको बतला ही न सका होगा? और यदि कुछ बतलाया भी होगा, तो क्या बतलाया होगा? उसे मालूम ही क्या है? ठीक ठीक वह क्या बतला सकेगा? तेरी माँको मैं नहीं जानता, अथवा तेरी मा मुझको नहीं जानती, ऐसा नहीं—अरे बेटा—···"

इतना ही कहकर तुरन्त उसने अपनी जीभ दाँतों तले दबाई—जैसे कोई बात वह न बतलाना चाहता हो; परन्तु एकदम वह उसके मुँहसे निकल गई हो और इसपर फिर उसको खेद हुआ हो! श्यामा बुड्ढेका उपर्युक्त कथन सुनकर और भी अधिक गोलमालमें पड़ा। परन्तु इस आशासे कि, बुड्ढा आगे और कुछ बतलायेगा, वह चुप बैठा रहा। साथ ही वह अपने मनमें यह भी सोचने लगा कि, "क्या मेरी माने इसके पहले मुझसे कभी किसी ऐसे बुड्ढे और युवक पुरुषका जिक्र किया था?" पर कोई परिणाम न निकला। ऐसी कोई बात उसे याद नहीं आई। हाँ, इतना उसे अवश्य स्मरण आया कि, उसकी माँ अपने पुराने मालिकके विषयमें कभी कभी कुछ बात निकाला करती थी, और साथ ही बड़े दुःखके साथ रोया करती थी। परन्तु वे मालिक कौन हैं, और इस समय वे कहाँ हैं—इस सम्बन्धमें कोई चर्चा उसको माने कभी उसके सामने नहीं की थी, और यदि की भी हो, तो उसे याद नहीं थी। अस्तु। बुड्ढा बहुत देरतक फिर उसके कुछ भी नहीं बोला।

इतनेमें दोनों रोगियोंके दवा पानीका समय आगया, बुड्ढेने तुरन्त उठ कर दवा दी। कुछ समय बाद साबूदानेके दो दो, चार चम्मच उसने दोनोंके मुँहमें डाले। परन्तु स्त्रीने तो दवा और साबुदाना, दोनोंहीको थूक दिया। अस्तु। रात बड़ी मुशकिलसे बीती। बुड्ढेको तो बिल्कुल ही नींद नहीं आई। परन्तु बेचारा श्यामा पहले बहुत देरतक तो बैठा रहा, फिर गहरी नींद आनेके कारण उसी जगह लुढक गया, और सुबह बहुत देरके बाद उठा। फिर इधर उधरके आवश्यक कार्य करनेके बाद बुड्ढेसे बोला, "दादासाहब, मैं अपनी माको लिये आता हूँ। जहाँ मैंने इधरका सब वृत्तान्त बतलाया कि, वह तुरन्त ही चल देगी। उसके आ जानेपर आपको बड़ी सहायता मिलेगी। मैं जबतक लौटकर न आजाऊँ, आप सटवाजीको अपनी सहायतामें लेलें। मैं अभी उसे बुलाये लाता हूँ। जिसने इनको आगसे बचानेके लिए अपने प्राणोंको सकटमें डाला, वह आपकी सहायता अवश्य करेगा। सिर्फ दो दिनकी बात है। मै परसोंके दिन अवश्य ही वापस आजाऊँगा। आप ही सोचिये—आप अकेले क्या-क्या करेंगे? मेरी माँ कुछ नहीं कहेगी—आप उसके आनेपर स्वय देख लेंगे।"

इस प्रकार किसी प्रौढ़ मनुष्यकी भाँति बुड्ढेको अपनी बात समझाकर श्यामा चुपकेसे उसके मुँहकी ओर देखने लगा। इतनेमे सटवाजी स्वय ही आकर वहाँ उपस्थित हो गया। फिर क्या कहना है? श्यामा अपने कार्यके लिये और भी अधिक उत्साहित दिखाई दिया। यही नहीं, बल्कि उसने सटवाजीसे कहा कि, "जबतक मै वापस न आजाऊँ, तुम इनको सम्हालो।" और इतना कहनेके बाद वह उस बुड्ढे पुरुष तथा सटवाजीसे विदा होकर चल दिया। उस छोटेसे बालकका वह प्रौढ़ व्यवहार देखकर उन दोनोंहीको, उस दु:खद अवस्थामे भी थोडीसी हँसी आई। बुड्ढा बहुत देरतक उस छोकरेकी ओर, जो क्षण क्षणपर दूर जा रहा था, बड़े कौतुकके साथ देखता रहा।

उस रातको, जबकि बुड्ढा उस झोपड़ीसे अपनी पहली झोपड़ीकी ओर किसी कारणवश आरहा था, उस झोपड़ीम उसे किसी मनुष्यकीसी

आहट मिली। उस आहटके पाते ही वह एकदम पीछे लौट पड़ा, और झोपड़ीकी पिछली ओरसे कान लगाकर सुनने लगा। इससे कुछ भय उत्पन्न करनेवाले शब्द उसके कानोंमें पड़े, अतएव वह तुरन्त ही दूसरी झोपड़ीकी ओर आया।

इधर श्यामा अपनी माताको लेकर तीसरे दिन वहाँ आता है, तो एक चिड़िया भी उन दोनो झोपड़ियोंमें नहीं मिली।

चौंतीसवां परिच्छेद

कुछ अन्य लोग।

(२)

अब श्यामाको तो हम ऐसे ही गोलमालमें छोड़ दें, और कथानकके कुछ अन्यान्य लोगोंके हालचालको भी देखें, तथा उसके बाद फिर एक-दम बीजापुर पहुंचकर वहाँकी घटनाओंकी ओर ध्यान दें।

पाठकोंको स्मरण होगा कि, सुलतानगढके किलेदारको जब रण-दुल्लाखा कैद कर ले गया, और उसकी पुत्रवधू एक दिन पहले ही अपनी दासी सहित वहाँसे कहीं चली गई, तब इसका सारा समाचार हमारी "बागी मंडली" को उसके गुप्तचरने जाकर दिया था। इसके सिवाय, पिछले एक परिच्छेदमें यह भी बतलाया जा चुका है कि, उस समाचारको जब उन लोगोंने सुना, तब पहले कुछ हर्ष और फिर पीछे कुछ खेदके विचार उनमें आये थे; विशेषकर जो नवीन सिपाही उस मण्डलीमें अभी हालहीमें आकर सम्मिलित हुआ था, उसकी कुछ विचित्रसी दशा हो गई थी। वह जवान कौन था, सो पाठकोंको अब विशेष स्पष्ट करके बतलानेकी आवश्यकता नहीं। वह सिपाही और कोई नहीं—सुलतानगढ़के अप्पा साहबके पुत्र नानासाहब थे। सुलतानगढ़के किलेदारको कैद कर लेजानेका समाचार मालूम होनेके बाद उन लोगोंमें जो बातचीत हुई थी, उससे उस विषयका सारा वृत्तान्त

पाठकोंको मालूम हो गया होगा। अब उस विषयमे कुछ बतलानेकी आवश्यकता नहीं। स्वामीजीने नानासाहबसे कहा था कि, तीन दिनके अन्दर मैं तुम्हारी स्त्रीका पता लगा दूँगा। जिस समय अप्पा-साहब पकड़े गये, वह किलेपर नही थी—एक दिन पहले ही, चली गई थी, वह चतुर है, जिस तरह बना होगा, अपने पिताके घर चली गई होगी, इत्यादि। इसके बाद फिर भी उन्होंने बार बार जब यह वचन दिया कि, मैं तीन दिनके अन्दर अवश्य ही उसका पता लगा दूँगा, तब नानासाहबको कुछ शान्ति मिली। परन्तु उनके मनकी पूरी पूरी अशान्ति फिर भी नहीं गई। स्वामीजीने अपने गुप्तचरसे, जो कुछ उनको कहना था, कहकर रवाना कर दिया। इसके बाद वे फिर भीतर आ गये, और अगले विचारमें लगनेके लिये लोगोंसे कहा। लोग उस विषयके विचारमे कुछ-कुछ तो लगे ही थे। राजा शिवबा तो बिलकुल ही एकाग्र हो रहे थे। नानासाहबने सुल्तानगढ़के हस्तगत करनेमें जिन सुविधाओंका जिक्र किया, वे सब उन्होंने अपने मनमें जमा लीं। उन्होंने बहुत दिन पहले ही सोचा था कि, यदि सुल्तानगढ हमारे हाथ-में आ जायगा, तो बहुत ही अच्छा होगा। उक्त किला बहुत ही विकट और हमारे लिये अत्यन्त सुविधाजनक है। इसके सिवाय हमारी वर्तमान स्थितिके लिये भी वह बहुत उपयोगी है। परन्तु मुख्य कठिनाई उन लोगोंको यही जान पड़ती थी कि, किलेके मुखिया रंगराव अप्पा एक कट्टर स्वामिभक्त आदमी हैं, और इस कारण उनको फोड़कर किला नहीं लिया जा सकता। हाँ, श्रीधर स्वामीने अपने गुप्तचरोंसे जो समाचार प्राप्त किये थे, उनसे उनको बहुत दिन पहले ही यह बात मालूम हो चुकी थी कि, अप्पासाहबके लड़के नानासाहब अवश्य ही मुसल्मानो-के कट्टर विरोधी हैं और वे हमारी मण्डलीमें मिल भी सकते हैं, परन्तु फिर भी यह कठिनाई उनके सामने उपस्थित ही थी कि, नानासाहबके आ मिलनेपर भी, जबतक उनके पिता किलेदार बने रहेंगे, तबतक उस किलेपर चढ़ाई करके जाना, और भी उस चढ़ाईमें उस वृद्धको कैद करना, इत्यादि अच्छा नहीं दिखाई देगा। परन्तु आज जो समाचार

उन लोगोंको मिला, उससे उक्त सारी कठिनाइयाँ आप ही दूर हो गईं। इसलिये उन्होंने सोचा कि, रंगराव अप्पाके हाथसे सुल्तानगढ़का किला छीनकर यदि उनको वादशाहने पकड़ मँगवाया है, तव तो फिर अव उस किलेके हस्तगत करनेमें कुछ वहुत कठिनाई नहीं रह गई। सुल्तान-गढ़का किला उनके लिये सर्वथा उपयुक्त था। शिववाके अपने निजके इलाकेसे भी वह बहुत दूर नहीं था। बीजापुरसे वहुत पास भी नहीं था। इसके सिवाय किलेके आसपासका वहुतसा भाग शिववाकी वर्त-मान परिस्थितिके वहुत ही अनुकूल था। इन सव वातोंके ध्यानमें आते ही राजा शिववाके मनमें उस किलेको प्राप्त करनेकी वड़ी इच्छा हुई। परन्तु उनका यह पक्का निश्चय था कि, कोई भी कार्य करना हो, भवानी माताके कृपाप्रसाद और उनकी अनुकूलताके विना किया नहीं जा सकता। साथ ही उनका यह भी पक्का विश्वास था कि, महाराष्ट्र-में स्वराज्य-संस्थापना करने; और गौ-ब्राह्मणों तथा आर्य-भूमिकी यवनों-के कष्टसे मुक्त करनेका महान् कार्य जगदम्वा हमारे हाथसे अवश्य करावेंगी! इसके सिवाय उनका यह भी दृढ़ विश्वास था कि, भवानी माताके प्रसादसे ही हमको यह वात भी मालूम हो जाया करेगी कि, कौनसा कार्य सिद्ध होने योग्य है; और कौनसा नहीं। अतएव, उपर्युक्त सव विचार जव उस किलेके सम्वन्धमें हो चुका, तव उन्होंने वावाजी तथा अन्य सव लोगोंसे चुप रहनेकी प्रार्थना की; और स्वयं जगदम्बिका-को साष्टाग नमस्कार करनेके वाद "जय जगदम्वा भवानी!" कहते हुए, आँखें वन्द करके, चित्तको एकाग्र किया। उस समय उन सव लोगोंका भी मन इतना एकाग्र हो गया कि, उनके निःश्वासोंके अति-रिक्त और कुछ भी वहाँ सुनाई नहीं देता था। शिववाका मन तो यहाँ-तक एकाग्र दिखाई दिया कि, उनको अपने आसपासका कुछ भी भान नहीं रहा। ऐसा जान पड़ा कि, उनका चित्त शरीरसे वहुत दूर चला गया है। वह किसी अन्य लोकमें ही, किसी दूसरे प्राणीकी ओर देखने अथवा उससे वातचीत करनेमें लगा है। इतनेमें देहमान इतना नष्ट हो गया कि, शरीर विल्कुल निश्चेष्टसा दिखाई दिया, और मस्तक माताकी

मूर्तिके पदकमलों पर जा भिड़ा। तथापि उन्हें उठानेको कोई आगे नहीं हुआ। उस दशामें लगभग चौथाई घडी हुई होगी कि, इतनेमें होंट हिलने लगे, और ऐसा जान पड़ा कि, अब कुछ शब्द बाहर निकलेंगे। अतएव स्वामीजी अपने कानोंको बिलकुल पास ले गये, उस समय ये शब्द उनके कानोंमें पड़े—"सावधानीके साथ उपक्रम करनेमे सफलता अवश्य! मन्दिरका तोरण ही उठे।" बस इतना ही सुनाई दिया। स्वामीजीको और कुछ सुनाई नहीं दिया। सुनाई क्या दे? शिवबाके मुँहमे और कोई शब्द निकले ही नहीं। उपर्युक्त शब्द निकलनेके बाद कुछ देरमें ऐसा मालूम हुआ कि, शिवबाका जो चित्त अभीतक भवानी माताके चरणोंमें लीन हो रहा था, सो अब धीरे-धीरे हृदयमें सचारित होने लगा। कुछ देरके बाद वे अपने भानपर आ गये और इधर-उधर गर्दन करके तथा दोनों हाथोंसे अपने कान पकड़कर उन्होंने फिर भवानी माताको साष्टाग नमस्कार किया। इसके बाद चुपकेसे बैठकर धीरेसे उन्होंने अपनी आँखें खोलीं, और उन्हें माताके स्वरूपकी ओर लगाकर बादको फिर बड़ी आतुरताके साथ, स्वामीजीकी ओर देखा। स्वामीजीने उन शब्दोंका मनन करके उनका अर्थ पहले ही अपने मनमें समझ रखा था, और वह अर्थ चूंकि ऐसा ही था, जैसा कि उन्हें अभीष्ट था, इसलिये वे मन ही मन बड़े आनन्दितसे दिखाई दिये। शिवबाने ज्यों ही उनकी ओर देखा, वे बोल उठे, "शिवबा, बस फतह हुई समझ! इसमे शका अणुमात्र भी नहीं। इस बारके शब्द और उनका गुप्त अर्थ जब मैं बतलाऊँगा, तब तू आनन्दसे नाच उठेगा। समर्थ (श्रीरामदास स्वामी) की इच्छा तेरे ही हाथसे यह महान् कार्य करानेकी हुई, सो कुछ यों ही नहीं! बाबा, तेरा अधिकार ही ऐसा है!"

"आपकी और उस महात्माकी कृपा जो कुछ करे, सोई ठीक! पर शब्द क्या निकले, सो एक बार मालूम हो जाय तो—"

"अरे, शब्दोंका क्या पूछना है? बिलकुल वैसे ही, जैसे चाहिये—बल्कि बिलकुल अपनी कल्पनासे बाहर ही माताका प्रसाद मिला—ऐसा समझ! 'सावधानीके साथ उपक्रम करनेसे सफलता अवश्य!

मन्दिरका तोरण ही उठे।' बस, यही शब्द हैं। और इससे अधिक क्या चाहिये? सो अब तोरण उठाकर उपक्रमको प्रारम्भ करो। 'सावधानीके साथ' इन शब्दोंको बारीकीके साथ ध्यानमें लाना चाहिये। नहीं तो, 'सफलता अवश्य' बस, इन्हीं शब्दोंको ध्यानमें रखकर हम बहक जायंगे; और फिर जितनी सावधानीसे उपक्रम होना चाहिये, उतनी सावधानीसे नहीं हो सकेगा; तथा औरका और ही हो रहेगा, इसलिये अच्छी तरह विचार करना चाहिये। जिस प्रकार मुझे छुड़ानेके लिये युक्ति सोची थी, वैसी ही कोई युक्ति सोचनी चाहिये सही, परन्तु साथ ही कुछ शूरता दिखानेका भी मौका निकालना चाहिये। नहीं तो, इतने दिनसे जो इतने लोग जमा किये जा रहे हैं; और अनेक प्रकारके विचार तथा मनसूबे बांधे जा रहे हैं, उनका उपयोग क्या? चलो, आजसे दो-तीन महीनेकी मुद्दत लो; और तीन महीने जिस दिन खतम हों, उस दिनके सूर्यास्तके भीतर ही भीतर किलेके अन्दर हमारा प्रवेश हो जाना चाहिये, और किलेके किलेदार—यदि कोई नवीन नियत किये गये हों तो—और शिलेदार (अश्वारोही सैनिक) तथा घुड़साल इत्यादि, सब कुछ हमारे हाथमें आ जाना चाहिये, और किलेपर हमारा अमल जारी हो जाना चाहिये। सच पूछो, तो तीन महीनेकी मुद्दतकी भी आवश्यकता नहीं। आजहीका मौका बहुत अच्छा था; और आज किला हमारे हाथमें अवश्य आ जाता, पर केवल किलेके ही हाथमें आजानेसे क्या काम चलेगा? आसपासका प्रदेश भी तो अनुकूल होना चाहिये, तभी उसकी स्थिरता है। आज किला हमारे हाथमें आ गया, और कल चला भी गया, तो इससे क्या लाभ?"

शिवबाका पूरा ध्यान स्वामीजीकी बातोंकी ओर था। इसलिये अब वे बोले, "स्वामी महाराज, हम आपके उपदेशके बाहर बिलकुल नहीं हैं। आज वहाँ जाकर क्या होगा? और फिर, भवानी माताने जो यह कहा है कि, सावधानीसे उपक्रम करो, सो इसका अर्थ क्या? आपने तीन महीने बतलाये, सो इतनी मुद्दत तो जरूर चाहिये। रंगराव अप्पाकी जगहपर सैयदुल्लाखांके आदमीको किलेदार होने दीजिये। वह

उस इलाकेके प्रत्येक बस्तीकी प्रजाको पीड़ित करेगा ही—सब प्रकारसे उनको कष्ट देगा। बस, इसीसे उन लोगोंके मन तैयार हो जायगे। उनके मन जहाँ तैयार हुए कि, फिर बातकी बातमें फतह कर लेंगे। उसकी चिन्ता ही नहीं।" 'सावधानीके साथ उपक्रम करनेसे सफलता अवश्य। मन्दिरका तोरण ही उठे।' ये अन्तिम शब्द अन्य किसीको सम्बोधन करके न कहते हुए शिवबाने अपने ही आप तीन-चार बार उच्चारण किये। उस समय यह स्पष्ट हो दिखाई दे रहा था कि, "मन्दिरका तोरण ही उठे" इन्हीं शब्दोंका अर्थ निकालनेमें उनका सारा ध्यान लग रहा था। भवानी माता ऐसा उपदेश तो कभी कर ही नहीं सकती कि, तू हमारे मन्दिरका तोरण उठा दे। क्योंकि उनको यह भलीभाँति मालूम है कि, मैं उनको कितनी भक्ति रखता हूँ। ऐसी दशामें, अपने सम्बन्धमें वे कोई बात नहीं कहेंगी। यह सब सोचकर उन्होंने फिर एक बार स्वामीजीकी ओर देखते हुए 'मन्दिरका तोरण ही उठे' इन शब्दोंका उच्चारण किया, और इस प्रकार उनका तात्पर्य जाननेकी जिज्ञासा प्रकट की। स्वामीजी तत्काल उनका आशय समझ गये, और बोले, "शिवबा, अरे तू इसमें इतने चक्करमे क्यों पड़ गया? तू जो कुछ कर रहा है, सो सब वही तो है। यवनोंने जिस मन्दिरका उच्छेद कर डाला है, उसकी पुन. सस्थापना तेरे हाथसे होनेवाली है। उसका तोरण यही है कि जो तू यह किला पहले लेनेवाला है। चल उठ, अब विचार करते रहनेका समय नहो है। तूने ही तो अभी कहा कि, अब सावधान रहना चाहिये। बीजापुरमें अब दिन-पर दिन तेरी चर्चा बढ़ ही रही होगी। इसलिए अब चल, और कुछ सोचने विचारनेका मौका नहीं है। अब अगला उपक्रम किस प्रकार करना चाहिये, इसकी व्यूहरचना कर। यह सारी व्यूहरचना तेरे ही हाथसे होनी चाहिये। इन बाकी लोगोंको क्या? ये तो तेरी आज्ञाके अनुसार कार्य करेंगे।"

इतना कहकर स्वामीजीने अन्य लोगोंसे इशारा किया। इशारा पाते ही सब लोग वहाँसे दूर चले गये। स्वामीजी और शिवबा कुछ देरतक

एकान्तमें बैठे रहे। इसके बाद शिवबा वहाँसे उठकर अपनी मण्डलीके साथ चले गये। बाबाजी जहाँके तहाँ बैठे रहे। उन्होंने पहले ही समझ लिया था कि, अब ऊपर हनुमानजीके मन्दिरमें रहना हमारे लिये विशेष श्रेयस्कर और सुरक्षित नहीं है, और इधर नीचे भुँहारेका मन्दिर उनके लिए मौजूद ही था। अस्तु। शिवबा और उनके साथियोंके चले जाने-पर बाबाजी मन ही मन बहुत देरतक विचार करते रहे। अबतक जितनी कुछ घटनाएँ हो चुकी थीं, उन्हींका मानों वे बार-बार विचार कर रहे थे। इसके सिवाय वे इस बातके भी विचारमें थे कि, देखें, अब शिवबा सुल्तानगढ़को हस्तगत करनेके लिए किन उपायों और युक्तियोंकी योजना करता है। इस प्रकार विचार करते-करते उसी जगह उनको नींदसी आ गई। लगभग आधीरातका समय था, एकाएक गहरी नींदसे वे जग पड़े, और "ऐसा साक्षात्कार क्यों?" इतने शब्द उन्होंने जोरसे उच्चारण किये। फिर इधर-उधर देखा और आप ही आप कहते हैं, "स्वामी [श्रीरामदास] के यहाँ कोई समाचार नहीं दिया, हमसे आलस हुआ, इसीसे तो यह साक्षात्कार नहीं हुआ? किन्तु ऐसा होनेका भी कोई कारण नहीं। श्रीसमर्थ सर्वसाक्षी, प्रत्यक्ष हनुमानजीके अवतार हैं। श्रीचरणोंसे भी कोई समाचार बहुत दिनोंसे नहीं आया है। न जाने क्या इच्छा है!" इतना ही स्पष्ट कहा, फिर उन्होंने उच्च स्वरसे एक श्लोक पढ़ा; और "जयजय श्रीरघुवीर समर्थ!" कहकर ध्यानस्थ हो गये। बहुत देरतक ध्यान करनेके बाद फिर उन्होंने श्रीसमर्थ [रामदास] के बनाये हुए कुछ मराठी श्लोक और कुछ अभंग आप ही आप पढ़े, और उषाकाल होनेतक समय व्यतीत किया। परन्तु स्वामीजीकी चित्तवृत्ति कुछ उदासीन ही बनी रही—कह नहीं सकते, किस कारणसे—चाहे निद्रामें जो दृश्य उनको दिखाई पड़ा, उस कारणसे हो—अथवा अन्य किसी कारणसे। जो कुछ हो। उषाकालमें स्नान-सन्ध्या इत्यादि नित्य-कर्मोंसे निपटनेके लिए स्वामीजी अन्तमें उस गुप्त मन्दिरके बाहर निकले; और जंगलमें ही एक झरनेकी ओर चले गये। वहाँ स्नानादि सर्व विधियोंसे निपटकर फिर वापस आये। वापस आते ही क्या देखते

हैं कि, एक दूसरे बाबाजी उनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। उनको देखते ही श्रीधर स्वामी उनके चरणोंपर गिर पड़े, और पहला प्रश्न यही कियाकि, "कहिये, समर्थका क्या हालचाल है ?"

दूसरे बाबाजीने स्वामीको उठाकर आलिंगन किया, और एक थैली, जिसमें भीतर कोई पत्र था, उनके हाथमें दे दी। स्वामीने उसे लेकर उसकी बन्दना की, और भीतरका पत्र निकालकर, उसकी भी वन्दना करके, उसको पढा, और—"कल रातको मुझे साक्षात्कार हुआ ही था, अवश्य ही मेरी भूल हुई" कहकर उस थैली और पत्रकी फिरसे वन्दनकी, और फिर उसे अपने जटाभारमें रख लिया। इसके बाद फिर वे थैली लानेवाले बाबाजीको बड़े आदरके साथ भीतर ले गये, और उनका उत्तम रीतिसे सत्कार किया। फिर एक दूसरेने परस्पर एक दूसरेसे सब बातें पूछीं, और बतलाई। इसके बाद जब अभ्यागत दूसरे बाबाजी विश्राम करने लगे, तब हमारे स्वामी महाराजने अत्यन्त सुवाच्य अक्षरोंसे एक पत्र लिखा, जिसमें अपने पकड़े जानेके दिनसे लेकर और आज-तकका सारा वृतान्त निवेदन किया था। उस वृत्तान्तको पढनेके लिये राजा शिवबा आदि उस समय वहाँ उपस्थित होते, तो अवश्य ही उसमे अपनी भारी प्रशसा देखकर जहाँ उन्हे एक प्रकारसे आनन्द हुआ होता, वहाँ उस प्रशसाके अतिरेकपर उन्हे सकोच भी हुआ होता। सम्पूर्ण वृत्तान्त लिख चुकनेके बाद स्वामीने उसमे यह भी लिख दिया था कि, समर्थके चरणोके प्रत्यक्ष दर्शन यद्यपि अभी उसे [शिवबाको] नहीं हुए हैं, तथापि उसकी भक्ति अगाध है, और महाराजके चरणोंके दर्शन करनेकी उसकी उत्कट अभिलाषा है। इसके सिवाय इस आशय-का भी वृत्तान्त उस पत्रमें था, "समर्थ यदि अब शीघ्र ही उसे दर्शन देवें तो उसे अत्यन्त आनन्द होगा। इसलिये पहला पराक्रम होनेके बाद अवश्य ही ऐसा होना चाहिये।" सम्पूर्ण पत्र लिख चुकनेपर स्वामीने फिर एक बार उसे पढा। उसको पढते समय स्वय उन्हींके नेत्रोंमे ऑसू भर आये, और अचानक उनके मुखसे ये उद्गार निकल पड़े—"वाह शिवबा! तुझको धन्य है, जो तुझपर ऐसे महात्माका कृपाप्रसाद है! मैं

तो केवल निमित्तमात्र हूँ। परन्तु तू और वे—दोनो अवश्य ही अर्जुन और कृष्णके अवतार हैं, जो कि उच्छिन्न होनेवाले धर्मकी संस्थापनाके लिये इस आर्यभूमिमें अवतीर्ण हुये हैं। ऐसे महात्माओंकी कृपा और तेरे समान सच्छिष्य होनेपर फिर संसारमे असम्भव क्या है ?"

वह पत्र उसी दिन समर्थकी सेवामें चला गया।

पैंतीसवां परिच्छेद।

बादशाह।

(१)

इसमें सन्देह नहीं कि, मुहम्मदअली आदिलशाह बादशाहके जमानेमें बीजापुर उन्नतिके अति उच्च शिखरपर विराजमान हो रहा था, परन्तु साथ ही यह भी कहना पड़ेगा कि, इसीके शासनकालसे बीजापुर-राज्यकी अवनति भी धीरे-धीरे प्रारम्भ हो चुकी थी। यह स्वयं राजकाज बिलकुल नहीं देखता था। बल्कि इसके विरुद्ध, अपने अन्तःपुरमें रातदिन विलासितामें निमग्न रहता था। अपनी बेगमों और एक रम्भावती नामक सुन्दरी, जो उसे सैयदुल्लाखाकी जघन्य कारस्तानियोंसे प्राप्त हुई थी, उसीके सहवासमें वह नाना प्रकारके भोग-विलासमें लिप्त रहता था। बड़े-बड़े इमामबाड़े और राजमहल बनवाने तथा नवीन-नवीन बाजार बसानेका भी उसे बड़ा शौक था। इसलिये ऐसे कामोंमें भी वह अपना बचाबचाया वक्त तथा पैसा खर्च किया करता था। सोने-चांदीकी तो कोई कीमत ही न समझता था। खूब दान-पुण्य करता, फकीर फुकरोंको जमा करके उनको भोजन कराता, और उनका आदर सत्कार करता। यह भी उसे एक व्यसन था। युद्धोंपर जाना, नवीन-नवीन प्रान्तोंको जीतना अथवा अपनी शूरता और पराक्रमसे अपना वैभव बढ़ाना, इत्यादि बातें मालूम ही नहीं थीं। उसके राज्यकी प्रारम्भिक अवस्थामें मुरार जगदेव और राजा शाहजी भोसलेने राज्य

लिये बहुत प्रयत्न किया, जिससे राज्यकी उन्नति भी बहुत कुछ हुई, परन्तु जब राज्यके स्वामीका मन ही राजकाजमें न लगा और ऐसे मनुष्योंका प्रभाव राज्यके महत्वपूर्ण कार्योंमें बढ़ने लगा कि, जिनकी कीमत जनानखानेके बाहर एक कौड़ीकी भी नहीं थी, तब अच्छे कार्योंमें विघ्न उपस्थित होने लगे। इसमें सन्देह नहीं कि, बादशाहके प्रारम्भिक शासनकालमें उपर्युक्त दोनों स्वामिभक्त सरदारोंने राज्यकी वृद्धिके लिये जितने प्रयत्न किये, सबमें सफलता प्राप्त हुई, और एकके बाद एक, इस प्रकार अनेक, इलाके जीतकर उन्होंने बीजापुरके राज्यमें मिलाये, परन्तु इससे बीजापुरका राज्य दिल्लीके मुगल बादशाहकी आँखोंमें काटेकी तरह चुभने लगा। फलत: उसकी ओरसे बीजापुरको पराजित करनेका प्रयत्न शुरू हुआ। अब उस समय बीजापुरके राज्यमें इतनी दृढ़ताकी आवश्यकता थी कि, वह मुगलोंका मुकाबिला करता, और अपने राज्यको भी बढ़ाता जाता, पर दो कारण ऐसे उपस्थित हो गये कि, जिनसे उस दृढ़ताकी बराबर कमी ही हो रही थी। एक तो यह कि, सैयदुल्लाखाके समान क्षुद्र मनुष्यने मुरार जगदेवके समान सरदारसे प्रतिस्पर्द्धा शुरू की, जिससे फूट पैदा हो गई। दूसरा यह कि, बादशाह स्वयं सच्ची परिस्थितिको समझनेमें मन नहीं लगाता था। और यदि कभी लगाता भी था, तो पहला प्रतिबिम्ब उसके मनपर सैयदुल्लाखाँका पड़ता था, मुरार साहब उसे दूर करनेके प्रयत्नमें ही लगे रहते थे—सो भी कभी उनको सफलता होती, और कभी नहीं। इस प्रकार राज्यकी अन्दरूनी हालत बड़ी खराब हो रही थी, अतएव मुगलोंकी अच्छी बन आई। बादशाह जिस समय गद्दीपर बैठा था, उसकी अवस्था पन्द्रह-सोलह वर्षकी थी। मुरार जगदेव राज्यके पुश्तैनी सरदार थे, पूर्व बादशाहका उनपर पूर्ण विश्वास था, और मुहम्मदशाहका मन भी स्वभावसे बहुत शुद्ध, सरल तथा प्रेमपूर्ण था, अतएव पहले-पहल मुरार साहबने मुगलोंका अच्छा मुकाबिला किया, और राज्यकी वृद्धि भी की। पर पीछेसे जब उपर्युक्त कारण पैदा हो गये, और राज्यका जोर कम हो गया, तब मुगलोंको अपना राज्य आगे बढ़ानेके लिये अच्छा मौका मिल

गया; और फिर बीजापुरके राज्यमें उन्होंने कैसा-कैसा उपद्रव मचाया, सो इतिहास-प्रेमियोंको बतलानेकी आवश्यकता नहीं है। इधर प्रजा भी अब अधिकाधिक असन्तुष्ट हो रही थी। बादशाहके विषयमें लोगोंका प्रेम बहुत था, क्योंकि नौरोजके त्यौहार और अपने जन्मदिनके अवसर-पर वह बड़े-बड़े उत्सव किया करता था, जलूस निकालता था; और उस समय हजारों रुपये तथा सोने-चाँदीके फूल बनवाकर प्रजामें लुटाता था। उसके पासतक यदि किसीकी फरियाद पहुँच जाती, तो न्याय भी ठीक-ठीक करता था। पर सच तो यह था कि; उसके पासतक फरियाद-का पहुँचना ही टेढ़ी खीर थी। परिणाम यह होता था कि, पाजी अधि-कारियोंको मनमाना अत्याचार करनेका मौका मिलता था, और इससे सर्वसाधारण प्रजामें असन्तोषकी आग भड़कती ही जाती थी। बादशाह कभी अपने नगरके बाहर भूल करके भी नहीं गया—जिससे उसका दानधर्म भी नगरके ही लोगोंको मालूम था, उसके गुणोंकी कदर भी उन्हीं लोगोंको थी। राज्यके इलाकोंकी गरीब प्रजाको उसके गुणोंकी गन्धतक भी न मिली थी; और न उसकी सज्जनताका ही उनको कुछ अनुभव था। उनको तो काम पड़ता था छोटे-बड़े अधिकारियोंसे, और उनमें प्राय. निन्नान्वे फीसदी स्वार्थी और अत्याचारी ही थे। फिर प्रजा सन्तुष्ट रहे तो कैसे? कभी-कभी तो ऐसे भी मौके आते थे कि, शहरके बीच, रास्तेमें, गौवध करके, आने जानेवाले हिन्दुओंके—विशेषतः ब्राह्मणोंके—शरीरपर उस रक्तको छिड़क देते, और इससे यदि उनके शरीरके रोंगटे खड़े हो जाते, और वे कुछ क्रोधप्रदर्शक बात कह देते, तो उनका और भी अधिक अपमान करते कि, ब्राह्मणोंको पकड़कर उनके मुँहपर रक्त पोत देते, अथवा ऐसा कोई कार्य करते कि, जिससे उनका चित्त दुःखित होकर उनका क्रोध और भी भड़कता—और इस प्रकार जब उनका क्रोध भड़कता, तब उनकी और भी टर्र उड़ाते। इन सब बातोंका परिणाम तत्काल कुछ नहीं होता था, और इसी कारण अधिकारीवार्गको राज्यकी दृढ़ताके विषयमें कभी सन्देह भी नहीं हुआ। परन्तु उनको इस बातका खयाल न हुआ कि, इन सब बातोंका साम्-

हिक रूपमे मिलाकर क्या परिणाम होगा, अथवा भीतर ही भीतर होना शुरू भी हो गया है। उपर्युक्त रीतिसे कष्ट पाकर हिन्दू जब बादशाहके यहाँ फरियाद लेकर जाते, तब उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता था। फलत. असन्तोषमे धीरे-धीरे वृद्धि ही होती रही। कभी कभी तो ऐसा भी होता कि, फरियाद सुनना तो दूर रहा—फरियाद करनेवालेका ही और भी अपमान किया जाता था। इन्हीं सब कारणोंसे स्वाभाविक ही उस समय प्रत्येकके मनमें यह इच्छा उत्पन्न हो गई थी कि, स्वराज्य सस्थापनाकी अब अत्यन्त आवश्यकता है, और कोई स्वराज्य-सस्थापक अब अवश्य उत्पन्न होना चाहिये। इच्छा उत्पन्न हुई हो, चाहे न हुई हो, कमसे कम उसके उत्पन्न करनेवाले कारण तो अवश्य ही उपस्थित हो गये थे। अस्तु।

जैसा कि हमने ऊपर बतलाया, बादशाह जब कि इस प्रकार अपने ऐश-आराममे चूर हो रहा था, एक दिन आगे लिखी हुई घटना उपस्थित हुई। यह दिन, पिछले दो परिच्छेदोंमे बतलाई हुई सारी घटनाओंके लगभग आठ दिनके बादका है। इस दिन बादशाहकी तबीयत कुछ खराब थी, और इसलिये किसीको मिलनेकी इजाजत भी नहीं थी। हॉ, हुजरके जो एक दो मुख्य कारपर्दाज थे, उनको आने-जानेकी कोई मनाई न थी। अन्त.पुरकी स्त्रियोंमे भी रम्भावती और सुलताना बेगमके अतिरिक्त और कोई ऐसे समयमे बादशाहके सम्मुख नहीं जा सकती थी। सुलताना बेगमका भी प्रवेश इजाजत लिये बिना नहीं हो सकता था। हॉ, रम्भावती और सैयदुल्लाखॉ, इन दोके लिये पूरी-पूरी स्वतन्त्रता थी। सैयदुल्लाखॉ आज कई दिनसे इस प्रयत्नमे था कि, बादशाहसे किसी प्रकार एकान्तमे मिल सके। उसकी तबीयत जब ठीक होती, तब मुरार जगदेव कमसे कम एक बार उससे मिलकर सब बातें अवश्य बतला जाया करते थे। परन्तु जब उसकी तबीयत ठीक नहीं होती थी, तब वे भी नहीं आ सकते थे। चाहे जितना आवश्यक कार्य होता, ऐसे समयमे हुजूरकी मुलाकात उनसे भी नहीं हो सकती थी। आजका दिन भी ऐसे ही दिनोंमेसे एक था। सैयदुल्लाखॉ आजका मौका अच्छा

देखकर बादशाहके सुनहरी पलंगके सिरहाने खड़ा था। उसका वह दीवानखाना शोभाका मानो आगार था। द्रव्यके द्वारा जो कुछ सजावट हो सकती थी, सभी उसमें मौजूद थी। आरब्योपन्यासमें बगदाद, बसरा इत्यादि नगरोंके भव्य भवनोंका वर्णन जिसने पढा होगा; और बड़े-बड़े बादशाहोंके दरबार-वालोंका दृश्य जिसकी दृष्टिके सम्मुख उपस्थित हुआ होगा, वही हमारे बीजापुरके इस बादशाहके राजभवन और उस दीवानखानेकी कल्पना कर सकेगा कि, जिसमें वह इस समय अपने सुनहरी पलंग पर पड़ा हुआ था। दरबारहाल लगभग बीस-इक्कीस दरका था, और सम्पूर्ण हालमें एक अत्यन्त मुलायम मखमली गद्दा पड़ा हुआ था, जिसमें मुरबोंतक पैर भीतर धँस जाते थे। प्रत्येक दरमें बढ़िया-बढ़िया कामदार मखमली पर्दे लगे हुए थे। जगह-जगह उस गद्देके ऊपर छोटी-छोटी गदियाँ और मसनदें लगी हुई थीं। बादशाहका पलंग पूरे दीवानखानेके तृतीयांश भागमें था। पलग अत्यन्त विस्तीर्ण था; और जगह-जगह गद्दियों, तकियों इत्यादिसे सजा हुआ था। सैयदुल्लाखाँ इस समय जिस ओर खड़ा था, उस ओरकी—वह मोतियोंकी जालीदार झालर लगी हुई—मशहरी जरा ऊपरको उठी हुई थी। वहीं पर सोनेका एक रत्नखचित पेंचवाँ रखा हुआ था। उसमें अभी हालहीमें एक हुजरेने अत्युत्तम गुड़ाकू लाकर भरा था, और ऊपरसे स्वच्छ अंगारे रख दिये थे। बादशाहने अलसाते अलसाते उस पेंचवेंकी निगालीकी ओर हाथ किया। यह देखते ही सैयदुल्लाखाने आगे बढ़कर वह निगाली पकड़ ली, और उसका मुँह बादशाहके मुखके पास ही कर दिया। उसने अलसाते अलसाते एक-दो बार धूम्र निकाला; और फिर सैयदुल्लाखाँकी ओर देखकर कहा:—

"कहो सैयद, आज यह बात क्या नवीन बला लाये? कुछ ले आये हो जरूर!"

"हुजूर, आप बादशाहतकी गद्दीके मालिक हैं, ऐसी हालतमें सारी दुनियाँकी बलाएँ हुजूरहीके पास तो आयेंगी, और बेचारी जायेंगी कहाँ? इसके सिवाय, जब कोई खास-खास मौके आ पड़ते हैं, तब

ईमानदार नौकर वक्त बेवक्त भी नहीं देखते। जो अर्ज करना होता है, अर्ज करते हैं, और हुजूरका हुक्म ले जाते हैं।"

"अच्छा, यह तो हुआ। मुबालगा मत करो, काम क्या है, सो कहो।"

"गरीबपरवर, आपको तकलीफ होती हो, तो मैं कुछ कहना ही नहीं चाहता। हुजूर शान्तिके साथ सुनेंगे, तभी कुछ नतीजा निकलेगा। क्योंकि बात बडी नाजुक है। मैं जो अभीतक कहा करता था कि, एक बार प्रत्यक्ष प्रमाण देकर इस बातको दिखला दूँगा, सो आज उसका मौका आ गया है। आप सच न मानें, तो मै नामका सैयद नहीं।"

"हाँ, मैंने पहले ही समझ लिया था कि, तुम ऐसा ही कुछ मामला जरूर ले आये होगे। लेकिन देखो सैयद, मैं तकलीफमें हूँ, और चुप पड़ा हूं, फिर भी तुम कुछ सोचते नहीं।"

"सरकार, यह बन्दा यदि समयपर ही आकर सब बातें नहीं बतलावेगा, तो अचानक जो तकलीफ होगी, जो कष्ट होगा, वह इससे कहीं अधिक भयकर होगा। बस, यही समझकर मैं इस समय हुजूरको यह छोटीसी तकलीफ देने आया हूँ। सरकारकी तबीयत यदि दुरुस्त न हो, तो बन्दा अभी, इन्हीं पैरों, वापस जाता है।"

यहाँपर पाठकोंको यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं प्रतीत होती कि, बादशाहका मन अपनी मुट्ठीमें करनेकी कला सैयदुल्लाखाको भली-भाँति अवगत थी। वह यह बात भी अच्छी तरह जानता था कि, बादशाहकी तबीयत इस समय कैसी खराब है, और उसको कहातक महत्व देना चाहिये। बस, जिस दिन मदिरा देवीका सेवन विशेष हो जाता था, उसी दिन उसकी तबीयत बिगड़ जाती थी, और फिर उस दिन वह किसीसे मुलाकात नहीं करता था। पर सैयदुल्लाखाके समान व्यक्तिके लिये, वही दिन—बादशाहकी तबीयत बिगडनेके दिन ही—विशेष अनुकूल होते थे। फिर क्या कहना है? जैसा कि हमने ऊपर बतलाया, पहले वह उसकी जिज्ञासाको विशेष रूपसे जागृत करनेके लिये ऐसे ही कुछ दो-चार वाक्य कह देता, और फिर कहता कि, "अच्छा, मैं इन्हीं

पैरों वापस जाता हूँ।" बस, इसी नियमके अनुसार आज भी उसने कुछ निराशा, कुछ खेद, और कुछ लापरवाहीके साथ उक्त शब्द कहे। बादशाहका मन मदिरा देवीके कारण मृदु हो ही रहा था, अतएव उसके उक्त शब्द अपना काम कर गये, और तुरन्त ही उसने अपना मस्तक कुछ ऊपर उठाया, और कहाः—"नहीं, नहीं, बिल्कुल लौटने-हीपर नौबत क्यों आ गई? कहो, कहो—कोई महत्वकी बात हो, तो बतलाओ; परन्तु···"

"नहीं, नहीं, सरकारको कष्ट होगा, और कष्ट देकर मैं ऐसी बात कहना भी नहीं चाहता। मैं जो कुछ कहूँगा, उससे कुछ कष्ट होगा ही; और इसीलिये मैं लौटा जा रहा था।"

बस, सैयदुल्लाखाका उद्देश्य पूरा हो गया। बादशाहकी जिज्ञासा ही वह बढ़ाना चाहता था, सो बढ़ गई, और वह बार-बार कहने लगा कि, "बतलाओ, बतलाओ, क्या बात है?" सैयदुल्लाखाने ज्यों ही देखा कि, जिस अंशतक उसकी जिज्ञासा बढ़ी हुई वह चाहता था, उस अंशतक बढ गई, त्यों ही धीरेसे उसने एक चौकी पलंगके पास खींच ली, और आसपासके हुजरों और लौंडियोंको दूर भगा दिया, और फिर अपना कथन प्रारम्भ किया.—

"हुजूर, जैसा कि मैंने अर्ज किया, बस वही समझिये। रंगराव अप्पाके विषयमें रणदुल्लाखाँ जो इतनी 'पक्षपातकी' बात करता है, उसका कोई कारण अवश्य है। मैंने पहले ही आपसे अर्ज किया था; और अब तो उसका कारण पूरा पूरा मालूम ही हो गया। 'अप्पासाहब-का इसमें कुछ भी दोष नहीं,' वे बहुत ही भलेमानस हैं' 'गद्दीके सच्चे हितचिन्तक हैं', इत्यादि बातें जो कानोंमें पड़ती हैं, इनमें कुछ भेद अवश्य है। सरकार, रणदुल्ला उनके मोहजालमें पड़ गया है। और वह मुरारसाहबकी तो बिल्कुल मुट्ठीहीमें है। रणदुल्लाखा यों तो बहुत ही स्वामिभक्त पुरुष है, पर वह मराठोंके चक्करमें फँस गया है। हजरत, आप मुरारसाहबके विषयमें कुछ भी समझा करें, पर मैं तो यही समझता हूँ कि, वह गद्दीका···"

"बस, यही महत्वकी बात ?" बादशाहने कुछ त्रस्त होकर कहा, "अरे यह तो तुम्हारी रोजकी ही बात हुई।"

"नहीं, नहीं, जो कुछ बतलाना है, सो तो अलग ही है। पर, हुजूर आप तकलीफ न उठावें। यदि मालूम हो कि, मैं बिना कारण कष्ट दे रहा हूँ, तो इनका और कोई कारण नहीं, हुजूरपर मेरी भक्ति ही है।" बादशाह कुछ नहीं बोला। हाँ, सैयदुल्ला आगे क्या कहता है, उसे सुननेके लिये उसने कुछ अधीरतासी अवश्य प्रकट की। धूर्त सैयदुल्लाने भी ताड़ लिया, और फिर तुरन्त ही आगे बोला —

"गरीबनिवाज, मुरार साहबकी बात एक ओर—पर अन्य भी कुछ प्रलोभनोंमें रणदुल्ला फँस रहा है। रंगराव अप्पा साहबकी तरफदारी और . "

सैयदुल्लाखा इतना कहकर कुछ झिझकासा, और बादशाहकी ओर देखने लगा। बादशाहके चेहरेपर अधीरताकी बहुत अधिक छाया देखते ही उसको बहुत आनन्द हुआ, और उसने सोचा कि, इस छायाको ओर भी अधिक घनी होने दें, जिससे हम इसके आशयका पूरा-पूरा लाभ उठाकर मनःशान्ति प्राप्त कर सकें। अस्तु। बादशाहने ज्यों ही यह देखा कि, सैयदुल्लाखा अब जल्दी नहीं बोलता, त्यो ही वह फिर कुछ अधिक त्रस्तसा होकर कहता है, "अच्छा फिर ? आगे कहो न ?"

"कहता हूँ। कहनेके लिये तो आया ही हूँ। सरकार, अब अधिक साफ साफ क्या कहूँ ? गरीब अप्पाने उसे विचित्र ही प्रलोभन दिया है। धिक्! धिक्! हिन्दू कहलानेवाले ये लोग बडी बड़ाई मारते हैं, और अपनेको बहुत ही विशुद्ध बतलाते हैं, परन्तु ये ऐसे नीच कर्म करते हैं।" इतना कहकर सैयदुल्लाखा फिर खेद, क्रोध और आश्चर्य, इन तीनो विकारोंकी छायासे अपने चेहरेको विकृत करके बादशाहकी ओर देखने लगा।

"क्या कहते हो ? क्या बात हुई ? रणदुल्लाखाने ऐसा क्या किया ?" बादशाहने, बहुत ही अधीरताके साथ, अपना आधा शरीर बिछौनेपरसे उठाकर, पूछा।

"रणदुल्लाखाने ? रणदुल्लाखाने इस विषयमें ऐसी कोई बात नहीं की कि, जो उसके लिए अनुचित हो—हाँ, जो कुछ किया है, उसके कारण अपनी स्वामिभक्तिसे—जो नमक उसने खाया है, उससे—कुछ नीचे अवश्य गिर गया है। और तो कोई बात नहीं। सरकारसे उसने यह प्रार्थना की है कि, रंगराव अप्पाको फिर उसी किलेपर नियत कर दिया जाय; पर जान पडता है, सरकारने कभी इस बातका विचार नहीं किया कि, ऐसी प्रार्थना करनेका उसे साहस कैसे हुआ ? उस बुड्ढेको कैद कर लानेका हुक्म हुआ, और यह इसी कारण कि, उसने नमक-हरामीकी। वास्तवमें उसे कैद कर लानेकी आवश्यकता क्या थी ? उसको कैद करके किस प्रकार लाया गया ? फिर उसकी इज्जत-प्रतिष्ठा रखनेमें कितनी सावधानी की गई ? अब उसको फिर वापस भेजने, और उसको फिरसे किला लौटा देनेका आग्रह किया जा रहा है। जहाँपनाह, इसका सारा भेद यदि आज मैं आपको बतलाऊँ, तो आपके शरीरके रोंगटे खडे हो जायँगे; और इच्छा होगी कि, रंगराव अप्पाको सूली ही देदी जाय। यह हिन्दू-हिन्दू काहेका ! काफ़िर है काफ़िर !

छत्तीसवां परिच्छेद

बादशाह।

(२)

सैयदुल्लाखाकी इन अन्तिम बातोंसे तो बादशाहकी जिज्ञासा हद दरजेतक बढ गई। अब वह आवेसे अधिक बिछौनेपर उठकर सैयदुल्ला खाकी ओर त्रस्त नेत्रोंसे देखता हुआ कहता है, "कहो, कहो, जो कुछ कहना हो। उसके लिये इतनी रुकावटकी आवश्यकता क्या ?"

बादशाहकी वह वृत्ति, जो कि इतनी उच्छृंखल हो रही थी, देखकर सैयदुल्लाखाको अत्यन्त आनन्द हुआ। वह जो कुछ चाहता था, जिस मनोवृत्तिमें बादशाहके आनेकी वह अबतक प्रतीक्षा कर रहा था, उसमें

बादशाह आ गया। इसलिये जो उद्देश्य उसे सिद्ध करना था, उसे पूरा करनेके लिए तुरन्त ही उसने अपना कदम आगे बढाया। वह बादशाहसे कहता है, "गरीबपरवर, वह बात जोरसे बतलाने लायक नहीं। उसे मैं आपके'कानमें धीरेसे ही बतलाता हूँ। आप चुपकेसे सुन लें। अवश्य ही उसके लिए आप रणदुल्लाखांको दण्ड देनेकी इच्छा करेंगे, परन्तु इस समय ऐसा न करें। उसका पूरा पूरा दाव पेंच क्या है, सो देख लेने दीजिये। पकड़में आजाने दीजिये, जिससे छूट जाने अथवा कोई बहाना बतला देनेका मौका ही न रहे, और तब उसे सहजमें ही दण्ड दे सकेंगे। वह आपकी प्रजा है, आपका नौकर है, आपका गुलाम है, हरामखोर यदि निकल गया, तो उसे दण्ड देना क्या कठिन है? अच्छा, तो मैं अब बतलाता हूँ। पर उसे सुनकर यदि आपको क्रोध आवे—और क्रोध आवेगा ही, यह निश्चय है! क्योंकि आपके समान न्यायी और परम दयालु पुरुषको ऐसी बातें सहन कैसे होंगी?—पर उस क्रोधको भी कुछ दिनतक दबाये रखना पड़ेगा। इस बातका हुजूर यदि निश्चय कर लेवें, तो मैं अभी सब बतला दूँ। किन्तु यदि आप क्रोधके वश होकर कुछ करने लगेंगे, तो उसे अपनी बात छिपानेका मौका मिल जायगा, और फिर मैं जो कुछ कहता हूँ, सो सच है—यह सिद्ध कर दिखानेमें मुझे भी कठिनता पड़ेगी—किंबहुना यह बिलकुल असम्भव हो जायगा।"

बादशाहकी आतुरता पहले ही अतिरेकको पहुँच चुकी थी। और फिर उसमें भी यह नीच इतनी वावदूकी दिखलाने लगा—यह देखकर उसको अत्यन्त क्रोध आया। यहाँतक कि उसके मुँहसे शब्द ही न निकलने लगा। सैयदुल्ला यह ताड़ गया कि, उसने आवश्यकतासे अधिक वीणाका तार कस दिया। अतएव अब वह बहुत जल्द हाथ जोड़कर बादशाहके बिल्कुल कानके पास ही अपना मुँह ले गया, और धीरेसे कोई बात कही, जिसे सुनते ही वह कहता है, "झूठ! झूठ! कुल झूठ! रणदुल्लाखाँ अपने बापका सच्चा बेटा है। वह इतनी नीचता—और ऐसी छोटीसी बातके लिये—कभी कर नहीं सकता।

तुम यों ही बात बनाकर मुझसे कह रहे हो। मैं अभी उसे बुलवाता हूँ। तुम्हारे सामने ही बात छेड़ूँगा। तुम्हारी बात यदि सच निकलेगी, तो इसी समय मैं उसे जहन्नुमको पहुँचा दूँगा, और यदि झूठ निकलेगी, तुम यदि कोई बात बनाकर मेरे सामने लाये होगे, तो समझ लेना फिर!"

"बेशक! बेशक!" हताश हुईसी आवाजसे सैयदुल्लाखाँ एकदम कहता है, "लेकिन मैं अपने ही उपायोंसे उसकी सचाई-झूठाई सिद्ध कर दूँगा। आप यदि इस प्रकार उसे यहाँ बलवायेंगे, तो कोई लाभ न होगा। हजरत, मैं पहले ही जानता था कि, मेरी बात जब आप सुनेंगे, तब आपको ऐसा ही क्रोध आवेगा; और इसीलिये मैंने पहले ही प्रार्थना कर दी थी कि, "सरकार, शान्तिके साथ विचार करें।" मैं जो कुछ कह रहा हूँ, उसे पूरे तौरपर सिद्ध कर दिखलानेके लिये मुझे कुछ अवधि चाहिये, वह मुझे आप दीजिये......"

सैयदुल्लाखाँ जिस समय यह कह रहा था, बादशाहका चित्त उस समय उसकी बातोंकी ओर नहीं दिखाई देता था। वह उस समय बिछौनेपर चुप पड़ा था; और सैयदुल्लाखाँकी ओर केवल देखभर रहा था। इसके बाद बीचमें ही वह बोल उठा, "सैयद, सचमुच ही जो बात तुम बतला रहे हो, क्या वह सच है?—सचमुच ही उसने ऐसी कोई बात की है, अथवा यों ही तुम बनाकर कह रहे हो?"

"नहीं, नहीं! झूठ कहकर मुझे उसमें क्या प्राप्त करना है?"

सैयदुल्लाखाँकी यह बात सुनकर बादशाह कुछ हँसा, और कुछ तिरस्कारकी चेष्टासे उसकी ओर देखकर बोला, "तुम्हें प्राप्त क्या नहीं करना है? प्राप्त करनेहीके लिये तो यह सारा झगड़ा है......"

इस समय सैयदुल्लाखाने ऐसी कुछ विलक्षण दृष्टिसे बादशाहकी ओर देखा कि, केवल दृष्टिपातसे ही यदि मनुष्योंका मारा जाना सम्भव होता, तो इस समय उसका कुशल नहीं था। और उस हालतमें, उसके उस भयंकर दृष्टिपातको भी कुछ सफलता प्राप्त हुई होती। परन्तु अपने मनके उस विकारको उसने उस समय अपने उस दृष्टिक्षेपकी,

अपेक्षा अन्य किसी मार्गसे भी दिखलानेका प्रयत्न नहीं किया। किन्तु, इसके विरुद्ध, अपनी चेष्टापर कुछ हँसीसी लाकर उसने कहा, "अब जैसी सरकारकी मर्जी हो! मेरा जो कुछ कर्तव्य था, सो मैंने किया।" इतना कहकर वह बिलकुल चुप हो रहा। अवश्य हो वह बादशाहके बोलनेकी प्रतीक्षा कर रहा था, परन्तु वह थोड़ी देरतक कुछ भी नह बोला। फिर अचानक कहने लगा, "सैयद, मैं तुमको पन्द्रह दिनकी मुद्दत देता हूँ। इतनी मुद्दतमें यदि तुमने अपनी बातको प्रमाणित नहीं कर दिया, तो फिर समझ रखो! इस अवधिमे मैं रणदुल्लाखासे कोई चर्चा इस विषयकी नहीं करूँगा। पर पन्द्रह दिनके बाद यदि तुम अपना कथन सत्य प्रमाणित न कर सके, तो······मैं अब अधिक न कहूँगा। इस समय मेरी तबीयत और भी अधिक खराब हो रही है। अब तुम यहासे जाओ।" इतना कहकर बादशाह फिर चुप हो रहा; और फिर "ऐ मेरी जान रम्भा शराब, शराब" करके चिल्लाने लगा। जिस समयका यह वृत्तान्त है, वह समय पाठकोंके ध्यानमें होगा ही। सैयदुल्लाखाँ अभी वहासे टलना नहीं चहता था। अभी वह बादशाहसे उसी विषयमें और भी कुछ कहना चाहता था, और ऐसा जान पडता था कि, इसी प्रकारकी बातोंसे वह उसके मस्तकको और भी खूब सन्तप्त कर देना चाहता था! पर इतनेमें उसने रम्भावतीकी याद की और "शराव, शराब" की चिल्लाहट मचाई। इससे सैयदुल्लाखाँको एक प्रकारका आनन्द ही हुआ। उसने सोचा कि, यहाँ आनेके पहले ही मैं रम्भावतीसे मिलूँ, और इस समयकी सब बातें उसके कानमें डालकर उसीके द्वारा बादशाहका मन कलुषित कराता रहूँ। बस, यह सोचकर वह एकदम खड़ा हो गया, और बादशाहसे बोला, "जहाँपनाह, आज इस बन्देपर सरकारकी मर्जी कुछ नाखुशसी जान पडता है। बन्देसे क्या अपराध हुआ, जो इतनी नाराजी हुई, मेरी तो कुछ समझमें नहीं आया। सरकारने जो मुद्दत दी है, उस मुद्दतके अन्दर ही मैं अपनी बातपर सरकारका विश्वास करा दूँगा। यदि मै ऐसा न कर सका, तो फिर यह मुँह सरकारको न दिखाऊँगा। आप मुझपर इतना अविश्वास

रखते हैं, ऐसा मुझे स्वप्नमें भी खयाल न था।" इतना कहकर वह वहांसे चल ही दिया। वादशाह शरावके लिये अव विल्कुल वेहोश हो रहा था। और कोई समय होता तो, उसने शायद सैयदुल्लाखाँको उस हालतमें जाने न दिया होता। सैयदुल्लाखाँ वहासे चलकर एकदम रम्भावतीके रंगमहलकी ओर गया, जोकि वहीं एक ओर था। वहाँ पहुँचकर उसने रम्भावतीको अपने आनेका समाचार देनेके लिये महल-के वाहर वैठे हुए खोजेसे कहा। खोजेने भीतर जाकर रम्भावतीको उसके आनेका समाचार दिया, जिसे सुनते ही पहले तो रम्भावतीकी चेष्टा तिरस्कारसे भरी हुई दिखाई दी। परन्तु फिर उस तिरस्कारको वहुत जल्द अन्दर दवाकर कपटपूर्ण हास्यसे उसने अपने चेहरेको सजाया। रम्भावतीका पूरा-पूरा इतिहास पाठकोंको आगे चलकर आप ही मालूम हो जायगा। यहाँपर सिर्फ इतना ही वतलाना है कि, वह एक अत्यन्त ही सुन्दरी रमणी थी; और वादशाहको इसके प्राप्त कराने-में सैयदुल्लाखाने भारी परिश्रम किया था। रम्भावतीको यद्यपि सुल्ताना-का पद प्रत्यक्ष रूपसे तो प्राप्त नहीं हुआ था, परन्तु फिर भी सैयदुल्ला-खाँका यह खयाल था कि, इसको जितने कुछ अधिकार प्राप्त हुए हैं, उन सवको प्राप्त करा देनेका मैं ही एक कारण हूँ। अतएव इसके द्वारा मेरी भी उन्नति खूव हो सकेगी। इधर रम्भावती भीतरसे सैय-दुल्लाखासे द्वेष रखती थी; परन्तु वाहरसे अवश्य ही मीठी मीठी वातें करके उससे अपनी कृतज्ञता प्रकट करती थी। उसका अन्दरूनी उद्देश्य क्या था—उसको कौनसा अपना उद्देश्य सिद्ध करना था, सो उसके सिवाय और कोई जान नहीं सकता था। अस्तु। यह समाचार पाते ही कि, सैयदुल्लाखाँ आया है, उसने उसको भीतर आने देनेका सन्देशा भेजा। सैयदुल्लाखाँ तुरन्त ही जा पहुँचा। वह जो कुछ उससे कहना चाहता था, सव कहा। रम्भावतीने भी अत्यन्त माया दिखलाकर उसकी सारी वातें सुन लीं। सैयदुल्लाखाने उससे जो-जो कुछ करनेकी प्रार्थना की, सव उसने तुरन्त ही स्वीकार कर लिया। इतनेमें विल्कुल शामका वक्त हो गया। रम्भावतीके पास वादशाहका सन्देशा आया कि, हुजूर

याद कर रहे हैं। इससे उसने भी, इसी बहाने, सैयदुल्लाखाँको शीघ्र बिदा किया।

आजके सारे दिनमें सैयदुल्लाखाँका जो कार्य हुआ, उससे उसको कोई सन्तोष न हुआ। अतएव पिछली बातोंपर विचार करते हुए वह वहासे चल दिया। अपने विचारमें वह उस समय बिलकुल ही तल्लीन हो गया था। बाहर आते ही वह अपने मियानेमें प्रविष्ट हुआ, और जैसीकि उस समय चाल थी, भीतर पड़ी हुई गद्दीपर पैर फैलाकर, तकिये-से सिर टेककर: पड रहा। वह अपने विचारोंमें निमग्न था, सो ऊपर बतला ही चुके हैं।

उस समय, आजकलकी तरह मार्गपर जगह-जगह लालटेनें इत्यादि लगाकर रातको रोशनी करनेकी प्रणाली बिलकुल नहीं थी। सब बड़-बड़े लोग उस समय, अपनी हैसियतके अनुसार दो-चार, दस-पन्द्रह मशालची अपने घरोंमें नौकर रखा करते थे। वे लोग रातको अपने मालिकके साथ मशालें जलाकर रोशनी करते हुए चलते थे। तदनुसार सैयदुल्लाखा भी जब उस दिन बादशाहके महलोंसे अपने मियानेपर बैठकर निकले, तब पीछे दो मशालें चल रही थीं। इतनेमें क्या चमत्कार हुआ, सो देखिये। मियानेके आगेका मशालची कुछ अन्तरपर था, पीछेका भी किसी तरह घिसलता आता था। ठीक मियानेके पास मशाल नहीं चाहिये, ऐसी सैयदुल्लाखाकी ताकीद थी। अस्तु। इस प्रकार, जबकि सवारी चली जारही थी, मार्गमें एक जगह ऐसा दिखाई दिया कि, बड़ा कोलाहल मच रहा है—लोग अपनी-अपनी चिल्ला रहे हैं। आगे जानेके लिये मार्ग ही न था। इससे स्वाभाविक ही मशालची और सब नौकर-चाकर लोग ठहर गये। कहार भी वहीं ठहर गये। उस ठहर-नेसे खानके मियानेको, और साथ ही साथ उसके विचारोंको भी, स्वाभाविक ही धक्का लगा। इससे खासाहबको गुस्सा आना भी स्वाभाविक ही था। फिर क्या पूछना है? उन कहारोंको मशालचियोंको और दुनियाके सभी लोगोंको गालियाँ सुनाते सुनाते खाँसाहबकी सवारी चढ-फड़ाते हुये उठी, और दरवाजेसे बाहरकी ओर, क्या मामला है, सो

देखने लगी। देखते क्या हैं कि, दो मुसल्मान एक गौको खींच रहे हैं। मुसल्मानोंके शरीरसे कुछ-कुछ रक्त भी बह रहा है। पास ही एक काला-कलूटा आदमी, जो बहुत ही क्रुद्ध हो रहा है, तलवार उठाये हुए उस गौको छुड़ाने और मुसल्मानोंको भगानेके लिये उपद्रव मचा रहा है। वह आदमी अपनी छोटीसी तलवार उठाये हुए, गौको खींच ले जानेवाले मुसल्मानोंकी ओर उसको दिखला रहा था। इतनेमें वहाँ और भी बहुत से लोग जमा हो गये। उनमें जो हिन्दू थे वे तो गौको छुड़ाने और जो मुसल्मान थे, वे गौकी गर्दन काटनेके लिये दंगा-फिसाद करने लगे। बस, उसी समय हमारे खासाहब वहाँसे निकल पढे। अब हिन्दूलोग एक प्रकारसे जीत चुके थे; और उस गौको छुडा ले जानेहीवाले थे। मुसल्मान लोग हट चुके थे। यह हाल देखकर खाँसाहबको स्वाभाविक ही बहुत बुरा लगा। हिन्दुओंकी किसी प्रकारसे भी जीत हो जाना उन्हें कभी अच्छा नहीं लगता था। इसलिये सैयदुल्लाखाने ज्यों ही यह सब हाल देखा, त्यों ही हिन्दुओंके भीतर पैठकर तथा अपनी धाक दिखलाकर मुसल्मानोंकी ही जीत करा देनेके लिए वह नीचे उतर पड़ा। और अब उस दंगेमें शामिल होकर वह कुछ करनेही वाला था कि, उस काले-कलूटे आदमीकी ओर उसका ध्यान गया, और दोनोंकी चार आखें होते ही—उस काले मनुष्यकी आखें सैयदुल्लाखाकी आखोंसे मिलते ही—ऐसा जान पडा कि, सैयदुल्लाखाका अबतकका सारा जोश काफूर हो गया, वह घबड़ासा गया; और मानो यह बात उसके मनमें आई कि, हमने अपने मियानेसे बाहर आकर अच्छा नहीं किया। चाहे इसी कारणसे हो—और चाहे, उसके मनमें यह बात आई हो कि, जिस आदमीको हम देख रहे हैं, वह अचानक कहाँसे आ गया—अथवा कोई भी कारण हो, वह कुछ घबडाकर और कुछ आश्चर्य करके, वहाँसे चल देनेका विचार, अवश्य करने लगा—इसमें सन्देह नहीं। सैयदुल्ला-खा ज्यों-ज्यों इस प्रकारका डरपोंकपन दिखलाने लगा, त्यों-त्यों उस काले-कलूटे आदमीकी आखें और भी अधिकाधिक सुर्ख होती गईं; और अन्तमें वे इतनी विस्तृत हो गईं कि, उस समय उसकी ओर यदि

कोई अच्छी तरह नजर भरकर देखता—और उस भीड़में यदि कोई देखता होता—तो उसे ऐसा ही जान पड़ता कि, मानो वह अब उसको अपनी उन आँखोंके रास्ते निगल ही जायगा, अथवा वह अपने नेत्रोंके तेजसे मानो उसको भस्म ही कर डालेगा! उस समय एक दूसरेको देखकर, सैयदुल्लाखा और उस व्यक्तिकी जो दशा हुई, सो वर्णन नहीं की जा सकती। वह व्यक्ति अपने हाथकी तलवारको और भी मजबूतीके साथ पकड़ने लगा और अन्तमें उसका वह हाथ ऊपर ही ऊपर उठता गया। और उस हाथके नीचे आनेकी दिशा सैयदुल्लाखाकी ओरको है—ऐसा उसने समझा, और बस उसके पैरोंकी दिशा मियानेकी ओरको हुई!

सैयदुल्लाखाके कदम ज्यों-ज्यों मियानेकी ओर बढ़ने लगे, त्यों-त्यों उस काले-कलूटे आदमीकी आँखें और भी अधिक सुर्ख दिखाई देने लगीं। इसके सिवाय उसका हाथ भी मानो आगे बढ़ने लगा, और उसके कदम भी। ऐसा जान पड़ा, मानो उस झुण्डमें सैयदुल्लाखाके अतिरिक्त और कोई उसे दिखाई ही नहीं पड़ता था। जिस गौको छुड़ानेके लिये वह इतनी देरसे प्रयत्न कर रहा था, वह गौ भी मानो अब उसे दिखाई न पड़ने लगी। इसके सिवाय अब वह गौ बिलकुल हिन्दुओंके ही हाथमें आ गई थी, अतएव अब उसके विषयमें कोई विशेष चिन्ता करनेकी आवश्यकता भी नहीं रही थी। वह गौ आज केवल उसीके प्रयत्न और परिश्रमसे छुटी थी। हमने ऊपर बतलाया ही है कि, सैयदुल्लाखाने ज्यों ही यह देखा कि, मुसल्मानोंके हाथसे निकल कर वह गौ हिन्दुओंके हाथमें चली गई, त्यों ही वह अपने मियानेसे नीचे उतर पड़ा। उस समय हिन्दुओंने समझा कि, अब यह दुष्ट अवश्य ही इस गौको हमारे हाथमें न रहने देगा। क्योंकि सैयदुल्लाखाँ अपने पराक्रम और शूरवीरताके कारण तो नहीं, किन्तु अपनी धमकीसे एक प्रकारसे उन लोगोंके लिये हौवासा ही बन रहा था, और उसको देखकर लोग आतंकमें आ जाते थे। परन्तु उस समय जब उन लोगोंने देखा कि, एक ऐसे वीर पुरुषका उनको सहारा है कि, जो उसके उस हौवेसे बिल्कुल नहीं डर रहा है, और सैयदुल्लाखाँ अब कुछ भी दस्त-

न्दाजी न करते हुए स्वयं ही पीछे भग रहा है, तब उनको भी एक प्रकारका जोश आ गया। इधर मुसल्मान लोग पहले ही पीछे हटने लगे थे, पर सैयदुल्लाखाँको आया हुआ देखकर वे फिर एकत्र होकर कुछ करनेवाले थे, इतनेमें उन्होंने यह भी देखा कि, अब सैयदुल्लाखाँ स्वयं ही मियानेकी ओर हट रहा है। इस कारण वे जहाके तहाँ ही रह गये। इतनेमें सैयदुल्लाखाँ तुरन्त जाकर अपने मियानेमें घुस गया; और पीछेकी ओर लेट रहा। यह देखते ही वह काला-कलूटा आदमी एकदम आगे बढ़ा; और मियानेके अन्दर अपना सिर डालकर—"याद रख! तेरा दुश्मन अभी मरा नहीं; और दो महीनेके अन्दर ही वह तुझे जहन्नुमको पहुँचा देगा। देख, मेरी ओर देख ले।" ये शब्द उसने बिलकुल धीरेसे कहे; परन्तु वे मानो सैयदुल्लाखाके कानोमें खौलते हुये तेलकी तरह ही प्रविष्ट हुए। वे शब्द उसने इस प्रकार कहे थे कि उसके अतिरिक्त और कोई उन्हें सुन नहीं सका। इतने शब्द कहनेके बाद उसने एक बार फिर अपने उन्हीं रक्तके सदृश लाल नेत्रोंको फाड़कर उसकी ओर देखा; और अपना सिर मियानेके बाहर निकाल लिया। इसके बाद फिर कहारोंकी ओर देखकर—"चलो, बढ़ाओ सालो, यहाँ क्यों खड़ा किया है?" कहा; और पीछेके कहारोंके कन्धोंपर एक-एक चपत लगाई। कुछ देर बाद कहार भी मशालचीके पीछे-पीछे चलते बने। और वह काला कलूटा आदमी जाने कहाँका कहाँ वहीं अन्धकारमें गायब हो गया।

सैंतीसवां परिच्छेद।

नाना साहब

इधर हमारी बागी-मण्डलीने यह प्रतिज्ञा की थी कि, तीन महीनेके अन्दर सुल्तानगढका किला हमारे हाथमें आ जाना चाहिये। इसलिये अब वे उसके लिये सभी आवश्यक प्रयत्नोंका विचार करने लगे। हथियार-बथियार तो आज कितने ही दिनोंसे शिवाजी जमा कर रहे थे।

पाठकोंको यह मालूम ही है कि, हनुमानजीके मन्दिरके नीचे तहखानेमें जो भवानी माताका मन्दिर था, उसमें शस्त्रास्त्रका सग्रह बहुत काफी था। सब प्रकारके हथियार वहाँ काफी तायदादमें मौजूद थे। हथियारोंकी तरह खजाने की भी कमी न थी। शिवाजीके पूर्वगुरु दादाजी कोंडदेवने इस विषयमें उन्हें बहुत कुछ समझाया, पर उन्होंने इनकी भी परवाह न की, और अपने साथियों सहित बीजापुर राज्यके कुछ मुसल्मान जागीरदारों तथा उन मराठोंके गावोंपर, जो कि मुसल्मानोंके गुलाम बन रहे थे, छापा मारकर बहुतसा लूटका माल वहा पिटारोंमें भर भरकर रख छोड़ा था। मतलब यह कि उस समय शिवाजीको अस्त्र-शस्त्र और द्रव्यकी बिलकुल कमी नहीं थी। इसके सिवाय उनके काममें शूरवीर पुरुषोंकी आवश्यकता थी, सो वे भी अबतक उनकी मण्डलीमें काफी तायदादमें शामिल हो चुके थे। सब तैयारी पूरी हो चुकी थी। सिर्फ मौका आनेभरकी देर थी।

इसके सिवाय इस प्रकारके राजनैतिक उद्देश्योंके सिद्ध करनेमें जिस चातुर्यकी आवश्यकता होती है, सो उनमें खुद ही मौजूद था। रह गया चारों ओरसे समाचार मँगानेका प्रबन्ध—सो भी उन्होंने बहुत अच्छा जमा लिया था। खबरें मँगानेमें श्रीधर स्वामी कितने चतुर थे, सो पाठकोंको मालूम ही है। वे मुख्य-मुख्य जगहोंकी सब खबरें सदैव लिया करते थे। शिवाजी तथा उनके सभी साथियोंने यह पक्का निश्चय कर लिया था, कि शरीर रहे, चाहे जाय, हम धर्मस्थापना और गौ-ब्राह्मणोंको यवनोंके कष्टसे छुड़ानेका कार्य करके ही रहेंगे। उनका यह निश्चय केवल छोटे-छोटे छापे मारने अथवा बटमारोंकी तरह मुसल्मानोंको लुटनेहीभरके लिये न था, किन्तु मराठाराज्यकी—हिन्दूपदबादशाहीकी—स्थापना करनेके लिये ही यह निश्चय किया था। शिवाजीने लड़कपनसे ही महाभारतकी अनेक आख्यायिकाएँ सुन रखी थीं, अतएव उनको यह विश्वास था कि, जिस प्रकार परमात्माने पाण्डवोंकी सहायता करके उनके द्वारा दुर्योधनादि अन्यायी तथा दुष्ट लोगोंसे इस पृथ्वीका उद्धार किया उसी प्रकार ईश्वर इस समय हमारी भी सहायता

करेगा; और यवनोंके द्वारा जो प्रजा पीड़ित हो रही है; उसको मुक्त करेगा। इसके सिवाय उनको यह भी भरोसा था कि, श्रीधर स्वामीके द्वारा हमारे ऊपर जिस एक महात्मा (श्रीरामदास स्वामी) का कृपा-प्रसाद हुआ है, उससे भी हमको इस काममें पूरी सफलता मिलेगी। भवानी माताकी कृपापर तो उनका पूरा विश्वास था ही। चूंकि इस प्रकार उनके मनको कई भारी भारी विश्वास थे, और स्वयं अपने स्वभावसे भी वे अत्यन्त दृढ़प्रतिज्ञ एवं शूर-वीर थे, अतएव सदैव उनको यह विश्वास रहता था कि, जो काम हम उठावेंगे, वह बातकी बातमें पूरा होना ही चाहिये। दक्षिणकी अपनी जागीरकी ओरसे जिस प्रकार वे सब तरहकी खबरें मँगानेमें दक्ष थे, उसी प्रकार स्वयं बीजापुरकी भी सब छोटी-बड़ी खबरें मँगानेका उन्होंने प्रबन्ध कर रखा था। बीजापुरमें तो सारी बात ही थी। क्योंकि पिता राजा शहाजीभोसले बीजापुरके ही एक बड़े सरदार थे; और बादशाहका उनपर प्रेम भी बहुत था। उन्होंने राजा शहाजीसे कई बार कहा था किन्तु शिवबाको दरबारमें लाकर हमारे सिपुर्द कर दो, हम उसको अपने यहाँ रखकर अच्छे-अच्छे ओहदे देंगे। परन्तु जब राजा शहाजी अपने पुत्रसे बीजापुर चलने, अथवा बीजापुरमें रहते समय दरबारमें चलनेका जिक्र करते, तब वह बहुत ही असन्तोष प्रकट करता था,। लड़कपनमें कई बार राजाशहाजी शिवबाको दरबारमें ले गये थे, पर उस समय भी वह बड़ी उद्दण्डताका बर्ताव करता रहा, बादशाहको सलाम ही न करता, और अपने पिताके पास आकर बैठ जाता! यह देखकर राजा शहाजीने भी फिर उससे वैसा आग्रह करना छोड दिया, और उसको अपनी जागीरकी ओर भेज दिया, तथा स्वयं बादशाहकी आज्ञासे दक्षिणकी चढाइयोंपर चले गये। ये सब बातें इतिहासप्रिय पाठकोंको मालूम ही हैं, अतएव यहाँपर फिरसे उनका विस्तार करनेकी आवश्यकता नहीं। मतलब यह कि, शिवबाके मनमें यवनद्वेष लड़कपनसे ही बढ रहा था; और इधर कुछ दिनोंसे स्वराज्य-स्थापनाकी भी उनमें प्रबल इच्छा उत्पन्न हो चुकी थी। अब केवल उन बातोंको कार्यरूपमें परिणत करनेकी आवश्यकता थी। इसके

सिवाय पिछले परिच्छेदोंमें जो वृत्तान्त बतलाया गया, उससे पाठकोंको यह भी मालूम हो चुका है कि, अब इन लोगोंको किसी किलेके हस्तगत करनेकी अत्यन्त आवश्यकता थी, इसके बिना उनका अगला कार्यक्रम सुचारू रूपसे चल नहीं सकता था। जिस दिन श्रीधर स्वामीकी सम्मति-में सुलतानगढ़के किलेको तीन महीनेके अन्दर जीतनेकी प्रतिज्ञा की, उस दिनसे लगभग आठ दिन बाद एक घटना हुई, जिसका कि हम जिक्र करनेवाले हैं। शिवबा, नानासाहब, तानाजी, स्वामीजी इत्यादि, सभी लोग अपने सदैवके जगलमें उसी नियत स्थानपर, विचार कर रहे हैं। अभी एक घड़ी पहले ही बीजापुरसे एक जासूसने आकर यह खबर दी है कि, रणदुल्लाखाँपर बादशाह आजकल बहुत ही नाराज हैं, और सुलतानगढके किलेदारको खूब कष्ट देते हुए जेलमें डाल देनेका हुक्म हो चुका है। रणदुल्लाखाँपर बादशाहके नाराज होनेका कारण यह है कि, रंगराव अप्पाकी उसने तरफदारी की, और सुलतानगढमें आते समय एक अत्यन्त तरुण मराठे सरदारको पकड़ लाया, और बादशाह-को इसकी खबर नहीं दी। बस, इसी कारण वह उसपर बहुत ज्यादा नाराज हो गया है। यह सब समाचार सुनकर नानासाहबको स्वाभाविक ही बहुत दुःख हुआ, और अन्य लोगोंको भी चिन्ता उत्पन्न हुई। उप-युक्त समाचार जिस समय आया, लोग बड़ी चिन्तामें थे। नानासाहब तो शोकसे बिलकुल व्याकुल हो रहे थे। फिर जब यह समाचार सुना, तब तो उनको एक प्रकारसे यही विश्वास हो गया कि, अब हमारे पिताके कुशलपर्वक छुटनेकी कोई आशा नहीं। और ऐसी दशामें यदि हमारी मण्डली सुलतानगढपर धावा भी करेगी, तो कोई अच्छा परिणाम न होगा। इसलिए यह बात उनमेंसे प्रत्येक व्यक्तिके मनमें आ रही थी कि, अब कोई अच्छी युक्ति सोचनी चाहिये, और इसलिए सभी अपने अपने मनमें यही सोच रहे थे कि अब आगे क्या करना चाहिये। श्रीधर स्वामी तो अपने विचारोंमें इतने निमग्न दिखाई दे रहे थे कि, अपने विचारोंके अतिरिक्त और कुछ उन्हें दिखाई ही नहीं दे रहा था। किंबहुना यह भी कहा जा सकता है कि, अन्य लोगोंकी अपेक्षा उन्हें

और भी कोई खबर मालूम थी; जो कि उन्होंने दूसरे लोगोंको बतलाई ही नहीं थी। जो कुछ भी हो, इसमें कोई सन्देह नहीं कि, उस समय उपर्युक्त समाचार पाकर सभीके चित्त बड़े चिन्तित हो रहे थे। अबतक किसीको कोई नवीन विचार नहीं सूझा था कि, इतनेमें नानासाहब जोरसे कहते हैं, "आप सबकी और स्वामी महाराजकी यदि अनुमति हो, तो मैं बीजापुरको जाऊँ; और वहाँका क्या हालचाल है, सो सब सच्चा-सच्चा मालूम कर लाऊँ। यदि मौका मिल जायगा, तो पिताजीको छुड़ा भी लाऊँगा—हाय! हाय! इसी महीने-डेढ महीनेके अन्दर, देखिये तो, मेरे और सूर्याजीके कुटुम्बकी क्या दशा हो गई! उनके सारे कुटुम्बका तो सत्यानाश ही हो गया! सोई मेरे कुटुम्बकी भी दशा समझिये। मेरी दशा यहाँ पर यह हो रही है! खैर, मैं तो आप लोगोंकी सेवामें रहकर देश और धर्मरक्षाका कुछ कार्य करूँगा ही, पर पिताजीकी क्या दशा होगी? और स्त्रीका तो फिर कुछ समाचार ही नहीं मिला। न जाने वह कहाँ गई! कैसे गई! किसके हाथमें पड़ गई! इसलिये राजासाहब, स्वामीमहाराज, आप अब मुझे जाने दीजिये। कमसे कम पिताजीको मैं छुड़ा लाऊँ, अथवा यह शरीर ही उनके कार्यमें लगा दूँ। इन दुष्टोंने उनका इतना अपमान किया है कि, उनको यदि हम छुड़ा लावेंगे, तो वे अवश्य हमारे अनुकूल हो जायँगे, और जहाँ वे एक बार हमारे अनुकूल हो गये कि, फिर बातकी बातमें अपने कार्यको आगे बढ़ा सकेंगे। इसके अतिरिक्त—हाँ, यह बात सही है कि, यद्यपि मैं उस दरबारमें बहुत बार नहीं गया हूँ, फिर भी यदि मैं वहाँ जाऊँगा तो बहुत सी नवीन बातें मालूम होंगी, और भी कई प्रकारसे अवश्य लाभ होगा। आपकी आज्ञाको हम टाल नहीं सकते; और न आपके बिना पूछे कोई बात ही कर सकते हैं, परन्तु मेरे मनमें यह निश्चय हो गया है कि, मैं एक बार बीजापुर हो आऊँ; और पिताजीको छुड़ा लाऊँ, अथवा इस काममें अपने प्राण ही दे दूँ......"

नानासाहब बोलते-बोलते बड़े आवेशमें आ गये थे। अपना सारा हृदय मानो उन्होंने अपने शब्दोंमें निकालकर रख दिया था। वे इतनी

सिवाय पिछले परिच्छेदोंमें जो वृत्तान्त बतलाया गया, उससे पाठकोंको यह भी मालूम हो चुका है कि, अब इन लोगोंको किसी किलेके हस्तगत करनेकी अत्यन्त आवश्यकता थी, इसके बिना उनका अगला कार्यक्रम सुचारू रूपसे चल नहीं सकता था। जिस दिन श्रीधर स्वामीकी सम्मतिसे सुल्तानगढके किलेको तीन महीनेके अन्दर जीतनेकी प्रतिज्ञा की, उस दिनसे लगभग आठ दिन बाद एक घटना हुई, जिसका कि हम जिक्र करनेवाले हैं। शिवबा, नानासाहब, तानाजी, स्वामीजी इत्यादि, सभी लोग अपने सदैवके जंगलमें उसी नियत स्थानपर, विचार कर रहे हैं। अभी एक घड़ी पहले ही बीजापुरसे एक जासूसने आकर यह खबर दी है कि, रणदुल्लाखाँपर बादशाह आजकल बहुत ही नाराज हैं, और सुलतानगढ़के किलेदारको खूब कष्ट देते हुए जेलमें डाल देनेका हुक्म हो चुका है। रणदुल्लाखाँपर बादशाहके नाराज होनेका कारण यह है कि, रगराव अप्पाकी उसने तरफदारी की, और सुलतानगढसे आते समय एक अत्यन्त तरुण मराठे सरदारको पकड़ लाया, और बादशाहको इसकी खबर नहीं दी। बस, इसी कारण वह उसपर बहुत ज्यादा नाराज हो गया है। यह सब समाचार सुनकर नानासाहबको स्वाभाविक ही बहुत दुःख हुआ, और अन्य लोगोंको भी चिन्ता उत्पन्न हुई। उपर्युक्त समाचार जिस समय आया, लोग बडी चिन्तामें थे। नानासाहब तो शोकसे बिल्कुल व्याकुल हो रहे थे। फिर जब यह समाचार सुना, तब तो उनको एक प्रकारसे यही विश्वास हो गया कि, अब हमारे पिताके कुशलपर्वक छुटनेकी कोई आशा नहीं। और ऐसी दशामें यदि हमारी मण्डली सुल्तानगढपर धावा भी करेगी, तो कोई अच्छा परिणाम न होगा। इसलिए यह बात उनमेंसे प्रत्येक व्यक्तिके मनमें आ रही थी कि, अब कोई अच्छी युक्ति सोचनी चाहिये, और इसलिए सभी अपने अपने मनमें यही सोच रहे थे कि, अब आगे क्या करना चाहिये। श्रीधर स्वामी तो अपने विचारोंमें इतने निमग्न दिखाई दे रहे थे कि, अपने विचारोंके अतिरिक्त और कुछ उन्हें दिखाई ही नहीं दे रहा था। किंबहुना यह भी कहा जा सकता है कि, अन्य लोगोंकी अपेक्षा उन्हें

ही वातकी वातमें काम निकल गया। और अव जो कार्य करना है, सो स्वयं उनकी राजधानीमें ही—उनकी आखोंके सामने—करना है। और फिर उसमें भी हमारे तीन ही आदमी जाकर वह काम करेंगे। दंगे-धोपेसे यह काम नहीं निकल सकेगा—इसके लिए तो उनकी आँखोंमें ही धूल झोंकनी पड़ेगी; और वड़ी चतुराईसे काम करना होगा। इसके सिवाय और कोई रास्ता ही नहीं। इसलिए पहले इस वातका कुछ विचार करना चाहिए कि, ये लोग जाकर वहाँ किस-किस प्रकारसे रहकर क्या-क्या वर्ताव करेंगे? फिर वहाँ जानेपर जैसा मौका देखेंगे, वैसा तो इनको करना ही होगा, इसमे सन्देह नहीं। लेकिन पहले हम लोगोंको भी तो कोई मार्ग निश्चित कर लेना चाहिए; और तदनुसार सव वातें सोचकर इनको वहाँ मेजना चाहिए। कार्य तो होगा ही; और हम उसे पूरा करेंगे; और जैसा कि हम चाहते हैं, उसी प्रकारकी सफलता भी प्राप्त होगी, इसमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं। किन्तु माता जगदम्बाके आज्ञानुसार हमको सावधानी अवश्य रखनी चाहिये, ऐसा ही उपदेश आपका भी है।"

उपर्युक्त सारे कथनका प्रत्येक शब्द शिववाके मुखसे इतनी शांतिके साथ निकल रहा था, मानो प्रत्येक शब्दके वाहर निकलते समय वोलने-वालेका मन किसी अत्यन्त गूढ़ विचारमें निमग्न हो रहा हो। ऐसा जान पड़ता था कि, जिस वातके विषयमें विचार करनेके लिये वे उस समय कह रहे थे, उसी वातका विचार वे स्वयं भी, उपर्युक्त भाषण करते-करते ही, कर रहे थे—यही नहीं, वल्कि ऐसा भी जान पड़ता था कि, उनके मनमें इस वातके विषयमें करीव-करीव कोई निश्चय भी हो चुका होगा कि, इनको जाकर वहाँ क्या-क्या करना चाहिये, और कैसा मौका आवे, तव इनको क्या करनेके लिए हम क्या क्या वतावें, इत्यादि। अस्तु। भाषण समाप्त होते होते ऐसा भी जान पडा कि, उनके मनमें, उक्त सम्वन्धमें कोई निश्चय पूरा हो चुका है।

परन्तु उपर्युक्त भाषणके समाप्त हो जानेके वाद भी वे वहुत देरतक विल्कुल चुप वैठे रहे। मानो, जो विचार उनके मनमें निश्चित

देर बोलते रहे, परन्तु ऐसा जान पडता था कि, उनका प्रत्येक शब्द अपने साथ उनके हृदयका एक-एक टुकडा लेकर ही बाहर निकल रहा है। शिवबा और स्वामीजीने उनका सारा कथन बड़ी शान्तिके साथ सुना, और फिर बहुत देरतक वे मन ही मन कुछ विचार करते रहे। अन्तमें स्वामीजी शिवबाकी ओर देखकर कहते हैं, "इस समय हम लोगोंमेंसे यदि कोई बीजापुर जावे, तो कोई हानि तो नहीं है, बल्कि लाभ ही होगा। केवल अपने जासूसोंपर ही अवलम्बित रहना ठीक न होगा। किन्तु अकेले नानासाहबको ही जाने देना भी उचित नहीं है। इस समय तानाजी और येसाजी ही यमाजीके साथ भेष बदलकर जावें। रंगराव अप्पाको छुडानेका भी प्रयत्न करना चाहिये, परन्तु बड़ी साव-धानीके साथ। उनके समान अनुभवी सरदार यदि हम लोगोके अनुकूल हो जायगा, तो निस्सन्देह हम लोगोंको अपने कार्यमें बड़ी मदद मिलेगी।" स्वामी महाराजका यह कथन शिवबाने शान्तिके साथ सुना, और फिर वे बहुत देरतक अपने मन ही मन विचार करते रहे। परन्तु अन्तमें जब स्वामीजीने कहा कि, शिवबा, यह समय बहुत देरतक सोचने-विचारनेका नहीं है। जो कुछ करना हो, शीघ्रतापूर्वक करना चाहिए।" तब शिवबा ने एक विचारपूर्ण नजरसे स्वामीकी ओर देखते हुए कहा, "स्वामी महाराज, मैं आपके विचारके बाहर कदापि नहीं जा सकता। नाना-साहब जैसा कि कहते हैं, तदनुसार उनका बीजापुर जाना और अपने पिताजीको मुक्त कराना अत्यन्त आवश्यक है। यह भी आपका कथन सत्य है कि, इस समय उनको अकेले जाने देना भी ठीक न होगा। हम लोगोंमेंसे किसीको उनके साथ अवश्य जाना चाहिये। इसके सिवाय, जिन लोगोंका अभी आपने नाम लिया, वही लोग उनके साथ जावें, तभी ठीक भी होगा। ये लोग यहाँसे जावें, और कपट-भेषसे अज्ञात-वासमें रहें। परन्तु इनमें कोई ऐसा भी आदमी चाहिए जो कि, बीजापुर से पूरी पूरी जानकारी रखता हो, और दरबारकी गुप्तसे गुप्त बातको भी जान सके। ये लोग पुरन्दरसे आपको उन चाण्डालोंके हाथसे छुडा लाये सही, पर यह इलाका अपने हाथका था। इसलिए मामुली युक्तिमे

ही वातकी वातमें काम निकल गया। और अब जो कार्य करना है, सो स्वयं उनकी राजधानीमें ही—उनकी आखोंके सामने—करना है! और फिर उसमें भी हमारे तीन ही आदमी जाकर वह काम करेंगे। दंगे-धोपेसे यह काम नहीं निकल सकेगा—इसके लिए तो उनकी आँखोंमें ही धूल झोंकनी पड़ेगी; और बड़ी चतुराईसे काम करना होगा। इसके सिवाय और कोई रास्ता ही नहीं। इसलिए पहले इस वातका कुछ विचार करना चाहिए कि, ये लोग जाकर वहाँ किस-किस प्रकारसे रहकर क्या-क्या वर्ताव करेंगे? फिर वहाँ जानेपर जैसा मौका देखेंगे, वैसा तो इनको करना ही होगा, इसमें सन्देह नहीं। लेकिन पहले हम लोगोंको भी तो कोई मार्ग निश्चित कर लेना चाहिए; और तदनुसार सब वातें सोचकर इनको वहाँ भेजना चाहिए। कार्य तो होगा ही; और हम उसे पूरा करेंगे; और जैसा कि हम चाहते हैं, उसी प्रकारकी सफलता भी प्राप्त होगी, इसमें अणुमात्र भी सन्देह नहीं। किन्तु माता जगदम्बाके आज्ञानुसार हमको सावधानी अवश्य रखनी चाहिये, ऐसा ही उपदेश आपका भी है।"

उपर्युक्त सारे कथनका प्रत्येक शब्द शिववाके मुखसे इतनी शांतिके साथ निकल रहा था, मानो प्रत्येक शब्दके बाहर निकलते समय बोलने-वालेका मन किसी अत्यन्त गूढ़ विचारमें निमग्न हो रहा हो। ऐसा जान पड़ता था कि, जिस वातके विषयमें विचार करनेके लिये वे उस समय कह रहे थे, उसी बातका विचार वे स्वयं भी, उपर्युक्त भाषण करते-करते ही, कर रहे थे—यही नहीं, वल्कि ऐसा भी जान पड़ता था कि, उनके मनमें इस बातके विषयमें करीब-करीब कोई निश्चय भी हो चुका होगा कि, इनको जाकर वहाँ क्या-क्या करना चाहिये, और कैसा मौका आवे, तब इनको क्या करनेके लिए हम क्या क्या वतावे, इत्यादि। अस्तु। भाषण समाप्त होते होते ऐसा भी जान पड़ा कि, उनके मनमें, उक्त सम्बन्धमें कोई निश्चय पूरा हो चुका है।

परन्तु उपर्युक्त भाषणके समाप्त हो जानेके वाद भी वे बहुत देरतक विल्कुल चुप बैठे रहे। मानो, जो विचार उनके मनमें निश्चित

हुआ था, उसको वे और पक्का कर रहे हों। इस बीचमें अन्य लोग बिलकुल स्तब्ध रूपसे और ऐसी दृष्टिसे कि जिसमें पूज्यभाव पूर्ण रूपसे भरा हुआ है, उनकी ओर देख रहे थे। स्वामी महाराजके नेत्रोंमें भी एक प्रकारका पूज्यभावयुक्त प्रेम चमक रहा था। अन्तमें स्वामीजीको एक ओर लेजाकर उन्होंने अपना वह सारा विचार बतलाया, जो अभी निश्चित किया था दोनोंमें कुछ देरतक आपसमें कुछ चर्चा भी होती रही। इसके बाद फिर उन दोनोंने नानासाहब और तानाजीको एक ओर बुलाया, और उनके मनमें अपना वह विचार पूर्ण रूपमे बैठा दिया। तत्पश्चात् दूसरे ही दिन वे तीनों आदमी, जोकि निश्चित किये गये थे, बीजापुरको चल दिये।

अड़तीसवां परिच्छेद।

साईंजी।

एक दिन ठीक सन्ध्या समय रम्भावती अपने महलकी खिडकीमें अकेली ही बैठी हुई थी। बादशाह शिकारके निमित्त, बीजापुरसे दस-पाच मीलपर, एक खास जगलमें गया था, और इसीसे इस समय उसको भी थोड़ासा एकात मिल गया था। उसकी चेष्टा बिलकुल खिन्नसी दिखाई देरही थी। उसके आसपास और कोई भी न था। उसने जान-बूझकर सबको वहाँसे हटा दिया था। उस समय ऐसा जान पडता था कि, वह किसीकी प्रतीक्षामें है। क्योंकि खिडकीमे वह बडी उत्सुकताके साथ देख रही थी। अब इतना उजेला भी नहीं रह गया था कि, दूरसे आनेवाला आदमी ठीक पहचाना जा सके, क्योंकि क्षण क्षणपर अन्धकार अपना प्रभाव जमाता जा रहा था। परन्तु फिर भी वह अपने सुन्दर और विशाल नेत्रोंको बार-बार आकुंचित करके दूरतक नजर डालती, और जब उसे उसकी अभीष्ट स्त्री आती हुई, दिखाई न देती, तब निराशसी होकर एक ओर बैठ रहती। दस-पाच बार उसने ऐसा किया, परन्तु फिर वह बिलकुल निराशसी हो गई, और "न जाने निगोड़ी कब-

आवेगी ! कहकर वहीं एक ओर पड़ी हुई एक छोटीसी कोचपर जा बैठी। उसने अपने बायें हाथकी हथेलीपर अपना कपोल रख लिया था; और दूसरे हाथसे, उस सुनहरी कोचपर खड़े हुए एक तकियेकी कमखाब की झालरसे खेल रही थी। दो-तीन बार वह वहाँसे उठी; और खिड़की-में जा जाकर उसने अपने नेत्रोंको पूर्णतया आकुंचित करके ध्यानपूर्वक दृष्टि डाली, पर फिर भी कोई आशा नहीं। इस प्रकार ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, उसकी चित्तवृत्ति अधिकाधिक आतुर होती गई। अन्तमें जब बाहर अन्धकारने अपना पूर्ण साम्राज्य कर लिया, और कुछ दिखाई ही न देने लगा, तब उसने खिड़कीमें खड़े होनेकी धुन भी छोड़ दी। और फिर वह अपनी उसी कोचपर आ बैठी। इतनेमें चिराग लगानेके लिये दासियाँ आईं, परन्तु उसने उनको हुक्म दे दिया कि, आज चिराग ही न लगाया जाय। दासियोंने समझा कि, शायद बादशाहके वियोगके कारण उसकी ऐसी दशा हो रही होगी, और उनमेंसे जो एक कुछ ढीठ थी, उसने कह भी डाला, "अजी आते होंगे सरकार भी, इतनी उदासीनता क्यों?" रम्भावतीको उसका यह कथन केवल विषकी ही भाँति लगा, पर उसने यह बात प्रकट नहीं होने दी; और झूठा ही क्रोध दिखलाकर तथा उसमें कुछ मुस्कुराहटकी झलक लाकर केवल इतना ही कहा, "अरी, जा निगोड़ी, क्या बकती है? मुरही कहीं की!" उसने उस दासीसे इतना कह दिया अवश्य, पर उसके दिलपर उस समय क्या बीती होगी, सो वही जाने! अस्तु। जब यह सख्त हुक्म हो गया कि, आज दीपक न लगाये जायँ, तब दासियाँ भी वहाँसे चली गईं। इसके बाद फिर रम्भावतीकी अशान्ति और भी अधिक बढ़ने लगी। वह बार बार उठती और खिड़कीतक जाती। बागके दीपक, जो उस समय मशालची लगा रहा था, अब दिखाई देने लगे थे। वह अपने उस भारी दीवानखानेमें इधरसे उधर चक्कर लगाती। फिर कोचपर बैठ जाती, लेट रहती; और फिर उठती। उसका मन जितना अस्वस्थ हो रहा था, उतना ही उसका शरीर भी अस्वस्थ हो रहा था। कुछ देर बाद वह आप ही आप कहती है, "इस निगोड़ीको भेजे पहर-डेढ़, पहर

हो गया, पर अभीतक नहीं आई, न जाने क्या हुआ ? आजके समान फिर कभी मौका नहीं मिलेगा। लेकिन, मैंने जो देखा, सो सच था, अथवा मुझे ऐसा भास ही हुआ ? यह भास नही हुआ। सचमुच ही वही मूर्ति है ! ऐ दुष्ट सैयदुल्ला, तूने मेरे जन्मका तो सत्यानाश कर ही दिया। और तेरे कलेजेको चूसनेके लिये कोई रहा ही नहीं, ऐसा समझकर मैं स्वयं ही कुछ करनेवाली थी, पर नहीं, अब ऐसा करनेकी कोई जरूरत नहीं—जिनके हाथसे ऐसा होना चाहिये, उन्हीकी हाथसे अब यह काम होगा, और जब मैं उसको सुनूँगी, तब मुझे बड़ा ही सन्तोष होगा। यह राई अभीतक न जाने क्या कर रही है, आई क्यों नहीं ? इसीका मुझे बड़ा अचम्भा है • •••"

इस प्रकार रम्भावती अपने ही आप कहती हुई, और लम्बी-लम्बी साँसें छोड़ती हुई बैठी थी कि, इतनेमें उसके दीवानखानेका दरवाजा किसीने भेड़ा। इसपर तुरन्त ही वह कहती है, "कौन है ? राई ? आ गई ? क्या खबर लाई ? वही मूर्ति तो है ? बतला, बतला ?" परन्तु राईकी ओरसे कोई उत्तर तो मिला नहीं—हॉ, ऐसा मालूम हुआ कि, कोई दरवाजा भेडकर और साकल लगाकर भीतर आया, और आगे बढ़ा। दीवानखानेमें दीपक तो था ही नहीं, अतएव रम्भावती पहचान नहीं सकी कि, यह कौन व्यक्ति है। हॉ, इतना अवश्य उसे मालूम हुआ कि, यह कोई पुरुष है, जो मेरी ओर आ रहा है। क्योंकि जो स्त्री उसकी ओर आ रही थी, वह बिलकुल सफेद वस्त्र पहने थी, और डील-डौलमें ऊँची थी। इसके सिवाय जब वह बिल्कुल सामने ही आ गई, तब खिड़कीके मार्गसे बागके एक दीपकका थोड़ासा उजेला भी, उसके चेहरेपर तो नहीं, किन्तु उसके शरीरपर पड़ा। उसे देखते ही रम्भावती घबड़ाई, और एकदम "चिराग ! चिराग ! चिराग तो लाओ ! अरे यह कौन " कहकर चिल्लाई, पर आगन्तुकने बीचहीमे "चुप, चुप" कहकर उसके कोमल मुखपर हाथ मारकर मुँह दाबा, और फिर जोरसे कहा, "चुप, चुप। बोलना नही। चिल्लाने-विल्लानेसे कोई लाभ न होगा।" रम्भावती उस समय इतनी घबड़ा गई कि, उसका सारा शरीर

थर-थर काँपने लगा। उसके मुँहसे एक शब्द भी न निकलने लगा—हाँ; उसकी आँखें, अवश्य ही, उसके मनमें न होते हुए भी, उस आगन्तुककी ओर देखने लगीं। उसने धीरेसे उसके मुखपरसे हाथ उठाया; और कुछ देरतक चुप खड़ा रहा। फिर उससे कहता है, "बोल, मैं कौन हूँ? तूने मुझे पहचाना?"

रम्भावती थर-थर काँपती हुई बड़े कष्टसे उत्तर देती है, "हाँ!"

"मैं तुझे मार डालनेके लिये आया हूँ। आज अभी, इसी जगह, तेरा सिर काट डालूँगा; और तब यहाँसे टलूँगा। मुझे यहाँ आनेमें क्या-क्या कष्ट भोगने पड़े; और यहाँ आनेपर तुझको इस भोगविलासमें देखकर मेरे मनको जो यातनाएँ हो रही हैं, उनकी यदि तुझे कुछ भी कल्पना होती, तो तूने आज मेरे देखते ही देखते प्राण दे दिये होते—नहीं, तू कभी जिन्दा रह ही नहीं सकती थी। अरी दुष्टे, चाण्डालिन!......"

आगे उसके मुँहसे एक अक्षर भी नहीं निकल सका। वह कुछ देर चुप खड़ा रहा। इसके बाद फिर कहता है, "क्यों? अब बोलती क्यों नहीं? बोल। अन्तमें जो कुछ कहना हो, कह ले। मैं आज तेरे प्राण लिये बिना यहाँसे जाऊँगा नहीं। ऐसे ऐश-आराममें तुझे देख रहा हूँ—इससे अधिक और कौन पाप हो सकता है?"

रम्भावती ये सब बातें सुन रही थी, और उनमेंसे प्रत्येक शब्दके साथ, मानो उसे थोड़ा थोड़ासा धैर्य भी हो रहा था। होते-होते अन्तमें यहाँतक नौबत आई कि, वह अपने मनकी बात कहनेको तैयार हुई। और कुछ देर, मानो सोचकर वह इस प्रकार कहती है, "आपके हाथसे मैं मरूँ—इससे अधिक और मुझे क्या चाहिये? उन दुष्टोंने मुझसे यही आकर कहा कि, उन्होंने आपको इस ससारमें नहीं रखा। इस प्रकार जब मैंने समझा कि, मेरा भाग्य अब बिलकुल फूट गया, तब मैंने प्रतिज्ञा की कि, कभी न कभी उस दुष्टके कलेजेका खून मैं अवश्य निकालूँगी—पूरा-पूरा बदला लूँगी। अपने पासका चित्र मैं उसके रक्तसे सानूँगी, और उसी दिन बस, अपना भी अन्त कर लूँगी। उस

प्रतिज्ञाको सत्य करनेका अब कोई काम ही नहीं। निकालिये वह अपनी तलवार—और लीजिये, मेरी गर्दनके दो टुकड़े कर दीजिये। इस पापिनको स्वप्नमें भी यह न मालूम था कि, इन हाथोंसे इसके टुकड़े-टुकड़े होनेका पुण्य इसको बदा है · " इतना कहते-कहते उसका कण्ठ एकदम भर आया, और जैसे वायुके झोंकेसे कोई रम्भाका स्तम्भ एकदम भहरा गिरे, उसी प्रकार "करो, सचमुच ही अब मेरे दो टुकड़े करो" कहते हुए धड़ामसे वह उस व्यक्तिके चरणोंपर गिर पड़ी।

यह देखते ही वह व्यक्ति—वह पुरुष—मानो अत्यन्त चकितसा हुआ। वह जिस खयालसे, और जिस उद्देश्यसे यहाँ आया था, वह खयाल मानो बिल्कुल भ्रमपूर्ण निकला, और वह उद्देश्य अब वह पूरा करे अथवा नहीं, इस विषयमें भी अब उसका मन द्विधामें पड गया। उस समय वह खुद ही यह नहीं सोच सका कि, यह जो मेरे चरणोंपर पड़ी हुई है, इसको उठावें, अथवा इसी जगह, जहाँ पड़ी हुई है, इसके शरीरके दो टुकडे कर दें। कई बार उसका हाथ तलवारकी ओर गया। कई बार वह पीछे हटा, और इस विचारसे कि, उस सुन्दरीको उठाकर होशमें लावे, आगे बढा। इस प्रकार जब कि उसके मनकी द्विधास्थिति हो रही थी, उसे ऐसा भास हुआ कि, जैसे कोई दरवाजेपर थाप मारता हो। अब वह दरवाजा खोले या क्या करे, सो कुछ उसको समझमें न आया। दरवाजा यदि नहीं खोलता, तो एकदम गड़बड़ मचेगा, और यदि खोलता है, तो न जाने कौन आ जाय, और वह जब यह सब हाल देखेगा, तो न जाने क्या करेगा, और क्या नहीं। अब इसकी गर्दन काटकर यहांसे निकल जाना भी सम्भव नहीं। इसके सिवाय, अन्तमें इसने जो कुछ कहा, उसके कारण अब इसकी गर्दन काटनेमें भी हमारा हाथ उठेगा, अथवा नहीं, इसमें भी शंका है। इस प्रकार परस्पर-विरुद्ध अनेक विचार उसके मनमें आने लगे, और उसकी एक बड़ी विचित्र दशा हो गई। उधर बाहरसे दरवाजा खटखटानेका सिलसिला जारी ही था। अन्तमें उस सुन्दर स्त्रीके प्राण लेनेमें उसका हाथ नहीं उठा; और उसने सोचा कि, अब इसको तो ऐसा ही छोड़कर हमें दरवाजा

खोलना चाहिये; और बाहरका आदमी जब भीतर आने लगे, तब पहले चुपकेसे किवाडकी ओटमें खडे होकर, बादको फिर एकदम निकल जाना चाहिये। यह सोचकर वह दरवाजेके पास गया; और उसे खोलकर धीरेसे वह एक किवाड़की ओटमें खड़ा हो गया। इधर दरवाजा खुलते ही एक स्त्री यह कहती हुई, "बाईसाहबा, चिराग, वगैरह बिल्कुल नहीं, यह क्या बात है? मैं पता लगा आई" भीतर आई। वह अभी भीतर आई ही थी कि, इतनेमें किवाड़की ओटमें छिपा हुआ मनुष्य एकदम झपटकर बाहर निकल गया; और मोड़परसे घूमता हुआ जीनेसे नीचे उतरने लगा। उस समय वह बहुत ही धीरे-धीरे उतर रहा था। उसका सारा शरीर अब पूरा-पूरा उजेलेमें था। उसके सारे कपड़े बिल्कुल सफेद थे; और उसकी दाढ़ी भी छातीतक लटकती हुई बिल्कुल उसके कपड़ोंकी ही तरह सफेद थी। बीच बीचमें वह ठिठककर खड़ा भी हो जाता था, कभी खाँसता भी था—जैसे बुढापेके मारे बिल्कुल जर्जर हो गया हो। जगह-जगह खड़े हुए नौकर-चाकर उसको झुक झुककर सलाम करते जाते थे। उनको वह अपना हाथ—जिस हाथमें कि, वह स्फटिक मणियोंकी जयमाला लिये हुए था—उठा उठाकर शुद्ध अरबी भाषामें कुछ आशीर्वाद भी देता जाता था। इस प्रकार धीरे-धीरे वह बागके अगले दरवाजेके पास पहुँचा। वहाँपर पहरेदारोंने पूछा, "साईंजी, आप बहुत जल्दी लौट पड़े!" इसपर उसने शुद्ध उर्दू भाषामें केवल इतना ही कहा, "बेगमसाहबाको कुरानका कुछ हिस्सा सुनानेको था, सो काजीसाहबकी आज्ञासे सुना आया, अब वापस जाता हूँ।" इस प्रकार कहकर खाँसते हुए, उनके सलाम करनेपर, आशीर्वाद दिया; और वहीं जो उसका मियाना लगा हुआ था, उसपर बैठकर वह वहासे चलता बना। मियानेको एक मसजिदके पास छोडकर मियानेवाले कहारोंके कानमें कुछ कहा, तथा मसजिदके एक द्वारसे भीतर जाकर दूसरे द्वारसे सवारी निकल गई; और फिर बस्तीके बाहर एक पुराने मकानमें चली गई।

इधर रम्भावती अपने महलमें जब कि बेहोश पड़ी हुई थी, एक

होगा। वह इस समय उसके अन्तःपुरमें आई थी। उसने सोचा था कि, मेरी मालकिन अब बहुत ही उत्सुक होरही होगी, और जब उसको जाकर वह सब हाल मैं बतलाऊँगी, तब उसे कुछ धीरज होगा। बस, इसी प्रकारके विचारोंमें वह उस समय निमग्न थी। इतनेमें उसने आकर दरवाजा खुलवाया, और इसी कारण उसे इस बातकी शंका भी न हुई कि, यह दरवाजा वास्तवमें मेरी मालकिनने ही खोला, अथवा और किसी व्यक्तिने। मालकिनके उदास होने और अपने रंगमहलमें दीपक भी न लगाने देनेका कारण उसे मालूम था; अतएव इस बातका उसे कोई आश्चर्य भी नहीं हुआ। क्योंकि वह जानती ही थी कि, आज वह हमारा रास्ता देखती हुई अकेली रहेगी। इसलिये भीतर आकर पहले उसने अपनी मालकिनको तीन-चार बार पुकारा; पर उसकी ओरसे जब कोई उत्तर नहीं मिला, तब वह कुछ शंकित होकर वैसी ही आगे बढ़ी। इतनेमें उसके पैरमें कुछ लगा। झुककर उसने देखा, तो रम्भावती बेहोश पड़ी है। उसे ऐसी हालतमें देखकर वह भौंचकीसी रह गई, और एकदम "चिराग लाओ, चिराग लाओ" कहकर चिल्लायी। दरवाजा आधासा खुला था ही। चारों ओर शोर मच गया; और दसपाँच दासियाँ तुरन्त ही हाथोंमें दीपक लिये हुए आ पहुँचीं। देखती हैं, तो रम्भावती बाई बिलकुल बेहोश अस्तव्यस्त पड़ी हुई है।

"आज बादशाहकी सवारी जबसे गई, तभीसे इनकी यह दशा हो रही है।" "सन्ध्यासे ही न जाने इनकी क्या हालत हो रही है।" "इनकी तबीयत शामसे ही मैं ऐसी देख रहू ँ।" इत्यादि इत्यादि बातें कहकर सब दासियाँ आपसमें बड़-बड़ाने लगीं। सभी अपनी अपनी बुद्धिके अनुसार बाई साहबको होशमें लानेका उपाय सुझाने लगीं। पर प्रत्यक्ष कोई भी कुछ न करती थी। कई दासियाँ तो इसी चिन्तामें थीं कि अब बादशाहकी सवारी लौटकर आती ही होगी, अब हमारी सबकी फजीहत होगी। हाँ, उनमें एक राई ही ऐसी थी कि, जो अपनी मालकिनको होशमें लानेके लिये सब प्रकारका प्रयत्न कर रही थी। और कुछ ही देर बाद उसका वह प्रयत्न सफल भी हुआ। रम्भावती होशमें आई; और—

'क्यों, मेरे प्राण क्यों नहीं लेते ? आपके हाथसे यदि मैं मरूँगी, तो अवश्य ही इस पापसे मेरा छुटकारा हो जायगा"—इस प्रकारके शब्द, जो वहाँ एकत्रित उन सब दासियोंके लिये, केवल अर्थशून्य ही थे, उसके मुखसे निकले। शायद उसने समझा कि, जिस समय वह बेहोश हुई थी, उस समय जो कुछ हो रहा था, और जो स्त्री उस समय उसके सामने खड़ी थी—वही अब भी हो रहा है, और वही स्त्री अब भी उसके सामने खड़ी है तथा उसीसे वह बातचीत कर रही है! परन्तु जब उसने देखा कि, दासियोंका एका बड़ा झुण्ड उसके आसपास खड़ा है, और उनमेंसे कई एक दीपक भी लिये हैं, तब वह बहुत घबडासी गई, और देखकर कहती है, "क्या मुझे बिना मारे ही चले गये ? अथवा उन्हें कोई पकड़ ले गया ?" इतना कहकर वह फिर आसपास पागलकी भाँति देखने लगी। राईने सोचा कि, इनको इस प्रकार बडबडाने देना ठीक नहीं है, शायद और कोई बातें बाहर निकल पड़ें, और उस हालतमें बड़ा अनर्थ भी हो सकता है। बस, यही सब सोचकर वह अपनी मालकिनसे तुरन्त ही बोली, "बाई साहबा, बाई साहबा! तुमको क्या हो गया है ? क्या कोई स्वप्न हो पड़ा ? इस प्रकार बड़बड़ाओ मत। ये देखो, सब दासियाँ घबड़ाई हुई खड़ी हैं। चलो, अपने पलँगपर चलकर पड़ो!" यह कहकर राईने उसे जबरदस्ती उठाया, और उठाते उठाते उसके कानमें धीरेसे उसने कुछ कहा भी। इससे रम्भावती बिलकुल सचेत होकर उठ पड़ी, और खुद ही अपने पलँगकी ओर चल दी! फिर उसने सिर्फ एक दीपक रखवाकर सबको चले जानेकी आज्ञा दी। आज्ञा पाते ही सब दासियाँ वहाँसे चली गईं। सिर्फ राईभर उसकी खिदमतमें रह गई।

इस प्रकार जब चारों ओर बिलकुल सन्नाटा हो गया, तब रम्भावती, जो कि राईके आनेके लिए अत्यन्त आतुर हो रही थी, उठकर पलँगपर बैठी, और उससे बोली, "बतला, तू क्या पता लगा लाई ? परन्तु अब तो पता लगानेकी आवश्यकता ही नहीं रही! अभी वे स्वयं यहाँ आये थे, और मेरे सब पापोंका अनायास ही प्रायश्चित होनेवाला

था, पर क्या कहूँ, हतभागिन मैं! मेरा भाग्य ही उतना अच्छा नहीं। मैंने अपनी गर्दन उनके चरणोंपर रख दी; पर फिर भी मेरे प्राण न लेते हुए वे यहाँसे चले गये। कहाँ रहते हैं, क्या करते हैं, क्या कुछ पता लगा तुझको? लगा हो, तो बतला।"

"वे यहाँ आये थे" ये शब्द सुनते ही राईके आस्चर्यका ठिकाना न रहा। इन शब्दोंका अर्थ ही उसकी समझमें न आया। वह तुरन्त ही बोली, "क्या वे यहाँ आये थे? बाई साहबा, तुम स्वप्नमें तो नहीं हो? अनेकों पहरोंसे, सैकड़ों जमादारोंके बीचसे, गुजरते हुए क्या कोई भी इस अन्त.पुरमें आ सकता है? बाहरके दरवाजेका पहरेदार भी यदि भीतर जाना चाहे, तो उसका भी तो साहस नहीं हो सकता—फिर बिल्कुल अपरिचित व्यक्तिका यहाँ गुजारा कहाँ? तुम सचमुच ही किसी भ्रान्तिमें हो!"

राईका यह कथन सुनकर, उस चेहरेपर, जो कि पहलेहीसे खिन्न हो रहा था, कुछ मुस्कुराहटकी झलक दिखाई दी, और वह एकदम बोली, "राई, तेरी ही तरह मैं भी अचम्भेमें हूँ कि, यहाँतक उनका आना हुआ तो कैसे? पर यहाँ वे आये अवश्य। मुझसे बातचीत भी हुई। मेरी गर्दन उड़ा देनेकी बात निकाली। मैंने कहा, जरूर उड़ा दीजिये, आप जीवित हैं, तो मुझे अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेकी कोई आवश्यकता ही नहीं रही। इसके सिवाय, अपनी प्रतिज्ञा भी मैंने उनको बतला दी। अपनी गर्दन भी मैंने उनके चरणोंपर रख दी। ये सब बातें हुईं इसमें कुछ भी शंका नहीं। तूने क्या किया, सो तो बतला।"

"किन्तु बाई साहबा, तुम कहती हो कि, वे यहाँ आये थे, यह कैसे हुआ?"

"चाहे जैसे हुआ हो! जो कुछ हुआ, सो तो मैंने तुझे बतलाया। तूने क्या पता लगाया, सो बतला।"

उन्तालीसवां परिच्छेद

भूतोंकी हवेली में

अब रम्भावती और उसकी दासीको हम स्वच्छन्द होकर अपनी बातें करने दें, अथवा उसकी दासी जो कुछ पता लगा लाई हो, सो उसको बतलाने दें, हम पाठकोंके साथ चलकर अब उन साईं जीका हालचाल देखें।

पिछले परिच्छेदमें हमने बतलाया था कि, साईं जी एक मसजिदके सामने अपना मियाना छोड़कर एक दरवाजेसे भीतर घुसे, और दूसरेसे एक ओर निकल गये। इसके बाद फिर वे वस्तीके बाहर जाकर एक पुरानी, गिरी हुई, हवेलीमें गये। इधर मियानेवाले कहार भी न जाने कहाँके कहाँ चले गये? साईंजीने उस हवेलीके अन्दर कदम रखते ही, उसका दरवाजा खूब मजबूतीके साथ लगा लिया, और अपनी दाढी और मूछें तथा सारी पोशाक निकालकर एक ओर रख दी, और वहीं एक दालानमें इधरसे उधर घूमने लगे। साईंजीका साईंपन अब न जाने कहाँ चला गया? उनकी चेष्टा अब बिलकुल बदल गई। वह अत्यत खिन्न-सी दिखाई दी—ऐसा जान पड़ता था कि, इस समय उनके मनमें कोई विलक्षण ही विचार आ रहे हैं। कई बार इधरसे उधर जब वे अनेक चक्कर लगा चुके, तब अचानक एक बार वे ठहरसे गये, और आप ही आप गुनगुनाकर इस प्रकार कहने लगे, "देखो तो, हाथ ही न चला, और उसने जो उद्‌गार अपने मुखसे निकाले, उनके कारण तो मेरा हाथ बिलकुल बेकारसा ही हो गया। क्या कहा जाय! इन उद्‌गारोंका अर्थ क्या है? क्या वह उसका बदला लेना चाहती है? क्या सचमुच ही, जैसा कि वह कहती थी, उसने बदला लेनेकी प्रतिज्ञा की होगी? अवश्य की होगी। क्योंकि इसके बिना—और जब कि अचानक में उसके आगे पहुँचा—कदापि उसके मुँहसे उद्‌गार निकल नहीं सकते थे। इसके सिवाय यह भी जान पडता है कि, उसे यह कल्पना भी नहीं थी कि, मैं जीवित हूँ। मुझको एकाएक देखते ही, वह उस

खेदमें आश्चर्यचकित भी अवश्य हुई! और फिर जब उसके मनमें यह बात आई कि, अब उसके द्वारा प्रतिज्ञा पूर्ण होनेकी कोई आवश्यकता नहीं; किन्तु उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये उससे भी अधिक सुयोग्य व्यक्ति मौजूद है, तब उसके मनमें कुछ सन्तोषकेसे भाव भी दिखाई दिये। इधर मेरा मन भी अब मुझसे यही कह रहा है कि, जो कुछ बात हुई, वह उसकी लाचारीमें ही हुई है। उससे निकल जाना उसके लिए बिल्कुल असम्भव था, परन्तु फिर भी यह उसने अवश्य ही सोच लिया कि, जिस व्यक्तिके कारण उसके ऊपर ऐसा मौका आया, उसके कलेजेका खून चूसना उसके लिये आवश्यक है। अपनी गर्दन उड़ानेके लिये भी उसने मुझसे कहा; और यह बात बिल्कुल उसने अपने हृदयसे ही कही, इसमें मुझे अणुमात्र भी शंका नहीं? उसने यह भी कहा कि, हमारी गर्दन उड़ा दो, तो मैं सब पापोंमें मुक्त हो जाऊँगी। उसका यह कथन भी कुछ झूठ नहीं था। मैं समझता हूँ कि······"

इस प्रकार उस व्यक्तिके मनमें नाना प्रकारके विचार आ रहे थे। इसके सिवाय, ऊपर जो विचार बतलाये गये, उनमेंसे अन्तिम विचार जब उसके मनमें आने लगे, तब ऐसा जान पड़ता कि, जैसे उसका मन और भी अधिकाधिक क्षुब्ध हो रहा हो। उस हवेलीमें वह बिल्कुल अकेला था, और जिस समयका वर्णन हम लिख रहे हैं, उस समय तो उस दालानमें एक टिमटिमाते हुए छोटेसे दीपकके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं था, अतएव वह स्थान बहुत ही भयानकसा दिखाई दे रहा था। इसके अतिरिक्त उस हवेलीके आसपास मनुष्यबस्तीका कहीं नाम निशान भी नहीं था, अतएव उसकी भयानकता उस समय और भी अधिक बढ़ रही थी। उस भयानक मकानमें यदि उस समय किसीने इस अकेले पुरुषको घूमता हुआ देखा होता, उसे ऐसा ही भास होता कि, जैसे, कोई ब्रह्मराक्षस घूम रहा हो, अथवा कोई भूत इधरसे उधर चक्कर काट रहा हो। इसके सिवाय उस मकानके विषयमें यदि उसको पहलेकी भी कुछ जानकारी होती, तो निस्सन्देह उसे यही मालूम होता कि, सचमुच ही, भूतोंकी हवेली, इसका नाम बिल्कुल सार्थक है। रात-

के समय तो कोई भी उसके आसपास आनेका साहस नहीं करता था। इस कारण उसके विषयमें कभी कोई यह जॉच भी नही करता था कि, इस मकानमें कोई रहता भी है, अथवा नहीं। हमारे उस साईका भेष धारण करनेवाले व्यक्तिको अपना कोई गुप्त उद्देश्य सिद्ध करना था; और उसको सिद्ध करनेके लिये साधारणतया उसने देखा कि, यह मकान उसके लिये बहुत सुविधाजनक होगा, और इसी कारण वह इस मकानमें आकर रहा था। उसको जो कुछ उद्देश्य सिद्ध करना था, उसकी तैयारीमें दिनभर वह चाहे जहाँ घूमता, पर रातको फिर उसी शान्त स्थानमे आकर दिनभरकी बातोंपर विचार किया करता। बस, यही उसका सिलसिला जारी था। उसके इस क्रममें कभी व्यत्यय नही हुआ। अस्तु।

जैसा कि हमने ऊपर बतलाया, वह मनुष्य अपने ही आप विचार करता हुआ, इस प्रकार चक्कर काट रहा था कि, इतनेमें एकाएक उसे भास हुआ कि, किसीने उस मकानके दरवाजेपर थाप मारी। इतनी रातमें अचानक तो कोई कभी नहीं आया, और आज ही आकर यह किसने दरवाजा खटखटाया? आज हमने जो स्वाग रचा था, और बहुत दिनका अपना उद्देश्य सिद्ध करनेके लिये बड़ी खूबीके साथ जो प्रयत्न किया, तथा अपने उद्देश्यको कुछ-कुछ सिद्ध भी किया, कमसे कम एक विचित्र साहसका काम करके ऐसे विचित्र स्थानमे प्रवेश भी किया—अब यह सारा भण्डा फूटनेकी नौबत तो नहीं आयेगी? यह सोचकर स्वाभाविक ही उसका हाथ अपने हथियारकी ओर मुड़ा। इसके बाद वह फिर आहट लेने लगा, तो उसे पहलेसे भी अधिक दरवाजा खटखटानेका शब्द सुनाई दिया। इसलिये अब वह मन ही मन यह सोचने लगा कि, दरवाजा खोलूँ अथवा न खोलूँ। उधर दरवाजा खटखटानेका सिलसिला जारी ही था। बहुत देरतक इसने उस ओर ध्यान नहीं दिया। परन्तु बाहर जो लोग थे, वे भी काफी हठी दिखाई दिये, क्योंकि उन्होंने इतने जोर जोरसे दरवाजेको ठेलना शुरू किया कि, भीतरके मनुष्यने समझा कि, जैसे वे दरवाजा तोड़कर भीतर घुस

ही आवेंगे। इसलिये अन्तमें उस मनुष्यने सोचा कि, अब दरवाजा खोले बिना काम नहीं चलेगा, और यह सोचकर वह दरवाजा खोलनेके लिये गया। अपनी तलवारको उसने सम्हालकर पकड़ ही लिया था। दरवाजेके पास पहुँचकर एक बार फिर भी उसके मनमें यही विचार आया कि, दरवाजा खोलें या नहीं। इसके बाद फिर इस आशयके कुछ शब्द गुनगुनाता हुआ कि, देखो, हम ऐसे घरमें आकर रहे कि, जहाँ भूलकर भी किसीने आनेकी सम्भावना नहीं, फिर भी लोग मेरे मनको अशान्त करनेके लिये आ ही जाते हैं। इतना गुनगुनाकर, फिर मानो लाचारसा होकर उसने दरवाजेका बेंड़ा एक ओरको हटाया। अब वह मन ही मन इस बातपर बहुत डरा कि, देखें, अब हमारे ऊपर क्या विघ्न आते हैं। परन्तु ज्यों ही उसने दरवाजेका बेंड़ा हटाया, त्यों ही बाहरके लोगोंने और भी जोर जोरसे दरवाजेमें धक्का लगाना शुरू किया। इस कारण उसने बहुत जल्द दरवाजा खोल दिया, और एकदम उन लोगोंकी ओर जाकर डाँटके साथ पूछा, "कौन है? क्या है? क्यों आये हो?" उत्तर मिला—"कोई नहीं, हम चार आदमी, गरीब मुसाफिर हैं, अभी बाहरसे आ रहे हैं। कहीं उतरनेको जगह नहीं मिली। और यह भी शंका है कि, कोई जगह देगा अथवा नहीं, क्योंकि किसीसे पहचान नहीं। इसके सिवाय, यह मौका भी दूसरा है। इसीलिये आपको कष्ट दिया। रास्तेमें एक गाँवमें हमको लोगोंने बतलाया कि बस्तीकी दक्षिण ओर एक पुरानीसी हवेली है। वहाँ चले जाओगे, तो रातभर गुजारा हो जायगा। उन्होंने बतलाया कि, जिनके घर-द्वार नहीं होता, ऐसे साधू बैरागी इसी हवेलीमें आकर उतर पड़ते हैं। सो हम भी चले आये। आप रहते ही हैं, हमको भी ठहर जाने देंगे, तो बड़ी कृपा होगी।" यह सुनते ही, ऐसा जान पड़ा कि, उस भीतरवाले मनुष्यके मनपर कोई विलक्षण प्रभाव पड़ा। ऐसा प्रभाव उसके मनपर क्यों पड़ा, सो कुछ कहा नहीं जा सकता। जो मेहमान उसके सामने उस समय उपस्थित थे, उनके बोलने-चालनेमें अथवा और किसी बात में, उसने ऐसा ही कुछ देखा कि, जिससे शायद उसके मनमें कुछ

भ्रमसा उत्पन्न हो गया। कह नहीं सकते, क्या बात थी? उस समय चारों ओर अन्धकार छाया हुआ था। अतएव आस-पास घनी झाड़ीके अतिरिक्त और कुछ भी दृष्टिगोचर नहीं हो रहा था। और यह एक प्रकारसे अच्छा ही था, क्योंकि उस हवेलीमें अबतक जो व्यक्ति रहता था, उसकी यह अणुमात्र भी इच्छा न थी कि, उसको कोई जाने, अथवा उसके हृदयकी बात जरा भी किसीपर प्रकट हो। और विशेषतः इस समय, उसके हृदयके विचारोंके कारण, उसके चेहरेपर जो भाव-परिवर्तन हो रहे थे, वे उन लोगोंकी दृष्टिमें न पड़ने पावें, यह उसकी उत्कट इच्छा थी। अस्तु। अब क्षणभरके लिये उसके मनमें यह विचार आया कि, इन लोगोंको भीतर आने दें अथवा नहीं, फिर शायद उसने यह समझा कि, रातका समय है, और ऐसे मौकेपर यदि हम इन-कार करेंगे, तो उचित न होगा—अथवा शायद उसने यह भी खयाल किया हो कि, यदि हम इनकार भी करेंगे, तो भी कोई लाभ न होगा, क्योंकि बाहर जो लोग खड़े थे, उनके हाथमें—उस अन्धेरी रातमें भी—उनके अस्त्र-शस्त्र कुछ चमक रहे थे। जो कुछ भी हो, उस मनुष्यको उन मुसाफिरोंको रोकनेका साहस नहीं हुआ, और उसने उनको भीतर आनेके लिये कहा। उसके कहते ही वे लोग इस धड़ल्लेके साथ भीतर घुसे कि, जैसे उनको किसीकी परवाह ही न हो। चारों आदमी जब भीतर आ गये, तब उस पहले व्यक्तिने फिर भीतरसे दरवाजा बन्द कर लिया। इसके बाद फिर वह यह विचार करता हुआ उनके पीछे-पीछे भीतर आया कि, अब जिस तरहसे हो, इनको सुबह तो यहाँसे भगाना होगा। इधर ये लोग भीतर आकर उस टिमटिमाते हुए दीपककी ही ओर गये। उनका उधर जाना था कि, उनमेंसे जो मनुष्य सबसे आगे था, उसके चेहरेपर उस टिमटिमाते हुए दीपककी एक किरण पड़ी। सयोगवश हमारे पहले महाशयकी दृष्टि भी उसी समय उसके चेहरेपर पड़ी, और कह नहीं सकते, क्या कारण हुआ ऐसा जान पड़ा कि, वह पुरुष उसके चेहरेको देखते ही कुछ चकितसा हुआ। "यह क्या बात है?" इतना ही उद्गार उसकी जिह्वापर आकर

बिल्कुल बाहर निकलनेहीवाला था कि, उसने उसे बड़ी खूबीके साथ जहाँका तहाँ रोक लिया। और अपनेको जहाँतक हो सका, अंधेरे ही में रखकर उसने उन लोगोंसे बोलनेका मौका बिल्कुल टालनेकी कोशिश की। वे लोग भी उससे बोलनेको बहुत आतुर नहीं दिखाई दिये। उन्होंने अपनी अपनी कमलियाँ नीचे बिछा दीं; और एकने जब पानीके लिए पूछा तब उसे कुआ बतला दिया गया, जिससे वह पानी भर लाया, और फिर जो कुछ थोड़ा-बहुत उनके पास था, सबने मिलकर खाया-पिया। इसके बाद एक आदमी पहरा देनेके लिये जागता रहा; और बाकी तीनोंने तुरन्त ही निद्रादेवीका आश्रय लिया। हमारा पहला महाशय इतनी देर बिल्कुल स्तब्ध था। वह सिर्फ उनका चमत्कार देख-भर रहा था। वह मुँहसे एक अक्षर भी नहीं बोला, और न अपना चेहरा उजेलेकी ओर ले गया। हाँ, उसके मनमें जो विचार आ रहे थे, वे उसने जैसेके तैसे जारी रखे। इस प्रकार होते-होते आधी रात बीत गई; उसे क्षणभरकी भी निद्रा नहीं आई। यही नहीं, बल्कि निद्राकी कोई सम्भावना भी दिखाई नहीं दी। उन आगत चार आदमियोंमेंसे, ऐसा जान पड़ता था, कि तीन आदमी निद्रामें बिल्कुल ही निमग्न हैं। हाँ, चौथा आदमी, जो कि पहरा देनेके लिये रह गया था, अब इस बातके लिये कुछ आकुलसा दिखाई दिया कि, इन तीनोंमेंसे कोई शीघ्र ही उठे, तो अच्छा हो, जिससे मेरा छुटकारा हो, और मैं भी थोड़ीसी नींद लेऊँ; परन्तु, इतना होनेपर भी, वह अपने पहरेमें जरा भी गफलत नहीं होने दे रहा था। यह स्पष्ट था। वह बराबर अपने अस्त्र-शस्त्र लिये हुए बिल्कुल तैनात था। जरा कहीं हमारे उस पहले महाशयने कुछ खटपट की, अथवा कहीं कुछ थोड़ीसी भी हलचल दिखलाई कि, वह तुरन्त ही चौकन्ना हो जाता; और उस महाशयकी ओर देखने लगता। इसी प्रकार कुछ समय व्यतीत हुआ, तब मानो उसपर दया करके ही दूसरा एक आदमी जाग पड़ा; और उठकर बैठ गया। फिर पहरा देने-वाले पुरुषसे कहता है; 'तान…" परन्तु यह शब्द उसने पूरा उच्चारण नहीं किया; और तुरन्त ही अपनी जीभ दांतोंतले दबाई; और फिर "तुम

अब सोओ। मैं जबतक और कोई न उठेगा, पहरा दूँगा," कहकर सोनेके लिये आग्रह करने लगा। वह आदमी सोनेके लिये आतुर हो ही रहा था, सो पाठकोंको मालूम है। इसलिये उसने अपने साथीका आग्रह तुरन्त ही स्वीकार कर लिया, इसमें कोई आश्चर्य नहीं ? उसका साथी जगने लगा, और वह सो गया। इतनेमें करीब-करीब दो बजनेका वक्त हुआ। अब हमारा पहलेका, उस हवेलीका असली महाशय, कुछ अधिक आतुर होता हुआसा दिखाई दिया। क्योंकि उसने आवाजसे तुरन्त ही जान लिया कि, हवेलीमें आते समय पहलेपहल जिस व्यक्तिके चेहरेपर उस क्षीणप्रकाशक दीपककी झलक पड़ी थी, वही व्यक्ति अब जाग रहा है। इसके सिवाय, अब यह भी जान पड़ने लगा कि, उससे कुछ बात-चीत करनेके लिये उसकी बड़ी उत्कट इच्छा हो रही है। परन्तु उसका दूसरा साथी जबतक प्रगाढ निद्रामें निमग्न न हो जाय, तबतकके लिये उसने अपनी उक्त इच्छाको बिलकुल दबा रखा। थोड़ी ही देरमें, जब उसने देखा कि, अब उसका साथी खूब गहरी नींदमें सो गया, तब वह अपनी जगहपरसे उठा, और बहुत धीरे-धीरे कदम रखता हुआ उस जगते हुए पुरुषके बिलकुल पास पहुँच गया। उसके आनेकी आहट पाते ही "कौन है ?" कहकर वह पुरुष चिल्लाया। परन्तु उस महाशयने तुरन्त ही उसके कन्धेपर हाथ रखकर कहा, "दोस्त, दोस्त,—दुश्मन नहीं।" फिर इसके बाद बिलकुल धीरेसे उसके कानमे कहा, "देखो, तुम मुझे नहीं पहचानोगे, लेकिन मैं तुमको अच्छी तरह पहचानता हूँ, और तुम जिस कामके लिये यहाँ आये हो, सो भी मैं कुछ कुछ जानता हूँ। तुम्हारी तरह मैं भी किसी कामहीके लिये आया हूं। और लोगोंको अभी उठाओ नहीं। तुम जरा बाहर चलो। मैं तुमको कुछ बतलाऊँगा।"

जिस समय वह यह सब कह रहा था, हमारे पहरा देनेवाले व्यक्तिकी कुछ विचित्रसी दशा हो रही थी। वह सोच रहा था कि यह आदमी, जो हमसे बात करता है, है कौन ? यह हमको पहचानता कहाँ-से है ? बिलकुल परिचित व्यक्तिकी तरह बात करना चाहता है—यह मामला क्या है ? इस प्रकार एकके बाद एक अनेक प्रश्न उसके मनमे

उठने लगे। यह जैसा कि कहता है, तदनुसार सचमुच ही हमारा दोस्त है या दुश्मन है? हमसे कहता है कि, बाहर चलो, सो अब बाहर जाकर इसकी बातें सुनें या नहीं? अथवा बाहर ले जाकर हमको दगा तो न देगा? यह मकान किसका है? हम कहा आ गये? यह कौन है? इत्यादि अनेक प्रश्न, क्रमशः उसके मनमें उपस्थित होने लगे, जिसके कारण उसका मन बिलकुल ही घबड़ा गया। यह देखकर उस हवेलीका वह पहला महाशय कहता है, "मेरे विषयमें आप कोई शंका न करें। मैं सचमुच ही आपका दोस्त हूँ। इससे अधिक और इस समय मैं कुछ नहीं बतला सकता। आप इतना तो अवश्य ध्यानमें रखें कि, आप मुझे चाहे अपना दोस्त समझें अथवा न समझें, आप मुझपर विश्वास करें, चाहे न करें; मैं आपके काममें जो कुछ सहायता कर सकूंगा, उसके करनेमें कोई त्रुटि न करूंगा। फिर जैसी आपकी मर्जी।" ये शब्द उसने अत्यन्त दृढ़ निश्चयके साथ उच्चारण किये, और उस दूसरे व्यक्तिके मनपर उनका प्रभाव भी तुरन्त ही पड़ा। उसपर उसका विश्वास हुआ; और वह तुरन्त ही अपनी जगहसे उठकर उसकी ओर देखते हुए कहता है, "जो कुछ बतलाना हो, यही बतलाइये न! बाहर जानेकी क्या आवश्यकता है?"

"बाहर जानेकी कोई बहुत आवश्यकता तो नहीं है। परन्तु यहाँ यदि बातचीत करेंगे, तो आपके साथी शायद जाग पड़ेंगे, और फिर जिन बातोंके आज ही उनको मालूम होनेकी कोई आवश्यकता नहीं, वे उन्हें मालूम हो जायँगी।"

इतनी बातचीत होनेके बाद वह पुरुष उठा, और फिर दोनों बाहर चले गये। अभी उसे नवागत व्यक्तिका मन आशंकासे खाली न था; और यह बात उस दूसरे महाशयने जान भी ली थी, पर उसने कुछ प्रकट नहीं होने दिया। हाँ, बाहर जाते ही वह उससे कहता है, 'आपका नाम—नानासाहब ही तो है?"

इस प्रकार जब उस व्यक्तिका नाम ही उसने बतला दिया, तब उसे इस बातकी कोई शंका रह ही नहीं गई कि, वह उसे नहीं पहचा-

नता है। इसलिये अब, "यह कौन है! यहाँ कैसे आया?" ये प्रश्न पहलेसे भी अधिक उसके मनको सताने लगे। यहाँतक कि, तुरन्त ही उसने उससे कहा, "आप कौन हैं, सो बतलाते क्यों नहीं?" परन्तु उस विचित्र पुरुषने उसके प्रश्नका तो कोई उत्तर दिया नहीं, और कहता क्या है—"आप इस जगह, अप्पा-साहबपर जो संकट आया है, उसमे उन्हें छुडानेके लिये प्रयत्न करनेको आये हैं? और—और · " उसने एक अक्षर भी नहीं कहा। सिर्फ इतना पूछाभर कि, "कहिये, जो मैं कहता हूँ, सो बिलकुल सच है या नहीं? आप इसी कामके लिये तो आये हैं?" नानासाहब यह सब सुनकर, बिलकुल स्तब्धरूपसे, अपने दोनों हाथ अपने वक्षस्थलपर स्वस्तिकाकार किये हुए खड़े थे। यह क्या गोलमाल है, सो कुछ उनकी समझमें नहीं आ रहा था। हमको आये पूरा एक पहर भी नहीं हुआ, और आये भी ऐसे कि, बिल्कुल भिन्न भेपमें, और बस्तीके बाहर ही बाहर इस गिरे पडे हुए मकानमें। इतनेपर भी इस घरके आदमीने हमें पूरे तौरपर पहचान लिया। यही नहीं, बल्कि हम क्यो आये, किस उद्देश्यसे आये, इत्यादि सब बातें भी इसे मालूम हो गई हैं। यह बात क्या है? हमारे पीछे कोई बादशाही जासूस तो नहीं लगा हुआ है? अथवा यह भी बेचारा हमारी ही तरह बादशाही अत्याचारसे पीड़ित कोई व्यक्ति है जो अपना कोई कार्य सिद्ध करनेको यहाँ आया है? उनसे रहा न गया, और वे उसकी ओर देखकर कहते हैं, "आप मुझे पहचान तो गये, पर आप यदि सचमुच ही हमारे दोस्त हैं—जैसा आप अपनेको कहते हैं—तो आप फिर अपना नाम क्यों नहीं बतलाते?"

वह महाशय यह प्रश्न सुनकर एक लम्बीसी साँस छोडकर कहता है, "मुझे अपना नाम इसी समय बतलानेकी कोई आवश्यकता नहीं है। किन्तु नानासाहब, इससे आप कोई बुरा न मानें। मेरा नाम, आज नहीं तो कल, आपको अवश्य ही मालूम हुए बिना न रहेगा। तबतक आप यह बात किसीपर-अपने साथियोंपर भी—प्रकट न होने दें कि आपका और मेरा इस प्रकार वार्तालाप हुआ है। मैं आपको पहले

अपनी पहचान देनेहीवाला-नहीं था; पर फिर सोचा कि, आप भी किसी कामके लिये आये हैं; और मैं भी ऐसे ही किसी लिये कामके आया हूँ। सो मौका है, वक्त है, मुझको आपकी और आपको मेरी मददकी आवश्यकता जरूर पड़ेगी। इसके सिवाय कल किसी और जगह शायद मेरी और आपकी भेंट हो जाय—और ऐसी भेंट हो जाना कोई असम्भव भी नहीं—तो मैं आपको और आप मुझे देखकर चकरावें नहीं। बस, इसी उद्देश्यसे मैंने आपको यह सब बतला दिया है। अब आप भीतर जाइये। जबतक मैं इस बीजापुरमें जीवित हूँ, आप इतना भी भय न रखिये कि आपका कोई बाल भी बाँका कर सकेगा। परन्तु हाँ, सावधान रहिये; और आगे अब कहीं यदि आप मुझे मिल जावें, तो पहचान न दें। आप अपना बर्ताव ऐसा ही रखें कि, जैसे हमारी और आपकी कभी भेंट ही न हुई हो। हाँ, यदि किसी समय मुझे आपकी और आपको मेरी आवश्यकता पड़े, तो इसी जगह हम दोनों मिलते रहेंगे। आप अब यही रहें; और मैं जाता हूँ। यहाके सब लोगोंका ऐसा खयाल है कि, यह मकान भूतोंका अड्डा है; और इसी कारण, यहाँ चाहे जो कोई बना रहे, उसको तंग करनेके लिये कोई आता नहीं है। आप वैरागीके भेषमें आनन्दपूर्वक यहाँ रहें, आपको कोई तंग नहीं करेगा। और मैं रातको प्रति दिन इसी समयके लगभग आता रहूँगा। मेरे योग्य यदि कोई सेवा हो, तो निस्संकोच मुझे बतलाते रहें। आप अपना पहरा इसी समयपर रखें। यदि मुझे कोई आवश्यकता होगी; और मैं ऐसा समझूँगा कि उसके पूर्ण करनेमें आपकी सहायताकी मुझे कोई आवश्यकता है, तो मैं आपसे अवश्य कहूँगा; और आप भी मेरी मदद करेंगे, इसकी मुझे शंका ही नहीं। अन्तमें मैं आपसे इतना ही कहूँगा कि, जो आपका शत्रु है, वही मेरा भी है। संयोगवश यदि यह मेरे हाथमें न पड़कर आपके हाथमें पड़ जावे, तो आप उसे दण्ड न दें। मेरे लिये वह काम आप रख छोड़ें। उसको आप चाहे खुशीसे वैसा ही छोड़ दें। मैं उसे देख लूँगा। उसको जो दण्ड मिले, मेरे ही हाथसे मिलना चाहिये। आप अपने साथियोंको भी यह जतला

रखें कि चाहे जो बात हो जाय, वे उस दुष्टको अपने हाथोंसे दण्ड न दें—उसको मैं ही अपने हाथोंसे यमराजके घर पहुँचाऊँगा, और उसके रक्तसे स्नान करूँगा—ऐसी घनघोर प्रतिज्ञा मैंने कर ली है·· ”

चालीसवां परिच्छेद

खिड़की वाला नवयुवक

नानासाहब उस विचित्र पुरुषका उक्त विचित्र भाषण सुनकर बिलकुल ही चकितसे हो गये थे। जिस समय कि, वह उक्त भाषण कर रहा था, उसकी चेष्टा इत्यादि देखनेको उन्हें नहीं मिली थी, सो यदि मिल जाती, तो उनके आश्चर्यका ठिकाना ही न रहता। केवल शब्दों-मात्रसे उसका हृदय जितना कुछ दूसरेकी समझमें आ सकता था, उतना नानासाहबकी समझमें भी अच्छी तरह आ गया था, इसमें कुछ भी शंका नहीं। और उसकी वे सब बातें चूँकि नानासाहबके हृदयमें बिल्कुल गड़ गई थीं, इसलिए अब उनके मनमें यही जाननेकी उत्कंठा हो रही थी कि यह मनुष्य कौन है, और इसको हमारी इतनी जानकारी क्योंकर हुई? जैसाकि हमने ऊपर बतलाया, अपनी प्रतिज्ञाके विषयमें बतलाते-बतलाते वह एकदम ठहर गया, और उसके इस ठहर जानेमें ही उसकी सारी अगली बातोंका मानो भेद भरा हुआ था। इसके बाद दोनों कुछ देरतक एक दूसरेकी ओर बिलकुल स्तब्ध रूपसे खड़े हुए देखते रहे। "देखते रहे" इन शब्दोंका वास्तवमें यहाँ कोई विशेष अर्थ ही नहीं है, क्योंकि इतना प्रकाश ही वहाँ नहीं था कि, जो वे दोनों एक दूसरेके चेहरेको देख सकते। हाँ, अन्धेरेमें एक दूसरेकी आँखें अवश्य चमकती हुई दिखाई देती थीं। अस्तु। इस प्रकार कुछ समय व्यतीत होनेके बाद वह गूढ पुरुष नानासाहबसे कहता है, "अब मैं बहुत जल्द आपसे विदा होता हूँ, परन्तु जो बातें मैंने अभी आपको बतलाईं उनको भूल मत जाना, मैं इस समय आपके साथियोंके सामने जाना नहीं चाहता, और न मेरा उनका कोई घनिष्ट परिचय ही है।

मैं उनके सामने जाऊँ भी, तो कोई हानि नहीं, किन्तु मैंने एक प्रकारसे अभी यही निश्चय कर लिया है कि, मैं जिस अवस्थामें हूँ, उसमें उनके सामने जाकर उनकी जिज्ञासाको व्यर्थके लिये जाग्रत न करना चाहिये! अब मुझे खास बात आपको फिर यही बतलानी है कि, वह शत्रु यदि आपमेंसे किसीके पंजेमें आ जावे, तो आप लोग उसे अपने हाथोंसे दण्ड न दें। उसने मुझे जितना तबाह किया है, उतना और किसीके चित्तको भी न किया होगा, उसने मेरे चित्तको जितना दुखाया है, उतना और किसीके चित्तको कभी न दुखाया होगा! परन्तु जान पड़ता है, यह बात वह बिल्कुल ही भूल गया है कि, एक बार सर्पको दुखाने-से सर्प भी जितना वैर अपने मनमें नहीं रखेगा, उतना वैर अपने मनमें रखकर उतने ही जोरसे मैं उसको दंश करूँगा!"

बस, इतना ही कहकर वह महाशय वहांसे चल दिया। नाना-साहबको सिर ऊपर उठाकर देखनेका भी अवसर नहीं मिला—बाहरके द्वारसे जब वह मनुष्य निकल गया; और उसने दरवाजे बन्द किये, तब कहीं उनके ध्यानमें यह बात आई कि, वह विचित्र आदमी हमारे सामनेसे गायब हो गया। इसके बाद फिर उनके मनमें नाना प्रकारके प्रश्न उपस्थित होने लगे। "यह व्यक्ति कौन है? जातका मराठा तो अवश्य है! लेकिन यह ऐसा क्यों कहता है कि, जो मेरा दुश्मन है, वही आपका भी दुश्मन है। मेरे दुश्मनका हाल इसे क्या मालूम? मैं अमुक व्यक्ति हूँ; और अमुक कामके लिये आया हूँ—इतनी बारीक खबर इसको कैसे लग गई? और जब इसको यह खबर लग गई है, तब शहरमें वह और किसीको भी नहीं लग गई होगी, सो कैसे कहा जा सकता है? यह मनुष्य हमको धोखा तो न देगा? इसने हमको पहचान तो लिया ही है; और यह भी कह गया है कि, "यहीं रहो, कहीं जाओ नहीं," सो यह मुझे मीठी-मीठी बातें करके जालमें तो नहीं फँसाना चाहता?

यह अन्तिम शंका ज्यों ही नानासाहबके मनमें आई, त्यों ही क्षण-भरके लिये उनकी कुछ विचित्रसी दशा हो गई। परन्तु फिर, वह

विचित्र पुरुष जो कुछ कह गया था, और जिस रीतिसे कह गया था, सो सब उनके मनमें ज्यों ही आया, त्यों ही उनकी वह शंका फिरसे दूर हो गई। वह मनुष्य जो कुछ कह गया है, बहुत ही विश्वासपूर्वक कह गया है, ऐसे आदमीसे धोखा कभी नहीं हो सकता। इस प्रकार ज्यों-ज्यों नानासाहब उसके विषयमें विचार करने लगे, उनको अपनी उक्त शंकाकी निरर्थकता और भी स्पष्ट रूपसे भासने लगी। परन्तु फिर भी उनके मनका खेद दूर नहीं हुआ; और अपने मनकी खिन्न दशामें ही वे भीतर वापस आये। उनका एक दूसरा साथी अभी हालहीमें जगा था, और अपने बिछौनेपर बैठा हुआ था। उसने जब उनको बाहरसे आता हुआ देखा, तब उसे कुछ अचम्भा अवश्य हुआ, पर वह अभी कुछ पूछने नहीं पाया था कि, उन्होंने स्वयं ही, "यों ही बाहर गया था" इत्यादि कहकर उसका समाधान कर दिया, और फिर वे अपनी जगहपर जाकर लेट रहे। परन्तु उनके मनमें बराबर वही विचार आ रहे थे, निद्रा उन्हें किसी प्रकार भी नहीं आरही थी। इसके सिवा निद्राका समय भी अब निकल गया था। बिलकुल तड़का हो रहा था। नानासाहबने उसी आकुल अवस्थामें सूर्योदयतकका समय बिताया, और सुबह होते ही अपने अन्य मित्रोंके साथ वे भी बिछौनेपरसे उठे। परन्तु उस रातको जो बातचीत हुई थी, और वह चूँकि अभीतक नानासाहबने अपने अन्य किसी स्नेहीको बतलाई भी नहीं थी, अतएव उनके मनकी दशा बहुत ही विचित्र हो रही थी। अच्छा उजेला हो गया, सबलोग उठे, और देखते हैं, तो घरका मालिक, जिसने रातको उन्हे जगह दी थी, कहीं भी दिखाई न दिया। इसलिये स्वाभाविक ही प्रत्येकके मनमें वही शंका आई कि, वह हम लोगोंको पहचानकर कहीं धोखेमें डालनेको तो नहीं चला गया? परन्तु फिर सोचा कि यह भय हमारा बिलकुल व्यर्थ है। हम ऐसे भेषमें इतने बन्दोबस्तके साथ आये हैं, ऐसी दशामें इतनी जल्दी पहचानकर धोखेमें डालना बिलकुल असम्भव है। यह सोचकर धोखेका विचार तो सबने एक ओर हटा दिया, और अब

प्रत्येकके मनमें यही एक विचार चक्कर मारने लगा कि, "बीजापुर तो हम लोग आगये, अब आगे कैसा क्या किया जाय?" परन्तु फिर नानासाहबके मनमें यह बात आई कि, पिछली रातको सब हाल और किसीको तो नहीं, पर कमसे कम तानाजीको तो अवश्य ही बतला देना चाहिये, क्योंकि यदि न बतलावेंगे, तो न जाने पीछे कसा मौका आजाय; और फिर उस समय बड़ी दिक्कत पेश आवेगी। यह सब सोचकर उन्होंने तानाजीको उस रातका सारा वृत्तान्त बतलाया जिसे सुनकर तानाजीको भी बड़ा अचम्भा हुआ। पिछली रातमें नानासाहबको उस गूढ़ पुरुषके सम्भाषणसे जितना आश्चर्य हुआ था, उतना ही आश्चर्य तानाजीको भी, वह सब वृत्तान्त सुनकर हुआ। दोनोंने एकत्र विचार करके उस विषयमें परस्पर बहुत कुछ चर्चा की परन्तु ठीक तौरसे कुछ निश्चित न कर सके कि वह व्यक्ति कौन है। अस्तु। इसके बाद उन्होंने अपने साथके अन्य दोनों पुरुषोंको भी वह सब वृत्तान्त बतला दिया। क्योंकि जिस कामके लिये वे आये थे, उसके लिये चारोंकी एकचित्तता होनी अत्यन्त आवश्यक थी, और इसके बिना उस कार्यमें सफलताका प्राप्त होना बहुत ही दुर्घट था। नानासाहबने चूंकि उसकी हुलिया देखी ही नहीं थी अतएव वे अपने साथियोंको भी इस विषयमें कोई जानकारी नहीं दे सके; परन्तु फिर भी प्रत्येकके मनमें उस व्यक्तिकी कोई प्रतिमा आकर अवश्य खड़ी हुई। लगभग एक पहरदिन चढ़नेतक तो यही सब होता रहा। इसके बाद फिर उन चारोंमेंसे दो आदमी, तानाजी और नानासाहब, अपने-अपने भेष यथाविधि बदलकर "अलख, अलख" पुकारते हुए बाहर निकले। पहले पहल उसने यही विचार किया कि हम लोग जिस कामके लिये आये हैं, उस सम्बन्धकी जितनी भी जानकारी प्राप्त होसके, प्राप्त करना चाहिये। यह जानकारी तीन प्रकार की थी। अव्वल तो दरबारकी हालत क्या है? दूसरे अप्पासाहब किस दशा में हैं? और तीसरे हमको अपना अभीष्ट कार्य सिद्ध करनेके लिए किस किसकी अनुकूलता चाहिये, और किस किसकी मिल सकती है? इन सब बातोंको पूर्ण करनेके लिए पहला मार्ग यही था कि, ऐसे कोई लोग

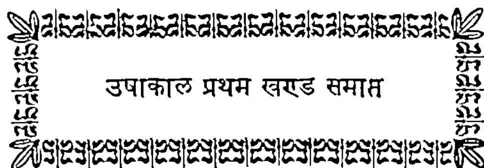
शहरमें हैं अथवा नहीं कि, जो हमारे अनुकूल हो सकेंगे—यदि हैं, तो उनका पता लगाना चाहिये, और जब पता मिल जाय तब फिर इस बातका विचार किया जाय कि, गुप्त रुपसे उनसे भेंट कैसे की जाय अस्तु। इस समय जो वे बाहर निकले थे, तो सिर्फ इसी उद्देश्यसे कि जिस जिस जगह जो जो लोग रहते हैं, और जिनका कि, नानासाहबको पूरा-पूरा पता है, उनकी तरफ एक बार चक्कर लगाकर सब जानकारी प्राप्तकी जाय। अस्तु। वे दोनों "अलख-अलख" करते हुए, लोगोंकी दृष्टिमें स्वच्छन्द रूपसे इधर उधर घूमने लगे, और बीच-बीचमें जिस घरके सामने उनकी इच्छा होती, उसीके सामने खड़े होकर "माई भिक्षा दे" की पुकार लगा देते, और उनमेंसे यदि किसी घरसे भिक्षा मिल जाती, तो उसे अपनी झोलीमें डाल लेते।

बस, इसी प्रकार वे दोनों लगभग दो घंटेतक घूमते रहे। इसके बाद फिर नानासाहबने अपने अड्डेपर लौट चलनेकी बात निकाली, और इसलिये फिर दोनों ही वहाँसे लौट पडे। लौटते समय नानासाहब-की दृष्टि अचानक एक ऊँचेसे महलके बिलकुल ऊपरी खण्डपर गई, और वहा खिड़कीमें खड़े हुए एक व्यक्तिकी ओर वे ध्यान लगाकर देखने लगे। इस प्रकार जब उस व्यक्तिपर उनकी नजर लग गई, तब किसी प्रकार भी आगे चलनेकी उनकी इच्छा ही न हुई—यहाँतक कि, उस व्यक्तिकी ओरसे नजर हटाना भी उनके लिये असम्भव हो गया। नाना-साहबकी यह स्थिति देखकर उनके दूसरे साथीने भी ऊपरकी ओर देखा। तब उसे मालूम हुआ कि, एक नवयुवक, सुन्दर युवा पुरुष, खिडकीमें खड़ा है, और हम दोनोंहीकी ओर बराबर एकटक देख रहा है, तथा नानासाहब भी उस पुरुषकी ओर उतनी ही आतुरतापूर्वक देख रहे हैं। वह युवा पुरुष सचमुच ही इतना खूबसूरत था कि, किसी भी मनुष्यकी यदि एक बार उसकी ओर नजर चली जाती, तो वह हटाये नहीं हट सकती थी—ऐसी इच्छा होती थी कि, इसकी ओर देखते ही रहे। "यह पुरुष कौन है? शायद किसी सरदारका लड़का हो"—दोनोंने सोचा। इसके सिवाय नानासाहबके मनमें चाहे और कोई विचार भी आये हों,

कह नहीं सकते, क्योंकि उनका देखना अब कुछ अनावश्यक सा प्रतीत होने लगा था। अतएव उनके साथीने दस बारह बार उसने चलनेका इशारा किया, पर उनका कदम किसी प्रकार भी आगे नहीं बढ़ा। बाबाजी इतनी आतुरतासे क्या देख रहे हैं, यह समझकर रास्तेसे जाने—आनेवाले लोग भी खड़े होकर नीचे ऊपर दृष्टि डालने लगे। परन्तु वह खिड़कीमें खड़ा युवा पुरुष वहाँसे गायब ही हो गया।

अब नवयुवक वहाँ नहीं था, परन्तु नानासाहबकी दृष्टि अब भी उसी खिड़कीकी ओर लगी थी। खिड़कीमें खड़ा होने वाला युवा पुरुष दर्शनीय था सही; परन्तु उसके लिये उतनी देरतक एक ही जगह खड़ा रहना और अपने आसपास लोगोंका समूह जमा हो जाने तककी नौबत आने देना उनके लिए एक प्रकारसे अच्छा नहीं था; और यही सोचकर नानासाहबके साथीने उनसे एक बार फिर इशारा किया, और विशुद्ध उर्दू भाषामें बाबाजीसे वहाँसे चलनेकी प्रार्थना की। बाबाजीके रूपमें उन नानासाहबने जब यह अच्छी तरह समझ लिया कि, अब यहाँसे चले बिना काम नहीं चलेगा, तब अन्तमें बेचारे एक लम्बीसी सास छोड़कर वहाँसे चल दिये। परन्तु पहले उनकी जो वृत्ति बिलकुल उल्लसित दिखाई दे रही थी, सो अब नहीं रही। "क्या यह तुम्हारा कोई स्नेही है? तुम्हारी वृत्ति अचानक ऐसी क्यों हो गई? तुम्हारा और उस छतपर खड़े हुए व्यक्तिका सम्बन्ध क्या है?" इत्यादि अनेक प्रश्न उनके साथीने किये, और यहाँतक कि, प्रश्न करते करते उनको बहुत तंग भी किया; परन्तु उनकी चित्तवृत्ति ठिकाने नहीं आई। उन्होंने एक प्रश्नका भी उत्तर नहीं दिया। एक दो बार कुछ उत्तर मिला कि तो सिर्फ दीर्घ निःश्वासके रूपमें। इससे उनका वह साथी और भी चक्करमें पड़ा। खैर। कुछ देरके बाद वे दोनों अपनी उस हवेलीके पास आये। और भीतर जाकर उन्होंने बाहरका दरवाजा मजबूतीके साथ लगा लिया। वहाँ शेष दो साथियोंने रसोई तैयार कर रखी थी। अतएव बाहरसे आये हुए ये दोनों महाशय हाथ पैर धोकर भोजनके लिये बैठ गये। परन्तु नानासाहबका चित्त भोजनकी ओर बिलकुल नहीं था। यह बात उनके

अन्य साथियोंको भी मालूम हो गई। उन्होंने उनसे "ऐसा क्यों ?" कहकर कई प्रकारके प्रश्न इत्यादि किये। पर कोई साफ साफ उत्तर न मिला, अथवा यों कहिये कि साफ साफ उत्तर मिलनेका वह मौका ही नहीं था। जो भी कुछ हो, परन्तु फिर उन्हें विशेष किसीने तंग नहीं किया। भोजनके बाद सब लोग शान्तिपूर्वक पड़े रहे। नानासाहब भी बाहरसे शान्त ही मालूम होते थे। परन्तु उनके हृदयमें शान्तिका नाम-निशान भी नहीं था। यह बात उनकी चेष्टासे स्पष्ट दिखाई दे रही थी। शामका वक्त होने आया, फिर भी उनकी चेष्टामें कोई परिवर्तन दिखाई नहीं दिया, और वे बाहर जानेके लिये आतुरसे दिखाई दिये। इसके बाद जब वे बाहर निकले, तब उसी महलके मार्गकी ओर मुड़े जिसमें उन्होने सुबहके पहर उस युवा पुरुषको देखा था। तब कहीं उनकी आतुरताका कारण उनके साथीके ध्यानमें आया।



उषाकाल

दूसरा खण्ड

पहला परिच्छेद

यह क्या बला !

एक दिन हो गया, दूसरा दिन भी व्यतीत हो गया; किन्तु नानासाहबका वह पागलपन दूर नहीं हुआ। वह और भी अधिकाधिक बढ़ने लगा। प्रति दिन वे अपने कामके लिये बाहर निकलते पर काम तो एक ओर रह जाता; और उसी युवा पुरुषके महलके सामनेसे बार-बार चक्कर काटते रहते कि, एक बार फिर उसके दर्शन हो जावें। बस, यही सिलसिला जारी रहा। उनके मनकी अशान्ति अधिकाधिक बढ़ने लगी। तानाजी आदिने कई बार उनसे पूछा कि, जिस कामके लिये हम लोग आये हैं, उसकी ओर तो तुम्हारा कुछ भी ध्यान नहीं है; और यह क्या लगा रखा है? पर उनकी ओरसे उसका कोई भी सन्तोषजनक उत्तर नहीं मिला। नानासाहबने बहुत कुछ पूछ-तोंछ की कि, यह किसका महल है? यहाँ जो सरदार रहता है, वह युवा पुरुष कौन है? इत्यादि जहाँतक उनसे पता लगाते बना, सब कुछ लगाया; पर कोई भी पता नहीं लगा। कोई कुछ नाम बतलाता, कोई कुछ। कोई उनकी हँसी ही करने लगता। इसके सिवाय एक बात उन दो दिनोंमें और भी हुई कि, जिससे नानासाहबकी अशान्ति बढ़नेमें और भी अधिक सहायता मिली। वह बात इस प्रकार है कि, पहले दिन रातको जिस विचित्र व्यक्तिने उनको रहनेके लिये स्थान दिया था; और कह गया था कि, "हमारा और आपका दुश्मन एक ही है, उससे बदला लेने—आजतकके दुष्कृत्योंके लिये उसको दण्ड देने—का कार्य हम दोनों ही मिलकर करेंगे; और जब अन्तिम दण्ड देनेका मौका आजाय, तब यह काम आप मेरे ही लिये रख छोड़ें। आपके

पजेमें भी आ जाय, तो भी उसे दण्ड न दें। आपको यदि किसी सहायताकी आवश्यकता हो, तो मुझसे कहियेगा। मैं सब प्रकारकी मदद करूँगा।" इत्यादि लम्बी चौड़ी बातें करके वह यह भी कह गया था कि, "मैं प्रति दिन रातको आपसे मिलता रहूँगा।" परन्तु वह आज दो-तीन दिनसे नानासाहबको बिलकुल नहीं दिखाई दिया था, और न उसकी ओरसे कोई सन्देशा या सकेत इत्यादि ही मिला था। इस कारण उनकी चित्तवृत्ति और भी अधिक अशान्त हो रही थी। उनकी यह दृढ़ श्रद्धा थी—और ऐसी श्रद्धा होनेका कारण भी पर्याप्त था—कि, हम इस विचित्र व्यक्तिसे कोई लाभ अवश्य उठा सकेंगे। बीजापुर शहरमें आये उनको अभी पूरे दो घण्टे भी नहीं हुए थे कि, जिस व्यक्तिने उनको पूरा-पूरा पहचान लिया, वही नहीं, बल्कि किस कामके लिये आये हैं, सो भी बतला दिया, उस व्यक्तिको ऐसी-ऐसी बातें अवश्य ही मालूम होनी चाहिये कि, बीजापुरमें कहाँ क्या हो रहा है, कौन कहाँ रहता है, किसके कैसे विचार हैं, इत्यादि। यही क्यो? बल्कि बीजापुरके सम्पूर्ण मुख्य मुख्य व्यक्तियोंकी सब बातोंपर पूरी-पूरी नजर रखकर उनके विषयमें सब समाचार जानते रहना—यही उसका काम ही दिखाई देता था। इसलिये नानासाहबको यह विश्वास हो चुका था कि, वह व्यक्ति भी, हमारी ही तरह, ऐसे ही किसी कामके लिये, आया है। परन्तु वह आया किसकी तरफसे, और कैसे आया, तथा वास्तवमें यह है कौन, इत्यादि बातोंका उन्हें कुछ भी पता न चला। उनका खयाल था कि, शायद मार्गमें घूमते हुए वह हमें कहीं मिल जायगा, और तब हमको अपनी पहचान देगा, अथवा कुछ सकेत करेगा, पर यह आशा भी उनकी इन दो दिनोंमें पूरी नहीं हुई। इसके सिवाय उस बड़े महलमें जिस नवयुवकको उन्होंने देखा था, उसका नामग्राम मालूम होनेकी उत्कण्ठा उनके मनमें पराकाष्ठातक पहुँच चुकी, और इसके बिना उनको और कुछ सूझने ही न लगा। अन्तमें उनके साथीको मानो उनकी वह अत्यन्त विलक्षण दशा बिलकुल दुस्सहसी जान पड़ने लगी, तब तीसरे दिन रातको तानाजीने उनसे कहा,

"नानासाहब, आज दो दिनसे मैंने अपने मनको अत्यन्त कठिनाईके साथ रोक रखा है। समझा था कि, तुम अपने मनकी बात कुछ-न-कुछ बतलाओगे—न अभी बतलाओगे, तो कुछ देर बाद बतलाओगे—अथवा उसमें कुछ भी तत्व न समझकर उसको छोड़ ही दोगे; और जिस कार्यके लिए हम आये हैं, उसकी ओर कुछ ध्यान दोगे; पर तुम्हारी कुछ हालत ही समझमें नहीं आती। पहले दिनसे आज देखता हूँ, तो तुम्हारी दशा और भी कुछ विलक्षण दिखाई दे रही है। मैंने समझा था कि, तुम्हारे मनमें जो बात है, उसको तुम साफ़-साफ़ मुझे बतला दोगे, और इससे उसका निर्णय करने अथवा उसका और भी अधिक पता लगानेमें हमको सुभीता होगा, पर ऐसा कुछ तुम्हारी ओरसे दिखाई नहीं देता। इधर राजा शिवाजीने तो हम लोगोंसे ताकीद कर दी है कि, जिस कामके लिए हम आये हैं, वह, जितनी जल्दी हो सके, करके हमको वापस चलना चाहिये। हाँ, काम करनेमें हमको चाहे कुछ दिन लग भी जावे, उसकी बात अलग है; पर दो दिन जिस प्रकार हमने व्यतीत कर दिये, उसी प्रकार यदि और भी करते रहेंगे, तो कैसे काम चलेगा? कल यहाँसे थैली जानी चाहिए। उसमें क्या लिख भेजेंगे? यही कि, हम कुशल-पूर्वक पहुँच गये? इसके सिवाय और क्या लिखेंगे? 'जिस कामके लिये आये हैं, उसकी तैयारीमें लग गये'—यह भी तो नहीं लिख सकते; क्योंकि अभीतक यहाँ आकर किसी काम-का प्रारम्भ ही नहीं किया है। इसलिये बतलाइये, आपका ऐसा ही हाल और कितने दिनतक रहेगा? अबतक हमको कुछ कार्य छेड़ देना चाहिये था।"

तानाजी जिस समय यह सब कह रहे थे, उनकी चेष्टा कुछ गम्भीर भी हो रही थी; और इस कारण ऐसा जान पड़ा कि, नानासाहबको उनका कुछ भय भी मालूम हुआ। तानाजी जिस वक्त उपर्युक्त बातें कह रहे थे, मानो उनको उत्तर देनेके लिये ही उनके होंठ कई बार फड़केसे थे; परन्तु बाहर उनके मुँहसे एक अक्षर भी नहीं निकला। तानाजीका भाषण समाप्त हुआ। तब भी उनके मुँहसे कोई शब्द न

निकला—यद्यपि पहले उनके होंठ इतने फड़क रहे थे और ऐसा जान पड़ता था कि, उनके भाषणके समाप्त होते ही शायद ये बहुत कुछ बोल जायगे। परन्तु कह नहीं सकते, उनके मुँहसे कोई उत्तर क्यों नहीं निकला—शायद, तानाजीकी चेष्टामें उस समय जो एक प्रकारकी निष्ठुरता दिखाई दे रही थी, उसी कारणसे वे कुछ न कह सके हों, और जो शब्द कि, बिल्कुल उनके होठोंपर ही आ रहे थे, वे जैसेके तैसे भीतर ही रह गये हों। जो कुछ भी कारण हो, किन्तु तानाजीने उनकी वह सब दशा देखी अवश्य। हाँ, यह अवश्य ही उनके ध्यानमें नहीं आया कि उनके ऐसा करनेका कारण क्या है। जो कुछ भी हो, तानाजी जिस कार्यके लिये आये हुए थे, उस कार्यके अतिरिक्त और कोई भी बात उनके मस्तिष्कमें आ नहीं सकती थी। वे ऐसे व्यक्तियोंमेंसे एक थे जो कि, अपने कार्यके सामने और किसी भी बातको महत्व नहीं देते, और अपनी धुनके बिल्कुल पक्के होते हैं। उनके मनमें यह बात बार-बार आ रही थी कि, देखो, इन्हीं दो दिनोंके बीचमें हमने न जाने कितना काम कर लिया होता, और इस कारण उनका मन अत्यन्त असन्तुष्टसा हो रहा था। उन्होंने सोचा कि, देखो, यह अपने पिताकी हालत जान कर उनको छुड़ानेके लिये आये थे, सो इस विषयका तो ये रत्तीभर भी पता नहीं लगाते, और न इस विषयमें कुछ विचार ही करते हैं। हाँ, एक खिड़कीमें उस युवक सरदारको जबसे इन्होंने देख लिया है, तबसे उसीके पीछे पड़े हैं—उसीका पता लगानेके लिये इतने आतुर हो रहे हैं। इसका कारण कुछ उनकी समझमें न आया, और न नानासाहबने स्वयं ही कुछ बताया। ऐसी दशामें तानाजीका असन्तुष्ट होना स्वाभाविक ही था। और कोई व्यक्ति होता, तो शायद उनसे इस प्रकार डाँटकर न पूछता। वह शायद फेरफारसे उनके मनकी बात जान लेनेका प्रयत्न करता, पर तानाजी मालूसरे एक मावलेका सच्चा-सीधा बच्चा था। उसको फेरफारकी बातें क्या मालूम? शिवाजी महाराजपर उनका अत्यन्त प्रेम था, और उनके बतलाये हुए कार्यको सचाईके साथ पूर्ण करना ही उसका मुख्य

उद्देश्य था। इधर दो दिन हो गये; और जिस उद्देश्यसे आये, उसके लिये कोई प्रयत्न भी नहीं हो सका। ऐसी दशामें उसे सन्तोष कैसे हो सकता था ?

नानासाहबको तानाजीकी बातोंसे बहुत खेद हुआ, परन्तु फिर भी वे अपना दिल खोलकर यह नहीं बतला सके कि, उस युवा पुरुषका पता लगानेके लिये वे इतने उत्सुक क्यों हो रहे हैं। उस समय भी वे अपने सकोचको छोड़ नहीं सके, और बड़ी लाचारीके साथ सिर्फ इतना ही कहा, "मेरे मनमें सिर्फ यही बात बार-बार आ रही है कि, पहले दिन रातको जिस मनुष्यने हम लोगोंको इस मकानमें स्थान दिया था, वही यदि एक बार फिर आपसे भी मिल जाय, तो बड़ा अच्छा हो। उसके मिलनेसे हम लोगोंको अपने काममें बड़ी सहायता मिलेगी। ऐसा जान पड़ता है कि, उसको यहाँके दरबारकी सब छोटी-बड़ी बातें मालूम हैं। जो कुछ उसने बतलाया, वह यदि सब सच है, तो उस मनुष्यसे हमको बहुत कुछ लाभ पहुँच सकता है; और वह हम क्यों न उठा लें ? बस, यही मेरा कहना है। लेकिन आज दो दिनसे उसका कुछ पता ही नहीं है। ऐसी दशामें आज रातको रास्ता देखकर कलसे हम अपना कार्य निस्सन्देह प्रारम्भ करेंगे।"

तानाजीको उसका यह उत्तर कुछ सन्तोषजनक नहीं मालूम हुआ। उनको यह स्पष्ट ही मालूम हो गया कि, असली बात यह अब भी हमसे छिपा रहे हैं। परन्तु इसका कारण क्या है, सो कुछ उनके ध्यानमें नहीं आया। तथापि, उनकी उस समयकी चेष्टा; और ऊपर जो शब्द उन्होंने कहे, उनके उच्चारण करनेका ढंग इत्यादि देखकर फिर तानाजीको ऐसी इच्छा बिल्कुल ही नहीं हुई कि, उनसे और कुछ पूछा जाय, अथवा उनको और कुछ कहा जाय। उन्होंने सोचा कि, इसपर अब इनसे क्या कहें—हाँ, कुछ कहना चाहिए, इसलिये इतना उन्होंने कह दिया कि, "अच्छा; ठीक है।"

नानासाहब भी आखिर चतुर ही थे, उनके मनकी बात समझ गये, और मन ही मन बड़े लज्जितसे हुए, पर करते क्या ? अपने मनकी

बातको स्पष्ट रुपसे बतलानेका उनको साहस ही न होता था। यह वे भलीभॉति जानते थे कि, अन्तमें इनको सब बतलाना ही पड़ेगा, बिना बतलाये काम ही न चलेगा, आज नहीं तो कल बतलावेंगे। जैसी भयंकर शका उनके मनमें आ रही थी, वैसी यदि सचमुच ही दशा थी, तो सब बातें उनको बतलानी चाहिए थीं, और नानासाहबको भी यह बात भली-भॉति ज्ञात थी, पर उनके होठोंके बाहर ही न निकलते थे, इसके लिये वे बेचारे करते क्या?

उपर्युक्त रीतिसे दोनोंकी बाते हुई, और फिर वह विषय वहींतक रह गया। वही विषय क्यों? फिर और कोई विषय ही उनकी बातोंमे नहीं छिड़ा, अथवा यों कहिये कि, फिर आगे उस समय, उनमे कोई बात-चीत ही नहीं हुई। सभी अपने ही अपने मनमें उन्हीं बातोंपर विचार करते हुए रह गये। हॉ, नानासाहब उस दिन, शामके पहर, फिर बाहर नहीं गये। तानाजी अपने साथियोंमेंसे एक दूसरे ही साथी को अपने साथ लेकर, फिर उस दिन, रोजमर्राकी तरह, भेष बदलकर गये। नानासाहब साथ नहीं गये, इस बातपर उन्हे एक प्रकारसे सन्तोष ही हुआ। क्योंकि उनके होते, तो फिर इधर उधर घूमकर उसी महलके पास उन्हे बार-बार आना होता कि, जिसकी खिडकीमें उन्होंने उस नवयुवक सरदारको देखा था। अबतक सारे बीजापुरका एक बार चक्कर हो जाना चाहिये था, पर सो कुछ अभीतक हुआ नहीं था। इसपर तानाजीको बार-बार बड़ा खेद हो रहा था। इसलिये आज उन्होंने सोचा था कि, हम अकेले ही चक्कर लगावेंगे, और तदनुसार बीजापुरके अधिकाश भागमें उन्होंने आज चक्कर लगाया भी।

इधर उस भूतोंकी हवेलीमें आज नानासाहब अकेले ही बैठे हुए मन ही मन विचार कर रहे थे। जिस मनुष्यने हमसे उस रातको इतनी लम्बी-लम्बी बातें मारीं, और इस प्रकारके वचन दिये कि, हम रोज तुमसे मिलते रहेंगे, और जो कोई काम हो, हमें बतलाना,—वह महाशय आजतक क्यों नहीं दिखाई दिया? आज रातको क्या उसके आनेकी कोई सम्भावना है? बस, इसी प्रकारकी विवेचनामे नानासाहब उस

समय इधरसे उधर चक्कर काट रहे थे। इसके सिवाय, उस समय उनके मनमें और भी नाना प्रकारकी तरंगें उठ रही थीं। उनमेंसे अधिकांश तरंगें उस नवयुवक मराठेके सम्बन्धमें थीं, सो बतलानेकी यहाँ आवश्य-कता ही नहीं। क्योंकि वह उस समय इनके मनका एक खास विषय हो रहा था। जो हो। इस प्रकार धीरे-धीरे रात हो गई। चारों तरफ अन्ध-कार झुकने लगा। लेकिन तानाजी और उनके साथियोंका बिल्कुल पता नहीं। रोजका उनका आनेका समय व्यतीत हो गया। इससे नाना-साहबके हृदयमें और भी अनेक प्रकारकी शंकाएँ उपस्थित होने लगीं। जिनमें एक यह भी कि, देखो, उन्होंने हमसे बार बार पूछा, लेकिन हमने उनके प्रश्नोंका ठीक उत्तर नहीं दिया; अच्छी तरह बोले नहीं, इससे कहीं वे नाराज तो नहीं हो गये। हमको छोड़कर कहीं चले तो नहीं गये? ऐसी विचित्र शंका उनके मनमें आई। रोजका समय निकल गया—नहीं, नहीं, उससे और भी अधिक देर हो गई, फिर भी उनका कोई पता नहीं। अब हम जाकर उनका पता लगावें, पर पता भी कहाँ लगावें? बस, इसी प्रकारके विचारमें उनका मन चक्कर खा रहा था कि, इतनेमें किसीने दरवाजेपर थाप मारी। इसलिये यह समझकर कि, अब हमारे साथी आ गये, उन्होंने अपने दूसरे साथीसे, जो वहाँ मौजूद था, दरवाजा खोलनेके लिये कहा! पर विचित्रता क्या हुई कि, वह मनुष्य दरवाजा खोलकर देखता है, तो वहाँ कोई नहीं—आसपास किसी मनुष्यके आनेकी आहट भी नहीं। दरवाजेपर थाप जरूर बैठी थी. और उन दोनोंने उसे स्पष्ट रूपसे सुना था। इसलिये नानासाहबने अब सोचा कि, शायद दरवाजेपर थाप मारकर कोई इधर-उधर छिप रहा हो। उनके मनमें यह भी आया कि कदाचित् वही विचित्र पुरुष हमसे कहीं मिलने न आया हो। इसलिये नानासाहबने, अपने साथीसे वहीं बैठनेके लिये कहकर, स्वयं उसको देखनेके लिए जानेका विचार किया। उनको पूरी आशा हुई कि, शायद वही पुरुष आया होगा। हमसे मिलनेके लिए वह वचन भी दे गया था, अतएव अब उसको जाकर देखना चाहिये।

यह सोचकर नानासाहब एक छोटीसी लालटेन लेकर बाहर निकले। हाँ बाहर निकलते समय उन्होंने अपने पीछेका दरवाजा अवश्य बन्द कर लिया। इसमे उनके मनका हेतु यही था कि, शायद वही विचित्र पुरुष न आ गया हो कि, जिसका हम इतनी देरमे रास्ता देख रहे थे— किंबहुना जिसके लिये हम अब एक प्रकारसे निराशसे हो रहे थे, और यदि वह आ गया होगा, तो उससे जब हम बात करने लगेंगे, तब वे भीतर सुनाई देंगी, और यह ठीक न होगा। इसलिये यह दरवाजा बन्द कर लेना चाहिये। अस्तु। उस दरवाजेको मजबूतीके साथ बन्द करके वे बाहर निकले, पर किसी मनुष्यकी उन्हे आहट भी न मिली। मकानके बाहर चारों तरफ उन्होंने पता लगाया, पर सब व्यर्थ! तब उन्होंने सोचा कि, शायद दरवाजा हवासे ही खड़का होगा, कोई मनुष्य तो आया नहीं। इतनेमें उनको क्या आहट मिली कि, जैसे बहुत दूरपर कई मनुष्य आ रहे हो, अतएव उन्होंने सोचा कि, ये अवश्य ही हमारे साथी तानाजी इत्यादि होंगे। फिर उन्होने विचार किया कि, इनके पास आनेके पहले ही हमको कुछ पता लगाना हो, शीघ्रतापूर्वक लगा लें। अतएव इसी विचारसे फिर एक बार उन्होंने उस हवेलीके आसपास चक्कर लगाया। इतनेमें वे मनुष्य, जो दूरसे आ रहे थे, अब बिलकुल पास ही आ पहुँचे। इसलिये यह सोचकर, कि अब किसीका पता यहाँ नहीं लगेगा, नानासाहब फिर अपने दरवाजेसे अन्दर जाने लगे। परन्तु पीछे मुड़कर क्या देखते कि, किवाड़ोंकी दराजमे कोई सफेदसी चीज अटकी है। उसको निकालकर देखा, तो वह एक कागजका टुकड़ा दिखाई दिया! उसको उन्होंने अपने साथ ले लिया, और दीपकके उजेलेमें देखा। "आज आधी रातके बाद, जब सब लोग सो जायँ, आप इस हवेलीके उत्तरकी ओर, बरगदकी पातके पास, आवें"—बस, इतने ही अक्षर उसमे लिखे थे। अक्षर बहुत जल्दी जल्दी वैसे ही घसीटसे दिये गए थे। उसको पढ़कर नानासाहब बहुत ही घबराये। नीचे किसीका हस्ताक्षर भी नहीं था। और न यही प्रकट किया था कि, हम कौन हैं, किस लिए आपको बुलाते हैं, इत्यादि। अतएव वे अब

इस विचारमें पड़े कि, शायद यह उसीका बुलावा आया हो कि; जिसने हमको मिलनेका वचन दिया था। फिर उन्होंने यह सोचा कि, ऐसा न हो, जो कोई धोखा देकर हमको वहाँ बुलाता हो; और फिर वहासे पकड़ ले जाय। आज तीन दिनसे हम वस्तीमें घूमते तो रहे ही हैं, सो शायद किसीने पहचान लिया हो, अथवा दरवारमें जाकर खवर ही देदी हो, अथवा खवर भी न दी हो; और यों ही पकड़ ले जाकर हमको कहीं वन्द कर दे। इसका क्या ठीक है! इस तरह नाना प्रकारके कुतर्क उनके मनमें आने लगे। इतनेमें उनको अपने पीछे किसीके आनेका भास हुआ। मुड़कर देखते हैं; तो वही, उनके साथी हैं, जो वस्तीमें घूमने गये थे। अव एक क्षणभरके लिए ही उनके मनमें यह विचार आया कि, हमारे पास जो यह संकेतपत्र आया है—यह रातको एकान्त-में मिलनेका जो आमन्त्रण आया है—यह हम अपने साथियोंको दिखावें या नहीं। यह अभी उन्होंने सोचा ही था; और अभी शायद किसी निस्चयपर पहुँचे भी न थे कि, इतनेमें तानाजीने उनसे—"क्यों नानासाहव, तुम विल्कुल पागलकी तरह यह क्या वातें कर रहे हो? विल्कुल अकेले वाहर आकर क्या देख रहे थे? तुम्हारी चेष्टा ऐसी क्यो हो रही है?" इत्यादि प्रश्न किये। उनको प्रश्न करते देर नहीं हुई थी कि, उनका उक्त विचार यह निश्चित हुआ कि, अभी इस विषयमें हमें इनसे कुछ न कहना चाहिये। शायद वही मनुष्य हो कि, जिनसे रातको आकर मिलनेका वादा किया था, और यदि वही होगा, तो उसको चूँकि हम यह वचन दे चुके हैं कि, तुम्हारे विषयमें हम किसीसे कुछ कहेंगे नहीं, चुपके ही तुमसे मिला करेंगे, इसलिए वचन भंग होगा, यह भी अच्छा नहीं। यह सोचा और तुरन्त ही तानाजीको उत्तर दिया—"कुछ नहीं। तुम्हारे आनेका समय निकल गया था; और फिर भी तुम आये नहीं, इसलिए चिन्ताके कारण कुछ अस्वस्थ था; और भीतर वाहर निकल-निकलकर घूम रहा था। तुम आज कहाँ-कहाँ गये? इतनी देर कहाँ लग गई?" इस प्रकार पूछते-पूछते नाना-साहव भी उनके साथ भीतर चले गये; और हाथमें जो कागज लिए थे,

[illegible]

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] । फिर [illegible]
[illegible]
[illegible] फिर एक [illegible]
[illegible]
[illegible] । इसलिये यह सोचकर [illegible]
[illegible] फिर अपने [illegible]
[illegible] कि [illegible]
[illegible] निकलकर देख [illegible]
[illegible] उन्होंने अपने [illegible]
[illegible] । [illegible]
[illegible] पाते
[illegible] । अगर [illegible]
[illegible]
[illegible] था ।
[illegible]

[illegible]

उस युवा सरदारके विषयमें जानना है न? उसके विषयमें आज जितना पता मिल सका है, उतना मैं तुमको बतलाता हूँ, इससे शायद तुम्हारा चित्त कुछ शान्त हो। और फिर कल जो कुछ पता लगेगा, उसे कल ही बतलावेंगे। इस नवयुवक सरदारको रणदुल्लाखाँ ले आया है। वह अप्पासाहबको कैद कर ले आनेके लिए जब कि सुल्तानगढ जा रहा था, तब मार्गमें यह सरदार उसे मिल गया। और जैसा तुम्हारा प्रेम उसपर हो गया, वैसा ही उसका भी हो गया। इसलिए उसने एकदम ही उससे कहा कि, "चलो तुमको सरदार बनावेंगे। तुम हमारे साथ दरबारको चलो।" वह युवा पुरुष उसको यद्यपि बहुत कुछ मना करता रहा, पर रणदुल्लाखाँ नहीं माना; और आग्रहपूर्वक उसे अपने साथ लेता आया। अब यह महल देकर उसने उसीमें उसको रख दिया है। परन्तु बादशाहसे अभी उसकी मुलाकात नहीं कराई।" इत्यादि-इत्यादि बातें बतलाकर तानाजीने अपनी देखी हुई और भी अनेक बातें बतलाईं। परन्तु नानासाहबका चित्त अब उन बातोंमें नहीं लगा—वे मानो और भी अधिक घबड़ाहटमें पड़ गये; और उनकी अन्य बातें उनको बिल्कुल नहीं रुचीं। अन्तमें निद्रा आनेका बहाना करके, बिना भोजन किये ही, वे बिछौनेपर पड़ रहे।

अब उनका सारा चित्त उस बुलावेकी ओर लग गया। उन्होंने सोचा कि, अब कुछ भी हो, उस बुलावेके अनुसार हमको जाना अवश्य चाहिए; और बात क्या है, सो देखनी चाहिए—यदि वही मनुष्य होगा, तो सब बातोंका खुलासा आप ही आप हो जायगा। बस, यह निश्चय करके आधीरातके करीब वे उठे। अपने हथियार बाँधे और बाहर निकले। उनके यह ध्यानमें भी नहीं आया कि, उनकी सारी बातोंकी ओर और भी किसीका ध्यान है। परन्तु जिसका ध्यान आया था, सो उठा नहीं। क्योंकि उसने समझा कि, ये उसी गुप्त मनुष्यसे मिलने जाते होंगे। अस्तु। नानासाहब बाहर निकलकर उत्तरकी ओर गये। बरगदकी पाँतके पास अभी वे पहुँचे ही थे कि, इतनेमें पीछेसे तीन आदमियोंने एकदम उनपर धावा कर दिया। आगेसे दो आद-

मियोंने उनके मुँहको बाँध दिया, और वे अभी सोचने भी न आये थे कि, यह क्या हो रहा है, कि इतनेमें वे उठाकर उनको ले चले। उन्होंने बहुत हाथ-पैर चलाये कुछ लाभ न हुआ।

दूसरा परिच्छेद

नानासाहब गायब हो गये

जैसा कि हमने पिछले परिच्छेदमें बतलाया, आधीरातके लगभग नानासाहबकी यह दशा हुई। वह दशा जिन लोगोंने की, इतनी खूबीके साथ की कि, पास ही उस हवेलीमें जो लोग थे, उनमेंसे किसीको इसकी आहट भी न लगी। तानाजी और उनके साथियोंको इस बातकी शंका तक न थी कि, इस प्रकारकी कोई दगेबाजी होगी। उन्होंने सिर्फ इतना ही समझा था कि, जिस व्यक्तिने अपना नाम-ग्राम इत्यादि गुप्त रख-कर यह हवेली हमारे रहनेको खाली कर दी, वही उनसे मिलने आया होगा, और नानासाहब सिर्फ उससे बातचीत करने गये होंगे। अब उनको बातचीत होने देना—उसमें विघ्न न डालना—ही इस समय सर्वथा इष्ट है। वे हमको वह बात बतलाना नहीं चाहते, ऐसी दशामें हम अपनी तरफसे बीचमें हस्तक्षेप क्यों करें? हम यदि इसमें कोई दखल देंगे, तो सारा उद्देश्य एक ओर रह जायगा, और बीचमें औरका और ही होने लगेगा। आज दो तीन दिनसे उनकी तबीयत यों ही खराब हो रही है, फिर उसमें यदि हम उनके मनके विरुद्ध कोई बात करेंगे, तो व्यर्थके लिए मानो अपने कार्यको आप ही हानि पहुँचावेंगे। बाहर कोई दुर्घटना होगी, इसकी किसीको शंका भी नहीं हुई। इससे स्वाभाविक ही बाहर जाकर दूरसे भी देखनेकी किसीको आवश्यकता प्रतीत नहीं हुई।

इधर नानासाहबकी यह अवस्था हुई। यह नहीं कह सकते कि, उनके मनमें वैसा होनेकी शंका नहीं हुई थी। क्योंकि रातको जिस समय उनके हाथमें वह कागज आया, उसी समय उनके मनमें वैसी

शंका आई थी, परन्तु उसको उन्होंने अपने आप ही रफा कर लिया था, फिर भी इतनी वात जरूर उनके मनमें वनी रही कि, हथियारवन्द हुए विना वहाँ जाना ठीक न होगा; और इसी कारण चलते समय वे अपने हथियार-वथियार लेते गये थे, परन्तु इस वातका कोई विश्वास तो उनके मनमें था ही नहीं, कि दगावाजी, अवश्य ही होगी, इसलिये जितनी सावधानीके साथ ऐसी जगह उनको जाना चाहिए था, उतनी सावधानीके साथ अवश्य ही वे वहाँ नहीं गये थे, और इसी कारण वैसी दगावाजी उनके साथ हो सकी।

जिन आदमियोंने अचानक उनके ऊपर धावा किया, वे कौन थे, कहाँसे आये थे, इत्यादि वातोंमेंसे किसी वातका उनको कुछ भी अनुमान नहीं हो सका। वह सारी घटना इतने थोड़े अवकाशमें हो गई, कि उसका वर्णन करनेमें हमें जितना समय लगा, उसका आधा भी उस घटनाके घटित होनेमें न लगा होगा। नानासाहवके मुँहको तो उन लोगोंने पहले ही वन्द कर दिया। फिर तीनों आदमियोंने मिलकर उनको उठा लिया, और उनमेंसे किसीने उनके हथियार वड़ी फुर्तीके साथ छीन लिये, और उनके हाथ-पैर भी वाँध दिये। नानासाहवने वहुत हाथ-पैर चलाये, जितना वल वे अपनी तरफसे लगा सकते थे, सव लगाया—-और उनमें वल भी कुछ कम न था—पर जव इतने आदमियोंने अचानक आकर एक वेचारे अकेले आदमीपर एकदम धावा कर दिया, तव वेचारे उस अकेले की क्या चल सकती थी?

नानासाहव फिर और भी अधिक हाथ-पैर न चलाने पावें, इसलिये उन लोगोंने उनको चारों ओरसे, जहाँतक वन सका, खूव कस दिया, और जिस प्रकार कोई एक वड़ा भारी वोझा उठाकर लेचले, उसी प्रकार वे उनको लेचले। वे वेचारे सिर्फ मन-ही-मन तड़फड़ानेके अतिरिक्त और कर ही क्या सकते थे? अपने ऊपर ऐसा विचित्र प्रसंग आया हुआ देखकर उनको अत्यन्त दु:ख हुआ—यहाँतक कि, उन्होंने सोचा कि, इससे मर जाना अच्छा; पर ऐसा मौका किसी शत्रुपर भी न आवे! उन्होंने सोचा कि, जो लोग हमको इस प्रकार वाँधकर लिये जा

रहे हैं, वे सबके सब यदि एक ओर हो जायँ, और हम अकेले एक ओर खड़े होजायँ, तो हम बड़े आनन्दसे इनके साथ लड़ेंगे, और या तो इन सबको पराजित करके ही छोड़ेंगे, अथवा फिर अपने प्राण ही दे देंगे। किन्तु इस प्रकार जिन्होंने हमको धोखा देकर पकड़ा है, वे शूरके बच्चे तो अवश्य ही नहीं हैं। क्योंकि यदि वे शूरके बच्चे होते, तो इस प्रकारकी कायरता, इस प्रकारकी नामर्दी, कदापि न दिखलाते। हमे यदि बोलनेतककी ये स्वतन्त्रता देवें, तो हम स्पष्ट इनके मुँहपर यही बात कह देंगे, और फिर जब चिढ़कर ये हमारे साथ लड़ने लगेंगे, तब हम भी अपने दो-दो हाथ इनको दिखलाकर इनके साथ युद्ध करेंगे। बस, इसी प्रकारके विचार उनके मनमें आरहे थे, पर बेचारे करते क्या ? हाथ, पैर, मुँह, सब बन्द!

इधर जो लोग उनको उठाये लिये जारहे थे, वे सीधे अपने रास्तेसे जारहे थे, पर मार्गमें किसीसे कोई एक अक्षर भी नहीं बोल रहा था। नानासाहब बार-बार यही सोच रहे थे कि, इनमेंसे यदि कोई जरा भी शब्द निकाले, तो शायद उसे हम पहचान लें, क्योंकि अब यह भी उनके मनमें आने लगा था कि, जिस मनुष्यने उस भूतोंकी हवेलीमें रहनेके लिये हमसे इतना आग्रह किया, और जिसने हमसे यह कहकर बड़ी बड़ी लम्बी-चौड़ी बातें मारीं कि, देखो, हम मुसल्मानोंके बड़े कट्टर शत्रु हैं, यही नहीं, बल्कि हमारा जो बड़ा भारी कट्टर दुश्मन है, उसका सिर काटकर उसीके रक्तसे नहानेके लिये हम यहाँ आये हैं,—बस, उस मनुष्यके अतिरिक्त और यह विश्वासघात किसीने भी नहीं किया होगा। क्योंकि हमारे आनेका पता उसके अतिरिक्त और किसीको हो ही नहीं सकता। इसके बाद फिर उनके मनमें यह भी आया कि, हमारी तरह वह आदमी भी बिलकुल अज्ञातवासमें रह रहा है, और उस दिन उसने जो कुछ हमसे कहा, उसमें उसकी धूर्तता कुछ भी दिखाई नहीं देती थी। ऐसी दशामें उसपर आज हमें संशय क्यों हो रहा है ? जिस प्रकार उसने हमें पहचान लिया, उसी प्रकार और भी किसीने न पहचान लिया होगा, यह कैसे कहा जा सकता है ? हम यहाँ

क्यों आये, यह उसे जिस प्रकार एकदम मालूम हो गया, उसी प्रकार और भी कितनोंको न मालूम हो गया होगा, सो कैसे कहा जाय? हाँ, उसने हमसे यह भी कहा था कि, प्रति दिन आकर तुमसे मिला करूँगा; परन्तु हमारी तरह उसे भी किसीने दगाबाज़ीसे पकड लिया हो तो? इस प्रकारके विचार भी उनके मनमें आये; पर वे बहुत देरतक टिक नहीं सके। अन्तमें फिर उनके मनमें यही विचार आया कि, "हो न हो, हमको ऐसी दशामें डालने—हमारे साथ ऐसी दगाबाजी करने—का नीच काम उसीने किया। अन्यथा और किसीको यह बात कैसे मालूम हो सकती थी कि, हम इस जगह रहते हैं, और फिर आधीरातके समय, इस प्रकार; वह हमको कैसे बुलावेगा; और हम जायँगे भी कैसे? अवश्य, यह विश्वासघात उसीने किया। अच्छा, देख लेंगे, कोई हानि नहीं। मौकाभर आने दो—फिर, उस दुष्टसे बदला लिये बिना कभी नहीं रहेंगे ....."

इस प्रकार नानासाहबके सिरमें नाना भातिके विचार चक्कर काट रहे थे। बेचारे इस समय इतने परवश हो रहे थे कि, विचारोंके अतिरिक्त और उनके हाथमें रह ही क्या गया था? हाँ, विचार करना सर्वथा उनके हाथमें था, उसमें किसीकी रोक-टोक नहीं थी, सो बराबर उनके मनमें आ रहे थे, और यह बात पाठकोंको ऊपरके वर्णनसे मालूम ही हो चुकी होगी। अस्तु। इधर जो लोग उनको लिये जा रहे थे, जितनी जल्दी उनसे हो सकता था, उतनी जल्दी भग रहे थे। ऐसा जान पडता था कि, मानो बीजापुरके सारे कठिनसे कठिन मार्गोंको पार करनेका उन्होंने बीडा ही उठा लिया था। लगभग घंटे-सवा-घंटे बराबर वे लोग मार्ग तै करते रहे। नानासाहब जिस दशामें इतनी देरसे थे, उस दशासे वे अब बहुत ही ऊब गये थे, और उनका मन ऐसा हो रहा था कि, जहाँ कहीं ले जाकर ये लोग हमको कैद करना चाहते हों, अथवा जो कुछ करना चाहते हों, सो एक बार ले जाकर कर डालें, तो बहुत अच्छा हो! इस दशासे किसी प्रकार छुटकारा हो! परन्तु उनके मनके अनुकूल कार्य करनेके लिये वे लोग थोडे ही आये थे? वे तो, जो

कुछ उनके मनमें था, उसीके अनुकूल करनेवाले थे। इसलिये स्वाभाविक ही जिन मार्गोंको तै करके उनको जाना था, अथवा जितनी जल्दी या धीरे उनको अपना रास्ता तै करना था, उसीके हिसाबसे वे लोग जा रहे थे। परन्तु, अन्त भी प्रत्येक बातका कहाँतक न होगा? सो नानासाहबके उस ऊबनेका और उन लोगोंके चलनेका भी अन्त, अन्तमें आ ही गया। अबतक जितने चुपचाप वे लोग आ रहे थे, उतने ही चुपचाप वे एक अत्यन्त भव्य किलेके समान दिखाई देनेवाले महलके पीछे जा पहुँचे। इसके बाद उनमेंसे एक आदमी आगे हुआ, और वहीं पीछेसे छोटेसे दरवाजेपर तीन बार थाप मारकर "फातिमा" कहकर तीनों बार धीरेसे पुकारा। उस आवाजको सुनकर एक युवती मुसल्मानिनने दरवाजेको थोड़ासा खोलकर "कौन? अहमद?" कहकर पूछा। इसपर बाहरके लोगोंमेंसे वही आदमी, जिसने फातिमाको पुकारा था, उत्तर देता है, "हाँ फातिमा! जिस शिकारके लिये गये थे, वह तो मार लिया। अब आगेका सारा बन्दोवस्त भी शीघ्र ही करना चाहिये। मालिकको इसका कोई पता तो नहीं लगा?" फातिमाने जरा अनखाकर कुछ शब्द कहे, और दरवाजा पूरा-पूरा खोल दिया। वे लोग अपना वह मानवी बोझा बिलकुल चुपकेसे भीतर ले गये। नानासाहबने फातिमा और अहमद, ये दो नाम, और अहमद तथा फातिमाको बोल, खूब ध्यान लगाकर सुना, पर उन दोनोंका बोल कुछ उनकी समझमें नहीं आया, और न अहमद तथा फातिमाका कोई परिचय ही उन्हें मिला। अब अहमद और उसके साथी, उसी दशामें न जाने किस तरफ उनको ले जाने लगे, नानासाहबको इसका कुछ भी पता नहीं लग रहा था। हाँ, थोड़ी देर बाद उनको इतना अवश्य मालूम हुआ कि, जैसे किसी चीजपर उन लोगोंने उन्हें रखसा दिया हो। इतनेमें एक आदमीने आकर खूब मोटे कपड़ेसे उनकी आँखोंको भी बाँध दिया, और फिर—"फातिमा, चिराग ला, चिरागके बिना अब कुछ काम नहीं चल सकता—ये अहमदके कहे हुये शब्द उनके कानमें पड़े, और फिर उन्हें ऐसा मालूम हुआ कि, जैसे फिर उनको उठाकर वे लोग आगे लिये

जाते हों। इसके बाद फिर कई जगह सीढ़ियोंका चढ़ना-उतरना, फिर चढ़ना और फिर उतरना, इत्यादि सिलसिला जारी रहा। यह सब क्या गोलमाल हो रहा है, और अब हमको न जाने ये कहाँ लेजाकर डालेंगे, इसका कुछ भी अनुमान उनको नहीं हो सकता था, दो-चार चढ़ाव-उतार हो जानेके बाद फिर उनको ऐसा भास हुआ कि, जैसे कोई बड़ा भारी वजनी दरवाजासा खोला गया हो। और उससे सड़ाइँधकी एक बहुत ही बुरी भभकसी निकली। उन लोगोंने अपना वह बोझा चुपकेसे भीतर डाल दिया, और फिर दरवाजा बन्द करके न जाने कहाँ चले गये—कोई सनकता भी न था! अब नाना-साहबको मालूम हो गया कि, हमको इस प्रकार पकड़कर और बाँध-बूँधकर किसी बड़े भारी महलके तहखानेमें लाकर बन्द कर दिया गया है। पर यह क्यों? किसने और किसके महलमें लाकर रखा है? सो कुछ उनके अनुमानमें नहीं आता था।

इधर नानासाहबको गये घण्टा हो गया, डेढ घण्टा हो गया, फिर भी उनके लौटनेका कोई लक्षण ही दिखाई न दिया। तब स्वाभाविक ही, जिस व्यक्तिने उनको बाहर जाते देखा था, उसको कुछ थोड़ीसी चिन्ता उत्पन्न हुई। इतनी देरतक वे उस आदमीसे न जाने क्या बात-चीत कर रहे हैं, सो कुछ उसकी समझमें न आया। इसलिए अब तानाजीने सोचा कि, हमको स्वयं जाकर देखना चाहिये—क्या मामला है! क्योंकि उनको बाहर जाते हुए उन्होंने देखा था; और यह सोचकर कि, हमारा उनके पीछे-पीछे जाना ठीक न होगा, वहीं रुक गये थे। परन्तु जब उन्होंने देखा कि, अब समय बहुत अधिक व्यतीत हो गया; और इधर उनका कोई पता ही नहीं, तब उनका हृदय भी बहुत खिन्न हुआ; और अन्तमें अपने गुप्त हथियार-बथियार बाँधकर एक और अपने साथीको जगाया; और कहा कि, हमारे साथ चलो। इस प्रकार वे दोनों उस घरसे बाहर निकले, और इधर उधर, आस-पास, बहुत कुछ देखा, सुना, आहट ली, पर कोई लाभ न हुआ। मनुष्यकी-सी कोई भी आहट वहाँ सुनाई नहीं दी। तब वे कहाँ गये, इसका कुछ भी

अनुमान उनको न हो सका। दोनो आदमी, दो तरफको, दूर दूर तक घूम आये। परन्तु वहाँ सन्नाटेके अतिरिक्त और कुछ भी दिखाई सुनाई न दिया। "नानासाहब आज दो दिनसे बिलकुल पागलसे हो रहे थे, सो कहीं उनका मस्तक तो नहीं भड़क गया कि, जिसके कारण वे कहीं चले गये हों? अथवा जिस आदमीने उनसे बार बार मिलनेको कहा था, वही शायद कहीं उनको लेता गया हो! इस प्रकारके एक दो नहीं, कितने ही संशय उनके मनमें आने लगे। जैसा कि हमारे ध्यानमें आया, तदनुसार सचमुच ही यदि कहीं उनका मस्तक बिगड़ गया हो, और वे हमको छोड़कर कहीं चले गये हों, तो बड़ी मुश्किलकी बात होगी। हम आये किस कामको और यह हो क्या गया! स्वामी महाराज और शिवबा राजाने चलते समय हमसे कह दिया था कि, वहाँका सब वृत्तान्त समय समयपर भेजते रहना। सो, अब कल ही कहीं थोड़ासा लिखने योग्य कार्य हुआ था, तब तक यह एक बड़ी विचित्र बला—एक बड़ा अरिष्ट हम लोगोंपर आ उपस्थित हुआ। अब, इस विषयमें हम क्या लिखेंगे?

दोनों बेचारे बहुत देरतक इधर-उधर घूमते रहे, और फिर अन्तमें बिलकुल निराश होकर अपने घरकी ओर वापस आये। इतनेमें तड़का भी हो गया। अपने तीसरे साथीको उठाकर उन्होंने सारा वृत्तान्त बतलाया। परन्तु परस्पर एक दूसरेसे "यह विचित्रता तो देखिये! बिलकुल विलक्षण ही बात हुई!" इत्यादि वाक्य कहकर समय व्यतीत करनेके अतिरिक्त उस वक्त और वे कर ही क्या सकते थे? खैर। सुबह हो गया। उन्होंने फिर अपने वेश रोजकी तरह बदले। एकको घरकी रखवालीके लिए रखकर बाकी दो नानासाहबका पता लगानेके लिए निकले। उस समय उनके मनमें यही आया कि, शायद वे उस नवयुवक सरदारके ही यहाँ चले गये हों कि, जिसको देखकर वे इतने पागल हो रहे थे। इसलिए पहले वे उस सरदारके ही महलके आसपास जाकर लगाने लगे। बीजापुरके समान शहरमें, किसी बड़े सरदारके घरमें, मार्गमें घूमनेवाले वैरागियोंका यह पूछना, इस महलमें हमारा कोई साथी तो

नहीं गया है, कितनी कठिन बात थी! महलकी डेवढ़ीके पहरेदारों, अथवा अन्य किसीके ध्यानमें बस, इस बातका आजाना ही काफी था कि, हमारे महलमें सामने बिना कारण निठल्ले वैरागी घूम रहे हैं, अथवा संदिग्ध रूपसे कोई जाँच कर रहे हैं। और दोनों बाबाजी यह बात भलीभाति जानते थे कि, यदि कहीं ऐसा हो गया, तो हमको बड़ी भारी आफतका सामना करना पड़ेगा। परन्तु, चूँकि उनको यह भी पूरा-पूरा विश्वास था कि, नानासाहब यदि कहीं गये होंगे, तो बस, इस स्थानके अतिरिक्त और कहीं भी उनके जानेकी सम्भावना नहीं है। अतएव इसके सिवाय और कोई चारा भी नहीं था। आखिर एक पहरेदारने उनके उस हाल-चालको ताड़ भी लिया; और उसके मनमें यह भी आया कि, इनको जाकर डाँटना चाहिए, तदनुसार उसने वहा-से उठकर उनको डाँटा भी; परन्तु ऐसे वैरागियोंमें जिस ढिठाईकी आवश्यकता होती है, वह उनमें काफी मौजूद थी; अतएव तानाजी उस पहरेदारके बिलकुल पास ही जाकर कहते हैं, "कोई बात नहीं है, बाबा! दो मुट्ठी भिक्षा मिल जाय, यही चाहता हूँ। इतना बड़ा महल है, मालिकके मनमें आ जाय, तो कौन बड़ी बात है—बस, यही सोच-कर ऊपर देखता हूँ। तू गुस्सा मत कर। तू भी बड़ा दिलदार आदमी है। तेरा भाग्य भी बहुत जबरदस्त है। सो हमारे समान साधुओंका आशीर्वाद ले। उससे तेरा कल्याण होगा। देखूँ तेरा हाथ। हाथ तो दिखलावेगा?" यह सुनकर वह पहरेदार झिड़ककर कहता है, "चल, चल। बड़ा कहींका आया है वैरागी! मेरा हाथ देखकर मेरा भाग्य बतलाने आया है!" परन्तु तानाजीने उसकी एक भी न सुनी, और जबरदस्ती उसका हाथ खींचकर देखने लगे; फिर हँसते-हँसते उससे बोले, "अरे वाह यार! तेरे हाथमें लक्षण तो बहुत अच्छे-अच्छे हैं! तेरा प्रेम किसी नवयुवतीपर लग रहा है, और तेरे हाथसे ऐसा जान पड़ता है कि, वह महीने-दो-महीनेमें तुझे मिलेगी अवश्य!" ज्यों ही ये शब्द वैरागीके मुँहसे निकले, त्यों ही उस सिपाहीका चित्त कुछ आन-न्दितसा दिखाई दिया। हमारे मनकी इतनी गुप्त बात बाबाजीने सिर्फ

हाथ देखकर बतला दी, और सो भी बिलकुल ठीक-ठीक ! इस बातका उसे बड़ा अचरज हुआ, और साथ ही साथ कुछ सन्तोष भी। परन्तु उसने सोचा कि, इस वैरागीको यदि यह मालूम हो गया कि, हमको इस बातपर सन्तोष हुआ है, और इसपर विश्वास रखते हैं, तो फिर यह हमको और भी अधिक तंग करेगा। बस, यही सोचकर वह फिर पहले-हीकी भाति झिड़ककर कहता है, "चल बे, तू समझता है कि, मैं तेरी ऐसी गप्पोंमें आ जाऊँगा, सो मैं नहीं आनेका ! जा, ऐसी बातें किसी दूसरेको बतला।

पर बावाजी भी पक्के उस्ताद थे। वे काहेको उसकी ऐसी बातोंमें आते हैं ! सिपाहीरामका सारा रग वे बातकी बातमें ताड़ गये। उनको विश्वास हो गया कि, हमारे कथनका इसपर प्रभाव पडा है, और यह इस प्रकारसे किसी जालमें अवश्य फँसा है। अतएव वे और भी ढिठाई दिखलाकर उससे फिर कहते हैं, "भाई, मानो, चाहे न मानो। जो बात तुम्हारे हाथसे मुझे दिखाई पड़ रही है, सो मैं बतलाऊँगा सही। जो बात तुम्हारे मनमें है, वह महीने-दो महीनेमें पूरी अवश्य होगी, इसमें शका नहीं। मैं और भी अनेक पतेकी बातें तुमको बतलाऊँ ?" यह कहकर उन्होंने उसका हाथ फिर पकड़ा, और कहा कि, तुम जरा उस डेवढ़ीपर चलकर बैठो तो सही, मैं तुमको बहुतसी बातें बतलाऊँगा। सिपाहीराम भी, नहीं नहीं कहते हुए, उनको डेवढीपर ले गये।

तीसरा परिच्छेद

इधर क्या हो रहा है ?

नानासाहब आदि लोग जबसे बीजापुर गये थे, हमारे बाबाजी (श्रीधर स्वामी) और राजा शिवाजी इत्यादि लोगोंका चित्त उनकी ओर लगा था। उनके मनमे बार-बार यही बात आती कि, अब देखें बीजापुरके क्या समाचार आते हैं, क्योंकि इसी पर हमारे सारे अगले प्रयत्न अवलम्बित हैं, इसलिए उधरके समाचार जितनी जल्दी आवें,

उतना ही अच्छा। इसके सिवाय नानासाहबको चूँकि बीजापुरकी अच्छी जानकारी थी; और तानाजी उनके साथ गये ही थे, अतएव उसके प्रयत्नोंके विषयमें किसी प्रकारकी शंका शिवाजी इत्यादिके मनमें नहीं थी। कौन कौनसी बात, किस किस प्रकारसे, करनी होगी, इस विषयमें विचार करके उनका स्वरूप निश्चित कर दिया था; और बीजापुर जानेके बाद क्या क्या प्रबन्ध, किस किस प्रकारसे, किया जायगा, सो भी सब बतला दिया गया था। फिर भी राजनीतिकी बातें एक बड़ी भारी चिन्ताका कारण होती ही हैं। इसके शिवाय, आजतककी बात दूसरी थी। जब मनमें आवे, तब कोकनमें अथवा महाराष्ट्रके ही किसी दूसरे प्रदेशमें जाकर किसी गावको लूट-पाटकर द्रव्य एकत्र करना कोई ऐसा कठिन काम नहीं था। परन्तु सुल्तानगढके समान किलेको हस्तगत करना—और सो भी नवीन राज्यकी नींव जमानेके लिये—कोई सहज कार्य नहीं था। भवानीमाताके कृपाप्रसादसे हम सब कुछ कर लेंगे, इस बातका विश्वास राजा शिवाजीको था सही, पर उनके मनमें चिन्ता भी कुछ कम नहीं रहती। जो वृत्तान्त हम यहाँ बतलानेवाले हैं, उस प्रसगपर राजा शिवाजीके उसी सदैवके जंगलमें, उनके लोग एकत्रित हैं; और श्रीधर स्वामी तथा शिवाजी एक ओर किसी विचारमें निमग्न हैं। जो लोग एकत्रित हुए हैं, वे उनसे लगभग तीसचालीस हाथके अन्तरपर हैं, और सब बड़े आनन्दितसे दिखाई दे रहे हैं। बाबाजी; और येसाजी, ये तीन आदमी किसी गहरे विचारमें निमग्न थे। अब हम किलेको जीतने जा रहे हैं, इसलिए अवश्य ही उसमें सौ-दो सौ आदमियोंकी आवश्यकता पड़ेगी। उसमें भी यदि किलेदार आदि किसी अधिकारीको यह मालूम होगया कि, इस किलेपर हमारी नजर है, तो सौ-दो सौ से भी काम नहीं चलेगा। अबतक जितने धावे मारे गये थे, कभी पच्चीस, कभी पचास, बस, इतने ही आदमियोंने उनमें भाग लिया था। वे सब लोग निस्सन्देह हमारी जानपर जान देनेवाले हैं। पर, आगे अब इसी साहस और विश्वासके अन्य लोग भी तो चाहिये तब काम चले। इसलिए ऐसे ही और बहुतसे लोगोंके संग्रह करनेका क्या प्रबन्ध

करना चाहिये—बस, इसी विषयका विचार वे तीनों कर रहे थे। राजा शिवाजीमें काफी साहस और उदारता मौजूद थी, और इसीकारण वहाँ आसपासके लोगोंमें—विशेषतः गरीब मावले लोगोंमे—दिनपर दिन उनके विषयमें प्रेमकी वृद्धि होरही थी। नानाजी और येसाजीके समान उनके भक्तोंने अपने अपने गाँवोंके गरीब और नवयुवक लोगोंमें, उनके विषयमें अच्छा आदरभाव उत्पन्न कर रखा था। इस प्रकारकी सब तैयारी हो चुकी थी सही, परन्तु फिर भी शिवाजी और उनके अन्य साथियोंके मनमें यह आशंका अवश्य थी कि, देखें, वह आदरभाव इस प्रकारके विकट प्रसंगोंपर कहाँतक उसका उपयोग कर सकते हैं। आज-तक जितने धावे किये गये थे, उनमे सफलता अथवा विफलता कोई बड़ा भारी सवाल नहीं था, किंबहुना, उनमें निष्फलता होनेकी कोई सम्भावना ही नहीं थी। क्योंकि भीतरी उद्देश्य यद्यपि राजनैतिक ही था, परन्तु फिर भी बाहरसे उसका वह स्वरूप लोगोंके सामने नहीं आया था। सर्वसाधारण लोगोंके सामने अभी उसका इतना ही स्वरूप था कि, बस दो-चार उपद्रवी नवयुवक एकत्र होकर इधर-उधर लूटपाट किया करते हैं, लोगोंको व्यर्थमे सताते हैं। ऐसी दशामें, उसमें सफलता हुई तो क्या? और नहीं हुई तो क्या? वा कम या अधिक हुई तो क्या? कोई बड़े महत्वकी बात नहीं थी। परन्तु अब लोगोंको इकट्ठे करके बिलकुल खुल्लमखुल्ला राजनीतिका प्रारम्भ करना था। किलेको जीतना मानो स्पष्टरूपसे संसारपर यह प्रकट कर देना ही है कि, हम अपना अलग राज्य स्थापित करना चाहते हैं। अपने छुटपनमे जब हम पिता-जीके साथ बीजापुरमें थे, तब मुसल्मानोंके विषयमें जो कुछ उद्गार हमने निकाले थे, और अब भी निकालते हैं, सो सब बीजापुरवालोंके कानोंमे जाते ही रहते हैं। इससे भी लोग यही कहेंगे कि, हम स्वराज्य स्थापित करनेके लिये खुल्लमखुल्ला प्रयत्न कर रहे हैं—यहाँतक कि, अब किले जीतनेकी भी नौबत आपहुँची है। अतएव, इसबारकी यह छलांग बड़े महत्वकी है। पहले पहल तो जबतक चार-पाँच किले हाथमें न आ जायँ, निष्फलता न होनी चाहिये और यदि निष्फलता नहीं

चाहते, तो अच्छे अच्छे और विश्वासपात्र लोगोंकी सहायता चाहिए। लोग हों चाहे थोड़े ही, पर जितने हों, खूब दृढ हों; अपने कामके लिये जानतक देदेनेवाले हों, और विश्वासपात्र इतने हों कि चाहे गला कटनेकी भी नौबत क्यों न आजाय, परन्तु उनके हाथसे विश्वासघात न हो। बस, ऐसे ही लोग प्राप्त करनेके लिये क्या क्या तजवीज की जाय, इसी बातपर वे तीनों बैठे हुए आपसमें चर्चा कर रहे थे। येसाजीका कथन था कि, पचास आदमी जो इस समय बिलकुल हमारे हाथ में हैं, वही यदि अपने विश्वासके पाच-पाच आदमी भी और ले आवें, तो बस, काम चल जायगा। इसके अतिरिक्त ऐसे काममें यदि हम इस समय अपने लोगोंपर विश्वास दिखलायेंगे, तो उनको भी एक प्रकारसे अपने कार्यका अभिमान होगा; और यह कार्य बड़े आनन्दसे वे करेंगे। हॉ यह बात अवश्य उनको अभी नहीं बतलानी चाहिये कि, हमारा उद्देश्य क्या है—हम आदमी क्यों चाहते हैं। उनको तो अभी इतना ही बतलाना काफी होगा कि, तुम्हारे ही समान लगभग दो सौ आदमी हम और चाहते हैं। शिवबा और बाबाजीकी भी सलाह ऐसी ही पडी; और आज इस समय जो लोग जमा किये गये थे, वे इसी उद्देश्यसे कि, उनसे इस बातकी प्रार्थना की जाय कि, भाई, तुममेंसे प्रत्येक आदमीको पॉंच पॉच, छै छै आदमी और लेआना चाहिये। इसके सिवाय, बाबाजी और शिवाजीने यह भी निश्चय किया था कि, इनमे से प्रत्येकको कुछ न कुछ इनाम दिया जाय कि; जिससे उपयुक्त कार्य करनेके लिए इनमें उत्साह आवे। इसलिये ईनाम देनेकी भी आज सब तैयारी की गई थी। बाबाजी, शिवबाजी और येसाजीमें जब यह सलाह हो चुकी कि, किसको क्या क्या इनाम दिया जाय, तब अन्तमे शिवबाने अपनी धीर-गम्भीर वाणीसे सबको वहाँ बुलानेका उद्देश्य बतलाया, और अपने सदैवके नियमके अनुसार मुसल्मान लोगोंके अत्याचारोंका ऐसा वर्णन किया कि, जिसको सुनकर सब लोगोंके मनमें अत्यन्त जोश उत्पन्न हुआ। उनकी वाणीमें ऐसा कुछ ओज भरा हुआ था कि, एक बार भी उसे जो कोई सुन लेता, वह बिलकुल मुग्ध हो जाता था। उनकी वाणीमें

वह माधुर्य था कि, साधारण तौर पर भी यदि कोई बात वे कह देते, तो काया-वाचा-मनसे उनका बतलाया हुआ कार्य करनेके लिये लोग तैयार हो जाते थे। जिस समयका हमारा यह कथानक है, उसी समयसे राजा शिवाजीके अनुयायी लोगोंमें, उनका मधुर शब्द प्राप्त करनेके लिए, स्पर्द्धा हुआ करती थी। सभी अपने अपने तौरपर उनकी प्रसन्नता प्राप्त करनेका प्रयत्न किया करते थे। फिर आज तो शिवाजीने जो भाषण किया, उसमें उन्होंने बिलकुल कमाल ही कर दिया। भाषण कुछ बहुत लम्बा न था। उसमें कोई विशेष बात भी नहीं थी। परन्तु हाँ, जो कुछ कहना था, उसे इतनी उत्तम रीतिसे कहा कि, श्रीधर स्वामी और येसा-जीको भी उसे सुनकर बड़ा आनन्द हुआ। भाषणके बाद ही फिर इनाम बाटा गया। इससे उन लोगोंका उत्साह और भी अधिक बढा। यहाँ तक कि, उनमेंसे सात-आठ मुख्य मुख्य लोगोंने तो छातीपर हाथ रखकर इस बातका वचन दिया कि, अगले दस-पन्द्रह दिनके बीचमे ही सौ-दो सौ क्या, पाँच सौ आदमी लाकर हम आपके सामने खड़े कर देंगे। साथ ही साथ उन्होंने यह भी विश्वास दिलाया कि, उनकी विश्वास-पात्रताके विषयमें क्षणभरके लिए भी कोई शंका न करनी चाहिये। मुसल्मान लोग चाहे उन्हें जागीरें और गाव देनेहीके लिए क्यों न तैयार हो जायँ, अथवा चाहे उनकी गर्दन पर छुरा रखकर उनके सारे कुटुम्बको भी नष्ट कर देनेका भय दिखावें, पर तो भी वे अपने समूहको छोड़कर नहीं जायँगे, और न कभी भी दगाबाजी करेंगे। यह सब कार्य-वाही होनेके बाद राजा शिवाजीके मुखसे फिर एक बार कुछ आश्वासन-युक्त भाषण सुनकर सबलोग जहाके तहाँ चले गये। सिर्फ तीन आदमी रह गये—शिवाजी, स्वामीजी और येसाजी।

तानाजी इत्यादि लोगोंके बीजापुर जानेके बाद पन्द्रहवें अथवा सोलहवें दिन उपर्युक्त कार्यवाही हुई। अब आज ही कलमें बीजापुरसे भी किसी न किसी समाचारके आनेकी आवश्यकता थी, और ये लोग अब उनके पत्रकी प्रतीक्षा ही कर रहे थे। इसलिए स्वाभाविक ही उन लोगोंकी चर्चा निकली कि, वे लोग अब वहा क्या करते होंगे। जिस कामके

लिये वे गये हैं, उसके लिए उन्होंने वहाँ क्या-क्या उपाय किये होंगे! और जिस वेशमें वे लोग वहाँ रहे होंगे, यह वेश उन लोगोंके लिए कहा तक उपयोगी हुआ होगा! इत्यादि विषयोंपर नानाप्रकारके तर्क वे लोग कर रहे थे। वार्तो वार्तोमें और भी अनेक विषय निकले। शिवाजी अपने मित्र येसाजी इत्यादिको, और वावाजीको भी, अपने पिता और दादोंजी कोंडदेव तथा अपने घरकी अन्य वार्तोंके विषयमें भी, खुले दिलसे सब वातें वतलाया करते थे। दादोजी कोंडदेव, शिवाजीके पिता राजाशहाजी को वार-वार पत्र लिखकर उनके विषयमें उपालम्भ दिया करते थे, और साथ ही साथ उनको यह भी सूचित किया करते थे कि, शिवाजीको आप कभी-कभी कुछ उपदेशकी वातें, अथवा यदि आवश्यकता हो, तो धमकीका पत्र भी लिख दिया कीजिए, शायद इससे कुछ लाभ हो; और तदनुसार शिवाजीके पास राजा शहाजीके पत्र भी आया-जाया करते थे। कभी-कभी उनकी माता जिजावाई भी इस विषयमें उनको उपदेश दिया करती थीं कि, पिताकी इज्जत और प्रतिष्ठाको एक ओर रखकर तुमने यह क्या अनुचित कार्य प्रारम्भ किया है? शिवाजीके पिता शहाजी महाराज, माता जिजावाई; और उनके लड़कपनके गुरु, अथवा अभिभावक; दादोजी कोंडदेव—इन तीनोंहींका यह विचार था कि, लड़का अपनी जागीरको अच्छी तरह सम्हाले; और वीजापुर-वालोंकी सेवा भली-भांति करके दरवारके वड़े-वड़े कार्य करे। और इस प्रकार स्वामीभक्तके पदको प्राप्त करके स्वार्थ और परमार्थ दोनोंका साधन करे। इधर लड़केकी वुद्धि कुछ और ही थी। वह, यदि कोई मुसल्मानोंका नाम भी ले देता, तो भी स्नान करता, स्वराज्य स्थापित करनेके लिये सब प्रकारके प्रयत्न करता; और पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करके मुसल्मानोंका नाश कर देना ही अपना लक्ष्य समझता था। इस प्रकार सम्पूर्ण महाराष्ट्रमें हिन्दू पद-पादशाहीका स्थापित करना ही उसका उद्देश्य हो रहा था; और जो कुछ भी वह प्रयत्न करता, सब अपने इसी एक उद्देश्यको लक्ष्यमें रखकर करता था। परन्तु, दादोजी कोंडदेव सदैव यही कहकर उसको डरवाया करते कि, "देखो यह समय ऐसा

नहीं है। ऐसे समयमें यदि ऐसा पागलपनका प्रयत्न करोगे, तो सफलता तो एक ओर रही, तुमका राजद्रोहका पातक और लगेगा। इधर बादशाहसे जो जागीरें मिली हैं, वे भी जप्त हो जायगी। यह भी सम्भव है कि, राजा शहाजीपर हुजूरकी आज जो इतनी कृपा है, सो भी न रहे; और किसी दिन सारी धन-दौलत और घरद्वार भी नष्ट होनेकी नौबत आ जाय।" इस प्रकारके भयपूर्ण उद्गार सदैव दादोजी कोंडदेव शिवाजीके सामने निकाला करते थे। शिवाजीके मनमें दादोजी कोंडदेवके प्रति बड़ा आदरभाव और श्रद्धा थी। क्योंकि बालपनसे ही उन्होंने शिवाजीको उत्तम-उत्तम शिक्षाएँ दी थीं। इसके सिवाय, शिवाजी यह भी जानते थे कि, आज यद्यपि हमसे ये इस प्रकारकी बातें कर रहे हैं, तथापि इसमें भी इनका भीतरी उद्देश्य यही है कि, हमारा हित हो। बस, यही सब सोचकर उन्होंने दादोजीके सामने कभी भी उनके प्रतिकूल उत्तर नहीं दिया। परन्तु लगभग दो दिन पहले दादोजी कोंडदेवने किसी कारणवश शिवाजीको कुछ कठोर शब्द कहे। उसी दिन शाहजीका भी एक कठोर पत्र दादोजीके पास आया। सुबह ही उन्होंने वह पत्र शिवाजीको दिया; और कुछ देर बाद उनका बुलाकर फिर दादोजीने कुछ मर्मभेदक बातें कहीं:—"तुम्हारे हाथसे होना जाना तो कुछ है नहीं—वंशकी बदनामी कराओगे, धनदौलतका नाश कराओगे, घरद्वार पर भी चौका फिराओगे। गरीबगुरबा लोगोंके गाँवोंको लूटना कोई पुरुषार्थका काम नहीं है। प्रबल प्रतापी बादशाहके राज्यको अभी तिलभर भी धक्का नहीं लगा सके। ऐसी ही करतूत दिखाओगे, तो खासा स्वराज्य हो जायगा। चतुराई तो इसीमें है कि, जो कुछ मिला है, उसीकी रक्षा करो। पिताने जो सुखसामग्री प्राप्त की है। उसका भोग करके पिता और माताका सुख दो, इसीमें स्वराज्य है। उनके चित्तको क्लेशित करके पुरुषार्थकी कोरी बड़बड़ करनेसे क्या लाभ? ईश्वरने दिया है, उसको सुखसे भोगना भी नहीं, और व्यर्थकी बड़बड़ करके इधर उधरकी दौड़ धूप करना बिलकुल व्यर्थ है। स्वराज्य स्थापित करनेवालेके लक्षण ही कुछ दूसरे होते हैं। स्वय अपना, अपने वंशका;

और जिस जिससे तुम्हारा सम्बन्ध है, उन सभीका, सत्यानाशमात्र भले ही कर लो।"

आजतक ऐसी बातें दादोजीने शिवबाके सामने कभी नहीं कही थीं। बल्कि सदैव उनका यही विचार रहता था कि, यह हमारे मालिकका जेठा पुत्र है और इस कारण यह हमारे लिए मालिकहीके समान है। इसके साथ सेव्य सेवकभावसे ही वर्ताव करना उचित है। यह सोचकर दादोजी शिवाजीके साथ सदैव बड़े अदबका वर्ताव करते थे, और कभी कोई बेअदबीकी बात भी नहीं करते थे। हाँ, जब कभी कोई शिक्षा इत्यादि देते थे, तब थोड़ी-बहुत कठोरतासे अवश्य ही काम लेना पड़ता था, और उस समय वे ऐसी बातोंका खयाल भी नहीं रखते थे। इसके सिवाय प्रस्तुत विषयपर भी उन्होंने कई बार उनके साथ बातचीत की थी—ऐसा नहीं कि न की हो—परन्तु इतनी मर्मभेदक बातचीत कभी नहीं हुई थी। दादोजीका आजका भाषण तो अत्यन्त कठोर हो गया। इधर महीने-दो महीनेका शिवाजीका सन्दिग्ध वर्ताव ही इसका कारण था। गत महीने-दो महीनेके बीचमें शिवाजी लगातार चार दिन भी अपने घरमें कभी नहीं रहे। इधर दादोजीने सुन रखा था कि, शिवबा, अपने उपद्रवी साथियोंको जमा करके, पुरन्दरके मार्गवाले मन्दिरमें, अथवा उसी तरफके किसी जंगलमें, कुछ उलटे-सीधे विचार किया करता है। बस, इसी कारण इस समय उनका मिजाज बिगड़ गया था। और उन्होंने सोचा था कि, सेव्य सेवकभावको एक ओर रखकर, यदि कुछ शिक्षा इस समय काम कर जाय, तो देख लेवें। अतएव उन्होंने यही निश्चित किया था कि, जिस दिन राजा शहाजीका इस विषयमें पत्र आवेगा, उसी दिन हम शिवबासे खूब फटकारकर बातें करेंगे, और तदनुसार ही आज उन्होंने किया भी। शिवाजीको स्वाभाविक ही इस बातपर बड़ा खेद हुआ, और उसमें भी जब उन्होंने दादोजीके मुखसे ये वचन सुने कि, "तुम वंशका नाश करोगे, तुमसे मातापिताको क्लेशके अतिरिक्त और कुछ नहीं होगा; स्वयं अपना भी सत्यानाश कर लोगे," तब तो उनको और भी अधिक दुःख हुआ।

निस्सन्देह आजतक उन्होंने दादोजीको कभी भी उत्तर नहीं दिया था, पर आज उनसे नहीं रहा गया, और एकदम वे उनसे कहने लगे, "जिस वंशमें यवनोंकी सेवा और उनके प्रबल प्रतापमें ही पड़े रहनेके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं होता, उस वशका सत्यानाश हो जाना ही अच्छा। मैं अपने उद्देश्यके अनुसार यदि गौ—ब्राह्मणोंके कष्टको दूर करनेके लिए स्वराज्यकी स्थापना न कर सका, तो मेरे ही रहनेसे क्या लाभ? स्वराज्य-स्थापन करनेमे चाहे सफलता न मिले, यह यवनोंकी सेवा तो मुझसे नहीं हो सकती—इससे तो यही अच्छा है कि, मेरा और मेरे कुटुम्बका भी नाश हो जाय। आप यह कहते हैं कि, गरीब-गुरबा लोगोंके गाँवोंको लूटनेके अतिरिक्त यवनोंके राज्यको मेरे हाथसे कुछ भी धक्का नहीं पहुँचा, और इसके लिए महाराजको शायद खेद भी हो रहा होगा, तो लीजिए, इसके लिए मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि, आस-पासके किलोंमेंसे कोई न कोई किला बहादुरीके साथ लड़कर, जबतक जीत नहीं लूँगा, तबतक मैं आपको अथवा माताजीको मुँह दिखाने नहीं आऊँगा। इस काममें वहींका वहीं, यदि यवनोंके हाथमें पड़कर, मार भी डाला गया, तो यह समझकर आनन्द मनाना कि, अपने वशका नाशकर्त्ता यह अभागा छोकरा, चलो अच्छा हुआ, जो मार डाया गया। और यदि प्रतिज्ञाके अनुसार किलेको जीत करके आऊँ, तो चाहे जो करना—चाहे आनन्द मनाना, चाहे दुःख मनाना।"

दादोजीको अपने पुराने अनुभवसे यह कभी भी आशा नहीं थी कि, उनके शिष्यकी ओरसे उनको ऐसा उत्तर मिलेगा। अतएव, शिवबाके मुखसे उपर्युक्त वचन सुनकर, उनको बड़ा आश्चर्य हुआ। वे बिलकुल चकितसे रह गये। और यह सोचकर कि, हमारी बातोंसे इसके चित्तको जो खेद हुआ है, उसे दूर करना चाहिए, वे कुछ कहने-हीवाले थे कि, इतनेमें शिवाजी वहासे उठे, और गुरुजीको साष्टाग-नमस्कार करके चल दिये। वहासे फिर वे तुरन्त ही माता जिजाबाईके समीप आये; और उनके चरणोंकी वन्दना करके बोले, "माताजी, अब

आपकी और मेरी भेंट कब होगी; इसका कोई ठीक नहीं। भेंट होगी, तो ऐसी दशामें होगी कि, जिससे आपको कुछ आनन्द होगा; और यदि न होगी, तो समझ लेना कि, अपने कुलका कलंक नष्ट हो गया!" जिजावाई कुछ समझ ही न सकीं कि, यह पागलकी तरह क्या कह रहा है; अतएव वे कुछ कहनेहीवाली थीं कि इतनेमें शिवबा वहासे भी एकदम चल दिया। जिजावाई कुछ भी समझ न सकीं। हाँ, दादोजीने पीछेसे आकर उन्हें सब वृत्तान्त बतलाया, और शिवबाको ढूँढ़नेके लिए उसके पीछे-पीछे आदमी भी भेजे; पर कहीं पता न लगा। राजा शिवाजी इधर अपने मन्दिरमें आकर भवानीमाताके निकट दो दिन तक उनकी मानसिक अर्चा करते रहे।

चौथा परिच्छेद

बीजापुरका समाचार आनेपर

जैसा कि हमने पिछले परिच्छेदमें बतलाया, राजा शिवाजी दो दिनतक विल्कुल निर्जल उपवास करके भवानी माताके चरणोंके निकट उनकी मानसिक अर्चा करते रहे। दो दिन बीत गये, तीसरा दिन भी गया, और आधीरात होने आई। शिवबाकी मानसिक अर्चा अभी जारी थी। स्वामीजी उस समय ऊपर बैठे थे। सिर्फ अकेले शिवाजी ही भवानीमाताके सामने आसन लगाये हुए और मन एकाग्र किये हुए बैठे थे। आधीरातके लगभग स्वामी महाराज ऊपर हनुमानजीके मन्दिरका नियमानुसार बन्दोबस्त करके नीचे आये। वहाँ आकर वे देखते क्या हैं कि, राजा शिवाजी अब भी अपने ध्यानमें मग्न बैठे हैं। 'सच्चा भवानीभक्त इसीको कहना चाहिए। अभी बालपनका तेज भी चेहरेपरसे दूर नहीं हुआ; और ऐसी दृढ़ भक्ति! शावश! शिवबा, तुझको शावाश! समर्थने तुझको जो इस कामके लिये नियत किया है; और यह कहा है कि, भवानी माताका तुझपर पूर्ण कृपाप्रसाद सदैव रहेगा, सो बिल्कुल यथार्थ है! ऐसी दृढ़ भक्तिसे तू क्या प्राप्त नहीं कर सकता?

ये आश्चर्य, आनन्द और प्रेमसे युक्त उद्‌गार स्वामीजीके मुखसे आप ही आप निकल पड़े। यही नही, बल्कि उनकी ऐसी इच्छा हुई कि, शिवबाको उसी स्थितिमें हृदयसे लगाकर आनन्दाश्रु बहावें। बहुत देरतक खडे हुए वे अपने हाथ स्वस्तिकाकार करके उस महान् भवानी भक्त और देशभक्त युवा पुरुषकी ओर, एकाग्रदृष्टिसे, देखते रहे। ठीक आधी रातका समय हुआ, और शिवाजीके मुखसे एकदम कुछ शब्द बाहर निकलने लगे। स्वामीजीने, अपने सदैवके नियमानुसार, एकाग्रचित्तसे उन शब्दोंको सुनकर उनको अपने ध्यानमे रख लिया। शिवाजीके शरीर मे माताका सचार हुआ, और जैसी उनकी दशा सदैव होती थी, वैसी ही सब दशा हुई, और इस प्रकार माता अपना कृपाप्रसाद देकर अन्तर्धान हो गई। शिवबाका ध्यान पूरा हो गया। इसके बाद जब उन्होंने स्वामीजीसे पूछा कि, भवानी माताकी आज्ञा आज क्या हुई, तब स्वामीजीने निम्नलिखित शब्द उन्हें बतलाये :—

"गुरुजनोंने जो कुछ कहा, सो तेरे कल्याणके लिए। मेरा कृपाप्रसाद न जानकर ही उन्होंने ऐसा कहा। चित्तमें विषाद मत लाओ। तुम्हारे हाथसे पराक्रम होनेपर वे फिर ऐसा नहीं कह सकेंगे। उस समय फिर वे यह उपदेश देंगे कि, गौ-ब्राह्मण प्रतिपालन करना ही अपना उद्देश्य समझो। प्रयत्नमें अन्तर न पड़ने देना चाहिये। प्रतिज्ञा बहुत जल्द पूरी होगी। सहायता जो प्राप्त करनी हो, उसमें अन्तर न पडे। मेरी कृपा पूर्ण है।"

बस, इसी तरहके कुछ शब्द स्वामी महाराजने शिवबाको बतलाये, और अगले उद्योगमें लगनेके लिये प्रोत्साहन दिया। शिवाजीने जब देखा कि, तीन राततक उपवास करनेके बाद भवानी माताकी पूजाकी मानसिक फल यथेष्ट प्राप्त हुआ, तब उनको बड़ा ही आनन्द हुआ। सूर्यका बिम्ब पूर्वक्षितिजपर दिखाई पड़ते ही उन्होंने दुग्ध-पान करके त्रिरात्रि-उपवासका पारण किया। घर छोड़कर आते समय उन्होंने अपने साथियोंमेंसे किसीको भी पता न लगने दिया था कि, वे कहाँ जाते हैं, और क्यों जाते हैं। इसलिए अब उन्होंने अपने एक-दो साथियोंको सन्देशा भेजकर बुलवाया, और पहलेका सब वृत्तान्त बतलाया। साथ ही

साथ यह भी कहा कि, अब मुसल्मानोंका कोई न कोई किला हस्तगत करना अत्यन्त आवश्यक हो गया है। जिस किलेपर हमारी नजर है, उसको हस्तगत करनेमें हमारे लिए कितना जनवल और शस्त्रवल चाहिये, तथा द्रव्यवल्की कितनी आवश्यकता होगी, इत्यादि वातोंका उन्होंने मिल्कर विचार किया। उस समय उन्होंने यही सोचा कि, हथियारोंकी जितनी आवश्यकता होगी, सो तो सब हमारे पास पूरे मौजूद हैं, धनकी सामग्रीकी भी कुछ कमी न पड़ेगी। रह गया मनुष्यवल, इसमें अवश्य कमी है। इसलिये ऐसे मनुष्योंका संग्रह, जितनी भी जल्दी हो सके, करना चाहिए कि, जो सब प्रकारसे विश्वासपात्र हों—और ऐसे ही लोग हमारे इस कार्यमें मदद कर सकते हैं। इसलिए जैसा कि पिछले परिच्छेदमें वतलाया, अपने वर्तमान मनुष्योंके द्वारा ही दस-दस, पाच-पांच आदमी एकत्रित करानेकी संयोजना उन्होंने की; और तदनुसार लोगोंको एकत्रित करके आज्ञा भी देदी। सवको जतला दिया कि, देखो भाई, धनकी चिन्ता कोई मत करो। चाहे जितना खर्च हो, कोई परवा नहीं, पर धर्मका कार्य है, सो मनुष्योंकी कमी न पड़नी चाहिए। अस्तु। इतनी सब कार्यवाही होनेके वाद, जैसा कि हमने पीछे वतलाया, सब लोग अपने अपने घरोंको चले गये, और शिववा इत्यादि—अव आगे क्या करना चाहिये, वीजापुर गये हुये लोग क्या करते होंगे, अपने कार्यमें उनको कहाँ तक सफल्ता प्राप्त हुई होगी, इत्यादि वातोंके विषयमें नाना प्रकारके तर्क-वितर्क करने लगे। वीजापुरसे पत्र आनेका समय हो चुका था; और वे लोग अव आजकलमें वहाँसे कोई पत्र आनेकी प्रतीक्षा ही कर रहे थे, इतनेमें जगलके विल्कुल वाहरकी ओर उन्होंने अपना जो आदमी देखभाल करनेके लिये रख छोड़ा था, वह दौड़ता हुआ आया, और कहने लगा कि, कोई आदमी आया है, और आपसे मिलनेकी इजाजत चाहता है। उधर वीजापुर गये हुए लोगोंको भी इस वातकी वड़ी चिन्ता थी कि, शिववाकी आज्ञाके अनुसार पत्र लिखना चाहिए; और पत्रद्वारा प्रकट करनेयोग्य अनेक घटनाएँ भी वहाँ हो चुकी थीं। अतएव, इस समय जो मनुष्य आया था, वह वीजापुरसे ही आया था;

और जंगलके बिलकुल अन्तमें जो निरीक्षक रखा गया था, उसको उसने अपनी पहचानकी कटार भी स्वामीजी तथा राजासाहबको दिखानेके लिए दे दी थी। अतएव स्वामीजीने उस कटारको देखते ही उस आगत मनुष्यको लानेकी आज्ञा दी। मनुष्य आया, और आते ही नियमानुसार प्रणाम करके अपने पासकी थैली स्वामीजीको दे दी। स्वामीजी वहाँका समाचार जाननेके लिए उत्कठित हो ही रहे थे, इसलिये शीघ्रता-पूर्वक थैली खोलकर पत्र निकाला, और पहले स्वयं ही उसको ध्यानपूर्वक पढा। स्वामीजी जिस समय उस पत्रको पढ़ रहे थे, शिवबा तथा अन्य लोगोंका ध्यान बराबर उनकी चेष्टाकी ही ओर लगा हुआ था। पढ़ते पढ़ते स्वामीजीकी चेष्टामें खिन्नताका भाव आने लगा, और उसको देखते ही उसका प्रतिविम्ब अन्य लोगोंकी चेष्टापर भी दिखाई देने लगा। और उस पत्रमें क्या समाचार आया है, सो जाननेके लिए सब लोग अत्यन्त आतुर दिखाई दिये। स्वामीजीने पत्र अन्ततक पढ़ा, और फिर एक दीर्घश्वास छोड़कर क्षणमात्रके लिये सचिन्त बैठे रहे। इसके बाद पत्र लेकर सबको पढ़ सुनाया। नानासाहब इत्यादि लोग जिस दिन बीजापुर पहुँचे थे, उस दिनसे लेकर और जिस दिन आधीरातके समय नानासाहब अचानक गायब हो गये, उस दिन तकका सारा वृत्तान्त उसमें था। पहले पहल तो उस पत्रका वृत्तान्त लोगोंको अत्यन्त गूढ़सा ही प्रतीत हुआ। उसमें यही लिखा था कि, बीजापुर हम कब पहुँचे, कहाँ गये, वहाँ कौन मिला, नानासाहबके साथ एकान्तमें उसकी कैसी बातचीत हुई, और फिर हवेली हमारे सुपुर्द करके वह किस प्रकार वहाँसे चला गया, फिर दूसरे दिन जब हम बस्तीमें वेश बदलकर गये, तब एक महलमें एक नवयुवक मराठे सरदारको देखकर नानासाहबकी क्या दशा हुई, और फिर तभीसे उनकी चित्तवृत्तिमें कैसा परिवर्तन होता गया, जिस कार्यके लिये वे और हम गये थे, उसकी ओर किस प्रकार उनका ध्यान न लगने लगा, अन्तमें वे हमको न बताते हुए आधीरातके लगभग अकेले बाहर किस प्रकार गये, और यह समझकर कि, शायद वे उसी व्यक्तिसे मिलने गये होंगे, जो कि उनको वचन देकर, घर हमारे लिये छोड़कर, चला गया

था, हम किस प्रकार पहले चुप बैठे रहे, और जब यह मालूम हुआ कि, वे कहीं चले गये, तब हमने किस-किस प्रकार उनकी खोज की, फिर हमने समझा कि, शायद वे उसी सरदारके पास चले गये हों, जिसको देखकर उनकी चित्तवृत्ति ऐसी हो गई थी; और इसलिये हम फिर किस प्रकार उस महलपर गये, और वहाँ जाकर दरवानसे मिलकर फिर हमने उस बातका पता लगानेके लिए क्या-क्या प्रयत्न किया; और उसमें कहाँतक सफलता प्राप्त होनेकी आशा है, इत्यादि सब बातें उस पत्रमें लिखी थी। पत्र पढ़ते ही लोगोंकी चित्तवृत्ति कुछ विलक्षण प्रकारकी हो गई। देखो, हमने किस उद्देश्यसे उनको भेजा और यह क्या नवीन बला आ गई! यह सोचकर सब लोग मन ही मन विचार करने लगे। उनके मनमें यही आया कि, देखो एक दूसरे शहरमें उन लोगोंके साथका एक आदमी इस भाँति अचानक गायब हो गया—अब उन लोगोंकी क्या दशा होगी, इसकी कल्पना भी करना अन्य लोगोंके लिए कठिन है। फिर उसमें—दरबारका रहस्य जान लेनेकी आप ही आप प्रतिज्ञा करके जो मनुष्य गया था, वही अचानक गायब हो गया, यह भी बहुत ही बड़ी विचित्र बात हुई। पर वह चला कैसे गया, क्यों चला गया, इसकी कल्पना कोई भी न कर सका। कोई-कोई यह भी सोचने लगे कि, शायद उसने यह देखा हो कि, अब हमारी प्रतिज्ञा हमारे हाथसे पूरी नहीं होगी, और इसी लिये शायद वह कहीं चला गया हो, अथवा जिस मनुष्यने उसको अपना घर सौंप और बार-बार मिलते रहनेका वचन दिया, उसी मनुष्यने शायद किसी उद्देश्यसे धोखेबाजी की हो। इस प्रकारके अनेक विचार उनके मनमें आने लगे। परन्तु हाँ, यह शंका किसीके भी मनमें नहीं आई कि, नानासाहबसे मिलकर शायद किसीने दरबारसे उनको बड़े-बड़े पद दिलानेका लालच दिखलाया हो; और इस प्रकार अपने स्वीकृत कार्यमें दगाबाजी करनेका भाव उनके अन्दर भर दिया हो! और वास्तवमें ऐसी शंका हो ही कैसे सकती? क्योंकि नानासाहबकी दृढ़तापर सब लोगोंको पूरा-पूरा विश्वास था। हाँ, वैसा विश्वास यदि न होता,

तो इस प्रकारका संशय होनेके लिये भी कारण इस समय काफी मौजूद थे। परन्तु उस प्रकारकी कोई शंका नहीं हुई, और इसी कारण लोग इतनी गूढतामें भी पड़े। वैसी शंका यदि होती, तो इतनी गूढतामें पड़नेकी कोई आवश्यकता ही न थी। नानासाहबके समान मनुष्य बीजापुरके समान शहरमें एकाएक गायब हो गया, इसका कारण क्या? यह क्या गोलमाल है? कुछ उनकी समझमें नहीं आया। नाना प्रकारके तर्क-वितर्क हुए। अब आगे नानासाहबका पता यदि न लगा, तो बीजापुरमें वे लोग क्या करेंगे? उनको उत्तर क्या भेजा जाय? जबतक उनकी पूरी-पूरी परिस्थिति मालूम न हो जाय, तबतक हम क्या कर सकते हैं, और फिर तानाजीके समान जबरदस्त आदमी पासमें नहीं है, ऐसी दशामें हम सोच ही क्या सकते हैं? इत्यादि अनेक प्रकारके विचार शिवबाके मनमें आने लगे, और वे बड़े चक्करमें पड़े। पर बहुत देर-तक मनको चक्करमें डाले रहना उनके स्वभावके बाहर था। उनकी उस थोड़ीसी अवस्थामें भी उनके चरित्रकी यह एक खास खूबी थी कि, चाहे जितना बड़ा भारी संकट आ जाय, वे उसके कारण बहुत देरतक चक्करमें पड़े नहीं रह सकते थे, किन्तु उसको दूर करनेके लिए, अथवा ऐसी कोई तदबीर करनेके लिये, कि जिससे उसके परिणाम जरा भी उनको स्पर्श न करने पावें, वे तुरन्त ही किसी न किसी उपायकी योजना करते थे, और यही उनके चरित्रकी खास खूबी थी। बस, अपने उसी नियमके अनुसार क्षणभर एकाग्र होकर उन्होंने विचार किया, और फिर एकदम बोल उठे "स्वामीजी महाराज, नानासाहबके साथ किसीने दगाबाजी करके उनको पकड़ रखा है। इसलिए और किसीको यहांसे जाना चाहिये, अत: मैं ही स्वयं जाता हूँ।" स्वामीजीने चुपकेसे उनका कथन सुन लिया, और उनका पहला आवेग कुछ कम होने दिया। बादको फिर वे बोले, "शिवबा, तुमने यह क्या सोचा? अरे, तुम यदि आप ही आप उनके जालमें चले जाओगे, तो फिर उनको कितना आनन्द होगा! ऐसा विचार ही मनमें मत लाओ। तुम जब उनके पंजेमें पहुँच जाओगे, तब फिर उनको और क्या चाहिये? हमको वहाँ-

का वृत्तान्त फिर कुछ मालूम होने दो। थोड़ीसी प्रतीक्षा हमको और करनी चाहिये। इसके बाद कुछ उपाय अवश्य किया जायगा।" परन्तु स्वामीजीके इस कथनसे शिवबाको कोई सन्तोष नहीं हुआ। इसलिए वे फिर बोले, "अब फिरसे पत्र आनेतक रास्ता देखते रहना मेरे विचारसे ठीक नहीं—इस प्रकार न जाने कितने दिनतक रास्ता देखना पड़े; और तबतक उन लोगोंकी न जाने वहाँ क्या दशा हो! इस लिए आज हीर्भकिसीको उनके पास चला जाना चाहिये। और इसके लिए मैं ही जाऊँगा, दूसरा उपाय नहीं।" इसपर स्वामीजी फिर कहते हैं, "शिवबा, तुम्हारे ही भरोसेपर न जाने कितने काम यहाँ हैं, और तुम इस बातको समझते नहीं हो। चार दिनके लिए भी यदि तुम चुपके यहासे कहीं चले जाओगे, तो बना-बनाया सारा खेल मिट्टीमें मिल जायगा। जो सौ-पचास आदमी तुम्हारे लिए जान देनेको आगे बढ़े हैं, और पाँच-सात सौ आदमी और भी तैयार कर लेनेकी जो हम लोगोंने आशा की है, सो सब व्यर्थ जायगी। तुम यदि चले जाओगे, तो मानो सुमेरुमणि-का दाना ही छूट गिरेगा, और उसीके आधारसे जो और अनेकों मणि शीघ्रतापूर्वक हम मालामें पिरो रहे हैं, सो एक ओरसे हम पिरोते जायंगे, और दूसरी ओरसे, उस आधारके न रहनेके कारण, वे जल्दी जल्दीसे गिरते जायंगे। इसलिये तुमको अपना स्थान न छोड़ना चाहिये, न अपना प्रयत्न त्यागना चाहिये। तुम जबतक जमे रहोगे, तबतक किसी बातकी चिन्ता नहीं। एक नानासाहब ही क्यों—न जाने कितने लोग तुम्हारे पास आजायंगे। लेकिन तुम यदि विचल जाओगे, तो कोई भी टिक नहीं सकेगा। यह तुम अच्छी तरह ध्यानमें रखो।"

यह अन्तिम कथन सुनकर शिवबा एकदम स्वामीजीकी ओर देख-कर कहते हैं, "स्वामीजी मेरे स्नेही मुझपर पक्का विश्वास रखकर, केवल मेरे कहनेसे ही, अपने प्राणोंकी भी परवा न करते हुए, जहाँ मैंने कहा, चले गये। उस नवीन जगहमें क्या संकट आवेंगे; और क्या नहीं आवेंगे, इसका उन्होंने क्षणभरके लिए भी विचार नहीं किया। और अब, जब कि उनपर संकट आया हुआ है, ऐसी दशामें मैं यदि

तो इस प्रकारका संशय होनेके लिये भी कारण इस समय काफी मौजूद थे। परन्तु उस प्रकारकी कोई शंका नहीं हुई, और इसी कारण लोग इतनी गूढतामें भी पड़े। वैसी शंका यदि होती, तो इतनी गूढतामें पड़नेकी कोई आवश्यकता ही न थी। नानासाहबके समान मनुष्य बीजापुरके समान शहरमें एकाएक गायब हो गया, इसका कारण क्या? यह क्या गोलमाल है? कुछ उनकी समझमें नहीं आया। नाना प्रकारके तर्क-वितर्क हुए। अब आगे नानासाहबका पता यदि न लगा, तो बीजापुरमें वे लोग क्या करेंगे? उनको उत्तर क्या भेजा जाय? जबतक उनकी पूरी-पूरी परिस्थिति मालूम न हो जाय, तबतक हम क्या कर सकते हैं, और फिर तानाजीके समान जबरदस्त आदमी पासमें नहीं है, ऐसी दशामें हम सोच ही क्या सकते हैं? इत्यादि अनेक प्रकारके विचार शिवबाके मनमें आने लगे, और वे बड़े चक्करमें पड़े। पर बहुत देर-तक मनको चक्करमें डाले रहना उनके स्वभावके बाहर था। उनकी उस थोड़ीसी अवस्थामें भी उनके चरित्रकी यह एक खास खूबी थी कि, चाहे जितना बड़ा भारी संकट आ जाय, वे उसके कारण बहुत देरतक चक्करमें पड़े नहीं रह सकते थे, किन्तु उसको दूर करनेके लिए, अथवा ऐसी कोई तदवीर करनेके लिये, कि जिससे उसके परिणाम जरा भी उनको स्पर्श न करने पावें, वे तुरन्त ही किसी न किसी उपायकी योजना करते थे, और यही उनके चरित्रकी खास खूबी थी। बस, अपने उसी नियमके अनुसार क्षणभर एकाग्र होकर उन्होंने विचार किया, और फिर एकदम बोल उठे "स्वामीजी महाराज, नानासाहबके साथ किसीने दगाबाजी करके उनको पकड़ रखा है। इसलिए और किसीको यहांसे जाना चाहिये, अत. मैं ही स्वयं जाता हूँ।" स्वामीजीने चुपकेसे उनका कथन सुन लिया, और उनका पहला आवेग कुछ कम होने दिया। बादको फिर वे बोले, "शिवबा, तुमने यह क्या सोचा? अरे, तुम यदि आप ही आप उनके जालमें चले जाओगे, तो फिर उनको कितना आनन्द होगा। ऐसा विचार ही मनमें मत लाओ। तुम जब उनके पंजेमें पहुँच जाओगे, तब फिर उनको और क्या चाहिये? हमको वहाँ-

घूम भी आये। आशा थी कि, वहाँ कहीं, किसी तरफ कोई दरवाजा अथवा खिड़की उनके हाथमें लगेगी; पर सफल नहीं हुई। तहखानेमें जिस समय लाकर उनको डाला गया था, उस समय एक दरवाजा खुला था, यह उनको मालूम था; पर इस समय वह भी, किसी प्रकार, उनके हाथमें नहीं लगा। इसलिए उन्होंने समझा कि, दरवाजा ही इतना सपाट लगता होगा, जोकि मालूम नहीं हो सकना। इसके सिवाय, खिड़कीका तो उसमें नाम भी नहीं था। जो हो। एक घण्टा। डेढ़ घण्टा। दो घण्टे भी होगये। न कोई आया, न कोई गया। यह अहमद कौन है? इसने, और साथके अन्य कुछ लोगोंने, हमको किस महलमें लाकर डाला है? बस इन दो प्रश्नोंके अतिरिक्त और किसीका भी साथ नानासाहबको नहीं था। सारी रात लौट गई होगी—क्योंकि रात लौटी अथवा नहीं, इस बातको जाननेके लिए उनके सामने कोई साधन नहीं था। बाहर सुबह होजाय; सुबह ही क्यों—दोपहर क्यों न होजाय, फिर भी उस तहखानेके अन्दर सूर्यप्रकाशका एक लवलेश भी प्रविष्ट होना सम्भव नहीं था। पर नानासाहब बेचारेको समयकी प्रतीक्षा करते रहनेके अतिरिक्त चूंकि और कोई उद्योग ही नहीं था; अतएव जब चाहते, तब वे यही समझ लेते कि, अब सुबह होगया होगा—अब देखो, सुबह अवश्य होगया—अब कोई आता होगा, इत्यादि। बस, इसी प्रकारकी प्रतीक्षामें वे अपना समय काट रहे थे। कभी-कभी उनके मनमें यह भी आता कि, देखो हमारे पश्चात् हमारे मित्रोंकी क्या दशा हुई होगी, वे हमारा पता लगानेके लिए क्या-क्या उपाय करते होंगे, और जिस कामके लिये हम आये, वह तो एक ओर रहा, और यह एक विघ्न बीचमें ही आकर खड़ा होगया, यह सोचकर वे बेचारे हमारे साथी कितने दुखी होते होंगे, इत्यादि विचार भी बेचारे नानासाहबको सता रहे थे। निदान, उनका मन और शरीर उस समय इतना व्याकुल हो रहा था कि, जितना व्याकुल होना चाहिए। इसलिए अब वे केवल भाग्यका भरोसा किये चुपके बैठे थे। इतनेमें ऐसा जान पड़ा कि, अब दोपहरके ग्यारह बजे, और इसलिए वे अब इस प्रकार तैयार होकर एक

चुप बैठा रहूँगा, तो फिर स्वीकृत कार्यमें सफलता प्राप्त होनेकी आशा ही क्या करनी चाहिये ? जबतक उनके मनमें इस बातका दृढ़ विश्वास बना है कि, मैं मौका पड़नेपर उनकी जानके लिए जान देनेको तैयार हूँ, और जबतक वे हृदयसे यह समझते हैं कि, कोई भी लड़ाईका मौका आजाय, मैं मोर्चेपर जानेको तैयार हूँ, तभीतक स्वीकृत कार्यमें सफलता प्राप्त करनेकी मैं आशा रख सकता हूँ। इसलिए, मैं एक न सुनूँगा। मेरे ये सहायकगण किसी भारी संकटमें फँस गये हैं। उनके पास जाकर उनको धैर्य दिलाना ही मेरा कर्तव्य है।"

पांचवां परिच्छेद

तहखानेमें

नानासाहबको कोई बिलकुल अज्ञात मनुष्य, धोखा देकर किस प्रकार कहाँ लेगये, सो पाठकोंको मालूम हो चुका है। उस तहखानेमें जब वे बन्द कर दिये गये, तब उनके चित्तमे किस-किस प्रकारके विचार आने लगे, इस विषयमें पाठकोंके सामने कोई विशेष वर्णन करनेकी आवश्यकता नहीं दिखाई देती। जिस प्रकार उनका शरीर उस समय अन्धकारमें था, उसी प्रकार उनका मन भी एक तरहसे अन्धकारहीमें था। क्योंकि बाहरी अन्धकारके कारण जिस प्रकार उनको यह नहीं मालूम होता था कि, हम कहाँपर हैं, और हमारे आसपासकी जगह कैसी क्या है, उसी प्रकार हमको यहाँ लानेमें लानेवालोंका उद्देश्य क्या है, इत्यादि बातोंके विषयमें भी उनका मन अन्धकारहीमे था। हाँ, हमारे हाथ-पैर छूट जाँय, इस विचारमे वे उनको इधर-उधर चला रहे थे। साथ ही, यह सारा क्या गोलमाल है, इसका जाननेके लिए उनका मन भी बराबर दौड़धूप और सोच-विचार कर रहा था। बहुत देरतक प्रयत्न करनेके बाद इतनी स्वतन्त्रता उन्होंने प्राप्त कर ली कि, जिससे उनके हाथ-पैर छूट गये, मुँह भी खुल गया, और वे अब इधर-उधर टटोलनेको समर्थ हो गये। कुछ देर बाद वे उस तहखानेके चारों ओर

जाता था कि, हमारे पीछे कोई है तो नहीं, अथवा कोई आता तो नहीं है। इस प्रकार धीरेसे जब वह व्यक्ति उनके बिल्कुल पास आ गया, तब कहता है, "जनाब, आपको बहुत भूख लगी होगी; पर मैं यदि कुछ लाऊँ भी, तो आप खायेंगे नहीं। यह जगह और किसीको मालूम नहीं है; और न कोई दूसरा यहाँ आ सकता है—मैं आपकी दासी फ़ातिमा बड़ी कठिनाईसे आ पाई हूँ। आपके खाने-पीनेका इन्त-जाम अब क्या हो सकता है? अहमद एक बड़ा दुष्ट आदमी है, वह आपको भूखों ही मार डालेगा।" ये शब्द एक स्त्रीके कंठसे इतनी माधुरीके साथ निकले कि, उन्हें सुनते ही नानासाहब अबतकका अपना सारा दुःख एक क्षणभरमें भूल गये। क्या यह फ़ातिमा वही स्त्री है कि, जिसने रातको हमें पकड़ लानेवाले अहमद तथा अन्य लोगोंकी सहायता करके हमें इस काल-कोठरीमें बन्द किया? और यदि सचमुच यह वही स्त्री है, तो फिर कल इसने उन लोगोंको इस कार्यमें सहायता क्यों दी? और आज हमसे इतना प्रेम दिखलाकर बात कर रही है, इसका कारण क्या है? यह भी नहीं कह सकते कि, इसका यह प्रेम बनावटी है; क्योंकि भीतर आते समय यह बहुत डरती हुई आयी है; और पीछे मुड़ मुड़कर देखती आई है कि, इसका यह कार्य कोई देख तो नहीं रहा है? इस विचारने नानासाहबके मनको और भी अधिक गोलमालमें डाला। अभीतक तो इसी विचारसे उनका मन चकरा रहा था कि, हम कहा आ गये, और हमको यहाँ कौन लाया? पर अब यह एक नवीन ही प्रकरण उपस्थित हुआ। हमको यहाँ पर लाकर कैद करनेवाला हमारा कट्टर दुश्मन है, इसमें सन्देह नहीं, और यह फातिमा उसकी सहायता करने-वाली है, यह भी स्पष्ट है। तब फिर, आज यह इस प्रकारका विलक्षण व्यवहार क्यों करती है? बस, यह विचार नानासाहबके मनमें आ रहा था कि, फातिमा फिर कहती है, "जनाबमन्, आपको भूख लग रही होगी, इसमें मुझे तो बिल्कुल सन्देह नहीं, इसलिए किसी तरह मैं आपको थोड़ेसे फल लाये देती हूँ। प्यासके लिये—मेरे हाथका पानी तो आप पी नहीं सकते, सो मैं एक तरबूज लिये आती हूँ। किसी तरह

ओर बैठे कि, जैसे तहखानेका दरवाजा खुलते ही वे मौका पाकर निकल भागना चाहते हों। इतनेमें सचमुच ही दरवाजा खुला, और कोई मनुष्य भीतर आया। वह आनेवाला दरवाजेसे ही इधर-उधर देखने लगा। वह बार-बार आगे पीछे देखता, और मानो यह सोचता हुआ सा दिखाई दिया कि, अब मैं पैर भीतर रखूँ या न रखूं। फिर मानो उसने यह समझा कि, खैर, भीतर पैर रखनेमें कोई हर्ज नहीं है, इसलिए उसने पैर भीतर रखा, और तुरन्त ही दरवाजा बन्द कर लिया। उसके हाथमें एक छोटीसी लालटेन थी, जिसे उसने आगे बढाया। इसके बाद उसने इस विचारसे कि, उस लालटेनका प्रकाश अच्छी तरहसे पडे, उसको खूब ऊँचा उठाया, और चारों ओर खूब निगाहसे देखा। इससे, नानासाहब जिधर खड़े थे, उस ओर जब लालटेनका प्रकाश गया, और उनका चेहरा उसकी निगाहमें आया, तब वह मनुष्य कुछ आश्चर्य चकितसा दिखाई दिया। नानासाहबने भी जब उस भीतर आनेवाले मनुष्यका चेहरा देखा, तब उन्होंने समझा कि, शायद यह वही मनुष्य आया होगा कि, जिसका नाम हमने रातको सुना था। इसके बाद, अब आगे क्या चमत्कार होता है, इस बातकी प्रतीक्षा करते हुए वे चुपके खडे रहे। उन्होंने पहले यह विचार किया था कि, दरवाजा खुलते ही हम निकल जायँगे, परन्तु यह विचार अब उन्होंने छोड दिया। अब उनके ध्यानमें आ गया कि, हमारा उक्त विचार कितना असम्भव है, क्योंकि वे लोग रातको उस तहखानेके अन्दर उनको किस फेरफारसे लाये थे, इसका उन्हें अब स्मरण आया, और उन्होंने सोचा कि, तहखानेके दरवाजेसे चाहे हम एक बार निकल भी जावें, परन्तु फिर भी इस महलके बाहर निकल जाना बहुत ही कठिन बात है। इसलिये उन्होंने सोचा कि, यह मनुष्य जो अभी भीतर आया है, इसीसे यदि हो सके, तो सब हाल जान लें, और यदि मुमकिन हो, तो इसीके द्वारा कुछ छुटनेका भी उपाय करें। इधर वह व्यक्ति, जो नानासाहबके चेहरेको देखते ही बिलकुल आश्चर्यचकितसा हो गया था, उसका वह आश्चर्य जब कुछ कम हुआ, तब एक कदम आगे बढा, परन्तु प्रत्येक कदमपर वह मुड़ मुडकर देखता

जाता था कि, हमारे पीछे कोई है तो नहीं, अथवा कोई आता तो नहीं है। इस प्रकार धीरेसे जब वह व्यक्ति उनके बिल्कुल पास आ गया, तब कहता है, "जनाब, आपको बहुत भूख लगी होगी; पर मैं यदि कुछ लाऊँ भी, तो आप खायेंगे नहीं। यह जगह और किसीको मालूम नहीं है; और न कोई दूसरा यहाँ आ सकता है—मैं आपकी दासी फ़ातिमा बड़ी कठिनाईसे आ पाई हूँ। आपके खाने-पीनेका इन्त-जाम अब क्या हो सकता है? अहमद एक बड़ा दुष्ट आदमी है, वह आपको भूखों ही मार डालेगा।" ये शब्द एक स्त्रीके कठसे इतनी माधुरीके साथ निकले कि, उन्हें सुनते ही नानासाहब अबतकका अपना सारा दुःख एक क्षणभरमें भूल गये। क्या यह फ़ातिमा वही स्त्री है कि, जिसने रातको हमें पकड़ लानेवाले अहमद तथा अन्य लोगोंकी सहायता करके हमें इस काल-कोठरीमें बन्द किया? और यदि सचमुच यह वही स्त्री है, तो फिर कल इसने उन लोगोंको इस कार्यमें सहायता क्यों दी? और आज हमसे इतना प्रेम दिखलाकर बात कर रही है, इसका कारण क्या है? यह भी नहीं कह सकते कि, इसका यह प्रेम बनावटी है; क्योंकि भीतर आते समय यह बहुत डरती हुई आयी है, और पीछे मुड़ मुड़कर देखती आई है कि, इसका यह कार्य कोई देख तो नहीं रहा है? इस विचारने नानासाहबके मनको और भी अधिक गोलमालमें डाला। अभीतक तो इसी विचारसे उनका मन चकरा रहा था कि, हम कहा आ गये, और हमको यहाँ कौन लाया? पर अब यह एक नवीन ही प्रकरण उपस्थित हुआ। हमको यहाँ पर लाकर कैद करनेवाला हमारा कट्टर दुश्मन है, इसमें सन्देह नहीं, और यह फातिमा उसकी सहायता करने-वाली है, यह भी स्पष्ट है। तब फिर, आज यह इस प्रकारका विलक्षण व्यवहार क्यों करती है? बस, यह विचार नानासाहबके मनमें आ रहा था कि, फातिमा फिर कहती है, "जनाबमन्, आपको भूख लग रही होगी, इसमें मुझे तो बिल्कुल सन्देह नहीं, इसलिए किसी तरह मैं आपको थोड़ेसे फल लाये देती हूँ। प्यासके लिये—मेरे हाथका पानी तो आप पी नहीं सकते, सो मैं एक तरबूज लिये आती हूँ। किसी तरह

आप शामतक तो वक्त काटें। शाम होते ही मैं एक मराठा स्त्रीके द्वारा आपके लिये कोई भोजनका प्रबन्ध कराऊँगी। जो कुछ आज मैंने देखा, वह यदि····· ”

आगे यह क्या गुनेगुनाई, सो नानासाहब कुछ भी नहीं सुन सके। इसके बाद कुछ देरतक फातिमा कुछ भी नहीं बोली। हाँ, अपनी लालटेनका उजेला नानासाहबके चेहरेपर पूरा पूरा डालकर वह उनकी ओर एकटक देख रही थी। बहुत समय हो गया, परन्तु उनके चेहरेकी ओर देखनेकी उसकी लालसा मानो तृप्त ही नहीं हुई, पर बेचारी करती क्या ? अब बहुत देरतक वह वहाँ ठहर भी नहीं सकती थी, इसलिए, यही सोचकर, वह धीरे धीरे एक एक कदम दरवाजेकी ओर चलने लगी। नानासाहब उसके इस व्यवहारका कोई भी भेद समझ नहीं सके। यह है कौन ? हमपर इसकी इतनी भक्ति क्यों है ? यह सच्ची है, अथवा इसमें कुछ बनावटीपन है ? इससे सब हाल जाननेका प्रयत्न हमें करना है, सो इसी समय करें, अथवा इसका और भी कुछ रगढग देखकर करें। यह वे सोच ही रहे थे कि, फातिमा इतनेमें बाहर निकल गई। दरवाजा खोलते ही उसने एक बार पीछे मुड़कर देखा, फिर एक लम्बी साँस छोडी, और लालटेन बुझाकर फिर उसने दरवाजा बन्द कर लिया। इधर नानासाहब फिर अपने विचारोंसे ही सलाह-मशविदा करते हुए चुप बैठ गये। सेकण्ड, मिनट, घटे, एकके बाद एक, बीतते ही चले जा रहे थे। जैसे किसी सिंहको अचानक जाकर कोई पकड़ ले, और फिर उसे किसी बड़े पिंजरेमें लाकर बन्द कर दे, तथा उसके खाने-पीनेका भी कोई बन्दोबस्त न करे, और उस समय जैसी उसकी हालत हो जाय, बस, वैसी ही हालत इस समय नानासाहबकी हो रही थी। उनके शरीर और मन, दोनोंको अन्नकी आवश्यकता थी, और उसके न मिलनेके कारण उनकी हालत उसी सिंहकी भाँति ही हो रही थी। उनका मन और शरीर, दोनों बराबर इधरसे उधर चक्कर काट रहे थे। वे बार बार यही सोचते कि, कब फातिमा आवे, और कब उससे सब हाल जाननेका मौका मिले। जैसा कि वह कह गई है, क्या फिर भी वह

आवेगी? हम उसके पेटमें बैठने लगेंगे, तब वह पैठने देगी क्या? हमको जो मनुष्य यहाँ पकड़वा लाया है, वह हमको पहचानता अवश्य ही होगा; और यदि वह पहचानता है, तो उसके शत्रु होनेमें भी कोई सन्देह नहीं। और यदि वह सचमुच हमारा शत्रु है; और शत्रुताके कारण ही वह हमें यहाँ लाया है, तो फिर इस शत्रुके घरमें भी हमपर इतनी भक्ति करनेवाली यह फातिमा कौन है? और जिसको यह आप ही आप "वह बड़ा दुष्ट है," कहकर बतलाती है, वह अहमद कौन है? वह जिस समय हमें यहाँ लाया था, फातिमासे उसने पूछा था कि, "मालिकको तो इसका पता नहीं लगा?" इसका कारण क्या है? इसका मालिक कौन है? अपने मालिकको पता न लगने देकर हमको वह यहाँ क्यों कैद कर लाया? ये प्रश्न अपने ही आप पूछते हुए वे कुछ देरके लिये खड़े हो गये। इसके बाद एक वार न जाने मनमें क्या विचार आया कि, उनकी वृत्ति कुछ उल्लसितसी दिखाई दी। "जिस नवयुवक मराठे सरदारके महलके पास हम वार वार खड़े हो जाते थे, उसीसे तो इस विषयका कोई सम्बन्ध नहीं है? हम उसके दरवाजेके पास खड़े होकर बराबर उसकी ओर देखते रहते थे इससे हमारे विषयमें कोई सन्देह तो नहीं हो गया? और शायद इसी कारण हमको किसीने ऐसी विचित्र दशामें डाल रखा हो। पर हमारे विषयमें सन्देह क्या होगा?" इस प्रकारके कुछ विचित्र ही विचार उनके मनमें आये; और इसके बाद फिर वे फ़ातिमाकी प्रतीक्षा करने लगे। इस समय वे जिस दशामें थे, उसमें ऐसे ही किसी व्यक्तिकी सहायता मिले विना काम नहीं चल सकता था; और यह बात वे भलीभाति जानते थे। जो हो। अन्तमें फिर सन्ध्याका समय आया; और नानासाहब चातककी भाति बैठकर ताकने लगे। इतनेमें उन्हें मालूम हुआ कि, दरवाजा खुला, अब कोई भीतर आ रहा है; और उन्हें बड़ा आनन्द हुआ। सचमुच ही खिन्न-वदना फ़ातिमा आकर उनके सामने खड़ी हुई। उसके पीछे-पीछे एक और भी स्त्री थी। फ़ातिमाने उस स्त्रीको भीतर बुलाया, और वह जो कुछ अपने साथ बाँधकर लाई थी, उसे वहीं रख देनेके लिए कहकर

उसे जानेका इशारा किया, और स्वयं भी जाने लगी। नानासाहब उससे मिलनेको उत्सुक थे ही। इसलिये वे स्वाभाविक ही उससे ठहरनेके लिए इशारा करने लगे। उसने भी इशारेसे बतलाया कि; मैं अभी आती हूँ, और फिर दूसरी स्त्रीके साथ चली गई।

अपने इशारेके अनुसार फातिमा सचमुच ही कुछ समय बाद आई; और उस दूसरी स्त्रीने लाकर, जहाँ कुछ पदार्थ रख दिये थे, वहीं अपनी लालटेन रखकर वह कहती है, "जनाब, इस दासीने दोपहरको आपके पास फल-फलहरी पहुँचानेके लिए बहुत उपाय किये, पर आपके पास आनेका किसी प्रकार भी मौका नहीं मिला। जी मानता नहीं था; पर क्या करूँ? यदि जरा भी यह प्रकट हो जाता कि मैं आपके पास जाती हूँ, तो आपहीके समान मेरी भी गति हुई होती। और एक बार यदि मेरी वैसी गति हो गई होती, तो जो मैं आपके पास आकर किसी तरह यह खाने-पीनेका सामान पहुँचा सकती हूँ, सो भी बन्द हो जाता, और फिर न जाने आपकी क्या दशा हुई होती! बस, इसी डरसे मैंने दोपहरको जल्दी नहीं की। अब आपके लिये ये पदार्थ खास तौरपर तैयार करवाकर लाई हूँ, इनको आप पावें। जो स्त्री ये पदार्थ लाई है, वह खास मराठिन है। उसके हाथके पदार्थ खानेमें तो आपको कोई एतराज है ही नहीं।"

नानासाहब चुपके उसका यह कथन सुन रहे थे। यह जाननेके लिये कि, उसके कथनमें हार्दिकता कितनी है, वे बराबर उसके चेहरेकी ओर देख रहे थे, और उसके चेहरेसे उनको विश्वास हो गया कि, सचमुच ही मेरे ऊपर इसकी सच्ची भक्ति है। इसलिये यह सोचकर कि, अब हमें इसकी इस भक्तिसे लाभ उठा लेना चाहिये, अत्यन्त धैर्यके साथ वे उससे कहते हैं, "सुन्दरी, तू यदि सचमुच ही मुझपर इतनी भक्ति रखती है, तो क्या तू मेरी बातोंका उत्तर देगी? यदि सचमुच ही मेरे ऊपर तेरी भक्ति होगी, और यदि सचमुच ही हृदयसे तू यह चाहती होगी, कि मेरा कल्याण हो—मेरे साथ कोई दगा न हो—तो जो कुछ मैं पूछूँगा, उसका उत्तर तू अवश्य ही देगी।"

फातिमा बिल्कुल चुप खड़ी रही; परन्तु ऐसा जान पड़ा कि, उसकी बोलनेकी इच्छा अवश्य है, पर किसी कारणवश वह बोल नहीं सकती है; और इस कारण उसे बड़ा खेद हो रहा है। अतएव नानासाहब उससे फिर कहते हैं, "देख सुन्दरी, यदि तू कुछ न बोलेगी, तो मैं यही समझूँगा कि, जिन लोगोंने मुझे यहाँ कैद कर रखा है, उन लोगोंने कुछ धोखा देनेके लिये ही तुझे मेरे पास भेजा है; और तू मेरे विषयमें यह बनावटी प्रेम दिखला रही है। यदि ऐसा नहीं है, तो तुझे बोलना चाहिये, और जो मैं पूछता हूँ, उसका उत्तर देना चाहिये। तू यदि उत्तर नहीं देगी, तो यह कुछ भी मुझे अच्छा नहीं लगेगा।"

यहाँ तक नानासाहबने कहा; परन्तु फातिमा फिर भी वैसी ही विवेचनामें पड़ी हुई बिल्कुल चुप खड़ी रही। परन्तु अन्तमें जब उसने देखा कि, अब कुछ बोले बिना काम नहीं चलता, तब धीरेसे कहती है, "जनाब, मेरा कलेजा भी यदि आप मागे, तो उसे देनेके लिये मैं तैयार हूँ; फिर आपकी बातोंका उत्तर क्यों न दूँगी? परन्तु आप आज मुझसे कुछ भी न पूछिये। कल मैं रातको फिर आऊँगी, उस समय जो कुछ पूछना हो, खुशीसे पूछिये। मैं उसका उत्तर दूँगी। परन्तु पहले यह भोजन जो मैं लाई हूँ, उसे कर लीजिये।"

नानासहब उस समय बिल्कुल आतुर हो रहे थे। इसलिये वे फिर कहते हैं, "अरे—पर कल ही क्या है? आज बतला दे तो? कल शामतक—बीचमें कितना समय है, इसकी भी तुझे कुछ कल्पना है? क्या करूँ? मैं अचानक धोखेमें पकड़ा गया। नहीं तो, मेरे सामने होकर यदि कोई लड़कर मुझे पकड़ता, तो कभी सम्भव नहीं था। मेरे हाथमें न कोई हथियार है न बथियार। मुझे ऐसी दशामें लाकर डाल दिया है; और इसी कारण तेरे समान स्त्रीकी प्रार्थना करनेकी मुझे नौबत आ गई है। अच्छा, तू यदि मुझे कुछ बतलाना नहीं चाहती है, तो मत बतला। पर इतना तो बतला दे कि, यह महल किसका है। यह तू मुझे न बतला कि, मुझे यहाँ क्यों पकड़ लाये—और कौन पकड़ लाये—पर यह बतलानेमें क्या हानि है कि, यह महल किसका है?

और यदि सचमुच मुझपर तुझको दया आती हो, तो मुझे थोड़ासा कागज और कलम-दवात ला दे। मैं एक पत्र लिखे देता हूँ, सो जहाँ मैं बतलाऊँ, वहाँ उसे पहुँचानेकी कृपा कर। इतना भी यदि तेरे हाथसे न हो, तो फिर यह झूठी भक्ति मुझपर मत दिखला। जा, मैं यही समझूँगा कि, मेरे शत्रुओंने, मुझे कोई भयकर धोखा देनेके लिये, यह एक डाइन खड़ी की है।"

कह नहीं सकते, क्या कारण था, पर इस अन्तिम वाक्यको सुनते ही फातिमाकी चेष्टा कुछ विलक्षण ही दिखाई दी। उसकी आँखोंमें आँसू आ गये, और वह बराबर लम्बी-लम्बी सासें लेती हुई खडी रही। इसके बाद फिर एकदम नानासाहबसे कहती है, "जनाब, आपने जो कुछ कहा, उसका करना कितना कठिन है, इसकी कल्पना भी आपको नहीं। अस्तु। पर इतने हीसे यदि आप मेरी भक्तिकी परीक्षा करना चाहते हैं, तो मैं आपकी बातको स्वीकार करती हूँ। पर वह काम भी कलतक ठहरे बिना हो नहीं सकता। यहासे अब मैं जाऊँगी, पर कागज, कलम, दवात लाना बहुत ही कठिन है—किंबहुना, बिल्कुल ही असम्भव है। आप यदि कुछ धैर्यसे काम लेंगे, तो मैं आपका यह काम अवश्य कर दूँगी, और यही क्यों—मैं आपके यहासे छूटनेका भी बन्दोवस्त कर दूँगी। पर आप मुझपर विश्वास रखें, और किसी बातके। जल्दी न करें।"

उपर्युक्त बातें उसने इतने हृदय पूर्वक कहीं, कि फिर उनको उसके विरुद्ध बोलनेका साहस ही न हुआ। वे चुप हो रहे। फातिमाने फिर हाथ जोड़कर उनसे प्रार्थना की कि, आप कृपा करके मेरे लाये हुए इन पदार्थोंको पावें। इसपर उनके मनमे फिर भी थोड़ी सी शका आई कि, हम इसके आग्रहके अनुसार, इस भोजनको सेवन कर या नहीं? इसमें कोई विपका सयोग तो नहीं कि, जिसका हमपर कोई बुरा प्रभाव पड़े? यह स्त्री हमपर इतना प्रेम दिखलाती है, इसका कारण क्या है? कोई धोखेबाजी तो इसमें नहीं? इस प्रकारके विचार फिर भी उनके मनमें आये बिना नहीं रहे। परन्तु अभीतक उससे जो बातचीत

हुई थी, उससे उनका मन अब उसपर विश्वास करनेके लिये एक प्रकारसे तैयार ही था। इसके सिवाय, अब उनके पेटकी भी ऐसी दशा हो रही थी कि, इस प्रकार आदरके साथ लाये हुए भोजनके विषयमें विशेष शंका भी नहीं की जा सकती थी। इसलिये उन्होंने फिर शीघ्र ही उन पदार्थोंका रसास्वाद लिया।

दूसरे दिन शामके वक्त फिर फ़ातिमा पहले ही दिनकी भाति आई। आज भी वह पहले ही दिनकी भाति उक्त मराठा स्त्रीके द्वारा सुन्दर भोजन ले आई थी, और पहले दिन जैसा कि उसने स्वीकृत किया था, तदनुसार क़लम, दवात और क़ाग़ज भी साथ ही ले आई थी। पहले ही दिनकी तरह प्रथमतः उसने उस मराठा स्त्रीको वहासे हटा दिया; और स्वयं अन्दर आकर उसने नानासाहबसे पत्र लिखनेकी प्रार्थना की।

छठवां परिच्छेद

सरदार साहबकी आतुरता

"आपके यहाॅ चिराग़ रखकर मेरा यहाँसे जाना सम्भव नहीं। इसलिए जो कुछ आपको लिखना हो, जितनी शीघ्रताके साथ लिख सकें, लिख देवें। किस समय क्या होगा, इसका कुछ ठीक नहीं। मैं बहुत देरतक यहाॅ रह नहीं सकती। आप जब पत्र लिख चुकें, तब मुझे बतला दें, कि उसे कहाॅ ले जाना होगा। मैं उसे पहुँचा दूॅगी।" इस प्रकार जब फ़ातिमा नानासाहबसे प्रार्थना कर चुकी, तब उन्होंने उसकी लाई हुई सामग्रीका उपयोग किया। परन्तु वे सिवाय इसके लिख ही क्या सकते थे कि, शहरके बाहर एक बड़े भारी महलके तहखानेमें हमें जबरदस्ती इस प्रकार कैद कर रखा है। जिस महलके तहखानेमें, हमको एक गठरीकी तरह बाँधकर, डाल दिया है, वह महल है किसका ? और हमको पकड़ा किसने ? यहाँ लाया कौन ? और क्यों ? इत्यादि बातोंके विषयमें वे एक चकार शब्द भी नहीं लिख सकते थे। इस विषयमें तो वे अभीतक भयंकर अन्धकारमें ही थे। हमको गठरीकी तरह बाँधकर

अहमद लाया है , पर अहमद कौन है ? यह फातिमा कौन है ? इत्यादि बातोंका भी उन्हें कुछ ज्ञान न था । हॉ, अब इतनी आशा अवश्य हो चली थी कि, इस फ़ातिमाके द्वारा इस सम्बन्धमे हमको कुछ ज्ञान अवश्य होगा । नानासाहब पत्र लिखनेके लिए बैठे, पर जब उन्होंने सोचा कि, वास्तवमें हम लिखें इसमें क्या, तब वे एकदम फातिमाकी ओर देखकर बोले, "ऐ सुन्दरी, मैं लिखने तो बैठा, पर लिखूॅ क्या, मुझे कौन पकड लाया ? मैं किसके महलमें हूँ ? कुछ मालूम नहीं। इससे तो, यदि तेरे हाथमें हो सके, मेरा छुटकारा ही क्यों न कर दे ? मैं जन्मभर तेरा उपकार नहीं भूलूॅगा ।" नानासाहबका यह कथन सुनकर फातिमा कुछ हॅसी , और फिर कहती है, "जनाबमन्, मौक़ा तो मिलने दीजिये, मौका मिल्नेपर मैं आपका छुटकारा अवश्य करूॅगी, आप विश्वास रखिये । पर यह बात आज तो किसी प्रकार नहीं हो सकती। आज तो आप—जिन्दा हैं, भयका कोई कारण नहीं, इतना यदि किसीको लिखना हो, तो लिख दीजिये। जबतक मैं इस महलमें हूँ, तबतक, अब आपके प्राणोंको कोई धक्का नहीं पहुँचा सकता, इसका आप विश्वास रखिये। मैं स्वयं आपका यह पत्र ले जाकर दूॅगी। और जो कुछ बतलाने योग्य होगा, अवश्य जाकर बतलाऊँगी ।" फ़ातिमाके इस कथनपर फिर वे एक अक्षर भी नहीं बोल सके। हम कहॉ हैं, और हमको कैद कर लानेवालेका इसमें क्या उद्देश्य है, इत्यादि बातें भी उन्होंने फिर उससे नहीं पूछीं। उन्होंने ताड़ लिया कि, हमारे ऊपर इसकी दृढ़ भक्ति है , और अब इसके कहनेके अनुसार ही कार्य करनेमे चतुराई है। बस, यह सोचकर उन्होंने तानाजी इत्यादिके ठहनेका स्थान उसे बतलाया, और फातिमा थोड़ी ही देरमें उनसे बिदा होकर चली गई। हॉ, जाते समय इतना उसने अवश्य कहा कि, "मैं अब आपका काम करने जा रही हूँ, इसमें यदि कोई विघ्न नहीं आया, तो मैं आपकी सेवाके लिये फिर आ जाऊँगी। और यदि कोई ऐसा ही विघ्न आ गया, तो फिर मैं यह नहीं कह सकता कि, आपकी और मेरी भेंट फिर कब होगी। ऐसा यदि कोई विघ्न आ गया, तो मैं यह भी नहीं

कह सकती कि, उस दशामें फिर आपका क्या होगा। इसलिए इतना मैं बतलाये जाती हूँ कि, आप किसके महलमें हैं। और निशानीके तौरपर एक ताबीज भी आपको दिये जाती हूँ। यह तावीज मैंने अभीतक किसीके पासतक नहीं जाने दिया। किन्तु इसे आपको देती हूँ। इसका क्या उद्देश्य है, सो मैं आज आपको बतला नहीं सकती। जिस कामके लिये मैं जा रही हूँ, उसमें यदि मुझे अपने प्राण देनेकी नौबत आ गई, आपको जो पकड़ लाया है, उसने यदि मेरे शरीरका भी कुछ बुरा-भला कर डाला, तो फिर आपकी और मेरी भेंट कैसे होगी? वह दुष्ट चाडाल क्या करेगा; और क्या नहीं, इसका कोई ठीक-ठिकाना नहीं। इसलिए जब आप पूरे तौरपर जान लें कि, अब आपकी और मेरी भेंट नहीं हो सकती, तब आप इस तावीजको तोड़कर देखें। इससे अधिक और इस समय मैं कुछ कह नहीं सकती।" इतना कहकर फ़ातिमाने नानासाहबके कानमें कुछ कहा; और बहुत जल्द वहाँसे निकलकर चल दी। उनके कानमें उसने जो कुछ कहा, उसे सुनकर वे बिल्कुल चित्रकी तरह स्तब्ध रह गये मनमें सहस्रों प्रकारके विचार आने लगे। जिसके महलमें लाकर वे रखे गये थे; और जिसका कि नाम फ़ातिमाने उनको बतलाया, वह उनके घरानेका बड़ा स्नेही था। उनके घरानेपर उसका बड़ा भारी प्रेम था। फिर उसने उनको कैद क्यों कराया? और इस दशामें लाकर उनको क्यों डाला? इसका उन्हें कुछ भी अनुमान न हुआ। यह सारा गोलमाल है क्या? इस विषयमें जितने अचम्भेमें वे पहले थे, उतना ही अचम्भा—किंबहुना उससे भी अधिक—उन्हें इस समय हुआ। परन्तु अन्तमें यही कहकर समाधान किया कि, "क्या कहा जाय? मुसल्मान भाई हैं! मौका आनेपर ये क्या नहीं कर सकते?" इसके बाद फिर वे इस विचारमें पड़ गये कि, देखो, हम किस विचित्र दशामें आ पड़े—घरसे निकले, तब क्या विचार था, और फिर इतने दिन बाद आज कौनसी दशाको प्राप्त हुए! इन सब बातोंका चित्र उनकी कल्पनाने अंकित करके उनके सामने रख दिया। सच ही है, हाथ-पैर हिलानेको भी जब जगह न रही, तब मन पिछले सारे चित्रको अंकित करनेमें समय

बितावेगा ही। इसमें कोई आश्चर्य नहीं। परन्तु पाठको! अब नाना-साहबको तो हम यहीं पर अपने काल्पनिक चित्र-दर्शनमें लगा रहने दें, और हम अब बीजापुरके अपने अन्य कुछ पात्रोंके हालचालको चलकर देखें।

पाठकोंको याद होगा कि, नानासाहबके साथी वैरागीके भेषमें उनको ढूंढते हुए उसी मराठा युवक सरदारके महलके पास पहुँचे थे कि, जिसे एक ही बार देखकर नानासाहब इतने पागल हो गये थे। वहाँ पहुँचकर फिर उन्होंने डेवढ़ीपरके पहरेदारसे किस प्रकारकी ढिठाई की, और किस प्रकार वे डेवढ़ीतक पहुँच गये, इत्यादि बातें पाठकोंको स्मरण होंगी। वहाँ जाकर जब हमारे बाबाजीने उन सिपाहीरामको तरह-तरहकी मजेदार बातें सुनाईं, और उनके भविष्यके विषयमें बहुत ही सुन्दर आशाजनक बातें बतलाईं, तब वह भी बड़े खुश हो गये। उस खुशीमें वे इतने चूर हुए कि, उनके मालिकने सदैवके लिये उनको क्या ताकीद दे रखी थी, सो भी बिसर गये, और उन्हीं मजेदार बातोंमें आकर वे हमारे बाबाजीको, 'नहीं, नहीं' कहते हुए भी, एक बार डेवढ़ीतक तो ले गये। फिर क्या पूछते हो? बाबाजीका अच्छी जम गई। उन्होंने पहले तो उस दरबानकी भावी उन्नतिके विषयमें नाना प्रकारके सुन्दर-सुन्दर चित्र, जो कि सम्भव थे, खींचकर उसके सामने रखे, और इस प्रकार उसे खूब ही चकाचौंधमें डाला। इसके बाद एक एक करके सभी लोग बाबाजीके ज्योतिषज्ञानसे लाभ उठानेके लिये, अपना अपना हाथ आगे बढ़ाने लगे। बाबाजीने ज्योंही देखा कि, अब तो हमारी अच्छी गद्दी जम गई, त्यों ही धीरे-धीरे "यह महल किसका है? इसका मालिक कौन है?" इत्यादि बातें भी पूछनी प्रारम्भ की। डेवढ़ीके सब सिपाही लोग अपने अपने तौरपर सब बातें उनको बतलाने लगे। इतनेमें एकाएक भीतरसे एक अर्दलीने आकर द्वारपालसे कहा कि, "बाबाजीको ऊपर सरदार साहबने बुलाया है।" यह सुनते ही—फिर क्या पूछना है—बाबाजीके आनन्दका पारावार ही न रहा! जितना कुछ इष्ट था, उससे भी अधिक प्राप्त हो गया। अभी तो सिपाहियोंके मुँहसे सिर्फ इतना वृत्तान्त ही

मालूम होने भरकी आशा थी; पर अब तो स्वयं उस महलके स्वामीसे ही मुलाकात करनेका मौका मिल गया—फिर और अब क्या चाहिए ? डेवढ़ीपरके सिपाहियोंने भी समझा कि, यह तो बाबाजीका निशाना अच्छा लगा; और वे सब, "बाबाजी, आपने तो थोड़े ही समयमें अच्छी जमा ली। अब जाते समय तलाशी लिये बिना न जाने देंगे, याद रखिये !" कहकर उनकी दिल्लगी करने लगे। बाबाजीने भी कहा कि, "अच्छी बात है, लेना, तलाशी भाई खूब ! हम वैरागियोंके लिये तो एक कौड़ीकी भी आवश्यकता नहीं। यदि तुम्हारे मालिकसे कुछ मिलेगा, तो वह तुम्हींको दे जायँगे। हम तो खानेके लिए मुट्ठीभर दानेके मालिक हैं !" यह कहकर मुख्य बाबाजीने अपने साथियोंसे तो वहीं बैठनेके लिये कहा, और आप स्वयं उस अर्दलीके साथ, जो कि उनको बुलाने आया था, महलके अन्दर चले गये। जिस बातके लिये वे चिन्तित हो रहे थे, कि, वह किस प्रकार सिद्ध होगी, सो इतनी जल्दी और अचानक, सिद्ध हो गई—अब इससे अधिक और सौभाग्यकी बात क्या हो सकती है ? यह सोचकर बाबाजी मन ही मन अत्यन्त आनन्दित हो रहे थे; और ऐसा जान पड़ता था कि, इस बातपर जैसे उन्हें कुछ खेदसा हो रहा हो कि, देखो, मन जितनी जल्दी उस युवा सरदारके पास जानेको कह रहा है, शरीर उतनी जल्दी नहीं जा रहा है ! जो हो, अन्तमें एक बार हमारे बाबाजी उस स्थानतक पहुँच ही गये, जहाँ कि वह युवा सरदार बैठा हुआ था। और उसको आशीर्वाद-वचन कहकर उन्होंने जिज्ञासा की कि, मुझ गरीबको सरकारने कैसे याद किया ? परन्तु मराठा सरदार जहाँ बैठा था, वहाँ कुछ अन्धेरासा था, इसलिये उसका चेहरा बाबाजीको भलीभाति दिखाई नहीं देता था। सरदारकी सूरत अच्छी तरह दिखाई देवे, इस हेतुसे बाबाजीने अपनी आँखोंको काफी तकलीफ दी, पर कोई लाभ न हुआ। उनका आशीर्वचन जब हो गया, तब सरदारसाहबने अपने अर्दलीको, बिल्कुल धीमी आवाजसे, बाहर चले जानेको कहा। और फिर धीरेसे ही बाबाजीसे पूछा, "आप कहाँसे आये ? आपके साथ और भी दो-तीन आदमी थे, वे कहाँसे आये ?

और हमारे महलके आस-पास आज चार-पाँच दिनसे आप लोग इतनी आतुरताके साथ, चक्कर क्यों लगा रहे हैं ? मैं यह जानता हूँ कि, आप जैसे दिखाई दे रहे हैं, वैसे नहीं हैं, इसलिये समझ-बूझकर उत्तर दीजिये। आप इस बातको खयालमें भी मत लाइये कि, आप चाहे जो कह देवें, और मैं मान जाऊँ।"

अब हमारे बाबाजीकी वही हालत हुई कि, जैसे कोई पुष्पवृष्टिकी आशा कर रहा हो, और उसपर अचानक वज्रपात हो जावे! सरदार-साहबके उक्त प्रश्नोंका उद्देश्य क्या है, सो कुछ उनकी समझमें नहीं आया। इतना तो वे अवश्य समझ गये कि, एकाएक इस बातको कबूल कर लेना, कि जो कुछ इसने पहचाना है, वही सच है, मानो बिल्कुल पागलपन होगा। इसलिये तुरन्त ही उन्होंने इस प्रकार सर-दारको उत्तर दिया, "महाराज, आपको कुछ भी शका हुई हो, पर हम लोग तो वैरागी हैं। हमारा न कोई देश है, और न गाँव—न कोई घर है, न द्वार ? आज यहाँ, तो कल काशीमें, और परसों रामेश्वरमें! फिर भी आपको यह शका हुई कि, हम लोग आपहीके महलके आस-पास क्यों घूम रहे हैं, इसका कारण मेरी समझमें नहीं आया। वास्तव-में हम जैसे दिखाई देते हैं, वैसे ही हैं। हमको तो अब यह आज्ञा हो कि, महाराजने हमें ऊपर क्यों बुलाया। बस, हम आज्ञा पाकर चले जायगे। हमको क्या ? चार मुट्ठी भिक्षा चाहिये—पेटभरके लिये मिल गया, दिन बिताया, और आगे बढ़े। यही हमारा धन्धा है। आपका महल जरा बड़ा दिखाई दिया, अतएव आपहीके यहाँ भिक्षाके लिए आ गये। हाँ, इसकी शोभा देखते हुए जरा कुछ देर अधिक थम गये होंगे, पर इसके लिए आप इतने नाखुश न हो। जो कुछ इच्छा हो, भिक्षाका हुक्म हो जाय, और हमको जानेकी आज्ञा मिले।"

बाबाजी जिस समय यह सब कह रहे थे, सरदारसाहब बीचमें एक अक्षर भी नहीं बोले। परन्तु उनका कथन समाप्त होते ही वे जरा जोरसे हँसकर कहते हैं, "बाबाजी, आपने बात तो अच्छी बनाई, पर मैं पहले ही आपसे कह चुका हूँ कि, ऐसी बातोंमें मैं नहीं आऊँगा। आप जैसे

दिखाई दे रहे हैं, वैसे अवश्य ही नहीं हैं। मैंने आपको पहचान लिया है, यही नहीं, बल्कि आपके साथ उस दिन एक दूसरे महाशय थे, उनको भी मैंने पहचाना था। इसलिये यदि आप चतुर हैं, तो आप साफ़-साफ़ अपने इस प्रकार आनेका उद्देश्य बतला दीजिये। मुझसे कोई बात फूट जायगी, इसका भय भी मनमें न लाइये।" यह सुनते ही बाबाजी बड़े चकराये; और अब वे क्या उत्तर देवें, सो कुछ उनकी समझमें न आया। अचानक एक शंका उनके मनमें आई; और वह शंका उन्हें पहले भी एक बार हुई थी, और उसको दूर करनेके उद्देश्य-से ही वे इस महलकी ओर आये थे। परन्तु सब बातोंपर जब उन्होंने अच्छी तरह विचार किया, तब वह उनके मनमें ठहर नहीं सकी। वह शंका यही थी कि, नानासाहबको इस मराठे सरदारने ही तो कहीं नहीं पकड़ मँगाया। यही शंका अब फिर एकबार उनके मनमें आई—केवल आई ही नहीं किन्तु अब उन्हें इस बातका कुछ-कुछ विश्वास भी होने लगा। और उस दशामें फिर वे यह सोचकर अपने मनमें कुछ भय भी खाने लगे कि, देखो, ऐसी दशामें इसके महलके अन्दर आकर हमने कुछ अच्छा नहीं किया। यह सरदार है कौन? और इसने हमको पहचान किस तरह लिया? और सचमुच इसने पहचाना, अथवा नहीं? यह केवल हमारा भ्रम ही तो नहीं है? इत्यादि कोई भी बात ठीक-ठीक उनकी समझमें नहीं आई। और अपने मनकी उस गड़बड़ी अवस्थामें ही वे उस सरदारसे बोले, "सरदार साहब, हमारे विषयमें आपके मनमें यह शंका आई अवश्य, परन्तु आपने इसीके वश होकर हमारे उस साथीको कहीं कुछ कर तो नहीं डाला? इसी शंकाके वश आपने कहीं उसको कैद तो नहीं कर रखा? और यदि कैद ही कर रखा हो, तो कहीं उसके प्राणोंकी तो हानि नहीं हुई? सच कहता हूँ, आपका और हमलोगोंका कोई भी सम्बन्ध नहीं है। हमलोग यों ही चार दिनके लिये बीजापुर आये थे। आपको यदि व्यर्थ हीमें कोई शंका आई हो, तो आप उसे दूर कर दें; और हमारे साथीको हमारे साथ करें। हम आज ही अपनी कमली लपेटकर यहाँसे चले जायेंगे।"

बाबाजीने अपनी उपर्युक्त बातें बिलकुल हृदयसे कही थीं, अतएव सरदार साहबके मन पर भी उनका प्रभाव पड़ा, और यहाँतक कि, उस समय उनकी चेष्टा एक विचित्र ही प्रकारकी हो गई। उनको मानो अपना भान ही न रहा, और पहले वे कुछ थोड़ेसे झुके हुए थे, परन्तु अब बिलकुल सीधेसे बैठकर अत्यन्त उतावलीके साथ कहते हैं, "क्या ? क्या ? आपके साथीको कोई पकड़ ले गया ? और उसके प्राण भी ले लिये ?"

ये प्रश्न इतने स्वाभाविक रूपसे किये गये कि, बाबाजीके मनमें अब कोई शंका नहीं रही। अभीतक उनका यह खयाल था कि, शायद इसी सरदारने हमारे साथीको पकड़वाकर कहीं उसकी प्राण हानि की हो, पर अब यह खयाल उनके मनसे बिलकुल ही निकल गया। उन्होंने सोचा कि, इस विषयमें कमसे कम इस सरदारको तो कुछ भी ज्ञान नहीं है, क्योंकि इसे यदि इस विषयमें कुछ भी मालूम होता, तो इतने स्वाभाविक रूपसे यह उपर्युक्त प्रश्न कैसे करता ? बाबाजीके मनमें जिस समय ये विचार आ रहे थे, उस समय यदि उस युवा सरदारकी सूरतको और कोई देखता, तो उसे स्पष्ट ही मालूम हो जाता कि, उसके मनमें भी कोई अत्यन्त क्षोभ उत्पन्न करनेवाले विचार आ रहे हैं। बाबाजी भी सूरत पहचाननेमें कुछ कम चतुर नहीं थे, किस समय किसकी चेष्टा-पर कौनसे मनोविकार, किस-किस प्रकार, अपना प्रभाव डाल रहे हैं, सो वे तुरन्त ताड़ जाते हैं, पर सरदार साहबकी चेष्टापर उस समय काफी प्रकाश ही नहीं पड़ रहा था। उनका चेहरा उस समय यदि पूरा-पूरा उजेलेमें होता, तो हमारे बाबाजी तुरन्त ही ताड़ जाते कि, जिस प्रकार उनके मनमें उस समय कोई विलक्षण विचार आ रहे थे, उसी प्रकार सरदारसाहबके मनमें भी आ रहे थे। अस्तु, सरदारसाहबने बाबाजीसे उपर्युक्त प्रश्न किये, परन्तु बाबाजीकी ओरसे जब उन प्रश्नो-का शीघ्रतापूर्वक कोई उत्तर न मिला, तब फिर वे एकदम कहते हैं, "बाबाजी, क्या कहा आपने ? आपका एक साथी एकाएक कहीं गायब हो गया ? कौन ? वही साथी जो पहले दिन हमारे महलके सामने आकर

हमारी ओर एकटक देख रहा था ? कौन ? वही ? वह कब चला गया ? कहाँ चला गया ? आप बतलाते क्यों नहीं ?"

अभीतक तो कुछ नहीं; पर अब अचानक हमारे और हमारे साथीके विषयमें सरदारसाहबके मनमें इतनी चिन्ता क्यों उत्पन्न हुई ? बाबाजी कुछ सोच नहीं सके। परन्तु, हाँ, इतना तो उन्हें स्पष्ट दिखाई दिया कि, सरदारसाहब अब इस विषयमें जाननेके लिये बहुत ही आतुर हो रहे हैं, और शायद यह आतुरता हमारे लिये कुछ काम भी कर जाय—शायद नानासाहबके विषयमें इनके मनमें कुछ अच्छे भाव हों; और उनसे शायद हम अपने कार्यमें कुछ लाभ भी उठा सकें। इसलिये—अपना गुप्त कार्य तो, जहाँतक हो सके, इनको मालूम नहीं होने दें, और ऊपर-ऊपर जो कुछ ये जानना चाहते हैं, सो बतलाकर इनके मनकी बात निकाल लें—बस, यही सोचकर बाबाजी सरदारसाहबसे एकदम कहते हैं, "सरदार साहब, क्या बतलावें— ऐसी कोई बात हुई है अवश्य। हम गरीब वैरागी भिक्षाके अर्थ इधर-उधर घूम रहे थे। देखा, कि शहर बहुत बड़ा है, चार दिन यहीं रह जायँ; पर इतनेमें न जाने, आपहीकी तरह हमारे वेशमें, किसीको शका हुई, अथवा न जाने और कोई कारण हुआ—हमारे साथीको कोई धोखा देकर पकड़ ले गया है, क्योंकि अपनी ओरसे वह हमें छोड़कर कहीं जा नहीं सकता था—न आजतक कभी गया, और न आगे ही उसके इस प्रकार जानेकी कोई सम्भावना स्वप्नमें भी हो सकती है।"

सरदारसाहब यह सुनकर कुछ देरके लिये बिलकुल चुप हो गये। इसके बाद बाबाजीसे उन्होंने फिर एकबार उस साथीके विषयमें—कैसे चला गया, कब चला गया, इत्यादि प्रश्न किये। पर जब उन्हें यह मालूम हुआ कि, आधीरातके करीब वह गया—इसके सिवाय स्वयं बाबाजीको ही इस विषयमें और कुछ नहीं ज्ञात है—तब उन्होंने एक लम्बीसी साँस छोड़कर बाबाजीसे इतना ही कहा कि, अब आप आज जाइये, दूसरे दिन फिर आइयेगा। बाबाजी वहाँसे उठकर चले आये।

दूसरे दिन बाबाजी फिर गये। तीसरे दिन भी गये। पर सरदार-

साहबसे भेंट नहीं हुई। और न शहरमें ही नानासाहबके विषयमें उनको कुछ पता चला। हाँ, उस दिन रातके समय नानासाहबकी चिट्ठी अवश्य उनके पास आ पहुँची।

सातवां परिच्छेद

तानाजीके मनकी दशा।

जिस महलके अन्दर नानासाहबको उन दुष्टोंने कैद करके डाल रखा था, उसी महलके अन्दरसे, आधी रातके लगभग, एक मनुष्य इधर-उधर, अपने आसपास देखता हुआ बाहर निकला। चार कदम आगे चलता, फिर पीछे मुड़कर देखता, और शका होनेपर कि, उसके पीछे कोई आता तो नहीं है, फिर जहाका तहाँ ठहर जाता। अपने महल-से चलकर बहुत दूर तक उस मनुष्यकी यही हालत रही। इसके बाद फिर हजारो मोड़ और गली कूची लांघकर—क्योंकि ऐसा जान पड़ता था कि, सीधे रास्तेसे जानेका उसे साहस ही न होता था—शहरकी सीमा पार की, और क्षणभर इधर उधर देखकर अबकी बार उसने जो सपाटा भरा, सो एकदम उस हवेलीके पास ही आ पहुँचा कि, जहाँ ये हमारे वैरागी लोग उतरे हुए थे। हवेलीके अन्दरसे कोई आहट उस समय उसको नहीं मिली। इसलिये क्षणभरके लिये उसे यह भी शका हुई कि, न जाने यह मकान वही है, कि जिसे उन्होंने बतलाया था, अथवा यह कोई दूसरा है। खैर, उसने उक्त बातका निश्चय करनेके लिये दो-चार बार उस मकानके चारों ओर चक्कर लगाकर कुछ आहट ली, पर कोई आहट उसके कानोंमें नहीं आई। अन्तमे कुछ सोच-समझकर उसने उस मकानका दरवाजा जरा जोरसे खटखटाया, जिसे सुनकर एक बाबाजी बाहर निकले। कौन है? क्या बात है? क्यो आये हो? इत्यादि बातें पूछी गईं। उत्तर मिला कि, हमको जो बातें बतलानी हैं, वे यहाँ बाहर-से नहीं बतलाई जा सकती। आप मुझे भीतर आने दें। बहुत महत्वकी बातें आपको बतलानी हैं। आपमेंसे कोई एक व्यक्ति यहाँसे गायब हो

गया है, उसीका अस्तित्व वतलानेके लिए मेरा यहाँ आना हुआ है, सो सुन लीजिए; और उसने आपके लिए एक पत्र भी दिया है, उसे ले लीजिए।

वोलनेवालेकी आवाज किसी पुरुषकीसी नहीं जान पड़ती थी। इसके सिवाय उसकी सूरत इत्यादि भी विल्कुल स्त्रीकी सी थी। उसे देखते ही वावाजी मन ही मन वड़े चकराये। यह और कौनसी वला आ गई? आधीरातके समय, यह स्त्री हमारे लिये, यहाँ क्यों आई? नानासाहवका इसको क्या पता? आधीरातके समयमें ही उनको भी कोई धोखा देकर ले गया था, उसी प्रकार हमारी भी गठरी-मुठरी वनाकर ले जानेका तो किसीने विचार नहीं किया? क्या ताज्जुव है कि, उनकी ही भाँति हमारी भी दशा करनेके लिए किसीने इस स्त्रीको भेजा हो?

ऐसे विचार उनके मनमें आये, और वे एकदम उस स्त्रीसे वोले, "देवी, तुझको जो कुछ कहना हो, सो यहीं कह दे। हमलोग एक वार अच्छी तरह फल पा चुके हैं। तू कहती है कि, चिट्ठी लाई हूँ, सो कहाँ है? ला, यहीं दे दे। मैं भीतर ले जाकर अपने साथियोंको दिखलाये आता हूँ, लेकिन तू घरके अन्दर कदम मत रख।" यह सुनकर वेचारी स्त्री वहुत ही अचम्भित हुई। उसे स्वप्नमें भी यह खयाल न था कि, हम जिस कामके लिये आई हैं, उसके लिए कोई ऐसा वर्ताव करेगा। परन्तु वही वर्ताव उसके आगे आया, अतएव उसे वड़ा खेद हुआ। तथापि उसने उस खेदको शब्दों द्वारा प्रकट नहीं किया। हाँ, उसने वह चिट्ठी, जो अपने पास छिपाकर रखी थी, निकाली; और उस वैरागीके हाथमें दे दी, और आप वहीं खड़ी रही। हाँ, जवानी उसने इतना कहा कि, जिस महलमें उनको कैद कर रखा है, उस महलका पता इत्यादि यदि आपको जानना है, तो वह यहाँ वाहर वतलाया नहीं जा सकता। आप मेरा विश्वास नहीं करते, यह भी एक वड़े आश्चर्यकी वात है। इस आधीरातके समयमें, कितने ही खतरोंका विचार न करते हुए, मैं यहाँ आई हूँ। इसके सिवाय, मैं एक स्त्री हूँ, फिर भी मुझे भीतर आने देनेका आपको साहस नहीं होता, इससे अधिक और आश्चर्यकी वात

क्या हो सकती है! उसने सब कुछ कहा, पर बाबाजी उसकी बात सुनने-को वहाँ खड़े ही नहीं रहे। चिट्ठी हाथमें आते ही एकदम वे भीतर चले गये, और जाकर अपने साथियोंको सब हाल बतलाया तथा चिट्ठी उनके हाथमें दे दी। चिट्ठीको लेकर उन्होंने पढ़ा, और बहुत जल्द उस स्त्रीको भीतर बुला लानेके लिये कहा। यह स्त्री कौन थी? पाठकोंने अवश्य ही अनुमान कर लिया होगा। फातिमाने नानासाहबसे प्रतिज्ञा की थी कि, वह उनकी चिट्ठी, जहाँ वे बतलावेंगे, पहुँचा देगी, और तदनुसार वह इस समय उनकी चिट्ठी लेकर उन वैरागियोंकी मठीमें आई थी। अस्तु! फातिमा भीतर पहुँची, और उन लोगोंने नानासाहब-के विषयमें उससे प्रश्न करने शुरू किये। फातिमाको इस विषयमें जितना कुछ मालूम था, सब उसने उन्हें बतलाया। परन्तु बहुतसी बातें स्वयं उसको ही नहीं मालूम थीं, और कुछ ऐसी भी थीं, कि जो उसे मालूम थीं, पर उस समय वह उन्हे इतनी शीघ्रतापूर्वक बतला नहीं सकती थी। अस्तु। नानासाहबको वहाँसे छुड़ानेकी क्या युक्ति की जावे, इस विषयमें भी बहुत कुछ बातचीत हुई, परन्तु फ़ातिमाने उनको यह आश्वा-सन दिया कि, इसका सारा भार मैं अपने ऊपर लेती हूँ, और उनको बड़ी युक्तिसे छुड़ाकर मैं आपके सिपुर्द करूँगी। इसके सिवाय उनकी मित्रमंडलीको उस समय और कर्त्तव्य ही क्या था? अतएव वे सब चुप हो रहे। फातिमाने फिर उनको यह भी विश्वास दिलाया कि, "मैं बार बार आकर आप लोगोंको उनका समाचार देती रहूँगी। आप अब उनके विषयमें कोई चिन्ता न करें।" इसके बाद उसके जानेका समय हो गया, और वह वहाँसे चल दी। मठीसे बाहर अभी वह कुछ ही कदम गई होगी कि, उसे ऐसा जान पड़ा, जैसे कोई उसके पीछे आता हो। जब यह ठिठक जाती, तब वह भी ठिठक जाता, और जब यह चलने लगती, तब वह भी चलने लगता। बस, ऐसा ही क्रम चल रहा था। इसी प्रकार अन्ततक उस मनुष्यने फातिमाका पीछा नहीं छोड़ा। जब वह उस महलके पीछेकी खिड़कीसे भीतर चली गई, तब वह मनुष्य भी वहींसे गायब हो गया।

इधर बाबाजी बेचारे बैठे हुए उन सारी बातोंपर विचार कर रहे थे। जिस सरदारके महलमें, ले जाकर नानासाहबको दुष्टोंने कैद कर रखा था, उस सरदारके साथ उनके पिताकी बड़ी मित्रता थी। यहीं नहीं, बल्कि बादशाहके नीच मन्त्रियोंने जब नानासाहबके पिताका घोर अपमान करनेकी सलाह दी, तब इसी सरदारकी सचाईके कारण बादशाहको वैसा करनेका साहस नहीं हुआ, और अब उसी सरदारने नानासाहबको, इस प्रकार, अचानक धोखेसे कैद करवाकर कालकोठरीमें डाल दिया, इसमें उसका उद्देश्य क्या है? उसने उनके पिताके साथ जो स्नेह दिखलाया, वह सब क्या बिलकुल बनावटी ही था? हो सकता है, क्योंकि मुसल्मान लोग—अपने बापके भी नहीं होते—बापसे भी मीठी मीठी बातें करके उसका भी गला काटनेमें आगा-पीछा नहीं सोचेंगे। लोगोंसे मीठी-मीठी बातें करके उन्हींके द्वारा उनके बापका भी गला कटवा लेंगे। इनसे मैत्री करे, तो हृदयसे कभी न करे। इनकी मीठी बातोंपर विश्वास रखे, सो बिल्कुल मूर्ख! इस प्रकारके विविध विचार बाबाजीके मनमें आये, और उनका चित्त बहुत ही अशान्त हो गया। हम इस शहरमें क्यों आये; और यह कहाँकी आफत आ गई! अबतक तो हमको यहाँका सारा काम खतम करके चल देना चाहिये था, पर सो तो कुछ हुआ नहीं; और उलटे हमारा ही एक आदमी, कि जिसको दरबारका भी विशेष ज्ञान था, इनके चगुलमें फँसकर कैदमें जा पड़ा!

बस, इसी प्रकारके विचार करते-करते बाबाजीको जब सुबह हो गया, तब अब उनके मनमें स्वाभाविक ही ये विचार आने लगे कि, देखें, आज हमको जो यह नवीन जानकारी प्राप्त हुई है, उससे भी कुछ लाभ उठा सकते हैं, अथवा यों ही हाथ बांधे बैठा रहना पड़ेगा। और अन्तको हाथ बांधे ही बैठा रहना पड़ेगा, ऐसा ही उनको जान भी पड़ा। अस्तु। प्रति दिनके अनुसार प्रातःकालकी क्रियाओंसे निपटकर कण्ठी-माला और तिलक धारण करके, वे लोग बाहर निकले। आज स्वाभाविक वे उसी ओर चले कि, जहाँपर नानासाहबको उस महलके

क्या हो सकती है! उसने सब कुछ कहा, पर बाबा
को वहाँ खड़े ही नहीं रहे। चिट्ठी हाथमें आते ही
चले गये, और जाकर अपने साथियोंको सब हाल
उनके हाथमे दे दी। चिट्ठीको लेकर उन्होंने पढ़ा
उस स्त्रीको भीतर बुला लानेके लिये कहा। यह स्त्री
अवश्य ही अनुमान कर लिया होगा। फ़ातिमाने
की थी कि, वह उनकी चिट्ठी, जहाँ वे बतलावें
तदनुसार वह इस समय उनकी चिट्ठी लेकर उ
आई थी। अस्तु! फातिमा भीतर पहुँची, और उ
के विषयमें उससे प्रश्न करने शुरू किये। फ़ातिमा
कुछ मालूम था, सब उसने उन्हें बतलाया। पर
उसको ही नहीं मालूम थीं, और कुछ ऐसी भी थ
थीं, पर उस समय वह उन्हें इतनी शीघ्रतापूर्व
थी। अस्तु। नानासाहबको वहाँसे छुड़ानेकी क
विषयमें भी बहुत कुछ बातचीत हुई, परन्तु फ़ाति
सन दिया कि, इसका सारा भार मैं अपने ऊपर
बड़ी युक्तिसे छुड़ाकर मैं आपके सिपुर्द करूँग
मित्रमडलीको उस समय और कर्त्तव्य ही क्या
हो रहे। फातिमाने फिर उनको यह भी विश्वास
बार आकर आप लोगोंको उनका समाचार दे
उनके विषयमें कोई चिन्ता न करें।” इसके
हो गया, और वह वहाँसे चल दी। मठीसे
कदम गई होगी कि, उसे ऐसा जान पड़ा, जै
हो। जब यह ठिठक जाती, तब वह भी
चलने लगती, तब वह भी चलने लगता।
था। इसी प्रकार अन्ततक उस मनुष्यने फ़ा
जब वह उस महलके पीछेकी खिड़कीसे भीत
भी वहाँसे गायब हो गया।

उन्होंने सोचा कि, उसके बाद फिर उक्त सरदारने दूसरे दिन हमको बुलाया भी था, पर जब हम गये, तब वह हमसे मिला नहीं। फिर उसके बाद भी लगातार हम दो बार गये, परन्तु वह नहीं मिला। अवश्य ही इसमें कोई गुप्तभेद है। इस बातको जहाँ तक उन्होंने सोचा, यही विश्वास होता गया कि, हमारी उपर्युक्त शंका बिलकुल सच है, और रणदुल्लाखाँ नानासाहबके पिताको यों ही फुसलाता रहेगा, तथा सुल्तानगढ़की किलेदारी अवश्य ही इस युवा मराठे सरदारको देगा। उन्होंने सोचा कि, जिस दिन नानासाहब उस सरदारके महलके सामने खड़े होकर उसकी ओर बहुत देरतक बराबर देखते रहे थे, उसी दिन उसने उनको पूरा-पूरा पहचान लिया होगा, और फिर उसी दिन रणदुल्लाखाँको इसकी खबर देकर उसके द्वारा, अथवा, किसीसे भी कुछ न बतलाते हुए, स्वयं ही धोखेसे उनको कैद करवाकर उस कालकोठरीमें बन्द करवा दिया होगा। इसमें अवश्य ही इस सरदारका यह उद्देश्य होना चाहिये कि, जिससे वे किसी प्रकार भी उसकी उन्नतिके बाधक न हों। इतना विचार करनेके बाद तानाजी कुछ थम गये, और फिर कुछ देर बाद स्वयं ही एकदम कहते हैं, "कोई परवा नहीं। बच्चाजी, सुल्तानगढ़पर तुम एक बार जाओ तो सही; और वहाँ अपना अधिकार चलाओ; फिर देखो तुम्हारी कैसी कचाई निकालते हैं। जिस दगाबाजीसे नानासाहबको कैद करके तुमने काल कोठरीमें डलवाया है, वैसी दगाबाजी करनेकी हमको कोई आवश्यकता ही नहीं। हम तो तुमको, दिनदहाड़े धावा करके, सेनाके देखते-देखते, कैद कर लेंगे; और फिर नानासाहबके इस प्रकार कैद करनेका मजा चखावेंगे।" इस प्रकार तानाजी अपने मनोराज्यके आवेशमें जल्दी-जल्दी कदम उठाते हुए चले जा रहे थे। बीजापुरके राजनैतिक हालचाल और वहाँकी राजनैतिक कार्यवाहियोंका अब उन्हें बहुत कुछ ज्ञान हो चुका था। साथ ही उनको यह भी मालूम हो चुका कि, कहाँपर किसका कितना प्रभाव है। अतएव अब उन्होंने सोचा कि, इस विषयमें अब अधिक और कुछ करनेकी आवश्यकता ही नहीं है—अब तो नानासाहबको ही,

जिस प्रकारसे बन सके, मुक्त करके अपनी अगली कार्यवाहीमें लगना चाहिये। उनको इस प्रकार अमुक व्यक्तिने अमुक जगह बन्द कर रखा है, यह बात यहाँ किसीसे प्रकट करनेकी भी आवश्यकता नहीं है; क्योंकि इस अन्धेरनगरीमें कौन किसकी सुनता है। इसके सिवाय नानासाहब-पर स्वयं बादशाह और उनके दुष्ट मन्त्रियोंका कोप भी बहुत है। ऐसी दशामें यदि यह बात किसीको मालूम हो जायगी कि, इस प्रकार नाना-साहब हमारे हाथमे आ गये हैं, और अमुक जगह उनको कैद कर रखा गया है, तो बहुत भारी अनर्थ हो जानेकी सम्भावना है। इसलिये तानाजीने सोचा कि, जिस स्त्रीने सहायता करके छुड़ानेका वचन दिया है, उसीपर अब विश्वास रखना चाहिये, इसके सिवाय और हम कुछ नहीं कर सकते, और न करना इष्ट ही है। यदि कुछ करेंगे भी ता हमारी सारी कारस्तानी ही प्रकट हो जायगी, और फिर सारा व्यूह मिट्टीमें मिल जायगा। तानाजीको सबसे बुरी यही बात लग रही थी, उनके आगे कोई काम नहीं था, और इस समय चुप बैठनेके अतिरिक्त उनके लिये और कोई चारा ही नहीं था। कोई प्रयत्न उनको करना चाहिये था, फिर उसमें सफलता हो, चाहे निष्फलता। इसकी उन्हें परवाह नहीं थी। परन्तु अब तो सिवाय मक्खियाँ मारते हुए बठनेके उन्हें और कोई उद्योग ही नहीं रहा। तानाजी एक बहुत ही पुरुषार्थी और कट्टर दीर्घ-उद्योगी पुरुष थे। अतएव, अब उनको यह बात बहुत ही लज्जाजनक मालूम हुई कि, चुप बैठनेके अतिरिक्त और कोई काम नहीं, और सो भी उस दशामें, जब कि उनका एक प्रतिष्ठित मित्र इस प्रकार धोखेमें पड़कर दुष्ट लोगोंके पंजेमें फँस गया। पर बेचारे करते क्या? अतएव अब वे इस बातकी प्रतीक्षा करने लगे कि, कब एक बार फिर फातिमासे भेंट हो, और उससे हमें और कुछ वृत्तान्त मालूम हो। इधर नानासाहबसे जो व्यक्ति पहले दिन एकान्तमें मिला था, और वह मृतोंकी हवेली उनके सिपुर्द कर गया था, उसका फिर नामतक भी सुनाई नहीं दिया। आशा थी कि, आज नहीं, तो कल वह मिलेगा ही, और फिर उससे यह भी मालूम कर लेंगे कि, इस

सम्पूर्ण कारस्तानीमें उसका कहाँतक भाग है; परन्तु जब इतने दिनतक उसके कहीं दर्शन ही न हुए; तब तानाजी उसकी ओरसे भी बिल्कुल निराश हो गये। बस, इसी प्रकारकी डाँवाडोल हालतमें जब कि हमारे बाबाजी पड़े हुए थे, तब एक दिन रातके समय किसीने आकर उनकी उस मठीके दरवाजेको जोर-जोरसे खटखटाना शुरू किया। उस समय उस मठीके अन्दर तानाजीकी ही जागनेकी बारी थी। दरवाजेका खट-खटाना सुनकर तुरन्त ही वे बाहर आये; और देखते क्या हैं कि, एक कालाकलूटा आदमी उनके सामने खड़ा है। उसे देखते ही अचानक उनके मनमें आया कि, हो न हो, यह वही आदमी है; जो कि पहले दिन नानासाहबसे इसी मकानमें मिला था। तानाजीको देखते ही उस कालेकलूटे आदमीने तुरन्त ही उनसे कहा, "आपके वे दूसरे साथी कहाँ हैं?" यह प्रश्न उसने इतनी आतुरताके साथ और स्वाभाविक-रूपसे किया कि, तानाजीके सारे संशय, जो उस समयतक उनके मनमें थे, बिल्कुल डिग गये। अभीतक उनका ऐसा खयाल था कि, नाना-साहबको पकड़ ले जानेमें इस मनुष्यका भी पूरा-पूरा भाग होगा; पर अब उनका यह खयाल कुछ डाँवाडोल हो गया। परन्तु फिर भी उन्होंने उपर्युक्त प्रश्नपर तुरन्त ही कहा, "वाह! दगा-बाजी करके हमारे साथीको तुम पाँच-सात आदमियोंने मिलकर कहीं छिपा रखा है, उसको नाना प्रकारका कष्ट दे रहे हो; और आज यहाँ आकर इस प्रकार सभ्यता पूर्वक प्रश्न करते हो? गम खाओ, तुम्हारा ही रास्ता देख रहे थे। बतलाओ, हमारे साथीको कहाँ लेजाकर तुमने डाल दिया है? पहले दिन उससे पहचान निकालकर बड़ी-बड़ी विश्वासकी बातें कीं, फिर हमको यह हवेली देनेका बहाना करके यहाँसे चले गये; और कह गये थे कि, समय समयपर तुमसे मिलते रहेंगे; और आज फिर ये बातें पूछने आये हो? तुमको शरम नहीं मालूम होती? बतलाओ, कहाँ लेजाकर उसे रखा है? नहीं तो तुमको अभी मैं खतम किये देता हूँ।"

उपर्युक्त बातें सुनकर वह आदमी बिल्कुल चकितसा हो गया।

बहुत देरतक तो वह एक अक्षर भी नहीं बोला। इसके बाद फिर एक बार दरवाजेके सामने चक्कर लगाकर वह तानाजीके सामने आकर खड़ा हुआ, और उनके कंधेपर अपना दाहिना हाथ रखकर उनकी आँखोंके सामने एकटक देखते हुए उनसे कहता है, "आपकी इस धमकीकी मैं कुछ भी परवाह नहीं करता, परन्तु हाँ, आपने अपने साथी-के विषयमें जो समाचार बतलाया, उसे सुनकर मुझे अवश्य ही खेद हुआ है। आप कहते क्या हैं? क्या कोई दगाबाजी करके उसको पकड़ ले गया? कहाँ पकड़ ले गया? कब पकड़ ले गया? कैसे आपको मालूम हुआ? मैं तो पहले ही जानता था कि, ऐसा कुछ न कुछ होगा; और इसी कारण उससे मिलकर पहलेपहल मैंने उसको होशियार भी कर दिया था। हाँ, इस बीचमें मैं आ नहीं सका। मैं तुरन्त ही आकर उससे मिल नहीं सका, इसीका यह फल है। बतलाइये, उसको कब और कौन पकड़ ले गया? इसका सारा वृत्तान्त यदि आपको मालूम हो, तो मुझे बतलावें। मालूम होने पर भी यदि आप न बतलाना चाहे, तो भी कोई परवाह नहीं। बीजापुरमें अब यह बात मुझसे छिपी नहीं रह सकती। आपको यदि मालूम हो, और आप मुझे बतला देवें, तो मेरा समय, और परिश्रम भी, बच जायगा। आप मुझपर अविश्वास न करें। आपकी इस दशामें, इस बीजापुरके शहरमें, यदि कोई पक्का विश्वास-का पात्र है, और जिसपर कि आप सर्वथा विश्वास कर सकते हैं, तो ऐसा एक मैं हूँ—इस बातका आप विश्वास रखें। आपका साथी यदि सचमुच ही कालके पंजेमें न फँस गया होगा, अभीतक यदि वह किसी मनुष्यके ही पंजेमें होगा, तो दो अथवा तीन दिनके अन्दर मैं उसको लाकर आपके सामने खड़ा करूँगा। मेरा समय और श्रम यदि आप बचाना चाहते हों, तो उसके पकड़े जानेका पूरा वृत्तान्त आप मुझे बतला दें, कुछ भी छिपा न रखें। इस समय यदि आपने कुछ भी छिपा रखा, तो सम्भव है कि, आप सबको इसके लिये पीछेसे पछताना भी पड़े।"

उपर्युक्त सम्पूर्ण शब्द उस मनुष्यने इतनी सहानुभूतिके साथ

उच्चारण किये कि, तानाजीको वे मिथ्या तो नहीं जान पड़े ; परन्तु फिर भी उन्होंने सोचा कि, न जाने कौन किस दाव-पेंचमें रहता है, सम्भव है कि इस मनुष्यकी यह सारी सहानुभूति बनावटी ही हो, इसलिये सावधान रहना सदैव अच्छा है। यह सोचकर तानाजीने कुछ भी अपने हृदयका पता उसे नहीं चलने दिया। वह भी, यह कहकर कि, कोई हानि नहीं, वहाँसे तुरन्त चल दिया। हाँ, चलते समय इतना उसने तानाजोको सचेत अवश्य कर दिया कि, तीन दिन अब आप यहाँसे कहीं न जावें।

आठवां परिच्छेद

काला मनुष्य

वह मनुष्य जब चला गया, तब तानाजीके मनमें यह विचार आया कि, हमने कहीं अपने सच्चे हितैषीके चित्तको तो नहीं दुखाया। यह विचार उनके मनमें आया; और बस, इसीपर वे फिर विचार करने लगे। उसने हमसे कहा कि तीन दिनतक आप यहाँसे कहीं न जावें। इसका क्या अर्थ है ? क्या तीन दिनके अन्दर वह नानासाहबको छुड़ा लावेगा ? अथवा इस बीचमें वह यह समाचार लाकर हमको बतलावेगा कि, उनको कहांपर और किसने पकड़ रखा है ? कुछ समझमें नहीं आता। हाँ, उसने हमसे यह भी कहा कि, "आपको यदि नानासाहबके सम्बन्धमें कुछ ज्ञात हो, तो बतलाइये, और आप यदि यह बतला देंगे, तो हमारा काम सरल हो जायगा।" पर उसने यह क्यों पूछा ? इससे उसका क्या तात्पर्य है ? तानाजीकी कुछ समझमें न आया। और वे इसी उधेड़बुनमें पड़े रहे। इधर वह काला-कलूटा आदमी उस भूतोंकी हवेलीसे निकलकर फिर अपने घरमें आया, और कुछ देरतक बैठा हुआ विचार करता रहा। इसके बाद उसने अपने एक विश्वासपात्र नौकरको बुलाकर धीरेसे उसके कानमें कुछ कहा। वह नौकर भी अपने मालिककी बात सुनकर उसपर कुछ देर विचार किया; और फिर उससे बोला,

"सैयदुल्लाखाका यह कार्य नहीं है। इससे तो···" आगे उसके मालिक ने उसे बोलने नहीं दिया, और डपटकर कहा, "तू अभीका अभी यहा-से जा, और जो कुछ मैंने बतलाया, उसका पता लगा आ। इस विषय में मुझसे बहस करनेकी जरूरत नहीं।" बेचारा गुनगुनाता हुआ वहाँसे चल दिया। नौकर जब वहासे चला गया, तब वह कालाकलूटा आदमी बहुत देरतक मन ही मन कुछ विचार करता रहा। बादको फिर वह अपनी जगहसे उठा, और उसी मकानमें इधरसे उधर चक्कर लगाने लगा। चक्कर लगाते समय भी उसका दिमाग एक मिनट भी विचारों-से खाली नहीं था। उस समय बहुत ही शीघ्रतापूर्वक उसके मनमें विचार आ रहे थे, और उन विचारोंके साथ ही साथ, क्षण-क्षण पर, उसकी चेष्टामें भी भिन्न प्रकारके परिवर्तन दिखाई दे रहे थे। बीच बीचमें उसके मुखसे कुछ उद्गार भी निकलते जा रहे थे। और वे उद्गार भी एक प्रकारसे विचित्र ही थे। उस अधमाधमका इस विषय-में कोई सम्बन्ध न होगा, यह बात बिल्कुल ठीक है, क्योंकि यदि ऐसा होता, तो हमको कभीका मालूम हो गया होता। आज बहुत दिनोंसे, रातदिन, हम उसकी प्रत्येक छोटीसे छोटी बात पर भी नजर रख रहे हैं। बाहरकी तो बात ही क्या—स्वय उसके घरमें उसके अन्त.पुरमें, जब कि वह अपनी प्रेम पात्रियोंके सहवास सुखमें निमग्न रहता है, उस समयमें भी, जो जो बातें हुआ करती हैं, सब हमे पूरी-पूरी मालूम होती रहती हैं। किस समय उसने दाहिनी ओरकी हाथ बाई ओर किया, और कितनी बार उसने दाहिनी ओरसे बाई ओरको करवट ली। यहाँतक बातें उसकी जब हमसे छिपी नहीं हैं, तब इतना बडा षड्यन्त्र, कि एक व्यक्तिको किसी एक जगहसे बिलकुल उठाकर, न जाने कहाँ का कहाँ लेजाकर डाल दिया जाय, और इसका हमको अणुमात्र भी पता न लगने दिया जाय, यह कभी सम्भव नहीं है। यह काम अवश्य ही उसकी ओरसे नहीं हुआ। तब फिर यह किसकी कारस्तानी है? नानासाहबको इस प्रकार मार्गसे हटा देनेमें किसका क्या उद्देश्य सिद्ध होगा? बस, इतना विचार मन ही मन करनेके बाद वह फिर कुछ देरके लिये बिल-

कुल स्तब्ध हो गया। सम्पूर्ण बीजापुरमें जितने बड़े-बड़े राजनैतिक सरदार और अमीर-उमराव थे, सबकी सूरतें, और सबकी राजनैतिक कार्यवाहियाँ, एकके बाद एक, वह अपनी नजरोंके सामनेसे गुजारने लगा। बादको फिर अन्तमें एकदम ताली बजाकर अपने ही आप कहता है, "हाँ, मैं भी क्या मूर्ख हूँ! जो बात अबतक कभीकी मेरे ध्यानमें आ जानी चाहिए था, सो अभीतक ध्यानमें नहीं आई। यह बात तो शीशेमें देखनेकी तरह बिल्कुल स्पष्ट ही दीख रही है। रणदुल्लाखाके अतिरिक्त यह काम और किसीका हो ही नहीं सकता। रणदुल्लाखाके लिये ऐसा करनेको उपयुक्त कारण मौजूद है। परन्तु वह कारण क्या सच होगा? आजतक जैसा कि हम समझते थे, वैसा क्या वह नहीं है? शायद न हो। पर ये यवन, बड़े बेईमान, अधमाधम हैं। इनका रत्तीभर भी, रत्तीभर क्या—बाल बराबर भी विश्वास करना मानो अपने ही हाथसे अपना गला काट लेना है। इनका विश्वास कभी किसीको न करना चाहिये। आज दो महीने हो गये। वहाँसे छूट जानेके लिए वह बेचारी क्या क्या प्रयत्न कर रही है, सो मैं प्रत्यक्ष देख ही रहा हूँ। परन्तु यह अधमाधम किसी प्रकार भी अपनी नज़रोंके सामनेसे उस बेचारीको जाने नहीं देता। ठीक है, अपने मार्गकी यह बड़ी भारी अड़चन दूर करनेके लिये वह क्या नहीं करेगा? उस अड़चनको दूर करनेके लिये उसे मौका भी आप ही आप मिल गया! जिस व्यक्तिको वह चाहता था, अनायास ही उसके पञ्जेमें आ फँसा। ऐसी दशामें वह मौका क्यों चूकेगा?—यह तो ठीक, पर उसको कैद करके इतने समय तक गुप्त क्यों रखे हुए है? बादशाहके सामने खड़ा करके अबतक उसका निपटारा ही क्यों न करा दिया?"

यह अन्तिम प्रश्न अभी उसके मनमें आया ही था कि, उसे यह उत्तर भी सूझ गया कि, "हाँ ठीक है! उसके बापको उसने कितना भारी आधार दिखा रखा है? उसके मनमें अपना विश्वास उत्पन्न कर रखा है? आज ही यदि वह नानासाहबको बादशाहके सामने लेजाकर खड़ा कर दे; और उसे सजा दिलावे, तो आजतक उसने अप्पासाहबको

जो विश्वास दिला रखा है, उसका क्या होगा ? और इसके सिवाय दूसरा जो उसका कार्य होनेवाला है, सो भी शायद उस हालतमें न हो सके। बस, यही बात सच है। नानासाहबको अपने मार्गसे दूर करनेके लिये इसीने यह कोई षड्यन्त्र रचकर उसको कैद कर रखा है। इसमें कोई भी सन्देह नहीं। तो फिर अब यही कहना चाहिये कि, हमारे लिये नजर रखने और लड़नेके लिए एक और दूसरा शत्रु तैयार हो गया। अच्छा, कोई परवाह नहीं। मैं सबको समझ लूँगा। सिवाय इसके, अब मुझे इन लोगोंका ज्ञान भी इतना हो गया है कि, चाहे ऐसे हजार शत्रु उत्पन्न हो जायँ, मैं सबसे टक्कर लेनेको तैयार हूँ। यही नहीं, बल्कि जिस जगह उसको कैद कर रखा है, अबतक यदि वह जीवित है, तो वहासे मैं तीन दिनके अन्दर ही छुड़ाकर उसके मित्रोंको सौंप दूँगा।"

इस प्रकार नाना भातिके विचार, एकके बाद एक, उसके मनमें आ रहे थे। और अन्तमें जो विचार उसके मनमें आये, वे मानो उसके मनमें बिलकुल घरसे कर गये। वे अब पूरे किस प्रकार किये जायँ ? नानासाहब कहाँ और किस अवस्थामें हैं, इसका पता लगानेके लिये क्या किया जाय ? इत्यादि बातें अब उसके मनमें आने लगीं। इतनेमें वह अपने उस विश्वासपात्र नौकरके वापस आनेकी प्रतीक्षा करने लगा। कुछ ही समय बाद वह वापस आया, और उसने आकर उसके कानमें कुछ कहा, जिसे सुनकर वह भी तुरन्त ही उससे कहता है, 'ठीक है, तूने पहले ही कहा था, सोई ठीक है। उस दुष्टका यद्यपि सम्पूर्ण दुष्ट-कार्योंमें हाथ है, पर इसमें कोई हाथ नहीं है। जिसको हम बहुत बड़ा सभ्य और सदाचारी समझते थे, उसीका यह सारा काम है, इसमें सन्देह नहीं। कोई परवाह नहीं, तू और मैं, दोनों जबतक इस पृथ्वीपर जीवित हैं, तबतक ऐसे लोगोंके ऐसे नीच कृत्य हमारी नजरोंसे दूर रहें, यह कदापि सम्भव नहीं। अच्छा, अब तू जा, और अपनी सदैवकी नीति-से काम लेकर इस बातका पूरा-पूरा भेद ले आ कि, रणदुल्लाखाने उसे कहाँ रखा है, और कैसे रखा है। मुझे यह बात अभी मालूम नहीं

है कि, वह कहाँ है; और यह क्या बात है; पर मैंने प्रतिज्ञा कर ली है कि, तीन दिनके अन्दर उसे छुड़ा लूँगा। इसलिये अपनी प्रतिज्ञाके अनुकूल ही सब कार्य होना चाहिये। तू जा। यह तो बिल्कुल निश्चय है कि, यह कार्य बिल्कुल गुप्त रूपसे किया गया है। इसलिए दरवानों इत्यादिसे जाकर गपशप मारनेसे इसका पता नहीं चलेगा। रणदुल्ला-खाँका अत्यन्त विश्वासपात्र एक मनुष्य अहमद है। इस अहमदके समान नीच और अपने मालिककी चापलूसी करनेवाला अन्य और कोई दूसरा नौकर उसके पास नहीं है। पर अहमद काहेको किसीकी परवाह करता है; और काम तो यह उसीके हाथका जान पड़ता है, और किसी-के हाथका यह काम है ही नहीं। जो हो, अहमदसे कोई समाचार मिलनेकी आशा नहीं। पर हाँ, कोई दूसरा मनुष्य भी उसमें शामिल अवश्य होना चाहिये, क्योंकि अकेले आदमीसे इतना बड़ा काम हो नहीं सकता। और मेरा तो यहाँतक अनुमान होता है कि, इसमें किसी स्त्रीकी सहायता अवश्य होनी चाहिये। सो वह स्त्री कौन है, इसका पता लगा। उसीसे यदि कुछ अनुसन्धान लग सके, तो लगा; क्योंकि ऐसा ही अनुसन्धान इस समय हमारे काम आ सकता है।"

बस, इतना ही कहकर वह फिर अपने मन ही मन कुछ सोचने लगा। कुछ देर बाद फिर एकदम वह अपने ही आप गुनगुनाता है, "अहमद! अहमद! अहमद एक पक्का बदमाश, लुच्चा और पाजी आदमी है। वह किसीका सुन नहीं सकता। पर वह किसके जालमें है, सो मालूम होना चाहिये। उसके बिना यह शिकार हमारे हाथ नहीं लग सकता, इसलिये उसको पकड़ना चाहिये।" उसने अपनी ओरसे बहुत कुछ सिरपच्ची की, पर कोई विचार ठीक ठीक जमा नहीं। इसके बाद फिर ऐसा जान पड़ा कि, जैसे कोई अत्यन्त आशा उत्पन्न करने-वाला विचार उसके मनमें एकदम चमक उठा हो, और उसके चम-कनेपर फिर वह आप ही आप हँसकर कहता है; "हाँ हाँ ठीक है। आजतक हमने इस बातकी ओर ध्यान ही नहीं दिया, यह कितनी भारी भूल हुई! अरे हमको जरूर उन लोगोंके उन प्रयत्नोंमें सहायता करनी

चाहिये थी, जो कि उनके द्वारा अभीतक वहासे उसे छुड़ानेके लिये होते रहे। परन्तु हमने इस विषयमें अबतक कुछ भी नहीं किया, यह कितना बड़ा हमारा दोष हुआ! हमने यदि इस विषयमें कुछ किया होता, तो उनकी ओरसे हमारे कितने उपकार माने जाते। अथवा निराधार—और दुष्टके हाथमें फँसे हुए—प्राणीको सहायता करनेका श्रेय हमको प्राप्त हुआ होता। पर हमने व्यर्थ खो दिया। और यह भी नही कि, इतने दिनतक यह बात हमको मालूम न हुई हो। उनके विषयमें सब बातें हमको पूरी-पूरी मालूम होती रही हैं, और यहासे छूटनेके लिये उनके साथ ही लगातार जो प्रयत्न होता रहा है, सो भी हमें मालूम होता रहा है—ऐसा नहीं, कि न मालूम होता रहा हो—फिर भी हमने उनकी कोई सहायता नही की, यह कितनी बडी भूल हमारे हाथसे हुई! ऐसी भूल न होनी चाहिये थी। हमने अपने मनमे निश्चय किया था कि, इस दुष्ट यवनोंके हाथसे अनाथों और निराश्रितोंको छुड़ानेका कार्य हम बराबर जारी रखेंगे। परन्तु उस प्राणीको हम बिल्कुल ही भूल गये, और अपनी ही धुनमें मस्त रहे। अच्छा, कोई हानि नही, जो बात हो गई, सो हो गई! अब आगे अवश्य ही हमको उनके कार्यमें सहायता करनी चाहिये। अब दो दिन हम उधर ही ध्यान दें। उधरसे भी इस काममे—हमको अवश्य मदद मिलेगी। सच पूछो, तो यह एक बड़ा ही विचित्र मौका आ गया है!" इस प्रकार सारा विचार करनेके बाद फिर उसने इस बातका विचार शुरू किया कि, अब आगे किस मार्गसे अपने इस कार्यभागमें प्रवेश किया जाय।

नौवां परिच्छेद

रणदुल्लाखॉ

उस काले महाशयको भलीभाति मालूम था कि, जिस कार्यके करनेका उसने बोड़ा उठाया था, वह कोई छोटा-मोटा कार्य नही था। परन्तु उसने निश्चय कर लिया था कि, दीन-दुखियों और अनाथोंको

मुसल्लोंके पंजेसे छुड़ाना उसका एकमात्र व्रत होगा; और अपने शत्रुका खून करना, जो कि उसके मनका एक भारी उद्देश्य था, उसके साथ उपर्युक्त व्रतका वह सदैव पूरा-पूरा पालन करता रहेगा। अतएव ऐसा कोई भी कार्य जब उसके सामने आ जाता, उसमें हाथ डालनेमें कभी भी वह पीछे नहीं हट सकता था, और जिसमें वह तन, मन, वचनसे लग जाता था। कोई भी प्रयत्न उसके लिये फिर वह उठा नहीं रखता था। इसलिये अब वह दो बातोंके विचारमें लगा—एक तो यह कि, जिन "अनाथ प्राणियों" को रणदुल्लाखाके पंजेसे छुड़ानेका उसने निश्चय किया था, उन प्राणियोंका इस समय क्या हालचाल है; और उनकी यदि वह सहायता कर सकता है, तो किस प्रकारकी और कैसे कर सकता है, और दूसरी बात यह कि, रणदुल्लाखाने यदि नाना-साहबको कहीं कैद कर रखा है—अथवा समझ लो; कि मार ही डाला हो—तो उसका हालचाल क्या है; और वह कैसे उसे मालूम हो। बस, इन्हीं दो बातोंके विचारमें वह लगा। परन्तु अब हम उसे छोड़कर स्वयं रणदुल्लाखाँकी ही ओर क्यों न आवें, क्योंकि उसका भी तो हालहवाल कई दिनोंसे पाठकोंको नहीं मिला है।

हमको नीचा दिखानेके लिये सैयदुल्लाखाँ रात-दिन प्रयत्न कर रहा है। मौका लगनेपर हमारी निन्दा करने अथवा हमारे विषयमें बादशाह-का मन खराब करने, इत्यादिमें भी वह चूकनेवाला नहीं; और न चूकता है—ये बातें उसको मालूम थीं, पर जबतक वह बादशाहके साथ सचाईका बर्ताव करता है; और जबतक उसका यह विश्वास बना है कि, रणदुल्लाखाँ राज्यका एक दृढ़ आधारस्तम्भ है, तबतक वह सैयदुल्लाखाँ-की एक भी नहीं सुन सकता—इस बातका भी रणदुल्लाखाँको पक्का विश्वास था, और इसी कारण वह सैयदुल्लाखाको कोई चीज नहीं समझता था, दिनपर दिन सैयदुल्लाखाका प्रभाव बादशाहपर अधिकाधिक बढ़ता जारहा है, यह मुरारपन्त और रणदुल्लाखा दोनोंको मालूम था। परन्तु साथ ही यह विश्वास भी उनको तबतक बना हुआ था कि, सैय-दुल्लाखाके कहनेसे बादशाह कोई ऐसा अविचारका कार्य नहीं कर

सकता। अतएव रंगराव अप्पाको जिस दिनसे रणदुल्लाखा लाया था, उसी दिनसे और अबतक, उसे यह विश्वास था कि, आज नहीं तो कल उनको अवश्य हम सुलतानगढ़का किलेदार फिरसे नियत कर सकेंगे। पाठकोंको मालूम ही होगा कि, रणदुल्लाखाँ अप्पासाहबको बड़ी इज्जत और प्रतिष्ठाके साथ रखता था, और उसने अपने आश्रममे ही उनको स्थान भी दे रखा था, परन्तु इस बातकी चिन्ता उसे रातदिन सता रही थी कि, देखो, आज कितने दिन होगये, परन्तु हम अपने कहनेके अनुसार कुछ भी कर नहीं सके। अप्पासाहबको अबतक वापस भेज देना बहुत आवश्यक था, क्योंकि उधर शहाजीके लड़केका उपद्रव दिन-पर दिन बढ रहा है, और सुलतानगढ़के समान भारी किला फिर भी लापरवाहीमें पड़ा हुआ है, यह बात कुछ ठीक नहीं है। जिस समय हमारा वह काला महाशय रणदुल्लाखाके विषयमे उपर्युक्त रीतिसे विचार कर रहा था, उसी समय स्वय रणदुल्लाखा इस विचारमे निमग्न था, कि, अप्पासाहबको जो वचन हमने दिया है, उसे किस प्रकार पूरा करें, और किस युक्तिसे फिर उनको किलेपर नियोजित करें। एक-दो बार तो उसके मनमें यह भी आया कि, बादशाहसे भी इस विषयमे कुछ न पूछें, और मुरारपन्तकी ही सलाहसे उनको किलेपर भेज दें। जिस दिन यह विचार उसके मनमें आया था, उसी दिन रगराव अप्पाने भी सुलतानगढ़का समाचार अपने हलकारेके द्वारा मँगवाकर रणदुल्लाखा-को वह पत्र दिखलाया था। उसमे स्पष्ट लिखा था कि, इधर बड़ाभारी उपद्रव मच रहा है। हाँ सुलतानगढ़के इर्द-गिर्द दस कोसतक तो यद्यपि अभी डाके नहीं पड़े हैं, पर बाकी और सब जगह लूटमार जारी है, और गाँव उजड़े जा रहे हैं। चार-पाँच गावोंके आदमी तो अपने-अपने गाँवोंको छोड़कर सुलतानगढ़के आसपास चार-पाच कोसके बीचमे ही आकर रह रहे हैं। बस, इसी प्रकारका वृत्तान्त उस चिट्ठीमें लिखा था। अप्पासाहबने जब यह रणदुल्लाको पढ़कर सुनाया, उस समय उसको भलीभाँति मालूम हो गया कि, अप्पासाहबको उपर्युक्त बातोपर कितना क्रोध और खेद मालूम हो रहा है। फिर उसको इस बातपर भी बहुत

दुःख हुआ कि, देखो, ऐसे स्वामिभक्त वृद्ध पुरुषको व्यर्थके लिए इतना कष्ट दिया जा रहा है। अन्तमें उस वृद्ध महाशयने यह बतलाया कि, "मुझे कमसे कम कुछ दिनके लिये तो अवश्य ही आपलोग किलेपर भेजनेका प्रबन्ध करें। मैं वहाँ पहुँचकर इस सारी बगावतका दमन करूँगा; और फिर चाहे मैं यहाँ भी आजाऊँ, तो भी कोई विशेष हानि नहीं। परन्तु उन लुटेरोंकी तो एक बार अच्छी तरह खबर ले लूँगा। मेरा कम्बख्त अभागा लड़का भी उन्हींमें जा मिला है, वह यदि मिल जायगा, तो उसे भी सूलीपर चढ़ाऊँगा, अथवा अपने हाथसे ही उसका सिर काटकर यहाँ भेज दूँगा, इस विषयमें आप कोई सन्देह न करें।"

वृद्ध कितने हृदयसे ये सब बातें कह रहा था, सो रणदुल्लाखांको भली-भाँति मालूम हो गया, और उसने उसको धैर्य भी दिलाया। परन्तु यह बात उसके ध्यानमें नहीं आई कि, किस उपायसे मैं इसको किलेपर भेजकर अपने वचनोंको पूरा करूँ। बादशाहकी मर्जी इस समय उसके पक्षमें नहीं है, यह वह जानता था। क्योंकि उसने उनके सामने एक-दो बार इस विषयमें बात निकाली थी, पर कोई ठीक-ठीक उत्तर नहीं मिला था—इतना ही क्यों? बल्कि एक बार तो बादशाहने यहाँतक कहा कि, "उस बुड्ढेके विषयमें तुमको इतनी चिन्ता क्यों है? देखा जायगा, जब हमारी इच्छा होगी।" यह कहकर बादशाहने सैयदुल्लाखांकी ओर भी कुछ अर्थपूर्ण दृष्टिसे देखा; और इस प्रकार जब रणदुल्लाखाने प्रत्यक्ष ही बादशाहका व्यवहार देख लिया, तब वह बड़े चक्करमें पड़ा कि, यह मामला क्या है, और इसको किस प्रकार सुलझावें। बस, इसी बातका विचार करनेमें उस समय लगा हुआ था; और साथ ही साथ कुछ अन्य विचार भी उसके मनमें आ रहे थे कि, जिनको सोच सोचकर वह लम्बी-लम्बी सांसें छोड़ रहा था। इतनेमें उसे मालूम हुआ कि, कोई झांक रहा है, तत्काल ही उसने पूछा, "कौन है?" उत्तर मिला, "गरीबपरवर, मैं आपका गुलाम, अहमद हूँ।" इसपर रणदुल्लाखाने उससे फिर पूछा, "क्यों आया? क्या काम है?" अहमद रूमालसे अपने हाथ बांधकर कुछ आगे आया; और कहता है,

"गरीबपरवर, चार दिन हुए, मैंने एक बहुत भारी काम किया है, जिसे सुनकर हुजूर बहुत ही प्रसन्न होंगे। जो काम मैंने किया है, वह हुजूरके भी कानोंमें डाल दूँ, इसीका मौका देख रहा था। तबसे बराबर रात-दिन हजूरके आसपास चक्कर लगाता रहा था, पर कोई अच्छा सा मौका ही न मिला। एक-दो बार मौका भी मिला, पर मुँहसे आवाज ही न निकली। न जानें आप क्या कहेंगे, इसी विचारमें रहा। खता माफ हो सरकार!"

अवश्य ही, अहमद क्या कहता है, और उसने ऐसा कौनसा काम किया है, इत्यादि कुछ भी रणदुल्लाखाकी समझमें न आया। तब अहमद ही फिर बड़ी चापलूसीकी आवाजमें, और एक विचित्र प्रकार-का सूरत बनाकर, बार-बार रूमालसे हाथोंको लपेटते हुए कहता है—हजूर, आपके चरणोंपर मेरी बड़ी भारी भक्ति है, और उसीने वह काम मुझे सुझाया। क्या आपका दिल मैं नहीं पहचानता? मैं यह अच्छी तरह जानता हूँ कि, जबतक आपके रास्तेमें एक रुकावट बनी हुई है, तबतक आप इच्छा रहते हुए भी कुछ कर नहीं सकेंगे। और इसीलिए, मौका मिलते ही, मैंने सब बन्दोबस्त कर लिया। आपकी इजाजत मिलनेका रास्ता नहीं देखा। अब आप स्वय ही उसका निपटारा करें। बस, फिर उसकी वस्तु लेनेमें पाप भी न लगेगा। मैं जानता हूँ कि, आप कितने पापभीरु हैं, पर सरकार, जब स्वय ही आप अपने हाथसे एक बार उसका फैसला कर देंगे, तब फिर "

रणदुल्लाखा कुछ भी नहीं समझ सका, और यह उसके चेहरेमें स्पष्ट दिखाई दे रहा था। इसने कौनसा काम किया! फैसला किसका किया जाय? वस्तु किसकी हड़पकर ली जाय? इत्यादि सभी बातें, रणदुल्लाखाके लिए, बिलकुल अन्धकारमें ही होनेके सदृश, अदृश्य था। पहले तो उसने यही समझा कि, होगी कोई मामूलीसी बात, और जिसको यह इतना बढ़ाकर कह रहा है, पर उसकी अन्तकी बातोंमें उसने समझ लिया कि, नहीं, यह कोई मामूली बात नहीं है, किन्तु अवश्य ही कोई महत्वकी बात है, और इसीलिये वह एकदम अहमदमें

बोला, "बतला न, जो कुछ बात हो साफ साफ ? इस प्रकार आगा पीछा क्यों करता है ? इसमें घबड़ानेकी कौन सी बात है ? जो कुछ कहना हो, साफ साफ कह। बतला, कौनसा काम कर आया ? फैसला किसका करना है ? और वस्तु किसकी लूटती है ? तुझको कौनसा काम, किसने बतलाया था ?"

"ग़रीबपरवर, मैं आपका ग़ुलाम बन्दा हूँ। क्या मेरे आँखें नहीं हैं ? मालिकके मनमें रात-दिन कौनसी बात बस रही है, और क्या करनेसे उसको आराम मिलेगा, सो क्या मैं जानता नहीं हूँ। सच्चे नौकरका तो सारा ध्यान इसी एक बातकी तरफ रहता है कि, मेरे मालिककी इच्छा इस समय क्या है, और उसके न कहते हुए ही मैं किस प्रकार उसको कर डालूँ····· "

"बस, बस! रहने दे, अब ये तेरी बातें हो चुकीं!" रणदुल्लाखां बिल्कुल त्रस्त होकर कहता है, "अब असली बात जो तू बतलाने आया है सो बतला। अहमद, मैंने तुझे आजतक कितनी बार जताया है कि, तू आवश्यकतासे अधिक बोलता है, और जिस काममें पड़नेकी तुझे कोई आवश्यकता नहीं, उस काममें तू पड़ा करता है। यह तेरे लिए अच्छा नहीं है। पर तेरी आदत नहीं जाती। आज तू कहता है कि मैंने यह काम किया है, पर वह काम भी यदि ऐसा ही हुआ, तो याद रखना, तुझे दण्ड दिये बिना मैं कभी नहीं रहूँगा। तू बहुत लुच्चा आदमी है। बतला, क्या बात कहता है ?"

"सरकार, आप ही जब ऐसा कहने लगेंगे, तब फिर हम ग़ुलामोंको कौन पूछेगा ? मैंने जो अपनी समझमें बहुत ही भारी काम किया है; और ऐसा भारी कि, उसके लिए आपसे इनाम ही······"

रणदुल्लाखांका अब बिल्कुल ही धीरज नहीं रहा, और वह एकदम बहुत क्रोध होकर अहमदके बिल्कुल पास चला गया; और उसपर हाथ उठाकर बोला, "बतला बतला, साफ-साफ जो कुछ कहना हो, नहीं तो अभी लगाता हूँ। नमकहराम कहीं का! इतनी देरसे उचपन कर रहा है!"

"नमकहराम !" अहमद तुरन्त ही कहता है—"मैं यदि नमक-हराम हूँ, तो फिर इस ससारमे नमकहलाल कौन होगा ? जहापनाह, आप जिस वस्तुके लिये रात-दिन इतने व्याकुल हो रहे हैं, उसी वस्तुके पहले स्वामीको इस बन्देने आपके ताबेमें लाकर रख दिया है। उसको मैं अबतक कभीका जहन्नुमको भेज देनेवाला था, पर मैंने समझा कि; शायद हुजूर ही अपने हाथसे उसका निपटारा करना चाहते हों।"

"वस्तुके लिये मैं व्याकुल हो रहा हूँ—मैं ?" रणदुल्लाखॉ बहुत ही विचित्र आवाजसे और विचित्र प्रकारकी चेष्टा बनाकर कहता है—"कौनसी वस्तुके लिये ? कौन उसका पहला स्वामी ? अहमद, इस समय तो मुझे ऐसा ही मालूम हो रहा है कि, तेरा ही निपटारा मैं कर दूँ। तू पागल तो नहीं हो गया है ? बीच बीचमे तुमको ऐसी ही सनक आ जाया करती है ? तेरी अक्ल कहाँ गई ? क्या तू समझता है कि, बाप-दादेसे जो तेरे घरके लोग मेरे यहाँ नौकरी करते आये हैं, उससे तुझको मेरी हँसी-दिल्लगी करनेका भी अधिकार प्राप्त हो गया है ? क्या तू मेरे यहाँका कोई विदूषक होना चाहता है ? बावला, किसकी वस्तु प्राप्त करनेके लिये मैं व्याकुल हो रहा हूँ ? कौन उसका पहला स्वामी है ? ऐ हरामखोर, याद रख, किसके लिये तू क्या कह रहा है !"

अहमद एक बिल्कुल निर्लज्ज आदमी था। वह तुरन्त ही कहता है, "सरकार, हम नौकर लोग, ऑखें रहते हुए भी अन्धोंकासा व्यवहार करते हैं, इससे आप हमको अन्धा ही समझ लें। आप चाहे जितना छिपावें, फिर भी कोई बात हमसे छिप नहीं सकती। बाहरकी बातोंको तो रहने ही दीजिये—बिलकुल भीतरकी बातें, फिर चाहे वे आपके हृदयकी ही क्यों न हों, वे भी हमसे छिपाई नहा जा सकतीं। फिर उसमें भी मेरे समान नौकरको—जो कि बिलकुल छुटपनसे ही नौकर है—अपने मालिकके हृदयकी यदि सब बातें मालूम हो जाय, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? आप इसी बातपर पीछे मुझसे नाराज हुए थे, और उस समय मै चुप हो गया था। पर इससे आप यह समझें, कि मैं उस बातको भूल गया, अथवा आपकी चेष्टासे मैंने सब बातें ताड़ नहीं

लीं। आप चाहे जो कहें; पर सरकार; यह अहमद आपका छुटपनका नौकर है, इसे तो आपके मनकी बात करनी है, फिर उसमें चाहे प्राण भले ही चले जायं। आप समझते हैं कि, आप जो दिनपर दिन क्षीण हो रहे हैं, उसका कारण मैं जानता नहीं? आपके मनमें उसके प्रति प्रेम उत्पन्न हो चुका है, पर आप समझते हैं कि, वह दूसरेकी वस्तु है, और उसपर जबतक आपका अधिकार न हो जाय, तबतक उसपर प्रेम करना आप उचित नहीं समझते, और इसी कारण इतने दिनोंसे इस मामलेको रोक रखा है, ये सब बातें क्या मुझे दिखाई नहीं देतीं? सरकार, ऐसी बातें चाहे आप स्वयं मुझे न बतलावें, पर वे मुझसे छिप कैसे सकती हैं? हाँ, उनके विषयमें बात मैं भले ही न निकालूँ, परन्तु, मैं हृदयसे उनको थोड़े ही हटा सकता हूँ? रात-दिन वे बातें मेरे हृदय-में बनी रहती हैं, और मैं बराबर यही सोचता रहता हूँ कि, किस प्रकार आपकी तबीयतको आराम मिले, मैं कौन सा काम करूँ कि, जिससे वह आराम आपको विशेष रूपसे मिले। आप उस रातको तम्बूमें यद्यपि मुझसे इतने नाराज हुए फिर भी मैंने अपने मनमें समझ लिया कि, सरकारका प्रेम यदि उनपर नहीं है, तो फिर सरकार यह क्यों चाहते हैं, कि वे यहांसे न जावें, उनके यहाँ बैठना लोगोंके ध्यानमें न आवे, और उनकी सच्ची पोशाक लोगोंकी यही मालूम होती रहे। इन बातोंके विषयमें सरकारकी जो आतुरता दिखाई दी, उसीसे मैं सब भेद समझ गया—और मैं ही क्या? घरके प्रत्येक नौकरको हुजूरकी वर्तमान अवस्थापर काफी सन्देह है। हाँ, इतना अवश्य है कि, मैं रात-दिन इसके विषयमें विचार करता रहता हूँ; और सोचता रहता हूँ कि, क्या करनेसे आपके मनके योग्य बात होगी, पर अन्य लोगोंका इस प्रकारका कोई भी खयाल नहीं। बस, यही उनमें और मुझमें भेद है।"

अहमद इस प्रकार बराबर बोलता ही रहा, पर ऐसा जान पड़ा कि, रणदुल्लाखाँका ध्यान उसकी ओर बिल्कुल ही नहीं था, क्योंकि यदि उसका ध्यान होता, तो उसने उसकी बोलती कभीकी बन्द कर दी होती। उसका ध्यान वास्तवमें किसी दूसरी ही ओर था, और

पड़ता था कि, वह बिलकुल एकाग्रचित्तसे किसी बातका विचार कर रहा है। सच पूछिये तो अहमदका उपर्युक्त बोलना उसके विचारके लिए एक प्रकारसे सहायक हो गया। जहाँ वह बन्द हुआ, रणदुल्लाखाँ मानो होशमें आया, और फिर एकदम उससे बोला, अहमद, तू क्या कहना चाहता है? तूने कौनसा काम किया है? तेरी सचाईके विषयमें कभी मुझे कोई शंका नहीं हुई। पर तू मेरी सभी बातोंमें दस्तन्दाजी करता है, और व्यर्थके लिये बहुत बोलता है, इसीलिये मैं तुझपर नाराज होता हूँ। बतला, तू क्या कहने आया है? जो कुछ कहना हो, साफ-साफ कह।"

अहमदने जब यह देखा कि, हमारा मालिक अब हमसे सौम्यताके साथ बोलने लगा, तब उसकी सूरतपर सन्तोषकी छाया दिखाई दी, और तुरन्त ही वह बोला, "सरकार, काम और कौनसा है? यही कि, जिस सुन्दरीपर आपका प्रेम है, उसके पहले स्वामीको पकड़ कर मैंने बन्द कर रखा है।"

"उस सुन्दरीका पहला स्वामी? कौन? कौन? वह तुझे कैसे मिला? बदमाश कहींका! तू क्या कह रहा है, कुछ समझता भी है?"

"जी हुजूर—हाँ, मैं उसीको पकड़ लाया हूँ—उसीको।"

"किसको? किसको? कहाँ? कैसे पकड लाया?" रणदुल्लाखाने अत्यन्त क्रोधके साथ उससे बडे कर्कश स्वरमें डाँटकर कहा।

"जहाँपनाह, यहाँ, बीजापुरमें वैरागीके भेषमें घूम रहा था। आपके उस महलके सामने खडे होकर उस सुन्दरीकी ओर देख रहा था। मैं उसको पहचान गया, और धोखा देकर उसको पकड लाया। गरीबपरवर, मैंने तो आपके लिये अपनी जान जोखोंमें डाली, और आप मुझपर इतना गुस्सा कर रहे हैं—अब मैं क्या कहूँ?"

"चुप, चुप। अधिक मत बोल! तूने उसे बीजापुरमें वैरागीके भेषमें देखा? वह तो वहाँ राजा शहाजीके लड़केके गुट्टमें मिलकर बगावत कर रहा है, और तू कहता है कि, मैंने यहाँ देखा—यह सम्भव

भी है ? पाजी कहींका ! तू पागल हो गया है ! इसमें कुछ भी सन्देह नहीं । जा, पागल कहींका । यहासे चला जा ।"

अहमद अब अपने मालिककी मर्जी पहचान गया, और उसका यह अन्तिम कथन सुनकर जोरसे हँसते हुए बोला—"सरकार, वह यहाँ कैसे आया, सो तो मैं कह नहीं सकता, परन्तु हाँ, उस महलके सामने खड़े होकर ऊपरकी ओर निहारते हुए मैंने उसे कई बार देखा था। इससे मैंने जब समझ लिया कि, यह आपके मार्गमें कटकस्वरूप अवश्य होगा, और इसको दूर किये बिना आपको सुख नहीं होगा, तब मैंने उसके साथ दगा करके उसको पकड़ लिया, और महलमें लाकर आपके तहखानेमें कैद कर रखा है। उसको कैद करनेमें मुझको न जाने क्या क्या कार्यवाहियाँ करनी पड़ीं । पर अब आप उसका चाहे जो करें ।"

"नानासाहब बीजापुरमें आया कैसे !" इस बात पर रणदुल्लाखाँ-को विश्वास नहीं हो रहा था। जिस आदमीको पकड़नेके लिये बाद-शाहके खरीते छूटे हैं, जिसके कारण उसके पितापर इतना कोप हुआ है, वह मनुष्य बीजापुरमें आप ही आप आकर इस प्रकार कैसे घूमेगा ? उसकी कुछ समझमें न आया। परन्तु अहमदने जब बार बार वही बात कही, तब उसके मनमें भी शका उत्पन्न हुई, और वह मन ही मन विचार करने लगा। शायद उसको पता लग गया हो; और इस कारण वह खोज करनेको ही बैरागीके भेषमें आया हो। यह बात कुछ असम्भव नहीं है। उसके मनमें पहले शंका भी आई थी कि, शायद अहमदके पहचाननेमें ही धोखा हो गया हो, पर जब उसने यह सोचा कि; उसने उसे कई बार देखा है, और वह उसको अच्छी तरह पहचानता है, तब उक्त शंका उसके मनसे जाती रही; परन्तु अब वह इस चक्करमें पड़ा कि, वह तो सासवड़की ओर था, वहासे यहाँ कैसे आ गया ? अन्तमें कुछ उसकी समझमें नहीं आया, और न अहमदसे ही वह यह कह सका कि, "चल, दिखला, कहाँ तूने उसे रखा है।" वह बड़े विचारमें पड़ा। परन्तु कुछ देरके बाद वह अपने स्थानसे उठा, और इधरसे उधर चक्कर लगाने लगा। उसका चित्त अस्वस्थ्य हो गया। अब वह क्या

करे, सो कुछ भी उसे नहीं सूझा। उसके चित्तमें बराबर घनघोर युद्ध हो रहा था। एक बार चित्तमें आता कि, उसको जाकर देखना चाहिए, दूसरी बार आता कि, कोई जरूरत नहीं, उसको ऐसा पडा रहने दो। इस प्रकार उसके चित्तकी व्याकुलता बढती ही गयी।

दसवां परिच्छेद।

अहमदकी कारस्तानी

आजतक कभी भी जो विचार उसके मनमें नहीं आये थे, वही विचार आ आकर आज उसके मनको अशान्त करने लगे। क्या करें? हमारे पजेमें वह आ गया है, यह यदि सच है, तो हम अब उसको क्या करें। रणदुल्लाखाके मनकी दशा वास्तवमें वैसी ही थी, जैसी कि अहमदने पहचानी थी। नानासाहब कभी न कभी हमारे रास्तेमें अवश्य आवेगा, और वर्त्तमान दशा बहुत दिनतक ठहर नहीं सकती। हम दिन-पर दिन अधिकाधिक अपनेको फँसा रहे हैं, इससे छूटना, अपना मन साफ रखना, बहुत ही कठिन काम है। हमारा चित्त उस एक बातसे कितना अस्वस्थ्य हो गया था, इसकी हमको अबतक कल्पना भी न थी। अब रणदुल्लाखाको स्पष्ट दिखाई देने लगा। ज्यों-ज्यो वह अधिक विचार करने लगा, उसको और भी स्पष्ट मालूम होने लगा कि, उसका चित्त उसके हाथमें नहीं है। उसने सोचा कि, यही दशा यदि और कुछ दिन हम अपने चित्तकी बनी रखेंगे, तो न जाने आगे उसकी क्या दशा होगी, और क्या नहीं। अब हम करें क्या? एक बार वह हमारे पजेमें तो आ गया। अब हम उसका चाहे जो कर सकते हैं। अपने हाथसे उसका फैसला करना चाहें, तो यह भी सम्भव है, और यदि बादशाहके सामने ले जाकर उपस्थित करना हो, तो यह भी कोई मुश्किल बात नहीं है। पर ऐसा करना कितनी अधमताकी बात होगी! आजतककी हमारे मनकी शुद्धता कहाँ गई? आज ये विचार हमारे मनमें क्योंकर आने लगे? क्या शैतान इसके ऊपर अपना आधिपत्य जमाया? अरे शैतान!

तू किस समय किसका नाश करेगा, कुछ कहा नहीं जा सकता। इस प्रकारके अनेक विचार और उद्गार उसके मनमें आने लगे; और कभी कभी बाहर भी निकलने लगे। वह अत्यन्त उद्विग्न हो गया। उसे कुछ दिखाई ही न देने लगा। सुविचार और कुविचार; दोनोंका तुमुल युद्ध शुरू हो गया। यह-इच्छा उसको हृदयसे थी कि; कोई बुरी काम उसके हाथसे न होने पावे। परन्तु आज इतने दिनसे चूंकि वह कुछ स्थिर नहीं कर सका था; बिलकुल प्रलोभनमें पड़ गया था; और उस प्रलोभनके पाशको; उसके पहले ही आवेगमें, जितने जोरसे हटा देना चाहिए था, उतने जोरसे चूँकि नहीं हटाया था, इसी कारण उसके मनकी आज यह दशा हो रही थी। और इसीलिये अब स्वंय उसके ध्यानमें आया कि, वास्तवमें इस दशासे निकलकर अबतक हमको कभीका निश्चिन्त हो जाना चाहिए था, परन्तु हमने ऐसा नहीं किया, और इसी कारण आज हमारे हृदयमें ऐसी दुर्बलता आ गई है। परन्तु क्या करे? हृदयको सबल बनावें, सो उसके हाथसे हो नहीं सकता था। अच्छा, कुछ दिन इसी प्रकार जाने दें, अहमदने जैसा उसे कैद कर रखा है, वैसा ही और कुछ दिनतक रगड़ने दें, हम उनसे मिलें ही नहीं; और दो दिन विचार करें, शायद ऐसा ही मनमें आजावे कि, छोड़ो, इस प्रलोभनको (और ऐसा ही इष्ट भी है); और यदि ऐसा मनमें आगया; और हम एक बार उस सुखसे हाथ धो बैठे, तो वह सुन्दरी जिसकी है, उसके हाथमें चली जायगी, और फिर जो अभीतक हम उससे कमसे कम वार्तालापका ही आनन्द उठाते हैं, सो भी हमारे हाथका जायगा। पर क्यों? इतनी जल्दी करनेकी क्या जरूरत है? अच्छा काम करना तो हमारे हाथमें है, चाहे जब कर सकते हैं। जब इच्छा होगी, तभी उसको छोड़ देंगे, और दोनोंका मिलन कराकर फिर अपनी सहायतासे गुप्त रूपसे उनको यहाँसे भेज देंगे। यह तो अपने हाथकी बात है! चाहे जब कर सकते हैं! पर एक बार जहाँ ऐसा हो गया कि, फिर उस मधुर भाषण, अथवा, उस पवित्र दर्शनका लाभ हमको नहीं रहेगा!

बेचारा रणदुल्लाखां ! अच्छा काम क्या ! चाहे जब कर लेंगे ! इच्छा होगी तभी कर लेंगे ! ऐसा उसका विचार था—वह उसका कितना भ्रम था ! अच्छा काम, चाहे जब कर लेना, यदि सम्भव होता, तो न जाने आज ससारकी कौनसी दशा होती ! अरे, अच्छा काम करने जाते हैं, तब भी तो नहीं होता, फिर चाहे जब कर लेना कहाँ सम्भव है ? क्या करे बेचारा—एक प्रलोभनमें फँस गया था, और उसके जालसे छूट कर अपना असली शुद्ध चरित्र फिरसे भलीभाँति चमकानेके लिये जिस मनोबलकी आवश्यकता थी, वह उस समय उसमे नहीं था, और इसी कारण बेचारा और भी उसमे अधिकाधिक फँसता जाता था। जैसे कोई मनुष्य, जहाँ खूब कीचड़ है, ऐसी जगहमे जब एक बार फँस जाता है, तब फिर और भी अधिकाधिक फँसता ही जाता है—बस, ऐसा ही हाल उसका हुआ। पहले पहल उसे इस लोभपाशसे बाहर निकलना जितना सहज जान पड़ा था, उतना सहज वह नहीं है—यह अब उसके ध्यानमें आया। न सिर्फ ध्यानमें ही आया, बल्कि इसका उसे अनुभव भी हुआ। इस समय उसके समान उदार चरित्र मनुष्यके लिये यही उचित था, चुपकेसे नानासाहबको वह वैसा ही छोड देता, और उसने ऐसा ही किया भी होता, परन्तु—'परन्तु' ही बड़ा भारी बाधक था—उसके सुविचारपर, कमसे कम उस समय तो अवश्य ही शैतानने अपना आधिपत्य जमा लिया था। वह उसके नौकरके रूपमे आकर उसके सामने खड़ा हुआ था, तथा अपने राज्यमे आनेके लिये उसे प्रलोभन दिखा रहा था ! बस, इसी कारण अन्तमे उसने यही निश्चित किया कि, कमसे कम आजके दिन तो अवश्य ही नानासाहब-को वहीं पड़ा सड़ने दो, फिर देखा जायगा। इस प्रकार कुछ निश्चय करके उसने अपने उस अशान्त मनको क्षणिक और काल्पनिक शान्ति प्रदान की। अस्तु।

अहमदने अपने मालिकका यह सब विचार देखकर तुरन्त ताड लिया कि, उनका मन, जैसा हम कहते हैं, उसी ओर झुकेगा। अतएव उसने सोचा कि, अब हम अपने मालिकको न बताते हुए ही उसका

फैसला क्यों न कर डालें। अहमदके मनमें इस विचारका आना था कि, फिर और कुछ उसे सूझने ही न लगा। आजतक तो वह यह समझता था कि, हमारे मालिकके मनमें चाहे कोई बात हो भी; परन्तु चूँकि वह एक शुद्धचरित्र व्यक्ति है, अतएव यदि हम कोई ऐसा-वैसा काम करेंगे, तो उसे अच्छा नहीं लगेगा—इतना ही क्यों—मौका आ जानेपर वह ऐसे कामके लिए हमारा सिरतक काट लेगा; परन्तु आज जो उसने अपने मालिककी हालत देखी, उससे तो उसने यही समझा कि, यदि नानासाहबको हमने इससे पहले ही मार डाला होता, तो भी कोई हानि नहीं थी। हाँ, पहले पहल, उसके वधका समाचार सुनकर शायद उसे कुछ बुरा भी मालूम हुआ होता, पर फिर अन्तमें उसको सन्तोष ही हो जाता। क्योंकि वह उसके मार्गका एक बड़ा भारी काटा है, और वह काटा इस प्रकार यदि आप ही आप दूर हो जाता, तो उसको सन्तोष होना स्वाभाविक ही था। बस, अपने इसी विचारके अनुसार कार्य करनेका अहमदने अब निश्चय किया। उसने सोचा कि, अब इसमें विलम्ब बिलकुल ही नहीं लगाना चाहिए, और आज, जिस प्रकार उसको सिर्फ पकड़ लानेभरकी खबर आकर सुनाई है, उसी प्रकार चार दिन बाद यदि दूसरी खबर आकर हम सुनावेंगे, तो पहले-पहल तो सुन करके हमारा मालिक चाहे कुछ क्रुद्ध भले ही हो, पर अन्तमें उसके मनको सन्तोष ही होगा। अस्तु। यही पक्का विचार करके उपर्युक्त रीतिसे उसने अपना निश्चय स्थिर किया। परन्तु इस सम्बन्धकी कोई भी बात जब अहमदको करनी होती थी, तब फ़ातिमाकी सलाह लेना उसके लिये आवश्यक होता था। क्योंकि जिस जगह नानासाहब कैद थे, वह जगह फातिमाके ही चार्जमें थी, यही नहीं, बल्कि यह कहनेमें भी कोई अतिशयोक्ति न होगी कि, स्वयं नानासाहब भी उसीके तावेमें थे। इसलिए स्वाभाविक ही अहमद फ़ातिमाके यहाँ यह बतलानेको गया कि, आज मालिकसे उसकी क्या क्या बातें हुईं, और अन्तमें उसने क्या करना विचारा है। अहमद अब इस आनन्दमें था कि, देखो, मालिक हमारे पंजेमें जिस प्रकार फँसा; और इसलिये फ़ातिमासे वह

उसका पता नहीं। उसने बहुत कुछ तलाश किया, पर उसका कहीं ठिकाना नहीं। और नाना साहबकी कोठरीकी कुंजी तो उसके ही पास थी, अब वह क्या करे? बेचारा बड़ा व्याकुल हुआ। कहीं हमारे मालिकका ही मन न बदल जाय। कल शायद उसके मनमें और ही कोई विचार आ जाय, इसलिए उसका विचार बदलने न पावे, और हम यह काम कर लें, तभी ठीक! अहमदने सोचा कि, आज यद्यपि मालिकको यह अच्छा नहीं लगेगा, पर अन्तमें उसे अच्छा ही लगेगा और वह हमपर खुश होगा, इसलिये मालिककी प्रसन्नताका यह कार्य जितनी जल्दी हम कर लें, उतना ही अच्छा। बस, यही सोचकर वह बिलकुल उतावला सा हो रहा था। परन्तु फातिमाके न होनेके कारण उसकी उतावली कुछ काम नहीं कर सकती थी। अतएव उसको ढूँढने-के लिये उसने सब प्रयत्न कर डाले, पर बेकार! उस रातको उसका पता ही न चला। अन्तमें बेचारा हताश होकर चुप बैठ रहा। परन्तु, दूसरे दिन प्रातःकाल ही वह फातिमासे मिला, और कहा, "आज रात-को हम लोग उसे इस संसारसे बिदा कर दें। तुम इस काममें मुझे सहायता दो, और वह इतनी ही कि, जिस प्रकार उसको हमलोग लाये, उसी प्रकार उसकी लाश चुपकेसे महलके बाहर ले जा सकें। इतना, प्रबन्ध तुम कर दो, और बाकीका मैं देख लूँगा।" ये भयंकर शब्द, यह भयंकर विचार, सुनते ही फ़ातिमाके शरीरके रोंगटे खड़े हो गये। यहाँ तक कि उसके मुँहसे एक शब्द भी न निकलने लगा। परन्तु अन्तमें उसने यही कहा कि, "मैं इस बातमें तुमको मदद नहीं दे सकती।" फिर भी अहमद उससे ढिठाई करके बोला, "जान पड़ता है, फातिमा, तुमको मालूम नहीं है। पर सरकारके मनमें अब यही बात है कि, यह कार्य हो जाय, तो अच्छा। आजतक उनका व्यवहार शुद्ध था। इतने दिन उस खूबसूरत मराठे सरदारको आश्रममें रखकर (ये शब्द अहमदने जोरसे हँसते-हँसते कहे) उसके साथ उन्होंने कोई भी आक्षेपयोग्य व्यवहार नहीं किया। बिलकुल अदबके साथ ही बर्ताव किया, और यही देखकर मैं समझता था कि, हमारे सरकारका मन

चाहे उसके प्रेममें फँसा हो, पर कोई बुरी वासना नहीं। किन्तु आज मेरा यह भ्रम बिलकुल दूर हो गया। वास्तवमें उनका भाव यही है कि, वह सरदार (फिर जोरसे हँसकर) उनको मिल जाय, तो अच्छा। ऐसा यदि न होता, तो नानासाहबको दो दिनतक पड़ा रखकर सड़ाते रखना उनको कभी पसन्द न आता। फातिमा, तुम सब समझती हो! अपने हीसे समझ लो—तुम्हारे मोहमें मैं पड़ गया, अब उससे छूटना कितना कठिन है! मेरी हालत देखो। आजतक सरकारका मन गोल-मालमें पड़ा था; और इसी कारण उनके हाथसे कोई अशुद्ध वर्ताव नहीं हुआ, पर अब वह हालत नहीं रही। अवश्य ही, पहले पहल जब उन्होंने यह सुना कि, नानासाहबको हमलोग पकड़ लाये, तब वे कुछ क्रुद्धसे हुए, पर शीघ्र ही उनको सन्तोष भी हो गया। ऐसा ही अब भी होगा। यही नहीं, बल्कि मुझे विश्वास है कि, अन्तमें वे मुझपर बहुत प्रसन्न भी होंगे।" अहमद जिस समय यह सब बातें कह रहा था, फातिमा अपने किसी दूसरे ही विचारमें थी। उसकी बातोंकी ओर उसका ध्यान भी नहीं था। वह उस समय इसी विचारमें थी कि, अहमदको बहकाकर इस मौकेपर मैं कैसे पार पाऊँ, और इसी कारण उसका उपर्युक्त कथन यद्यपि खतम होनेपर आया—नहीं, नहीं खतम भी हो चुका—फिर भी यह बात उसके ध्यानमें नहीं आई। जब वह बिलकुल ही थम गया, तब कहीं वह अपने भानमें आई। उसे क्या करना होगा, सो अब वह निश्चित कर चुकी थी। अतएव वह एकदम कहती है, "अहमद, यह तुम्हारा विचार अभीतक मेरे मनमें नहीं आया। परन्तु तुम्हारे समान होशियार कोई नहीं, इसलिये मैं अपना भय अब एक ओर रखती हूँ। किन्तु तुम ध्यानमें रखो, आधीरात बीत जानेके पहले इधर फटकनातक नहीं। आधीरात होते ही, यहाँ आ जाओ। मैं उस दिनकी तरह तुम्हारा रास्ता देखती रहूँगी। और फिर······फिर······फिर जो तुम्हारी मर्जी हो, सो करना। मैं उस समय वहाँ न रहूँगी। हाँ, तुम्हारा काम जब हो जाय, तब मुझे बुलाना। मैं आकर दरवाजा लगा दूँगी।" फातिमाकी अनुकूलता

प्राप्त होते ही अहमद अत्यन्त आनन्दित हुआ। अब सब काम ठीकसे हो जायगा, यह उसको विश्वास हो गया। हमारा यह काम जब मालिक सुनेगा, तब अन्तमें हमपर बड़ा प्रसन्न होगा, इस बातका विश्वास उसे था ही, और इसी विश्वासमें—अब आधीरात कब हो और कब नहीं, इस बातकी प्रतीक्षा करते हुए, वह अपने कामको चला गया।

इधर फतिमा उस दिन, दिनभर अस्वस्थ रही। अन्तःपुरमें उसकी मालकिनतकने पूछा, "फातिमा, आज तेरी यह दशा क्यों है?" उसकी अस्वस्थता उसकी चेष्टासे ही दिखाई दे रही थी। उसने अपने मनमें जो विचार स्थिर किया था, उसीके विषयमें बार बार उसे आशंका हो रही थी कि, देखना चाहिए, मेरा यह विचार कहा तक सिद्ध होता है। बीचमें उसके मनमें एक और भी विचार आया। कई बार उसने सोचा कि, न हो, यह अहमदका क्रूर विचार अपने मालिकके ही कानोंमें डाल दूँ—वह प्राय इस कामको नहीं होने देगा। वह मालिकको अत्यन्त ही शुद्ध मनका व्यक्ति समझती थी, परन्तु साथ ही यह भी उसे मालूम था कि, इस एक विषयमें उसका व्यवहार यद्यपि अबतक बिल्कुल शुद्ध है, तथापि मन शुद्ध नहीं है। इसलिए उसने सोचा कि, शायद मैंने कह दिया, पर न जाने उसका क्या परिणाम हो। अतएव अन्तमें उसने अपना पहला ही विचार निश्चित रखा। इस दिन फातिमा तीसरे पहरसे ही न जाने कहाँ चली गई। अन्तःपुरमें कई बार उसका काम लगा, पर उसका पता ही न था। आठ घड़ी रात जानेपर कहीं जाकर वह लौटी। मालकिन उसपर बहुत खफा हुई, पर कोई बहाना बतलाकर उसने उसे समझा लिया। महलमें जब चारों ओर सब लोग सो गये, तब लगभग ग्यारह बजेके करीब पीछेका दरवाजा खोलकर उसने किसीको अन्दर ले लिया। आधीरातके बाद, कुछ समयमें, अहमद भी उससे मिला। इसके बाद वे दोनों उसी तहखानेकी ओर गये, जहाँ नानासाहब कैद थे। उनके पीछे-पीछे एक और व्यक्तिकी भी छाया थी।

———

इग्यारवां परिच्छेद

नानासाहबका छुटकारा।

नानासाहब अपनी कोठरीमें, किसी रतौंधी आनेवाले मनुष्यकी तरह, बैठे थे। जिस दिनसे वे उस कोठरीमें आये, तबसे नींदका तो उन्हें नामनिशान भी न था; और मन इतना अशान्त हो रहा था कि, रात-दिन उसमें हजारों प्रकारके विचार आते रहते थे। कोई भी विचार घड़ी-आध घड़ीके लिए भी ठहरता नहीं था। उनके मनमें कौन कौनसे विचार आ रहे थे, इसका विशेष वर्णन देनेकी यहाँ आवश्यकता नहीं। आजतकका वृत्तान्त यदि पाठकोंने ध्यानपूर्वक अपने मनमें रख लिया होगा, तो वे उनके सम्पूर्ण विचारोंको, स्वयं ही, अपने मनमें, बहुत अच्छी तरहसे, चित्रित कर लेंगे। किसी कारणसे भी यदि द्वार जरा भी खटकता, तो वे यही समझ लेते कि, अब देखना चाहिये, कौनसा मौका हमारे ऊपर आता है; और इस विचारसे वे चौकन्ने होकर, आनेवाले संकटका मुकाबिला करनेके लिये, तैयार होकर, बैठ जाते थे। इधर आज जब आधीरातका समय था, दरवाजा एकदम खटका, अतएव तुरन्त ही कुछ आशा और कुछ भय, इन्हीं दोनों विकारोंसे उनका मन व्याप्त हो गया। शायद फ़ातिमाको हमपर दया आई हो, और अपने कहनेके अनुसार अब हमें वह छुड़ानेके लिये आ रही हो, यह एकबार उनके मनमें आया; पर दूसरे ही क्षणमें उनके मनमें यह भी आया कि, शायद वही व्यक्ति हमारा अपमान करनेके लिए, अथवा शायद हमारा खून ही करनेके लिये आ रहा हो कि, जिसने हमको धोखा देकर यहा कैद कर रखा है। यह दूसरा विचार मनमें आते ही वे एकदम, आकुलताके साथ, उठकर खड़े हो गये। इतनेमें दरवाजा खुला, और नगी तलवार लिये हुए फ़ातिमाके साथ, अहमद भीतर प्रविष्ट हुआ।

अहमद अपने हाथमें एक छोटीसी लालटेन लिये हुए था, उसको नानासाहबके मुखके सामने ऊपर उठाकर, मानो वह अपनी बलिको एकबार निरखकर देखना चाहता है और फिर उनको सम्बोधन करके

कहता है, 'अबे निर्बलहृदय मूर्ख! उठ। जिस दिनसे मैंने तुझे यहाँ लाकर डाला, तबसे तेरा समाचार लेनेके लिये नहीं आ सका, पर आज तेरी पूरी-पूरी खबर लूँगा। मालिकका हुक्म अब मुझे मिल चुका है। इतने दिन तुमको व्यर्थके लिये, कीड़ेकी तरह सड़ता हुआ, यहाँ छोड़ रखा था। अरे कायर बेवकूफ! तुझको शरम भी नहीं आती! तेरी औरत तुझे और तेरा घर-द्वार छोड़कर, उसके पास रहती है, अब क्या वह तुझको जिन्दा ही छोड़ देगा?"

ये अन्तिम शब्द सुनते ही नानासाहबकी चेष्टा विलक्षण ही दिखाई देने लगी। उनकी आँखें अन्धी हो गईं, कान बहरे हो गये, हाथ पैरों की शक्ति गलित हो गई। हम हैं कहाँ? यह हो क्या रहा है? हमसे बात कौन कर रहा है? इत्यादि किसी बातका भी उनको ज्ञान नहीं रहा। क्षणभरके लिये सारा संसार शून्यसा भासने लगा। धीरे-धीरे उनकी गर्दन लचती गई, और ठुड्ढी हृदयमें आकर लगी, और इसके कुछ देर बाद फिर ऐसा जान पड़ा कि, मानो उसके मनमें किसी विचार का संचारसा हो रहा है। अहमद अवश्य ही उनकी ओर देख देखकर आनन्दित हो रहा था। वह मानो मन ही मन यह सोच रहा था कि, जिस बलिका हम वध करना चाहते हैं, उसको बार बार अपमानित करके पहले इसका कौतुक देख लेना चाहिए। उसने पहले ही सोच लिया था कि, इसके हाथमें हथियार इत्यादि कुछ है ही नहीं, और हम इस प्रकार जब अपमान जनक बातें कहेंगे, तब अवश्य ही इससे इसका हृदय और भी बुरी तरहसे घायल हो जायगा, और इस प्रकार जब यह बिलकुल व्यथित होकर व्याकुल हो जायगा, तब फिर हम अपना मतलब कार्य सहजहीमें कर सकेंगे, और इसकी ओरसे कोई प्रतिबन्ध भी नहीं हो सकेगा। बस, यही सोचकर मानो वह उनकी ओर विस्मित नेत्रोंसे देख रहा था। परन्तु कुछ देर बाद उसे ऐसा जान पड़ा कि, मानो उसने जो शब्द अभी कहे थे, उन्होंने अपना पूरा पूरा काम नहीं किया, और इसीलिए वह फिर कुछ आगे बढ़कर कहता है, "अरे नादान, मैं तो लड़कपनसे ही तेरी ऐसी प्रसिद्धि सुना करता था, कि मुस-

स्मानों द्वारा यत्किंचित् भी अपमान तुझसे सहन नहीं होता। उनके हाथसे राज्य छीननेके लिए ही तू उस पूनेवाले लुटेरेके गोलमें जा मिला है। और स्वयं तेरी औरत आज कितने दिनसे मेरे मालिकके पास रह रही है। अब तेरा वह क्रोध, वह सन्ताप, कहाँ चला गया? चूड़ियां पहन कर बैठ रहता, तो आज मेरे समान व्यक्तिको तुझे पकड़ लानेकी भी आवश्यकता न रहती।"

अहमद ज्यों ज्यों इस प्रकारके कटुवचन कहने लगा, नानासाहबकी अवस्था और भी अधिक भयंकर होने लगी। पहलेकी हतवीर्यता न जाने कहाँ चली गई; और अब वे एकदम सन्तप्त होकर अहमदसे कहते हैं, "अरे हरामखोर, जबान सम्हालकर बोल। मैं निःशस्त्र हूँ। तुम सात-आठ आदमी मिलकर दगाबाजीसे मुझे पकड़ लाये हो; और निःशस्त्र करके इस जगह रखा है, इसीपर मत भूलो। तूने अभी जो कुछ कहा, सो चाहे जिस उद्देश्यसे कहा हो; किन्तु इससे मुझपर तेरे अनन्त उपकार हुए हैं। मेरा शत्रु कौन है, मेरे सारे सुखका सत्यानाश करनेवाला कौन है, सो मुझे पूरा पूरा मालूम हो चुका। ठीक है, अब आज या तो तू ही इस जगह मेरा वध कर, अथवा मैं ही तेरी लाश गिराकर, उसपर पैर रखकर, बाहर निकलूँगा; और उस तेरे दुष्ट, हरामखोर, बेईमान मालिककी पूरी खबर लूँगा! तूने कहा, वैसा ही सन्देह मुझे भी हुआ था, पर अब उसका पूरा निर्णय हो गया।"

इतना कहकर नानासाहब एकदम अहमदके ऊपर दौड़ पड़े। उसके हाथमे नंगी तलवार थी ही, उसे एकदम उठाकर उसने आगेकी ओर बढ़ाया, और तिरस्कारपूर्वक हँसता हुआ बोला, "वाह वा! वाह वा! मर्दानगीकी बातें मारनी तो तुझे खूब आती हैं। मेरी लाशपर पैर रखकर जाना तो तेरे लिए असम्भव ही है—हाँ, तेरी लाश उठाकर मुझे कहीं न कहीं अवश्य गाड़नी पड़ेगी, और उसका सारा प्रबन्ध भी मैं कर आया हूँ। अरे नादान, मैं यहाँ आया हूँ, सो अब तेरी लाश गिराये बिना थोड़े ही जानेवाला हूँ?"

हम निःशस्त्र हैं, और इसके हाथमें तलवार है, इसलिये हमको

यदि अपना उद्देश्य सिद्ध करना है, तो जो कुछ करना हो, विचार करके ही करना चाहिये। यह विचार क्षणमात्रके लिए नानासाहबके मनमें आया, और वे कुछ पीछे हट गये। परन्तु क्रोधके मारे उनका चित्त और नेत्र अबतक बिलकुल अन्धे हो रहे थे। अब इस पशुकी अपमान-जनक बातें सुननेसे और कोई लाभ नहीं। जो कुछ होना हो, सो शीघ्र ही हो जाना चाहिये। जिस बातके विषयमें बीजापुर आनेके बाद हमको भय हुआ था, उस बातका निर्णय इसकी बातोंसे हो गया। अब हमारे हाथमें सिर्फ इतना ही रह गया कि, हम अपने पिता, स्वयं अपने, और अपनी प्रिय पत्नीके अपमानका बदला निकालें। इसके सिवाय और कुछ नहीं। ऐसी दशामें यदि हम यहीं मर जायँ तो भी कोई हानि नहीं, और न मरते हुए यदि इसकी लाश गिराकर यहांसे निकल जायँ, तो भी अच्छा ही है।

उपर्युक्त विचार यहाँ लिखनेमें जितना समय लग गया, उसका शतांश भी उनके मनमें उक्त विचारोंके आनेमें नहीं लगा होगा। उनके नेत्र लाल हो गये, और प्राण देनेको वे बिलकुल तैयार हो गये। अहमद इस अभिमानमें आकर, कि उसके हाथमें नगी तलवार है, अभी और भी उनको चिढ़ानेका विचार कर ही रहा था, कि इतनेमें वे एक-दम जाकर उसकी कमरमें लिपट गये। उनके शरीरमे न जाने कहाँका जोश आ गया। अहमद उनके उस झपाटेको सहनेके लिये तैयार न था। परन्तु उसके होते ही, उससे पूर्णतया निकल जानेके लिये, और एकबारगी उनको खतम कर देनेके हेतुसे, उसने अपना वह हाथ वार करनेके लिये ऊपर उठाया कि, जिसमें तलवार पकड़े हुए था, पर चमत्कार क्या हुआ कि, उसका वह हाथ किसी प्रकार भी नीचे न आने लगा। हाँ, वह स्वय अवश्य ही, नानासाहबके उस झपाटेके साथ ही, धड़ामसे नीचे आ गिरा। उसका हाथ किसीने ऊपर ही ऊपर पकड़ लिया। यह काम फ़ातिमाका नहीं था, इसका उसे विश्वास था, क्योंकि जिस हाथने उसका हाथ पकड़ा था, वह हाथ ऐसा वैसा नहीं था; किन्तु जैसे कोई फौलादी पजा मजबूतीसे कस देवे, वैसी ही उसकी

पकड़ थी। अस्तु। नानासाहब तो उसे जमीनमें रगड़ रहे थे, और उधर दूसरा हाथ उसके हाथसे तलवार छीन रहा था। अहमदको इस बातके देखनेका भी अवकाश न मिला कि, वह हाथ किसका है; और इधर उस फौलादी हाथने, बड़ी सफाईके साथ, उसके हाथसे तलवार निकाल ली। उधर नानासाहब उसको चित्त करके उसकी छातीपर चढ़ बैठे। अब दशा बदल गई। अभीतक तो वह यह सोच रहा था कि, हम चाहे जो करेंगे, नानासाहबको हम चाहे जिस प्रकार मार लेंगे, इसलिये पहले ऐसी-ऐसी बातें कहो कि, जिससे इसके चित्तको दुःख हो; और इस प्रकार इसकी विडम्बना करके, उसका कौतुक देखकर, तब हम इसका वध करें—हमारा प्रतिबन्ध करनेवाला यहाँ कोई है ही नहीं, इस बात-का उसे विश्वास था; परन्तु अब सब मामला बिल्कुल उलट गया। अहमदने सोचा कि, अब हमारे प्राण इसके हाथमें हैं, इससे यदि छुटकारा पाना है, तो इससे चिरिया-विनती करके इसके हाथ पैर पड़ना चाहिये। इसके सिवाय छुटकारा नहीं। आखिर वह था तो अर्दलीका सिपाही ही। युद्धकी कला उसमें कहासे आती? हाँ, बड़े सरदारके पास रहता था, इसलिये एक प्रकारकी ऐंठ उसमें थी। और उसीके बलपर उसे विश्वास था कि, हमने जिस व्यक्तिको पकड़कर काल-कोठरीमें डाल रखा है, उसको जहन्नुमरसीद करनेमें हमको कोई बहुत परिश्रम नहीं पड़ेगा। परन्तु मौका आनेके पहले विश्वास कर लेना निराली बात है। मौका आ जानेपर—और ऐसा मौका आ जानेपर कि, जब सब मामला ही उलट पड़ा—उस अर्दली सिपाहीमें बहादुरी कहाँ रह सकती थी? अहमद तुरन्त ही पिंड़ी बोल गया। पहले वह यही देखने लगा कि, हमारे साथ फ़ातिमा आई थी, सो यहाँ कहीं खड़ी है अथवा नहीं। परन्तु फ़ातिमाकी मूर्ति तो उसे वहाँ कहीं दिखाई नहीं दी—हाँ, उसकी जगह एक काला-कलूटा अवश्य दिखाई पड़ा कि, जिसके हाथमें उसकी लालटेन और उसकी तलवार भी थी। उस व्यक्तिको देखते ही अहमद समझ गया कि, फ़ातिमाने हमें अच्छा धोखा दिया। परन्तु हमारी तलवार और लालटेन लिये हुए जो मनुष्य हमारी तरफ़ अत्यन्त क्रूरता-

पूर्वक देख रहा है, वह कौन है, सो कुछ अहमदके ध्यानमें न आया। इसके सिवाय नानासाहबने उसके विचारको वह अवकाश भी नहीं दिया कि, वह उस मनुष्यको पहचान पाता। उसकी छातीपर अपना घुटना और गर्दनमें हाथ लगाकर उन्होने कहा, "बतला अब। अभीतक जो कुछ बतला रहा था, सब अच्छी तरह बतला। नहीं तो जैसे कुत्तेको मारते हैं, उसी प्रकार अभी तुझे मारे डालता हूँ।" इसके बाद उन्होंने फिर कहा—"अपने मालिकके विषयमे जो जो कुछ तूने बतलाया, सब सच है न? तूने बतलाया, वहाँतक उसने हमारी विडम्बना की है न?"

इस प्रकार नानासाहब उससे बार-बार प्रश्न कर रहे थे, पर कौन बतलाता है, और कौन सुनता है! न उसको उत्तर देनेका अवकाश, न नानासाहबको उसके सुननेका अवकाश। वे एकके बाद एक प्रश्न उसमे कर रहे थे, और प्रत्येक प्रश्नके साथ उसका गला भी और जोर जोरसे दबाते जाते थे। बेचारा बहुत घबड़ाया। क्या उत्तर दे, क्या कहे, उसे कुछ न सूझा, और सूझा भी हो, तो गला उसका इस समय इतने जोरसे दब रहा था कि, बेचारा एकाक्षरी उत्तर भी देना चाहता, तो भी नहो दे सकता था। उसने कुछ बोलनेका प्रयत्न अवश्य किया; और इस कारण उसका कण्ठ कुछ घरघराया भी। नानासाहबने समझा कि यह 'हाँ, हाँ' करके उत्तर दे रहा है, अतएव उन्हें और भी जोश आया, और पहलेसे भी अधिक उनके हाथोंने अहमदका गला दबाया। इतनेमें उस महाशयके मुखसे, जो कि वह लालटेन और तलवार लिये खड़ा था, ये वचन निकले—"अवश्य, अवश्य। इसने जो कुछ पहले कहा, उसमे कोई विशेष मिथ्या बात नहीं है। इसके बेईमान मालिकका ऐसा ही प्रयत्न जारी है।" परन्तु उसके इन वचनोंका पूर्वार्द्ध ही नानासाहबके कानोंमे पड़ा। उत्तरार्द्ध सुननेकी उन्हें आवश्यकता ही नहीं मालूम हुई। इसके बाद उन्होने अहमदके मुक्के लगाकर कहा, "बच्चा अर्दली, तेरे प्राण लेकर मे अपने हाथ अपवित्र नहीं करूँगा। जा, तुझको ऐसा ही छोड़ देता हूँ। परन्तु हाँ, मे यहासे निकल जाऊँ,

और तू मेरे पीछे आ न सके, इस हेतुसे तुझको बेहोश किये देता हूँ। ऐसे नीच मालिककी ऐसी नीच चाकरी बजानेवाले अर्दलीको इतना ही दण्ड काफी है।" इतना कहकर उन्होंने उसकी छातीमें फिरसे दो-तीन मुक्के लगाये, और उसको अचेत तथा बेहोश कर दिया। इसके बाद वे वहांसे निकल जानेके लिये दरवाजेमें आते हैं, तो सामने स्वयं रण-दुल्लाखाँ खड़ा है कि, जिससे बदला निकालनेके लिये अभी क्षणभर पहले उन्होंने निश्चय किया था।

पिछले एक परिच्छेदमें हमने बतलाया था, और पाठकोंको याद होगा कि, रणदुल्लाखाँका चित्त जब उस एक विकारके वश होकर अशान्त हुआ, तब उसने उसे क्षणिक शान्ति प्रदान की। परन्तु वह सचमुच केवल क्षणिक ही थी। रणदुल्लाखाँका मन वास्तवमें बहुत सच्चा था, और जिस विकारने उस समय उसे पछाड़ रखा था, वह यदि इतना जबरदस्त न होता; और अहमदने यदि अपनी मोहक अर्थात् घातक वाणीसे उसके मनको उस विकारकी गुलामीमें और भी अधिक न डाल दिया होता, तो वह ज्यों ही यह सुनता कि, नानासाहब उसके महलमें लाकर कैद कर रखे गये हैं (और सो भी उसके ही अर्दली द्वारा, एक नीच उद्देश्यसे) त्यों ही वह स्वयं उनके पास जाकर उनको छुड़ा देता। परन्तु वास्तवमें उसके मनकी सच्ची दशा उस समय क्या थी, सो पाठकोंको हमने बतला दी थी। परन्तु उसकी वही दशा बहुत देरतक स्थिर नहीं रही। उसने कुछ सोच-समझकर क्षणभरके लिये, जैसा कि हमने पीछे बतलाया, अपने मनको शान्ति प्रदान की थी। परन्तु उस क्षणके व्यतीत होते ही फिर उसका मन उसे सताने लगा। मनमें आनेवाले सम्पूर्ण विचारोंको, जहाँ तक हो सका, दूर हटानेका उसने प्रयत्न किया, और इसी प्रयत्नमें धीरे-धीरे सन्ध्या भी हो गई। जो सुविचार उसके मनमें आ आकर बराबर उसके मनको टोंच रहा था, उस सुविचारको, जहाँतक उससे हो सकता था, वह दूर ही दूर हटा रहा था। उस रातको उसे नींद नहीं आई। क्षण क्षणपर मानो वह विवेककी विडम्बना ही करता रहा।

परन्तु चुँकि स्वभावसे वह सदाचारी था, अतएव अन्तमें उसे स्पष्ट दिखाई दिया कि, यह हमारे हाथसे एक बड़ा भारी पाप हो रहा है, और इतना समय व्यतीत होजानेपर भी, दूसरे दिन, उसका मन सद्भावोंकी ओर झुका। उसने सोचा कि, नानासाहब अब चूँकि हमारे पजेमें आ गया है, अतएव अब उसके पास जाकर दो-चार अच्छी-अच्छी बातें करें, और राज्यके विरुद्ध चूँकी उसका मन खराब हो रहा है, इसलिए एक बार फिर उसे उचित मार्गपर लानेका प्रयत्न करें। उसकी स्त्रीको उसके हाथमें सौंप दें, और उसको यह भी बतलाकर सन्तोष दिलावें कि, उसकी स्त्री कितनी सुयोग्य है। इसके सिवाय उसके पितासे उसकी फिर सलाह करा दें, और बादशाहके विषयमें उसके मनमें फिरसे आदर-भाव उत्पन्न करके उसको कोई मनसबदारी दिला दें। इतना यदि हम कर लेवें, तो सचमुच ही हमारे हाथसे यह एक बड़ा भारी सत्कार्य होजायगा, और इधर स्वामीभक्तिका भी कर्त्तव्य पालन होगा। यदि सच पूछा जाय, तो अहमदने जिस समय आकर हमें यह समाचार बतलाया था, उसी समय हमें उसके पास जाना चाहिए था, परन्तु ऐसा हमसे नहीं हो सकता, क्योंकि हम एक बड़े भारी मोहपाशमें पड़ गये थे। देखो, अबतककी अपनी सारी पवित्रता हमने खराब कर ली, और इतना समय व्यर्थके लिए पाप विचारोंमें बिताया। इस प्रकारके विचार अब रणदुल्लाखाके मनपर अपना प्रभाव जमाने लगे। यही नहीं, बल्कि यह सोच सोचकर कि, ऐसे ही विचार जब पहले हमारे मनमें आरहे थे, तब हम उनका निरादर करते रहे, वह मन ही मन पश्चात्ताप भी करने लगा। अहमद इस समय कहाँ होगा? उसको बुला लानेके लिए उसने अपने एक नौकरको भेजा। पर उसका कहीं पता ही न चला। हमारी सम्मति सहजहीमें मिल जायगी, यह सोचकर उसने, हमसे बिना पूछे ही, कोई घोर कृत्य तो नहीं कर डाला? नानासाहबके प्राण तो उसने नहीं लेलिये? यह भयकर विचार अब उसके सिरमें आप ही आप आकर खड़ा होगया, जिससे उसकी चित्तवृत्ति अत्यन्त ही विक्षुब्ध हुई गयी। देखो, हम सद्बुद्धिके वश नहीं

हुए, इसलिए हमारे हाथसे जो सत्कार्य और स्वामिभक्तिका कार्य होने-वाला था, वह एक दिन और आगेके लिये बढ़ गया। और सम्भव है, इसी एक दिनके आगे बढ़ जानेसे कहीं हमारे ऊपर घातक प्रसग आ गया हो! नानासाहबके समान शूर पुरुषकी हत्याका पाप कहीं हमारे सिर न आ जावे। अहमद ऐसा करनेमें भी नहीं चूकेगा। वह हमको प्रसन्न करनेके लिये सब कुछ कर सकता है; और इसका ज्ञान भी उसे पूरा-पूरा था। इस प्रकारके विचार ज्यों-ज्यों रणदुल्लाखाके मनमें आने लगे, उसकी यह भावना और भी दृढ़ होती गई कि, सचमुच ही अहमद ने ऐसा कोई घातक कर्म किया होगा; और उसका पाप हमारे सिर आवेगा। देखो, एक ही दिन सद्बुद्धिका निरादर करनेसे ऐसा भयकर प्रसंग आ उपस्थित हुआ! आह! बेचारा रणदुल्लाखाँ! चौबीस घण्टे उसने सद्बुद्धिकी अवहेलना की, इससे वह घातक कर्म तो यद्यपि नहीं हुआ कि, जिसका उसे भय हो रहा था, परन्तु उसे स्वप्नमें भी नहीं मालूम था कि, दूसरा, लगभग उतना ही, घातक कर्म अवश्य वहाँ हो चुका होगा।

अहमदको ढूँढ़नेके लिए उसने, एकके बाद एक, कई आदमी भेजे; पर उसका कहीं पता नहीं चला। एकबार उसको अपने मालिकका सन्देशा मालूम भी हुआ, पर इस भयसे कि, यदि हम सामने गये तो, शायद उसकी बुद्धि पलट न जाय, वह उसके आगे नहीं गया। शाम हो गई, अहमदका पता नहीं। रात हो गई, वह कहीं दिखाई तक नहीं दिया। रणदुल्लाखाको उसपर बहुत क्रोध आया। परन्तु क्रोधसे थोड़े ही, काम चलता था? आवश्यकता तो उसकी थी। उसने बहुत कुछ तलाश कराया। रात भी बहुत हो गई। इतनेमें एक नौकरने आकर बतलाया कि, अहमद और फ़ातिमा अमुक ओरके तहखानेकी तरफ गये हैं। रणदुल्लाखा तत्काल उठा; और उसी ओर चला। दरवाजेके पास आता है कि, इतनेमें, जैसा कि ऊपर बतलाया, नानासाहबका और उसका सामना हो गया। रणदुल्लाखाकी ओर उनकी नजर गई। उस समय उनके मनमें कैसे कैसे विचारोंका स्फोट हुआ होगा, इसका पाठक

गण स्वय कल्पना करें। अहमदको आटेकी तरह गून्धकर अभी वे उठे ही थे, और दरवाजेके बाहर कदम रखते ही उनके सामने वह दुश्मन आता है, जिसके विषयमें अभी उन्हें मालूम हुआ था, कि उसीने उनके सारे सुखोंका सत्यानाश किया, और जिससे बदला लेनेके लिये, क्रुध होकर, उन्होने अभी हाल्हीमें वह प्रतिज्ञा की थी कि, जिसके शब्दोंकी प्रतिध्वनि अबतक उनके हृदयमें गूंज रही थी। ऐसा दुश्मन जब सामने आ गया, तब फिर क्या कहना है? "एक बार दो टुकड़े"— यही विचार एकदम पहले उनके मनमें आया, और उन्होंने अहमदसे छीनी तलवार, जो कि उनके उस दूसरे सहायकके हाथमे थी, लेनेके लिये हाथ बढ़ाया। पर उनका वह सहायक अभी नानासाहबके समान क्रोधसे बिलकुल सन्तप्त नहीं था। उसके मनकी दशा अभी शान्तिपूर्वक विचार करनेयोग्य थी। इसलिए उसने तलवार नानासाहबको छीनने नहीं दी। इतना ही नहीं, बल्कि उसने उन्हे कुछ पीछे हटाकर कहा, "ठहर जाओ, यह स्थान और यह समय उपयुक्त नहीं।" इधर रणदुल्लाखाको यह सब हाल देखकर कैसा मालूम हुआ होगा, पाठक इसकी कल्पना करें। नानासाहबको जीवित देखते ही उसके मनकी एक बड़ी भारी चिन्ता दूर हो गई। अभीतक उसको यह भय था कि, हमारे ही घरमें, हमारे नौकरके हाथसे, नानासाहबका वध हो रहा है, और इस वधका पाप हमारे ही मत्थे आता है—तब उसका वह भय दूर हो गया, पर इस बातका उसे बड़ा अचम्भा हुआ कि, नानासाहब इस प्रकार कैसे छटे जा रहे हैं। अतएव अब यह विचार एकदम उसके मनमें आया कि, आगे बढ़कर उनसे वह दो-चार अच्छी अच्छी बातें करे, और उनको दरबारमें चलनेके लिये कहे। बस, इसी विचारमे उनको उसने सम्बोधन करके—उनको पुकार कर—सुन्दर सुन्दर शब्दोंसे बोलना प्रारम्भ किया।

इधर नानासाहबका चित्त पहले ही से विलक्षण विक्षुब्ध हो रहा था, और रणदुल्लाखाके विषयमें उनका मन अत्यन्त दूषित हो रहा था।" उनका ख्याल हो चुका था कि, वह हमारा एक कट्टर दुश्मन

है। इसीने हमारे पिताको इतने दिनतक नाना प्रकारके प्रलोभन देकर अन्तमें किलेसे हटा दिया; और हमारी प्रि—[आगेके शब्द उनसे मनमें भी उच्चारण नहीं किये गये], हमारा सम्पूर्ण सुख, उसकी आशातक, इसीने नष्ट कर दी। वही अधमाधम अब हमारे सामने आकर, बड़े प्रेमसे मीठी-मीठी बातें कर रहा है! यह हाल देखते ही नानासाहबका चित्त इतना भड़का कि जितना भड़कना सम्भव था, और वे आगे पीछेका कुछ भी विचार न करते हुए रणदुल्लाखासे बोले, "ऐ शैतान, तू अब चुपकेसे मुझे जाने दे, तेरी सारी कारस्तानी मुझे मालूम हो गई; और तेरे इस नौकरने ही मुझे बतलाई। यदि चुपकेसे जाने देगा, तो ही मैं और तू, दोनों कुछ दिन और जीवित रह सकेंगे। तेरे पंजेमें तेरे घरमें—मैं इस समय पड़ गया हूँ, इस समय यदि मैं तेरे ऊपर आक्रमण करूँगा, तो सारे घरमें शोरगुल मच जायगा, और तेरे सब आदमी यहाँ जमा हो जायँगे, तथा मुझे व्यर्थके लिये कष्ट देंगे। मैं अकेला हूँ, इसलिये यदि तेरे शरीरमें कुछ भी भलमनसहत हो, तेरे बापकी यदि कुछ भी भलमनसहत तेरे शरीरमें आई हो, तो तू इस समय मुझे जाने दे। अबतक तूने मेरी इतनी विडम्बना की है, कि तेरा मुख देखनेके साथ ही तेरे रक्तमें मुझे स्नान कर लेना चाहिये। किन्तु—किन्तु यह मौका नहीं है। मराठोंकी स्त्रियोंको तुम लोगोंने एक प्रकारसे अपना खिलौना ही बना रखा है, पर याद रख—इस बार तुझमे किसका सामना हुआ है, तूने किस भयंकर सर्पकी पूँछपर पैर रखा है—इसका विचार कर। कभी समरांगणमें मेरा सामना करे; और फिर, ऐ दुष्ट, देख ले कि, किस प्रकार मैं तेरी इस मानखंडनाका परिशोध, तेरे रक्तकी छींटोंको उड़ाकर, करता हूँ!"

ये शब्द कहते हुए नानासाहबका सारा शरीर क्रोधसे थर-थर काँप रहा था। जिस सहायक पुरुषने अबतक उनकी सहायता की थी, वही इस समय भी, उनके मन और शरीरको सहारा देकर, उनको निकाल ले जानेका प्रयत्न कर रहा था। परन्तु—यह सारा मामला क्या है—रणदुल्लाखाके कुछ ध्यानमें न आया। वह चकित होकर स्तब्ध खड़ा

गण स्यय कल्पना करें। अहमदको आटेकी तरह गून्धकर अभी वे उठे ही थे, और दरवाजेके बाहर कदम रखते ही उनके सामने वह दुश्मन आता है, जिसके विषयमें अभी उन्हें मालूम हुआ था, कि उसीने उनके सारे सुखोंका सत्यानाश किया, और जिससे बदला लेनेके लिये, क्रुध होकर, उन्होंने अभी हालहीमें वह प्रतिज्ञा की थी कि, जिसके शब्दोंकी प्रतिध्वनि अबतक उनके हृदयमें गूंज रही थी। ऐसा दुश्मन जब सामने आ गया, तब फिर क्या कहना है? "एक बार दो टुकड़े"—यही विचार एकदम पहले उनके मनमें आया, और उन्होने अहमदसे छीनी तलवार, जो कि उनके उस दूसरे सहायकके हाथमें थी, लेनेके लिये हाथ बढ़ाया। पर उनका वह सहायक अभी नानासाहबके समान क्रोधसे बिलकुल सन्तप्त नहीं था। उसके मनकी दशा अभी शान्तिपूर्वक विचार करनेयोग्य थी। इसलिए उसने तलवार नानासाहबको छीनने नहीं दी। इतना ही नहीं, बल्कि उसने उन्हे कुछ पीछे हटाकर कहा, "ठहर जाओ, यह स्थान और यह समय उपयुक्त नहीं।" इधर रणदुल्लाखाको यह सब हाल देखकर कैसा मालूम हुआ होगा, पाठक इसको कल्पना करें। नानासाहबको जीवित देखते ही उसके मनकी एक बड़ी भारी चिन्ता दूर हो गई। अभीतक उसको यह भय था कि, हमारे ही घरमे, हमारे नौकरके हाथसे, नानासाहबका वध हो रहा है, और इस वधका पाप हमारे ही मत्थे आता है—तब उसका वह भय दूर हो गया, पर इस बातका उसे बड़ा अचम्भा हुआ कि, नानासाहब इस प्रकार कैसे.छटे जा रहे हैं। अतएव अब यह विचार एकदम उसके मनमे आया कि, आगे बढ़कर उनसे वह दो-चार अच्छी अच्छी बातें करे, और उनको दरबारमें चलनेके लिये कहे। बस, इसी विचारमे उनको उसने सम्बोधन करके—उनको पुकार कर—सुन्दर सुन्दर शब्दोंसे बोलना प्रारम्भ किया।

इधर नानासाहबका चित्त पहले ही से विलक्षण विक्षुब्ध हो रहा था, और रणदुल्लाखाके विषयमें उनका मन अत्यन्त दूषित हो रहा था।" उनका ख्याल हो चुका था कि, वह हमारा एक कट्टर दुश्मन

आर्तस्वर निकला था। यह मामला क्या है ? रणदुल्लाखाँ आश्चर्यमें हैं, इतनेमें इधर नानासाहब और उनका वह सहायक, दोनों, उस परीकी ओर एक नेत्रकटाक्ष फेंक कर, चलते बने। आधीरात उलट गई थी। ऐसे समयमें हमारी बहन, अपना अन्तःपुर छोड़कर, यहाँ क्यों आई ? रणदुल्लाखाके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। फातिमा उस सुन्दरीके साथ ही थी। वह भी क्या उत्तर दे, सो कुछ उसे सुझाई न दिया। उसे स्वप्नमें भी खयाल न था कि, रणदुल्लाखाँ इस समय वहाँ मौजूद होगा; परन्तु आकर देखती है, तो वहाँ सचमुच ही वह खड़ा हुआ है! अब क्या कहा जाय ? हम क्यों आईं ? इस प्रश्नका उत्तर क्या दिया जायगा, सो कुछ उन्होंने सोच तो रखा ही नहीं था; क्योंकि उनको क्या मालूम कि, रणदुल्लाखाँ वहाँ आकर खड़ा है! इधर रणदुल्लाखाँकी चेष्टा कुछ बहुत ही चमत्कृतसी दिखाई दी। वास्तवमें वह मेहरजानको बहुत प्यार करता था स्वप्नमें भी वह कभी उससे नाराज नहीं हुआ था; और न ऐसी कोई घटना ही उसे स्मरण थी कि, जब वह उस पर नाराज हुआ हो। परन्तु आज, जब उसने इतनी रातको उसे वहाँ आया हुआ देखा, तब उसे बहुत ही विचित्रता-सी मालूम हुई। उसके मनमें कुछ विलक्षण शंका आई; और अपने मस्तकमें सिकुड़ने डालकर वह एकदम उससे कहता है, "मेहरजान, तू इतनी रातको यहाँ क्यों आई ? इसका उत्तर नहीं दिया ?" बस, इतना ही कहकर सापेक्ष चेष्टासे वह उसकी ओर देखने लगा। फ़ातिमाके हाथपर मेहरजानका अधिकाधिक भार पड़ने लगा। मेहरजान अधिकाधिक भारी भासने लगी। फ़ातिमा उसकी ओर देखती है, तो उसकी चेष्टा भी कुछ विलक्षण ही हो रही थी। इतनेमें ऐसा मालूम हुआ कि, वह अब बेहोश होकर गिरना ही चाहती है; और फ़ातिमाके शरीरपर उसका बोझ भी विशेष बढ़ने लगा, अतएव वह अपने दूसरे हाथकी लालटेन भी नीचे रख नहीं सकी कि, इतनेमें मेहरजान सचमुच ही बेहोश होकर गिर पड़ी ? वह बेहोश होकर क्यों गिरी ? वास्तवमें रणदुल्लाखाँको देखते ही वह ऐसी कुछ घबड़ा गई कि, जिसके कारण

था। इतनेमें फिर नाना साहबसे कहता है क्या मेंने—मैंने तेरे सुखका सत्यानाश किया ? तेरी मानखण्डनाकी ? तेरे बापको धोखा देकर यहाँ लाया ? तू कहता क्या है ? अरे बाबा, मैं यदि उसको इस प्रकार लाया होता, तो न जाने आज दिन उसकी क्या दशा हुई होती। तुझको कुछ कल्पना भी है ? मैंने तेरे सुखका नाश किया ? किसने तेरे मनमे यह बात भर दी ? ···· ”

अन्तिम शब्द कहते हुए उसकी जबान कुछ लड़खड़ाई, और नानासाहबका शरीर एकदम जल उठा। इस कारण उनके मुँहसे एक शब्द भी न निकलने लगा। हाँ, होंठ थर थर काँप रहे थे। इतनेमें उसकी सहायता करनेवाले पुरुषने आगे बढ़कर रणदुल्लाखाँसे कहा, “रणदुल्लाखाँ, तेरी जबानतक—चूँकि तेरा मन तुझे टोंच रहा है यह बात कहते हुए लड़खड़ा रही है। यदि तेरे अन्दर अब भी कुछ आद-मियत हो, तो इसको इस समय तू चुपके जाने दे। जिस प्रकार तेरी एक दुष्टताके कारण यह अपने सुखसे हाथ धो बैठा है, इसी प्रकार मैं भी एक दूसरे दुष्टकी नीचताके कारण अपने सुखसे वंचित हो गया हूँ। कभी न कभी मौका आयगा, और हम दोनों ही अपने शत्रुओंकी गर्दनें उड़ाकर बदला चुकावेंगे।” उस पुरुषने और अधिक कुछ नहीं कहा। हाँ, उसने अपने हाथकी तलवार अवश्य ही मानो कुछ ऊपरकी ओर उठाई। रणदुल्लाखाँ जरा आश्चर्यचकित होकर उसकी ओर देखता है, इतनेमें उसके पीछेकी ओरसे एक अत्यन्त मंजुल, परन्तु आर्तस्वर कानों-में आता है, जिसे सुनते ही वह अपनी गर्दन पीछेकी ओरको मोड़कर देखता है, तो एक दिव्य परी, अपनी दासीके हाथका सहारा लिये, खड़ी हुई है। जो मंजुल और आर्त-स्वर अभी सुनाई दिया था, उसको उसने पहचान लिया था, और अब जब कि वह पीछे मुड़कर देखता है, तो वही उसकी बहन मेहरजान, फातिमाके हाथका सहारा लिये पीछे खड़ी है। उसको देखते ही स्वाभाविक ही रणदुल्लाखाके मुखसे—“कौन ! मेहरजान ! तू यहाँ कैसे !”—यह प्रश्न निकला। इधर उसके मुखसे भी, यही देखकर कि, मेरा भाई यहाँ खड़ा है, उपर्युक्त मंजुल और

आर्तस्वर निकला था। यह मामला क्या है? रणदुल्लाखाँ आश्चर्यमें हैं, इतनेमें इधर नानासाहब और उनका वह सहायक, दोनों, उस परी-की ओर एक नेत्रकटाक्ष फेंक कर, चलते बने। आधीरात उलट गई थी। ऐसे समयमें हमारी बहन, अपना अन्तःपुर छोड़कर, यहाँ क्यों आई? रणदुल्लाखाके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। फ़ातिमा उस सुन्दरीके साथ ही थी। वह भी क्या उत्तर दे, सो कुछ उसे सुझाई न दिया। उसे स्वप्नमें भी खयाल न था कि, रणदुल्लाखाँ इस समय वहाँ मौजूद होगा, परन्तु आकर देखती है, तो वहाँ सचमुच ही वह खड़ा हुआ है। अब क्या कहा जाय? हम क्यों आईं? इस प्रश्नका उत्तर क्या दिया जायगा, सो कुछ उन्होंने सोच तो रखा ही नहीं था; क्योंकि उनको क्या मालूम कि, रणदुल्लाखाँ वहाँ आकर खड़ा है! इधर रणदुल्लाखाँकी चेष्टा कुछ बहुत ही चमत्कृतसी दिखाई दी। वास्तवमें वह मेहरजानको बहुत प्यार करता था स्वप्नमें भी वह कभी उससे नाराज नहीं हुआ था; और न ऐसी कोई घटना ही उसे स्मरण थी कि, जब वह उस पर नाराज हुआ हो। परन्तु आज, जब उसने इतनी रातको उसे वहाँ आया हुआ देखा, तब उसे बहुत ही विचित्रता-सी मालूम हुई। उसके मनमें कुछ विलक्षण शंका आई; और अपने मस्तकमें सिकुड़ने डालकर वह एकदम उससे कहता है, "मेहरजान, तू इतनी रातको यहाँ क्यों आई? इसका उत्तर नहीं दिया?" बस, इतना ही कहकर सापेक्ष चेष्टासे वह उसकी ओर देखने लगा। फ़ातिमा-के हाथपर मेहरजानका अधिकाधिक भार पड़ने लगा। मेहरजान अधिकाधिक भारी भासने लगी। फ़ातिमा उसकी ओर देखती है, तो उसकी चेष्टा भी कुछ विलक्षण ही हो रही थी। इतनेमें ऐसा मालूम हुआ कि, वह अब बेहोश होकर गिरना ही चाहती है; और फ़ातिमाके शरीरपर उसका बोझ भी विशेष बढ़ने लगा, अतएव वह अपने दूसरे हाथकी लालटेन भी नीचे रख नहीं सकी कि, इतनेमें मेहरजान सचमुच ही बेहोश होकर गिर पड़ी? वह बेहोश होकर क्यों गिरी? वास्तवमें रणदुल्लाखाँका देखते ही वह ऐसी कुछ घबड़ा गई कि, जिसके कारण

उसकी ऐसी दशा हुई। अस्तु। उसकी यह हालत देखते ही रणदुल्ला-खाँका क्रोध—जो कि पहले हो कुछ बहुत अधिक न था—अब बिलकुल ही जाता रहा, और शीघ्रतापूर्वक दौड़कर उसने मेहरजानको सम्हाल लिया। उस मेहरजानका इस प्रकार बेहोश हो जाना फातिमाके लिये उस समय एक प्रकारसे हितकारक ही हुआ। रणदुल्लाखाँको देखकर उसकी चित्तवृत्ति घबड़ा गई थी, परन्तु अब उसको सम्हालनेके लिये उसे मौका मिल गया। उसे तसल्ली हो गई कि, अब रणदुल्लाखाँ जब इसके विषयमें कुछ पूछेगा, तो मैं इसको सुन्दर उत्तर दे सकूँगी। इसके बाद मेहरजानको वहासे ले चलनेके लिये रणदुल्लाखाँकी सहायता करने लगी। थोड़ी ही देरमें अन्य नौकर-चाकरोंको भी रणदुल्लाखाने बुलाया, और एक-दो दासियोंकी सहायतासे मेहरजानको उठाकर उसके रगमहल्में पहुँचाया। कुछ देरमे, थोड़े-बहुत उपचार करनेपर, मेहरजान होशमें आई, परन्तु उसी समयसे उसके शरीरमें बुखार हो आया।

फिर भी अन्य अनेक बातोंके साथ ही साथ, मेहरजानका उतनी रातको वहाँ जाना भी रणदुल्लाखाके लिये सोचका एक कारण बना रहा। उसने फातिमाको एक ओर लेजाकर इसका रहस्य जानना चाहा। फातिमा भी अब उत्तर देनेको तैयार थी, क्योंकि उसको विश्वास ही था कि, आज नहीं तो कल हमारा मालिक हमसे इस विषयमें अवश्य ही पूछेगा। रणदुल्लाखाने ज्यों ही उससे पूछा, वह बहुत ही दीनताके साथ एकदम हाथ जोडकर बोली, "सरकार, गरीब दासीको माफ किया जाय, तो सब कुछ बतला दूँगी। हुजूर, अहमदने, न जाने क्या-क्या मुझसे कह कर, मेरी सहायतासे, उस मराठेको कैद करके यहाँ रखा। वह मुझसे कहता था कि, सरकारका ही ऐसा हुक्म है। फिर उसने मुझसे कहा कि, कल रातको सरकारने उसे मार डालनेका हुक्म दिया है। उस मनुष्यका खून इस प्रकार हमारे हाथसे हो; और ऐसी जगहमें—यह मुझे उचित नहीं दिखाई दिया। आपने उसे हुक्म दिया होगा, यह भी मुझे सच नहीं जान पड़ा। अतएव सोचा.

कि कोई उपाय करके इसको बचाना चाहिये। पहले मैं आपके ही पास आती, परन्तु सोची कि, शायद आपने हुक्म दिया हो, इसलिये आपके पास जानेसे कोई लाभ न होगा। यह सोचकर पहले अहमदको ही बहुत समझाया-बुझाया; पर जब देखा कि, वह नहीं मानता, तब मनमें आया कि, बीबीसाहबाके पास जाकर उनके द्वारा अहमदसे कहलाऊँ, शायद कुछ लाभ हो जाय; और फिर उनसे आपको भी सब समाचार दिलवाऊँ। बीबीसाहबाने मेरी प्रार्थना तुरन्त ही स्वीकार कर ली और फिर, जैसा कि आपने देखा, इसी कारण वे रातको वहाँ गईं।"

फ़ातिमाने इस प्रकार रणदुल्लाखांसे कहा, पर क्या उसे यह सब सच जान पड़ा?

रणदुल्लाखाँकी चेष्टासे तो ऐसा कुछ दिखाई नहीं दिया; परन्तु फ़ातिमासे फिर उसने कुछ कहा नहीं।

इधर नानासाहब इत्यादि सब लोगोंने मिलकर आगे क्या किया, इसका वृत्तान्त अगले परिच्छेदमें बतलावेंगे।

बारहवां परिच्छेद

नानासाहबकी याचना

जैसा कि पिछले परिच्छेदमें बतलाया, नानासाहब और उनका वह सहायक, ये दोनों ही, रणदुल्लाखाँको कड़े-कड़े उत्तर देकर उतनी रातको वहांसे निकल पड़े। स्वाभाविक ही उनका पहला विचार यही हुआ कि, पहले अपने साथियोंसे जाकर मिलें। इधर उस काले कलूटे आदमीने तानाजीसे कह दिया था कि, तुम लोग तीन दिन तक मकानको मत छोडना। इस पर तानाजीने बहुत कुछ विचार किया; परन्तु अन्तमें मकानको नहीं छोड़ा। हाँ, दो दिन तक उन्होंने ऊपर-ऊपर अवश्य ऐसा दिखलाया कि, जैसे वे उस मकानसे कहीं चले गये हों। क्योंकि उनके मनमें यह शंका हो गई थी कि, शायद नानासाहबको यही बदमाश यहांसे ले गया हो; और उसी प्रकार कहीं हमको भी धोखा

देकर न कैद कर ले जावे। उन्होंने सोचा कि, इस पर पूरा विश्वास रखना ठीक न होगा। शायद यह धोखा दे बैठे, और यदि इसने धोखा दिया, तो बीजापुरमें जिस कारणसे हम आये हैं, सो तो एक ओर रहेगा, और व्यर्थके लिये हम चर्क्करमे पड़ेंगे; तथा जिनके हाथमें न जाते हुए हमको सब वृत्तान्त जान लेना है, उन्हींके हाथमें जा पड़ेंगे। बीजापुरकी राजनैतिक जानकारी जितनी हमको चाहिये थी, उतनी एक प्रकारसे प्राप्त हो ही चुकी है। अपने प्रान्तमें रहते समय जिस बातका हमको इतना भय मालूम हो रहा था, वैसा यहाँ कोई कारण नहीं। बादशाह एक पूर्ण विलासी व्यक्ति है, और विशेषतः एक स्त्रीके हाथमें है, और उसको प्राप्त करा देनेमें जिस व्यक्तिकी दगाबाजी उसके लिये उपयुक्त हुई है, उसीका बादशाहपर प्रभाव है। यह नहीं कि, मुरापन्त और रणदुल्लाकी योग्यता बादशाहके ध्यानमें न हो, परन्तु इस समय तो विशेषतया सैयदुल्लाखाकी ही तूती बोलती है। आज कितने ही दिन हो गये, रणदुल्लाखा रंगराव अप्पाके समान स्वामिभक्त नौकरको अभयवचन देकर अपने साथ ले आया है—इस उद्देश्यसे कि, बादशाहके कानमें यह बात डाल दे कि, वास्तवमें यह कितना सच्चा स्वामिभक्त पुरुष है, और उसकी किलेदारी उसे फिरसे वापस दिला दे, परन्तु बादशाहको, इतने दिन हो गये, घडीभरको भी अवकाश नहीं मिला कि, निश्चित होकर उसकी बात सुन ले। वास्तवमें यह काम तो इस समय केवल सैयदुल्लाखाके हाथमें है। ऐसी दशामें, जसा कि शिवबाने सोचा है, यदि सचमुच ही कोई किला हस्तगत कर लिया जायगा, तो यहाँ उसकी कोई सुनवाई भी न होगी, क्योंकि पूरा अन्धेरखाता है। अब तक जो कुछ वृत्तान्त हमको मिल चुका है, और गुप्तरूपसे दरबारकी दशाका जो दृश्य हमको देखनेको मिला है, उससे अधिक और कोई भीतर तथ्य नहीं जान पड़ता। नानासाहबपर यदि यह अरिष्ट न आया होता, तो शायद और भी कुछ अधिक जानकारी प्राप्त करनेका प्रयत्न हम लोगोंने किया होता। पर अब और अधिक जानकारीकी आवश्यकता ही क्या? आज नानासाहब यदि इस

अरिष्टमें न पड़ गये होते, तो शायद इससे पहले भी हमलोगोंने यहाँसे चलनेकी तैयारी कर दी होती, परन्तु एक बिलकुल अपरिचित व्यक्तिपर विश्वास करनेसे ही हमपर ऐसा विलक्षण अवसर आ गया। ऐसी दशामें तानाजीको यही भय हुआ कि, कहीं ऐसा न हो, जो उसके चक्करमें पडकर हम सभी नष्ट हो जायँ और पहले दिन तो उनको यह भय बहुत ही सताता रहा। उन्होंने सोचा कि, शायद वह हमारे पास आये, और मीठी-मीठी बातें बनाकर हम सबको फुसलाकर कैद कर ले जाय, और बादशाहके सामने उपस्थित कर दे। इसी भयसे दो दिन तक उन्होंने ऊपरसे मानों उस स्थानको छोड़ दिया था, परन्तु इस बातका पता रखनेके लिए, कि वह आदमी अथवा उसकी ओरसे कोई दूसरा तो वहाँ नहीं आता, बारी बारीसे वे लोग उस मकानके आसपास चक्कर लगाते रहते थे। तीसरे दिन अवश्य ही उनको कुछ धीरज आया। अब उनको ऐसा विश्वास होने लगा कि, हो न हो, यह आदमी हमारे कल्याण ही के लिए प्रयत्न करता होगा, हमारे लिए सचमुच ही इसका हृदय आकुल रहता होगा। नहीं तो इतनी सहानुभूतिके साथ आकर हमसे यह क्यों बातचीत करता? परन्तु हम सब लोगोंका परिचय इसे कहाँसे प्राप्त हो गया? इस बातका उन्हें बार-बार आश्चर्य होता था। इसके अतिरिक्त, यह है कौन? इस विषयमें भी वे बहुत कुछ तर्क-वितर्क किया करते थे। हाँ, इस विषयमें किसीको भी शंका न थी, कि वह चाहे जो कोई हो; पर है कोई बड़ा ही चतुर कार्यकर्त्ता। इस बीचमें ऐसे भी कुछ छोटे मोटे कारण उपस्थित हुए थे कि, जिनसे तानाजी इत्यादिको यह मालूम होने लगा था कि, इस व्यक्तिको बीजापुरके सब बड़े बड़े सरदारों की पूरी पूरी जानकारी होनी चाहिये, यही नहीं, बल्कि यहाँकी सारी राजनैतिक अथवा महलोंके अन्दरकी कार्यवाहियोंका भी उसे सूक्ष्म तौरपर ज्ञान होना चाहिए। अस्तु। तीसरा दिन प्राय. बीतनेपर आया। शामका वक्त हो गया। लगभग एक पहर रात भी व्यतीत हो चुकी। अबतक उस काले महाशय कुछ भी समाचार नहीं। यह देखकर ताना-जीका चित्त कुछ अशान्तसा दिखाई दिया। वे यदि अपने प्रान्तमें होते,

अथवा बीजापुरमें ही आये हुए उन्हें अधिक दिन बीते होते, तो उन
ऐसे-वैसे संकटोंकी कोई भी परवा न की होती। कालके जबड़ेमें भ
अपने मित्रको छुड़ा लाये होते। परन्तु उनके समान चतुर कार्यद
और धैर्यशाली पुरुषको भी, नानासाहबके इस प्रकार गायब हो जाने
एक प्रकारकी निराशासी हो गई थी, और इसी कारण उनको, के
अपने ही उद्योगपर भरोसा न रखते हुए, उस महाशयके वचनोंपर
भरोसा रखना पड़ा। नानासाहबकी परवा न करते हुए—उनको व
वैसा ही, छोड़कर—वापस जाना तानाजीके समान व्यक्तिके लिए बिल
असम्भव था। ऐसी बात उनके मनमें भी नहीं आई, और यदि क
चित् वैसा विचार कभी उनके मनमें आया भी होता, तो यह सोच
कि, शिवबा और स्वामी महाराज क्या कहेंगे, उन्होंने उस विचारको
जाने कहाका कहाँ दबा दिया होता। अस्तु।

जैसा कि हमने ऊपर बतलाया, तानाजी बिलकुल निराश हो
आ गये। उस काले महाशयके बतलाये हुए तीन दिन बीतनेपर आ
अब उसकी प्रतीक्षा करनेसे कोई लाभ नहीं। जैसे नानासाहबको पह
पहल वह वचन दे गया था, और फिर उन वचनोंका वह पालन न
कर सका—कह गया था कि, तुमसे रोज मिला करूँगा, पर फिर
दिनतक उसके दर्शन ही नहीं हुए—वैसा ही इस दफा भी होगा,
विषयमें अब उनके मनमें कोई भी शंका नहीं रह गई। अब हम
दूसरे दिन क्या करना चाहिए? नानासाहबको कहां ढूँढना चाहिए
कैसे ढूँढना चाहिए? और वे जीवित यदि मिल जायँ—अथवा
उनका कहीं पता लग जाय—तो फिर उनका लेकर बीजापुरसे प्रय
कैसे करना चाहिए? इस सम्बन्धके विचार अब उनके मनमें आ
लगे। क्या करते बेचारे! उनके साथके लोगोंमें अब कोई वैसा था
नहीं कि, जो अपनी जिम्मेवारीको उतना समझता, अतएव उन लोगों
कोई विशेष वैसी चिन्ता भी नहीं थी। इसके सिवाय बेचारे दो-त
दिनसे नाना प्रकारके कार्योंमें लगे रहनेके कारण शिथिल भी हो ग
ये, अतएव जब पहर-डेढ़ पहर रात चली गई, और उस काले महाशय

आनेकी कोई विशेष आशा भी न रही, तब उन लोगोंको निद्राने सताया, और वे बेचारे वहीं अपने-अपने शरीर लम्बाकर सो गये। अकेले ताना-जी, उपर्युक्त रीतिसे अनेक विचार करते हुए, व्याकुल होकर इधरसे उधर चक्कर लगा रहे थे। उनका भी मन, जैसा कि हमने ऊपर बतलाया, एक प्रकारसे निराग्रहीसा हो रहा था। परन्तु आशा, यह एक बड़ी विलक्षण वस्तु है। वह मानो अत्यन्त सूक्ष्म ध्वनिसे तानाजीको बार-बार सूचित कर रही थी कि, जरा धीरज धरो शायद तुम्हारा इच्छित कार्य हो जावे। और वे, मानो स्पष्ट, मन्द तथा क्षीणसी उस आशाकी ध्वनिमें क्षुब्ध होकर ही, जहाँ कहीं आसपास कुछ भी आहट मिलती चौकन्ने होकर बाहर निकल पड़ते, और इधर-उधर दृष्टि फिराकर यह देखने लगते कि, कौन—हमारे मित्र आते हैं, अथवा कोई शत्रु आते हैं। इसी दशामें धीरे-धीरे आधीरात लौट गई। पूरे तीन दिन निकल गये, अब प्रतीक्षासे कोई लाभ नहीं, यह उन्होंने पूरे तौरपर समझ लिया। वह आशाकी ध्वनि, जो पहले ही क्षीण और अस्पष्ट थी, अब और भी अधिक क्षीण और अस्पष्ट हो चली। किंबहुना, यह कहनेमें भी अतिशयोक्ति न होगी कि, वह अधिकाधिक क्षीण और स्पष्ट होनेवाली आशाकी ध्वनि अब बिलकुल नष्टप्राय हो चली। अतएव तानाजी अब इस विचारमें लगे कि, अपने साथियोंकी तरह, अब हम भी निद्रासुखका अनुभव करनेके लिये अपने शरीरको धरित्री माताकी गोदमें देवें। अब वे अपने इसी विचारके अनुसार कार्य करनेवाले थे कि, दूसरे उन्हें किसीके आनेकीसी आहट सचमुच ही सुनाई दी। उन्होंने सोचा कि, अबतक हमको सिर्फ आहट आनेका भासमात्र होता था, पर अब यह केवल भास ही मात्र नहीं है, किन्तु सचमुच ही किसीके आनेकी आहट है, अतएव, वे बाहर निकल आये। बाहर आकर उन्होंने नाना प्रकारसे कान लगाकर बहुत कुछ प्रयत्न किया कि, देखें वह दूरकी आहट स्पष्ट रूपसे सुनाई देती है, अथवा नहीं। इतनेमें वह और भी पास आने लगी। अब हमें तैयार हो जाना चाहिये यह किसकी आहट है, नाना-साहबको छुड़ा लानेवाला वह काला महाशय ही आ रहा है, अथवा

और कोई, वह नानासाहबकी ही भाँति दगाबाजी करके हमको पकड़नेके लिए आ रहा है, यह भी असम्भव नहीं है। आहट और भी नजदीक, क्षण क्षणपर, आ रही है, और वह बहुत आदमियोंकी भी नहीं है—एब ही दो दिखाई पड़ते हैं—ऐसा ज्यो-ज्यो तानाजीको मालूम होने लगा, उनकी वह स्तिमित आशा स्वाभाविक ही फिर जाग्रत होने लगी, और बहुत जल्द वह पूर्ण भी हो गई—नानासाहब और वह काला महाशय, दोनो एकदम उनके सामने आकर खड़े हो गये। क्षणमात्र तानाजीको यही सशय हुआ कि, हम जाग रहे हैं, अथवा स्वप्नमें हैं। फिरदोनो हाथ आगे बढ़ाकर उन्होंने उन दोनो ही व्यक्तियोंके हाथ बड़े प्रेमसे पकड़े। उस काले महाशयपर फिर उनकी इतनी श्रद्धा हो गई कि, वे उसके उपकारोंका बदला चुकानेके विषयमें सोचते ही हुए रह गये। किन शब्दोंके साथ वे उस व्यक्तिके आगे अपनी कृतज्ञता प्रकट करें, यह उनको सूझ नहीं पड़ा। फिर घड़ी दो घड़ी वे लोग आपसकी बातें करते रहे। नानासाहबने अत्यन्त क्रोधमें आकर अपना सारा वृत्तान्त बतलाया।

रणदुल्लाखाके विषयमें उनके अन्दर इतना क्रोध दिखाई दिया कि जितना कभी भी उनमें नहीं देखा गया था। पाठकोंको याद होगा कि, कई परिच्छेदोंके पहले श्यामाने सूर्याजीकी स्त्रीको, देशमुखके महलमें आग लगनेके बाद, एक जगलमें पहुँचाया था। वहाँ वटवृक्षके नीचे एक झोपड़ीमें एक वृद्ध महाशय और एक युवा पुरुष, दोनो रहते थे। वहाँ एक दिन बातो ही बातो युवाने कोई घोर प्रतिज्ञा की थी। उस प्रतिज्ञाके करते समय उस युवाके अन्दर जितना क्रोध और आवेश दिखाई दिया था, वैसा ही क्रोध और आवेश आज नानासाहबके अन्दर भी दिखाई दिया। उस युवा पुरुषको किससे क्या कष्ट पहुँचा था, और किसने किस प्रकार उसकी प्रतिज्ञा भग की थी, सो तो जो कुछ हो, पर नानासाहबको रणदुल्लाखासे जो जो कष्ट पहुँचा, और जिस प्रकार उनके गौरवमें उसके कारण धक्का लगा—कमसे कम, जितना कुछ उनको इस विषयमें अधिकसे अधिक खयाल हो गया था, सो सब पाठकोंको, चाहे बिलकुल स्पष्ट रूपमें न हो, पर तो भी अधिकाश रूपमें

मालूम हो चुका है। नानासाहब और तानाजी जब एक साथ हुए, तब उनका हृदय मानो बिलकुल ही खुल गया। और वे उनसे बोले, "तानाजी राव, मैंने आजदिन अपनेको शिवबाके बिलकुल अधीन कर दिया है—कमसे कम सुलतानगढ़का किला जबतक उनके हाथमें नहीं जाता, तब तक तो मैं सर्वमेव उन्हींका हूँ। पर इस दुष्ट रणदुल्लाखाने, इन बेईमान नमकहराम दगाबाज यवनोंने, मेरे सारे सुखपर पानी फेर दिया है, मेरे वंशको बदनाम कर दिया है। ऐसी दशामें मेरे लिये इनका पूरा-पूरा बदला चुकाना भी अत्यन्त आवश्यक हो गया है। मैंने यदि इसका बदला न चुकाया, तो मैं बड़ा कुलांगार, अभागा और मराठोंके नामपर कलंक लगानेवाला एक नामर्द आदमी कहलाऊँगा—बस, बीजापुरमें एक ही दिन तुम मुझे और रहने दो, फिर मैं तुम्हारे साथ चलूँगा—जो कुछ कार्य करना हो, सो मैं फिर तुम लोगोंके साथ चलकर करूँगा। और फिर मैं अपनी इच्छाके अनुसार बदला लेने लिए कि, जिसने मेरे कुलके बिलकुल टुकड़े-टुकड़े कर डाले हैं—वापस आजाऊँगा। फिर मुझे और कोई काम नहीं रहेगा। मेरे मस्तिष्कमें और कोई विचार ही नहीं। एक दिन इस समय मैं यहाँ इसलिये रहूँगा कि, जिससे ये सब बातें मैं अपने पिताके कानोंमें डाल दूँ। उनसे मुझे एक बार यह कह लेना है कि, बालकी रगड़से गला काट डालनेवाले कसाईके पंजेमें तुम पड़ गये हो; और अपने कुलको लगाये हुए कलंकसे कलंकित रोटीका कौर तुम्हारे गलेसे उतर रहा है—इस प्रकार उनकी आँखोंमें अंजन डालनेका फिर एक बार प्रयत्न कर लूँ, तब मुझे यहाँसे जाना उचित होगा। वे अपना सारा विश्वास इसी धूर्त दगाबाजपर रखे हुए हैं। उनके समान स्वामिभक्त पुरुष इस सम्पूर्ण भारतवर्षके मुसल्मानी राज्यमें भी नहीं मिलेगा। परन्तु उनकी इस स्वामिभक्तकी, इन दुष्टोंकी नजरोंमें, क्या कीमत है? जो कुछ होना हो, सो हो, चाहे जो संकट आवे, चाहे बादशाहके ही हाथमें देनेका वे विचार करें, पर इस दगाबाजने जो कुछ किया है, वह जबतक मैं उनके कानमें न डाल लूँ, अपने कुलके इस कलंकका परिमार्जन करनेके लिये

जबतक मैं उनको चेतावनी न देलूँ, तबतक बीजापुरसे बाहर कदम रखना मुझसे हो नहीं सकता।"

इतना कहकर नानासाहबने फिर अपने उस सहायक पुरुषकी ओर ध्यान दिया, और कुछ नम्रताके साथ उससे कहते हैं, "महाशय, आपने भी कुछ दिन पहले मुझसे इसी प्रकारकी कुछ बातें की थीं। आपको भी किसी न किसी दुष्टने इसी प्रकारसे बहुत कष्टित किया है। आपका और मेरा अब बिलकुल जोड़ा मिल गया। आप अपने और मैं अपने दुश्मनका—दोनों साथ ही साथ बदला चुकावें। आजतक आपने जिस तरहसे मुझे सहायता दी है, उसी प्रकार आगे भी दें। आज मैं सिर्फ आपसे इतनी ही सहायता माँगता हूँ कि, आप गुप्त रूपसे मेरे पिताकी मुलाकात मुझसे करादें। इस बार उनके सामने मैं पहुँच जाऊं, फिर जो कुछ होगा, देख लिया जायगा।"

वह महाशय नानासाहबकी ओर देखकर कुछ हँसा। परन्तु हाँ, उसके उस हास्यमें भी खेदकी झलक कुछ मौजूद थी। तानाजी इन बातोंका कुछ भी ठीक ठीक अर्थ समझ न सके।

तेरहवां परिच्छेद

पिता—पुत्रकी मुलाकात

समान शील और समान व्यसन, ये दो बातें जिस जगह होती हैं उसी जगह परस्पर प्रेम उत्पन्न होता है, और उनमें सख्य हो जाता है। यही साधारण तौरपर अनुभव भी है। बस इसीके अनुसार नानासाहबमें और उस काले महाशयमें सख्य था। जिस प्रकार उनका खयाल था कि हमारे कुलमें कलंक लगा, और रणदुल्लाखाने वह कलंक लगाया—यही नहीं, बल्कि अब उस कलंकका परिमार्जन उसके रक्तपातके बिना हो नहीं सकता, बस, इसी प्रकार, किसी कारण विशेषसे उस काले महाशयको भी यह मालूम होता था कि, हमारी प्रतिष्ठा भंग हुई है, और हमारे कुलको कलंक लगा है, और उस प्रतिष्ठाभंग तथा कलंकका परि

मार्जन होनेके लिये, अपने दुश्मनके रक्तका सिंचन करनेके अतिरिक्त और कोई उपाय ही नहीं है। नानासाहबके समान बड़े घरानेके पुरुष-पर हमारे ही समान ऐसा विकट प्रसंग आया—कमसे कम उनको खयाल हुआ कि, आया है—इसपर उस महाशयको खेद हुआ ? वैसा प्रसंग नानासाहबपर आया, और अतएव हमारी और उनकी अब एक ही अवस्था हो गई, यह देखकर उसको किंचित् समदु.खसमाधान भी हुआ। परन्तु वह समदुःखस्थिति बहुत देर नहीं ठहर सकी, क्योंकि नानासाहबकी और उसकी दशामें, तथा उसके और नानासाहबके शत्रु-में कितना अन्तर था, सो उसे भलीभाति मालूम था। पर मानो यही समझकर कि, यह समय और कुछ कहनेका नहीं है, उसने अभीतक अपने चेहरेपर खेदयुक्त हास्यकी ही झलक कायम रखी थी। इस प्रकारकी झलकसे जब किसी मनुष्यकी सूरत व्याप्त होती है, तब साधारणतया उससे कुछ कहने, अथवा कोई बात पूछनेका साहस नहीं होता है। पूर्णतया खिन्नताका भाव यदि किसी मनुष्यके चेहरेपर दिखाई देता है, तब सभीकी इच्छा होती है कि, लाओ, भाई, इससे पूछें कि, क्या हुआ है, क्या बात है, और यदि हो सके, तो कुछ समाधानके वचन कहकर इसका परितोष भी करें। परन्तु जब इस प्रकारकी दुविधा-की स्थिति होती है, तब सिर्फ इतना ही मोहभर उत्पन्न होता है कि, केवल उदासीनतासे हम भी बीच-बीचमे उसकी सूरतकी ओर देखते रहें। मुँहसे एक अक्षर भी बोलनेका साहस नहीं होता। नानासाहबका कथन समाप्त होते समय उस महाशयकी हँसी भी कुछ इसी प्रकारकी थी। अतएव स्वाभाविक ही वे उससे कुछ नहीं कह सके। क्या कहें, सो कुछ उनकी समझहीमें न आया। वे सिर्फ उसकी ओर देखते भर रहे। वे चाहते थे कि, कुछ इससे कहें, पर वह महाशय बहुत देरतक कुछ बोला ही नहीं। कुछ देर बाद धीरेसे ही कहता है, "नानासाहब, आजतक मेरा आपका क्या परिचय है, और वह कैसा है, सो आपको मालूम है। इसलिये अब मैं और भी यदि कुछ परिचयकी बातें बत-लाऊँ, तो आपको आश्चर्य नहीं होना चाहिये। संयोगवश यदि कभी

इस बातकी नौबत आ गई कि, मुझे अपना पूरा-परा परिचय देना ही पड़ा, तो फिर आपको मालूम होगा कि, मेरे विपयमे कोई आश्चर्य करनेकी आपको आवश्यकता नहीं। अस्तु। अभी इस वातको जाने दें, पर नानासाहब, आपके इन मित्रोंके सामने ही मै अभी दो-चार वात आपसे कहूँगा। उनको आप सुन लेंगे, तो अच्छा होगा। आप अपने पितासे भलीभाति परिचित हैं ही, पर फिर भी मै आपसे कहता हूॅ कि जो कुछ आपका खयाल है, वह चाहे बिलकुल हृदय खोलकर आप उनके सामने प्रकट कर दें, फिर भी उनके चित्तमे कोई परिवर्तन नहीं होगा। रणदुल्लाखासे उनका बहुत स्नेह है। उन दानोंमे आपसके हितकी बहुतसी बातें हुआ करती हैं। आप उसके विरुद्ध कुछ भी कहे, वे सच नहीं समझेंगे। यही क्यो? वल्कि आपको देखते ही शायद वे नाराज होकर आपको कैद भी कर लेंगे, और आप चूॅकि राजद्रोही हैं, इसलिए दूसरे ही दिन आपको वादशाहके सामने भी उपस्थित करेंगे। अप्पा-साहबके समान कठोर दृढभाषी, दृढप्रतिज्ञ आर दृढ विचार वाला मनुष्य सम्पूर्ण महाराष्ट्रमे एक भी नहीं मिलेगा। उनको सिर्फ अपने राजाकी नौकरी, एक ईमानदारीके साथ, करनाभर मालूम है, और इसके सामने दयामाया, पुत्रप्रेम इत्यादि बातोंमे उनका कोई सम्बन्ध नहीं। यह सब आपको अच्छी तरह मालूम है। फिर आप इस झगडेमे व्यर्थके लिये क्यो पड़ते हैं? अब आप लोगोको बीजापुर दरबारका जो वृत्तान्त मालूम होना था, और जितनेकी आपको आवश्यकता थी, सो सब मालूम हो चुका, और यदि अभीतक न हो चुका हो, तो मै बतला दूॅ—अतएव अब आपको इस जगह, आवश्यकतासे अधिक एक क्षणभर भी न रहना चाहिए, अब यहाॅ रहनेमे आपको कोई लाभ न होगा—हाॅ, आप लोग इधर जो कुछ काम करनेवाले हैं, उसमे विलम्ब अवश्य हो जायगा। इसलिए अब आप यहाॅसे जाइये, क्योकि आप यदि अब अपने पितासे मुलाकात करनेके झगड़ेमे पड़ेंगे, तो सम्भव है कि, आपके ऊपर और भी कोई सकट आजाय। कोई ताज्जुब नहीं है। मै इस विपयमे बहुत ही शकित हूॅ। हाॅ, इसमे सन्देह नहीं कि, आपके पिता यदि आपके

पक्षमें आ जायँ, तो बहुत उत्तम हो, पर इस बातको मुझे तो कोई आशा नहीं है। आपकी यह आशा ऐसी ही है कि, जैसे कोई बालूकी भीत खड़ी करना चाहता हो। मैं तो यहाँतक कहता हूँ कि, स्वयं बादशाहको अपने पक्षमें मिलाना आपके लिए उतना असम्भव नहीं है, जितना अपने पिताको मिलाना······"

नानासाहब चुपकेसे ये सब बातें सुन रहे थे, और इन बातोंकी सत्यताके विषयमें भी उनको कोई सन्देह नहीं था; परन्तु तरुणाईकी उमग ही कुछ निराली होती है। इस अवस्थामें आशा और उमगके सामने तथ्य बातकी ओर मनुष्यका ध्यान बहुत ही कम जाता है। वही हालत उनकी थी। उनको इस बातकी पूर्ण आशा थी कि, अपने-पिताके पास जाकर यदि एक बार हम अपना यह सब वृत्तान्त बतलावेंगे, और अपने कुलकी प्रतिष्ठामें जो बट्टा लग चुका है, उसके विषयमें उनको विश्वास दिलावेंगे, तो अवश्य ही उनकी चित्त-वृत्ति बदल जायगी; और फिर वे जितनी दृढ़ताके साथ आज राजभक्तिमें लवलीन हैं, उससे कहीं अधिक दृढ़ताके साथ उसके विरुद्ध-पक्षमें कार्य करेंगे। अपने कुलकी प्रतिष्ठाके समान महत्वकी उनको और कोई बात नहीं मालूम होगी। यह विश्वास उनके चित्तमें बड़ी दृढ़ताके साथ बैठा हुआ था, अतएव दूसरे लोगोंके कथनका उनपर कोई भी प्रभाव न पड़ा, और उन्होंने अपना आग्रह कायम रखा। यहाँ तक कि, उन्होंने बार-बार यही कहा, "अच्छा, अब एक बार मेरी और उनकी मुलाकात तो हो जाने दीजिए, फिर जो कुछ होगा, सो देखा जायगा। हाँ, अन्य लोगोंको सावधान रहना चाहिये। मेरे लौटनेकी विशेष आशा न रखनी चाहिये, और यदि कुछ रखें भी, तो जहाँ मेरे विषयमें कोई ऐसी-वैसी बात सुनें कि, सबको यहाँसे चल देना चाहिये।" इस प्रकार जब देखा गया कि वे अपने आग्रहपर दृढ हैं, अब और कोई उपाय नहीं है, तब यही निश्चय हुआ कि, अच्छा एकबार इनके पितासे इनकी मुलाकात अवश्य करा दी जाय, और तदनुसार उस काले महाशयने उनको यह वचन दिया कि, अच्छा, मैं बहुत जल्द इसका प्रबन्ध करता हूँ। यह वचन

देते हुए उस महाशयकी स्मृति मानो और किसी ओर लगी हुई थी। क्या उसपर भी कभी ऐसा मौका आया था? उसके पिता, जब कि पहले उसके प्रतिकूल थे, तब क्या उसने भी अपनी बातोंसे उनके मनको बदलनेकी कभी प्रयत्न किया था? अथवा, उसने अपनी ओरसे खूब प्रयत्न किया, फिर भी उससे कोई लाभ न हुआ, और अन्तमें अपने ही पैरोंपर खड़े रहकर उसे अपने प्रयत्नमें लगना पड़ा—ऐसा क्या कोई मौका उसके ऊपर आया था? जो हो, कुछ देरतक वह महाशय विचार-मग्नसा अवश्य दिखाई दिया। इसके बाद तुरन्त ही फिर वह कहता है, "भाई, आप ऐसा कहते हैं सही, पर यह कोई अच्छी बात नहीं, इसमें खतरा है।" यह कहकर फिर उसने कुछ देरके लिये यहाँसे चले जानेकी आज्ञा ली। नानासाहबका विचार अटल था। चाहे जो हो जाय, पिताजीसे मिलकर एकबार ये सब बातें उनके कानमें तो अवश्य ही डाल देनी चाहिये, बहुत सम्भव है, कि उनका मन फिरट हो जाय, और यदि न हुआ, तो मेरा रास्ता साफ है। उस महाशयके चले जानेपर वे बहुत देरतक बिलकुल चुप रहे, किसीसे कुछ नहीं बोले, और न उनसे कोई बोला। ऐसा जान पड़ा कि, सभी बीती हुई और आगे आनेवाली बातों पर विचार कर रहे हैं। घडी दो घड़ी इसी अवस्थामें व्यतीत हुई। इतनेमें वह काला महाशय फिर आ उपस्थित हुआ, और उनसे बोला, "आप यदि अपने पितासे भेंट करना चाहते हैं, तो मैं इतना प्रबन्ध कर दूँगा कि, आज रातको, जिस समय उनके पास कोई नहीं होगा, आप उनकी कोठीतक पहुँच जायँगे। इसके बाद फिर आप चाहे जो करें। परन्तु उनकी ओर आपकी भेंट निश्चित हो जानेके पहले एक बार मैं और आपसे कह देना चाहता हूँ कि, आपका यह कार्य आपके लिए लाभदायक नहीं हो सकता, हाँ बाधक अवश्य हो सकता है।"

"होने दीजिये, बाधक हो, चाहे साधक हो, यह तो नहीं होगा कि, प्रतिष्ठाभंगकी यह बात उनके कानोंमें भी नहीं पडी? एकबार उनको मालूम हो जाय, फिर वे ध्यान दें, चाहे न दें, यह उनकी खुशी। अब बतलाइये, जिस समय आप ऐसा मौका मेरे लिये ला देंगे? बीजापुरमें

आकर यदि आपकी सहायता नहीं मिली होती, तो सचमुच ही न जाने अवतक हमारी क्या हालत हुई होती। आपके हमपर अनन्त उपकार हुए हैं। उन्हींमें यह एक और भी होने दीजिये। इनसे उऋण होनेका सुअवसर मिला, तो····· ”

परन्तु उस महाशयने आगे उन्हे वोलने ही नहीं दिया, और यह कहकर तुरन्त ही वहाँसे चल दिया कि, “अच्छा, आज पहरभर रात जानेपर आप यहाँ तैयार रहे। मैंने आपके पिताके मकानपर निगरानी रखनेके लिये अपना आदमी भेज दिया है। इसके सिवाय इस वातकी जानकारी प्राप्त करनेका भी प्रबन्ध कर लिया है कि, किस समय रणदुल्लाखाके वहाँ आने अथवा उनके उसके पास जानेकी सम्भावना नहीं रहती। पहरभर रात जानेके करीव न तो उनके पास कोई आता है, और न वे किसीके पास जाते हैं, और वही समय आपके लिये अच्छा है। उस समय वहाँ आपको लेजाकर अच्छी तरह पहुँचा दूँगा आगे जो कुछ आपको करना हो, जो कहना सुनना हो, सो कह सुनकर यदि आप लौटेंगे, तो मैं यहाँ भी आपको पहुँचा दूँगा”। इतना कहकर वह महाशय वहाँसे एकदम चल दिया। नानासाहवको भी उसके इस प्रवन्धपर एक प्रकारसे सन्तोष ही हुआ। अतएव अव वे इस विचारमे लगे कि, अपने पिताजीसे आज हम क्या क्या वातें करें, और उनके साथ कैसा व्यवहार कर। वीती हुई घटनाओंको किस प्रकार उनके सामने रखें कि, जिससे शीघ्रतापूर्वक उनके मनपर अभीष्ट प्रभाव पड़े। वस, इसी विषयके विचार उनके दिमागमे आने लगे। कई वातें ऐसी भी उनको कहनी थीं, जिनके लिए उनको शब्द ही सुभाई नहीं देते थे। इसके वाद जव यह विचार उनके मनमें आया कि, हमारे कुलमे दाग लग चुका, और अव इसका वृत्तान्त भी पिताजीको वतलाना पड़ेगा, तव उनको वहुत ही दुःख हुआ। शरीरके रोएँ खड़े हो गये। जिस कार्यके करनेका उन्होंने विचार किया था, और जिसको किये विना वीजापुरसे नहीं जायँगे—ऐसा उन्होंने निश्चय किया था—उसी कार्यके करनेका मौका पास आने लगा; और अव उनको एक प्रकारकी शंका भी सताने लगी कि,

देखें, इस कार्यमें हमारा धैर्य अन्त तक साथ देता है, अथवा नहीं। बस, इसी शकाके मारे अब वे अशान्तसे होकर पागलकी भांति उसी घरमे इधर-उधर घूमने लगे। सारे दिन जो कुछ व्यवहार उन्होंने किये, अथवा यों कहिये कि, उनको करने पड़े, वे सब इतनी विमनस्कताके साथ उनके हाथसे हुये, जैसे कोई सज्ञाहीन कठपुतलीकी तरह किसी दूसरे ही के तन्त्रमे नाच रहा हो। उनका मन उनके एक भी कार्यमें नहीं था, किन्तु वह सम्पर्णतया उसी दु खद विचारमे लगा हुआ था। अन्तमे सध्याका समय आकर उपस्थित हुआ, तब तो उनके अशान्तिका ठिकाना ही न रहा। उनकी चेष्टा कुछ बहुत ही विचित्रसी दिखाई देने लगी। जैसे कोई मदान्ध मनुष्य हो, और अपने आरक्त नेत्रोंसे चारो ओर देख रहा हो, पर किसी ओर भी उसकी दृष्टि पूरी पूरी न लगती हो, और मन नानाप्रकारके विचारोंमें फँसा हो। बस, यही हाल नानासाहबका उस समय हो रहा था। वे अपने आरक्त और मन्द नेत्रोंसे चारो ओर देख रहे थे, परन्तु उनका सारा चित्त इसी ओर लगा हुआ था कि, अब आगे हम कैसा करेंगे, और हमको वहाँ लेजानेवाला वह महाशय कब यहाँ आवेगा। परन्तु कुछ देर बाद वह उनको लेजानेवाला महाशय भी वहाँ आ पहुँचा। वह अपने साथ ऐसे वस्त्र भी लेता आया था कि, जो एक मराठेके लिये शोभा देने योग्य थे। वे वस्त्र उसने उनको पहननेके लिये दे दिये। इस प्रकारके वस्त्रोंके बिना अप्पासाहबसे मुलाकात नहीं हो सकती थी। उनसे भेट होनेकी सम्भावना तभी थी, जब कि उनके पास यह सन्देशा जाता कि, कोई मराठा सरदार अत्यन्त आवश्यक कार्यवश आपसे मिलने आया है। इसके सिवाय वैरागी अथवा अन्य किसी बनावटी भेषमें वहाँ काम थोड़े ही चल सकता था। अस्तु। नाना-साहबने वे वस्त्र धारण किये, और अपनी कुलदेवी भगवतीका नाम लेकर अपने पितासे मिलने चले। कुछ समय में ही वे निर्विघ्न रूपसे अप्पासाहबके महलमें पहुँच गये, और सवेरे उन तक उनकी खबर भी पहुँच गई, तथा उनको बैठकमें वे ले जाये गये। वास्तवमें सदर दर

वाजेकी बैठकमें ही आकर उनको उनसे मिलना चाहिये था; परन्तु संयोगवश उस दिन ऐसा नहीं हुआ, और यह एक प्रकारसे नाना-साहबके लिये अच्छा ही हुआ, क्योंकि उनको जो कुछ बातचीत करनी थी, वह बिलकुल एकान्तकी थी। अस्तु। अप्पासाहबको पहलेपहल इस बातका कोई अनुमान हो न हो सका कि यह कौन मराठा सरदार है, और किसलिये इतनी रातको आया है। इसलिये उन्होंने नाना-साहबकी सूरतकी ओर जरा गौरसे देखा। उनकी दृष्टि बुढ़ापेके कारण अब कुछ मन्द होने लगी थी, परन्तु फिर भी उस सरदारकी सूरत उनके ध्यानमें आगई—कमसे कम उनको इस बातकी दृढ़ शंका हो गई कि, यह अमुक व्यक्ति ही है। उसे देखते ही तुरन्त उनकी चेष्टा बदल गई; और मन एक प्रकार की विलक्षण गड़बड़ीमें पड़ गया। अतएव वे एकदम उससे पूछते हैं "तुम कौन हो? इतनी रातको मुझसे क्या बात चीत करने आये हो?"

"मैं आपका पुत्र नाना, आपके पास कुछ बातचीत करने…"

"मेरा पुत्र? मेरा पुत्र मर गया! उसका और मेरा अब कोई सम्बन्ध नहीं। मेरे मुखमें कालिख लगाकर वह चला गया, और उसी दिनसे मेरे लिये वह मर गया। वह यदि चतुर हो, तो मुझे अपना मुख न दिखावे—और बातचीत करनेका तो नाम ही न ले। जा, जब-तक मेरे मनमें कोई दूसरा विचार नहीं आवे, तबतक तू यहांसे चला जा। तेरा कृष्णमुख मेरी आँखोंके सामने नहीं चाहिये? अभी जा, नहीं तो इस क्षण तुझे कैद करके बादशाहके सामने पेश कर दूँगा। कौन है रे उधर? ·"

उपर्युक्त भाषण धीरे-धीरे, परन्तु अन्तमें क्रमशः जोर जोरसे हुआ; फिर "कौन है रे उधर?" ये शब्द बहुत ही जोरसे बड़बड़ाती हुई आवाजसे निकले। फिर भी नानासाहब अणुमात्र भी नहीं डगमगाये। वे बिल्कुल शान्त रहे, और धीरेसे ही बोले, "आप ऐसा कहेंगे—कहेंगे नहीं, बल्कि करनेको तैयार होंगे, सो मुझे पहलेहीसे मालूम था। यह सब जानबूझकर भी मैं यहाँ आया हूँ, इसीने सोच लीजिये कि,

किसी न किसी विशेष कारणवश मैं आया हूँ। पिताजी, स्वामिभक्ति कीजिये, पर वहाँ, जहाँ स्वामी सेवककी कुछ परवा करे। अरे ये दुष्ट स्वामी आपका मनमाना अपमान करते हैं, आपके साथ चाहे जैसा नीचतापूर्ण व्यवहार करते हैं, अथवा नहीं—इसकी शंका है, और आप फिर भी स्वामिभक्तिका गीत गाते हैं। बतलाइये, आपने कभी आजतक, विचारोंमें, कार्योंमें, अथवा स्वप्नमें भी कभी स्वामिद्रोह किया था? फिर आपकी दशा ऐसी क्यों है?"

"ऐसी दशा? ऐसी दशा क्यों है? तू पूछता है? बेशरम, बेहया, तुझको लज्जा नहीं मालूम होती, जो मुझसे यह प्रश्न पूछने आया है? जा, जा। जबतक पुत्रप्रेमका पाश मेरे हृदयमें शेष है, तबतक तू यहाँसे चला जा, नहीं तो व्यर्थमें मारा जायगा। मैं—मैं अपने हाथमें भी तेरा बध कर डालनेमें आगा-पीछा नहीं देखूँगा। इसलिये चला जा यहाँसे! पूछता है कि, यह दशा क्यों है? यह दशा इसीलिये है कि, जो तेरे समान कुलांगारको मैंने अपने यहाँ जन्म दिया! तू अपने मनमें समझता होगा कि, तेरे यहाँ आनेसे मैं पुत्रमोहके जालमें पड़कर अपने कर्तव्यको भूल जाऊँगा, पर यह बात तू क्षणभरके लिये भी अपने मनमें मत ला। हाँ, अबतक तुझको मैं यहाँ खड़ा होने दे रहा हूँ, तेरी मुसकें बाँधकर तुझे हुजूरके कदमोंके पास भेज नहीं दिया, तेरा सिर अपने हाथोंसे काटकर बादशाहको अर्पण नहीं किया, इतना ही मैं अपने कर्तव्यसे भूल रहा हूँ—सो बस हो! अब तू जा, यहाँसे चला जा!"

"जाता हूँ, जाता हूँ पिताजी, आप यदि अपने दृष्टिके सामने नहीं खड़ा होने देना चाहते, तो जाता हूँ! पर अन्तमें एक बार—जबतक फिर आपको अच्छी तरह जागृत न कर दूँ, तबतक यहाँसे टल नहीं सकता। जिसको आप अपना दोस्त समझते हैं, जिसने आपकी समझमें आपकी इतनी इज्जत प्रतिष्ठा रखी है, वही आपका कट्टर शत्रु है। उसीने आपकी कीर्त्तिपर, आपकी प्रतिष्ठापर डाकेजनी की है। उसने आपके कुलमें, आपके वंशमें आग लगाई है—सो क्या, आप जानते

हैं? आह! देखो, आपके—आपके (दाँतोंसे होंठ चबाकर) घर द्वार-का, कुटुम्बका, सत्यानाश उसीने किया! और क्या-क्या बातें वह करेगा, इसकी आपको कल्पना भी नहीं है। उसने क्या-क्या विश्वास-घात किये हैं, क्या-क्या दगाबाजियाँ कर रहा है—इसकी क्या आपको कुछ भी कल्पना है? अहो, उसने इतना हरामीका काम किया है, कि उसका रक्तपात किये बिना आपको अन्नतक ग्रहण न करना चाहिये। परन्तु फिर भी आप उसीकी मेहमानीमें पड़े हुए हैं। आप उसको देवता समझते हैं। किन्तु मैंने तो घोर प्रतिज्ञा कर ली है कि, जिस दिन इन हाथोंको उसके रक्तसे रगूँगा, उसी दिन फिर अपने ...”

“चल, निकल! निकल अभागा! अब एक क्षणभर भी मेरी दृष्टिके सामने खड़ा मत हो। जो मेरे दोस्त हैं, वही तेरे दुश्मन हैं, और जो मेरे दुश्मन हैं, वही तेरे दोस्त हैं, इसमें सन्देह नहीं।”

नानासाहबका क्रोध, द्वेष और खेद उनके हृदयमें न समाया। उनको खुल्लम-खुल्ला, जो कुछ कहना था, सो सब उन्होंने कह डाला; और अन्तमें एक रामबाण बात थी, सो भी उन्होंने खूब जोरदार शब्दों-में कही, जिसे सुनते ही अप्पासाहबकी चेष्टा एकदम बदल गई, परन्तु फिर भी उन्होंने तुरन्त ही कहा, “नहीं, असम्भव। असम्भव! रण-दुल्लाखाँ ऐसी नीचता कभी नहीं करेगा!”

“और किया हो तो?” नानासाहबने दाँतोंसे होठ चबाकर अत्यन्त क्रुद्ध होकर पूछा।

अप्पासाहब इसपर कुछ कहनेही वाले थे कि, इतनेमें—“नहीं, कभी नहीं किया। इसके लिये चाहे जैसा विश्वास करा देनेको वह तैयार है”—ये एक दूसरे ही व्यक्तिके शब्द कानोंमें पड़े।

दूँगा, तो आप मुझे क्या समझेंगे, अपने लड़केकी ही तरह मुझसे भी द्वेप करने लगेंगे, या और कुछ करेंगे—आप जो कुछ भी करें—पर यह अपराध मुझसे हुआ अवश्य है, और वह मेरे मतके बिलकुल विरुद्ध हुआ है, पर जितना कुछ हुआ है, उससे अधिक कुछ भी नहीं हुआ है। ईश्वरने मुझे समयपर ही जागृत कर दिया, और इसके लिये मै उसके जितने भी उपकार मानूँ, थोड़े हैं। सम्भव है कि, मैंने एक बार आपके सम्मुख अपना अपराध स्वीकार किया, और आप मुझसे द्वेप करने लगें—उस दशामे फिर आप शायद मेरा मुखतक देखना उचित न समझेंगे—फिर भाषण करना तो दूरकी बात है, और इसी विचारसे मैं एक आनन्द समाचार आपको पहले ही सुना दूँ, जोकि मुझे अभी हाल हीमे मालूम हुआ है। आप इतने दिनमे यहाँ हैं, और अब आपका यहाँ रहना सफल हुआ—दरबारमे इस बातका प्रस्ताव निश्चित होगया है कि, अब आपको फिर अपने किलेपर भेजनेका हुक्म निकाल दिया जाय। अब एक ही दो दिनमें वह हुक्म आपके हाथमें आ जायगा। इसके सिवाय, यह भी मालूम हुआ कि, आपके किलेकी तरफ उपद्रव विशेप रूपसे बढ रहा है, अतएव उसको दमन करनेके लिए आपको दो सौ अश्वारोही और भी मिलेंगे, तथा यह भी इजाजत मिलेगी कि, पदातिक सेना आप चाहे जितनी और रख सकते हैं। 'अप्पासाहब, यह सब ठीक ही हुआ, क्योंकि आपकी स्वामिभक्ती ही ऐसी है। आज नहीं, तो कल आपकी सचाई हुजूर-दरबारके ध्यानमे आती ही, और आपकी इज्जत और प्रतिष्ठा फिर भी वैसी ही होती। मै तो सिर्फ एक निमित्तमात्र हुआ। मै ही नहीं, मुरारपन्त भी आपके लिये बड़ी कोशिश करते रहे। सबके प्रयत्नोका फल मिला। पर मेरे हाथमे जो अपराध होगया है, वह अवश्य ही ...."

रणदुल्लाखां बीचमे कुछ लड़खड़ाया। उसके मुँहमे शब्द ही न निकलने लगा। अप्पासाहब उत्सुकतापूर्वक उसकी ओर देखने लगे। यह सब वह क्या कह रहा है, सो कुछ उनकी समझमे न आया। उसकी आजकी और पहलेकी बातचीतमे उन्हे बहुत अन्तरसा दिखाई

दिया। क्योंकि आजतक वह अप्पासाहबसे बहुत ही अदब और अपनत्वके साथ बातचीत किया करता था, और आजके उसके भाषणमें भी यद्यपि अदबकी मात्रा कुछ कम न थी; फिर भी अपनत्व उतना नहीं था। इसके सिवाय यह भी दिखाई दिया कि, जैसे पश्चातापके साथ कोई बातचीत कर रहा हो। यह बात क्या है, सो कुछ भी उनके ध्यानमें न आया। हमारे बेटेने जो भयंकर बात बतलाई, उसीमें तो कोई सचाईका अंश नहीं? हमारे लड़केके मुखसे तो सब मालूम ही हो चुका—शायद यही समझकर यह अधम प्राणी इस बातका प्रयत्न करता हो कि, सब बातें साफ-साफ बतलाकर, और पहले किलेदारी वापस मिलनेका समाचार सुनाकर, इनका मन अपने हाथमें लेलें; और फिर, निर्लज्जता पूर्वक, इनके मनको उस दुष्कार्यके अनुकूल करा लेनेका यत्न करें। यह विचार क्षणमात्रके लिये अप्पासाहबके मनमें आया; और उनकी चेष्टा कुछ बहुत ही विचित्रसी होगई। क्रोधकी छाया उसपर दिखाई देने लगी। परन्तु इतनेमें रणदुल्लाखांके पहलेके ये शब्द—"नहीं, कभी नहीं किया! इसके लिये चाहे जैसा विश्वास करा देनेको वह तैयार है"—उनको स्मरण होआये,—और उसका अब तकका सदाचार भी उनके ध्यानमें आया। उसके हाथसे इतनी नीचता होगी—सो भी हमारे कुलके साथ, जिसको कि वह इतना चाहता है—यह बात अप्पासाहबकी समझमें नहीं आई। अच्छा, तो फिर यह इतनी गूढ़तासे क्यों बात कर रहा है? बार-बार कहता है कि, अपराध हुआ—अपराध हुआ होता—यह क्या बात है! क्षमा किस बातकी माँगता है! अप्पासाहब कुछ भी स्थिर न कर सके। हाँ, स्थिर करनेमें कष्ट उनको अवश्य हुआ। बहुत देर तक वे उसी उत्सुक अवस्थामें चुप बैठे रहे, और उसके चेहरेकी ओर, जिसे कि वह लज्जाके कारण नीचे किये हुए था, देखते रहे, पर अन्तमें उनसे न रहा गया, और वे बोले, "खांसाहब, आपके हाथसे मेरा अपराध क्या होगा? और मैं एक मामूली आदमी इस लिये आपको क्षमा क्या करूँगा? आपके कृपाक्षेत्रके नीचे मैं यहाँ आया, स्वामीकी दृष्टि वक्र होनेपर भी आपने मुझे आश्रय दिया। आदर करके लाये, और इसलिये

में यहाँ आया। नहीं तो अबतक न जाने कहाँ देशविदेश घूमता होता, अथवा किलेकी किसी कालकोठरीमें दिन काटता होता। आप, क्षमा करो, क्षमा करो, बार बार कहते हैं, यह मुझको अच्छा नही लगता। ऐसा अपराध आपके हाथसे क्या होसकता है ?"

अप्पासाहबका अन्त:करण यही कहता था कि, यदि इसका कुछ अपराध होगा, भी, तो वही होगा, जो नाना क्रोधके साथ बतला गया है, और सचमुच यदि वही होगा, तो क्षमा करना तो एक ओर रहा, इसका कलेजा इसी क्षण चूसना होगा। जो हो। परन्तु उन्होंने अपना अभिप्राय कुछ भी बाहर प्रकट नही होने दिया।

रणदुल्लाखाने अप्पासाहबके मुखसे उपर्युक्त भाषण सुना, और कुछ देरतक बिलकुल चुप रहा। उसने अपनी गर्दन नीची कर ली ऐसा जान पड़ा कि जैसे उसे अपने किसी किये हुए कर्मके विषयमें पश्चात्ताप हो रहा हो। इसके सिवाय, यह भी दिखाई दिया कि, उसकी जिह्वापर बार-बार शब्द आते थे, पर उसे कहनेका साहस ही न होता था। हमारे पाठकोंको कुछ देरके लिये शायद यह विसंगत मालूम होगा कि, अप्पासाहबके समान एक मामुली किलेदारके आगे, बीजापुर राज्यका एक बड़ा भारी प्रभावशाली सरदार, गर्दन नीची किये हुए अपने अपराधके लिये क्षमा मागे—यह कैसे सम्भव है, पर वास्तवमे वह एक बहुत ही सच्चा और न्यायप्रिय पुरुष था, अतएव उसको अपने कुछ कार्योंके विषयमें खेद हो रहा था, और इसी कारण, यह सोचकर कि जो बात हमसे हो गई है, उसको, जहाँतक हो सके, सुधारनेका प्रयत्न किया जाय, वह इस समय उपर्युक्त रीतिसे क्षमा माँगनेके लिये गर्दन नीची किये हुए बैठा था। अन्तमे उसने समझा कि, अब कह डालनेमें ही भलाई है, अतएव वह बहुत धीरेसे शान्त और गद्गद् स्वरके साथ, उनसे कहता है —

अप्पासाहब, मै आपका सारा वृत्तान्त बतलाता हूँ, उसे सुन लीजिये। परन्तु उसको बतलाते समय बीचमे यदि आपके मनमें कोई सन्देह हो, क्षणभरके लिये उसे दूर ही रखें। आपको यदि क्रोध आवे,

तो क्षणभरके लिये उसे मनहीमें रखें। मेरे कहते समय आपके मनमें अनेक सन्देह आवेंगे—आपको क्रोध भी आवेगा, क्योंकि मेरा अपराध ही वैसा है, परन्तु जब तक मेरा कथन समाप्त न हो जाय मैं यह न कह दूँ कि, 'अब समाप्त हुआ,' तबतक आप बराबर सुनते रहें, और फिर जो कोई सन्देह आपके मनमें आवें, उनका खुलासा कर लें, इस बीचमें आप अपने क्रोधको सम्हाले रहें, बस, यही मेरा कहना है। मैं आपके लिये लड़केके समान हूँ; और यद्यपि मैं यह स्पष्ट देख रहा हूँ कि, आपने, उसके स्वामिद्रोहके भयंकर अपराधपर, उसको भी क्षमा नहीं किया है, फिर भी मैं आपके सामने, अपनेको आपके लड़केके समान ही बतलाकर, क्षमा माँग रहा हूँ। यह भी एक विचित्रता ही है। क्योंकि मेरा अपराध ही ऐसा है कि, जैसे ऊपर ऊपरसे मित्रता दिखलाकर भीतरसे विश्वासघातसा किया गया हो—अथवा कमसे कम विश्वासघात करनेका उद्देश्यसा रखा गया हो। यह सब मैं भलीभाति जानता हूँ, फिर भी कहनेका साहस करता हूँ। अप्पासाहब, आप समभते ही हैं कि, हम मुसल्मान हैं, सभी एक प्रकारसे बदमाश हैं, और आपके इस खयालको, मेरे उस व्यवहारसे, एक प्रकारकी पुष्टिहीसी मिलेगी; पर···पर···"

आगे रणदुल्लाखाके मुखसे शब्द न निकलने लगा। उसका कण्ठ बिल्कुल गद्‌गद्‌सा हो गया। उसका गद्‌गद्‌ स्वर सुनकर अप्पासाहब-का भी कुछ विचित्र हाल हो गया। वह दशा देखकर वे मानो अच-म्भितसे रह गये। कुछ कहनेकी उनकी इच्छा हुई; पर एक अक्षर भी बोल नहीं सके।

इतनेमें, क्षणमात्र स्तब्ध रहकर रणदुल्लाखाँ फिर कहता है मैं वह वृत्तान्त आपको बतलाता हूँ, पर, पहले इसके आपसे यह प्रार्थना है कि उसका एक अक्षर भी मिथ्या न समझें। मैं अब जो कुछ बत-लाऊँगा, सो अन्ततक अक्षरशः सत्य ही बतलाऊँगा।"

इतना कहकर वह फिर ठहर गया। और कुछ देर बाद, मानो सब बातोंका अच्छी तरह सोच-समझकर कहता है, "हुजूरने सैयदुल्ला-

खाँको आपके यहाँ भेजनेका विचार त्यागकर फिर मुझको वहाँ जानेका हुक्म दिया। मैं मञ्जिल दरमञ्जिल तै करते हुए सुलतानगढसे कुछ दूर उस गोटेश्वरके मन्दिरके पास जा उतरा। वहीं एक मराठा युवक और उसके साथ एक स्त्री भी उतरी थी। उस युवकके सौन्दर्य्यके विषयमें मेरे नौकरोंने मुझसे बहुत प्रशंसा की। इतनेमें मेरी भी इच्छा हुई कि, उसे देखना चाहिये। इसके बाद जब कि वह उस स्त्रीके साथ वहाँसे जाने लगा, तब मैंने उससे आग्रह किया कि, आप मुझसे मिले बिना मत जाइये। उसने मेरी नहीं सुनी, तब मैंने प्रत्यक्ष रूपमें तो नहीं, किन्तु अप्रत्यक्ष रूपमें उसके साथ एक प्रकारकी कठोरता ही दिखलाई। अपने नौकरको चार-पाँच बार उसके पास भेजा और उसको मिलनेके लिये बुलाया। उसको देखते ही उसके सौन्दर्यपर मैं इतना मोहित हुआ और फिर मेरी यही इच्छा हुई कि क्षणभरको भी मैं इसको अपने पास से अलग न करूँ। यह सोचकर मैंने यह निश्चय किया कि, अब जहाँ तक हो सकेगा, मैं इसको अपने पाससे अलग नहीं होने दूँगा। अतएव मैंने उससे बार बार कहा कि, "आप मेरे साथ बीजापुर चलें, मैं दरबारमें ले चलकर बादशाहसे आपको मुलाकात कराऊँगा और एक बड़ीसी सरदारी दिलाऊँगा।" उसने उत्तरमें यही कहा की, मेरे साथमें स्त्री है, मैं एक मामूली आदमी हूँ, मुझे सरदार इत्यादि होनेकी बिलकुल इच्छा नहीं, जिस दशामें मैं हूँ वही मेरे लिये अच्छी है। इसप्रकार अनेक बातें करके उसने यही जतलाया कि, सरदारीकी उसको बिलकुल जरूरत नहीं है, परन्तु मैं उसकी मोहनी मूरत और उसके मधुर भाषण पर इतना मुग्ध हुआ कि बार बार उससे यही कहा कि, "आपको चाहे इच्छा हो, चाहे न हो, परन्तु मेरे साथ तो आपको चलना ही होगा, और जो ऊँचा पद मैं आपको दिलाऊँगा, उसे स्वीकार करना ही होगा।" वह इस बातपर राजी नहीं था, पर मैंने निश्चय कर लिया कि, इसको मैं अब छोड़ूँगा नहीं। इसके बाद फिर वह ज्यों ज्यों 'नहीं-नहीं' कहने लगा, मेरा उपर्युक्त निश्चय और भी दृढ़ होने लगा। उसने जितनी कुछ अपनी कठिनाइयाँ मुझसे बतलाई, सब मैंने अपनी तरफसे

दूर कर दी। अन्तमें उसको मेरे साथ चलनेके लिये राजी ही होना पड़ा। मेरी इच्छा नहीं होती थी कि, क्षणभर भी वह मेरे पाससे कहीं अलग हो, और इसी कारण मैंने उसे अपनी स्त्रीको भी भेज आनेकी इजाजत नहीं दी। मुझको एक प्रकारका शौक ही लग गया कि, उसको मैं अपने पाससे कहीं जाने न दूँ, और उसकी सत्संगति जितनी प्राप्त कर सकूँ, उतनी करता रहूँ। उस मन्दिरके पाससे अपनी छावनी उठाकर मैं फिर आपके किलेपर आया। वहाँ उसने मुझसे यही याचना की कि, बीजापुर लौटते समय मैं आपको उससे मुलाकात न होने दूँ। इस बातके लिये उसने कई कारण भी बतलाये, जो कि मुझे बिल्कुल उचित जान पड़े, और मैंने उसे एक मुकाम आगे ही बीजापुरको भेज दिया। परन्तु इस खयालसे कि, कहीं वह मुझे धोखा देकर चला न जावे, उसको बड़े बन्दोबस्तके साथ बीजापुर भेजा था।"

इतना कहकर वह कुछ देरके लिये चुप हो गया, मानो उसे यही न सूझने लगा कि, अब आगे वह क्या कहे। कुछ देरतक वह चुप बैठा हुआ कुछ सोचता सा रहा। इधर अप्पासाहब उसकी बातें चुपचाप बैठे सुन रहे थे। परन्तु यह बात उनके ध्यानमें नहीं आ रही थी कि, यह ये सब बातें उनसे कह रहा है; और क्यों कह रहा है। वह खूबसूरत मराठा युवक कौन था? इसको वह उस मन्दिरमें कैसे मिल गया? और यह उसपर इतना प्रसन्न होकर जबरदस्ती उसको सरदारी क्यों देने लगा? इत्यादि बातोंमेंसे कोई भी बात बुड्ढेके ध्यानमें नहीं आई। और सबसे आश्चर्यकी बात तो उनको यही जान पड़ी कि, यह हमसे क्षमा किस बातकी माँगनेवाला है? अभीतक इसने जितनी बातें बतलाई हैं, उनमें तो इसका कोई अपराध प्रकट नहीं हुआ, फिर क्षमा किस बातकी? कुछ भी उनकी समझमें नहीं आया; और वे पागलकी तरह उसकी ओर देखते हुए बैठे रहे।

अब रणदुल्लाखाने मानो अपने विचारोंको फिरसे सुव्यवस्थित स्वरूप दे लिया, अथवा यों कहिये कि, जितने अवकाशकी उसे आवश्यकता थी, उतना उसे मिल चुका। अतएव, इसके बाद फिर कहता

है, "अप्पासाहब, उस समय मैं एक प्रकारसे उतावला हो रहा था कि, कब मैं आपके साथ एक बार बीजापुर पहुँचूं, और उस आगे गये हुए मराठा युवकसे मिलूँ। क्षण-क्षणपर मुझे यही मालूम होता कि, मैं एक बड़े भारी मोहपाशमें फँस गया हूँ—और बराबर उसमें अधिकाधिक अपनेको फँसाता ही जा रहा हूँ—न जाने इसका परिणाम क्या होगा? यह कुछ अच्छी बात नहीं है। परन्तु फिर ज्यों ही उस मराठे युवकके सहवासका लोभ हृदयमें आने लगता, फिर मेरा वह सारा विचार दूर भाग जाता। अन्तमें बीजापुरमें आकर मैंने उसको अपने ही महलके पास एक महलमें रखा, और वह कहीं मुझे धोखा देकर भाग न जावे, इस विचारसे उसपर पहरा भी रख दिया। अब मैं इस बातके लिये सदैव ही उत्सुक रहने लगा कि, उस युवकके सहवासका लाभ जहाँतक मुझको मिल सके, मैं उसे प्राप्त करता हूँ—कमसे कम उसके दर्शन ही नित्य करता रहूँ। मुझको अवश्य ऐसी उत्सुकता थी, पर उसे इस विषयमें कोई उत्सुकता न थी। यही नहीं बल्कि, जहाँतक उससे हो सका, वह मुझसे दूर ही दूर भागता रहा, और अबतक भी उसका ऐसा ही प्रयत्न रहता है। वह रात-दिन बड़ी ही सावधानीसे रहा है। मैंने उसके हितकी इच्छा रखकर बहुत प्रयत्न किया कि, वह मुझसे प्रेम करे, पर वह मेरे प्रति सिर्फ आदर भाव रखता है, और जब जब मैं मिलता हूँ, वह यही मुझसे कहता है कि, "अब मुझे जाने दीजिये, अब मुझे अपने देशको जाने दीजिये।" इसके सिवाय और कोई बात ही नहीं। परसोंतक यही दशा रही। किन्तु परसों मेरी आँखें खुलीं। मेरे ध्यानमें आ गया कि, इतने दिनतक जो मैं इस मोहजालमें पड़ा रहा, यह मेरी बड़ी भारी मूर्खता हुई। मुझमें पूरा पूरा आत्मसंयम नहीं, और इस कारण अभीष्टसिद्धि तो अलग रही—उस युवकके और मेरे लिये यह एक बहुत बड़ा बुरा मौका आ गया। बस, तभीसे मेरा हृदय अत्यन्त उद्विग्न हो रहा है, मेरे मनको अत्यन्त पश्चात्ताप हो रहा है, और उसी पश्चात्तापके वश होकर मैं आपके पास अपने अपराधके लिए क्षमा माँगने आया हूँ।"

इतना कहकर रणदुल्लाखा फिर चुप हो गया। अप्पासाहब अत्यन्त आश्चर्यके साथ उनकी ओर देखने लगे। कोई बात उनकी समझमें न आई। उसने जो वृत्तान्त बतलाया, उसमें अपराध कहाँ है? और अपराध भी हमारे साथ! हमारे साथ इसमें कौनसा अपराध? अप्पासाहबके कुछ ध्यानमें नहीं आया। अतएव कुछ देर वे इस बातकी प्रतीक्षामें रहे कि, वह शायद और कुछ कहे, पर जब उन्होंने देखा कि, वह अब और आगे कुछ नहीं कहता, तब वे उससे कहते हैं, "खाँसाहब, आपका यह कूटक कुछ मेरी समझमें नहीं आया।" वह चुप ही रहा; पर फिर कुछ देर बाद कहता है; "हाँ, कूटक तो है ही; परन्तु इसको खोलनेवाला शब्द अब मैं कहूँगा—आप उसको सुनकर चकित न होइयेगा; और न क्रोधके वश होइयेगा। मैं आगे जो कुछ कहूँ, उसे अन्ततक सुन लीजिये, और फिर जो कुछ निश्चय करना हो, सो कीजिए—इस बातका मुझे वचन दीजिये, तब आगे मैं कुछ कहूँ। अब आगे जो वाक्य मैं कहूँगा, उसे सुनकर आप चमत्कृत होंगे, मेरे ऊपर क्रुद्ध होंगे, मुझे विश्वासघातक कहेंगे, और अंशतः वैसा हूँ भी। पर पहले पहल मैं जितना विश्वासघातक मालूम होऊँगा, उतना सचमुच ही मैं नहीं हूँ; और इस बातका विश्वास आपको मेरा सम्पूर्ण भाषण सुनकर ही होगा। हाँ, पहले-पहल क्रोध अवश्य आवेगा, परन्तु आप उसके वश न होंगे, अन्ततक मेरा कथन सुन लेंगे, इस बातका मुझे वचन दें, तब मैं कहूँ।"

अप्पासाहब यह सब सुनकर बड़े गोलमालमें पड़े। पर अन्तमें एकदम कहते हैं—"अच्छा वचन! दिया!"

रणदुल्लाखा कुछ देर चुप रहा; और फिर एकदम धीरेसे कहता है:—

"अप्पासाहब, वह युवक मराठा पुरुष—और कोई नहीं—आपकी पतिव्रता पुत्रवधू है।"

———

पन्द्रहवां परिच्छेद

आगे क्या हुआ ?

रणदुल्लाखाके उपर्युक्त शब्द सुनते ही अप्पासाहबकी क्या अवस्था हुई होगी, पाठकगण इसकी कल्पना करें। प्रथमतः उनको अत्यन्त क्रोध आया। फिर तुरन्त ही मानो उनको यह शंका हुई कि, हम यह सब स्वप्नमें सुन रहे हैं, अथवा जागृतावस्थामें, और इस शंकासे वे पागल की तरह इधर-उधर देखने लगे। परन्तु जब उन्हे यह भान हुआ कि, नहीं, हम स्वप्नमें नहीं हैं—यह सब बात हमारी जागृतावस्थाकी ही बात है, और सच है—तब उन्हे फिर बड़ा क्रोध आया, और उसकी ओर वे अत्यन्त क्रुद्ध दृष्टिसे देखने लगे। उस क्रोधके कारण, ऐसा जान पड़ा मानो उस समय उनके शरीरमे हाथ पैर उठाने तककी शक्ति नहीं रह गई।

रणदुल्लाखा पहले ही जानता था कि, हमारी बातोंको सुनकर अप्पासाहबकी ऐसी दशा अवश्य होगी। उसने यह भी सोच लिया था कि, उस दशामें हमारा कुछ देरतक चुपही बैठना उचित होगा। उस समय हम कुछ नहीं बोलेंगे, और उनके क्रोधके उफानको कम होने देंगे। यही नहीं, बल्कि उस आवेगमें यदि वे कुछ देरतक कुछ कहेंगे भी, तो भी शान्तिपूर्वक सुन लेंगे, और ऐसा ही करना हमारे लिये उचित होगा—इस प्रकारका सारा विचार उसने अपने मनमे कर लिया था। उसने भलीभाँति सोच लिया था कि, जो अपराध हमसे हुआ है, उसे साफ साफ बतलाकर क्षमा मांगना ही इस समय हमारा कर्त्तव्य है, और ऐसा करनेमें ही पुरुषार्थ है। वह अन्य लोगोंके समान न था। अतएव, उचित समय बीत जानेपर, यह सोचकर, कि अब फिर यदि हम आगे बोलने लगेंगे, तो कोई हानि नहीं, वह आगे कहता है —

"अप्पासाहब, मैं यह पहले ही जानता था कि, मेरे इन शब्दोंके उच्चारण करते ही आप क्रोधसे बिलकुल लाल हो जायेंगे। यही नहीं, बल्कि मैंने तो यहाँतक समझा था कि, आप कदाचित् मुझे मारनेतक

दौड़ेंगे। और आप यदि इस क्रोधके वश होकर मुझे मारने भी दौड़ते; तो भी मैं आपके विरुद्ध हाथ न उठाता, और न कुछ बोलता ही। आप चाहे जो दण्ड देते, मैं चुपकेसे उसे सह लेता। मृत्युदण्ड दिया होता, और अब भी देवें, तो मुझे स्वीकार है। किन्तु इस बातको मनमें मत लाइये कि, जो बात यह हो गई, उसमें उस साध्वीका कोई भी सम्बन्ध है, अथवा उसके शुद्ध नाम और उसके विशुद्ध व्रतमें कलंक लगाने-योग्य कोई कार्य हुआ है। वह मेरे लिये माताके समान पूज्या है…”

रणदुल्लाखाके मुखसे धीरे धीरे ये शब्द बाहर निकल रहे थे; और उसके साथही अप्पासाहबका क्रोध भी क्रमशः कम होता जा रहा था, और अन्तके शब्दोंसे तो, ऐसा जान पड़ा कि, उनका क्रोध बिल्कुल ही विलीन हो गया। परन्तु फिर भी उन्होंने अपना सिर ऊपर नहीं उठाया; क्योंकि उस समय यह बात उसके मनमें चुभ रही थी कि, हमारे लड़केने इसके दुष्कार्यके विषयमें जो कुछ कहा था, सो यद्यपि पूरा पूरा प्रत्यक्ष घटित नहीं हुआ, तथापि उसके घटित होनेकी सम्भावना अवश्य थी। उनसे किसीने कह दिया था—अथवा कहला दिया था कि, तुम्हारी पुत्रवधू अपने मायके चली गई है; परन्तु यह बात उनसे किसने कही, सो उन्हें उस समय याद नहीं आरहा था। उन्होंने बहुत कुछ प्रयत्न किया, पर फिर भी याद नहीं आया। बीचमें बोलनेकी इच्छा होरही थी, पर बोल नहीं सके।

रणदुल्लाखा वैसा ही कुछ देर थमकर फिर आगे कहता है, ‘मेरा असली उद्देश्य बुरा था, यह बिल्कुल सच है। मैं मोहपाशमें पड़ गया था। आपकी पुत्रवधूको जब यह मालूम हुआ कि, कल आप कैद किये जायँगे, और आपको कैद करनेके लिये सैयदुल्लाखा आवेगा, तब उन्हें बहुत भय मालूम हुआ, और वे नानासाहबके वस्त्र पहनकर अपनी दासीके साथ रात ही रात निकल पड़ीं। परन्तु पुरुषका भेष धारण करनेसे शक्ति थोड़े ही आजाती है! उस गोटेश्वरके मन्दिरतक जैसे-तैसे करके आईं, और फिर मेरी छावनीमें पकड़ी गईं। पहले ही पहल देखकर मैंने उनका भेष पहचान लिया, पर यह बात प्रकट नहीं होने

दी। हाँ, यह मुझे नही मालूम था कि, इनसे आपका कोई सम्बन्ध है। यह बात आगे चलकर मालूम हुई, जबकि मै अधिकांश रूपमे मोहपाश में फँस चुका था। उसमे फिर हमारे नौकरने और भी वृद्धि कर दी। उसने तुरन्त ही ताड लिया कि, मैं मोहमें पड गया। और मेरे मनमें न रहते हुए भी—उसने मेरे आसपास मोहका जाल और भी विशेष रूपमे फैलाया किसीने नहीं जान पाया—हाँ, मेरी बहनने मुझसे कहा कि, तुम ऐसे पागलपनमें मत पड़ो, और अप्पासाहबसे सब हाल बतलाकर क्षमा माँगो। परन्तु मैंने उसकी भी नही सुनी। मोहजालको तोड़नेका मुझे साहस नही हुआ। अन्तमे यहाँतक नौबत आई कि, नानासाहब न जाने यहा किस कामको और कैसे आये, मेरे नौकरको उनके आनेकी खबर लग गई, और उसने बदमाशी करके उनको पकड़कर मेरे महलके तहखानेमे बन्द कर दिया। मुझको मालूम भी नहीं होने दिया। उसका इरादा बहुत भयकर था। और—और मैं भी उसके जालमें फँसकर देखी-अनदेखी कर रहा था। किन्तु मेरी बहनने मुझे चेतावनी दी कि, यह बात अच्छी नहीं। उसने मुझे बडे अच्छे मौकेपर चेतावनी दी, और मैं तुरन्त ही उनको छुड़ानेके लिये गया। इतनेमें किसी तरहसे वे छुट भी चुके थे। उस समय मेरा विचार हुआ कि, यही सब बातें, जो अभी मैंने आपको बतलाई, उनको बतलाकर क्षमा माँगू, पर मेरा विचार पूरा नही हो सका। उनका मन मेरे विषयमे—और अत्यन्त दुःखकी बात यह है कि, मेरे कारण अपनी पतिव्रता पत्नीके विषयमे भी—कलुषित हो गया। उन्होने क्षणभर भी मेरी बात नही सुनी, और मुझे मार डालनेतककी प्रतिज्ञा की। मेरे तहखानेसे छूटकर जब वे जाने लगे, तब मैंने उनको रोककर कुछ कहना चाहा, पर वे मेरी बात सुननेको क्षणभर भी खड़े नही हुए। उसके बाद, फिर आज अभी आपके यहाँ उनकी मुलाकात हुई, परन्तु यहाँ भी वे कढ़कर चले गये। अपने विषयमे मुझे कुछ भी ख्याल नही है, किन्तु इस बातका दुःख है कि, मेरे कारण उस साध्वीको कष्ट होगा। वह निष्कलक है। वह अत्यन्त शुद्ध है। उसके समान पतिव्रता और कोई स्त्री शायद ही मिले। उसको

कष्ट न मिलना चाहिये। मुझे चाहे जो दण्ड मिले, सहनेको तैयार हूँ— कुछ भी नहीं बोलूँगा…”

रणदुल्लाखाँ फिर ठहर गया। उसका कण्ठ इतना गद्गद् हो गया कि, आगे कुछ कह ही न सका। उसे सचमुच ही अपने कृतकर्मों-पर क्लेश हो रहा था। आखिर मनुष्य ही तो है, सम्भव है कभी उसका मन उसके वशमें न रहे, परन्तु अन्तमें यदि वह फिसल न जाय, तो उसका उतना दोष नहीं। वह प्रथमत. मोहपाशमें फँस गया था, और दिन-दिन फँसता ही जा रहा था, परन्तु अन्तमें वह चेत गया—अथवा अन्य किसीने उसे चेता दिया। बुरा इतना ही हुआ, जो नानासाहबका चित्त अपनी पत्नीके विषयमें कलुषित हो गया। और सो भी उस दशामें जब कि उस बेचारीका कुछ भी दोष न हो। अब उनका मन कैसे ठीक ठीक रास्तेपर आवे? बस, इसी एक विचारसे वह दु.खित हो रहा था।

अप्पासाहबने रणदुल्लाखाँका सम्पूर्ण कथन सुन लिया; और बहुत देरतक बिल्कुल विचारहीमें मग्न रहे, जैसे उन्हें सूझता ही न हो कि, क्या कहें? परन्तु अन्तमें फिर वे उससे बोले, “अच्छा, अब वह कहाँ है?”

जिस महलमें मैंने रखा था, उसीमें अब भी वे हैं। महलके अन्दर यद्यपि उनको पूरी स्वतंत्रता थी, परन्तु इस विचारसे कि, वे कहीं चली न जावें, मैंने, उनको न मालूम होते हुए, उनपर निगरानी रख दी थी। फिर भी मैंने आजतक कभी भी उनके साथ कोई भी आक्षेपयोग्य भाषण अथवा व्यवहार नहीं किया। यही नहीं, बल्कि उनको यह भी नहीं मालूम होने दिया कि, मैंने उनका भेष पहचान लिया है। मेरा सारा प्रयत्न इसी हेतुसे था कि, उनके सत्संगसे जो आनन्द मुझे हो रहा था, उससे मैं कहीं वंचित न हो जाऊँ। अब आप उनको अपने पास बुला लें। कलसे मैंने उनपरसे निगरानी भी उठा ली है। आपसे बार बार मेरी प्रार्थना यही है कि, आप मेरे इन वचनोंपर विश्वास रखें; और उनका पूर्वहीकी भाति आदर करें। एक बार नहीं, हजार बार मैं यही कहूँगा कि, वे मेरे लिये माताके सदृश वन्दनीया हैं। मैं मुसल्मान

दी। हाँ, यह मुझे नहीं मालूम था कि, इनसे आपका कोई सम्बन्ध है। यह बात आगे चलकर मालूम हुई, जबकि मै अधिकाश रूपमे मोहपाश में फँस चुका था। उसमे फिर हमारे नौकरने और भी वृद्धि कर दी। उसने तुरन्त ही ताड़ लिया कि, मैं मोहमें पड़ गया। और मेरे मनमे न रहते हुए भी—उसने मेरे आसपास मोहका जाल और भी विशेष रूपमे फैलाया किसने नहीं जान पाया—हॉ, मेरी बहनने मुझसे कहा कि, तुम ऐसे पागलपनमें मत पड़ो, और अप्पासाहबसे सब हाल बतलाकर क्षमा मॉगो। परन्तु मैंने उसकी भी नही सुनी। मोहजालको तोड़नेका मुझे साहस नही हुआ। अन्तमे यहॉतक नौबत आई कि, नानासाहब न जाने यहा किस कामको और कैसे आये, मेरे नौकरको उनके आने-की खबर लग गई, और उसने बदमाशी करके उनको पकड़कर मेरे महलके तहखानेमें बन्द कर दिया। मुझको मालूम भी नहीं होने दिया। उसका इरादा बहुत भयकर था। और—और मैं भी उसके जालमें फॅसकर देखी-अनदेखी कर रहा था। किन्तु मेरी बहनने मुझे चेतावनी दी कि, यह बात अच्छी नहीं। उसने मुझे बडे अच्छे मौकेपर चेतावनी दी, और मैं तुरन्त हो उनको छुड़ानेके लिये गया। इतनेमें किसी तरहसे वे छुट भी चुके थे। उस समय मेरा विचार हुआ कि, यही सब बातें, जो अभी मेने आपको बतलाई, उनको बतलाकर क्षमा मॉगूॅ, पर मेरा विचार पूरा नही हो सका। उनका मन मेरे विषयमे—और अत्यन्त दु खकी बात यह है कि, मेरे कारण अपनी पतिव्रता पत्नीके विषयमे भी—कलुषित हो गया। उन्होंने क्षणभर भी मेरी बात नहीं सुनी, और मुझे मार डालनेतककी प्रतिज्ञा की। मेरे तहखानेसे छूटकर जब वे जाने लगे, तब मैंने उनको रोककर कुछ कहना चाहा, पर वे मेरी बात सुनने-को क्षणभर भी खड़े नही हुए। उसके बाद, फिर आज अभी आपके यहॉ उनकी मुलाकात हुई, परन्तु यहॉ भी वे कड़कर चले गये। अपने विषयम मुझे कुछ भी ख्याल नहीं है, किन्तु इस बातका दु ख है कि, मेरे कारण उस साध्वीको कष्ट होगा। वह निष्कलक है। वह अत्यन्त शुद्ध है। उसके समान पतिव्रता और कोई स्त्री शायद ही मिले। उसको

कष्ट न मिलना चाहिये। मुझे चाहे जो दण्ड मिले, सहनेको तैयार हूँ—कुछ भी नहीं बोलूँगा...”

रणदुल्लाखाँ फिर ठहर गया। उसका कण्ठ इतना गद्‌गद् हो गया कि, आगे कुछ कह ही न सका। उसे सचमुच ही अपने कृतकर्मों-पर क्लेश हो रहा था। आखिर मनुष्य ही तो है, सम्भव है कभी उसका मन उसके वशमें न रहे, परन्तु अन्तमें यदि वह फिसल न जाय, तो उसका उतना दोष नहीं। वह प्रथमत. मोहपाशमें फँस गया था; और दिन-दिन फँसता ही जा रहा था; परन्तु अन्तमें वह चेत गया—अथवा अन्य किसीने उसे चेता दिया। बुरा इतना ही हुआ, जो नानासाहबका चित्त अपनी पत्नीके विषयमें कलुषित हो गया। और सो भी उस दशामें जब कि उस बेचारीका कुछ भी दोष न हो! अब उनका मन कैसे ठीक ठीक रास्तेपर आवे? बस, इसी एक विचारसे वह दु.खित हो रहा था।

अप्पासाहबने रणदुल्लाखाँका सम्पूर्ण कथन सुन लिया; और बहुत देरतक बिल्कुल विचारहीमें मग्न रहे, जैसे उन्हें सूझता ही न हो कि, क्या कहें? परन्तु अन्तमें फिर वे उससे बोले, “अच्छा, अब वह कहाँ है?”

जिस महलमें मैंने रखा था, उसीमें अब भी वे हैं। महलके अन्दर यद्यपि उनको पूरी स्वतंत्रता थी, परन्तु इस विचारसे कि, वे कहीं चली न जावें, मैंने, उनको न मालूम होते हुए, उनपर निगरानी रख दी थी। फिर भी मैंने आजतक कभी भी उनके साथ कोई भी आक्षेपयोग्य भाषण अथवा व्यवहार नहीं किया। यही नहीं, बल्कि उनको यह भी नहीं मालूम होने दिया कि, मैंने उनका भेष पहचान लिया है। मेरा सारा प्रयत्न इसी हेतुसे था कि, उनके सत्संगसे जो आनन्द मुझे हो रहा था, उससे मैं कहीं वंचित न हो जाऊँ। अब आप उनको अपने पास बुला लें। कलसे मैंने उनपरसे निगरानी भी उठा ली है। आपसे बार बार मेरी प्रार्थना यही है कि, आप मेरे इन वचनोंपर विश्वास रखें; और उनका पूर्वहीकी भाति आदर करें। एक बार नहीं, हजार बार मैं यही कहूँगा कि, वे मेरे लिये माताके सदृश वन्दनीया हैं। मैं मुसल्मान

हूँ, इसी एक बातपर न जाइये—हममें नीति और सदाचार नहीं है, ऐसा न समझिये।

रणदुल्लाखां और भी कुछ बोलनेवाला था कि, इतनेमें अप्पासाहब एकदम बोल उठे, "खाँसाहब, यह कभी नहीं हो सकता कि, मैं आपके वचनोंपर विश्वास न करूँ, पर इसमें सन्देह नहीं कि, यह काम आपके हाथसे अच्छा नहीं हुआ बल्कि बहुत ही बुरा हुआ। अस्तु। अब मैं इस विषयमें आपसे कुछ कहूँगा। आप उसे माताके तुल्य समझते हैं, इसीमें सब आ गया। बस, मैं पहलेहीके समान उसका आदर करूँगा, सो कहनेकी आवश्यकता ही नहीं, उसके हाथसे कोई अमंगल कार्य होगा, यह मेरे स्वप्नमें भी नहीं आसकता और न कभी आया। मुझे यदि यह मालूम होता, कि वह ऐसे संकटमें है, तो मैंने अपने प्राण देकर भी उसका छुटकारा किया होता। किन्तु मुझसे ऐसा कह दिया गया था कि, वह अपने बापके घर चली गयी। बस, इसी खयालसे मैं चुप बैठा रहा, और कोई सन्देह मुझे हो ही नहीं सकता था। अस्तु। कोई हानि नहीं, आपको अपने कार्यपर पश्चात्ताप हुआ ही है, अतएव अब विशेष कहना मुनासिब नहीं।"

अप्पासाहब इतना कहकर चुप हो रहे, और रणदुल्लाखां भी चुप ही रहा। आगे वह क्या कहे, सो कुछ उसके खयालहीमें न आता था। फिर कुछ सोच समझकर कहता है—"अप्पासाहब, आपको कलही यहांसे छुटकारा हो चुका है। कह नहीं सकते, क्या कारण हुआ—हुजूरने मुझसे आप ही आप पूछा कि, सुल्तानगढ़के किलेदारका क्या हाल है? मैंने उनसे कहा कि, सब ठीक है। यह सुनकर आज्ञा हुई कि, परसों उनको मुलाकातके लिए ले आओ। उनको हुकुम दिया जायगा कि, वे फिर पहलेहीकी भांति किलेपर जाकर अपने कामको सम्हालें।" इसके सिवाय और [illegible] सैन्य बढ़ानेका हुक्म भी होनेवाला है, सो सब मैं आपको पहले ही बतला चुका हूँ। आपकी 'ग्रहदशा' अब ठीक हो गई। हां, आप जा ही रहे हैं, इसलिए एक प्रार्थना आपसे और करना है। मेरी बहन, जिसको कि मैं इतना प्यार करता हूँ, दिन-दिन अधि

काविक क्षीण होती जाती है; और मुल्तानगढ़ पर जाकर रहनेकी उसकी रातदिन इच्छा हो रही है। आप वहाँ अभीतक थे ही नहीं, इस कारण मैं वहाँ उसके रहनेका प्रबन्ध नहीं कर सका। अब आप जानेवाले हैं, और आपके साथ ही आपकी पुत्रवधू भी जायँगी। ऐसी दशामें मैं अपनी बहनको भी, उसकी दासीके साथ, वहाँ आपके साथ भेज देनेमें कोई हानि नहीं समझता। आप उसे अपनी लड़कीकी तरह रखेंगे, इसमें मुझे तिलमात्र भी शंका नहीं। उसकी इच्छाके अनुसार किया जायगा, तभी शायद वह और भी कुछ दिन जीवित रह सके, अन्यथा, क्या होगा कुछ कह नहीं सकता। आप उसे ले जाइये, और वहाँ उसका प्रबन्ध रखिये। मैं बीच-बीचमें आता रहूँगा। लगातार तो मैं रह नहीं सकूँगा—और रह भी सकूँ; पर वैसी मेरी इच्छा नहीं है। फ़ातिमा उसके साथ रहेगी। इसके सिवाय और भी नौकर-चाकर दूँगा। मेरा रहना नहीं हो सकेगा।"

यह अन्तिम वाक्य कहते समय रणदुल्लाखाँका अन्तःकरण बहुत ही विकलसा दिखाई दिया।

अप्पासाहबने उसका कथन सुनकर पूछा कि, आपकी बहनको क्या हो गया है? परन्तु उसने उसका कोई ठीक उत्तर नहीं दिया। इसके कुछ देर बाद वह वहासे चला गया।

रणदुल्लाखाके वहासे चले जानेपर अप्पासाहबकी कुछ बड़ी ही विलक्षण दशा हो गई। बीजापुरमें जबसे वे आये थे, ऐसा विचित्र दिन उन्हें एक भी नहीं बीता था। इतने दिन उनको प्रायः इसी बातकी चिन्तामें बीते थे कि, अब क्या होगा, कैसा होगा, रणदुल्लाखाके भरोसे हमें कितने दिन और काटने होंगे, इत्यादि। नानासाहब उनके एकलौते बेटे थे; परन्तु वे खुल्लमखुल्ला जाकर बागियोंके गोलमें शामिल हो गये थे। बस, तभीसे उन्होंने इस बातका प्रण कर लिया था कि, अब उसका कभी नामतक नहीं लेंगे। पर आप जानते ही हैं कि, हृदयका मोह कितना जबरदस्त होता है, अतएव उन्होंने यद्यपि मुँहसे तो नानासाहबका नाम कभी नहीं लिया, तथापि मनमें हजारों बार

लिया होगा। वे प्रायः सोचते रहते कि, देखो हमारा लड़का राजद्रोही बनकर बादशाहके सामने नमकहराम हुआ, हमारी कुछ भी परवा न करते हुए शहाजीके लड़केके उपद्रवमें जाकर शामिल हो गया। यह बात कुछ अच्छी नहीं हुई। अब भी यदि वह लौट आवे, और हमारे पैरोंपर माथा रखकर क्षमा माँगे, तो रणदुल्लाखाके समान सरदारकी सिफारिशमे उसको बादशाहके सामने माफी दिला दी जावें, और कोई ऊँचा पद भी उसे दिला दिया जावे। ऐसा विचार उनके मनमें, एक-बार नहा, कई बार आया। किन्तु वह विचार उन्होंने शब्दो द्वारा कभी किसीसे प्रकट नहीं किया। यही नहीं, वल्कि उनके व्यव-हारमें भी कोई ऐसी बात नहीं देखी गई कि, जिससे उनका उपर्युक्त विचार प्रकट होता हो। उनके नौकर चाकर यदि कभी उनके सामने नानासाहबका नाम ले देते, तो मानो उनकी आफत ही आ जाती। ऐसी दशामे उस दिन जब उनका वह 'मृतवत्' पुत्र अचानक रातको उनके सामने आ खडा हुआ, तब उसे देखकर उनके मनमें क्षणमात्रके लिए—अथवा यों कहिये, क्षणलक्षांश-मात्रके लिए—आशाके किरणकी एक छोटीसी झलक दिखाई दी। उन्होंने सोचा कि, कहीं यह अपने अपराधकी क्षमा मागने ही तो नहीं आया? परन्तु ज्यों ही उनके मुखसे उन्होंने वे वचन सुने, मानों उनके आशांकुरपर बिजलीसी गिर पडी, और फिर कृत्रिम निश्चिन्तता लाकर उन्होंने अपने पुत्रके साथ किस प्रकारकी बातचीत की, सो पाठकोंको पिछले एक परिच्छेदमें मालूम ही हो चुका है। इस बातका उन्हे स्वप्न-में भी खयाल नहीं था कि, उनका पुत्र बीजापुरमें इस प्रकारसे आकर रहेगा। परन्तु वह विचित्र बात भी, जो उनके खयालसे बाहरकी थी, हो गई। यही नहीं, बल्कि उनका लड़का उनके सामने आकर लड-झगड़कर चला गया। अभी लड़केके द्वारा भयकर बातें सुने उन्हें बहुत विलम्ब भी नहीं हुआ था कि, इतनेमे रणदुल्लाखाने आकर एक विचित्र ही घटनाका वृत्तान्त बतलाया, और अन्तमे उनको किलेदारी वापस देने और अपनी बहनको भी उनके साथ सुल्तानगढ़ भेजनेकी

बात निकली। उस रातको ऐसी कुछ विलक्षण बातें, एकके बाद एक, होती चली गईं कि, वह बुड्ढा, बहुत देरतक मानो इसी भ्रांतिमें पड़ा रहा कि, वह जाग रहा है अथवा स्वप्नमें है। बार-बार वह उस रातकी उन्हीं बातोंका स्मरण करता रहा; और इस प्रकार उसे सुबह भी हो गया।

दूसरे दिन सचमुच ही बादशाहके यहाँसे अप्पासाहबका बुलावा आया; और उनसे उनकी मुलाकात हुई। उनकी बड़ी इच्छा कि, वह हमारे लड़केके विषयमें बात न निकालें, पर यह इच्छा उनकी सफल नहीं हुई। बादशाहने उनके लड़केकी बात निकाली ही। उसने कहा कि, आप अपने लड़केके मोहमें आकर नमकहराम न बन जावें। वह यदि आपके हाथमें आ जाय, तो उसे समझानेका प्रयत्न करें, अथवा दरबारको खबर देकर उसको यहाँ भेज दें। बादशाहका यह कथन सुनकर मानो अप्पासाहबके ऊपर वज्रसा गिर पड़ा। उन्होंने सोचा कि, देखो, लड़का कल रातको हमारे सामने आया; और हमने उसको वैसा ही जाने दिया, यह हमने अपनी राजभक्तिके प्रतिकूल व्यवहार किया। इसपर उन्हें सचमुच ही बड़ा दु.ख हुआ; और फिर यह सोचकर, कि अब चाहे जो हो इनके सामने भी एकबार इस बातका जिक्र कर ही देना चाहिये, वे अपनी जिह्वापर "हुजूर" यह शब्द लाकर कुछ कहने लगे; पर उनके मुखसे वह पूरा-पूरा निकलने न पाया था कि, रणदुल्ला-खाँ, जो वहाँ पास ही था, ताड़ गया; और बीचहीमें बोल उठा कि, "हाँ, हाँ, हुजूर, ऐसा करनेमें तो ये कभी नहीं चूकेंगे।" यह कहकर उसने बात बदल दी; और वह मौका टाल दिया। बादशाहकी तरफसे जो हुक्म मिलने थे, अप्पासाहबको मिल गये, और उन्हें पहलेसे कुछ अधिक ही अधिकार प्राप्त हुए, तथा इस प्रकार वे वहासे विदा हुए।

परन्तु दो दिनमें इधर क्या कौतुक हुआ, सो देखिये। रणदुल्ला-खाँको जब अपने कार्यपर पश्चात्ताप हुआ, तब उसने एक दिन अपने मराठे सरदार, अर्थात् अप्पासाहबकी पुत्रवधूपरसे अपना वह प्रतिबन्ध, जो उसने अभीतक उसपर रखा था, कुछ कम कर दिया। वह मौका

देखकर उसी रातका—जिस रातको रणदुल्लाखॉ अप्पासाहबके पास अपना अपराध स्वीकार करने गया था—वह मराठा सरदार और उसके साथकी वह स्त्री, दोनों एकदम गायब हो गये। दूसरे दिन प्रात काल ही यह समाचार रणदुल्लाखॉको मिलना चाहिये था, पर चूँकि अब उसने उस ओरमे अपना ध्यान हटा लिया था, और इधर उसे दरबारमे भी जानेकी जल्दी थी, तथा इस बातकी उसे कोई शका भी कभी न हुई थी कि, ऐसा कुछ होगा, अतएव वह उस ओरसे बिल्कुल निश्चिन्त-सा था। इधर अप्पासाहबकी बादशाहसे मुलाकात हो जानेके बाद वे दोनों ही वापस आये, और रणदुल्लाखॉ इस विचारमे था कि, अब इन सब लगोंको यहासे रवाना करना चाहिये। इतनेमे उसे उपर्युक्त समाचार मिला, और वह बडे चक्करमे पड गया। उस समय उसके मनकी जो दशा हुई, उसका वर्णन करना कठिन है। उसने बहुत कुछ ढूँढ-खोज की, आदमी दौड़ाये, पर कोई लाभ न हुआ। मराठा सरदार भग गया, कहीं उसका पता न लगा। इधर रणदुल्लाखॉ अप्पासाहबसे कह चुका था कि, अब आप अपनी पुत्रवधूको ले जाइये, और अब उसे यह कहनेकी नौबत आनेवाली है कि, वह न जाने कहॉ चली गई। अतएव उसने सोचा कि, हम अप्पासाहबको जब यह समाचार बतलावेंगे, न जाने वे क्या ख्याल करें। हमारी बातोंका वे विश्वास करें या न करें। शायद वे यही सोचें कि, कोई न कोई युक्ति करके इसने, बादशाहसे हमारी मुलाक़ात करवाकर, हमको यहासे टाल देनेका ही यह प्रबन्ध किया है, और हमारी पुत्रवधूके विषयमे इसका वही नीच उद्देश्य बना हुआ है, सिर्फ हमको बीचमे बाधक समझकर ही इसने ऐसा किया है। अप्पासाहबके मनमे ऐसा विचार आना सम्भव है, और इसमें उनका कोई दोष भी नहीं। अब इस विचारको मै उनके हृदयसे दूर कैसे करूँगा? बस, इसी प्रकारके अनेक तर्क-वितर्क रणदुल्लाखाके मनमे उठने लगे, और उसकी चित्त-वृत्ति बड़े गड़बड़मे पड़ी।

———

सोलहवां परिच्छेद

वापस जाते हैं

नानासाहब जिस समय बीजापुरमें अपने पितासे मिलने उनके घर गये थे, उस समय उनको बड़ी आशा थी कि, दुष्ट रणदुल्लाखाने हमारे कुलमें जो कलंक लगाया है, उसके परिमार्जित करनेकी अपनी प्रतिज्ञा जब हम पिताजीको बतलावेंगे, तब अवश्य ही उनको भारी क्रोध आवेगा; और वे हमारे पक्षमें आ मिलेंगे। इससे सुल्तानगढ़का किला बहुत जल्द हमारे हाथमें आजायगा। और जब सुल्तानगढ़के समान सुदृढ और भारी किला हमारे हाथमें एक बार आजायगा, तब उसके बाद और भी अनेक किले क्रमश', एकके बाद एक, राजा शिवाजी हस्तगत कर सकेंगे, तथा अपने उद्देश्यके अनुसार मराठा-राज्यकी नींव वे चारों ओर जमा लेंगे। परन्तु यह उनकी आशा सफल नहीं हुई। हमारे कुल-में इन दुष्ट मुसल्लोंने बड़ा भयंकर बट्टा लगाया। अब, उनका रक्तपात करके इसका परिशोध करनेके लिये हमारे अतिरिक्त और कोई भी नहीं। यह उन्होंने भलीभाति समझ लिया, किन्तु इससे वे निराश नहीं हुए, वरन् उनकी भयंकर दृढ़तामें और भी अधिक विशेषता आ गई। अभीतक शायद कभी-कभी उनके मनमें अपनी प्रतिज्ञाके विषयमें कुछ शंका भी हो जाती हो; परन्तु अब वह चट्टानकी तरह अटल हो गई। अपने पिताके घरमें जिस समय उन्होंने रणदुल्लाखाँको देखा था, उसी समय उनके मनमें आया था कि, बस, अब यहीं अपने वैरका परिशोध करके अपनी प्रतिज्ञाका परिपालन करें, पर उस समय उन्होंने समझा कि, यह मौक़ा नहीं है; और न यह स्थान ही उपयुक्त है, और इतना विचार करने ही भरको उस समय उनके मनमें स्थिरता भी थी। परन्तु जब वे वहासे लौटे, उस समय उनका हृदय इतना अस्वस्थ और विक्षुब्ध हुआ कि, रणदुल्लाखाके अतिरिक्त और उन्हें कुछ सूझ ही न पड़ने लगा; और उसके किये हुए भयंकर अपराधके अतिरिक्त उनकी निगाहमें और कुछ रहा ही नहीं। उनकी इच्छा यह हुई कि, अब यहीं

रह जावें। अब सुलतानगढ, अथवा राजा शिवाजीके पास जानेकी आवश्यकता ही नहीं। यदि हमको अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनी है, और सो भी जल्दी—तो इसके लिये उत्तम मार्ग यही है कि, वह जहॉ है, वहीं रहकर हम गुप्त रूपसे उसकी घातमें रहें, और फिर मौका लगते ही कामतमाम करें। बस इसके सिवाय ओर कोई मार्ग नहीं है। अब लौट जाकर हम क्या करेंगे ? इससे तो यही अच्छा है कि, हम उसकी छायापर नजर रखकर बिलकुल उसकी छाया ही बन जावें। ऐसा ही करनेसे हमारा कार्य सिद्ध होनेकी सम्भावना है। बस, इन्हीं विचारोंमें निमग्न होते हुए नानासाहब अपने पिताके घरसे निकलकर अपने उस काले-कलूटे सहायकके साथ चले जा रहे थे। मार्गमें वे उस महाशयसे एक चकार शब्द भी नहीं बोले। बोलते क्या ? अपने विचारोंसे उन्हें फुरसत ही न थी। जबतक वे अपने साथियोंमें नहीं जा मिले, तबतक दूसरा कुछ उन्हें सूझा ही नहीं। उनका मन इतना उदासीन और खिन्न हो रहा था कि, वे इधर-उधर कहीं देखते तक न थे। अपने साथियोंके पास जा पहुॅचे, तब भी यही जान पड़ा कि, मुॅहसे बोलनेकी उनमें शक्ति नहीं रही है। इतनी देरतक क्रोध, बैर-परिशोध, इत्यादि विकारोंके आते रहनेसे उनकी दशा ऐसी कुछ विलक्षण हो गई थी कि, कुछ पूछिये नहीं। ऐसा जान पड़ता था कि, कहीं ये पागल न हो जायॅ। वे जब वहॉ लौटकर आये, तभी उनके साथियोंने उनकी उस विलक्षण चेष्टाको देखकर ताड़ लिया कि, जिस आशासे ये गये थे, उससे कोई फल नहीं निकला। इसलिये उन्होंने सोचा कि, जितनी जल्दी यहांसे चल सकें, चल देना चाहिये, और चूॅकि उनका असबाब इत्यादि वहींपर था, अतएव अत्यन्त शीघ्रतापूर्वक कूच कर देनेका उन्होंने निश्चय किया। नानासाहबने अपना यह निश्चय प्रगट किया कि, हम बीजापुरमें ही रहकर अपने शत्रुसे बदला लेंगे। परन्तु अन्य लोगोंने उनकी बात नहीं सुनी, और कहा कि, बीजापुरमें इस समय तुम्हारा रहना ठीक नहीं होगा। यदि तुमको बदला ही लेना है, और चाहते हो, कि उसमें तुमको पूरी-पूरी सफलता प्राप्त हो, तो उसका

पहला उपाय यही है कि, हमलोग यहासे एकदम चले जावें। तुम उसके मुँहपर कह चुके हो कि, हम तुम्हारा खून करके वदला लेंगे, अतएव वह सावधान रहेगा; और इधर हम जब उसके पीछे-पीछे छायाकी तरह रहेंगे, तव मुमकिन है कि, उसको पता लग जावे; और वह पकड़ लेवे। ऐसी दशामें उत्तम मार्ग यही है कि, हम वीजापुर छोड़कर एकदम चले जायँ, जिससे उसको यह मालूम हो जाय कि, हम अव यहाँपर नहीं हैं। और इससे वह कुछ दिनके लिये ग़ाफिल हो जायगा, तथा उसे यह खयाल होने लगेगा कि, तुम्हारी वह प्रतिज्ञा और तुम्हारी वे वातें विल्कुल व्यर्थ थीं; और तव तुम एकदम यहाँपर आ जाओ; और अपने कार्यमें लगो। वस, इसी तरीकेसे अपने कार्य-को ठीक-ठीक सिद्ध कर सकोगे। इसके सिवाय अभी कुछ दिनतक तुमको उधर काम भी है। तुमने सुल्तानगढ़के हस्तगत करनेमें सहायता देनेका वचन दिया है। कौन कह सकता है कि, उसके हस्तगत करते समय ही तुम्हारी इच्छा तृप्त न हो जायेगी? इस प्रकारकी वातचीत हुई; और नानासाहवके उस अज्ञात साथीकी भी यही सलाह पड़ी कि, सच-मुच ही उत्तम मार्ग यही है; और इसीसे आपका काम सिद्ध होगा। अपने शत्रुको कुछ दिनतक गाफिल रखना आवश्यक है। इसके विना आपका उद्देश्य सिद्ध नहीं हो सकता। उस साथीने अपनी निजकी स्थिति तथा अनुभवका भी कुछ अधिक दिग्दर्शन कराया; और नाना-साहवके चित्तमें यह वात जमा दी कि, वास्तवमें यही मार्ग ठीक है। उनको यह पहले ही मालूम हो चुका था कि, हमारा यह साथी भी हमारी ही तरह किसी भयंकर अपमानका वदला लेनेके लिये प्रयत्न कर रहा है; और उसने उनको अपना यह उद्देश्य वतला ही रखा था। अतएव उसके कथनका उन पर काफी प्रभाव पड़ा। फिर आज उसने और भी स्पष्टरूपसे वतलाया कि, हमने भी अपने अपमानके अनन्तर इसी प्रकार कुछ दिन अज्ञातवासमें रहकर समय विताया है; और फिर उसके वाद अव अपना कार्य सिद्ध करने आये हैं। उसका युक्तिवाद उनकी समझमें पूरा-पूरा आ गया; और उस समय यह अच्छा ही

हुआ। अब उन लोगोंको वहांसे चल देनेमें क्षणभरका भी विलम्ब लगानेकी आवश्यकता नहीं थी। इसके सिवाय एकदम एक साथ ही सब लोगोंका शहरसे जाना भी खतरेसे खाली नहीं था। इसलिये सावधानीपूर्वक उन्होंने यह निश्चित किया कि, सब लोग अलग-अलग चलें, और यहांसे सात कोसके अन्तर पर अमुक गाँवमें जाकर मिल जावें। बस, इसी विचारके अनुसार बहुत जल्द चारों आदमी शहरकी चार सीमाओंसे बाहर निकलकर चल दिये। नानासाहबके साथ उनका वह दूसरा साथी भी था। अतएव उन्होंने उससे आग्रह किया कि, आप भी अब हमारे ही साथ चलें, पर उसने ऐसा करनेसे इन्कार किया। कुछ दूरतक वह उनके साथ साथ इसी प्रकारकी बातचीत करता हुआ गया, फिर उसके वापस आनेका समय आ गया। तब वह उनसे बोला, "नानासाहब, मेरी प्रतिज्ञा है कि, इतने दिनके अन्दर मैं अपने शत्रुके प्राण ले लूँगा। उन दिनोंमेंसे अधिकांश तो अब पूरे होने आये हैं, मेरी प्रतिज्ञाके अनुसार यदि इतने दिनमें यह कार्य मेरे हाथसे न हो सका, तो· · " आगे उसने कुछ भी नहीं कहा—जान पड़ा कि, वह कह ही नहीं सकता है। कुछ समय व्यतीत हुआ, फिर जब वह बिल्कुल जाने ही लगा, तब फिर एक बार उनकी ओर देखकर कहता है, "नानासाहब, एक बातके विषयमें मैं सोच रहा था कि, बतलाऊँ या न बतलाऊँ, पर अब बतलाये ही देता हूँ। आपकी स्त्रीको रणदुल्लाखाने जिस जगह रोक रखा था, वहाँ अब वह नहीं है। उसको वहांसे छुड़ानेके लिये मैं प्रयत्न कर रहा था, पर पता लगानेपर मालूम हुआ कि, वह वहांसे चली गई। वह चाहे अपने मनसे चली गई हो, अथवा · किन्तु आप अब जाइये। आप उसकी कोई चिन्ता न करें। वह बड़ी पतिव्रता है, इसका मुझे पूर्ण विश्वास है। परन्तु हाँ, उस · मैं अब जाता हूँ। मेरी और आपकी फिर कभी भेंट हो जायगी, तो अच्छी बात है। अपनी-अपनी प्रतिज्ञाओंके विषयमें बातचीत करेंगे, प्रतिज्ञाएँ यदि पूरी हो जायँगी, तो हर्ष मनावेंगे, अन्यथा दोनों एक ही जगह मिलकर अपने प्राणोंकी एकदम आहुति

दे देंगे। आप और मैं, दोनों बिल्कुल एक समान अवस्थामें हैं ··"

आगे वह कुछ नहीं बोला—इतना ही क्यों? बल्कि नानासाहब-को उसपर और कुछ उत्तर देनेके लिये भी मौका न रखकर वह उनसे यह बतलाने लगा कि, अब आप अमुक-अमुक मार्गसे इस तरह जावें; और अमुक-अमुक रास्तेसे इस तरह अपने साथियोंसे जा मिलें। बस, इतना बतलाकर वह वहासे तुरन्त ही चल दिया। यह सब उसने इतनी जल्दी किया कि, उनको और कुछ कहनेके लिये उसने क्षणभरका भी अवकाश न दिया। उसका कथन समाप्त होनेपर इधर नानासाहब कुछ सोचकर बोलनेके लिये अपना मुँह खोलते हैं, और उधर वह न जाने कहाँका कहाँ पहुँच गया, और वे पागलकी तरह इधर-उधर देखते ही रह गये। अन्तमें जब उन्होंने समझ लिया कि, वह निकल गया, अब कहीं दिखाई ही नहीं देता, तब यह सोचकर कि, अब अगले कार्यकी ओर ध्यान देकर हमको चलना चाहिये, उन्होंने अपना रास्ता पकड़ा।

बेचारे नानासाहब! जबसे उन्होंने घर द्वार छोड़ा, न जाने कितने प्रकारके सकटकारक अनुभव उन्हें प्राप्त हुए! अब मार्गमें चलते-चलते स्वाभाविक ही फिर भी, उनके मनमें हजारों प्रकारके विचार आने-जाने लगे। उनमें एक विचार यह भी था—देखो, जिस समय हम घर छोड़कर निकले, उसी समय यदि अपनी प्रिय पत्नीको भी साथ ले लिया होता, तो बड़ा अच्छा हुआ होता। इस विचारके साथ ही साथ फिर यह भी उनके मनमे आया कि, देखो, ऐसी दशामें, हम ही इन सब बातोंके कारण हुए। इतनेमें उस अपने साथीके ये शब्द उनके ध्यानमें आये—"वह चाहे अपने मनसे चली गई हो, अथवा······"

इन शब्दोंके याद आते ही फिर वे अपने आप ही पूछने लगे—"अथवा—अथवा—अथवा क्या?—अथवा क्या?" इस प्रश्नका जो उत्तर उनके मनमें आया, उससे तो उनको और भी अधिक क्रोध तथा खेद उत्पन्न हुआ। पर चूँकि उस समय वे अकेले ही थे अतएव भीतर ही भीतर उनको अपने उस क्रोध और खेदको दाब रखना पड़ा, फिर भी—"अथवा, अथवा क्या?" ये शब्द बराबर उनके मनमें

आते ही रहे। उन्होने बहुत प्रयत्न किया कि, वे शब्द और उनसे निकलनेवाला उत्तर उनके मनमें न आवे, पर वे विचार रुके नहीं— वे तो आते ही रहे, और उनके साथ ही साथ अन्य भी कुछ विचित्र विचार उनके मनमें आने लगे। देखो तो, हमारे देशवासियोकी दशा कितनी शोचनीय, कितनी भयङ्कर हो रही है! दूसरे दूसरे देशोके विधर्मी लोग हमपर चढ़ाइयाँ करके आवे, और हमको पदाक्रान्त करके हमारी छातीपर सवार हों, चाहे जिस तरहसे हमारा अपमान करें, हमारे धन-जनका सत्यानाश करें, हमपर नाना प्रकारके अत्याचार करें, और हम इसका कुछ भी प्रतिकार न कर सकें—हा! यह कितनी लज्जा और निर्बलताकी बात है! हम प्रतिकार करनेकी बात मनमें लाते हैं, तो हमसे कहा जाता है कि, अभी अवसर नहीं आया है, जरा मौका देखकर काम करना चाहिये, इत्यादि—परन्तु ये जब चाहें, तब हमारे किले ले लेवें, हमारे अधिकार छीन लें, हमारा जातीय अपमान करें, और—और-वौर कुछ नहीं, अब राजा शिवाजीने जो विचार किया है, वही सबसे ठीक है। उसको सोलह आने पूरा करनेमें जितनी कुछ मदद हमसे हो सके, करनी चाहिये, और जिस तरहसे हो सके, उनके प्रयत्नोंको सफलता प्राप्त करनी चाहिए—बस, यही हमारा निश्चय है! हमने उनको जो कुछ वचन दिया है, वह पूरा करना है, सुलतानगढ़का किला उनको प्राप्त करा ही देना चाहिये, और वहाँ जबतक उनका प्रबन्ध पूरा-पूरा न जम जावे, तबतक उनको सब कुछ सहायता देनी चाहिए, और फिर लौटकर, इस शहरमे आकर, अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करनेका कार्य करना चाहिए। बस, इसके सिवाय और कोई बात ही नहीं • • "

इस प्रकारके विचार उनके मनमें आ रहे थे कि, इतनेमे पूर्व दिशा प्रकाशित दिखाने देने लगी, और स्वाभाविक ही, एक ओरके खेतमें, एक वृक्षके नीचे, बैठे हुए दो मनुष्योंकी ओर उनकी दृष्टि गई उनके हृदयमें कुछ विलक्षण धक्का लगा, और वे आँखें फाड़कर देखने लगे।

———

सत्रहवां परिच्छेद

विलक्षण प्रसंग।

वृक्षके नीचे बैठे हुए मनुष्य ज्यों ही नानासाहबकी नजरमें पड़े,- उनके अन्त.करणमें एक प्रकारका धक्कासा लगा। धक्का लगनेका कारण क्या था? पाठकोंको मालूम हो ही गया होगा। इसके सिवाय,- वे मनुष्य कौन थे, सो भी पाठकोंने ताड़ लिया होगा। प्रसंग बहुत ही विलक्षण आगया था। रणदुल्लाखाका प्रतिवन्ध ज्यों ही कुछ कम हो गया, नानासाहबकी पत्नी, जो अभीतक मराठे सरदारके भेषमें थी, मौका पाकर वहाँसे निकल पड़ी; और वही इस समय यहाँ अपनी दासीके साथ उस वृक्षके नीचे बैठी थी। वे दोनों मानों किसीके आनेकी प्रतीक्षासी कर रही थीं। नानासाहबकी पत्नी अभीतक अपने कृत्रिम भेषमें ही थी। सुबह होगया, और हम बैठी हुई जिसकी प्रतीक्षा कर रही हैं, उसका अभी, दूरतक भी, कहीं पता नहीं है। इसी विचारसे उन दोनोंकी चेष्टा बहुत ही चिन्तातुर दिखाई दे रही थी। नानासाहब जिस ओरसे आरहे थे, उसी ओर उनकी पत्नीका ध्यान था। वे जबकि दूरसे आरहे थे, उनकी चेष्टा इत्यादि उसको स्पष्टतया दिखाई नहीं दी। परन्तु यह शका उसे तुरन्त ही होगई कि, हो न हो, ये नानासाहब ही आरहे हैं। इतनेमें वे नजदीक आगये; और उनकी चेष्टा भी स्पष्ट दिखाई देने लगी, तब स्वाभाविक ही कुछ मुस्कुराती हुई वह खड़ी हो गई। उसके उठनेकी वह आतुरता देखकर उसकी दासीको कुछ आश्चर्य हुआ; और वह इधर उधर देखने लगी। उसका ध्यान अवश्य ही उस ओर न था। परन्तु जब नानासाहब पास ही आगये, तब उसने भी अपने मालिकको देखकर पहचाना; और दोनों, कभी एक दूसरेकी ओर, और कभी नानासाहबकी ओर, देखने लगीं। उनको पुकारना उनकी पत्नीके लिए तो सम्भव नहीं था, परन्तु दासीको भी उनके पास जाकर उनसे कुछ कहनेकी नहीं सूझी। वह प्रसंग बहुत ही विचित्र था। पति वैरागीके भेषमें खड़ा था; और पत्नी पुरुषके भेषमें, उसको देखकर

लजाती हुई, खड़ी थी। नानासाहबके मनमें कितने प्रकारके विचार आरहे थे, और उनके हृदयकी क्या दशा होरही थी, इसकी कल्पना भी पाठकोंको होना कठिन है। जिस हमारी पत्नीको मुसल्मान पकड़ लेगया, और अपने आश्रयमें रखा, अर्थात् जिसने इस प्रकार हमारी प्रतिष्ठा और कुलमे बट्टा लगाया, वही हमारे सामने खडी हुई हमारी ओर देख रही है, और हमारी भी दृष्टि उसकी ओर चली गई—अब, प्राचीनकालके राजपूतोंकी भाँति हम इसका वध करके आगे बढ़ें, अथवा इसकी ओर न देखते हुए, ऐसे ही, आगे चले जावें ? यह प्रश्न उनके मनमें उपस्थित हुआ, और उनका मन बहुत ही चल विचल हुआ। यह बात तो त्रिकालमें भी उनके मनमे नहीं आ सकती थी कि, वह अपनी तरफसे भ्रष्ट होगी, परन्तु भ्रष्टता, भ्रष्टता ही है—फिर चाहे वह अपनी तरफसे हो, अथवा किसीके अत्याचारसे हो। उसके कारण कुलको जो कलंक लगना था, सो लग चुका। अब उसका परिशोध करनेको दो ही मार्ग है—एक, जिसके कारण कलंक लगा, उस मनुष्यको, और दूसरा, जिसने लगाया, उस मनुष्यको दोनोंको कण्ठस्नान कराकर अपने हाथ उस रक्तमे नहलाये जायँ। अस्तु। जिसने वह कलक लगाया था, उसके वधकी तो वे प्रतिज्ञा कर ही चुके थे, और जहाँतक शीघ्र हो सकता था, उसको पूर्ण करनेका उन्होंने निश्चय भी कर लिया था, पर अब इस दूसरे व्यक्तिका—जो सामने खड़ा हुआ है—क्या किया जाय ? इस विषयका कोई भी विचार अभीतक उनके मनमें नहीं आया था—और अब वही आकर सामने उपस्थित हो गया। उस समय एकबार तो उनके मनमे यही आया कि पत्नीवधसे अपने हाथ अपवित्र न करें, परन्तु फिर उन्होंने सोचा कि, जिसने पतिके नामको सर्वथेव बट्टा लगाया, उसको शीघ्र ही इस लोकसे मुक्त कर देनेमे ही उसका, और हमारा भी, कल्याण है। प्राचीनकालके राजपूत वीर जब युद्धपर जाने लगते थे, तब अपनी पटरानियों और बहू-बेटियोंको पहले ही स्वर्गलोकके लिए रवाना कर देते थे, कि जिससे उनके बाद उनके कुटुम्बकी विडम्बना न हो। ऐसा ही यदि हमने भी किया होता, तो हमको आज

अपने कुटुम्बकी यह विडम्बना आखोंसे देखनेकी नौवत ही न आती। पर वैसा उस समय हमसे नहीं हो सका, तो फिर इसी समय वैसा करनेमे हमें क्यों चूकना चाहिए? एकवार तो यह उनके मनमें आता, पर दूसरी वार वही मन उनसे कहता कि, स्त्रीके वधके लिये—जिसपर हमारा एकवार प्रेमसर्वस्व रह चुका है, उसके वधके लिए—उद्युक्त होना सर्वथा अनुचित है। इस प्रकार उनके चित्तकी वृत्ति हिंडोलेकी तरह हो रही थी। हाँ, इस वातको सोचकर उन्हें कुछ सन्तोषसा हुआ कि, अच्छा हुआ, जो इस रास्तेसे हम अकेले ही आये, हमारे साथी इधरसे नहीं आये। वहुत देरतक तो वे वैसे ही चुप खड़े रहे, जैसे कोई नवीन यात्री रास्ता मालूम न होते हुए, किसी चौराहेपर आजाय, और फिर वहाँ अचानक खड़ा होकर यह सोचने लगे कि, अब किस रास्तेसे जाऊँ, और किससे न जाऊँ—वस, यही हाल उनका हुआ। देखी-अनदेखी करते हुए आगे जा नहीं सकते थे, और यदि कहें कि, स्त्रीका वध कर डालें तो करनेको मन तैयार नहीं होता था, और यदि वैसा नहीं करते, तो मानो एक प्रकारसे जान-बूझकर अपने कुलमें लगे हुए कलंकके स्मारकको छोड़ रहे हैं। ये सारे विचार लिखनेमें तो हमको समय लग गया; पर उनके मनमें आते इनको देर नहीं लगी। फिर भी वे वैसे ही खड़े रहे। कुछ भी करनेके लिये उन्होंने कदम आगे नहीं वढ़ाया। पहले ही की भाँति क्रोध; और तिरस्कारयुक्त नेत्रोंसे वे अपनी पत्नीकी ओर देखते रहे किसी ओर भी उनसे कदम आगे नहीं वढ़ाया गया। इधर, यह कहनेकी आवश्यकता ही नहीं कि, उनकी पत्नी और उसकी उस दासीकी भी चित्तवृत्ति कुछ विलक्षणही-सी हो रही थी। दोनोंहीने उनको उसी भेषमें वीजापुरमें घुमते हुये देखा था। जिस दिन उन्होंने उस मराठे सरदारको देखा था; और उनके चित्तको भ्राति हुई थी, उसी दिन उस मराठे सरदारने भी उनको देखा था; और उसके मनमें आया था कि. इनसे भेंट करके अपना सच्चा-सच्चा स्वरूप प्रकट कर दें, पर उस समय वह रणदुल्लाखाकी निगरानीमें था, अतएव वह कुछ भी कर नहीं सका। हाँ, यदि चार-दिनका अवकाश मिलता, तो शायद

कुछ कर भी सकता, पर इस बीचमे जो घटनाएँ और दुर्घटनाएँ हुई, सभी बड़ी विचित्र हुईं। वे घटनाएँ यदि घटित न होतीं, तो उस मराठे सरदारको अपना स्वरूप प्रकट करनेका मौका मिल जाता, और सब बातें ठीक टीक हुई होती। अस्तु, जो कुछ हुआ होता, उसका विचार करनेकी अपेक्षा अब आगे क्या हुआ, उसीके विषयमे लिखना अच्छा होगा।

बीचमें क्या क्या घटनाएँ हुईं, इसका कुछ भी वृत्तान्त चूँकि मराठा सरदारको मालूम हुआ ही न था, अतएव स्वाभाविक ही उसके मनमें आया कि, ये बाबाजी हमारी ओर जो इतनी क्रुद्ध दृष्टिसे देख रहे हैं, इसका रहस्य क्या है? अवश्य ही सरदारके मनमे उस समय यही आया, कि हम अपना सच्चा स्वरूप इनसे कुछ समय तक छिपाये रहे, और इस प्रकार क्षणभर इनसे विनोद करें। यह सोचकर उसने अपनी दासीसे कहा कि, जा, तू आगे बढ़कर, बाबाजोको यहाँ बुला ला।

दासीको भी कौतूहल हुआ, और वह बाबाजीके पास जाकर हँसकर कहने लगी, "बाबाजी, आपको हमारे मालिक, जो वृक्षके नीचे बैठे हैं, बुला रहे हैं।"

परन्तु इतना ही वाक्य कहते हुए वह ऐसी घबड़ाई कि, उसके मुँहसे बोल ही न निकलने लगा। इतनेमे बाबाजीकी आँख और भी अधिक सुर्ख हो गई। वे इस प्रकार उसकी ओर जोरसे देखने लगे कि, वह बिलकुल ही घबडा गई, और उसकी पहलेकी वह चेष्टा एवं वह विनोदपूर्ण स्वर न जाने कहाँ चला गया। उसने समझा कि, हमको इन्होंने पहचान लिया। उस बेचारीके ध्यानमे इतना भी न आया कि, भेष तो हमारी स्वामिनीने बदला है—हमने कहाँ बदला है। ऐसी दशामे बाबाजी, अर्थात् नानासाहब, यदि हमको पहचान गये, तो इसमें आश्चर्य ही क्या? अस्तु। घबडाते-घबड़ाते अब वह यही सोचने लगी कि, व्यर्थके लिये हम इस फन्देमे पड़ी, और आगे आई। बेचारी लड़खड़ाती हुई जबानसे कहती है, बाईसाहबा हैं, लेकिन वे हँसी · · ·"

आगे बेचारी कुछ कह ही न सकी। कहती क्या। उसने समझा कि, हमने नानासाहबसे अपनेको छिपाया; और न सिर्फ छिपाया ही, बल्कि उनसे हम हँसी भी करने लगीं, इसी कारण वे इतने क्रुद्ध हो रहे हैं। अस्तु। ज्यों ही उसके मुँहसे ये शब्द निकले कि, "बाईसाहबा हैं, लेकिन वे हँसी"; और फिर उसका बोलना बन्द हुआ, त्यों ही उन्होंने कहा, 'चल चल!' यहासे जा। तू और तेरी बाईसाहबा, दोनों मेरी आँखोंके सामनेसे टल जाओ। मेरा सारा सत्यानाश कर दिया—अब भी तुमको सन्तोष नहीं हुआ? जा, जा मेरे सामने खड़ी रहेगी, तो मेरा सारा विवेक न जाने कहाँ चला जायगा, और अभी उसको और तुझे जानसे मार डाले बिना न रहूँगा। एक बार चले जानेपर, फिर भी तुम अपना काला मुँह दिखलानेको मेरे सामने आई—इससे तो तुम बिलकुल नरकलोकमें ही चली गई होतीं, तो अच्छा होता।"

बाबाजी बहुत ही जल्दी-जल्दी बोल रहे थे, और क्रोधके मारे उनका सारा शरीर थर-थर काँप रहा था। परन्तु अपने उसी क्रोधके आवेशमें उन्होंने जितने शब्द उच्चारण किये, और फिर उन्हीं शब्दों-मेंसे जितने शब्द उस दासीको, अपने उस अवस्थामें, सुनाई दिये, उनसे उसका गया हुआ धैर्य मानो फिरसे वापस आ गया। यदि किसी दासीको अपनी स्वामिनीके विषयमें अभिमान था, यदि उसके पाति-व्रत्य, उसके सौजन्य, उसके चातुर्यके विषयमें किसीको अत्यन्त गर्व था, तो सचमुच उसी दासीको था। अपनी स्वामिनीके विषयमें; और विशेषतया उसके धैर्यके विषयमें, उस दासीको अत्यन्त गर्व था। उसकी स्वामिनीने केवल अपनी इज्जत बचानेके लिये ही, अपने पाति-व्रत्यकी रक्षा करनेके लिये ही, इतने सकटोंका सामना किया था। हमारी स्वामिनीको मालूम था कि, दुष्ट सैयदुल्लाखाँकी उसपर नजर है; और वही किलेपर आनेवाला है। ऐसी दशामें वह कुछ न कुछ उपद्रव किये बिना न रहेगा; हमारे श्वसुरजीको कैद करनेके बाद, उनके देखते, हमारी बेइज्जती किये बिना वह चाण्डाल न मानेगा, उस दशामें फिर हम अपनी रक्षा न कर सकेंगी, यह उसको पूरा

विश्वास था, और यही सब सोच समझकर उसने भेष बदलकर, हमको साथ लेकर अपने मायकेका रास्ता लिया था, पर बीचमें रणदुल्लाखाके द्वारा ही, जिसका कि कुछ भय भी नहीं था, यह विचित्र विघ्न उपस्थित हुआ, परन्तु उससे भी निभकर उसने अपनी रक्षा की। इतना होनेपर भी जब उस दासीने देखा कि, नानासाहब उलटे और इसीको कटु वचन कह रहे हैं, और उस सतीको अपने कुलमें कलंक लगानेवाला बता रहे हैं, तब उसकी पहलेकी घबड़ाहट न जाने कहाँ चली गई, और उसको यह और ही कुछ मामला दिखाई दिया। अतएव वह एकदम उनसे बोली, "मालिकसाहब, मालिकसाहब, आपके नामको बट्टा लगाया? बट्टा? किसने? बाईसाहबाने? आप कहते क्या हैं? और यही समझकर आप वैरागी हो गये हैं? क्या बात है? आपने यह क्या समझ रखा है? कौन आपके कानमें ऐसा कह गया?" क्षणभर पहले जिसके मुँहसे शब्द नहीं निकलता था, वही अब इस प्रकार फटकारकर बोलने लगी। उस समय मानो उसका वह भाव ही बदल गया, वह दूसरी स्त्री बन गई। नानासाहबने समझा कि, अपनी मालकिनका पक्ष लेकर ही यह सब कुछ बक रही है। अतएव वे उसे डाँटकर कहते हैं, "बस! चुप रह! क्या तू समझती है कि, मुझे मालूम नहीं हुआ? मुझे सब, एक एक अक्षर मालूम हो गया है। अब ऐसी बातें करनेसे कोई लाभ नहीं है—मेरे क्रोधको मत बढ़ा। मराठोंकी स्त्रियाँ—उसमें भी मेरी, मेरी स्त्री (यह शब्द बड़े संकटके साथ उनके मुखसे निकला) भ्रष्ट होने तक अपने प्राण रखेगी, और अपना वह काला मुख दिखानेको मेरे सामने आवेगी—ऐसा मुझे स्वप्नमें भी खयाल न था। चल, चल। अब रास्तेसे लोग आने-जाने लगे। मेरा रास्ता छोड़। सचमुच ही, जैसा तू कहती है, वैसी ही यदि हमारे कुलकी परवा है, तो अभी की अभी चिता जलाकर, उसमें कूद पड़ना चाहिये। जा, राजपूतोंका रक्त यदि सचमुच ही उसके शरीरमें है, और तू भी यदि उसकी सच्ची दासी है, तो अभी की अभी उसे उस जंगलमें लेजाकर, चाहे जिस तरहसे, उसका वह काला मुख नष्ट कर दे। फिर

इस संसारमें मुझे उसके दर्शन न होने दे। मैंने ही, खुद मैंने, अभी यह कार्य किया होता; पर अब इस भेषमें यदि मैं वह करूँगा, तो उससे बड़ा जो कार्य मुझे करना है, सो रह जायगा। जा उससे कह दे कि, तू अभी की अभी जाकर यदि प्राणत्याग करेगी, तो ही मैं समझूँगा कि, तुझमें कुछ सत्व है। अन्यथा, खुशीसे जहाँ अभीतक थी, वहीं जाकर रह। जिस दिन उसके रक्तसे नहाऊँगा, उसी दिन तुझे भी नरकमें भेजूँगा, परन्तु हाँ अब तुम आगे मेरे मार्गमें मत आओ।"

इतना कहकर नानासाहब वहाँसे चल दिये—चल क्या दिये? जाने लगे। परन्तु इतने ही में न जाने क्या विचार उनके मनमें आया कि, एकदम वे वहांसे घूम पड़े; और उस दासीको, जो कि बिल्कुल आश्चर्यचकित होकर स्तब्ध खड़ी थी, वहीं छोड़कर शीघ्रतापूर्वक अपनी उस पुरुष भेषधारिणी स्त्रीकी ओर गये जो कि, उस वृक्षके नीचे उन दोनोंकी ओर देखती हुई यह जाननेकी उत्सुकतामें खड़ी थी कि, इतने जोर-जोरसे ये दोनों क्रोधमें आकर क्या बातचीत कर रहे हैं। वे उसके पास गये, और अपने क्रोधको खूब सम्हालकर, अत्यन्त धीर और प्रशान्त शब्दोंमें उससे बोले, "तू अपने स्वाभाविक भेषमें मेरे सामने नहीं आई; यह बहुत अच्छा हुआ। उस भेषमें तू अब मेरे लिये मर चुकी; और मैं भी तेरे लिये मर चुका। तूने मेरा कुल भ्रष्ट किया। नाममें बट्टा लगाया। मेरी सारी महत्वाकांक्षाओंको बिलकुल विध्वंश कर दिया। इसके लिये तुझे जानसे मार डालना चाहिये। पर मैं वैसा नहीं करूँगा। हाँ, अब तू अपना यह काला मुख कभी मुझे मत दिखलाना। इतनी ही मुझपर दया करना।"

उस बेचारीको नानासाहबके इस कथनका कुछ भी अर्थ समझ नहीं पड़ा। अत्यन्त भयभीत चेष्टासे वह उनकी ओर देखती भर रही। परन्तु जब उसने देखा कि, अब ये जा ही रहे हैं, तब "क्यों?" बस, इतना ही एक प्रश्न उसके मुखसे बाहर निकला। इस प्रश्नके कानमें पड़ते ही नानासाहब एकदम फिर उसकी ओर मुड़कर कहते हैं, "क्यों! 'क्यों' पूछती है! मेरे मुखसे फिर वही कहलाना चाहती है?—क्यों! अच्छा,

सुन। इसलिये कि तेरा मुख काला हो गया, और उसकी कालिख मेरे मुखमें भी लगी।"

"मेरा मुख काला हो गया! और उसकी कालिख आपके मुखमें भी लगी? ऐसा यदि होता, तो मैं आपको जिन्दा दिखाई न देती।"

"ऐसा ही यदि होता, तो फिर और मुझे क्या चाहिये था? फिर मेरे हृदयको जो ये हजारों वेदनाएँ हो रही हैं, वे क्यों होतीं? तुझे मार डालनेके लिये मेरे हाथ क्यों तड़फड़ाते? अब या तो प्राण दे, नहीं तो मेरे सामने मत आ।"

इतना कहकर वे चुप हो गये। पुरुष-भेषमें थर-थर कॉपनेवाली उनकी वह स्त्री उनके सामने ही खड़ी थी। इतनेमें उसकी वह दासी भी वहीं आ गई। उसने अपनी मालकिनको फिर आगे नहीं बोलने दिया, और स्वयं ही आगे होकर उनसे कहती है, "ठीक है, अब अधिक बातचीत करनेका यहाँ मौका नहीं है, और न आप सुनेंगे। अब हम जाती हैं, और जिस दिन—आप जैसा कि कहते हैं—वैसी कालिख बाईसाहबाके मुखमें नहीं—ऐसा आपका विश्वास हो जायगा, उसी दिन वे आपके सामने फिर आवेंगी, अन्यथा वे चिता जलाकर उसमें भस्म हो गई, ऐसा आप समझ लीजिएगा।" दासीका वह आविर्भाव देखकर उनके मनपर कुछ विचित्र ही प्रभाव पड़ा। और वे कुछ कहनेवाले भी थे, पर इतनेमें ऐसा मालूम हुआ, मानो कुछ लोग यह देखनेके लिये, कि बाबाजीके साथ इन लोगोंका क्या झगड़ा हो रहा है, उधरकी ओर आ रहे हैं। वे आवें और कुछ बातचीत सुनें, यह किसीको भी इष्ट न था। इधर बाबाजीको भी वहाँ खड़ा रहना, और बोलना बिलकुल दुस्सहसा हो रहा था, अतएव वे जानेके लिये आतुर हो रहे थे। और इतनेमें वे चल भी दिये।

मराठा सरदार, अत्यन्त खिन्न होकर, बहुत देरतक जहाँका तहाँ ही खड़ा रहा। उसके साथकी वह स्त्री उसको बराबर सान्त्वना दे रही थी। सरदारकी आँखोंसे आँसू बह रहे थे, पर यह जानकर कि, पुरुष-

भेषको शोभा देनेवाली यह चीज नहीं है, वह उनको पोंछ रहा था। कुछ ही समयमें उन दोनोंको भी वहाँसे चल देना पड़ा।

अठारहवां परिच्छेद।

स्वामीजी और राजासाहब।

क्रोधके आवेगमें नानासाहब वहाँसे चल दिये, और बहुत जल्द अपने साथियोंमें आ मिले। जबतक वे साथियोंमें पहुँच नहीं गये, अनेक प्रकारके विचार मार्गमें उनके मनमें आते रहे। कुछ समय पहले वे अपनी स्त्रीसे मिल ही चुके थे। उस समय जो बातचीत हुई थी, वही बार-बार उनके मनमें आ रही थी। रणदुल्लाखांसे उनकी दो बार भेंट हुई थी। उस समय उसने भी उनकी स्त्रीकी निष्कलंकता, और अपनी निर्दोषिताके विषयमें एक-दो उद्‌गार निकाले थे। उनकी ओर भी उनका इस समय ध्यान गया। फिर अपनी दासीके, अत्यन्त त्रस्तस्वरमें कहे, ये शब्द कि—"जिस दिन, आप जैसा कहते हैं—वैसी कालिख बाईसाहबाके मुखमें नहीं—ऐसा आपको विश्वास हो जायगा, उसी दिन वे आपके सामने आवेंगी, अन्यथा वे चिता जलाकर उसीमें भस्म हो गईं, ऐसा आप समझ लीजिएगा।" और इन शब्दोंके साथ ही साथ उसके उस आविर्भावका खयाल भी उनके मनमें आया। इन सब बातोंके मनमें आनेके कारण उनके मनकी अवस्था कुछ बहुत ही गोल-माल दिखाई दी। अब वे अपने ही विचारको निश्चित समझें, अथवा उपर्युक्त बातोंसे जो शंका उत्पन्न होती है, उसपर विचार करें, इत्यादि कुछ भी वे स्थिर नहीं कर सके। पत्नी-विषयक उनका प्रेम तो अब बिलकुल विपरीत हो ही चुका था। अतएव अब उनको इसी बातपर बड़ा क्रोध आया कि, यह जीवित ही कैसे रही? इसको तो अबतक मर जाना चाहिये था। चाहे अन्य ही भेषमें क्यों न हो; पर हमारे शत्रुके अधिकारमें, उसके आश्रयमें, और ऐसी दशामें जबकि उसकी पाप-

वासना जाग्रत थी, यह जीवित रही—यही इसमें बड़ा भारी अपराध हुआ। जबकि इसने अपनी इज्जतकी अपेक्षा अपने प्राणोंका मूल्य अधिक समझा, तब यह भ्रष्ट तो हो ही चुकी—न प्रत्यक्ष रूपमें भ्रष्ट हुई हो, पर अप्रत्यक्ष रूपसे तो इसके भ्रष्ट होनेमें कोई सन्देह नहीं। यह उनका विचार बिलकुल दृढ हो गया। उन्होंने सोचा कि इसने यदि आत्म-हत्या कर ली होती, तभी यह कहा जा सकता था कि, इसने मराठा वंशकी स्त्रीके उपयुक्त कार्य किया। अस्तु। अब अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार सब बातें हमें करनी ही पड़ेंगी। इसके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं। इस प्रकार सोचते हुये, अत्यन्त व्यग्रचित्तसे, नानासाहब अपने नियत स्थानपर पहुँचकर अपने साथियोंसे जा मिले।

मंजिल दरमजिल तै करते हुए वे लोग पूनेके पासवाले अपने उसी सदैवके जंगलसे एक मंजिलके अन्तपर आ पहुँचे। वहांसे अपने आनेका समाचार भेजनेके लिए अपनेहीमेंसे एक आदमीको तैयार किया। उन्होंने सोचा कि, हम सब लोगोंको एक साथ ही एकदम वहाँ न जा पहुँचना चाहिये, किन्तु पहले हममेंसे एक आदमी अकेला वहाँका सब हाल हवाल ले आवे, और तब जैसा विचार हो, वैसा किया जाय। एकदम ही वहाँ पहुँच जानेसे न जाने क्या हो। हमारे बाद वहाँ क्या हुआ, और क्या नहीं हुआ—किसको मालूम? इसके सिवाय वे दिन भी ऐसे ही थे कि, किसी गांवकी आज जो दशा है, वही कल भी रहेगी, इस बातका कोई निश्चय नहीं था। उन्होंने सोचा कि, बीजापुरसे यद्यपि हम लोग अपने खयालसे बिलकुल गुप्त रूपसे ही आये हैं—फिर भी कौन कह सकता है कि, हमारे पीछे-पीछे कोई न आया हो? सम्भव है, हमारे पीछे पीछे कोई आया हो, और गुप्तरूपसे हमारी सब बातोंपर उसकी नजर भी हो! तानाजीका यद्यपि यह बिलकुल विश्वास था कि, बीजापुरमें ऐसा एक भी चतुर मनुष्य नहीं है, जिसको इतनी बड़ी बादशाहतका कुछ भी खयाल हो, और न हमारी और राजा शिवाजीकी ही कुछ परवा करनेवाला कोई आदमी वहाँ दिखाई दिया। सभीका यह खयाल है कि, इन बलवाइयोंके उपद्रवोंमें कोई विशेष तत्व नहीं है,

इनको तो जब चाहेंगे, तभी बातकी बातमें दमन कर लेंगे। इस कारण हमपर किसीकी नजर हो नहीं सकती, और बात तो यह है कि, यदि बीचमें नानासाहबपर वह मौका न आगया होता, तो हमको इस बातकी कोई शंका भी न होती कि, हमपर किसीकी दृष्टि भी हो सकती है। ये सब बातें थी, फिर भी तानाजी एक बहुत ही नीतिज्ञ और सुदक्ष पुरुष थे। उनका सदैव ही यह विचार रहता था कि, सब बातोंको आगे-पीछे सोचकर तब कोई निश्चय करना चाहिए, और जहाँ एक बार निश्चय हो चुका, फिर तुरन्त आगे कदम बढ़ाकर जो कुछ करना हो, बेखटके कर डालना चाहिए। राजा शिवाजीके वे पूरे पट्टशिष्य थे। चकमा देनेमें भी बड़े चतुर थे—अतएव, किसी कारणके न होनेपर भी, उन्होंने एक मंजिल इधर ही रहने और अपने आनेकी खबर पहले ही भेज देने-का निश्चय किया। उन्होंने बीजापुरमें रहकर—नानासाहबके विषयमें इतनी गड़बड़ी होते रहनेपर भी—क्या क्या कार्य किये, अथवा कौन कौनसी खबरें प्राप्त कीं, इत्यादि बातोंका हाल किसीको भी मालूम न था। यहाँतक कि, उनके साथके लोगोंको भी उनकी अनेक बातोंका कुछ भी पता न था।

अस्तु। अभी हमको इस बा-के विचार करनेकी आवश्यकता नहीं कि, तानाजीराव वहाँसे क्या क्या समाचार लाये और क्या-क्या नहीं लाये। इस समय तो वास्तवमें उन्होंने अपनी दूरदर्शिता दिखलाकर अपने साथियोंमेंसे एक आदमीको उधरका समाचार लानेके लिये रवाना कर दिया, और आप सब लोग अपने असली मुकामसे एक मजिल पीछे ही रह गये। इसके बाद, जब वह आदमी चला गया, तो आप भी स्वयं चुप नहीं बैठ रहे, किन्तु आसपासके गाँवोंमें जाकर उधरका सब हाल-चाल लेनेके लिये दौड़धूप करने लगे। इससे उन्हें दादोजी कोंडदेव और राजा शिवाजीके झगड़ेका वृत्तान्त मालूम हुआ इसके सिवाय किसीने यह भी बतलाया कि, उस झगड़ेके कारण राजा शिवाजी न जाने किधर चले गये। खबरें, चाहे कोई अपनी समझसे, कितनी ही गुप्त रखे, पर उनके पख कैसे निकल आते हैं, और वे किस प्रकार

इधर-उधर उड़ने लगती हैं, सो ईश्वर ही जाने। दादाजी कोंडदेव राजा शिवाजीसे नाराज हुए थे, और इससे राजा साहब कहीं रूठकर चले गये, यह खबर बातकी बातमें फैल गई, और फिर उसमें भी वृद्धि ही होती गई। राजासाहब किधर गये, पहले तो इसी विषयमें लोगोंके तर्क वितर्क होते रहे, फिर उन लोगोने अपने-अपने अनुमानोंको निश्चित स्वरूप देना भी शुरू किया। जिसकी जो इच्छा हुई, उधर ही वह राजा शिवाजीको ले जाने लगा। कोई कहता, बादशाहके यहाँसे उनका बुलावा आया था, सो वे बीजापुर चले गये, कोई कहता, नहीं, वे लूटपाट करके रुपया और हथियार जमा करने गये हैं, और किसी किसीने तो यहाँतक अनुमान बाँधा कि, उनको, यह हनुमान मन्दिरका वैरागी ही कहीं फुसलाकर ले गया। इस प्रकारकी ये अनेक खबरें जब हमारे तानाजीरावके कानोंमें आई, तब स्वाभाविक ही उनको कुछ चिन्तासी मालूम हुई। उन्होंने उन सभी गप्पोंपर विश्वास किया, सो नहीं, पर हाँ, इतना उन्हे अवश्य निश्चय होगया कि, हमारे जानेके बाद राजासाहबके चित्तको क्षुभित करनेवाली कोई न कोई घटनाएँ अवश्य हुई हैं। परन्तु उन्होंने यह भी सुना था कि, राजासाहब घर छोड़कर कहीं भाग गये हैं, अथवा वे अमुक ही एक स्थानको निश्चित रूपमे गये हैं, सो ऐसी बातोंपर उन्हें कोई भी विश्वास नहीं हुआ। फिर भी इससे इतना उन्हें अनुमान अवश्य हुआ कि, राजासाहब, जान पड़ता है, आजकल यहाँ मौजूद नहीं हैं। अतएव अब वे इस विचारमें पड़े कि, राजासाहब यदि आजकल यहाँ न हुए, तो फिर कैसा करना होगा? परन्तु फिर उन्होंने सोचा कि, यदि राजासाहब न होंगे, तो स्वामीजी तो अवश्य ही होंगे, और स्वामीजी एक प्रकारसे राजासाहबके समान ही हैं। बस, इसी प्रकार सोचते हुए मानो वे मन ही मन सब खबरोंकी सगति सी लगाते रहे कि, जो उन्होंने उस बीचमें इधर-उधरसे प्राप्त की थीं।

उनका एक आदमी एक मजिल आगे गया ही था। अतएव उन्होंने सोचा था कि, उसके वहाँ पहुँचनेतक जितना समय लगेगा,

उतना समय हम यहाँ विश्राम लेनेमें व्यतीत करेंगे। तदनुसार विश्राम करनेके बाद तानाजी, नानासाहबको साथ लेकर, अपनी उस नियमित जगहके लिये चले। परन्तु तीन चतुर्थांश रास्ता भी अभी वे चल नहीं पाये थे कि, इतनेमें वह आदमी उनको सामनेसे आता हुआ दिखाई दिया। उसको देखते ही, स्वाभाविक ही, तानाजीको आश्चर्य हुआ; क्योंकि उस आदमीको फिर वापस आनेका कोई संकेत नहीं दिया गया था। उसके आते ही तानाजीने उसकी ओर पृच्छापूर्ण दृष्टिसे अवलोकन किया। इसपर उसने कहा कि, "राजासाहब यहाँ नहीं हैं, और न स्वामीजी ही हैं। कब कहाँ गये, इसका कुछ पता नहीं लगता।" इसके बाद फिर उसने कहा कि, "मेरी उस झोपड़ीके पास सिर्फ मेरा भाई बैठा था; और पहरेदार सब जगह जैसेके तैसे अपना काम कर रहे हैं। मैंने सबसे पूछा कि, स्वामीजी कहाँ गये, पर किसीको मालूम ही नहीं। इसके बाद फिर मैंने राजासाहबको पूछा, तो उनके विषयमें भी यही खबर लगी कि, वे वहाँ नहीं है।" बस, इतना ही समाचार आकर उसने बतलाया। तानाजी क्षणमात्र सचित ही रहे। हमारी तरफसे कोई खबर नहीं आई थी, इसलिये राजासाहब बीजापुर तो नहीं चले गये? यह सशय उनको उपस्थित हुआ, साथ ही यह प्रश्न भी उनके मनमें आया कि, मान लो, वे बीजापुर ही चले गये, तो अब हमको क्या करना चाहिये? तानाजीको यह विश्वास था कि, राजासाहब हमारे बाद बीजापुर अवश्य आ पहुँचेंगे। वे कभी चूक नहीं सकते। पर स्वामीजी भी स्थानपर नहीं हैं, यह क्या बात है? मुख्य स्थानपर किसी न किसी एकको तो रहना ही चाहिये, सो दोमेंसे एक भी नहीं, यह क्या मामला है? तानाजी बड़े चक्करमें पड़े, परन्तु तुरन्त ही इस बातके सोचनेमें लग गये कि, ऐसी दशामें अब आगे क्या करना चाहिये। वे जो कुछ समाचार बीजापुरसे लाये थे, वे ऐसे थे कि, उनको सुनकर राजासाहबको बड़ा आनन्द हुआ होता, और वे तुरन्त ही कोई न कोई कार्यवाही आगे करनेको तैयार हो गये होते। इधर नानासाहबके मनमें था कि, राजा शिवाजी, जहाँतक शीघ्र हो सके, हमको

सुल्तानगढ़पर चढ़ाई करनेकी आज्ञा देवें, तो बहुत अच्छा हो। क्योंकि वर्तमान अराजक-अवस्थामें सुलतानगढका किला बातकी बातमें हस्तगत किया जा सकेगा। राजासाहब यदि यहाँ होते, तो इस उपयुक्त समयका तुरन्त ही पूर्ण लाभ उठाया जा सकता था, पर वे यहाँ मौजूद ही नहीं है, यह बडे दुर्भाग्यकी बात है। नानासाहबको पहले ही इस बातका बड़ा उत्साह था कि, प्रथमारम्भमें ही हमारे हाथसे राजा शिवाजीको ऐसी कुछ मदद होनी चाहिये, और उसके लिये यह अवसर भी अच्छा आ गया था, पर क्या कहें, राजासाहब हैं ही नहीं। इसके सिवाय एक बात और भी थी। वह यह कि, यहाँका यह काम करनेके बाद नानासाहबको बीजापुर भी शीघ्र ही जाना था, क्योंकि वहाँ जो जो घटनाएँ हुई, और उनके साथ जो जो प्रतिज्ञाएँ नानासाहबने कीं, उन सबका उन्हें वहाँ जाकर पूरा करना था। परन्तु जब उन्होंने सुना कि, न राजासाहब ही यहाँ हैं, और न स्वामीजी ही, तब उन्हें बड़ी निराशा हुई और वे बडे उदासीनसे दिखाई दिये।

हाँ, तानाजीराव अवश्य ही निराश नहीं हुए। उनका मस्तिष्क बराबर काम कर रहा था। राजासाहब और स्वामीजी, दोनों एक साथ ही कहाँ चले गये? शायद किसी गुप्त मन्त्रणामें हों, क्योंकि कहीं जानेका तो यह मौका था नहीं। परन्तु इस समय मन्त्रणा भी क्या करते होंगे? कोई अनपेक्षित संकट तो नहीं आ गया कि, जिसके कारण दो-चार दिनके लिये उन्हें अज्ञातवास स्वीकार करना पड़ा हो? ऐसी ही कुछ सम्भावना जान पडती है। तानाजीको यह मालूम ही था कि, हम लोगोंको कारणवश कई-कई दिनतक भुँहारेके अन्दर देवीजीके मन्दिरमें रहना पडा है, और ऐसे मौकोंपर बाहरके लोगोंको इस विषयमें जरा भी खबर नहीं रह सकती। इसलिये उन्होंने सोचा कि, शायद ऐसा ही कुछ मामला हो—स्वामीजी और राजासाहब, दोनों ही शायद भवानी माताके मन्दिरमें अज्ञातरूपमें रहते हों। लेकिन फिर उन्होंने सोचा कि, यदि ऐसा होता, तो हमारे इस आदमीको तो अवश्य मालूम हो जाना चाहिये था, क्योंकि यह हमारे पक्के विश्वासका आदमी है। अतएव,

सब सोच समझकर तानाजीने यही निश्चय किया कि, राजासाहब और स्वामीजी सचमुच ही आजकल यहाँ नहीं हैं, अवश्य ही वे कहीं बाहर गये हैं।

परन्तु, अब हम इनको तो यहीं विचार करनेके लिये छोड़ दें; और इधर राजासाहबके यहाँ—इन लोगोंके बीजापुर चले जानेके बादका—हालचाल देखें। पाठकोंको याद होगा कि, पिछले एक परिच्छेदमें, जब राजा शिवाजीको नानासाहबके बीजापुरमें अचानक गायब हो जानेका समाचार मिला था, तब अत्यन्त चिन्ताक्रान्त होकर उन्होंने स्वामीजीके आगे यह हठ पकड़ा था कि, हम भी बीजापुर अवश्य जायँगे, और वहाँ जाकर देखेंगे कि, हमारे साथी वहाँ किस सकटमें पड़ गये हैं। उस समय स्वामीजीने उनको बीजापुर जानेसे मना किया था। उसके आगे फिर उनका क्या हालचाल रहा, सो अब देखना चाहिये। वास्तवमें राजा शिवाजीका पहले हीसे यह व्रत था कि, संकटके समय हम अपने साथियोंको छोड़ेंगे नहीं। अतएव जब तानाजी इत्यादि लोगोंका बीजापुरसे फिर बहुत दिनतक कोई समाचार नहीं आया, तब उन्होंने स्वाभाविक ही यह हठ पकड़ा कि, हम वहाँ स्वयं जाकर देखेंगे कि, हमारे साथियोंका क्या हाल है; और यदि उनपर कोई ऐसा ही भयंकर सकट आया होगा, तो उसको दूर करनेका उद्योग करेंगे; और इस प्रकार उनके भय और दुःखमें हम भी कुछ भाग लेंगे। सत्रह या अठारह वर्षकी अल्हड़ अवस्थामें इस प्रकारकी जिद होना एक स्वाभाविक बात है! जिन लोगोंसे हमको कुछ कार्य करा लेना है, उनको या तो हमें उनके संकटसे छुड़ाना चाहिये, अथवा कमसे कम यही बात उनके अनुभवमें ला देनी चाहिये कि, हम भी उनके दुःखमें शरीक हैं। निस्सन्देह ये विचार उदारतापूर्ण हैं; पर कार्यकौशलपूर्ण नहीं। जो हो; पर ऐसे विचार कितने ही नवयुवकोंके हृदयमें उस उम्रमें आते अवश्य रहते हैं। सो शिवाजीके समान उत्साही नवयुवकके मनमें भी उनका आना स्वाभाविक बात थी, परन्तु स्वामीजी उनके साथ एक अत्यन्त गम्भीर, विचारशील और कार्य-नीतिकुशल व्यक्ति थे। अतएव उनको

स्पष्ट ही जान पड़ा कि, ऐसे समयमे राजासाहबको अकेले बीजापुर जाने देना मानो अपने गुरुवर्य (श्रीसमर्थ रामदास स्वामी) की सम्पूर्ण मन्त्रणाका भग करना ही है। इसलिये उन्होने सोचा कि इस समय राजासाहबकी चित्तवृत्तिको उपदेशके द्वारा, अथवा अन्य चाहे जिस उपायसे, ठीक रास्तेपर अवश्य ही लाना चाहिये। उनको राजकौशल और कार्य-कौशलकी शिक्षा देनी चाहिये। राज्यकार्यका बन्धान और सन्धान करनेके लिये प्रत्येक अवसरपर अपनी जानको खतरेमे डालनेसे कोई लाभ न होगा। यही नहीं, बल्कि अनेक कार्य ऐसे होते हैं कि, जिनको हम स्वय कर सकते हैं, परन्तु फिर भी वे, मौका देखकर, दूसरोंहीसे कराने पड़ते हैं। इससे लोगोंमे विश्वास और प्रेमकी वृद्धि भी होती है। हॉ, इसमे सन्देह नहीं कि, यदि उनपर कोई भयकर सकट आजाय, तो उनकी रक्षा अवश्य करनी चाहिये, पर इसके लिये स्वय अपनी जानको ही खतरेमें डालनेकी आवश्यकता नहीं। युद्धमे सेनाध्यक्ष यदि प्रत्येक सैनिकके लिये दौड़कर उसकी रक्षा करने लगे, तो उसके द्वारा कोई कार्य ही नही हो सकता। हॉ, जो अपनी जानपर खेलकर लड़े, और लड़ाईमे टिके, उसको उत्साह अवश्य दिलाना चाहिये, और अपना व्यवहार इतना उदारतापूर्वक रखना चाहिये, जिससे प्रत्येक सैनिकके मनमे यह पूर्ण विश्वास हो जाय कि, हम किसी बड़े उद्देश्यके लिये अपनी जान दे रहे हैं, और हमारे बाद हमारे बाल बच्चोंका पालन करनेमें हमारा स्वामी कभी कोई बात उठा नहीं रखेगा। इसके सिवाय सैनिकोंके मनमे यह विश्वास भी रहे, तो कोई हानि नहीं कि, जब कोई ऐसा ही भयकर मौका हमारे ऊपर आजायगा, तब हमारा मालिक हमारे लिये प्राण भी देनेको तैयार रहेगा। बस, इस प्रकारके भाव यदि सहायकों और नौकरोंके मनमें रहेंगे, तो सब काम होजायगा। अस्तु। इस तरहकी अनेक बातें स्वामीजीने शिवाजीको समझाई पर उनके चित्तका विषाद और बीजापुर जानेका उनका आग्रह दूर नहीं हुआ। इसलिए जब स्वामीजीने सोचा कि, इस प्रकार काम नहीं चलेगा, किन्तु इसके लिये किसी ऐसे उपायकी योजना करनी चाहिए कि, जिससे

इसका चित्त ही उस ओरसे हटकर किसी दूसरी ओर लग जाय। अतएव स्वामीजीने उसके लिये यह योजना की :—

राजा शिवाजीने अवतक समर्थ श्रीरामदास स्वामीके विषयमें अनेक बातें अनेक वार सुन रखी थीं; और अपने मनमें यह निश्चय कर रखा था कि, उस समय स्वामी ही हमारे गुरु हैं! इधर श्रीधर स्वामीसे जबसे उनकी प्रत्यक्ष भेंट हुई थी, तबसे तो उनके मनमें इस बातकी उत्सुकता और भी अधिक बढ गई थी कि, जिस प्रकार होसके, श्रीरामदास स्वामीसे मिलकर उनकी गुरुदीक्षा लें, अथवा कमसे कम उनके एक वार दर्शन ही होजायँ। इस कारण प्रायः उनका मन सज्जनगढ़ अथवा परलीकी ओर ही लगा रहता था; क्योंकि समय उसी तरफ जंगलोंमें रहते थे। शिवाजीकी बड़ी इच्छा थी कि, एक वार समर्थके दर्शन होजायँ; और हम उनके चरणोंपर मस्तक रखें। इसके लिए उन्होंने एक वार प्रयत्न भी किया, पर सफल नहीं हुआ। क्योंकि जब कभी वे उस ओर समर्थके दर्शनोंको जाते, तभी उनको चारों ओर यही खबर लगती कि, "अभी समर्थ यहाँसे कहीं चले गये।" मतलब यह कि, समर्थ कभी एक जगह नहीं रहते थे। उन घने जंगलों और पहाड़ोंमें बराबर विचरण किया करते थे, और कभी यदि कुछ समयके लिए एक जगह रहते भी, तो गुफाओंके अन्दर, जहाँ मनुष्यको उनका पता पाना अत्यन्त दुर्घट था। बस, इसी कारण कई वार प्रयत्न भी करनेपर भी शिवाजीको उनके दर्शन नहीं हुए, और उनको खाली हाथ लौटना पड़ा। समर्थ श्रीरामदास स्वामीकी प्रसिद्धि उस समयतक विशेष नहीं हुई थी, पर उनका उद्देश्य यह था कि, किसी न किसी क्षत्रिय वीरके हाथसे मराठा-राज्यकी स्थापना कराई जाय, और गौ-ब्राह्मणोंको इस समय जो कष्ट मिल रहा है, उससे उनका छुटकारा कराया जाय, अतएव वे इस बातकी प्रतीक्षामें थे कि, क्या कोई ऐसा क्षत्रिय वीर उत्पन्न हो सकता है, और यदि शायद कहीं उत्पन्न होगया हो, तो उसको इन विचारोंपर लाया जाय, और इसीलिये उन्होंने सारे महाराष्ट्रमें अपने शिष्य-सम्प्रदायको गुप्त रूपसे फैलानेका उद्योग आरम्भ कर दिया था।

ऊपर ऊपरसे तो श्रीसमर्थके एक मामूली वैरागीकी तरह विक्षिप्त और अनजानसे दिखाई देते थे, पर उनके भीतरी उद्देश्य क्या थे, सो उनके खास खास शिष्योंको ही मालूम था। वे खास-खास शिष्य भी सदैव उनके पास नहीं रहते थे। पर पट्टशिष्य कल्याण स्वामीको छोड़कर और बाकी सब, उन्हींके जोडके शिष्य सारे महाराष्ट्र भरमें फैले हुए थे। उनका यह काम था कि, जगह जगह हनुमानजीकी उपासनाका प्रचार करें, मार्केकी जगहोंपर उस शक्तिदेव—बजरंग बली—के मन्दिर स्थापित करें, वहींपर अखाड़े खोलकर उनसे शारीरिक शक्ति बढ़ाई जाय, और कथा-कीर्तनके द्वारा लोगोंके अन्दर धार्मिक और नैतिक भाव भरे जायँ। जो लोग वहाँ जमा हुआ करें, उनपर पूरा पूरा ध्यान रखा जाय, और उनमेंसे जो लोग अपने सम्प्रदायमें आनेयोग्य हों, उनको मिला लिया जाय। श्रीसमर्थका वह सम्प्रदाय केवलमात्र परमेश्वरभक्ति, रामभक्ति अथवा हनुमानभक्तिका ही न था, बल्कि साथही साथ उसका और भी कोई गहरा उद्देश्य था। (आजकल भी महाराष्ट्रमें वह सम्प्रदाय है, पर ऊपरका आचरणमात्र रह गया है, भीतर पोला है। जैसे किसी दानेमेंसे अनाजका अंश निकल जावे और छिलकाभर रह जावे) वह गहरा उद्देश्य यही था कि, सम्पूर्ण महाराष्ट्रमें एकता स्थापित की जावे, और मुसल्मानोंके द्वारा आज जो गौ-ब्राह्मण सताये जारहे हैं, उनका दुःख किसी वीर क्षत्रियके द्वारा, किसी महाराष्ट्र वीरके द्वारा, दूर कराया जाय। श्रीधर स्वामीके समान सन्यासी इसी उद्देश्यसे श्रीसमर्थके विचारोंका बीज चारों ओर बोरहे थे। इस प्रकार कार्य करते हुए राजा शिवाजी श्रीधर स्वामीके दृष्टिपथमें आये, और उन्होंने समझ लिया कि, समर्थके उद्देश्यके अनुसार यदि महाराष्ट्रमें किसीके हाथसे स्वराज्य संस्थापना हो सकती है, तो वह यही व्यक्ति है। और बस, अपनी एक खास रीतिमें उन्होंने शिवाजीको पकड़ा, और धीरे धीरे उन्होंने उनको अपने पन्थमें खींचकर उपदेश करना प्रारम्भ किया। राजा शिवाजीकी मनोवृत्ति बालपनसे ही इस विचारकी ओर कुछ झुकी हुई थी, अतएव श्रीधर स्वामीका उपदेश उनपर पूरा-पूरा काम कर

गया, और श्रीधर स्वामीकी वाणीमें वह गुण भी था कि, उनके उपदेश-का प्रभाव तुरन्त ही होता था। राजा शिवाजीको मुगलोंकी सेवासे स्वाभाविक ही घृणा थी। यही नहीं, बल्कि उनका यह सदैवका ही भाव था कि, ये विदेशी लोग चोर हैं, जो हमारे घरमें घुसकर हमारी छातीपर मूँग दल रहे हैं। इसलिये इनको जबतक भगा न दिया जाय अथवा जबतक हम स्वयं उनकी छातीपर सवार न होजायँ, तबतक एक क्षण भी हमको आनन्दमें न रहना चाहिए। इस कारण श्रीधर स्वामीके विचार उनके अन्दर ऐसे अंकुरित हो उठे, जैसे किसी उत्तम कमाई हुई भूमिमें बोये हुए उत्तम बीज अंकुरित हो उठें। बीज जब एक बार इस प्रकार अंकुरित हो उठे, तब उनको वैसी ही फलसिद्धिकी भी आशा होने लगी; और यह बात पाठकोंको अबतकके कथानकसे मालूम ही होगई होगी। अस्तु राजा शिवाजीका गृहशिक्षण दादोजी कोंडदेवके हाथमें था, और वे अपने तौरपर उक्त शिक्षा उनको देते ही रहते थे, पर राजासाहबका ध्यान उक्त शिक्षाकी ओर विशेष रूपसे कभी भी नहीं था। पहलेसे ही उनकी चित्तवृत्ति कुछ दूसरी थी, और वह उसी शिक्षा-की ओर थी कि, जो स्वामीजीसे इस समय उनको प्राप्त होरही थी। वे कुछ अपने लंगोटिये साथियोंको जमा करते, उनको लेकर किसी ओर उपद्रव मचानेको निकल जाया करते, यवनोंसे हार्दिक द्वेष करते, और कुछ न कुछ अपना 'स्वभाव दिखलाते। दादोजीका सारा उपदेश केवल व्यवहारिक दृष्टिका था। उनका तात्पर्य यही था कि, शिवाजी अपनी जागीरको सम्हालें, बादशाहकी सेवा करके पिताने जो नाम पाया है, उसको न सिर्फ कायम रखनेका ही, बल्कि उसी प्रणालीपर चलकर उसको और कुछ बढानेका भी प्रयत्न करें। ऐसा कोई उपद्रव न करें, जिससे पिताको कष्ट हो; और उनपर तथा अपने ऊपर भी बादशाहका कोप हो। परन्तु ऐसा उपदेश शिवाजीके समान उच्छृंखल वृत्तिवाले और स्वाभिमानी युवकको पसन्द कैसे आसकता था? अतएव सदैव ही उनका यह खयाल रहता था कि, उक्त उपदेश इस कानसे सुन लेने और उस कानसे निकाल देनेके ही योग्य है। इसके सिवाय, जब कभी

शिवाजीके मुखसे यवनोंके लिये कोई घृणासूचक वचन निकलते, तब दादोजी कहते, "भैया, ऐसा कहनेसे क्या काम निकलेगा ? हमारे हाथसे उनका पराजय कैसे होसकता है ?" इसी प्रकारके और भी कुछ उद्गार दादोजीके मुखसे कभी कभी निकलते थे, अतएव उद्गारोंका भाव शिवाजी यही लेते थे कि, चूँकि मुसल्मानोंका पराजय किसीके हाथसे हो नहीं सकता, और इसी कारण दादोजी कहते हैं कि, ऐसे झगड़ेमें मत पड़ो, लेकिन अगर किसीसे वैसा हो सके, तो उनका पराजय करनेमें कोई हानि नहीं—करे, तो अच्छा ही है। यही आशय दादाजीके उक्त वचनोंसे शिवाजी निकालते थे—कमसे कम अपने व्यवहारमे वे अपने गुरुदेवके उपर्युक्त आशयको ही चरितार्थ करनेका प्रयत्न करते थे। जो हो। श्रीधर स्वामीका उपदेश उनके बिल्कुल अनुकूल था।

उन्नीसवां परिच्छेद

समर्थकी ओर जाते हुए।

किसी वस्तुके प्राप्त होनेकी अत्यन्त अभिलाषा है, और वह वस्तु हमको प्राप्त नहीं हो रही है, परन्तु उसका महत्व फिर भी दिनपर दिन हमारी दृष्टिमें बढ़ता ही जा रहा है, अब ऐसी दशामे उस वस्तुके प्राप्त करनेकी हमको कितनी उत्सुकता होगी, सो सभीको मालूम हो सकती है। बस, राजासाहबकी भी उस समय ऐसी ही कुछ अवस्था हो रही थी। श्रीसमर्थ रामदास स्वामीकी धर्मनिष्ठा, उनसे पुण्य-प्रताप और उनकी निस्पृहताके विषयमे उन्होंने अनेक बार अनेक बातें सुन रखी थीं, इसके बाद जब उनके एक शिष्य, श्रीधर स्वामीके साथ वे इतने दिन रहे, तब तो श्रीसमर्थके गुण उनके सामने और भी प्रत्यक्ष रूपसे प्रकट हो गये। फिर उन्होंने अपने उस मुख्य सद्गुरुसे मिलनेके लिये कई बार प्रयत्न भी किया, पर उनको सफलता प्राप्त नहीं हुई। श्रीधर स्वामी श्रीसमर्थके रचे हुए मराठी श्लोक और उनकी ओवियाँ (एक छन्द विशेष) उनको प्राय सुनाया करते थे। उनमे भरा हुआ

गम्भीर भाव और स्वधर्माभिमान जब शिवाजीके मनमें आता, तब वे बिल्कुल तल्लीन हो जाया करते थे; और श्रीसमर्थके दर्शनोंकी उत्सुकता उनके हृदयमें और भी विशेष रूपसे प्रदीप्त हो जाया करती थी। ऐसी दशामें, श्रीधर स्वामीने जब देखा कि राजा शिवाजी अपने साथियोंकी चिन्तामें बीजापुर जानेके लिए व्यग्र हो रहे हैं, तब उन्होंने श्रीसमर्थकी ही तरफ एक बार हो आनेकी चर्चा छेड़ी। इधर शिवाजी बहुत दिनोंसे स्वामीजीसे स्वयं ही आग्रह कर रहे थे कि, एक बार किसी प्रकार श्रीसमर्थके दर्शन हमको करा दीजिये। उस समय स्वामीजी यह कह दिया करते थे कि, श्रीसमर्थके दर्शन रिक्त हस्तसे करना तुम्हारे लिए उचित न होगा। उनको रुपये पैसेकी तो कुछ भी आवश्यकता नहीं, किन्तु कोई प्रान्त अथवा किला हस्तगत करके वही उनको गुरु-दक्षिणाके तौरपर अर्पण करना चाहिये। ऐसा जब तुम करोगे, तभी उनके दर्शनोंकी सार्थकता होगी। इसलिये जबतक तुम ऐसा न कर लो, तबतक उनके दर्शनका प्रयत्न करनेसे कोई तात्पर्य नहीं। यह बात राजासाहबके मनमें गड़ गई थी, परन्तु अबतक कोई किला अथवा प्रान्त यवनोंके हाथसे हरण करने योग्य कोई तैयारी उनके पास नहीं थी। इतने दिन बीत गये, और श्रीसमर्थके दर्शन उनको नहीं हो सके। इधर श्रीधर स्वामीने सोचा कि, इस समय शिवाजीका बीजापुर जाना ठीक नहीं है; और यह बीजापुर जानेके लिए बिल्कुल तैयार है। ऐसी दशामें उन्होंने यह विचार किया कि, अब इसकी चित्त-वृत्तिको किसी दूसरी ओर—और सो भी किसी ऐसे व्यक्तिकी ओर कि, जिसका आकर्षण इसपर विशेष हो—खींचना चाहिये। ऐसा किये बिना बीजापुर जानेकी इसकी धुन नहीं छूटेगी। बस, यही सोचकर उन्होंने राजासाहबके सामने यह बात निकली कि, चलो इस समय समर्थके दर्शन, यदि हो सकें तो करा लावें—इस समय उनके दर्शन होनेकी कुछ सम्भावना है। शिवाजीने जब यह सुना कि, इस समय उनके दर्शन होनेकी सम्भावना है—कमसे कम उनके निवाससे पवित्र होनेवाली रमणीय भूमिके दर्शन होनेकी सम्भावना है—तब उनको भी बहुत आनन्द हुआ। उस समय उनके

मनमें एक प्रकारका यह आशाकुर भी उत्पन्न हुआ कि, अबकी बार श्रीसमर्थके शिष्य, स्वय श्रीधर स्वामी हमारे साथ रहेंगे, ऐसी दशामें बहुत सम्भव है कि, उनके दर्शन अवश्य ही हो जायँ। फिर भी उनके चतुर मनमें यह बात आये बिना नही रही कि, शायद हम बीजापुर जानेका हठ कर रहे थे, इसी कारण स्वामीजीने यह युक्ति निकाली हो, और हँसते-हँसते उन्होंने अपने मनका यह भाव स्वामीजीसे प्रकट भी किया। इसपर उन्होंने भी कहा—शिवबा, सचमुच ही मैं चाहता हूँ कि, तुम बीजापुर इस समय न जाओ। तुम्हारे हाथमे न जाने कितने महत्वपूर्ण कार्य होनेको हैं। मैं तो एक निमित्तमात्र हूँ। समर्थकी दिव्य-दृष्टिने ही तुमको अपने ध्यानमें ला रखा है। इसलिये तुम्हारा अपनी जान खतरेमें डालना मानो उनकी सब आशाओंको विफल करना है। वे तपस्या कर रहे हैं, सो कुछ अपने लिए पुण्यशक्ति प्राप्त करनेके लिए नहीं, किन्तु इसमे उनका उद्देश्य यही है कि, उसका उपयोग तुम्हारे कार्यमें हो—अर्थात् तुम्हारे हाथसे बड़ी-बड़ी दिग्विजय कराकर सम्पूर्ण मराठामात्रको एक कर दिया जाय, और एक मराठाराज्य स्थापित किया जाय। बस, यही उनका एकमात्र उद्देश्य है। इसको सिद्ध करना केवल तुम्हारे हाथमें है। तपस्या कितनी कठोर है, सो देखनेकी तुमको इच्छा है। वह इच्छा यदि अभी पूरी की जायगी, तो तुमको सविशेष आनन्द होगा, और तुमको यह भी विश्वास हो जायगा कि, तुम्हारे हाथसे कैसे कैसे बड़े पराक्रम होंगे। बस, इसीलिए मैं तुमसे वहाँ चलनेके लिए कहता हूँ। इस मौकेपर तुम्हारी और उनकी प्रत्यक्ष भेंट चाहे न हो, पर उनके दर्शन मैं तुम्हें अवश्य करा दूँगा।"

स्वामीजीने इस प्रकार जब सरलतापूर्वक सब कुछ बतला दिया, तब राजासाहबको भी उनका कथन सयुक्तिक जान पड़ा, और फिर बीजापुर जानेका आग्रह छोड़ दिया तथा समर्थके दर्शनोंकी इच्छासे वे दोनो परलीके पर्वतोंकी ओर चल दिये। चलते समय इस बातकी उन्होंने सावधानी रखी कि, किसीको यह मालूम न होने पावे कि, हम कहाँ जाते हैं। उनकी गुफा कन्दराओंमें जिस प्रकारका पहरा सदैव रहता

था, वैसा ही कायम रहा। गुफाके ठीक मुखपर और मन्दिरके नुक्कड़पर जिनका पहरा था, उनको अवश्य यह मालूम था कि, स्वामीजी और राजासाहब किधर गये हैं। अन्य लोग सब स्वामीजीकी सदैवकी स्थिति-से पूर्ण परिचित थे। वे जानते थे कि, वे कई-कई दिनतक भुँहारेके बाहर भी नहीं निकलते। भीतरके एक सोतेपर ही स्नान इत्यादि करके समाधि लगाकर बैठ जाते हैं। ऐसी ही हालतमें अब भी वे होंगे। इस प्रकारका खयाल बाहरके तथा घुड़साल इत्यादिके सब पहरेदारोंका था। राजा शिवाजीके विषयमें लोगोंका खयाल था कि, अब महीना-महीना, पन्द्रह पन्द्रह दिनतक आजकल वे आते ही नहीं; फिर एकदम किसी दिन आ खड़े होते हैं। उधर कोकनकी तरफ अथवा अन्य कहीं, जब सवारी लूटपाट करने चली जाती है, तब यहाँतक कि घरके लोगोंको भी उनका महीनों कुछ पता नहीं चलता। इसी प्रकार अब भी कहीं चले गये होंगे। सारांश यह कि, कुछ खास खास लोगोंके अतिरिक्त उन दोनोंका पूरा पता किसीको नहीं था, और तानाजीको भी उनका समा-चार ऐसे ही खास-खास लोगोंसे प्राप्त हुआ।

इधर स्वामीजी और राजासाहब अपने गुप्त वस्त्र पहनकर घोड़ोंपर सवार होकर समर्थकी ओर चल दिये। यद्यपि घोड़ेपर आरूढ़ होनेमें बड़े होशियार थे, फिर भी उन्होंने ऐसा स्वांग किया कि, वैरागीकी जात, भाड़ेके टट्टूके अतिरिक्त और किसी भारी घोड़ेपर बैठना क्या जाने? इधर राजा शिवाजीने भी ऐसा भेष धारण किया कि, जिसको कोई पहचान न सके। यह मालूम ही न हो सके, ये कौन हैं, कहाँ जा रहे हैं। रास्तेमें चलते हुए उन दोनोंमें बहुतसी बातें हुई—देखो, हमारी हिन्दू प्रजाकी कितनी बुरी अवस्था है, इसको फिर पूर्वावस्थापर लानेके लिये किन-किन उपायोंकी योजना करनी चाहिये, और उनकी योजना करते समय द्रव्य भी बहुतसा खर्च होगा सो कहाँसे लाया जाय? यवनो-का राज्य आज, कमसे कम दो-तीन सौ वर्षसे, दक्षिणकी तरफ प्रबल हो रहा है, और प्रजा काफी पीड़ित हो रही है, फिर भी लोगोंको उसीमें आनन्द मालूम होता है। नानासाहबके पिता रंगराव अप्पाने अपने

लडकेको कैसी शिक्षा दी, और जब उसने सुनी नहीं, तब उससे ऐसे कटुवचन कहे कि तुम्हारा मुँह भी नहीं देखेंगे। बस, ऐसे ही लोगोंकी अधिक सख्या है। ऐसी दशामें सरदार लोग तो हममें आकर शामिल नहीं हो सकते, उनकी आशा रखना केवल दुराशामात्र है। हाँ, नव-युवकोंसे सहायता मिल जाय, तो भले ही! अन्यथा विशेषकर हम लोगों-को, गरीब-गुरबा लोगोंके ही सहारे सब करना होगा, और कष्ट भी इन्हीं लोगोंको विशेष है। बड़े लोगोंको क्या! शायद किसीको ही कष्ट हो, बाकी तो सब आनन्दमे हैं। इसके सिवाय सरदारोंमे फूट और ईर्षाद्वेष भी बहुत है। यदि किसीको इस यावनी राज्यसे कष्ट भी होता है, तो अन्य लोग उसका कुछ अनुभव नहीं करते। सभीका केवल इसीपर ध्यान है कि, हमारा और हमारे खान्दानके लोगोंका दरबारमें रुतबा कैसे बढे, इसलिये इस बातकी कोई सम्भावना नहीं कि, परस्परमे एक दूसरेको मदद करें, अथवा सब मिलकर, राष्ट्रीय भावसे, स्वराज्य-की स्थापनामें भाग लें। ऐसी दशामे हमारे समान लोग ही जब, इनकी सहायताकी परवा न करते हुए, अपने बलपर कुछ कर दिखलाव, और इनको मालूम हो जाय कि, सचमुच ही हम कुछ पराक्रम कर रहे हैं, हमको सफलता प्राप्त हो रही है, और बादशाहकी तरह हम भी दरबार सजाकर किसीको जागीर, किसीको इनाम, दे रहे हैं, तब शायद ये सर-दार लोग भी हममें आकर मिलने लगेंगे। और यदि नहीं आवेंगे, तो हमको अपने नवीन ही सरदार बनाने पडेंगे, इत्यादि, अनेक प्रकारकी बातें उनमें हुई। स्वामीजीने अपना अनेक वर्षोंका अनुभव इस समय राजा शिवाजीके सामने प्रकट किया। श्रीधर स्वामी और राजा शिवाजीका परिचय हुए आज इतने दिन हो गये, पर आज स्वामीजीने जितने मुक्त हृदयसे बातचीत की, वैसी अभीतक कभी नहीं की थी। आज वे आनन्दमे निमग्न होकर खूब दिल खोलकर बातचीत कर रहे थे। मैंने आज तक कौनसे प्रान्तोंमे किस-किस तरहसे भ्रमण किया, कैसे-कैसे लोगोंसे भेंट की, उनसे इस विषयमें कैसी कैसी बातें निकली, फिर उनकी ओरसे कैसे कैसे निराशा-

जनक उत्तर मिले, इत्यादि सब अपना अनुभव उन्होंने बतलाया। उन्होंने कहा कि, इस राज्यके कारण तकलीफ तो सबको है, इसकी भयंकरता सबको ही भास रही है, पर इसका प्रतिकार कैसे किया जाय, सो किसीको नहीं सूझता। जहाँ-जहाँ मैंने देखा, लोगोंका यही भाव है कि, इसका प्रतिकार ही हो नहीं सकता—यह जैसा है, वैसा ही चलेगा। यह भाव तो दीनहीन और कृषक समाजका है; पर बड़े बड़े लोगोंमें यह भाव भी नहीं। उनका तो लक्ष्य यही है कि, सरकारकी सेवा करते रहो; और उसको मर्जीसे जो कुछ टुकड़े प्रसादके तौरपर मिल जाय, उन्हींपर सन्तोष करो। हां, मौका देख देखकर, अपनी, और अपने लड़कोंकी, उन्नति जिस प्रकार होती हो, करते रहो। कितने ही सरदारोंका तो यही उद्देश्य रहता है कि, दूसरे दूसरे सरदारोंको जिनका रुतबा दरबारमें उनसे अधिक है, नीचा दिखाकर अपना ही प्रभाव बढाते रहनेका विशेष प्रयत्न किया जाय, और रातदिन वे इसीमें लगे भी रहते हैं। ऐसी दशामें यह आशा रखना, कि इन लोगोंसे हमको कुछ मदद मिलेगी, बिल्कुल दुराशामात्र है। सारे महाराष्ट्रमें, कर्नाटककी हदतक, मैं घूमते घूमते गया हूँ, और मैंने जगह जगह छोटोंसे लेकर बड़ोंतकके सबके मन टटोले हैं; परन्तु सब जगह यही देखा है कि, दीनहीन और किसान बेचारे तड़फड़ा रहे हैं, परन्तु निराशाके कारण चुपके अपने दिन बिता रहे हैं, कोई उनको रास्ता बतलानेवाला नहीं। इधर बड़े लोगोंकी नजर सरकारकी ओर है। जिसे देखिये, वही इस प्रयत्नमें हैं, कि किसी तरह सरकारमें हमारा प्रवेश हो जाय, कोई बड़ी पदवी अथवा ओहदा मिल जाय, न हो, दरबारमें ही बैठनेकी इज्जत मिल जाय। सच्ची राजभक्तिके उदाहरण भी बहुत कम है, बहुत ही कम है—हजारमें कोई एक आध, नहीं तो "जी हुजूर" वालोंकी ही भरती विशेष है—किसी प्रकार राजभक्तिका ढोंग दिखलानेमें हमारा स्वार्थ सधता है, तो उसको साध लेना चाहिये—बस, यही उनका भाव है। स्वामीजीने अनेक उदाहरण दे देकर अपना यह सारा अनुभव शिवराजको बतलाया। कई ऐसे सुन्दर सुन्दर उदाहरण दिये कि, जिनका प्रत्यक्ष उन्होंने अपनी आंखोंसे देखा

था। इस प्रकार अपना सारा अनुभव बतलाकर वे उनके मनमें इस बातके जमानेका प्रयत्न करते रहे थे कि, इन बड़े लोगोंमें कुछ भी आशा नहीं, इनकी आशा रखना बिलकुल अनुचित और एक प्रकारसे खतरेकी बात है—हमको जो कुछ करना है, दीनहीन मावले, किसान, हेटकरी, रामोशी इत्यादि ग्रामीण लोगों को ही एकत्रित करके, उनकी सहायतासे करना चाहिए। इस प्रकार बातें करते-करते फिर स्वामीजीने अपनी यात्राका भी बहुत सा मनोरञ्जक और उपदेशप्रद वृत्तान्त बतलाया। समर्थ रामदास स्वामीके अनेक चमत्कार भी बतलाये। उन सबको सुनकर शिवराजको श्रीधर स्वामीके साहस और समर्थ सम्बन्धी उनकी श्रद्धाका सच्चा परिचय मिल गया, और अत्यन्त आश्चर्य तथा पूज्य-भावसे उनका मन परिपूरित हो गया। बड़े ध्यानसे, दत्तचित्त होकर, वे सब वृत्तान्त सुनते रहे। और अन्तमें उनको ऐसा मालूम हुआ कि, समर्थके दर्शन हों, चाहे न हों, स्वामीके साथ इस यात्रामें भी हमको कुछ कम लाभ नहीं हुआ। महाराष्ट्रमें उस समय यादव, मोरे, इत्यादि कई बड़े-बड़े सरदार घराने थे, उन सबका उस समयका समाचार उनको मालूम हुआ। उक्त घरानोंमें उस समय जो लोग मौजूद थे, उन सबके चरित्र, उनके मत और उनकी नीति इत्यादि अनेक बातोंका ज्ञान उनको स्वामीजीसे प्राप्त हुआ। आज उनको श्रीधर स्वामीके हृदयका पूरा पूरा परिचय मिला, और अभीतक स्वराज्यसम्बन्धी उनके जिन विचारोंका उनको पता नहीं था, उनका भी आज उन्हें पता चल गया, और यह विश्वास उनका और भी दृढ हो गया कि, यदि, शिष्यत्व स्वीकार करें तो श्रीधर स्वामीके समान और समर्थके सदृश सद्गुरुका ही करें। इससे समर्थके दर्शनकी उत्कण्ठा उनके हृदयमें और भी अधिक बढ़ी।

इस प्रकार यात्राके दिन, कुछ मनोरञ्जक अनुभव ग्रहण करते हुए और कुछ पिछले अनुभवोंकी बातचीत करते हुए, वे मार्ग व्यतीत कर रहे थे। चलते-चलते एक दिन वे किसी एक गाँवके पास पहुँचे। धूपका समय हो चुका था, इसलिए स्वामीजीने महादेवजीके एक मन्दिरके पास,

बेलके वृक्षकी शीतल छाया देखकर, वहींपर अपना कम्बल बिछा दिया। नदीका तट था, अतएव शीतल वायु बह रही थी। भोजनका समय हो चुका था, इसलिए स्वामीजी बस्तीकी ओर गये। पिछली रात ऐसे ही एक वृक्षकी छायामें वे दोनों सोये थे, इसलिए पसीना आनेपर हवा लगनेके कारण राजासाहबके एक हाथमें दर्द पैदा हो गया था, साथ ही रातको उन्हें कुछ हरारत भी रही थी, अतएव स्वामीजी, उनको वहीं छोड़कर, आप आटा दाल इत्यादि मोल लानेके लिए बस्तीमें गये। नहीं तो नित्यका नियम यह था कि, स्वामीजी तो टिकनेकी जगहपर रहकर स्नान-सन्ध्या इत्यादिमें लग जाया करते थे; और राजा शिवाजी स्वयं जाकर आटा, दाल इत्यादि लाते थे। इसके बाद स्वामीजी भोजन तैयार करते और राजासाहबको खिलाते थे। परन्तु आज स्वामीजीने स्वयं ही उनको बाहर जाने नहीं दिया। वे शान्त पड़े थे, वहाँसे नदीके घाटपर दृष्टि पूरी-पूरी जारही थी। नदीमें जल अगाध भरा हुआ था। उसके उस पार भी एक बस्ती थी, और इसी पारकी तरह वहाँ भी मन्दिर था। उस मन्दिर और उसके घाटकी ओर स्वाभाविक ही उनकी नजर गई। इतनेमें एक विचित्र ही दृश्य उनको उस पार दिखाई दिया। उन्होंने देखा कि नदीसे एक ब्राह्मण, स्नान करके, अपने उन्हीं भीगे वस्त्रोंसे, हाथमें जलसे भरा हुआ लोटा लिये, मन्दिरकी सीढ़ियोंसे ऊपर चढ़ रहा है। अभी वह चार सीढ़ियाँ भी चढ़ने नहीं पाया था कि, नीचे-की ओरसे नदीमें न जाने क्या कुछ धोनेवाला एक आदमी दौड़ता हुआ उस ब्राह्मणकी ओर गया और उसके शरीरपर थूक दिया। यह देखते ही राजा शिवाजीके क्रोधकी सीमा न रही, उन्होंने सोचा कि यह है क्या बात? हम जो कुछ देख रहे हैं, यह सच है अथवा स्वप्न? उस वक्त वे पड़े हुए थे, सो तुरन्त उठ बैठे, और एकटक उसी ओर देखने लगे। देखते क्या है कि, वह ब्राह्मण क्रोधमें आकर कुछ कह रहा है, और वह थूकनेवाला व्यक्ति भी कुछ क्रोधमें और कुछ हँसते हुए उसको चिढ़ा रहा है। इतनेमें ब्राह्मण फिर नीचे उतरकर नदीमें पैठता है, और अच्छी तरह स्नान करके और लोटा भरकर फिर चढ़ने लगता है। इधर

वह दूसरा आदमी भी अपने धोनेके स्थानपर चला गया था। सो वहाँसे फिर न जाने क्या लेकर वह ब्राह्मणके पीछे फिर दौड़ता है, और अपने हाथमें जो कुछ ले आया था, उस ब्राह्मणके शरीरपर फेंक देता है, जिससे उसके शरीरके रोंगटे खड़े हो जाते हैं, और शरीर एकदम थर्रा उठता है। इधर राजासाहब यह सब दृश्य ध्यानपूर्वक देख रहे थे, उस ब्राह्मणका शरीर थर्राया, और उसके साथ ही उसका लोटा हाथसे छूट-कर उसके पैरपर गिरा, और ऐसा जान पड़ा, मानों उसके चोटसी लग गई, और ब्राह्मण व्याकुल होकर वहीं बैठसा गया। इधर वह दूसरा आदमी ब्राह्मणको कुछ-न-कुछ बक हो रहा था। राजा साहबने यह हाल देखा, और बड़े सन्देहमें पड़ गये कि, यह बात क्या है। जो कुछ भी हो—बात उनकी समझमें आगई, और एकदम इतना जोश उनके शरीरमें आगया कि, एक क्षणका भी विलम्ब न करते हुए वे एकदम वहांसे उठे, मानों उनको इस बातका भान ही न रहा कि, पिछली रात-को हमें ज्वर आया था—हमको ठण्डे, पानीमें नहीं जाना चाहिये, अथवा हमारे हाथमें दर्द है, तैर सकेंगे या नहीं, इत्यादि कोई भो प्रश्न उनके मनमें नहीं आये—उन्होंने अपने कपडे उतारकर तुरन्त ही लंगटा कसा, और अपनी तलवार आड़ी मुँहसे पकड़कर वे पानीमें कूद पडे। फिर वे, सामनेके घाटपर ब्राह्मणकी ओर बराबर अपनी नजर रखकर सीधे, तेजीके साथ, पानीको चीरते हुए आगे बढे। सामने बीचमें धारा बड़ी प्रखर थी, परन्तु उससे बचनेके लिए उन्होंने अपना मार्ग जरा भी नहीं बदला, और सीधे ही तैरते हुए घाटके पास पहुँचे। वहाँ जाकर देखते हैं, तो सचमुच ही जो सन्देह उनको हुआ था, वही ठीक था। स्नान करके जो व्यक्ति ऊपर चढ रहा था। वह बेचारा एक बुड्ढा ब्राह्मण था, और उसके शरीरपर थूकनेवाला एक कसाई था। फिर क्या कहना था—राजासाहबको इतना क्रोध आया कि, वे आपेसे बाहर हो गये। वे एकदम झपटकर सीढ़ियाँ चढ़ते हुए उस यवनके पास पहुँचे, और तलवारके ही वारसे उसको घायल करके नीचे गिरा दिया। ब्राह्मण बिलकुल बुड्ढा था। उसने ऊपरकी ओर देखा, तो

सामने तलवार उठाये हुए नवयुवक खड़ा है; और उसको सतानेवाला वह कसाई घायल होकर नीचे पड़ा है। ब्राह्मणने समझा कि, यह खड्गधारी पुरुष यहाँ कौन आ गया, जिसने उस यवनको मार गिराया—कहीं इसी तरह हमपर भी वार न करे! अतएव अत्यन्त दीनताके साथ यह कहता हुआ कि, "महाराज, मैं आपके पैरों····· " वह राजासाहबके पैरोंपर गिर पड़ा। वह घायल पड़ा हुआ यवन भी कहारता हुआ मुँहसे कुछ गालियाँ निकाल रहा था। राजासाहबने उसकी ओर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया। हाँ, ब्राह्मणको आश्वासन देकर उठाया; और पूछा कि, क्या बात थी। ब्राह्मणने कहा, महाराज, मैं अपना स्नान करके वहीं मध्याह्न सन्ध्या कर रहा था कि, इतनेमें यह कसाई गोमाताकी वे अन्तड़ियाँ—दुष्टने कहीं गोमाताका वध किया होगा—लेकर आया; और मेरे पास ही उधर पानीमें एकदम डाल दीं। मेरे शरीरपर छींटे पड़े। यह अत्यन्त ही भयंकर दृश्य देखकर मुझसे न रहा गया; और मेरे मुखसे ये शब्द निकले—"रे चाण्डाल, इन पापोंका बदला तुझे कहाँ मिलेगा?" इसके बाद मैं फिर तुरन्त ही स्नान करके ऊपर चढ़ने लगा। इतनेमें यह चाण्डाल दौड़ता हुआ आया, और मेरे शरीरपर थूक दिया। मैं क्रोधसे दो गालियाँ देकर फिर नीचे गया; और स्नान करके ऊपर मन्दिरमें जा रहा था, कि इतनेमें फिर दुष्टने आकर मेरे शरीरपर ये अन्तड़ियाँ डाल दीं। महाराज, अब ब्राह्मण और गोमाताका रक्षक कोई नहीं।"

राजासाहबसे आगे और कुछ सुना ही न गया।

बीसवां परिच्छेद

दर्शनोंकी एक झलक।

उस समय सचमुच ही राजासाहबकी चेष्टा यदि किसीने देखी होती, तो ऐसा ही मालूम होता कि, यह कोई स्वर्गीय देवता, अपने भक्तके पीछे लगे हुए दैत्यसे उसकी रक्षा करनेके लिए, नदीसे ऊपर निकला

है। उनके वे विशाल और तेजस्वी नेत्र क्रोधके मारे आरक्तवर्ण हो रहे थे। अबतक यवनोंके अत्याचारकी जितनी बातें उनके कानोंमें आयी थीं, वे सब उस समय उनकी आँखोंके सामने आकर खड़ी हो गईं। परन्तु आजका यह प्रत्यक्ष अनुभव तो उन सबसे ही अधिक भयकर था। लड़कपनमें जब कभी वे बीजापुरमें रहते थे, तब मार्गमें दोनों ओर कसाइयोंकी दूकानें देखकर उनको बहुत ही दुःख होता था, परन्तु आज अब उन्होंने देखा कि, एक गरीब ब्राह्मण, जो बेचारा अपने नित्य-नैमित्तिक धार्मिक कृत्योंमें लगा हुआ था, उसके शरीरपर एक कसाईने आकर गोमाताकी अन्तड़ियाँ डाल दीं, तब उनको अत्यन्त ही दुःख हुआ। उनका सारा शरीर क्रोधसे मानो जल उठा। अपने विशाल और आरक्त नेत्रोंसे उन्होंने फिर एक बार उस यवनकी ओर देखा। अब वह पडे ही पडे अत्यन्त दीनतापूर्वक सलाम करते हुए दयाका प्रार्थी हो रहा था। राजासाहबकी आँखें उसे इतनी क्रुद्ध और क्रूर दिखलाई दीं, जैसे वह कसाई अब मन ही मन यह कह रहा हो कि मैं कहीं इनके तेजसे ही जलकर भस्म न हो जाऊँ। सबलके पैर पकड़ कर दुर्बलपर दुलत्ती झाड़नेकी मुसल्मानोंकी आदत मानो उस कसाईके अन्दर बहुत ही अधिक मात्रामें थी। वही कसाई, जोकि अभीतक उस दीनहीन ब्राह्मणसे ऐसी दुष्टता और उद्दण्डताका बर्ताव कर रहा था, अब राजासाहबके सामने हाथ जोड़कर जीवनदान माँगने लगा। जो शरण आ जावे, उसको जीवनदान देना—यह भी राजा शिवाजीका, प्रारम्भ हीसे, एक मुख्य व्रत था, जो उन्होंने महाभारतकी कथाओंसे सीखा था। अतएव उसको जानसे मार डालनेका वे विचार भी मनमें नहीं लाये, और उससे बोले, "तू इतनी चिरियाँ विनती कर रहा है, इसलिये छोड़े देता हूँ, किन्तु जिन हाथोंसे तू ऐसे नीचतापूर्ण कार्य करता है, उन हाथोंको मैं अब नहीं छोड़ सकता। उनको काट ही डालूँगा।" इतना कहनेके बाद फिर उन्होंने वैसा ही किया भी। इसके बाद उन्होंने ब्राह्मणकी ओर देखकर उसे इस प्रकार आश्वासन किया—"नदीपार, उस वृक्षके नीचे, जहाँ मेरे वस्त्र इत्यादि रखे हैं,

वहाँ यदि तुम अपने लड़के इत्यादि किसीको भेज दोगे, तो तुमको मैं कुछ दक्षिणा पहुँचाऊँगा। अब तुम फिर स्नान कर लो; और शुद्ध होकर सन्ध्या इत्यादि करके आरामके साथ अपने घर जाओ। मैं भी जाता हूँ।" इतना कहकर, ब्राह्मण देवताको नमस्कार करके वहासे पीछे लौट पड़े। ब्राह्मण कुछ भी नहीं सोच सका कि, यह ऐसा परोपकारी धर्मात्मा पुरुष कौन है; और वह आश्चर्यचकित होकर सिर्फ उनकी ओर देखताभर रहा। उसका मन, उनके विषयमें, आदर भावसे इतना भर गया, कि वह एक शब्द भी मुँहसे बाहर निकाल नहीं सका; और उन्होंने भी फिर उसकी ओर पीछे मुड़कर नहीं देखा; और चुपकेसे नदीके पास आकर फिर उसोमें कूद पड़े। इस बार वे अपनी तलवार पहलेकी भाति मुँहसे नहीं पकड़ सकते थे; क्योंकि वह यवन-रक्तसे सनी हुई थी, अतएव उन्होंने उसे कमरमें ही आड़ी बाँध ली, इसके अतिरिक्त और कोई उपाय ही न था। आते समय जो जोश था, वह लौटते समय अब नहीं था। आते समय मन आतुरतासे व्याप्त था; परन्तु अबकी बार वह खिन्नतासे ग्रस्त था। तैरते समय किसीका भी मन किसी विचारमें निमग्न नहीं देखा जाता; पर उनका मन तैरनेमें बिल्कुल ही नहीं था, हाँ, सिर्फ हाथभर बढ़ाते हुए चले जा रहे थे। ऊपर हमने बतलाया ही है कि, आजतक उन्होंने ऐसा कोई दृश्य स्वयं आँखोंसे नहीं देखा था; किन्तु मुसल्मानोंके अत्याचार अभीतक सिर्फ कानोंसे ही सुने थे। पर आजका जो भयंकर दृश्य उन्होंने स्वयं अपनी आँखोंसे देखा, उससे उनका चित्त व्याकुल हो गया। तैरनेमें वे बहुत ही पटु थे—उस नदीकी तो कोई गणना ही नहीं थी, किन्तु अन्य किसी भी नदीमें चाहे जितनी भारी बाढ़ आई हो; और जल चाहे जितना अगाध हो, वे उसको बातकी बातमें तैर जा सकते थे। आज उनको जोश भी बहुत आया था, और वे मन ही मन यह विचार करते जा रहे थे कि, "ऐसे छोटे छोटे गाँवोंके कसाई भी ऐसे-ऐसे भयंकर अत्याचार करते हैं—ऐसी दशामें अब रास्ता कहाँतक देखते रहें! कहाँतक सोचते रहें—कि 'अब करेंगे, तब करेंगे, यह करना है, इत्यादि—जो

कुछ करना हो, सो बहुत जल्द प्रारम्भ कर देना चाहिये। हमारे इन हाथोंसे जो कुछ होना होगा, सो हो ही जायगा, और यदि न होगा, तो इतना तो अवश्य होगा कि, हमारे प्राण धर्मकी रक्षा और गो ब्राह्मणके प्रतिपालनमें लग जायेंगे।" बस, यही बात बार बार मनमें सोचते हुए नदी तैरकर इस पार आये।

इधर वह ब्राह्मण, अपनी उस मन्द दृष्टिको पूर्णतया खर्च करके, जहाँतक देखते बना, उस महापुरुषको, जो कि, चुपकेसे तैरता जा रहा था, बहुत देरतक खडा हुआ देखता रहा इसके बाद जब वह मूर्ति उसकी वृद्ध दृष्टिकी ओटमें हो गई, तब उसके मुखसे अचानक ये शब्द सुनाई दिये—"परमात्मन्! क्या कोई ऐसा भी दिन आवेगा कि, जब ऐसा ही कोई अवतारी पुरुष अवतीर्ण होकर इन म्लेच्छोंके हाथसे धर्म और गो-ब्राह्मणकी रक्षा करेगा।" इतना कहकर उसने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ा, और फिरसे नदीके किनारे जाकर, स्नान करनेके बाद, मन्दिरमें जा बैठा।

राजासाहबने अपने ज्वरपीडित शरीरकी ओर बिलकुल ही ध्यान न देते हुए उस नीच यवनके अत्याचारसे ब्राह्मणकी रक्षा करनेके लिये अपनी जानको खतरेमें डाला। निस्सन्देह पहले तो उक्त बातकी उन्हें कुछ भी खयाल नहीं हुआ, परन्तु जब वे किनारे पर पहुँच गये, और शरीर पोंछकर अपने वस्त्र धारण किये, तब उनकी तबीयत कुछ खराब-सी मालूम होने लगी।

उपर्युक्त घटनाके वर्णन करनेमें हमको जितना समय लगा, उससे कुछ ही अधिक समय शायद उसके घटित होनेमें लगा हो। अर्थात् लगभग पौन घण्टेमें राजासाहब उपर्युक्त सारा कार्य करके वापस आ गये। स्वामीजी वापस आकर देखते हैं, तो उनकी सवारी, जैसी पहले लेटी हुई थी, वैसी ही अब भी लेटी थी, और तलवार जहाँकी तहाँ रखी थी। हाँ, चेष्टा अवश्य ही उस समय कुछ विलक्षणसी दिखाई दे रही थी, क्योंकि बुखार चढता आ रहा था, उपर्युक्त घटनाके कारण उनके हृदयको सन्ताप भी काफी हो रहा था। अतएव स्वामीजी उनकी वह चेष्टा देखकर

और उनके शरीरमें हाथ लगाकर कहते हैं, शिवबा, बुखार चढ़ता आ रहा है—क्या नदीमें स्नान इत्यादि तो नहीं किया ?" इतना उन्होंने कहा ही था कि, उनकी दृष्टि पास ही पड़े हुए भींगे लँगोटे और धोतीकी ओर गई। जिससे उनको स्पष्ट ही मालूम हो गया कि, ये नदीमें अवश्य पैठे हैं। इसपर स्वामीजीने उनसे कहा कि, देखो, यह अच्छा नहीं किया, परन्तु राजासाहबने उन्हें कुछ भी नहीं बतलाया कि, उनके जाने पर क्या घटना हुई, और उनको किस कारण नदीमें बैठना पड़ा। उन्होंने सोचा कि, इसके बतलानेसे कोई भी लाभ नहीं, अतएव वे बिल्कुल ही मौन रहे, और स्वामीजीको वैसे ही सोच-विचारमें रहने दिया। कुछ देर बाद स्वामीजीने रसोई तैयारकी, और शिवबाको भी आग्रह करके थोड़ा-सा खिलाया, और फिर स्वयं भी भोजन करनेके बाद आज आगे चलनेका विचार रहित किया, क्योंकि राजासाहबकी तबीयत ठीक नहीं थी। परन्तु राजा शिवाजीको ऐसा करना ठीक नहीं जान पड़ा। अतएव उन्होंने कहा कि, मेरे ज्वरकी आप परवा न करें, यह थोड़ा न थोड़ा जन्मभर ही रहेगा। और यह कहनेके बाद उन्होंने तुरन्त ही उठकर अपना कम्बल लपेटा। स्वामीजीने बहुत कुछ समझाया बुझाया, पर शिवाजीने उनकी एक नहीं सुनी, और कहा, "अब बहुत जल्द यहाँसे चलकर समर्थके दर्शन करके तुरन्त ही लौट पड़ना चाहिए—हमें अपने अगले उद्योगमें शीघ्र लगना है। अब चुप बैठनेसे काम नहीं चलेगा। गुरुजी, आजतक हमने बहुतसा समय खराब किया !" ये अन्तिम शब्द उन्होंने कुछ विचित्र ही आवाजसे निकाले। ऐसा जान पड़ा कि, उनकी उस आवाजमें दुःख, खेद और पश्चात्तापके भाव पूर्ण रूपसे भरे हुए हैं। अब स्वामीजीने ताड़ लिया कि, हमारे पीछे कोई न कोई घटना ऐसी अवश्य घटी है, जिसे ये बतलाते नहीं हैं। वह घटना कौनसी हुई, सो कुछ उनके अनुमानमें नहीं आया। हमने आजतक व्यर्थके लिये समय खराब किया—ऐसा समय व्यतीत करना उचित नहीं था—ये विचार राजा शिवाजीके मनमें कुछ यों ही, आप ही आप, नहीं आये—कोई कारण अवश्य है। मालूम होता है, कोई भयंकर घटना इन्होंने खुद

देखी है, अथवा शायद किसीने आकर इनको बतलाई हो। जो कुछ भी हो, परन्तु ऐसी ही किसी बातके बिना, अचानक इनके चित्तको ऐसा खेद होनेका कोई कारण नहीं था। यहाँतक तो स्वामीजीने ठीक अनुमान किया, पर अब आगे वे यह नहीं सोच सके कि, ऐसी घटना कौनसी हुई, कब हुई, अथवा किसने आकर इनको बतलाई। जो हो, राजासाहब की वह मनोदशा उनको कुछ अनिष्ट नहीं जान पड़ी। अतएव उसपर विशेष कुछ न कहकर उन्होंने इतना ही कहा, "क्यो? आज इतनी जल्दी क्यों? आज ही, मेरे पीछे ऐसी कौनसी बात हुई, जिससे तुम्हारा चित्त इतना खिन्न हुआ?" राजासाहबने सिर्फ इतना ही कहा कि, चलिये, रास्तेमें मैं सब कुछ बतलाऊँगा। और यह कहकर उन्होंने घोड़ेपर जीन कस लिया। स्वामीजीने सोचा कि, अब विशेष कहनेमें कोई लाभ नहीं, और परलीका मुकाम भी अब यहाँसे कुछ बहुत दूर नहीं है, लगभग दो मजिलपर है, इसलिये उनके ही मनके अनुकूल चलना ठीक होगा। यह सोचकर उन्होंने भी अपना श्यामकर्ण तैयार करके उसपर आसन जमाया। मार्गमें चलते समय बहुत देरतक राजा-साहब कुछ भी नहीं बोले, और न स्वामीजीने ही उनसे उस विषयमें कोई पूछ ताछ की। करीब एक घण्टेतक दोनों ही चुपकेसे मार्ग चलते रहे। इतनेमें सूर्यास्तका समय आ गया। सूर्यनारायणका विम्ब आरक्त होकर बिलकुल क्षितिजमें जाकर भिड़ने लगा। शीतल वायु बहने लगी, और वेला विलकुल शान्त होने लगी। तब राजासाहबका मस्तक भी कुछ शीतल हुआ, अतएव उनके मनमें आया कि, अब दोपहरकी दुर्घटना स्वामीजोको बतलाना चाहिये। उसी दुर्घटनाको देखनेमें उनके मनमें यह बात आई थी कि, अब अपने उद्योगमें बहुत जल्द लगना चाहिये, और तदनुसार ही करनेका उन्होंने निश्चय किया था। अतएव अब वह निश्चय भर उनके मनमें कायम रह गया, और बाकी खिन्नता इत्यादि सारी दूर हो गई। दूर न हुई हो, तो कम से कम वह बहुत कुछ घट गई, इसमें सन्देह नहीं। शरीरमें जो ज्वर चढ रहा था, वह भी, उस चलते समयके जोशके कारण, न जाने कहाका कहाँ चला गया। मनका

सन्ताप भी धीरे-धीरे कम हो गया था, और चित्त अब बहुत कुछ स्थिर हो गया था। इस प्रकार जब मनकी स्थिरता फिर प्राप्त हुई, तब उनको इस बातपर बड़ा पश्चात्ताप हुआ कि, देखो, हम उस समय स्वामीजीसे अच्छी तरह बोले नहीं, यह अच्छा नहीं किया। अतएव, अब वे उनसे एकदम बोले, और क्षमा मागीं, तथा उनके जानेके बाद नदीके घाटपर जो दुर्घटना हुई थी, उसका सब वृत्तान्त बतलाया, और यह भी बतलाया कि, उन्होंने उस दुर्घटनाको देखकर क्या-क्या कार्य किया। इसके बाद फिर उन्होंने अपने मनकी यह बात भी बतलाई कि, हम वैसे ही वहाँसे अपने कार्यको वापस जानेवाले थे; परन्तु समर्थके दर्शनोंकी उत्कठासे फिर इधर बहुत जल्द आपके साथ चल दिये। स्वामीजीने राजा शिवाजीकी वे सब बातें सुनीं, और उनको अत्यन्त ही आनन्द हुआ। उन्होंने सोचा कि, हमने आजतक अनेक बार इस प्रकारके उदाहरण इनको बतलाये थे, और उनको सुनकर इनके मनपर प्रभाव भी बहुत हुआ था, पर आज जो स्वयं इनकी दृष्टिमें आया, और उसके लिये प्रत्यक्ष इन्होंने इतना कार्य भी किया, इससे अवश्य ही इनके मनपर और भी अधिक प्रभाव पड़ा है, और हम अपने उद्देश्यके पूर्ण करनेमें इनके ऐसे प्रभावोंका बहुत अच्छा उपयोग कर सकेंगे। यह सोचकर उनका मन सचमुच ही बहुत सन्तुष्ट हुआ। उस सन्तोषके आवेगमें कुछ देरतक वे बिल्कुल नहीं बोले। सिर्फ चुपके राजासाहबका वृत्तान्त भर सुनते रहे। फिर उन्होंने सोचा कि, देखो, हमने यह एक ऐसा ही वीर पुरुष ढूँढ़ निकाला, जो हमारे सद्‌गुरु स्वामीको खूब ही पसन्द आवेगा, और यदि ईश्वरने चाहा, तो इसके हाथसे महाराष्ट्रका उद्धार भी होगा। यह सोचकर उनको अवश्य ही कुछ अभिमानसा मालूम हुआ। उनको यह बिल्कुल निश्चय हो गया कि, हमने एक बहुत ही वीर पुरुषको इस महान् कार्यके लिये चुना है, और यह हमारी कल्पनासे भी अधिक शूरवीर, दृढ़प्रतिज्ञ और राजनीतिज्ञ पुरुष है। इन सब बातोंको सोचकर उनके चित्तमें सन्तोष, सुख और स्वाभीमानकी लहरें उठने लगीं।

उपर्युक्त सब वृत्तान्त सुननेके बाद स्वामीजी बहुत देरतक कुछ भी नहीं बोले। फिर एकदम वे राजासाहबसे कहते हैं, "देखो, शिवराज, जो बात हुई, बहुत अच्छी हुई। अपने इस प्रत्यक्ष अनुभवसे इन यवनों की नीचता जैसी तुम्हारे ध्यानमें आई, वैसी और किसी प्रकार भी नहीं आसकती थी। इसके सिवाय, तुमने भी इस समय खूब ही साहस दिखलाया—भरे बुखारमें, अपनी जानकी परवा न करते हुए, नदीमें तैरकर उस पार गये—यह भी तुम्हारे व्रतके योग्य ही हुआ। तुम्हारे हाथसे, आगे सहस्रों पराक्रम होंगे—पीछे भी सैकड़ों ही हुए होंगे; पर आजका साहस और उदारताका कार्य तुम्हारे अन्य कार्योंमें कहीं अधिक महत्वका है।"

इतना कहनेके बाद फिर किसीने उस सम्बन्धमें एक अक्षर भी नहीं कहा और प्राय बहुतसा समय चुपकेसे मार्ग चलनेमें ही बिताया। मजिल-दरमजिल तै करते हुए उक्त दोनों सज्जन परलीतक पहुंच गये। और उस प्रदेशके आसपासका रमणीय सृष्टिसौन्दर्य देखकर राजासाहबका अत्यन्त आनन्द हुआ। परन्तु उस सृष्टिसौन्दर्यको देखनेकी अपेक्षा वहाँ निवास करनेवाले उस महात्माके दर्शनकी ही अभिलाषा उनको विशेष थी, अतएव उनका सारा चित्त उसी ओर लगा हुआ था।

परन्तु कई बार ऐसा होता है—कई बार क्या? अधिकाश ऐसा ही होता है कि, अभिलाषा जितनी अधिक होती है, निराशा भी उतनी ही आकर उपस्थित हो जाती है। बस, इसी नियमके अनुसार राजासाहबके लिए भी मानो निराशाका ही अवसर आने लगा। समर्थके दर्शन और सम्भाषणकी उन्हे जितनी अधिक अभिलाषा है, उतनी ही अधिक निराशाके लक्षण उनको दिखाई देने लगे। पहुँचते ही उन्होंने मठमे पता लगाया, पर मालूम हुआ कि, न जाने समर्थ कहाँ गये हैं, कुछ पता नहीं। इसपर राजा शिवाजीको अत्यन्त खेद हुआ। मठके शिष्य लोगोंने उनका अच्छा आदर सत्कार किया, पर जब उन्होंने देखा कि, जिस उद्देश्यसे हम इतनी दूर चलकर आये, वह सिद्ध होता दिखाई नहीं देता, तब खेद होना स्वाभाविक ही था।

वे समर्थके मठमें जिस समय पहुँचे थे, तीसरा पहर उलट गया था, अतएव उनका पता लगानेके लिये भी काफी समय नहीं मिला। और जो मिला भी, उतने समयमें वे उस समयके उनके बैठनेके स्थानका भी पता नहीं लगा सके।

जिस समय समर्थ श्रीरामदास स्वामी पहले पहल लोगोंमें प्रकट हुए, उनके कुछ दिन ऐसे व्यतीत हुए थे कि, उन दिनोंमें उनकी सभी छोटी-मोटी बातोंका जानना एक बहुत ही दुर्घट विषय था। उनके बड़ेसे बडे शिष्य भी यह नहीं बतला सकते थे कि, वे इस समय कहाँपर होंगे। उनकी मनोवृत्ति परमार्थ-दृष्टिसे अत्यन्त स्थिर थी, धर्म दृष्टिसे और राष्ट्रीय दृष्टिसे भी स्थिर थी, पर व्यवहार-दृष्टिसे उसमें तनिक भी स्थिरता न थी। किस समय वे कहाँ होंगे, किस समय कहाँ जायगे; और कितने दिन कहाँ, किस ओर जाकर विराजेंगे, इसका किसीको कुछ भी पता नहीं रहता था। इसके अतिरिक्त मठको भी अभी वैसा स्वरूप प्राप्त नहीं हुआ था। उस साधु-पुरुषका मुख्य उद्देश्य था—"मराठामात्रको एकत्र करो" और इसी उद्देश्यको सिद्ध करनेके लिये क्या-क्या प्रयत्न करने चाहिये, इसीका मानो उन दिनों वे एकान्तमें जाकर विचार किया करते थे। उनको शिष्य-सम्प्रदायकी कोई विशेष परवा नहीं थी। किन्तु आप स्वय ही कहीं जगल और पहाड़ोंमें निकल जाते, वहीं किसी झाड़ी अथवा गुफा-कन्दरामें जाकर रामनामका जप करते रहते, अथवा कोई पुरश्चरण करते, या वृक्षों और पौधोंको ही उखाड़-उखाड़ कर फेंकते रहते। अनेक लोगोंकी दृष्टिमें वे अभी एक पागल ही प्राणी मालूम होते थे, और उनकी निस्पृह और निरहकार वृत्तिसे लोगोंके उक्त खयालमें एक प्रकारसे दृढता ही होती जाती थी। किन्तु वे कभी किसीकी कोई परवा नहीं करते थे। अपने कार्योंपर किसीका निर्बन्ध तो उन्हें बिल्कुल ही पसन्द नहीं आता था। कोई आदरपूर्वक उनके पास आता, तो उससे बोलना-चालना भी उनको बिलकुल नहीं भाता। शायद एक ही दो प्राणी ऐसे होंगे, जिनसे वे कुछ बोलते-चालते हों। ऐसी दशामें इधर राजासाहब आकर उपस्थित

हो गये, पर समर्थको इसका कुछ पता न चला। वे उनके दर्शनोंके लिये अत्यन्त उत्सुक थे, इसलिये श्रीधर स्वामीने बहुत कुछ ढूँढ खोज की, पर कुछ पता न चला। परलीके आसपासका सारा जंगल ढूँढ डाला, पर कुछ पता नहीं। करवन्दी इत्यादि मुकामोंकी झाड़ियाँ, सब गुफाएँ और कन्दराएँ ढूँढ डाली गईं, पर उनका कहीं सुराग नहीं लगा। अन्तमें निराश होकर दूसरा दिन भी बिताया। अब राजा शिवाजीकी उत्कण्ठा और भी अधिकाधिक बढ़ने लगी। दो दिन बीत गये, तीसरा दिन भी बीत गया। उनके मनमें स्वामीदर्शनके अतिरिक्त और कोई विषय नहीं था, और उसकी सफलताका कहीं पता न था।

अन्तमें—चाहे इस कारणसे हो कि, उनका ध्यान उसी बातपर लग रहा था, अथवा अन्य किसी कारणसे—उनको स्वप्नमें एक ब्राह्मणने आकर कहा, "भैया, इतना क्यों तड़फड़ा रहा है? स्वामी तुझपर अत्यन्त प्रेम करते हैं, किन्तु यह मौका तेरे भाषण सम्भाषणका नहीं है। तेरी प्रतिज्ञाके दिन निकट आ रहे हैं। कमसे कम एक बित्ता-भर स्थान ही यवनोंके हाथसे ले ले, तब फिर यहाँ आ। इस समय आया ही है, तो सिर्फ तुझे दर्शनमात्र हो जायगे। तेरे धैर्य शौर्यकी सफलताके उद्देश्यसे वे उत्तरकी ओर जाकर आधे कोसपर एक गुफामें बैठे पुरश्चरण कर रहे हैं। वहीं तू अकेला जा, तुझको दर्शन होंगे; किन्तु बोलनेकी आशा भी न रख।" इतना कहकर वह स्वप्नका वृद्ध ब्राह्मण गुप्त हो गया, और उनकी आँख खुल गई। राजा शिवाजीको जिस प्रकार धर्मपर श्रद्धा थी, उसी प्रकार एसे स्वप्नके दृष्टान्तों पर भी श्रद्धा थी। "मनकी बातें ही स्वप्नमें दिखाई देती हैं"—ऐसा कहकर उन्होंने उसे टाल नहीं दिया, किन्तु उनको दृढ़ विश्वास हो गया कि, यह स्वप्न हमारा बिलकुल सच्चा है, और श्रीसमर्थ रामदास स्वामीकी ओरसे ही हमको स्वप्नमें यह दृष्टान्त हुआ है। अतएव दूसरे दिन प्रातःकाल ही, जब कि अभी पूर्व दिशाकी ओर लालिमा भी नहीं आई थी, आप उठे, और श्रीधर स्वामीको भी न बतलाते हुए उसी दिशाकी ओर चल दिये कि, जिसका उन्हें स्वप्नमें ज्ञान हुआ था। मार्गमें

एक झरना मिला, उसीपर स्नान इत्यादि करके वे शुचिर्भूत हुए, और फिर स्वप्नज्ञानके अनुसार उतने ही अन्तरपर पहुँचे, जहाँकि उक्त गुफा होनेकी सम्भावना थी। वहाँ जाकर वे इधर-उधर देखने-भालने लगे कि, इतनेमें एक गम्भीर घाटीकी ओरसे गम्भीर स्वरके आनेका उन्हें भास हुआ। ध्यान लगाकर सुनने पर उन्हें वह ध्वनि और भी स्पष्ट-रूपमें सुनाई देने लगी। भवभूतिने एक जगह कहा है कि, किसी अन्तस्थ हेतुके कारण ही दो व्यक्तियों अथवा पदार्थोंका प्रेम एक दूसरेको ओर आकर्षित होता है। इसका एक बहुत ही उत्तम उदाहरण यहाँ दिखाई दिया। वह धीर-गम्भीर ध्वनि, जो कि क्षण-क्षणपर अधिकाधिक-सुस्पष्ट हो रही थी, कानोंमें पड़ते ही उनके शरीरपर आदरप्रेरित आनन्द-से, रोमाञ्च हो आया। आजतक जिसकी हम केवल कीर्ति ही सुन रहे थे, और जिसका शिष्यत्व सम्पादन करनेकी हमको उत्कृष्ट इच्छा है, उसका पुण्यदर्शन अब आज होनेवाला है—यह भाव उनके मनमें आया, और उनका मन बिलकुल तल्लीन हो गया। अतएव अब वे अत्यन्त धीर-गम्भीर कदमोंसे उसी ओरको चले कि, जिस ओरसे वह पवित्र ध्वनि आ रही थी। वहाँ जाकर देखते हैं, तो वृक्षोंकी घनी छाया-से शीतल होनेवाली एक खोहकी आड़में वह पुण्य-मूर्ति आसन लगाये, और कुबड़ीपर हाथ टेके हुए बैठी है, तथा रामनामका गम्भीर घोष हो रहा है। पासमें एक, नित्य साथमें रहनेवाले, कमण्डलुके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। उस पुण्यपुरुषको देखते ही उनका हृदय भक्तिरससे परिपूर्ण हो गया; और अधिक नहीं, तो कमसे कम, दो-ढाई घड़ीतक वे अपने उन विशाल, तेजस्वी, और अब भक्तिपूर्ण नेत्रोंसे उनकी ओर एकटक देखते रहे। किसी प्रकार भी उस मूर्तिकी ओरसे अपने नेत्रोंके हटानेको उनका चित्त नहीं चाहता था, और सचमुच ही वह धीर और गम्भीर मूर्ति भी ऐसी ही थी। शरीर कान्ति बिल्कुल दिव्य—ऐसा जान पड़ता था कि, सम्पूर्ण शरीरके आसपास एक प्रकारका तेजोमण्डल प्रदीप्त हो रहा है, और उसके बाहरी और उनके पुण्यप्रतापका एक और भी मण्डल उस पहले मण्डलकी अपेक्षा भी विशेष उद्दीप्त दिखाई

दे रहा है। स्पष्ट ही है कि, जो प्राणी दृढ़ श्रद्धा, पूर्ण भक्ति और अटल सत्यनिष्ठाके साथ समीप जाना चाहेंगे, उन्हींका उस प्रताप अथवा तेजमे कोई हानि नहीं होगी, किन्तु जिनकी आत्मा शुद्ध और निष्कलंक नहीं है, उनको एक कदम आगे बढ़नेका भी साहस न होगा। चारो प्रकार के योगमे ज्ञानप्राप्ति करके पूर्ण ब्रह्मज्ञानमे लीन हो जानेवाले व्यक्तिको जो अवस्था होती है, वही अवस्था पूर्ण रूपसे उस पुण्यपुरुषको दिखाई दे रही थी। देहकी अणुमात्र भी चिन्ता न होनेपर भी सारा शरीर ऐसा सुसगठित था कि, देखते ही बनता था। पूर्ण अन्तःशुद्धिके बिना ऐसा होना कब सम्भव है? जैसे किसी उत्तम मल्लका शरीर हो, वैसा ही, खूब कसा हुआ, स्वामीका शरीर था। उनकी कांतिका तो कहना ही क्या है? मुखमण्डलको देखकर ऐसा जान पड़ता था कि, सम्पूर्ण ज्ञानका, और उसके साथ ही साथ, एक प्रकारकी चिरन्तन शान्तिका, निधान ही यह मूर्ति है। और यह बिलकुल सच था! इसके सिवाय, उसी मुखमण्डलमे यह भी स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि, इस पुण्यपुरुष की निज हित निरपेक्षता कितनी विलक्षण है, और केवल परहितपरायणता कितनी दृढ़ है। इस प्रकारकी वह पुण्यमूर्ति, रामनामका पुरश्चरण करती हुई ज्यो ही उनको दिखाई दी, एकदम उनके मनमे यह भाव आया कि, धन्य है इस महात्माको, आजतक हमने इनका जितना कुछ वर्णन सुना, वह कितना अल्प और अधूरा था, उससे तो एक सहस्रांश भी कल्पना इनकी सत्यस्थितिकी नहीं हो सकती थी। ज्यों-ज्यो वे स्वामीकी ओर देखने लगे, त्यो त्यो उनके मनका भक्तिप्रेम उनके नेत्रोंकी राह बाहर आकर चमकने लगा, और अचानक उनके मनमे यही आया कि, राज्यकामना महत्वाकांक्षा इत्यादि सभी बातोंको एक ओर रखकर इन्हींकी सेवामे दिन व्यतीत करें—यह इच्छा उस समय बराबर क्षण क्षणपर, उनके हृदयमे प्रबल हो होती गई—अन्तमे उनसे रहा न गया, और उन्होने बड़े जोरसे यह कहा—"महाराज, गुरुवर्य, दयानिधे, राजा शाहाजीका पुत्र शिवाजी आपको यह साष्टांग प्रणाम करता है। इसपर कृपादृष्टि रखें—" इतना

कहकर उन्होंने अपना शरीर एकदम, दण्डकी तरह, पृथ्वीपर डाल दिया। इधर तो उनकी यह दशा हो रही थी, और उधर ऐसा दिखाई दिया कि, स्वामीने भी मानों अन्तर्ध्यानसे यह सब कुछ जान लिया; क्योंकि उनके मुखपर किंचित् स्मित-छाया दिखाई देने लगी, फिर भी नेत्र खोलकर देखने इत्यादिकी कुछ भी सम्भावना दिखाई नहीं दी। रामनामका जप बराबर जारी था। इधर वे दण्डकी तरह वैसे ही पड़े रह गये। किसी प्रकार भी उठते नहीं थे। पृथ्वीपर सिर रखकर मानो वे भी स्वामीके ध्यानमें निमग्न हो रहे थे। इतनेमें उनके कानमें, ऐसा जान पड़ा, मानो कोई अत्यन्त मन्द मधुर वाणीसे कुछ कह रहा है। वह कथन उनको बिलकुल स्पष्टतया सुनाई दिया, और उनके हृदयपर मानो खचित सा हो गया—"गो-ब्राह्मणोंका प्रतिपालन, दुष्ट म्लेच्छोंके अत्याचारसे उनका संरक्षण, और स्वराज्य संस्थापन—बस, यही तुम्हारा कर्त्तव्य है, और इसीलिये तुम्हारा अवतार हुआ है। तुम्हारा पुरश्चरण यही है। यही तुम्हारा जप-तप है; और यही तुम्हारी गुरुसेवा है! इसमें तुम विलम्ब क्यों लगा रहे हो? जाओ, जितनी शीघ्रतासे हो सके, इसको करो—अवतारी पुरुषोंको अपने अवतारकी सफलता प्राप्त करनेमें विलम्ब न लगाना चाहिये। हम तो सिर्फ निमित्तमात्र हैं। कार्य सारा तुम्हारे ही हाथमें है। इसलिये अब और कोई भी विचार मनमें मत लाओ। हमको तुम गुरु करके मानते हो, इसलिये कार्यका आरम्भ होते ही, प्रथम-सिद्धिके प्रसंग पर, आकर मिलेंगे। तबतक मिलनेके लिए, अथवा भाषणके हेतु उतावली न करना। उतावली जो कुछ करना हो, सो कार्यके लिए ही करना।"

राजासाहबको मालूम हुआ, जैसे उक्त सम्पूर्ण शब्द कोई, अत्यन्त मन्द मधुर वाणीसे, बहुत धीरे-धीरे, उनके कानमें कह रहा हो, अतएव उनको ऐसा जान पड़ा, जैसे बिलकुल अमृतबिन्दु ही किसीके मुखमें, एकके बाद एक, पड़ रहे हों, और वह इस प्रतीक्षामें हो कि, एक बिन्दु आया, अब दूसरा कब आवेगा; और वह फिर अपने तनमनसे उसी अमृतरसके पानमें तल्लीन हो जावे—बस, इसी प्रकार उनके कान-

में उस समय वे शब्द पड़ रहे थे, और उनका तनमन उन्हींके सुननेमें— किंबहुना, एक एक अमृतबिन्दु ज्यों-ज्यों गिरता जाय, त्यों-त्यों उसे अपने हृदय-सरोवरमें भर लेनेमें—लग रहा था। उपर्युक्त भाषणके समाप्त होते ही वे एकदम चमककर उठ पड़े, और देखते हैं, तो पासमें कोई भी नहीं है। जो पुण्यमूर्ति अबतक उनके सामने बैठी हुई थी, और जिसकी वह मन्द मधुर वाणी अभीतक उनके कानमें गूँज रही थी, उसका अब कहीं पता भी नहीं। उन्होंने इधर-उधर, चारों ओर घूमकर, बहुत कुछ तलाश किया, पर वहाँ उनका पता कहाँ? राजाने सोचा कि, मूर्ति अन्तर्ध्यान हो गई, इधर उधर कहीं गई नहीं, क्योंकि यदि गई होती, तो ढूँढ़कर हम अवश्य पता लगा लेते। उन्होंने सोचा कि, देखो, अन्तमें स्वामीके दर्शनकी हमें एक झलकमात्र ही प्राप्त हुई प्रत्यक्ष दर्शन और सम्भाषणका सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। इसपर उन्हें पहले कुछ खेदसा हुआ, परन्तु फिर शीघ्र ही यह सोचकर अपने मनका समाधान किया, अस्तु—जो कुछ भी हो—एक बार उनका दर्शन और भाषण हमको इस प्रकार तो प्राप्त हो गया, यही क्या कम है? अब स्वामीकी आज्ञाके अनुसार कार्य करनेमें सचमुच ही हमको विलम्ब न लगाना चाहिये—और न हम लगावेंगे ही—यह निश्चय करके वे उठे, और मठकी ओर चल दिये। फिर स्वामीकी खोज करनेका विचार भी वे मनमें नहीं लाये। आज स्वामीके विषयमें उनके मनमें जो भक्ति-भाव उत्पन्न हुआ, वह कुछ अद्वितीय ही था। जैसे किसी मनुष्यकी कोई नैसर्गिक प्रवृत्ति हो, और उसीके अनुसार चलनेके लिये कोई एक ऐसा व्यक्ति उसे उत्साह दिलाता हो, जिसे वह अत्यन्त पूज्य मानता है, और जिसपर उसकी बड़ी भारी श्रद्धा है—यही नहीं, बल्कि वह व्यक्ति उसे अपनी पूर्ण सम्मतिका आश्वासन देकर और उलटे इस बातका दोष भी दे रहा हो कि, तुम अपनी इस प्रवृत्तिके अनुसार कार्य करनेमें विलम्ब क्यों लगा रहे हो—अब, बतलाइये, इसमें अधिक आनन्द और हर्षकी बात और क्या हो सकती है? उनकी नैसर्गिक प्रवृत्ति इस बातकी ओर थी कि, गो-ब्राह्मणोंका प्रतिपालन किया जाय;

म्लेच्छ लोग उन पर जो अत्याचार कर रहे हैं, उससे उनकी रक्षा की जाय; और परकीय लोगोंका जो चारों ओर राज्य हो रहा है; अपनापन कहीं कुछ भी नहीं रहा, इस परिस्थितिको बदलकर स्वराज्य स्थापित किया जाय। उनके जीवन-चरित्रकी अनेक बातोंपर ध्यान देनेसे मालूम होता है कि, यवनोंके विषयमें और यवनी राज्यके विषयमें पहलेहीसे उनके मनमें पूर्ण तिरस्कार बस रहा था, और अपनी प्राचीन सभ्यताके विषयमें, अपने प्राचीन राज्यके विषयमें उनके मनमें पूर्ण आदरभाव लड़कपनसे ही था। ऐसी दशामें, फिर आगे चलकर, श्रीधर स्वामीसे उनकी मुलाकात हो गई, यह सोनेमें सुगन्ध हो गया! परन्तु फिर भी, एक बातकी आवश्यकता अभी भास रही थी, और वह यह थी कि, कोई उत्साह दिलानेवाला गुरु उनको चाहिये था, और वह आवश्यकता आज पूरी हो गई। अभीतक तो सिर्फ उनको यही एकमात्र विश्वास था कि, इस प्रकारका कोई न कोई प्रयत्न हमको करना चाहिये, और यदि हम करेंगे, तो अवश्य उसका कोई न कोई फल होगा; पर आज, जबसे उस मधुर वाणीने उनके कानोंमें उक्त उपदेश दिया, उनको यह विश्वास हो गया कि, हमारा जन्म ही इस कार्यके लिए हुआ है—परकीयोंके राज्यको हटाकर स्वराज्यका संस्थापन करना हमारा जन्मसिद्ध कार्य है, और इसमें लग जाना ही इस समय हमारा कर्त्तव्य है। जब हम इस कार्यको कर लेंगे, तभी हमारा जन्म सार्थक होगा। यह न करते हुए यदि हम और किसी काममें लग जायंगे, तो हमारा जन्म व्यर्थ जावेगा, तथा गो-ब्राह्मणोंको और भी अधिक अत्याचारमें डालनेका पाप हमारे सिर आवेगा। इसलिए समर्थने आज शिवाजीको जो कर्णमन्त्र दिया, वह उनके लिये रामबाणका कार्य कर गया, और उसमें भी—"तुम्हारा जप तप यही है, पुरश्चरण यही है, अवतारी पुरुषको अपने अवतारकी सफलता प्राप्त करनेमें बिल्कुल ही विलम्ब न लगाना चाहिये—इत्यादि वाक्योंने तो उनके हृदयपर वह कार्य कर दिखलाया, कि जिसका वर्णन किया नहीं जा सकता। उनकी बाहरी तैयारी आजतक सब पूर्ण हो चुकी थी। उनकी नैसर्गिक प्रवृत्ति उस

ओर थी ही, बालपनकी शिक्षा भी वैसी ही मिली थी। उनका साथ जिन लोगोंसे हुआ, वे यद्यपि बिलकुल उनके समान ही स्वभावके तो नहीं थे, किन्तु उनकी बतलाई हुई बातें उनको पसन्द अवश्य आ गई थीं। फिर उसमें भी श्रीधर स्वामीके समान कट्टर स्वराज्यभक्त उपदेशकका उपदेश! यह सब ठीक था, परन्तु फिर भी, किसी महत्कार्यके अपने हाथसे होनेमें जो एक प्रकारके, अपनी आत्माके अन्तस्थ परिचयकी—आत्मपरिचय या आत्मविश्वासकी—आवश्यकता होती है, वह अभी उतनी नहीं थी। अबतक कभी-कभी मनके अन्दर यह शंका उठ आती थी कि, न जाने हमारे हाथमें यह कार्य होगा, अथवा नहीं। और इस शंकाके कारण मन निराश अवश्य भी हो जाता था, सो उस निराशाका मूल ही आज बिलकुल नष्ट हो गया। आज अपने कर्तव्यके विषयमें दृढ श्रद्धा उत्पन्न हो गई। ठीक ही है, जिस पुण्यपुरुषके दर्शन करनेके लिये चित्त इतने दिनसे चंचल हो रहा था, उसके दर्शन आज हो गये, यही नहीं, बल्कि आज उसने हमको अपना आत्मपरिचय भी करा दिया, फिर अब और क्या चाहिये? अस्तु। अनेक प्रकारके विचार और निश्चय मनमें करते हुए वे फिर वहांसे लौट आये। उस समय उनकी चेष्टा एक प्रकारके स्वर्गीय आनन्दसे प्रफुल्लित दिखाई दे रही थी, और मन बिलकुल तदाकार हो रहा था।

राजासाहबकी सवारी मठकी ओर वापस आई। आज सुबहसे ही उनकी सवारी न जाने किधर निकल गई! श्रीधर स्वामी और अन्य लोग बड़े आश्चर्यके साथ इधर-उधर तलाश कर रहे थे। श्रीधर स्वामीको इस बातका तो आश्चर्य अवश्य ही था कि, आज न जाने हमको छोड़कर सवारी कहाँ चली गई, पर चूँकि उनका यह विश्वास था कि, श्रीसमर्थके दर्शनोंकी इच्छाके अतिरिक्त इसका और कोई भी कारण नहीं हो सकता, अतएव वे यही अनुमान कर रहे थे कि शायद वे आज अकेले ही जंगलमें घूम-घूमकर उनके दर्शनोंका प्रयत्न कर रहे होंगे; और इसी खयालसे उन्होंने उतनी आतुरताके साथ उनकी खोज भी नहीं की थी। अब, जबकि वे वापस आ गये, और उनकी चेष्टा बहुत

ही प्रफुल्लित दिखाई दी, तब श्रीधर स्वामीको यह पक्का विश्वास हो गया कि, इनको दर्शन हो गये। अतएव उनको यह सोचकर सन्तोष हुआ कि, चलो, इतनी दूरसे यात्रा करके आनेका श्रम सफल हुआ। उनको स्वयं यद्यपि समर्थके दर्शन नहीं हुए; परन्तु इसका उन्हें कोई विशेष खेद नहीं हुआ। इसके बाद जब राजासाहबने सारा वृत्तान्त बतलाया, तब तो स्वामीजीको आनन्दकी सीमा ही न रही, और अचानक उनके मुखसे ये शब्द निकल पड़े, "धन्य है, राजा, तेरे भाग्यको। तेरे समान भाग्यशाली तू ही है!" श्रीधर स्वामीने रातके उस स्वप्न-साक्षात्कारसे लेकर अन्ततकका सारा वृत्तान्त बार-बार शिवाजीसे पूछा, और उनको भी चूंकि उसके बतलानेमें अपूर्व आनन्द आता था, अतएव जितनी बार स्वामीजीने पूछा, खूब विस्तारके साथ, बतलाया। इसके बाद मठमें वह दिन और वह रात बड़े सुखके साथ समाप्त करके हमारे दोनों यात्री फिर अपने स्थानको वापस आये।

इक्कीसवां परिच्छेद।

हमारी वही पगली।

पाठकोंको याद होगा कि, उधर नानासाहब इत्यादि लोग बीजापुरकी ओरसे आकर पड़े थे; और राजासाहबसे उनकी भेंट ही न हुई थी। यही नहीं, बल्कि उनको तो जब यह मालूम हुआ कि, राजासाहब न जाने कहा चले गये, उनका पता ही नहीं, तब बहुत खेद हुआ। उनकी बड़ी इच्छा थी कि, ज्यों ही वे मिलें, उनको अपना सब वृत्तात बतलावें, और उनके द्वारा सुल्तान गढ़पर एकदम चढ़ाई करा दें। उनका यह विचार था कि, यह चढ़ाई हमारे पिताके सुलतानगढ वापस आजानेके पहले ही हो जानी चाहिए; क्योंकि पिताजी जब किलेपर आकर जम जायँगे, तब फिर किलेका हस्तगत होना उतना सहज नहीं रहेगा अब उनको ऐसा जान पड़ा कि, उनकी यह इच्छा शीघ्र ही पूरी होती हुई दिखाई नहीं देती। राजासाहब वहाँपर मौजूद ही नहीं थे,

इसलिये उन्होंने दो-एक दिन उनके आनेकी प्रतीक्षा भी की, पर जब वे नहीं आये, तब वे बहुत ही निराश हुए। इधर बीजापुर छोड़नेके बादसे उनकी चित्तवृत्ति और भी कुछ विलक्षणसी होगई थी, शान्ति तो उनके मनको थी ही नहीं। दो एक दिन रास्ता देखनेके बाद फिर उनको वहाँ रहना असह्यसा जान पड़ने लगा, और उनकी तबीयत वहा-से चलनेको होने लगी। सोचते सोचते उनके ध्यानमें आया कि, एक बार सुलतानगढको ओर घूम आवें, और देख आवें कि, उधरका क्या हालचाल है। इससे हमको अपने आगेके, विचारोंको पूर्ण करनेमे सुविधा होगी। बस, यह बात उनके मनमें आई, और वे तानाजी इत्यादि अपने साथियोंकी सम्मति लेकर घोड़ेपर सवार होकर उसी भाँति चल दिये कि, जैसे इस कथानकके प्रारम्भमें वे वहाँ आये थे। तानाजी ने भी यह सोचकर उनको अपनी सम्मति दे दी कि, अच्छी बात है, सुलतानगढ़पर अब दस पन्द्रह दिनके बीचमें चढ़ाई होनेका अवसर आ ही गया है, अतएव एक बार यह उधर जाकर यदि वहाँकी सब हालत देख आवेंगे, तो हमारे अगले विचारके पूर्ण होनेमें एक प्रकारका सुभीता ही होगा।

नानासाहब उधरसे चलकर मजिल-दरमजिल तै करते हुए एक दिन रातको एक गाँवके बाहर एक वृक्षके नीचे आकर ठहरे। उनका विचार था कि, रात यही व्यतीत करके, तब तड़के, चन्द्रके उदय होनेपर, आगेका सफर करेंगे। बस, अपने इसी विचारके अनुसार उन्होंने वहा अपना कम्बल बिछा दिया, और लेट रहे। इतनेमे उनको ऐसा जान पड़ा कि, उस वृक्षके कुछ ही दूरपर मानो कोई स्त्री मधुर स्वरसे कुछ गीत सा गा रहा है। इसलिये वे और भी कुछ ध्यान लगाकर उस आवाजको सुनने लगे, पर इतनेमे फिर उनका वह मधुर गीत तो सुनाई नहीं दिया, बल्कि उसकी जगहपर कुछ अत्यन्त आर्त शोक स्वर उनके कानोंमें सुनाई दिया। यह क्या बात है? कुछ उनकी समझमें न आया। कोई मधुर गीत सुनाई दिया अवश्य, परन्तु उस गीतके शब्द ठीक ठीक कानोंमें नहीं आये, तथापि गीत गानेवाली स्त्रीका कण्ठ बहुत

ही मधुर था, अतएव फिर उनका ध्यान उधर गया, और वे ध्यानपूर्वक सुनने लगे; पर इतनेमें वह गीत तो बन्द हो गया, और उसकी जगह शोक-स्वर सुनाई दिया—यह क्या मामला है? नानासाहब चकित होकर इधर-उधर देखने लगे। रात अँधेरी थी, और देर भी बहुत हो चुकी थी। सच पूछिये, तो उनको इतनी रातके समय वृक्षके नीचे नहीं ठहरना चाहिये था, और न वे कभी ठहरते ही; परन्तु जबसे उन्होंने बीजापुर छोड़ा, उनकी चित्त-वृत्ति अपने निजके सुरक्षितपनके विषयमें ऐसी कुछ उदासीन और निश्चिन्त हो गई थी कि, उनको अब कहीं भी किसी बातका भय नहीं मालूम होता था। अस्तु।

इतनी रातको यह गाने और रोनेका शब्द कहाँसे सुनाई दे रहा है? यह प्रश्न बारम्बार उनके मनमें आया; और फिर-फिर उन्होंने कान लगाकर सुना। पहले-पहल ऐसा जान पड़ा कि, वह गानेकी ध्वनि पासके इस गावकी ही ओरसे आ रही है—पर उधर अच्छी तरह कान लगाकर सुना; तो वैसा कुछ मालूम नहीं हुआ। गाँवकी ओरसे किसी प्रकारका भी शब्द सुनाई नहीं दे रहा था। इसलिये अब उनको विश्वास हुआ कि, यह गानेका मधुर स्वर और रोनेका शोकस्वर उसकी बिलकुल प्रतिकूल दिशासे ही आ रहा है। इसलिये उन्होंने फिर उसी दिशाकी ओर अपने कान लगाये, पर अब न उन्हें गाना सुनाई दिया, और न रोना ही। कदाचित् यह हमको झूठा भासमात्र हुआ होगा, यह सोचकर—कमसे कम ऐसा अपने मनको समझाकर—अब वे लेट रहनेका विचार करने लगे। परन्तु उस स्वरका चाहे उन्हें भासही मात्र क्यों न हुआ हो, किन्तु उससे उसका मन अशान्त अवश्य हो गया। उनके मनकी वह अशान्ति, बहुत प्रयत्न करने पर भी, दूर नहीं हुई। अतएव बार-बार वे फिर उसी ओर कान लगाकर सुननेका प्रयत्न करने लगे—शायद वह मंजुल स्वर फिर कानमें सुनाई दे जाय। शायद वह करुण शब्द फिर कानोंमें पड़े। यह सोचकर बार-बार वे सुननेका यत्न करते; और फिर लेट रहते। बहुत देरतक उनकी ऐसी ही दशा रही, पर फिर उन्हें कहीं कुछ सुनाई नहीं दिया। चारों ओर सन्नाटा ही दिखाई

दिया। अब नानासाहबको पूर्ण विश्वास हो गया कि, यह कुछ नहीं था—केवल भासमात्र था। इसलिये वे फिरसे लेट रहे। अभी उनको लेटे बहुत देर नहीं हुई थी कि, अबकी बार फिर बिलकुल स्पष्ट रूपमे उनके कानोंमे वही मधुर गानकी आवाज सुनाई दी। तुरन्त ही वे फिर उठ बैठे, और कान लगाकर सुनने लगे। गाना बराबर जारी रहा। गाना अत्यन्त मधुर और चित्तवेधक तथा हृदयको आर्द्र करनेवाला था। उनकी चित्तवृत्ति बिलकुल तल्लीन हो गई। इतनेमें वह गाना समाप्त हो गया, और उसकी जगह फिरसे उसी स्त्रीका जोरसे निकला हुआ शोकस्वर उनके कानोंमें आया। वे बेचारे बड़े चकराये। यह गोलमाल है क्या? जो स्त्री घड़ीभर एक मधुर गीत गाती है, वही फिर तुरन्त ही अत्यन्त आर्त-स्वरमे शोक क्यों करती है? वे सोच ही रहे थे कि, इतनेमे किसी स्त्रीके जोरसे हँसनेकी आवाज भी उनके कानोंमे पडी। हँसना, रोना, गाना—सब एक साथ—इसका अर्थ क्या है? नानासाहब तुरन्त ही उठे, और खूब ध्यानसे कान लगाये। घड़ी-दो घड़ी हो गई, फिर भी वह विचित्र सिलसिला जारी ही रहा। बीचमे मधुर गायन सुनाई देता, उसके बाद खूब कण्ठ खोलकर रोनेकी आवाज आती, और अन्तमें जोरसे हँसनेका स्वर भी सुनाई देजाता। तीनों परिस्थितियोंमें आवाज एक ही व्यक्ति की—उसी स्त्रीकी—स्पष्ट जान पड़ती थी। उन्होने बहुत कुछ इधर उधर देखा, बहुत प्रकारसे विचार किया, पर कुछ अनुमानमें न आया। गाँवके बाहर इतनी रातको इस प्रकारकी आवाज निकल रही है, और इसका पता लगानेके लिये कोई साधन नहीं है—किससे पूछें? कहाँ जावें? परन्तु वे इसी प्रकारके सोच विचारमें पड़कर चुप बैठ रहनेवाले पुरुष नहीं थे। उन्होने कई बार जब उस आवाजको सुना, तब अन्तमे उसके पता लगानेका भी निश्चय किया। इसके बाद वे बड़ी दृढ़तासे उसी ओरको चले, जिस ओरसे वह आवाज आ रही थी। परन्तु मार्गमे उन्हे बहुत ही कठिनाई मालूम होने लगी। क्योंकि बीचमे वह आवाज कुछ देरके लिए बन्द भी हो जाती थी, इसलिये उस अँधेरेमे उनको, जो कि बिलकुल टटोल

टटोलकर ही चल रहे थे, बीच बीचमें ठहर भी जाना पड़ता था। परन्तु फिर वे ज्यों ज्यों आगे वढ़ने लगे, त्यों-त्यों वह आवाज क्रमश: और भी अधिक स्पष्ट सुनाई देने लगी; और उनका कार्य सरल हो गया। कुछ दूर चलनेपर उनको ऐसा मालूम हुआ कि, वह आवाज विल्कुल पासहीसे आ रही है। इसके वाद वे और भी कुछ आगे चले, तो मालूम हुआ कि, वहीं एक झोपड़ीसे वह आवाज निकल रही है। गायनके शब्द भी अव उन्हें विलकुल स्पष्ट सुनाई देने लगे थे। वे शब्द कुछ—"मसल गये सब मेरे फूल। किसी दुष्टने पैरतले ये कुचल मिलाये धूल।" इसी प्रकारके थे। झोपड़ोमें सचमुच ही कोई स्त्री थी, जो उन शब्दोंको वहुत ही मधुर, परन्तु आर्तस्वरसे गाती, इसके वाद कुछ देर ठहर जाती फिर चिल्ला चिल्लाकर रोती, फिर कुछ देरके लिये विलकुल चुप हो जाती; और थोड़ी देर वाद फिर आप ही आप हँसने लगती। वस, यही सिल-सिला उसका जारी था। नानासाहव वहाँ जाकर कुछ देरतक झोपड़ीके वाहरसे ही उसका वह गाना, रोना और हँसना सुनते रहे। इसके वाद फिर उन्होंने सोचा कि, यह वात क्या है, इसका पूरा पूरा भेद लेना चाहिये। इसलिये उन्होंने उस झोपड़ीका दरवाजा खट-खटाया; और खोलनेके लिये आवाज भी दी। परन्तु दरवाजा किसीने खोला नहीं। हाँ, वह गाना, रोना और हँसना वैसा ही जारी रहा। उन्होंने सोचा कि, वड़ ताज्जुवकी वात है, यह स्त्री गा रही है, हँस रही है, पर हम दरवाजा इतने जोरसे खटखटा रहे, फिर भी यह खोल नहीं रही है, और न यही पूछती है—"कौन हो, क्या वात है? दरवाजा क्यों खटखटाते हो?"—यह मामला क्या है? यह सोचकर वे और भी जोरसे दरवाजा खटखटाने लगे, तव अन्तमें अन्दरसे किसीने वहुत ही त्रस्त और कठोर भावसे पूछा, "कौन है?" जिसे सुनते ही नानासाहव-ने जोरसे कहा, "दरवाजा खोलो।" इधर यह सव हो रहा था, परन्तु उस स्त्रीका गाना और रोना वन्द नहीं था। अस्तु उन्होंने जव जोरसे कहा, तव भीतरसे कठोर शब्दोंमें यह उत्तर आया, "जवतक तुम यह न वतला दो कि, तुम कौन हो, तवतक दरवाजा खोला नहीं जा

सकता।" नानासाहबने कहा, "कोई नहीं मैं एक मुसाफिर हूँ। इसपर उत्तर मिला, "मुसाफिर हो, तो आगे जाओ। यहाँ स्थान नहीं। गाँव पास ही है। हम, एक गरीब आदमी, यहाँ रहते हैं। जाओ, जाओ।" अब उनको एकाएक मालूम हुआ कि, भीतरसे जो मनुष्य इतने जोरसे बोल रहा है, वह कोई न कोई, ऐसा जान पडता है, मानो हमारी पहचानका ही है। कमसे कम इसकी आवाज तो कहीं न कहीं हमने अवश्य सुनी है। इसना विचार आनेपर फिर उनकी जिज्ञासा और भी अधिक बढी, अतएव वे फिर और भी जोर जोरसे दरवाजा खटखटाने लगे, तथा साथ ही साथ भीतरके उस मनुष्यको जोर जोसे पुकारने लगे। एक प्रकारसे अब वहाँ बिलकुल शोरगुल मच गया, परन्तु आश्चर्यकी बात यह कि, उस स्त्रीका गाने, रोने और हँसनेका सिलसिला इतनेपर भी बन्द नहीं हुआ, जैसे उस शोरगुलसे उसे कोई मतलब ही न हो! यह स्त्री कौन है, जो भीतर और बाहर दोनो ओरसे, पुरुषोंके चिल्लाते रहनेपर भी, उसके सामने इस प्रकार गाती, रोती और हँसती हुई दिखाई दे रही है? अस्तु। भीतरके उस आदमीने जब देखा कि, यह बाहरका व्यक्ति हमारे धमकाने घुडकनेकी आवाजोंसे नहीं जाता, तब वह नाराज होते हुए दरवाजेके पास आया, और एकदम दरवाजा खोलकर बोला, "क्यों जी, तुम कौन हो जो इतनी रातको हम गरीबोंको सतानेके लिये आये हो और यहाँ उपद्रव मचा रहे हो, जाते नहीं हो?" इस प्रकार, दरवाजा खुलनेके बाद, जब ये शब्द नानासाहबके कानोंमें प्रत्यक्ष रूपसे पडे, तब वे कुछ पीछे हट गये, और सोचने लगे कि, अवश्य ही यह आवाज हमने कहीं न कहीं सुनी है—फिर यह चाहे जब और चाहे जहाँ सुनी हो। यह सोचकर वे कुछ देरके लिये चुप हो गये। परन्तु उस व्यक्तिकी सूरत देखे बिना फिर भी वहाँसे उनकी जानेकी इच्छा नहीं हुई। अतएव उन्होंने उससे कहा, "महाराज, नाराज न हो, मैं मार्गका बटोही हूँ, कोई चोर अथवा लुटेरा नहीं। रास्ता भूल गया हूँ। आपकी झोपड़ीमें एक सुन्दर आवाज कानोंमें आई, इसलिये सोचा कि, चलकर देखूँ, शायद स्थान

मिल जाय। आप इतने क्रुद्ध क्यों होते हैं? किसी यात्रीको इस प्रकार अपमानपूर्वक अपने दरवाजेसे भगा देना हम हिन्दुओंका कर्त्तव्य नहीं है। फिर उसमें भी इतनी रातको जो बटोही आपके दरवाजे आ पड़ा है, उसको इस प्रकार झिड़ककर भगा देना आपके समान सज्जनोंको शोभा नहीं देता।" इस प्रकारकी बातें किये बिना वे वहाँका भेद कैसे पा सकते थे?

नानासाहबका यह कथन सुनते ही, ऐसा जान पड़ा कि, उस महाशयकी भी चित्त वृत्तिमें कुछ विचित्रसा ही परिवर्तन हुआ—कह नहीं सकते, किस कारणसे—चाहे यही कारण हो कि, जिस प्रकार उनको उस महाशयकी आवाज कुछ परिचितसी मालूम हुई थी, उसी प्रकार शायद उनको भी उनकी आवाजका परिचय मिल गया हो, अथवा और ही कोई कारण हो—जो हो, परन्तु इतना अवश्य हुआ कि, उक्त महाशय बड़बड़ाते हुए उनको अपनी झोपड़ीके अन्दर ले गया; और वे अभी कहने भी न पाये थे कि, उसने चकमक रगड़कर आप ही बत्ती जलाई—मानो उक्त व्यक्तिकी सूरत देखनेके लिये जैसे वे उत्कंठित हो रहे थे, वैसे ही वह भी उनकी सूरत देखनेके लिये उतावला हो रहा था; और इसी कारण बत्ती जलाते-जलाते वह महाशय उनसे कहता है, "देखो, उसके गाने और हँसनेकी ओर तुम बिल्कुल ध्यान न दो। यह एक हमारा बड़ा भारी दुर्भाग्य है। यह हमारी लड़की है, जो पागल हो गई है—सारा दिन और सारी रात यही गीत गाती रहती है, और आप ही आप रोती और हँसती रहती है।"

इतना उसने कहा ही था कि, चिराग अच्छी तरह जल उठा, और उस महाशयकी नजर नानासाहबके चेहरेकी ओर गई, तथा उसकी चेष्टासे स्पष्ट दिखाई देने लगा कि, उनको उसने पहचान लिया। वह महाशय प्राय वृद्ध था। नानासाहबने भी उसकी ओर कई बार देखा; और उनको ऐसा मालूम हुआ कि, उन्होंने भी उसकी सूरत कहीं देखी है, परन्तु ठीक ठीक वे उसको पहचान नहीं सके।

हाँ उस बुड्ढेने, ऐसा जान पड़ा कि, उनको अच्छी तरहसे पह-

चान लिया। क्योंकि उसके बर्तावमें अब बहुत कुछ अन्तर पड़ गया था, और अब मानो वह इस विचारमें था कि, उनपर हम यह बात प्रकट होने दें अथवा नहीं कि, हमने उनको पहचान लिया है। कुछ देरतक दोनों ही एक दूसरेकी ओर चुपके देखते रहे। इसके बाद उस वृद्ध महाशयने, मानो अपने मनका कोई न कोई निश्चय स्थिर कर लिया, और फिर वह उनसे बोला, "आप तो आजकल अपने किलेपर ही रहते होंगे ?"

यह प्रश्न सुनते ही नानासाहब बडे चकराये, और मन ही मन सोचने लगे.—"क्या इस महाशयने हमको पहचान लिया ? हम जहाँ जाते हैं, लोग हमें पहचान लेते हैं—यह क्या बात है ?"

उस वृद्ध महाशयने मानो उनके मनकी दशाको पहचान लिया, क्योंकि तुरन्त ही वह बोला, "आपको मैं अच्छी तरह जानता हूँ, आप आश्चर्य न करें। आपका सब हाल मुझे मालूम है।"

वृद्ध महाशयके इस कथनने तो उनको और भी अधिक अचम्भेमें डाल दिया, और वे सोचने लगे कि, यह कौन है। इतनेमें बाहरकी ओरसे घोड़ेकी टापोंकी आवाज आई, और दोनों यह देखनेको उठे कि यह कौन आया। नानासाहबने समझा कि, शायद हमारा ही घोड़ा छूट गया हो, पर यह बात नहीं थी।

नानासाहब और वह बुड्ढा, दोनों बाहर जाकर देखते हैं, तो कोई एक घुड़सवार घोड़ा दौड़ाता हुआ सामने आ रहा है। सवार आया और एकदम झोपड़ीके दरवाजेके पास आकर रुक गया, और उतरकर भीतर चला आया। ऐसा जान पड़ा कि, वह कोई सदैवका आने जानेवाला व्यक्ति है, यदि इतना नहीं, तो कमसे कम उस बुड्ढेमें उसकी जान पहचान तो बहुत अच्छी दिखाई दी। नानासाहबको भी—कह नहीं सकते किस कारणसे—ऐसी शंका अवश्य हुई, जैसे उस सवारसे उनकी भी कुछ न कुछ पहचान हो। परन्तु इतना वे अवश्य नहीं सोच सके, कि वह कौन है। सवारने बुड्ढेको एक ओर बुलाया—उस समय उन्होंने जब उसका बोल सुना, तब उनको पूरा पूरा विश्वास हो

गया कि, हाँ, अवश्य यह हमारी पहचानका है। क्योंकि उसकी आवाज नानासाहबके बिलकुल पहचानकी थी; परन्तु फिर भी वे एकदम उसका नाम नहीं सोच सके।

इधर बुड्ढेकी और उसकी धीरे-धीरेसे कुछ बातचीत होने लगी, जिसमे मालूम हुआ कि, वे दोनों ही उनके विषयमें कुछ बात चीत कर रहे हैं, क्योंकि कई बार हाथसे उनकी तरफ उनका इशारा हुआ, और ऐसा जान पड़ा, मानो वे उनमे उक्त बातचीत बहुत ही गुप्त रखना चाहते हैं, और इसीलिये वे दोनों और भी धीमी धीमी आवाजसे बोलने लगे। यह मामला क्या है? हम कहाँ आगये? ये कौन 'लोग हैं? इत्यादि बातोंके विचारमें वे बिलकुल निमग्नसे दिखाई दिये।

इधर उस सवारके साथ वृद्ध महाशयकी जा बातचीत होनी थी, सो हो गई, और वह सवार वहाँसे जाने लगा। उसने अभी दरवाजेसे पीठ फेरी ही थी कि, इतनेमें नानासाहबकी अत्यन्त प्रबल इच्छा हुई कि, वे उससे पूछें कि, भाई तुम कौन हो? कहाँसे आये हो, इत्यादि। और अपनी इच्छाके अनुसार उन्होंने उस सवारको रोका भी; परन्तु ऐसा जान पड़ा, मानो वह सवार उनसे बातचीत नहीं करना चाहता था; फिर भी जब उसने देखा कि, वे रोक ही रहे हैं, तब लाचार होकर उसे ठहरना पड़ा, और उसने तुरन्त ही, बाहर अँधेरेमें जाकर, उनसे कहा, "क्यों जी, मुझसे आपका क्या काम है? मैं तो······"

इतनेमें नानासाहबको एकदम ही मानो कुछ याद सा आया, और शीघ्रतापूर्वक वे वहाँसे उठकर उस सवारके पास गये, और आगे बढ़कर बोले, "वाहजी वाह! आप यह न समझें कि, मैंने आपको पहचाना नहीं। महाशय, आप इतने दिनतक कहाँ रहे? मैंने आपको बहुत तलाश किया, पर कुछ पता ही नहीं चला, किन्तु आज अचानक···"

नानासाहब यह कह ही रहे थे कि, इतनेमें ऐसा जान पड़ा कि, उनको कुछ और याद आया; और वे एकदम उस सवारसे बोले, 'और ये आपके श्वसुर सम्भाजी घरपड़े ही तो हैं?" वे कहने भी न पाये थे कि, इतनेमें दोनोंने—"चुप, चुप जोरसे न बोलिये। अजी, दीवालोंके

भी कान हैं !"—कहकर उनको मना किया। इन लोगोंसे मिलकर नानासाहबको बहुत ही आनन्द हुआ। क्योंकि आज बहुत दिनोंसे वे सिर्फ उनका वृत्तान्तभर सुन रहे थे, परन्तु मिलनेका मौका न आया था। फिर उसमें भी, वह सवार, जो पीछेसे आया था, उनका बड़ा भारी मित्र था, और उन्हींकी तरह यवनोंका कट्टर विरोधी था। उस समय महाराष्ट्रमें कुछ ऐसे नवयुवक उत्पन्न हो चुके थे, जिनका यह विचार था कि, यवनोंको पराभूत करनेके लिये कोई न कोई युक्ति निकालनी चाहिए अपने समान दस-पाँच युवकोंको मिलाकर कोई न कोई उद्योग इसके लिये करना चाहिए। जबतक ऐसा नहीं किया जायगा, तबतक यवनोंकी यह बला, जो हमारे गले पड़ी है, छूट नहीं सकती, और न हम स्वराज्यकी ही आशा कर सकते हैं। अपनेमेंसे कोई न कोई एक मुखिया खड़ा करके उद्योग प्रारम्भ करना चाहिए। इस प्रकारके विचारोंसे कुछ नवयुवकोंके मस्तिष्क उस समय सदैव व्याप्त रहा करते थे, और उन्हीं नवयुवकोंमेंसे सूर्याजी भी एक थे। नानासाहब की और उनकी सदैव गुप्त मन्त्रणा हुआ करती थी, और इसी प्रकारकी अनेक बातोंकी चर्चा उन दोनोंमें सदैव होती ही रहती थी। यही नहीं, बल्कि वे जब शिवाजीके गुटमें जाकर मिले थे, तब सूर्याजीसे सब बात-चीत करके ही गये थे। वास्तवमें नानासाहब और वे दोनो ही मिलकर उनके पास जानेवाले थे, पर सूर्याजीने सोचा कि, दोनोंका एक साथ जाना ठीक न होगा, अतएव वे नहीं गये। आगे फिर उनके ऊपर क्या क्या बीती, सो पाठकोंको मालूम ही है। अस्तु।

सूर्याजीने जब देखा कि, हमको अपना भेष छिपानेमें कोई लाभ नहीं, तब वे उनके साथ भीतर गये, और सब वृत्तान्त बतलाया। यवनोंने अचानक उनके घरमें आकर कैसा कैसा उपद्रव किया, सारा घर किस प्रकार विध्वंस कर दिया, और उनकी क्या हालत हो गई, फिर वे और उनकी स्त्री किधर गई, दोनोंकी कैसी कैसी भयंकर दशा हुई, स्त्री पगली कैसे हो गई, उनको उस भयंकर घायल स्थितिसे आराम होनेमें कितने दिन लगे, और फिर तबसे वे किस उद्योगमें लगे हैं

इत्यादि सब बातें बतलानेके लिए वे उनको वहाँ, एक ओर ले गये; और फिर सब हाल बतलाया। उसको बतलाते समय उनकी बड़ी विचित्र दशा हो गई। विशेषत. जब वे यह बतलाने लगे कि, उनकी स्त्री पागल कैसे हो गई। और अब किस प्रकार उसको अपने पतिका भी कुछ ज्ञान नहीं है, तब उनका हृदय एकदम भर आया। नाना-साहबको भी उनकी दशा सुनकर बड़ा खेद हुआ, और उन्होंने उनको समझानेका भी प्रयत्न किया, पर जो स्वयं अपने ही घावोंसे व्यथित है—कमसे कम जिसको, यह ज्ञान हो चुका है कि, शत्रुओंने उसको बुरी तरहसे घायल किया है—वह दूसरोंको क्या समझावे? और फिर उनको तो एक खरोंचमात्र लगा था—अर्थात् उनकी स्त्री सिर्फ पागल ही हुई थी, आराम होनेकी फिर भी आशा हो सकती थी, परन्तु इधर यह तो स्त्रीकी ओरसे अपने मनमें बिलकुल घायल ही हो चुके थे। अतएव सूर्याजीको समझाते समय उनके मनकी क्या दशा हुई होगी, उसका पाठकगण ही अनुमान करें। उन्होंने अपना सारा वृतान्त एक बार सूर्याजीके सामने कह डालनेका विचार किया; पर फिर तुरन्त ही सोचा कि, ऐसी घृणित और दुःखजनक बातकी चर्चा न करना ही अच्छा; अतएव उन्होंने अपने उक्त विचारको तत्काल ही रहित कर दिया। हाँ, उस समय सिर्फ इतना ही बतलाया कि, हम राजा शिवाजीके समूहमें जाकर शामिल हो चुके हैं; और उन्हींके काममें सुल्तानगढ़ जा रहे हैं। ऐसा विचार है कि, यह किला उनके हाथमें आ जावे, और इसीलिये हम पहले ही से जाकर इसका कुछ प्रबन्ध करनेवाले हैं। इस प्रकार सिर्फ ऊपरकी बातें बतलाकर फिर उन्होंने विस्तारपूर्वक यह बतलाया कि, राजा शिवाजीकी इस समय कहाँतक तैयारी हो चुकी है, और उनके द्वारा स्वराज्य संस्थापना होनेकी कहाँतक सम्भावना है। उन्होंने कहा कि, हम सभी यदि जाकर उनके समुदायमें मिल जायँगे, तो बहुत जल्द इन दुष्ट यवनोंकी हड्डी नरम न कर सकेंगे, और वास्तवमें राजा शिवाजीका गिरोह बहुत अच्छा जम चुका है। इसके बाद फिर उन्होंने उनको वीरता और चतुरताके भी अनेक दृष्टान्त दिये, और श्रीधर स्वामीको कैदसे छुड़ाते

समय उनको स्वयं शिवाजीके विषयमें जो अनुभव प्राप्त हुआ था, सो भी सब बतलाया। सारांश यह कि, बहुत दिनके बाद दो मित्रोंके मिलनेपर जितना कुछ परस्परका वार्त्तालाप होता है, उतना सब उनमें हुआ। परन्तु हाँ, नानासाहबके हृदयमें जो बड़ा भारी असाध्य घाव हो चुका था, उसे सूर्याजीके सामने वे प्रकट नहीं कर सके।

इधर सूर्याजीने भी अभीतक यह नहीं बतलाया था कि, आजकल वे क्या कर रहे हैं, इसलिए उनके मनको भी चैन था, अतएव उन्होंने वह सब हाल अपने मित्रके सामने बतलाना शुरू किया।

उन्होंने कहा—"नानासाहब, मेरे घरपर तो ऐसा भयंकर संकट आया कि, कुछ पूछिये नहीं—पिता माता इत्यादि, सभी घरके लोगोंको वे दुष्ट पकड़ ले गये। अब ऐसी दशामें मेरी क्या परिस्थिति हो गई, इसका आप ही विचार करें। आपके कुटुम्बपर जो आफत आई, सो आपके आगे नहीं, पर यहाँ तो मेरी आँखों देखते यह सब हुआ। इधर सम्भाजीरावके घरपर संकट आ ही चुका था, जिसकी याद अभी हम लोगोंका नहीं भूली थी, इतनेमें हम लोगोंपर भी यह आफत आ गई। अब, आप ही सोचिये, वास्तवमें मेरी क्या दशा हुई होगी! मैंने अपनी ओरसे एक मराठेका व्रत निबाहनेमें कोई कसर नहीं की, खूब लड़ा, पर कहाँतक टिक सकता था—मैं अकेला, और वे दस बीस मुस्टण्डे! उनके आगे मैं क्या करता? मैं इतना घायल हो गया था कि, बचनेकी कोई आशा नहीं थी, पर आपके पिताकी चिट्ठी ले आनेवाले उस लड़केने ही मेरे कुलकी लाज रखी, और मेरे प्राण बचाये। मैं बिलकुल मरने ही पर आ रहा था, और जीवनकी आशा बिलकुल छोड़ चुका था। इतनेमें आपके यहाँका वह लड़का मेरे सामने आ गया, और मैंने यह सोचकर कि, स्त्रीका और उस बच्चेका, यदि कोई प्रबन्ध हो सके, अच्छी बात है, मैंने आपके उस लड़के—श्यामा—से कहा कि, भैया, तू इन दोनोंका यदि हो सके, तो अमुक अमुक स्थानमें पहुँचा दे, और यह ले, मेरी निशानी, वहाँ दिखला देना, इससे तुझको वे लोग पहचान लेंगे। उस समय मुझे स्वप्नमें भी विश्वास नहीं था कि, वह लड़का मेरे

इस कार्यको कर सकेगा और उसको चपलतासे मुझे ये दिन फिर नसीब होंगे।

वाहरे श्यामा! उसने मेरे कार्यको इस खूबीके साथ निवाहा कि, उसकी बदौलत ही आज मुझे ये दिन दिखाई पड़ रहे हैं। बीचमें किसी कारणवश हमको अपनी उस असली झोपड़ीसे एकदम चला जाना पड़ा। श्यामाको हम इसका समाचार भी नहीं दे सके; पर शाबाश श्यामा—उसने हमारा पता लगा ही लिया; और फिर हमलोगोंके पास आ पहुँचा—आज वही श्यामा हमलोगोंका जीवन-प्राण हो रहा है। उसकी माताने मेरी पत्नीकी सेवा-शुश्रूषा करके उसको बहुत कुछ आराम दिया है; और उसकी दशाको सुधारा है, पर अब भी उसका पागलपन किसी उपायसे भी दूर नहीं हुआ है। उसके सिरमें अबतक वही भयंकर घटनाएँ चक्कर काट रही हैं। उन्हींपर उसने स्वयं अपना गीत भी बनाया है, जिसको रात दिन गाया करती है। इधर-उधर जंगलमें, जहाँ मन माना, घूमा-फिरा करती है। हमने अपनी ओरसे उसको होशमें लानेके लिये सब प्रयत्न किये, पर कुछ लाभ न हुआ। मुझे पहचानती भी नहीं; और न अपने बापको ही पहचानती है—बस, अपनी ही सनकमें रहती है। अस्तु। आराम होनेके बाद मैंने इस बात-का विचार किया कि, अब मैं यवनोंसे इसका बदला किस प्रकार निकालूँ; और यह सोचकर कि, चुप बैठना ठीक न होगा, दस-बीस रामोशी (जंगल जाति-विशेष) लोगोंका एक गिरोह इकट्ठा किया; अब उन्हींके साथ इस जंगलमें रहता हूँ। इसके सिवाय यह प्रतिज्ञा भी की है, कि चाहे जो करूँ, एक बार पहलेकी अपनी दशाको फिर प्राप्त करूँगा। हाँ, एक बातका ध्यान अवश्य रखता हूँ, कि जब कभी किसी गाँवमें डाका डालने जाता हूँ, तब यवनोंके घरको छोड़कर अन्य किसीपर धावा नहीं करता हूँ; और मार्गमें भी जब को लूट-मार करता हूँ, तब भी इस बातका ध्यान रखता हूँ कि, यवनोंको छोड़कर और किसीको कष्ट पहुँचने न पावे। नानासाहब, लोग कहते हैं कि, डाका डालना और लूट-मार करना एक बहुत ही नीच कार्य है, पर मेरा

खयाल है कि, यह कार्य नीच तभी होगा, जबकि केवल अपने पेटके लिये किया जायगा। मेरा ऐसा उद्देश्य नहीं है। किन्तु मेरा तो, इसके विरुद्ध, यह विचार है कि, जिन चोरोंने हमको लूटा है, उनके हाथमे उस धनको छीन लें, और फिर उसी धनसे अपना उद्धार करके स्वराज्य स्थापित करें। इसके अतिरिक्त यदि और कोई उद्देश्य होता, तो अवश्य ही मेरे मनको कुछ खयाल होता। पर ऐसी कोई बात नहीं। और इन्होंने भी क्या किया है? इन्होंने भी तो डाकेजनी ही की है। इनसे हमारा क्या सम्बन्ध था? हमारे घरमें घुसनेका इनको क्या अधिकार था? नानासाहब, जो कोई लुटेरापन दिखलानेमें चतुर हो, और जोरके साथ आगे बढ़कर सफलता प्राप्त न कर ले, वही राजा! और यदि सफलता प्राप्त न कर सके, तो वही लुटेरा! आप भी प्रयत्न करें—प्रयत्न करना हमारे हाथमें है, और सफलता मिलना ईश्वरके अधीन! बस, मैं तो यही सब सोचकर इस धुनमें पड़ा हूँ। आज हमको लोग लुटेरे कहेंगे, चोर कहेंगे, स्वयं हमारे भाई भी हमको डाकू कहेंगे, कोई हमारा साथ नहीं देंगे, पर इससे क्या? डरनेसे कहीं काम चल सकता है? मेरे समान कितनोंको मरना होगा, तब कहीं कोई एक आध माईका लाल आगे आवेगा। आपने शिवबाकी बात निकाली, पर आपके पिता मेरे पिता और स्वय उन्हींके पिता, क्या कहते हैं, सो सोच देखिये। हम आज फौज-फाटा रखने, अथवा अन्य किसी प्रकारसे युद्धकी तैयारी करनेको तो शक्ति नहीं रखते, परन्तु वह शक्ति जिस मार्गसे हमारे अन्दर आवेगी, उस मार्गको हमने स्वीकार कर लिया है, और यही सच्चा मार्ग है, और कोई नहीं, आप समझकर देख लें।"

सूर्याजी जिस समय यह सब कह रहे थे, नानासाहब चुपकेसे सुन रहे थे। अवश्य ही उनका मत भी इससे भिन्न नहीं था। इसलिये, एक तरहसे, उनको इससे आनन्द ही हुआ। उसमे भी सूर्याजीका यह नियम तो उन्हें और भी पसन्द आया कि, यवनोंको छोड़कर अन्य किसीपर लूट-मार न की जाय। सूर्याजी बोलते बोलते बीचमे ही रुक गये थे, सो अब फिर वे आगे बोले, "और, नानासाहब, देखिये, मैंने

आज ही रास्तेमें दो आदमी पकडे हैं। उनके विषयमे मुझे कुछ शंका है; और इसीलिये उनको मैंने सिर्फ वन्द कर रखा हैं। मैं मुसल्मानोंकी तरह स्त्रियोंपर हाथ नहीं डालता। जिस प्रकार मेरी माँ-वहन हैं, उसी प्रकार उनकी। झगड़ा-फिसाद, मारकाट, जो कुछ हो, पुरुषोंमें हीं, स्त्रियोंको उसमें कभी शामिल न करे। वस, इन्हीं दो-तीन वातोंका खयाल रखना है, और इनपर जवतक हम खयाल रखेंगे, तवतक हमको खेद होनेका कोई कारण नहीं। शिवराजको भी इन्हीं वातोंपर ध्यान रखना चाहिये।"

यह अन्तिम वाक्य सुनकर नानासाहव वीचहीमें वोल उठे, और उन्होंने राजा शिवाजीका और भी विशेष वृत्तान्त उनको वतलाया, तथा साथ ही साथ यह भी कहा कि आप भी उन्हींमें जा मिलें, उनके पास हथियार काफी जमा हो चुके हैं; और जहाँ सुल्तानगढ़ एक वार उनके हाथमें आ गया कि, फिर युद्धकी भी पूरी-पूरी तैयारी उनके पास हो जायगी। सूर्याजीके मनमें भी यह वात आ गई, और उन्होंने सोचा कि, गत महीने-दो महीने डाकेजनी अथवा वटमारीसे जो धन हमने प्राप्त किया है, वह भी शिवाजीके ही कोशमें दे दिया जाय। इसके वाद जव दोनों वातचीत करके सुचित हुए, तव नानासाहवने सूर्याजीकी छावनी और उनके आदमियोंको देखनेकी इच्छा प्रकट की, और उन्होंने भी उनको वहाँ ले जानेका निश्चय किया। इतनेमें पूर्व दिशाकी ओर प्रकाशकी आभा आने लगी। वह पगली वीचमें कुछ देरके लिये कहीं पड़ रही थी, अथवा सो रही थी, सो फिर अपना वही नित्यका गीत गाने लगी, और वीच वीचमें पहलेहीकी भाति रोने लगी। सूर्याजी और उनके श्वसुरके लिये यह कोई नवीन वात नहीं थी, अतएव उनको कुछ भी मालूम नहीं हुआ; परन्तु नानासाहवके लिये वह एक विल्कुल ही नवीन वात थी। उन्होंने उसे सिर्फ रातको एकवार सुना था, और एक वार अव फिर सुना। इसके सिवाय सूर्याजीके मुखसे अभी वे उसका सारा हाल सुन भी चुके थे, अतएव उनको उसकी वह सारी दशा देखकर अत्यन्त ही दुःख हुआ। कुछ देर वाद विल्कुल सुवह हो गया,

तब वह नानासाहबको भी दिखाई पड़ी। रूपमें कितनी सुन्दर; और उसकी ऐसी दशा! यह सोचकर उनको और भी अधिक खेद हुआ। परन्तु इतनेहीमें क्या चमत्कार हुआ कि, नानासाहबको देखकर वह पगली अपनी जगहसे उठी, और बहुत ही विकट रूपसे हँसी, फिर "आगया दुष्ट" ऐसी कहती हुई, और दीर्घ रोदनस्वर निकालती हुई झोपड़ीके बाहर निकल पड़ी। इसके बाद फिर, जितने जोरसे उससे दौड़ते बना, उतने ज़ोरसे दौड़ती हुई न जाने कहाँकी कहाँ चली गई!

बाईसवां परिच्छेद

श्यामा

सूर्याजीने कहा कि, "उसके पीछे लगनेमें कोई लाभ नहीं। वह जब मन चाहता है, तब चाहे जहाँ घूमती फिरती रहती है। चाहे जो कुछ कहो, कुछ सुनती-धुनती नहीं। हाँ, इतना ही अच्छा है, कि उससे किसीको हानि नहीं होती, और न खुद ही पागलपनमें आकर अपनी हानि करती है। जो कुछ वह कहती रहती है, सो सब कलसे आप देख ही रहे हैं। बस, इसके सिवाय और कुछ नहीं।" यह कहकर उन्होंने नानासाहबसे अपने अड्डेकी ओर चलनेकी प्रार्थना की, और दोनों ही वहांसे चल दिये। सूर्याजीने जिस जगह अपना अड्डा जमाया था, वह जगह बहुत ही सुरक्षित और रमणीय थी। वहाँ किसी दिशाकी ओरसे भी कोई यात्री निकलता, तो इसकी खबर उनको लगे बिना नहीं रह सकती थी। अभीतक जो कुछ तैयारी उन्होने कर रखी थी, और जो कुछ सामग्री एकत्र कर रखी थी, वह सब उन्होंने उनको दिखलाई। शिवराजके मन्दिरके तहखानेमें जो सामग्री जमा थी, उसके आगे इसकी कोई गणना नहीं थी, परन्तु फिर भी थोड़े दिनके अन्दर सूर्याजीने जो सामान इकट्ठा कर रखा था, वह सन्तोषजनक था। उसे देखकर नानासाहबने कहा कि, राजा शिवाजीको आपसे अवश्य ही बड़ी मदद मिलेगी; और आप अवश्य उनको मदद करें, इसके बिना हमलोगोंका उद्देश्य

सिद्ध नहीं हो सकता। इस प्रकार बातचीत होनेके बाद फिर नानासाहब-ने अपना आगे जानेका विचार प्रकट किया। इसपर सूर्याजीकी यह सम्मति हुई कि, पहले दूसरे किसीको भेजकर गुप्त रूपसे सब हाल मँगा लेना चाहिए, तब जाना उचित होगा। बीजापुर आप गये थे; और वहाँ आपका हाल कुछ लोगोंको मालूम हुआ था; इसलिये सम्भव है कि, उस समय इधर-उधर और भी कुछ चर्चा चली हो, और आपका पता लगानेके लिये उधर गुप्तचर भी गये हों। ऐसी दशामें एकदम आपका उधर जाना ठीक नहीं होगा। जो काम करना है, विचारकर करना चाहिये। हमारे पास आदमी भी मौजूद है—ऐसा नहीं कि न हों—वे तुरन्त जाकर सब पता ले आवेंगे। यह कहकर उन्होंने नाना-साहबकी ओर देखा। वे पहलेहीसे इसी विचारमें निमग्न थे। उनका कथन उनको सत्य जान पड़ा; और विशेषतः उनके मनमें यह शंका आई कि, यदि पिताजी किलेपर, आ गये होंगे, तो अवश्य ही हम उतनी गुप्त रीतिसे अपना कार्य नहीं साध सकेंगे। नानासाहबको मुख्य कार्य यही सिद्ध करना था कि, किलेके आसपासके और उसके ऊपरके सब लोगोंको अपनी ओर मिला लिया जाय; और जब किला लेनेका मौका आवे; तो वे सब लोग इस कार्यमें मदद करें। यह कार्य सिद्ध करना उसी दशामें अभीष्ट था, जब कि उनके पिता किलेपर न हों। क्योंकि किले-पर पिताजीके रहते हुए किलेके लोगोंको बहकानेका प्रयत्न करना मानो एक प्रकारसे पितृद्रोह करना है। उस दशामें शायद किलेके लोगोंको भी यह बात पसद न आवेगी, और न वे हमको सहायता ही देंगे। बस, यही सब सोचकर उनका यही विचार हुआ कि, अवश्य, पहले किसी होशियार आदमीको उधर भेजकर सब भेद मँगाना चाहिये। इसलिये, अब कौन आदमी इस कार्यके लिये नियुक्त किया जाय, इसी विचारमें सूर्याजी और नानासाहब थे कि, इतनेमें वह लड़का, श्यामा, दूरसे आया, और नानासाहबके सामने झुककर उसने तीन बार सलाम किया।

पाठकोंको मालूम ही है कि, नानासाहबपर श्यामाकी अत्यन्त ही भक्ति और श्रद्धा थी, वह उनको बहुत ही प्रेम और आदरकी दृष्टिसे

देखता था। उसने दूरसे पहले ही उनको देखा था, नानासाहब और सूर्याजी जब छावनी देखते हुए इधर-उधर घूम रहे थे, तभी श्यामाकी नजर उनकी ओर गई थी, और वह इस बातका मौका देख रहा था कि, कब मैं उनके सामने जाऊँ, और उनको अदबके साथ सलाम करूँ। अब वह मौका उसे मिल गया, और आगे बढ़कर उसने उनको सलाम किया। नानासाहबने देखा कि, अब पहलेकी अपेक्षा वह बहुत कुछ सम्हल गया है, और उसकी स्वाभाविक चपलतामें भी बहुत कुछ वृद्धि हुई है। यह देखकर उनको बहुत आनन्द हुआ। नानासाहब जिस समय किलेपर थे, कई बार उन्होंने उसको देखा था, और सूर्याजीने अभी पिछली रातको उसका जो वृत्तान्त बतलाया था, वह भी उनके ध्यानमें था। अतएव उन्होने सोचा कि, उसको ही यदि सुल्तानगढ़पर सब भेद लेनेके लिये भेजा जावे, तो विशेष उपयोगी होगा। वह लड़का बहुत ही खुशदिल और आनन्दी स्वभावका था, अतएव किलेके ऊपर और नीचेकी बस्तीमें सभी उससे भली-भाँति परिचित थे। परन्तु अब इधर कई महीनेसे वह अपनी माताके साथ चूंकि इधर चला आया था, अतएव, सोचा गया कि, इस समय यदि यह फिर किलेपर जायगा; और वहाँ सब मनुष्योंसे मिलकर हमारे बादका सब हाल इत्यादि पूछेगा, तो कोई सन्देह भी न करेगा, क्योंकि लोग समझेंगे कि, यह इतने दिन बाद बाहरसे आया है, अतएव ऐसी दशामें सबसे मिलना और बातचीत करना इसके लिए स्वाभाविक है। इसके सिवाय वाचालतामें इसकी वहाँ खूब प्रसिद्धि है, इसलिए कोई, कहीं जानेसे, इसको मना भी नहीं कर सकता, क्योंकि सभी इससे बातें करनेके लिये उत्सुक रहते हैं, और इससे बातचीत करनेमें सभीको आनन्द आता है। इधर सूर्याजी भी उस लड़केपर बहुत प्रेम करने लगे थे, और उसे अपने निजके लड़केके समान ही समझते थे। उसके सभी गुणोंपर वे खूब मोहित थे। इसलिए उसका सलाम लेनेके बाद वे उससे बोले, "क्यों रे, किलेपर जाकर तू वहाँका सारा हालचाल ले आवेगा?" वह तो ऐसे किसी न किसी कार्यकी प्रतीक्षामें सदैव ही रहा करता था। अतएव सूर्याजीके मुखसे उक्त प्रश्न

सुनते ही उसको अपूर्व आनन्द हुआ; और वह बोला, "मैं बहुत जल्द जाकर सब समाचार आपको ला दूँगा।" इधर सूर्याजी और नानासाहब दोनोंको विश्वास था कि, यदि यह कार्य कोई अच्छी तरहसे कर सकता है, तो वह श्यामा ही कर सकता है। इसलिये दोनोंने उसको वहाँ जानेकी आज्ञा दे दी।

नानासाहब वहीं रह गये। किलेकी ओरकी रास्ता इसी जगहसे जाता था, जहाँ उन लोगोंका अड्डा था। इसलिये कोई भी आदमी जब वहाँसे निकलता—विशेषकर बड़ा आदमी—तब इन लोगोंको जरूर ही उसका समाचार मिल जाता था। इसलिये सूर्याजीसे मालूम हुआ कि, अभीतक बीजापुरकी ओरसे कोई भी मनुष्य इस तरफ नहीं गया। इससे उनको विश्वास हो गया कि, अवश्य ही हमारे पिताजी भी अभीतक किलेपर न गये होंगे, क्योंकि यदि गये होते, तो अवश्य ही इन लोगोंको मालूम होता। तथापि उन्होंने निश्चय यही किया कि, अब श्यामा जबतक वहाँका भेद लेकर लौट न आवे, तबतक यहाँसे आगे बढ़ना ठीक न होगा। इसके सिवाय, उन्होंने सोचा कि, राजा शिवाजी भी अभीतक वापस नहीं आये, इसलिए एक-आध दिन वहाँ लग भी जाय, तो कोई विशेष हानि नहीं। यह सोचकर वहाँ रह जानेमें उन्हें कोई चिन्ता नहीं हुई।

श्यामा अपनी जगहसे चला, सो पहले किलेकी ओर नहीं गया; किन्तु बीजापुरके मार्गपर गया। "आकृति छोटी, परन्तु कृति भारी," ऐसे ही लोगोंमेंसे वह एक था। धूर्त्तताकी तो मानो उसे लड़कपनसे घूंटी ही दी गई थी। मतलब उसका यह जिससे यह भी किसीको पूरा-पूरा मालूम होने न पावे कि, मैं किस ओरसे आया। इसलिये वह बीजापुर-मार्गपर बहुत दूरतक जाकर फिर वहासे लौटनेवाला था, और ऐसी ही युक्ति उसने की। पास ही चार-पाँच कोस जाकर फिर वहाँ उसने एक गाँवमें कुछ देरके लिए ठहर जानेका भी विचार किया। गाँवमें जाकर पहुँचा। वहाँ एक कुएँके पास, रोटी, जो साथमें ले आया था, खानेका विचार करने लगा, और रोटीकी पोटली वहीं

एक वृक्षके नीचे रखकर उसके पास ही आप स्वयं बैठा, इसके बाद फिर एक लोटाभर पानी लाकर रोटी खानेका प्रारम्भ करनेहीवाला था कि, इतनेमें क्या देखता है कि, दूरसे एक स्त्री और एक पुरुप उसी ओरको आ रहे हैं। श्यामाकी दृष्टि कैसी तीव्र थी, सो पाठकोंको मालूम ही है। दूरपर आनेवाले वे मनुष्य कौन हैं? इस विपयमें उसे पूरी पूरी शका उपस्थित हुई, और वह उसी ओरको खूब गौरसे देखने लगा। ज्यों-ज्यों वे लोग पास आते गये, उसकी शका और भी अधिकाधिक दृढ होती गई, और अन्तमे उसे निश्चय ही हो गया कि, वे दोनो व्यक्ति कौन हैं। अब वह इस अचम्भेमें पड़ा कि, यह मामला क्या है? ये लोग पास आकर मुझे क्या कहेंगे? हम इनसे मिलें अथवा नहीं? इनका हालचाल जाननेके लिये कुछ छिपकर बैठ जायें? इस प्रकार क्षणभर विचार करके वह वहाँसे उठनेहीवाला था कि, इतनेमें उन दोनो व्यक्तियोंमेंसे एक व्यक्तिकी आँख उससे भिड़ गई। श्यामाने सोचा कि, इस मनुष्यने हमको पहचान लिया, और हमने भी इसे देख लिया, इस विपयमें इसको भी अब कोई शका नहीं। ऐसी दशामें अब छिपने-विपने से कोई लाभ नहीं। यह सोचकर वह भी अपनी जगहसे कुछ आगे बढा, और उनमेंसे जो स्त्री थी, उसीको, उसके नामसे, पुकारा। उस स्त्रीने भी उसका नाम लेकर 'हाँ'' कहकर उत्तर दिया। इसके बाद उसने अपने साथके पुरुपसे वहीं खड़े रहनेके लिये कुछ धीरेसे कहा, और स्वय अकेले आगे बढ़कर श्यामासे बोली, "श्यामा, मै तेरे ही घर आनेवाली थी। तेरी माँसे मुझे मिलना था। वह कहाँ है? मेरे साथ साथ दूसरा वह कौन है, सो तू पहचान ही गया होगा। किलेतक पहुँचनेके लिये अभी बहुत चलना पड़ेगा। जो दो कदम भी पैदल कभी नहीं चलीं थीं, आज कोसों पैदल ही चलनेकी नौबत उनपर आ गई है। भेप भी सदैव एक समान नहीं रख सकतीं—कभी कुछ, कभी कुछ वस्त्र पहनने पड़ते हैं, नहीं तो लोग पहचान लेवें। इसके सिवाय, अब किसीको मुख भी नहीं दिखला सकतीं, क्योंकि मुँहमें जो कालिमा लग गई है, वह जबतक दूर नहीं हो जायेगी,

तबतक मुँह नहीं दिखलावेंगी, ऐसा उन्होंने निश्चय कर लिया है। अबतक जिस तरह हो सका, लुकते-छिपते हुए उन्होंने यात्रा की है; पर अब यह भी सम्भव नहीं है, क्योंकि ज्यों-ज्यों किला पास आता जायगा, इस प्रकार गुप्त रहते हुए प्रवेश करना और भी कठिन होता जायगा। श्यामा, तुझे क्या क्या बतलाऊँ? तू समझ भी तो नहीं सकेगा! तेरी माँ अब जहाँ कहीं हो, वहीं मुझे ले चल। उससे मेरी मुलाकात एक बार करा दे। उसीकी सहायतासे किलेके आस पास हम दोनों कहीं रहेंगी। परन्तु हां, यह किसीको भी मालूम न होने पावे कि, हमलोग यहीं कहीं हैं। किलेके नीचे वस्तीमें जितने आदमी हैं, सबके विषयमें मैंने विचार किया, पर तेरी माके अतिरिक्त मुझे और कोई इस कार्यके लिए उपयुक्त दिखाई नहीं दिया। मेरी मौसी यहाँसे दो कोसपर नादेगाँवमें है, वहीं मैं आज इनको लेजाकर रखूँगी। लेकिन इनके मनमें है कि, किलेसे कहीं नजदीक ही रहें; और सो भी गुप्त रूपसे! यह बात तेरी, और तेरी माँकी सहायता बिना बिलकुल असम्भव है; और तेरी माँ अवश्य सहायता करेगी, इस विषयमें मुझे कोई शका ही नहीं।"

वह स्त्री जिस समय श्यामासे उपयुक्त बातें कह रही थी, वह चुपके खड़ा हुआ सुन रहा था। इसके बाद वह उसके अन्तिम वाक्य सुनकर बोला, "ऐसा क्यों? किलेपर अप्पासाहब नहीं, इसलिये? पर इस विषय में अब कोई चिन्ता करनेकी आवश्यकता नहीं। नानासाहब यहाँसे पास ही हैं। उनको जाकर मैं सब हाल बतलाता हूँ—वे ....."

परन्तु नानासाहबका नाम सुनते ही वह स्त्री बिलकुल घबड़ा-सी गई, और एकदम उसका हाथ पकड़कर बोली, "अरे नहीं, ऐसा मत कर। उनको हमलोगोंके यहाँ आनेकी खबर भी मत दे। क्या कहता है? वे पास ही हैं? कहाँ? किलेपर? श्यामा, बाईसाहबा जीती रहें, ऐसी यदि तेरी इच्छा है, तो तू उनको हमलोगोंका कुछ भी समाचार न बतलाना। यह भी न बतलाना कि, हमलोग तुझसे मिली। यह बात उनके कानोंमें न जानी चाहिये। पास कहाँ हैं वे?"

उस स्त्रीके इस विचित्र सम्भाषणसे और उसके उस हाथ पकड़नेके ढंगको देखकर श्यामाको बड़ा अचम्भा हुआ। वह उसके उक्त कथन और उसके इस व्यवहारका कुछ अर्थ ही न समझ सका। उसने सोचा कि, नानासाहबकी स्त्री भेष बदलकर अपनी दासीको साथ लेकर कहीं गई थी अवश्य, और अब यह वापस आ रही है, परन्तु यह क्या बात है, जो यह कहती है कि, उनको इस विषयमे कुछ भी न बतलाना, और हम अब गुप्त रूपसे किलेके आस पास कहीं रहेंगे? वह बड़े चक्करमे पड़ा, परन्तु वह नानासाहबके समान ही—किंबहुना, उससे भी कुछ अधिक—उनकी पत्नीका भक्त था, अतएव उस दासीके यह कहने पर कि, अब आगे कुछ मत पूछ, वह कुछ नही बोला। परन्तु फिर कुछ देर बाद कहता है, "चन्दाबाई, नादेगाँवके रास्ते पर ही वह स्थान मिलता है, जहाँ नानासाहब इस समय मौजूद हैं। इसलिये उस रास्तेसे तुम गुप्त रूपसे जा नही सकती। किसी युक्तिके साथ जाना पड़ेगा। और वह बहुत सहज है। बाईसाहबा इस पोशाकको छोड़ दें, और तुम्हारे ही समान दासीका भेष धारण करें। मैं भी तुम्हारे साथ ही रहूँगा, और एक दूसरे ही मार्गमे तुमको ले चलूँगा। फिर तुम नादेगावमे रह जाना, और मैं अपनी माँको लेकर वहीं आ जाऊँगा। इस प्रकार मेरी माँ जब तुमसे मिल जाय, तब फिर जो आगे तुम्हारी इच्छा हो, सो करना। लेकिन इस समय यह इन वस्त्रोंमें इधरसे किसी प्रकार नहीं जा सकतीं। क्योंकि मार्गमें ऐसे अनेक लोग मिल सकते हैं, जो कि इनको पहचान लेंगे।" यह सुनकर दासीके ध्यानमे भी आ गया कि, अब इसकी सलाह के अनुसार कार्य किये बिना निर्वाह नही होगा। परन्तु भेष बदल्नेके लिए उसके पास सिर्फ एक पुराना लुगड़ा था, जिसे वह अपने साथ लिये थी। उसने सोचा कि, देखो, समयकी बलिहारी है—जिसको कितनी ही पुरानी साड़ियों मे जन्मभर पहनती रही, उसीको आज मुझे अपना ही एक पुराना लुगड़ा पहननेकी नौबत आ पहुँची! इस बातपर उस बेचारीको अत्यन्त दुःख हुआ। किन्तु क्या करती? कोई दूसरा साधन ही न था। आँखोमे आँसू भरकर उसने अपनी मालकिनको वह सब

बातचीत बतलाई, जो कि श्यामाके साथ हुई थी। साथ ही साथ यह भी कहा कि, नानासाहब यहाँसे बिल्कुल पास ही ठहरे हुए हैं, तथा और भी अनेक आदमी हैं, जो पहचान सकते हैं, इसलिये अब नादे-गाँवतक एक दरिद्री दासीका भेष धरकर ही चलना होगा। उसकी स्वामीने यह सब सुन लिया। यह सुनकर, कि नानासाहब पास ही हैं; उसकी चेष्टा कुछ खिन्न हुई। परन्तु उसका प्रभाव उसने अपने कार्यपर बिल्कुल ही नहीं पड़ने दिया; और तत्काल ही दासीकी बगलसे वह पुराना लुगड़ा खींच लिया, और यह भी प्रकट किया कि, मुझे इसके पहननेमें कुछ भी खेद नहीं। इसके बाद उसने तबतककी उस मर्दानी पोशाकको एक बार नमस्कार किया; और उसकी एक गठरी बना ली। अब चूंकि उसने वह पुराना लुगड़ा पहन लिया था, और आज कई दिनसे पैदल चलनेके कारण थक भी बहुत गई थी, अतएव उसकी हालत बहुत खराब हो रही थी; परन्तु फिर भी उस साध्वीको इसका कुछ भी खेद नहीं हुआ। निस्सदेह उसकी आँखोंमें आँसू आ गये थे, पर वे एक दूसरे ही कारणसे। उस दासीको अपनी स्वामिनीका वह भेष देखकर बहुत ही दुःख हुआ। वह ऐसा समय नहीं था कि, कुछ कहा जाता। पर उससे रहा नहीं गया; और वह एकदम रोकर बोली, "बाई-साहबा, यह कैसा सकट हमारे ऊपर आया!" भेष बदलनेके बाद आगे आगे श्यामा और उसके पीछे वे दोनों स्त्रियाँ चलीं; और बहुत ही कठिनाईसे अन्तमें नाँदेगाव जा पहुँची। मार्गमें एक-दो जगह सूर्याजी-के आदमी अवश्य ही मिले; पर श्यामा साथ था ही—उसने यह कहकर मौका टाल दिया कि, ये मेरी मौसीकी लड़कियाँ हैं, अमुक गाँवको जा रही हैं। अतएव किसीने नहीं रोका, और न किसीने पहचाना ही। नाँदेगाव पहुँचनेपर चन्दाबाई अपनी मालकिनके साथ अपनी मौसीके घर रही; और श्यामा अपनी माताको लिवानेके लिये चला आया।

पाठकोंको स्मरण होगा कि, बीजापुरसे बाहर निकलकर अपनी पत्नीसे नानासाहबकी भेंट हो गई थी; और वहीं उसकी दासीसे उनकी बातचीत भी बड़ी तेजीसे हुई थी। बस, उसी दिनसे उस साध्वीकी बड़ी

विचित्र दशा हो रही थी। वह बार बार यही सोचती कि, देखो, हम करने गईं थीं क्या, और हो गया क्या ? और न जाने इसका परिणाम क्या होगा ? बस, यही सोच सोचकर अब वह एक प्रकारसे अपने जीवन से निराश-सी हो चुकी थी। उसकी आज्ञाकारिणी दासी उसके साथ थी, इस कारण उसे बहुत कष्ट नहीं हुआ था। उसने सकट-समयमे भी सब प्रकारसे अपनी स्वामिनीको सुख देनेका प्रयत्न किया था, पर जब हृदय ही झुलसकर जल-भुन गया, तब दासीका प्रयत्न कहाँतक काम कर सकता था ? "हमने किया क्या ? और हो गया क्या ?" इस द्वादशाक्षरी मन्त्रका मन ही मन वह बराबर जप कर रही थी। उसका विचार था कि, यहाँ न रहते हुए सुलतानगढ़से कहीं पास ही, किसी पहाड़की गुफा अथवा किसी घाटीमें, झोपड़ी डालकर रहना चाहिये। इसमें उसका एक दूसरा ही उद्देश्य था, जो शीघ्र ही पाठकोका मालूम होगा।

तेईसवां परिच्छेद

खांसाहब बीबी बने

श्यामाने जब उन दोनोंको उक्त गाँवमें पहुँचा दिया, तब फिर इस बातका विचार करते हुए कि, यह मामला क्या है, वह अपनी माताके पासको चला। सुलतानगढ़पर, उसके चले आनेके बाद, क्या क्या घटनाएँ हुईं, सो कुछ श्यामाको मालूम था ही नहीं। इसलिये अब वह यही विचार करने लगा कि, हमारे मालिककी पत्नी आज इतने दिनसे कहाँ चली गई थी, और फिर आज पुरुषवेशसे वह इधर कहाँसे आरही है, इसके सिवाय, वह यह भी कहती है कि, हम नानासाहबसे गुप्त रहकर किलेके आस ही पास कहीं अज्ञातवासमें रहना चाहती हैं। इस बातका अर्थ क्या है, वह विचार करने लगा। उसने सोचा कि, चन्द्री दासीकी इच्छाके अनुसार क्या नानासाहबकी पत्नीका कभी भी अज्ञातवासमे रहना सम्भव है ? हाँ, यदि वह इस बातका

निश्चय कर ले कि, हम कभी घरसे वाहर नहीं निकलेंगी, तो शायद उक्त वात सम्भव हो जाय। परन्तु हमारी मालकिन चाहे एक वार अज्ञातवासमें रह भी लेवें; पर चन्द्री कैसे रह सकेगी? इसको तो आस-पासके सभी लोग अच्छी तरह जानते हैं; इसका अज्ञातवासमें दिन व्यतीत करना विलकुल असम्भव है। अस्तु। हमको इससे क्या? हमारा तो इस समय मुख्य कर्त्तव्य यही है कि, हम अपनी माताको उनसे मिला दें। वस, यही सोचकर वह तुरन्त ही वहाँ पहुँचा, जहाँ उसकी माता थी; उसको सव समाचार वतलाकर नादेगाँवको रवाना कर दिया। इसके वाद फिर वह अपने असली कामको चल दिया।

अभीतक जितना काम श्यामाने किया, उस कार्यको करनेके वाद उसको अपने असली कार्यपर जानेमें कुछ थोड़ा-वहुत विलम्ब अवश्य ही हो गया। परन्तु वह मामूली वातों—जैसे रात-विरात अँधेरेमें चलने इत्यादि—के लिये डर जानेवाला लड़का नहीं था। अतएव, यद्यपि अव शाम होने आई थी, परन्तु फिर भी वह सुल्तानगढ़की ओर वड़े सपाटेसे चला जा रहा था। इतनेमें स्वाभाविक ही पीछेकी ओर उसकी दृष्टि गई, तो क्या देखता है कि, दूरपर कोई यात्री घोड़ेपर वैठा हुआ आ रहा है। यात्री शरीरसे खूव हृष्टपुष्ट और भारी था। हथियार वाँधे हुए वड़ी शानसे चला आ रहा था। लेकिन ऐसा जान पड़ता था कि, वह वहुत दूरसे आ रहा है, इस कारण उसकी चेष्टापर थकावटके चिह्न दिखाई दे रहे थे। वह ज्योंही उसके पास आया, न जाने क्या सोचकर एकदम अपने घोड़ेको रोक लिया; और वोला—"क्यों वे छोकरे, क्या तू इस प्रान्त और किलेकी ओरके कुछ लोगोंको जानता है?" उसने यह वड़ी शानसे पूछा। श्यामा तुरन्त ही ताड़ गया कि, यह यात्री कोई मुसल्मान है। इधर कुछ दिनसे, चूँकि वह सूर्याजीके गुटमें शामिल हो गया था, अतएव मार्गमें पकड़े जानेवाले ऐसे-ऐसे मुसल्मानोंको तंग करनेकी उसको आदत ही पड़ गई थी; और चाहे जैसा जवरदस्त यवन हो, उसका उसे कुछ भी भय नहीं मालूम होता था। उसमें भी जव इस प्रकारके कोई खाँसाहव मिल जाते, तव वह अवश्य ही उनसे

कुछ बातचीत करता, उनकी हँसी करता, और उनको धोखा देकर अपने अड्डेकी ओर ले जाता। ऐसी बातोंमें अब वह बहुत ही चतुर हो गया था। अस्तु। उपर्युक्त खाँसाहबने ज्योंही उससे उपर्युक्त प्रश्न किया, श्यामाने तुरन्त उत्तर दिया—"हाँ, मैं इधरकी सभी बातोंसे खूब ही वाकिफ़ हूँ, और किलेपर तो मैं सदैव ही आया-जाया करता हूँ, इस-लिये सब हाल मुझे मालूम है। आप कहाँ जाना चाहते हैं, सो बत-लाइये। मैं आपको ठीक वहीं पहुँचा दूँगा। आपको यदि किसीसे मिलना हो, तो मैं मिला भी दूँगा। मुझे आप अपना सेवक ही सम-झिये। यह गुलाम आपकी खिदमतके लिये हाजिर है। जो हुक्म हो, फरमाइये। आपकी खिदमतसे मुझे भी सन्तोष होगा।"

खाँसाहब (श्यामाने उस व्यक्तिको खाँसाहबकी पदवी दे ही दी; और उसने भी चूँकि इसपर कोई आपत्ति नहीं की, कि वह कोई खाँसाहब नहीं, इसलिए हम भी अब उसके लिए इसी—'खाँसाहब'—शब्दका ही प्रयोग करेंगे।) ने देखा कि, लड़का बड़ा होशियार है; और बातचीत करनेमें किसी प्रौढ़ व्यक्तिसे कम नहीं है, तब उनको भी इस बातका बड़ा कौतूहल हुआ, और उन्होंने समझा कि, हम जिस कामके लिये आये हैं, वह इस लड़केकी सहायतासे बहुत ही सफलता-पूर्वक सिद्ध होगा। यही समझकर वे बोले—"वाह! तू तो बहुत ही होशियार लड़का जान पड़ता है। अच्छा, यदि तू अब मेरे साथ चलेगा, और सचाईके साथ मेरा काम करेगा, तो मैं तुझको बहुत अच्छा इनाम दूँगा। और तुमको एक बड़ा 'पटेल' बना दूँगा। अच्छा, बतला, किलेदारका लड़का नानासाहब आजकल कहाँ है? किलेपर ही है या और कहीं?"

यह प्रश्न सुनते ही श्यामा कुछ चकित हुआ सा दिखाई दिया, पर तुरन्त ही कुछ अपनी जीभ दाँतोंतले दबाकर और कुछ आँखें भी मटकाकर खाँसाहबसे कहता है, "खाँसाहब, वह तो यहाँसे कहीं भाग गया था, पर (बिल्कुल धीरेसे) फिरसे छिपकर आया है। मैं अच्छी तरह जानता हूँ—वह कहाँ है, लेकिन मैं आपको बतलाऊँगा नहीं।

यह उत्तर सुनते ही, ऐसा जान पड़ा कि, खाँसाहबको बड़ी खुशी हुई; पर बाहर प्रकट न करते हुए वे श्यामासे कहते हैं—"अरे, तू भी बड़ा पागल है। यह क्यों ? फिर तू इनाम किस बातका लेगा ? बतला, कहाँ है वह ?"

श्यामा जान-बूझकर कुछ नहीं बोला। ऐसा जान पड़ा कि, वह किसी विचित्र ही विचारमें निमग्न है।

खाँसाहबने सोचा कि, इससे धमकी घुड़कीसे काम नहीं चलेगा। दम-दिलासेके साथ ही इससे सब जान लेना चाहिये। अतएव वे उससे कहते हैं, "अच्छा सोचकर बतला, तूने एक स्त्री और एक पुरुषको भी जाते देखा है ?"

श्यामाने फिर कुछ विचार किया, और एकदम बोला, "हाँ, उनको भी देखा है।"

खाँसाहबको मानो इस विषयमें भी कुछ आशासी उत्पन्न हुई। इसके कुछ देर बाद वे फिर उससे कहते हैं, "वाह! तू तो बहुत ही होशियार लड़का दिखाई देता है। शाबाश! तुझे क्या कहना है! अच्छा, यह भी बतला कि, इसी रास्तेसे, एक बड़े लवाजमेके साथ, कोई बेगम भी तूने जाती हुई देखी ? उसके साथ एक दासी भी होगी?"

इस प्रश्नको सुनकर श्यामा कुछ गोलमालमें पड़ा, पर उसने अपने मनकी स्थिति प्रकट नहीं होने दी, और तुरन्त ही बोला, "जी हाँ! इस प्रकारके कुछ लोग किलेकी ओर जा रहे थे सही; पर······"

श्यामा कुछ नहीं बोला। यह देखकर खाँसाहब बहुत ही अशान्तसे देख पड़े—क्षणभर वे इस प्रतीक्षामें रहे कि, 'पर' शब्दके आगे शायद वह कुछ और भी कहे, पर जब उन्होंने देखा कि, वह कुछ बोला ही नहीं, तब एकदम वे उससे बोले, "अबे छोकरे, पर क्या ? बोल आगे—पर क्या ?"

"पर उनको·· पर···पर·· आप बड़े गुस्सेमें आवेंगे—कहेंगे कि, क्या कहता है। पर मैं जो कुछ कहता हूँ, सो बिल्कुल सही है। वे लोग इधरसे गुजरे थे जरूर, पर···"

"पर, पर क्या ? अबे सुअर ?" खाँसाहब श्यामाकी ओर घुड़ककर कहते हैं, "बतला, बतला जल्दी—वे लोग यहासे निकलकर किलेकी ओर नहीं गये ? किलेकी ओर नहीं गये, तो फिर कहाँ गये ? जल्दी बतला, नहीं तो तुझे खूब ही पीटूँगा।"

श्यामा काहेको ऐसी बन्दरघुड़कीसे डरनेवाला था ! ऐसा डरनेवाला होता, तो अबतक कभीका भग गया होता। वह बड़ा उस्ताद था। यह देखकर कि, खाँसाहब इस समय बिगड़ रहे हैं, वह उनसे कहता है—"हुजूर, उनको चोरोंने रास्तेमें लूट लिया, और अब कैदमें डाल दिया है।"

खाँसाहब बहुत ही क्रुद्ध होकर कहते हैं—"कहाँ हैं ? कहाँ हैं वे चोर ? चल मुझे दिखला। मैं उनकी अभी हड्डी-हड्डी नरम कर दूँगा।

श्यामा यह सुनकर कुछ हँसा, और फिर बोला, "खाँसाहब, आप उन्हें अवश्य ही दुरुस्त करेंगे, यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ, और मुझे उनके छिपनेकी जगह भी मालूम है, किन्तु खयाल इसी बातका है कि, आप अकेले हैं, और उनके साथ बहुत लोग हैं।"

खाँसाहब अपने बलपर काफीसे अधिक विश्वास रखते थे, इसलिये श्यामाके उपर्युक्त कथनपर वे कुछ असन्तुष्ट भी हुए पर उसको भीतर ही दाबकर बोले, "अबे छोकरे, तू मुझे समझाता क्या है ? चल तो तू, दिखला उन चोरोंकी जगह।"

श्यामा बार-बार उनसे यही कहने लगा कि, "चोर लोग सख्यामें अधिक हैं। उन्होंने एक अपना खासा अड्डा ही बना रखा है—अकेला-दुकेला आदमी उसके सामने नहीं टिक सकता। पर मुझे क्या ? मै आपको ले चलूँगा, और ठीक उनके अडडेतक पहुँचा दूँगा। पर यदि आप बेगमसाहबसे मुलाकात करना चाहेंगे, तो इसके लिये कोई युक्ति करनी पड़ेगी। वैसा यदि आप करेंगे, तो सब बातें बन जायँगी। नानासाहबको भी उन्हीं चोरोंने पकड़ रखा है, और एक स्त्री और पुरुष, जो आप पूछते हैं, उनको भी उन्हीं बदमाशोंने कैद कर

रखा है। खाँसाहब, मेरे समान मददगार आपको नहीं मिलेगा। यदि मेरे साथ चलेंगे, तो यह मौका अच्छा है, सब काम एकदम बन जायेंगे।"

अब खाँसाहब बड़े चकराये—श्यामा जो कहता है, ये सभी बातें सच हैं या झूठ—वे कुछ निश्चय नहीं कर सके। पर इतना स्पष्ट दिखाई दिया कि, जो बातें उन्होंने सुनी थीं, उनके कारण उनको हर्ष और खेद दोनों साथ ही साथ हुए। कुछ देर विचार करनेके बाद वे फिर एकदम उससे कहते हैं, "अच्छा, कोई परवा नहीं, अब तू मुझे रातको कहीं ठहरनेको जगह बतला। और मेरे खानेका भी इन्तजाम कर दे।"

"हाँ, इसमें तो कोई सन्देह नहीं, मैं सब आपका इन्तजाम कर दूँगा। इसी आगेके गाँवमें मेरे एक परिचित दाऊद मियाँ रहते हैं। उन्हींके यहाँ आपको ले चलूँगा। वे बड़े भलेमानस हैं। उनके यहाँ आपको बड़ा आराम रहेगा। खाने-पीनेका भी सब प्रबन्ध हो जायगा। लेकिन आपको ले चलनेके पहले मैं एक बार उनको देख आऊँ। यहाँसे वे कुछ बहुत दूर नहीं हैं। गाँव यह पास ही है। आप यहाँ घड़ीभर बैठ जाइये। मैं जाकर सब इन्तजाम किये आता हूँ। आप चिन्ता न करें। मैं बहुत जल्द आजाऊँगा, और यदि आप मुझे अपना यह घोड़ा दे दें, तो बातकी बातमें लौट आऊँगा, क्योंकि मैं घोड़ेपर बैठना बहुत अच्छा जानता हूँ। मेरे पटेलका घोड़ा भी ऐसा ही है। मैं उसपर बैठ लेता हूँ।

हमारा घोड़ा यह छोकरा माँग रहा है, यह बात उनको कुछ अपमानजनक जान पड़ी। श्यामाने देखा कि, वे घोड़ा देनेमें कुछ कुसुर-मुसुर कर रहे हैं, अतएव उसे जरा और भी ज्यादा जोर आया, और वह कहने लगा, "देखिये जनाब, आप अपना घोड़ा दे देंगे, तो मैं जल्दी आजाऊँगा। अन्यथा यहाँसे जानेमें ही न जाने मेरा कितना समय लग जायगा, और फिर वहाँसे लौटूँगा, तब तो बिल्कुल अँधेरा ही हो जायगा, और शायद अँधेरेमें आनेकी मेरी इच्छा न हुई, तो फिर आ भी नहीं सकूँगा। मेरी माँ भी वहीं रहती है, सो अँधेरा हो जानेपर वह भी काहेको आने देगी। हाँ, यदि घोड़ेपर जाऊँगा, तो इसकी बात

अलग है। सड़ासड़ उड़ाता जाऊँगा, और फटाफड़ लौट आऊँगा। आप इस बातकी शंका न करें कि, मैं आपका घोड़ा ले जाऊँगा। क्योंकि मैं गरीब आपके घोड़ेको लेकर क्या करूँगा? उसको खानेको देनेकी ही पचाइत! मैं अपना सारा घर द्वार बेच डालूँगा, फिर भी तो उसका एक दिनका दानातक न निकलेगा।"

अब, इसके कहनेके अनुसार, यदि घोड़ा नहीं दिया जायगा, तो यह लौटकर कभी न आवेगा, और हमको इसी खतरेकी जगहमें किसी प्रकार रात बितानी होगी। वे बार बार यही विचार कर रहे थे कि, इसको घोड़ा दिया जाय या न दिया जाय, और अब वे इसी निश्चयपर आनेवाले थे कि, घोड़ा नहीं दिया जाय, इतनेमें वह उनसे फिर कहता है, 'खाँसाहब, जल्दी निश्चय कीजिये, जो कुछ आपको करना हो। मुझे अब बहुत जल्द जाना चाहिए। फिर अँधेरा हो जायगा, और जानेमें डर लगेगा। फिर मैं लौट भी नहीं सकूँगा, इसलिये लीजिए, मैं यह चला।" उसने जब इस प्रकार जानेकी धमकी दी, तब उसको अवश्य ही अपने पूर्व-निश्चयमें कुछ परिवर्तन करनेकी अक्ल सूझी। अतएव वे उससे बोले, "अच्छा, बेटे, कोई हानि नहीं। देख, तुझे घोड़े ही पर तो चलना है? मैं तुझको आगे बैठाकर ले चलूँगा। दोनों साथ साथ चलेंगे।"

ये शब्द उनके मुखसे अभी निकलने भी नहीं पाये थे कि, इतनेमें वह एकदम उनकी ओर घुड़ककर कहता है, "वाह! खासाहब, मुझे ऐसी कौनसी गरज पड़ी है? क्या मैं आपकी जोरू हूँ, जो अपनी गोदमें घोड़ेपर बिठाकर मेरी बारात निकालेंगे? गरज हो, तो घोड़ा दीजिये, नहीं तो बैठकर बजाइये यहीं भोंपा! मैं तो जाता हूँ मुझे पहले ही खयाल था कि, आप समझते हैं मानो मैं आपका घोड़ा लेकर भाग जाऊँगा। जब आपको इतना विश्वास नहीं है, तब मैं ही आपके चक्करमें क्यों आऊँ? मैंने तो समझा था कि, कुछ इनाम ही मिल जायगा, पर जाने दीजिये, अब मैं जाता हूँ।"

यह कहकर एकदम वह खूब जोरसे भग चला। खाँसाहबने भी उसके पीछे पीछे अपना घोड़ा लगाया। लेकिन उसने कहा कि, 'मुझको

घोड़ा न देकर यदि आप मेरे पीछे आवेंगे, तो मैं ऐसी जगह आपको लेजाकर षटकूंगा कि, आप भी याद करेंगे ! आप और घोड़ा, दोनों एक दूसरेपर लोटने लगेंगे; और मैं खड़ा होकर मौज देखूंगा।” यह कहकर वह कुछ ऐसे ढंगसे हँसा, जैसे वह भावी मौज विलकुल उसके सामने हो ही रही हो ! उन्होंने समझा कि, कहीं यह सचमुच ही ऐसा न कर उठावे; अतएव बहुत जल्द यह कहकर कि, “अच्छा, ठहर, मैं तुझको घोड़ा देता हूँ,” उससे ठहरनेके लिए कहा; और खुद भी ठहर गये। इसके बाद घोड़ेसे उतरकर उन्होंने उससे उसपर बैठनेके लिये कहा। श्यामा मन ही मन बड़ा खुश हुआ; और तुरन्त ही उछलकर घोड़ेपर सवार हो गया। इसके बाद यह जतलाते हुए कि, मुझको घोड़े पर बैठना नहीं आता, वह एक कदम घोड़ेको वेगसे चलनेका इशारा देने लगा। परन्तु पूरा-पूरा इशारा देनेके पहले उसने उनसे कहा, “खाँसाहव, पहले पहल जब मैंने घोड़ा माँगा था, उसी समय यदि आप मुझे दे देते, तो मैं अवश्य ही बहुत जल्द वापस आ जाता, और आपको ले भी जाता, परन्तु अब बहुत देरी हो गई है, इसलिये यहाँसे जाकर फिर लौटनेका शायद ही मुझे साहस हो। इसलिये, यदि आपको आवश्यकता ही हो, तो आप भी मेरे पीछे पीछे दौड़ते हुए चले आवें। अन्यथा मैं तो जाता हूँ लौटते समय यदि कोई साथी मिल जायगा, तो आपको भी ले जाऊँगा, नहीं तो आपकी मर्जी !”

अन्तिम शब्द अभी श्यामाके मुखसे पूरा-पूरा बाहर भी न निकला था कि, उसने घोड़ेको एँड़ मारी, वह भाग चला। खाँसाहबने सोचा कि, अब न जाने इस जगह मेरी क्या दशा हो—लड़केने तो सोलह आना चक्करमें डाला। यह सोचकर उन्होंने भी अपना कदम बढ़ाया, और चिल्लाकर श्यामासे कहा, “अरे लड़के, खड़ा हो ! खड़ा हो। घोड़ेको दौड़ा मत। मैं आ रहा हूँ !” श्यामा पक्का बदमाश ठहरा ! वह बीच-बीचमें कुछ खड़ासा हो जाता, और फिर घोड़ेको बढ़ाकर एँड़ मारता। वे चिल्लाने लगते, तब फिर कुछ घोड़ेको खड़ासा कर देता; और जब वे पास आ जाते, तब कहता, “क्या करूँ ? आपका घोड़ा ही नहीं खड़ा

होता।" इतना कहता, और फिर उसको ऐंड़ मारकर बेतहाशा भगा देता। इसी प्रकार करते-करते करीब दो कोसतक उसने उनको रपेटा, और जब बस्ती बिलकुल पास दिखाई देने लगी, तब कहने लगा कि, "अब आप आइये, वे सामने चिराग दिखाई दे रहे हैं, उन्हींकी सीधमें चले आइये, और मैं आगे जाकर आपका सब प्रबन्ध किये रखता हूँ।" यह कहकर उसने घोडेको ऐंड़ मारी, और न जाने कहाँका कहाँ निकल गया। खाँसाहब बेचारे बड़े चक्करमें पडे कि, क्या करें और क्या न करें, परन्तु किसी प्रकार कदम-कदम दो कदम आगे बढते हुए आखिर उस बस्तीके पास पहुँच गये, और लगे दाऊद मियाका घर तलाश करने। परन्तु न उनका पता और न उस लडकेका। बस्ती कुछ बहुत बड़ा भी नहीं थी, परन्तु फिर भी खासाहबने बार बार उसमें घूमकर दाऊद मियाँका नाम पूछा, पर किसीने कुछ पता नहीं बतलाया, अतएव दाऊद मियाँसे वे बिलकुल निराश हुए, तब उस लडकाकी हुलिया बतलाकर उसीको पूछने लगे। कहा कि, इतनी उमरका छोकरा है, बडा ढीट है बातचीत करनेमें बड़ा चालाक है, घोड़ेपर बैठकर आया है। वह लडका कहाँ है? किसीने कहा, हाँ, एक लडका तो ऐसा बस्तीमें था; बहुत दिनसे न जाने कहाँ चला गया। आज तो कोई लडका नहीं आया। अन्तमें खासाहब निराश होकर रात काटनेके लिए कहीं जगह देखने लगे। अब कोई उनपर दया करके जगह देता हो, अथवा अन्य कोई स्थान बतलाता, पर इतनेमें खुद श्यामा ही उनके पास हाँफते आया, और बोला, "खासाहब, अजी खासाहब! आप कहाँ रहे, मुझे चोरोंने घोड़ेपरसे गिरा दिया। बहुत पीटा। घोडा लेकर भाग गये। आपको न जाने कितनी बार पुकारा! पर आप सुनके भी नहीं। अन्तमें वैसा ही भागता आया—सोचा कि, घोड़ा आपका गया, सो गया, पर आपके रहने इत्यादिका प्रबन्ध तो कर दें, इसीलिये दौड़ता हुआ मैं ·· के घर गया, और सब प्रबन्ध करके आपको बुलानेके लिये आया। स्वार्थके लिये, आपका उपकार करनेमें, मुझे भारी मार सहनी पड़ी। चलिये, चलिये जल्दी। अब देर न कीजिये।"

"वदमाश, चोर, मुझे धोखा दे रहा है ?" खाँसाहव गुस्सेमें आकर वोले।

श्यामा अव अपने अड्डेपर ही था। अव काहेको वह उन धमकी-घुड़की और नाराजगीकी परवा करता है ? खाँसाहव ज्यों ही उपर्युक्त रीतिसे घुड़ककर वोले, त्यों ही वह खिलखिलाकर हँसने लगा, और हँसी यदि न आई, तो वनावटी ही हँसी हँसकर उनके सामने थोड़ीसी उछल-कूद मचाई।

"वाह ! वाह खाँसाहव ! आपने तो अच्छा मजा किया; आपके लिये जी-जान तोड़कर कोशिश की। दौड़-धूप की। इधर-उधर भागता फिरा। चोरोंके पंजेसे न जाने किस तरह अपने प्राण वचाये; और इतना सव करके, फिर भी, आपको तकलीफ न हो, इसलिए वापस आया। इधर उल्टे आप मुझीपर नाराज हो रहे हैं। आपहीको चोरोंने पकड़ा होता; और अच्छी तरह दुरुस्त किया होता, तो सव हाल मालूम हो जाता। अस्तु। अव चलिये, दाऊद मियाके घर, फिर वहांसे आप-को उस जगह ले चलूँ, जहाँ चोरोंने आपकी उस वेगमको और उस एक स्त्री तथा पुरुषको कैद कर रखा है। वहाँ चलकर उस वेगमसे मैं आपकी भेंट कराऊँगा, यदि इच्छा हो, तो आइये, नहीं तो आपकी मर्जी में तो अपना यह जाता हूँ।"

उपर्युक्त लोगोंके नाम निकलते ही खाँसाहवकी चेष्टा वदल गई; और हँसते-हँसते, यह कहते हुए कि, "अवे वदमाश, झूठ वोलता है," उन्होंने श्यामाको पीठपर धीरेसे ही एक थाप मारी। श्यामा तुरन्त ही ताड़ गया कि, वस, अव मेरा काम हो चुका। इसके वाद वह फिर अपनी उसी वदमाशीकी आवाजसे कहता है, "वाह ! खाँसाहव ! मैं वदमाश ! मैं इतना छोटा वच्चा, वदमाशी करना क्या जानूँ ? किन्तु खाँसाहव, आप उस वेगमसे ही तो मिलना चाहते हैं ? वह... ..."

"चुप वैठ छोकरे, चुप वैठ। पर क्योंरे, उस वेगमके साथ उसकी कोई लौंड़ी भी थी ? तूने देखा था ? लौंड़ी कौन होती है, समझ गया ?"

"हाँ, हाँ, खाँसाहव समझ क्यों नहीं गया। लौंड़ी उसीको तो कहते

हैं—जो किसी बडे खॉसाहबकी स्त्री होती है, उसीको तो ? आपके समान लोगोंकी स्त्रियोंको लौंड़ी ही तो कहते हैं—ठीक है न ? हॉ, एक थी जरूर !"

"चल पाजी कहीं का ! खॉसाहबोंकी स्त्रियोंको कहीं लौंड़ी कहते हैं। अरे लौंड़ी कहते हैं दासीको। उन बेगमके साथ कोई दासी भी थी ?"

"हॉ, हॉ, जरूर थी, मैंने देखी थी।"

"देखी थी ?"

"हाँ, अवश्य देखी थी।"

"कैसी थी ?"

"कैसी क्या थी ? स्त्रीकी तरह थी। किन्तु खाँसाहब, अब यहीं कितनी देर बातचीत करते रहेंगे ? अब यहासे चलना ही ठीक होगा। और देखिये, खाँसाहब, मैं बिलकुल आपके उस खुदाकी ही कसम खाकर कहता हूँ, आप यदि मेरे कहनेके अनुसार काम करते जायंगे, तो मैं आपको उस बेगमके पास बिलकुल अचूक ले चलूँगा। पर यदि आप मेरी बात ही न सुनेंगे, तो फिर लाचार हूँ। यदि आप उनको चोरोंके पजेमे छुड़ाना चाहते हैं, तो जैसा मैं बतलाऊँ, वैसा ही आप करते जावें, इससे आपको अवश्य सफलता मिलेगी। और यदि उसमें जरासी भी चूक हो गई, तो समझ लीजिये कि, सब काम बिगड़ जायगा। इस समय आप चलें, फिर मैं सब कुछ आपको बतला दूँगा।"

श्यामाकी वे सारी बातें इतनी मजेदार और विश्वासोत्पदक थीं—अथवा यों कहिये कि, खॉसाहब ही ऐसे कुछ भोले-भाले थे—कि, उनको इस बातका कोई विशेष सन्देह नहीं हुआ कि, यह छोकरा हमारी हॅसी कर रहा है। सच तो यह है कि, जब मनुष्य किसी खास बातके पीछे पड़ जाता है, तब—फिर अन्य बातोंमें वह चाहे जितना चतुर और होशियार हो, उसके विषयमे न जाने उसकी वह चतुरता और सावधानी कहॉ चली जाती है—वह उसके लिये एक प्रकारसे पागल ही बन जाता है। बस, यही दशा इस समय उनकी हो रही थी। ये खॉसाहब कौन थे ? यह बात जब हमारे पाठकोंको मालूम होगा, तब

उन्हें थोड़ा-बहुत आश्चर्य अवश्य होगा। पर इस समय हम उनका परिचय नहीं देना चाहते, आगे चलकर आप ही पाठकोंको उनका परिचय मिल जायगा, और वही उचित भी होगा। अस्तु। खाँसाहब श्यामापर बिलकुल लट्टू हो गये। वह जिधर ले गया, उधर ही वे गये। दाऊद मियाँका घर क्या—एक छोटीसी खपड़ैल मात्र थी, जिसके भीतर वह अकेले बैठे थे। उनकी खपडैलके पास पहुँचते ही खाँसाहब श्यामासे कहते हैं, "क्यों रे छोकरे, मैंने गाँव भरमें तलाश किया; किन्तु इनकी यह खपड़ैल मुझे किसीने नहीं बतलायी—और अब अचानक तू मुझे यहाँ कैसे ले आया ?" परन्तु उनके प्रश्नका उत्तर तो एक ओर रहा, श्यामा एकदम आगे बढ़ा; और पुकारकर कहने लगा, "अजी दाऊद मियाँ, ये मियाँसाहब, ये खाँसाहब आये हैं। दो दिन इनका प्रबन्ध कर दीजियेगा ?" श्यामाकी बोली सुनते ही एक लम्बी दाढ़ीवाले दाऊद मियाँ उस खपड़ैलसे बाहर निकल आये, और बोले—"हाँ, जनाब, आइये साहब, आइये हुजूर आइये !" इतना कहकर फिर वे अपनी खपड़ैलकी ओर हाथ दिखाकर कहते हैं, "अजी जनाब, आप बड़े-बडे राजमहलोंके रहनेवाले। इन्द्रसभा एक ओर, और आपका महल एक ओर। आपके बड़े-बड़े बगीचे, आपका वह ऐश-आराम मुझ गरीबको नसीब कहाँ। मेरी तो यह छोटीसी झोपड़ी है, इसमें आपके कदम पडे, यह मेरी बड़ी खुशनसीबी है—यह सब इस छोकरेकी मेहरबानी है। हुजूरका नाम तो चारों ओर मशहूर हो रहा है, यह बात इस गरीब गुलामके बन्देसे छिपी नहीं है। आइये भीतर, अपने कदमोंसे इसकी झोपड़ीको पाक फरमाइये। यह आपका बन्दा गुलाम जी-जानसे हाजिर है—है तो अकेला ही, लेकिन हुजूरकी खिदमतमें कोई कोर-कसर नहीं करेगा······"

दाऊद मियाँकी यह चर्पटपंजरी और भी अधिक अव्याहतरूपसे जारी रहती—क्योंकि उनकी जिह्वापर मानों प्राचीन कालके अरब ग्रन्थकारोंका पूरा प्रसाद ही हो चुका था। वे बड़ी शानसे और विशुद्ध उर्दूमें बोल रहे थे। परन्तु साथ ही साथ उनके उस कथनमें सत्यांशका लवलेश भी

न था—किन्तु हमारे खाँसाहब उसमेंसे कुछ भी समझ न सके। और उनका आमन्त्रण स्वीकार करके उनकी झोपड़ीमें जानेको तैयार हो गये। दाऊद मियाने अपनी बातोंसे तो उनको यहाँतक दृढ कर दिया, जिससे उनको पूरा पूरा विश्वास हो गया कि, यह दाऊद मियाँ एक बहुत ही भलामानुस आदमी है। इतनेमें उन्होंने खाँसाहबके आगे एक अत्यन्त गन्दा, परन्तु हालका ही भरा हुआ, हुक्का लाकर रख दिया, और आगे बढ़कर बड़ी नम्रतासे उसको पीनेके लिये प्रार्थना करने लगे। श्यामा अवश्य ही उस समय एक अक्षर भी नहीं बोल रहा था, और दाऊद मियाँकी ओर देख देखकर मन ही मन हस रहा था। कह नहीं सकते कि, उसके इस हँसनेका कारण क्या था? इधर खाँसाहबके पेटमें भूखके मारे चूहे कूद रहे थे। बेचारे इधर उधर निगाह दौडा रहे थे। बार बार उनकी ओर वे आतुरता-पूर्वक देखते कि, मियाँसाहब खानेके लिये अब पूछेंगे, तब पूछेंगे। पर अन्तमें जब उन्होंने देखा कि, अब स्पष्ट कहे बिना काम नहीं चलेगा, तब उनकी ओर देखकर वे कहते हैं, "मियाँसाहब, रात तो बहुत हो चुकी। अब यदि कहीं कुछ खानेको मिले, तो ये पैसे लीजिये, और कुछ मँगाइये।" यह सुनते ही मियाँसाहब कुछ सचिन्त चेष्टा बनाकर कहते हैं, "जनाब, रात तो बहुत जा चुकी है, देहातका मामला है, इस समय खानेको कहाँ मिलेगा? परन्तु मुझ गरीबकी खिचड़ी यदि हुजूरको पसन्द आवे, तो थोडीसी रखी है, दोपहरकी बची हुई।" यह कहते हुए वे पैसे तो मियाँसाहबने अपनी कमरमें किये, और अपनी दोपहरकी बची हुई बासी खिचड़ी खाँसाहबके सामने रख दी। वे भूखके मारे व्याकुल हो ही रहे थे, क्या करते बेचारे? जैसे-तैसे उस बासी खिचड़ीको गलेके नीचे उतारा, और मियाँसाहबकी बिछाई हुई चटाईपर लेटकर रात बिताई। लेकिन हाँ, मियाँसाहब बोलनेमें इतने तेज थे, कि उनको वे तकलीफें कुछ जान नहीं पडीं।

श्यामाने भी वह रात उसी जगह बिताई। दाऊद मियाने खाँसाहबको अनेक बातें बतलाई, और अपने वंशका वृत्तान्त बतलाते बतलाते अपनी रिश्तेदारी बिल्कुल अलाउद्दीन खिल्जीके घरमें जा

भिड़ाई। "परन्तु समयकी बलिहारी। उनके सामने किसीको कुछ नहीं चलती। हमारे घरमें न जाने कितनी सम्पत्ति भरी हुई थी, और हमारे वंशके लोगोंने जो जो पराक्रम कर दिखलाये, उनका यदि सारा वृत्तान्त लिखा जाय, तो एक बड़ी भारी पोथी ही तैयार हो जाय। परन्तु आज हमारे वंशमें हमको छोड़कर और कोई नहीं बचा। क्या करें, इसीलिये हम भी फकीर बनकर यहाँ आ पड़े हैं। हमारे कोई लड़काबाला भी नहीं। बिल्कुल अकेले फक्कड़-सुलतान हो रहे हैं। स्त्री थी सो भी गये साल चल बसी।" यहाँ तक कथा बतलाकर फिर वे अपनी स्त्रीकी मृत्युपर अत्यन्त ही शोक करने लगे। यह सब सुनकर श्यामाको इतनी कुछ हँसी आने लगी कि, अन्तमें उसे बाहर ही जाना पड़ा, और वहीं वह पेट पकड़कर हँसता रहा। खाँसाहब बेचारे चुपके उनकी वह सारी रामकहानी सुन रहे थे; इतनेमें दाऊद मियाँ फिर उनसे कहते हैं, "खासाहब, देखिये, मैं एक बिलकुल गरीब आदमी, और आप इतने अमीर! पर मुहब्बत ही एक ऐसी चीज है कि, जिसके सामने अमीर और गरीब सब बराबर हैं। आप क्या कभी उसके जालमें फँसे हैं? यदि फँसे होंगे, तो फिर आपको मेरी इन सारी बातोंकी कीमत जरूर ही मालूम हो जायगी। और यदि नहीं फँसे हैं, तो मेरी यही आपके लिये दुआ है कि, आपको जल्दी ही ऐसी मुहब्बत नसीब हो—और क्या करें।" इतना कहनेके बाद फिर वे अपनी स्त्रीकी प्रेम-प्रशंसा करते हुए उसके गुणोंका लम्बा-चौड़ा वर्णन करने लगे। और बीच-बीचमें "कहिये, सच है न? मैं जो कुछ कह रहा हूँ, वह ठीक है न? आपको भी इसका मजा कुछ न कुछ मालूम ही होगा?" इत्यादि वाक्य कह कहकर बेचारे खासाहबको और भी अधिक टोंचते जाते थे। इस प्रकार होते होते उनकी कहानी फिर यहाँ तक आ पहुँची कि, हमारे खासाहबका मन भी उसमें पूरा-पूरा रँगने लगा। कह नहीं सकते कि, वे सचमुच ही उनके मनकी वह दशा लाना चाहते थे, अथवा क्या? परन्तु उनकी प्रेमकहानी सुनते-सुनते हमारे खासाहबकी भी बोलनेकी इच्छा हो आई; और वे मियासाहबसे बोले, "मियाँ साहब, यह तो नहीं कह सकते कि, हमारी

और आपकी कहानी बिल्कुल ही मिलती है, पर हाँ बहुत कुछ मिलती-जुलती है। मेरा भी प्रेम ही एक जगह फँसा हुआ है, और मेरे एक शत्रुने उसपर डाकेजनीकी है। मेरी प्रियतमाका प्रेम दूसरी ओर जानेकी कोई विशेष सम्भावना तो नहीं, पर क्या कहा जाय? स्त्रियोंकी जात है! अबतक उसके साथ मेरा निकाह भी नहीं हुआ है कि, इतनेमें वह अपनी स्वामिनीके साथ इसी तरफ कहीं चली आई है। यह लड़का कहता है कि, उन सभी लोगोंको यहाँ कहीं चोरोंने कैद कर रखा है। लेकिन सच मामला क्या है, कुछ समझमें नहीं आता।"

यह अन्तिम वाक्य खाँसाहबके मुखसे अभी पूरा निकला भी नहीं था कि, इतनेमें श्यामा शीघ्रतापूर्वक उठ बैठा, और एकदम कहता है, "क्यों खाँसाहब मेरी बातोंपर अभीतक आपको यकीन नहीं आया? आप इसे झूठ ही समझते हैं? मैं नहीं कह सकता कि, उन लोगोंमें वह आपकी कौन है, किन्तु इस प्रकारके कुछ लोग—जिनमें वह बेगम और उसकी वह बाँदी अवश्य है—चोरोंने पकड़ रखे हैं सही, मैं आपसे कह ही चुका हूँ कि, आप यदि अपनी उस (प्रेमिका) से मिलना चाहते हों, तो मैं मिला सकता हूँ। चोर हों, चाहे चोरके बाप हों—यह श्यामा किसीको डरता नहीं, और हर तरहके प्रयत्न करके आपको इस काममें सहायता देनेको तैयार है। परन्तु हाँ, उसकी युक्ति आपको माननी पड़ेगी। यदि आप यह कहकर टाल दें कि, चलो लड़केकी युक्ति है, इसमें रखा ही क्या है, तो इसमें काम नहीं चलेगा। आप यदि तजरुबा ही करना चाहते हैं, तो कर देखिये। मैं जो कुछ कह रहा हूँ, उसको सत्य करके दिखलाऊँगा। कभी चूकूँगा नहीं।" इतना कहकर वह कुछ देरके लिए चुप होगया, परन्तु फिर तुरन्त ही कहता है, "अच्छा, आप न मानें, तो इन मियाँसाहबसे ही पूछ लें कि, मैं जो कुछ कहता हूँ, सो सच है या नहीं।" उसका यह कथन सुनते ही मियाँसाहब एकदम बोल उठे, "अजी हाँ, हाँ जी! यह बिलकुल ठीक कहता है। इसको मैं बिलकुल बचपनसे ही जानता हूँ। यह कभी झूठ बोल नहीं सकता, मुझे बिलकुल यकीन है। इसकी युक्तिके अनुसार आप कोई भी काम

करें, उसमें कामयाबी जरूर-बिलजरूर होगी, इसमें शंका कुछ भी नहीं। आप इसपर पूरा भरोसा रखिये। कभी धोखा नहीं होगा। हर एक नाजुक काममें इसकी हिकमत जरूर काम कर जाती है।"

दाऊद मियाने श्यामाकी प्रशंसाके पुल बाँध दिये। इस प्रकार बातचीत होते होते सुबह होगया। बेचारे खासाहबको पलभरके लिये भी नींद लेनेका मौका नहीं मिला। बड़े कष्टके साथ आप उठे; और श्यामा के पीछे लगे कि, बतला भैया, अपनी युक्ति, हम उसे करके एक बार उन चोरोंके अड्डेमें तो पहुँचे, फिर उनका सारा भेद खोल दें; और जितने उन्होंने अभीतक पकड़ रखा है, सबको छुड़ा दें।

श्यामा मानो इसी प्रतीक्षामें था कि खासाहबके मुखसे ऐसी बात अब निकलेगी ही—अतएव उनके मुखसे उक्त अक्षरोंके निकलते देर न होने पाई कि, वह एकदम बोल ही उठा, "हाँ हाँ, युक्ति तो मैं बतलाऊँगा ही, पर आप करें तब तो। इसलिये मैं बतलाता नहीं।"

"अरे क्यों? मैं करूँगा क्यों नहीं? ऐसा तू कैसे कहता है? यदि तू सचमुच ही मुझको वहाँतक पहुँचा देने कहता है, तो मैं तेरी युक्ति क्यों नहीं करूँगा? मैं तो कहता हूँ कि, वह चाहे जितनी कठिन हो, मैं किये बिना न छोड़ूँगा। हम लोगोंके लिए कठिन क्या है! बतला। जबतक यह तलवार मेरे हाथमें है; और शरीरमें ताकत है, तबतक मुझको किसीका भय नहीं। बतला जल्दी, बदमाश कहींका मेरा घोड़ा खो दिया, नहीं तो उन दुष्ट चोरोंकी मैंने खूब ही खबर ली होती। कभी न छोड़ा होता। चल, बतला। कहाँ हैं वे चोर तेरे—मुझे एक बार दिखलाभर दे, और किसी युक्ति-व्यक्तिकी जरूरत ही नहीं।"

"खासाहब, आपकी ऐसी बातोंसे कोई लाभ नहीं होगा। आपको सचमुच ही यदि असली जगहतक ठीक-ठीक तौरसे पहुँचना है, तो जैसा मैं बतलाऊँ, आप कीजिए, और नहीं तो जैसी आपकी मर्जी हो—मेरी कोई हानि नहीं। हाँ, इतना जरूर है कि, आप मुझसे कोई लाभ न उठा सकेंगे। अजी, नानासाहबके समान बड़े बड़े लोगोंको जिन चोरोंने हैरान करके कैदमें डाल रखा है, उनके सामने आपकी क्या दाल

गलेगी? आपकी इस व्यर्थकी बड़बड़में कोई काम सिद्ध न होगा? इसलिये आप मेरी युक्ति सुनिये। हां, युक्ति जरा विचित्र आपको अवश्य मालूम होगी पर है वह अचूक।"

नानासाहबका नाम सुनते ही खांसाहबकी चेष्टा कुछ विचित्रहीसी दिखाई दी। पर फिर शीघ्र ही सम्हलकर वे उससे कहते हैं, "अच्छा, तो बतला, अपना युक्ति ही कह डाल।"

"बतलाऊँ? मेरी युक्ति बहुत ही छोटी है। वे चोर स्त्रियोंसे कुछ नहीं बोलते, और लड़कोंको भी नहीं छेड़ते। सो मैं लड़का तो मौजूद ही हूँ। हॉ, आपको सिर्फ ...."

"और आपको मेरी स्त्रीका लहँगा.. ..."

दाऊदमियांको खांसाहबने आगे कुछ भी बोलने नहीं दिया। वे क्रोधसे बिलकुल सुर्ख हो गये।

चौबीसवां परिच्छेद।

बीबीका काम होगया।

उस समयका वह खांसाहबका क्रोध देखनेही योग्य था। वे समझ गये कि, यह लड़का हमको किस रूपसे चोरोंकी छावनीमें लेजाना चाहता है। उस क्रोधके आवेशमें उन्होंने उस लड़केको मुँहमें दो-चार थप्पड़ भी जमाये होते, किन्तु श्यामा मानो यह बात पहलेहीसे ताड़ गया था, और इस कारण वह उनके हाथसे पहले ही कुछ अन्तरपर हो गया था। श्यामा अपनी ओरसे पूरा सावधान था, क्योंकि वह जानता था कि, खांसाहब एक बहुत जबरदस्त आदमी है। और सच है, यदि उन्होंने उसके एक भी थप्पड़ जरा कसकर जमा दिया होता, तो उस बेचारेका काम हो हो जाता। परन्तु श्यामाकी स्वाभाविक धूर्त्तताके कारण ऐसी कोई बात नहीं हुई। वह उनसे दूर हटकर आनन्द-पूर्वक अपनी आँखें मटका रहा था। उसके उस आनन्दमें विनोद और कौतूहलकी मात्रा भी काफी थी। खाँसाहब अवश्य ही बहुत बिगड़े, और

खूब बके झके, पर अन्तमें कुछ शान्त हुए। यह देखकर श्यामा एकदम उनसे कहता है, "वाह जनाब, मैंने आपको एक सच्चा रास्ता बतलाया, और आप उसपर नाखुश होकर मुझे गालियाँ दे रहे हैं। देखिये साहब, यदि सचमुच ही आपको अन्दरतक पहुँचकर बेगम साहबकी उस बाँदीसे मिलना है, तो जैसाकि मैं कहता हूँ, वैसा किये बिना आपका काम नहीं हो सकता। और कोई मार्ग ही नहीं, और यदि हो तो आप ही बतलाइये। चोरोंके उस अड्डेके आसपास किसी मुसल्मान मुसाफिरको भी घूमनेका साहस नहीं हो सकता। मैं आपको बेगम साहबकी उस बाँदीसे मिलानेके लिये जा रहा हूँ। मैं अपनी माकी शपथ खाकर कहता हूँ कि, मैं अवश्य आपको उससे मिलाकर ही रहूँगा; लेकिन जब आप मेरा कहना मानेंगे तब। अन्यथा यह बात हो ही नहीं सकती, और कौनसा मार्ग है? किस तरह आप इस कामको कर सकेंगे? मियाँसाहब, आप ही बतलाइये, मैं झूठ कहता हूँ? चोरोंका यह अड्डा कोई छोटा-मोटा अड्डा नहीं है। उनमेंसे एक-एक आदमी ऐसा जबरदस्त है कि, बड़ों-बड़ोंके छक्के छुड़ा देता है। आप जब स्वयं चलकर देखेंगे, तभी मालूम होगा। इसके बिना कैसे मालूम हो सकता है? फिर आपको तो एकदम भीतर पहुँचकर अपना काम करना है। वह काम युक्तिहीसे होगा।" श्यामा उस समय बिल्कुल एक प्रौढ़ मनुष्यकी तरह गम्भीरतापूर्वक बोल रहा था, और बीच बीचमें मियाँसाहबकी ओर देख देखकर 'आप ही बतलाइये "आप ही बतलाइये" कहता जाता था, सो अब दाऊद मियाने उसके कथनकी और भी अधिक पुष्टि कर दी उन्होंने कहा, "सच है, जब इस प्रकार गुप्त रूपसे शत्रुके अड्डेमें प्रवेश करना है, तब फिर कोई भी भेष धरकर क्यों न जावे? इसमें क्या हानि है? हमें तो अपना काम निकालना है, और कोई बात देखना ही नहीं। सच तो यह है कि, काम निकालनेके लिये सब कुछ करना पड़ता है, फिर उसमें आगे-पीछेका कोई भी विचार नहीं करना होता। यह एक नीति है।" यह कहकर उन्होंने अपने पूर्वजोंके अनेक उदाहरण दिये कि देखो, हमारे अमुक अमुक पूर्वजोंने,

अमुक अमुक समय पर, ऐसे ऐसे पराक्रम किये, और उनके लिये इस प्रकारकी अनेक युक्तियोंकी योजना की। वास्तवमें उनकी बतलाई हुई वे बातें यदि सचमुच ही सत्य थी, तो यही कहना चाहिये कि, उनके पूर्वजोंने जितने कुछ पराक्रमके कार्य किये थे, सब स्त्रियोंका ही भेष धरकर! सबने एक एक बार अपने पुरुषभेषको उतारकर लहँगा, चोली अथवा स्त्रियोंका पायजामा पहनकर कोई न कोई महत्वपूर्ण कार्य किया था। और, नही जनाब—वे अपने पूर्वजोंके पराक्रमोंतक ही नही रहे—किन्तु उन्होंने यह भी बतलाया कि, उन्होंने खुद भी, एक बार, ऐसा ही मौका पड़नेपर, इसी युक्तिका अवलम्बन करके अपना एक बड़ा भारी कार्य, और बहुत ही खूबीके साथ, किया था। इस प्रकार अपने पूर्वजोंका और अपना निजका भी अनुभव बतलाकर उन्होने खाँसाहबको भलीभाति सुझा दिया कि, यदि सचमुच ही आपको अपना कार्य सिद्ध करना है, तो ऐसा करनेमें कोई हानि नही। इधर श्यामाने जब देखा कि, हमारे दाऊद मियाके कहनेसे—उनकी मधुर वाणीसे—खाँ साहबका मन इस ओर झुक रहा है, तब वह कहता है, "मैं सच कहता हूँ दाऊद मियाँ, आप यदि बेगमसाहबको देखें, तो बिलकुल लट्टू हो जायँ—ऐसी वे खूबसूरत हैं! और उनकी दासीका तो फिर कहना ही क्या? ऐसी सुन्दर युवती है कि, कुछ पूछिये मत!" श्यामाका यह कथन सुनकर खाँसाहब तुरन्त ही कहते हैं, "किन्तु, क्यों रे लड़के, उस दासीका अथवा बेगम साहबका नाम क्या है? बतला तो सही।

"नाम? बेगमसाहबको तो बेगमही कहते हैं, उनका नाम क्या? और वे मुसल्मानी नाम भी हमारे ध्यानमें क्यों रहने लगे? आप उसका नाम लीजिये, यदि ठीक होगा, तो मैं तुरन्त ही बतलाऊँगा। नहीं होगा तो वैसा बतलाऊँगा!"

"उसको फातिमा कहते हैं?" खाँसाहबने बड़ी खबसूरतीके साथ पूछा।

"हाँ, हाँ, बस—बिलकुल ठीक है। यही नाम है—यही नाम है, जो आप बतलाते हैं!" श्यामा एक क्षणभर भी न रुककर शीघ्रतापूर्वक

कहता है, "बिलकुल यही, इसमें जरा भी सन्देह नहीं। मैंने उस बेगम-के मुँहसे कई बार सुना। इसमे कुछ भी सन्देह नहीं। बस, फतिमा—फतिमा ही उसका नाम है! फतिमा! वाह क्या ही सुन्दर है फतिमा! आप उसीसे मिलना चाहते हैं। अच्छा तो अब चलिये। देर न कीजिये। आज रातको चाँदनी निकलनेपर हमलोग यहासे चल देंगे, इससे मार्गमें हमको कोई मिलेगा भी नहीं। और, आप डरते किस बातको हैं? ऐसी कोई बात नहीं। आप निश्चिन्त होकर मेरे साथ चलें।"

दाऊद मियाँ और श्यामाने मिलकर खाँसाहबको समझानेका पूरा पूरा प्रयत्न किया, और बार बार उक्त दासीका नाम ले लेकर उनको इतना प्रलोभित किया कि, उनका मन हिंडोलेकी तरह झूलने लगा। अब वे करें क्या? कुछ सूझने ही न लगा। इतनेमें श्यामाके मुखसे स्वाभाविक ही नानासाहबका नाम निकल पड़ा, जिसे सुनकर वे एक-दम चौकन्ने हुए, और श्यामासे पूछने लगे, "क्योंरे, वह फ़तिमा बार बार नानासाहबसे मिलकर बातचीत किया करती होगी?" पाठक जानते ही हैं कि, श्यामाका यह स्वभाव था कि, वह कुछ न कुछ उत्तर अवश्य ही देता, और वह भी ऐसा देता, जिसमे कुछ आनन्द मालूम हो। अतएव वह तुरन्त ही उनको उत्तर देता है—"हाँ! हाँ! वह तो सदैव ही उनके पास आती है, बैठती है, बातचीत करती है, और······"

श्यामाने जितने शब्द कहे, उतने ही उनके लिये पर्याप्त थे। उनको सुनकर उनकी चेष्टा बड़ी विचित्रसी हो गई। और ऐसा जान पड़ा, मानो अब वे सोच रहे हैं कि, अब कुछ न कुछ करना ही होगा। इसके-बाद वे मन ही मन कहते हैं, "अरे पाजी, अन्तमें तूने उड़ा ही लिया? जिसको मैं अपना—बिल्कुल ही अपना—माल समझता था, वह आखिर तेरे हाथमें आ ही गया। अच्छा, बेटा, कोई हर्ज नहीं। मैं तुझको समझ लूँगा। चाहे जो करूँगा, लेकिन तुझे मार डाले बिना न रहूँगा।" खाँसाहब यह मन ही मन कह रहे थे, पर अन्तिम शब्द उनके मुखसे, आवेशके मारे, कुछ जोरसे निकल पड़े जिनको श्यामाने सुन लिया, और वह बहुत ही विचित्र प्रकारकी चेष्टासे उनकी ओर

देखने लगा। "तुझे मार डाले बिना न रहूँगा।" तुझे? तुझे किसको? यह हमारे ही लिये तो ऐसा नहीं कह रहा है? यह सोचकर वह एक एक कदम पीछेकी ओर हटने लगा। शायद सचमुच ही यह अपनी तलवार चला दे, तो मैं क्या करूँगा? लेकिन ऐसी कोई बात उसे दिखाई नहीं दी, बल्कि इसके विरुद्ध वे ही कुछ विशेष चिन्तितसे दिखाई दिये। अब वे इस विचारमें थे कि, हम श्यामासे अब कहें क्या? क्या इससे कह दें कि, "अच्छा, चल। तेरी युक्तिसे काम निकल लेगा, तो मैं वैसा करनेको भी तैयार हूँ?" अथवा जबतक यह और कुछ न बोले, तबतक चुप ही रहूँ? उनके कुछ ध्यानमें न आता था—वे इस कठिनाईमें पड़े थे कि, उससे एकदम यह कैसे कहें कि, "चल भाई, मैं तेरे साथ स्त्रीका भेष धरकर तैयार हूँ।" थोड़ी देरतक वे इसी सोच विचारमें पड़ रहे, पर अन्तमें इधर-उधर कुछ सिर खुजलाकर वे उससे कहते हैं, "क्यों लड़के, मैं तेरे साथ चलनेको तैयार हूँ, पर क्या इसके अतिरिक्त और कोई युक्ति नहीं हो सकती?"

"और तो कोई नहीं—और कौनसी युक्ति हो सकती है? आप यदि गुप्त रूपसे उन चोरोंके अड्डेमें घुसकर अपना कार्य सिद्ध करना चाहते हैं, तो मेरे ख्यालमें और तो कोई युक्ति नहीं आती। किसी भी पुरुषको—फिर खासकर मुसल्मानोंको तो—वे उधरसे फटकने भी नहीं देते। आहट मिलते देर नहीं होती, कि वे दौड़कर आ जाते हैं। मैं तो हजारों बार उधरसे निकलता रहता हूँ, इसलिये मुझे सब उनका भेद मालूम है। हाँ, औरतोंको वे सिर्फ पकड़भर लेते हैं, लेकिन उनको सताते नहीं। उनको परदेकी आड़ ले जाते हैं। वहाँ कुछ स्त्रियाँ सीखी हुई मौजूद रहती हैं। उन्हींके द्वारा वे लोग उन स्त्रियोंके पाससे सब आभूषण इत्यादि हरण करवा लेते हैं, और फिर उनको छोड़ देते हैं। बेगमसाहबा और उनके साथकी दासीको भी वे इसी उद्देश्यसे पकड़ ले गये थे, पर उनके पाससे जितने मालके मिलनेकी उम्मीद थी, उतना नहीं मिला, इसलिए उनको बड़ा आदमी समझकर, इस आशासे कैद कर रखा है कि, इस ढंगसे उनके पाससे और भी कुछ वसूल कर सकेंगे। अब आप यदि

कोई उन्हें छुड़ावेगा नहीं, तो न जाने क्या हो जाय !" इत्यादि बातें श्यामाने कहीं। इसके सिवाय दाऊद मियाने भी खासाहबको बहुत समझाया, और दोनोंने मिलकर उनके मनमें इतना तो अवश्य जमा दिया तो किलामें यदि अपने कार्यके लिये औरतका भी भेष धरकर जाना पड़े कोई हानि नहीं, एक बार वहाँ जाना अवश्य चाहिए और यदि हो सके, तो बेगमसाहबाका भी वहाँसे छुटकारा करना चाहिए। क्योंकि दाऊद मियाँने बड़े अपनत्वके साथ कहा कि. कैसी ही हो, वह बेगम आखिर अपनी जातिकी ही है, उसे छुड़ाना भी आपके समान लोगोंका ही कर्त्तव्य है। साथ ही साथ उन्होंने यह भी समझाया कि, एक बार यह हाल तो हम लोगोंको मालूम ही होचुका है, अब केवल वस्त्रोंकी ही लज्जामें पड़कर—अर्थात् स्त्रीका भेष लेवें या न लेवें, इसी सोच-विचारमें पड़कर—यदि इस काममें लापरवाही की जायगी, तो यह उचित न होगा। भेष किसलिए बदला जाता है ? इसलिये कि, हमारी सच्ची स्थिति शत्रुको मालूम न होसके, और हम उसके अन्दर घुसकर अपना काम कर आवें—छिपकर शत्रुका गला काटनेके लिए यह एक साधनमात्र है। दाऊद मियाँका यह गम्भीर विचार अन्तमें उनको पसन्द आया, और अब इस बातका विचार उपस्थित हुआ कि पोशाक कहाँसे लाई जावे ? पर इसके लिये कोई विशेष चिन्ताकी आवश्यकता ही न थी। पहले-पहल जब पोशाकका प्रश्न निकला, तब तो दाऊद मियाँ मानो बड़े विचारमें पड़ गये, पर अन्तमें मानो आँखोंमें एकदम आँसू भरकर कहने लगे, "खासाहब बन्देको माफ किया जाय; मेरी औरत अभी हालहीमें गुजरी है, उसका पायजामा, लहंगा, ओढ़नी, वगैर सब मैंने एक गठरीमें बाँधकर उसकी यादगारके तौरपर रख छोड़ा है—और क्या बतलाऊँ, खाँसाहब, जबसे मैंने आपको देखा है कईबार उसकी याद आचुकी है उसका डीलडौल, चेहरा-मोहरा, सब आपहीके समान था। उसकी पोशाक आपके बदनमें बिलकुल ठीक आ जायगी; और जब आप उसका वह बुर्का ऊपरसे डालेंगे, तब तो न जाने मेरी क्या गत हो ! कह नहीं सकता। आपका चेहरा देखते ही मेरे मनमें आया,

जैसे आप उसके भाई हों, अथवा वह खुद ही मर्दका भेष धरकर आई हो।" उनका यह कथन इतनी बदमाशीसे भरा हुआ था कि, कुछ पूछिये मत। इसे सुनकर उनको क्रोध भी आया, और हँसी भी आई। श्यामा तो हँसते हँसते बिलकुल लोट पोट हो गया। हाँ, दाऊद मियाँ अवश्य ही बिलकुल चुप और दुःखित बैठे रहे। मानो सचमुच ही उन्हें अपनी मृतपत्नीकी याद आ रही हो। वे अपनी आँखोंमें आनेवाले आँसुओंको पीछे ही-पीछे रख रहे थे। अस्तु। अन्तमें श्यामाने सूचित किया कि, अब यदि इस विचारके अनुसार कार्य करना है, तो शीघ्रता करनी चाहिए। इसपर खाँसाहब बिलकुल राजी हो गये, और पायजामा, कुर्ता, ओढ़नी, इत्यादि किस प्रकार पहनी जाय, इसका पाठ लेकर वे अपने वस्त्र बदलनेको तैयार हो गये। श्यामाको उन्होंने बाहर जाकर खड़ा होनेके लिये कहा कि, जिससे भीतर कोई आने न पावे, और अन्दर दाऊद मिया वस्त्र बदलनेमें उनको सहायता देने लगे। श्यामा एक मौजी जीव, उसको कोई न कोई मौज करनेका मौका चाहिए—वह बाहर खड़ा हुआ क्षण क्षणपर यही कहता, "अजी मियाँ, अजी मियाँ साहब, देखो रामजी पटेल आये, मोहन आया, अजी! सोहन भी वह आ रहा है, आपही की ओर आता है। अजी, आया आया—नहीं, नहीं—लौट गया। वह जा रहा है।" इस प्रकार कहनेके बाद फिर कुछ देर ठहर जाता, और फिर उसी प्रकार किसी न किसीका नाम लेकर चिल्लाने लगता। इस प्रकार श्यामा उधर उपद्रव मचा रहा था, और इधर दाऊद मियाँ खासाहबको कपडे पहनाते पहनाते बोले, "अजी, जहाँ आपने बुर्का डाला कि, बिलकुल उसी (हमारी स्त्री) की तरह दिखाई देंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं। वाह! उसका यह पायजामा आपके कैसा ठीक हो जाता है! यह ओढ़नी कितनी सुन्दर लगती है! और यह लहँगा? यह तो जैसे बिलकुल आपहीके लिए बनाया गया हो। बस, वह भी ऐसी ही थी! ऐसी ही दिखाई देती थी।" इस प्रकार कहकर वे उसके गुण गाने लगे, और बीच-बीचमें आँखोंसे आँसू भी टपका देते। अस्तु। उस समय बेचारे खासाहबकी क्या दशा हो रही

होगी, इसका पाठक ही अनुमान करें। पर एक बार जब फँस गये, तब अब कहाँ निकलना होता है? इसके सिवाय, श्यामाके मुँहसे जबसे उन्होंने यह सुना कि, नानासाहब और फातिमा एक ही जगह हैं; और दोनोंकी मुलाकात भी रोज हुआ करती है, तबसे उनकी इच्छा और भी प्रबल हो गई कि, चाहे जिस तरहसे हो, एक बार वहाँ पहुँचना अवश्य चाहिए; और उस हरामखोर नानासाहबको, यदि मौका मिले, तो मार ही डालना चाहिये। उनको बिल्कुल विश्वास हो गया था कि, फातिमा जो हमारे हाथ नहीं आ रही है, इसका एकमात्र कारण वे ही हैं। इसी दुष्टने उसे बहका रखा है; और जबतक यह मौजूद है, फातिमा हमें नहीं मिलेगी, इसलिए इसका एकबार खात्मा ही कर देना चाहिए, और ऐसा करनेके लिये मौका भी यही अच्छा है, फिर यह हाथ न आयेगा। हम जब इस विचित्र भेषमें जायँगे, और अपनेको बेगम-साहबाकी बाँदी बतलायँगे, तब अन्दर जानेसे कोई रोक नहीं सकेगा, और इस लड़केको दो-चार पैसे देकर चुप बैठनेके लिये कहेंगे, बस, सब काम हो जायगा। खासाहबने कपड़े तो स्त्रियोंके पहन लिये थे, पर अपने हथियार उनके भीतर छिपानेमें वे नहीं चूके थे। श्यामाको भी यह बात मालूम हो गई, अतएव उसने मन ही मन कहा, "अच्छा बेटा, तुम चाहे जितने हथियार साथमें लो, लेकिन तुम्हारी दुर्गति कराये बिना हम न रहेंगे।" मनमें तो उसने इस प्रकार कहा, पर बाहरसे यही कहा, "हाँ, हाँ, खासाहब, हथियार जरूर ले लीजिये, वीर पुरुषोंके लिए ऐसा ही उचित है—वे चाहे जिस भेषमें रहें, पर शस्त्र उनके साथ चाहिए ही।" इस प्रकार कहकर वह इनको साथ लेकर वहाँसे रवाना हुआ। उसने अपना और सब काम भी कर लिया था। जो कुछ खबरें उसको लेनी थीं, सब उसने अन्य किसी मार्गसे प्राप्त कर ली थीं और उनमें कोई विशेष महत्वकी खबर भी नहीं थी।

इस प्रकार जब खाँसाहब बीबी बन गये, तब ऊपरसे बुर्का डालना भी आवश्यक ही होगया। क्योंकि भीतरकी सारी पोशाक जनानी थी; और इसके सिवाय हथियार भी छिपे रहने चाहिए। पर बेचारे

खाँसाहबको बुर्का डालकर चलनेकी आदत कहाँ? यह भी एक आफत ही थी। अच्छा, रास्तेमें यदि केवल ओढनी ही ओढकर चलें, तो यह भी सम्भव न था कि, लोग उन्हे पहचानते नहीं, सभी लोग रास्तेमें यह कहकर हँसी करते कि, यह अच्छा पुरुष है, जो स्त्री बना जारहा है! इन सब विघ्नोंसे बचनेके लिए मार्ग एक ही था, और वह यह था कि, मुसल्मान स्त्रियोंकी तरह भीतरकी पोशाकपर ऊपरसे बुर्का डाल लिया जाय।

बेचारे खांसाहबको सब कुछ चुपकेसे करना पड़ा। पर चुपकेसे वे क्या कर सकते थे? उनके हाथहीमें क्या था? उनका मार्ग दर्शक—वह श्यामा—न जाने क्या सोच रहा था, कुछ समझहीमें न आता था। उसने रातको उस जनानी विचित्र पोशाकमें खांसाहबको एक बार रपेटा सही। कोई भी रास्तेमें जाने आनेवाला मिलता तो वह बिना कारण ऐसा कहने लगता, "देखो, हमारी बीबीसाहबा जारही हैं—भाई, इनके सामने मत आना।" इस प्रकार कहकर उनकी ओर खास तौरपर वह लोगोंका ध्यान आकर्षित करता। अस्तु। इस प्रकार वह उन बीबीरूप खांसाहबको बहुत देरतक पहले तो इधर ही उधर रगड़ता रहा, फिर इसके बाद सूर्याजीकी छावनीकी ओर लेगया। तत्पश्चात् उनसे यह कहकर, कि आप यहां इस वृक्षके नीचे खड़े रहिये, और मैं जाकर तबतक चोरोंका हालचाल ले आऊँ, वह बिजलीकी तरह न जाने कहाँका कहाँ गायब होगया। बेचारे खांसाहब उस वृक्षके नीचे खड़े हुए, अपने बुर्केकी जालीसे देखते रहे कि, बाहर क्या होरहा है? श्यामा कब आता है? इत्यादि पाव घंटा होगया। आधा घंटा होगया। उसका कहीं पता नहीं? अब वे क्या करें? कुछ समझमें ही न आरहा था। इतनेमें बहुत देर बाद धूर्त्त श्यामा दूरसे दौड़ता हुआ आया, और बीबीसाहबके पास आकर बोला, "अजी, अन्तमें वही हुआ, जो मुझे भय होरहा था। चोरोंने चारों ओर बड़ी चतुरतासे नाकेबन्दी कर रखी है, लेकिन उनमेंसे दो-एकको मैंने पैसेका लालच देकर मिला लिया है।

अव चलिये आप, वहुत जल्द।" खाँसाहव—या वीवीसाहवा—को सचेत किया, और फिर दोनों वहांसे आगे चल दिये।

पचीसवां परिच्छेद

इसके आगे

जैसाकि पिछले परिच्छेदमें वतलाया गया, श्यामा वीवीसाहवको उन चोरोंकी वातें वतलाते हुए सूर्याजीकी छावनीकी सीमातक आया; फिर उनको एक वृक्षके नीचे खड़ा करके खुद दौड़ता दौड़ता गया; और वहाँ अपनी उस सम्पूर्ण कारस्तानीका समाचार दे आया। जैसे किसी लड़केके हाथमें कोई नवीन ही खिलौना आ जावे, और वह उसके कारण अपने पहलेके सभी खिलौनोंको भूल जावे—यही नहीं, वल्कि उसके माँ वापके यदि कोई काम वतलाया हो, तो वह उसको भी भूलकर अपने उसी नवीन खिलौनेके आनन्दमें मग्न हो जावे—वस, ठीक ऐसा ही हाल उस समय उनका हो रहा था। जैसे किसी विल्लीके वच्चेको कोई वड़ा चूहा मिल जाय, और फिर वह खुश होकर उसको तोड़नेके लिये, उसके साथ लीलापूर्वक खेले—वस, ऐसा ही विचार उसका उस समय दिखाई पड़ रहा था। उसने सोचा कि, जो मुसल्मान हमारे पंजेमें पड़ गया है, उसका हम खूव ही कौतुक कर सकेंगे, और जिस समय उसने ऐसा सोचा था, उसी समयमें उसका वह नन्हासा, पर वहुत ही चतुर और कावेवाज सिर, नाना प्रकारकी युक्तियाँ निकाल रहा था, और अन्तमें यहाँतक उसीने नौवत ला दी।

वहुत देरतक पैरोंको रगड़ते रहनेके वाद वे दोनों एक पहरेके पासतक आये। वहाँ आते ही श्यामा, जैसे वहुत ही घवड़ाया हुआ सा कहता है, "अरे झुरूवा, अरे यह तो वहुत ही चग्वड़ दिखाई देता है, जान पड़ता है, हमारे कहनेमें नहीं आवेगा देखो क्या होता है! स्त्रियोंपर हाथ डालनेका हुक्म नहीं है; परन्तु फिर भी क्या कहा जा सकता है? आखिर डाकू ही तो ठहरे!" यह कहकर, वहुत ही घवड़ाते हुए,

वह चीटीकी चाल चलने लगा। साथ ही साथ क्षण क्षणपर यह भी कहता जाता, "अरे! देखो तो, एकके दो हो गये—अरे, दोके तीन हो गये, चार-पाँच-छै! अब इस रास्तेसे बचकर ही जाना चाहिये। कौन कह सकता है कि, इन छहोंमेंसे सभी भलेमानुस होंगे? कुछ बद-माश भी होंगे; पर आप घबड़ावें नहीं—खाँसाहब, मैं आपको जरा भी तंग न होने दूँगा, और बिलकुल ठीक जगह पर जाकर पहुँचा दूँगा। आप बिलकुल चिन्ता न करें।" इस प्रकार कहते हुए इधर-उधर दौड़ दौड़कर जाता, और जैसे कुछ देखता आता हो। यही हाल कुछ देरतक रहा, फिर ऐसा जान पड़ा कि, कोई डाँटकर पूछ रहा है—"कौन हो तुम? कौन जा रहा है? बोलते क्यों नहीं?" इन शब्दोंको सुनते ही श्यामा जैसे बिलकुल ही घबड़ासा गया, और कहता है, "अरे बापरे! जिस बातको मैं टाल रहा था, वही सामने आ गई! बीबीसाहबा—अरे हँ—खाँसाहब, अरे यह क्या हुआ? यह तो एक बड़ी बला आ गई? अब क्या करूँ जी! और, मेरे मिलाये हुए आदमियोंमेंसे तो इनमें कोई दिखाई नहीं देता! बड़ी मुश्किलकी बात हुई—अच्छा, देखो अब ·····"

श्यामा इतना कह ही रहा था कि, इतनेमें उपर्युक्त आदमी, जो घुड़क कर बोला था, बिलकुल समीप आ गया, और श्यामाके कन्धेपर जोरसे हाथ मार बोला, "क्योंरे, तू कौन है? कहाँ जा रहा है?

"ममम—मम मैं—बि बि बि बी·" श्यामा इतना घबड़ाकर चुप खड़ा रह गया और आगे उसके मुँहसे एक अक्षर भी नहीं निकला। यह देखकर वह आदमी तुरन्त ही कहता है, "ममम मैं बि बि बि बी, यह क्या कहता है? मुझे अच्छी तरह बोलना नहीं आता? तू बीबी है—इसका अर्थ क्या है? अरे, तू किसकी बीबी है? बतला छोकड़े और (बीबी बने हुए खाँसाहबके पास जाकर) यह क्या स्वाग लाया है? यह किसकी बीबी है? क्या तेरी? अरे वाहरे छोकरे! बीबी तो तू खूब लाया! बहुत ही नन्हीसी बीबी लाया है!" यह कहकर वह बड़े जोरसे हँसा, और उसका बोल सुनकर और भी दो एक आदमी

जो वहाँ थे, हँसते हुए आगये ; और देखने लगे कि क्या बात है। यहाँतक कि, उनमेंसे एक तो बिलकुल बीबीसाहिबाके पास ही जापहुँचा; और कहता क्या है—"बीबी क्या है—बिलकुल कलेजा ही तोड़नेवाली है !" यह कहकर वह हँसा, इतनेमें एक दूसरा और भी आगे बढ़ा ; और जैसे बीबीसाहबाको बिल्कुल पकड़ना ही चाहता हो ! यह देखकर वह, मुँहसे कुछ भी न बोलती हुई, कदम-कदम पीछे हटने लगी। अब श्यामा बिलकुल पैंतड़े बदलकर, आगे आकर, कहता है, "देखो जी, औरतको हाथ न लगाना—खबरदार ! मैं उनके साथ मौजूद हूँ—जो कुछ कहना हो, मुझसे कहो। उनसे बोलनेका तुम्हारा क्या काम है ? तुम्हारे वे कौन नायक या सूबेदार हैं—उनका क्या नाम है—सूर्याजी या नानासाहब—उनकी मेरी अच्छी जान-पहचान है। मैं उनसे जाकर तुम्हारा सब हाल कह दूँगा—तुम समझते क्या हो ? हाँ तुम हमको कैद करना चाहते हो ? खुशीसे करो हम कहाँ इनकार करते हैं ? लेकिन अगर तुम शरीर वरीर पर हाथ डालोगे, तो खबरदार—याद रखना ! यहाँ कोई नादिरशाही नहीं मचा है—समझे !" क्या यह वही श्यामा है, जो पहले 'ममम, बि बि बि बी करता था ? अब तो वह बीबीसाहब-के आगे होकर बड़ी डाटके साथ बोल रहा था, जैसे उसकी रक्षाका सारा भार उसीके सिर हो ?

उसकी चपलता और धृष्टता देखकर उन सिपाहियोंको बहुत ही हँसी आई और उनमेंसे एक आगे बढ़कर कहता है, "अरे वाहरे छोकरे ! वाह-वाह ! वाह-वाह बीबी तो तू अच्छी नन्हीसी लाया ! कब हुआ तेरा निकाह ? अरे—ऐ बच्चे, मुझे अपनी बीबीका मुखड़ा तो देखने दे। जरा बुर्का तो हटा, और यदि तेरा हाथ न पहुँचे, तो मैं हटाऊँ !...." यह कहते हुए वह आगे बढ़ा; और बीबीके कन्धेपर हाथ डाला। यह देखते ही वह हाँ—हाँ करती हुई पीछे हटने लगी। इससे उस आदमीने और भी धृष्टता प्रकट की, और अपना हाथ उस बीबीके कन्धेसे नहीं हटाया यह देखकर बीबीने उसके हाथमें एक ऐसा झटका दिया कि जिसका कुछ कहना ही नहीं ! फिर क्या पूछना है ?

"अजी वाहजी बीबी! बीबी तो खूब जोरदार दिखाई देती हैं!" यह कहते हुए सभी बीबीके आस-पास जमा हो गये, और मिलकर उनको खूब तंग करने लगे। एकने एक कन्धेपर हाथ डाला, दूसरेने दूसरे कन्धेपर, और एक उनका बुर्का निकालने लगा। श्यामा चिल्लाने लगा, अरे यह क्या करते हो? यह क्या करते हो? औरतके शरीरपर हाथ डालते हो? राशनबीबीके शरीरको हाथ लगाते हो? देखो, बीबी-साहबा कोई ऐसी वैसी नहीं—बड़े खानदानकी हैं। इनके खाँसाहब तुम्हारा सबका नाश कर देंगे—इस प्रकार वह बराबर चिल्लाता रहा, पर उस बेचारेकी सुनता कौन है? इधर बीबीसाहबा बहुत ही बिगड़ीं; और इतनेमें एक सनकीने उनका बुर्का भी मुँहसे हटा दिया। बीबीका सच्चा स्वरूप दिखाई दिया—यही नहीं, बल्कि उनके उस स्वरूपका अनुभव भी हुआ, क्योंकि एक आदमीको बीबीसाहबाने ऐसा भारी धक्का दिया कि, वह जाकर एक ओर लोटने लगा। पर, कह नहीं सकते किस कारणसे—शायद श्यामाने ही इशारा कर दिया हो—उस आदमीने फिर कोई विशेष उपद्रव नहीं किया। हाँ सिर्फ श्यामासे इतना ही पूछा, "अच्छा बीबीसाहबाको हम जाने देते हैं, लेकिन वे जायँगी कहाँ?"

श्यामाने चुपकेसे उसके कानमें बतलाया। फिर क्या था—लोग तुरन्त ही समझ गये, और बोले, "अच्छा, जाओ। लेकिन यह किसीसे मत कहना कि, हमारे पहरेसे आये।" यह कह कर आँखें मटकाते हुए उन सिपाहियोंने उनको जाने दिया। बीचमें और एक दो जगह भी पहरोंपर बीबीसाहबाकी ऐसी ही दशा हुई, पर फिर श्यामा और बीबी, दोनों छावनीके अन्दर आ गये, और आगे ज्यों ज्यों वे पहरोंको पार करते हुए जाने लगे, श्यामा खाँसाहबको अधिकाधिक धैर्य और उत्साह दिलाने लगा—"देखिये, पहलेपहल जो पहरे पड़े, उन्हींके सिपाही बड़े दुष्ट और बदमाश हैं। अब उतनी कठिनाई नहीं पड़ रही है। अब एक पाव घण्टेके अन्दर ही हम अन्तिम पहरेके पास पहुँचते हैं, और फिर जहाँ आप एक बार भीतर पहुँच गये कि, फिर आपका काम होनेमें

देर नहीं। देखिये, कैसी खूबीके साथ काम हुआ।" इस प्रकार वह बराबर बड़बड़ा रहा था, और बेचारे अपने किये पर पछता रहे थे। बार बार सोच रहे थे, "देखो, इस लड़केके चक्करमें आकर हम केवल अपनी सनकसे ऐसे गोलमालमें पड़ गये। हमने यह बहुत ही बुरा काम किया। अब देखना चाहिये, अन्ततक पहुँचनेमें क्या क्या होता है। और मान लो, एक बार फातिमासे जाकर हमने भेंट ही कर ली; पर इससे उद्देश्य क्या सिद्ध हुआ? कुछ भी नहीं। ये चोर भी एक प्रकारके राजा ही दिखाई देते हैं। जगह जगह इनके सिपाही और सैनिक लगे हुए हैं—चौकी पहरेका भी भारी इन्तजाम है! अब इनके बीचसे अपना काम सिद्ध करके हमको निकलना है—यह कोई छोटा मोटा काम नहीं। चक्करमें आ गये जरूर, पर अब देखना चाहिए, क्या होता है।" अस्तु। अन्तमें श्यामा उनको अन्तिम पहरेपर ले आया; और वहाँ भी सब पहलेकासा ही फार्स (स्वाग) हुआ। परन्तु हाँ, इस फार्समें इतनी विशेषता रही कि, बीबीसाहबाका बुर्का एकदम निकाल दिया गया, और अब उनके ऊपर सिर्फ दाऊद मियाकी औरतके ही कपड़े रह गये। उस पोशाकमें उनको देखकर सिपाहियोंको बहुत ही कौतूक मालूम हुआ, और वे हँसते-हँसते बिलकुल लोटपोट हो गये। जो उठता, वोही बीबीसाहबाके कपड़ोंमें हाथ लगाकर देखने लगता, और विनोद पूर्वक कहता कि, "वाह! क्या ही सुन्दर पोशाक है, और ये वस्त्र तो देखिये, कितने झीने और मुलायम हैं, और इस सुन्दरीके शरीरपर कितने अच्छे खिलते हैं।" इस प्रकार वे लोग बराबर उन बीबीरूप खाँसाहबकी हँसी-दिल्लगी कर रहे थे कि, इतनेमें एक सिपाही उठा; और उनकी कमरसे, लिपट जानेके हेतुसे, अपना हाथ लगाया, तो उनको मालूम हुआ कि, इसकी कमरमें शस्त्रकी तरह कोई कठोर वस्तु है। इधर इतनी देरकी हँसी दिल्लगी और हैरानीके कारण खा-साहब भी बहुत ही त्रस्त हो गये थे; और अब तो कमरमें भी लिपटनेकी नौबत आ गई। हँसी दिल्लगीका भी कुछ ठिकाना है! खाँसाहब क्रोधके मारे जामेसे बाहर हो गये, और अपने स्त्रीवेशमें छिपा रखी हुई एक

भुजाली निकालकर उस कमरमें हाथ लगानेवाले सिपाहीकी ओर दौड पडे। फिर क्या कहना है? बातकी बातमें अन्य दो-चार सिपाही भी दौड पड़े, और उनको पकड लिया, सभी बुरी तरहसे उनपर टूट पड़े, और गालियाँ दे देकर उनके छिपे हुए सब अस्त्रशस्त्र निकाल लिये। चारों ओरसे उन पर हँसी-ठट्ठे और गालियोंकी बौछार होने लगी। कुछ देरतक इस प्रकार तंग करनेके बाद सिपाहियोंने यह विचार किया कि, इसको अब अपने स्वामी, अर्थात् सूर्याजीके, पास लेजाकर पेश करना चाहिये। परन्तु इतने ही में एक सिपाहीकी राय हुई कि, इसकी पोशाक तो यही रखनी चाहिये, लेकिन इस बदमाशने बुर्का डालकर जो अपनी दाढी और मूछोंको छिपा रखा था, सो अब उनको छिपानेकी आवश्यकता ही हम लोग दूर कर दें। पहले ही वह मुसलमान, और फिर औरतका भेष धरकर उस छावनीमें आया! फिर क्या पूछना है—एक अच्छासा शिकार मराठोंके हाथ लगा। उपर्युक्त राय देनेभरकी देर थी, कि इतनेमें एक-दो आदमी नाईको बुलानेके लिये दौड पडे। नाई आया। फिर चार पाच मुचण्डोंने मिलकर उनको पकडा, और उनकी दाढ़ी तथा मूछोंको उड़वा दिया। श्यामा पास ही खड़ा हुआ कह रहा था—"खासाहब, अजी क्या बतलावें, क्या करने गये थे, और क्या हो गया! मैं यदि ऐसा जानता, तो आपको इस प्रकार कभी न लाता। लेकिन खासाहब, आप क्रोधमें आकर लोगोंपर दौड़े, इसीसे यह सब हुआ। आपने यह क्यों किया? अब, कहिये, इसमें मेरा क्या दोष? लेकिन, खासाहब, आपकी दाढ़ी-मूछ चली गई, यह भी अच्छा ही हुआ—अब आपका स्वाँग पूरा हो गया? अब आप बिलकुल ही बीबीसाहबा बन गये!" यह कहकर वह बार बार हँसता हुआ और बनावटी खेद प्रदर्शित करता हुआ उनके जखमेपर निमक छिडक रहा था। अस्तु। इस प्रकार जब जबरदस्ती उनकी दाढी मूँछ निकाल डाली गई, तब फिर, इसके बाद, सब सिपाहियोंने मिलकर उठाया, और मुश्कें बाँधकर सूर्याजीके पास ले चले। अपराध उसपर यह लगाया गया कि, यह व्यक्ति औरतका भेष धरकर हमारी छावनीमें घुस आया,

और चूँकि शस्त्र इत्यादि इसके पाससे बरामद हुए, इससे ऐसा जान पड़ता है कि, इसका उद्देश्य बहुत भयंकर था। अब उनकी जो विडम्बना हुई, उसकी बात ही मत पूछिये। परन्तु हाँ, इतनी अभी अच्छाई थी, कि उनको किसीने अभीतक पहचाना नहीं था। कुछ देर बाद नानासाहब, जो वहीं-कहीं पास ही एक ओर बैठे थे, वह हँसी-ठट्ठेकी आवाज सुनकर उधरसे आ निकले। देखते क्या हैं, सिपाही लोग एक व्यक्तिको औरतकी पोशाकमें लिये जा रहे हैं; और वह व्यक्ति उनको बिलकुल पहचानका था! उनको देखते ही बेचारे खाँसाहब मानो मुर्देसे भी ज्यादा हो गये। उनकी दशा बड़ी दयनीय दिखाई दी। गर्दन बिलकुल नीचेकी ओर झुक गई।

"अहमद खा! ओ अहमद मियां!! वाह! आप औरत बनकर हमपर आशिक हुए, और हमारे पीछे पीछे आये? वाह! क्या कहना है। हमपर तुम्हारी इतनी मुहब्बत! ऐ मेरी जान अहमद बीबी! आपने इतनी दूर आनेकी तकलीफ क्यों की मैं तो खुद ही आपके मालिककी मुलाकातको आनेवाला था। अच्छा, आ गये, तो अच्छा ही हुआ। अब रहिये इसी रूपमें हमारी तैनातीमें।"

नानासाहबका यह कथन इतना मर्म-भेदक था कि, प्रत्यक्ष भाला लेकर यदि वे छेदनेको तैयार हुए होते, तो भी उनको उतना क्लेश न होता। परन्तु जिनको उसने नाना प्रकार कष्ट दिया था; और जिनको मार डालनेका कपट-व्यूह रचकर अपने उद्देश्यको पूर्ण करनेके लिये वह बिलकुल तैयार हो गया था, उन्हींके सामने आज उसे इस रूपमें आकर खड़ा होना पड़ा, और उनके उपर्युक्त अपमानजनक शब्द सुनने पड़े— इससे अधिक और दुःखकी बात उसके लिये क्या हो सकती थी? पर क्या करता बेचारा! जो कुछ सामने आता जाय, उसको भोगते रहनेके अतिरिक्त उसके लिये और कोई चारा न था। नानासाहबने मनमाने अपमानजनक शब्द कहकर उसकी खूब ही विडम्बना की, और फिर सूर्याजीको भी सब हाल बतलाया कि, इसी व्यक्तिने बीजापुरमें रहते समय मुझे इस-इस प्रकार कष्ट दिया था। वह सब वृत्तान्त सुनकर

सभी लोगोंको इसपर अत्यन्त क्रोध आया, और उसकी विडम्बना की कोई हद न रही, पर इतने हीमें एक आदमीने आकर सूर्याजीको कोई ऐसा समाचार बतलाया, जिससे अहमदकी ओरसे उनका ध्यान हट गया, और उन्होंने उसके लिये सिर्फ इतना ही हुक्म दिया कि, "इसको अब इसी पोशाकमें रहने दिया जाय, इसकी पोशाक बदली न जाय; क्योंकि यदि मौका आ गया, तो इसको इसी पोशाकमें इसके मालिकके सामने पेश किया जायगा। जो व्यक्ति औरतकी पोशाक पहनकर घूम रहा है, उससे अब विशेष हँसी दिल्लगी करने अथवा उसको पुरुष समझनेमें भी कोई विशेष तत्व नहीं। इसको ऐसा ही रखो।"

इतना कहकर सूर्याजी नानासाहबको एक ओर लेजाकर उन्हें कोई समाचार बतलाने लगे। अहमदके मनमें अब सिर्फ यही एक बात रह गई थी कि, खुदा करे, फातिमाके सामने मुझे इसी रूपमें जानेकी नौबत न आवे। पर बेचारेका नसीब उतना भारी न था, क्योंकि जो बात वह नहीं चाहता था, वही उसके सामने आई। सूर्याजीके आदमीने अभी हालहीमें जो समाचार आकर बतलाया था, वह यही था कि, उनके आदमियोंने और भी कुछ मुसल्मान लोगोंको, लवाजमेके साथ पकड़ा था। संयोगकी बात है—श्यामाने तो अपनी कल्पनासे ही अहमदके प्रश्नोंका 'हाँ हाँ' करके उत्तर दिया था। वास्तवमें वह घटना उस समय हुई नहीं थी, पर अब उसकी वह कल्पना ही बिल्कुल सच निकल गई—अर्थात् रणदुल्लाखाकी बहन और उसकी दासी फातिमा सुल्तान गढ़ जानेके लिये उसी जगहसे निकल पड़ा। सूर्याजीके आदमियोंने उनको रोका भी, पर नानासाहबकी प्रार्थनासे सूर्याजीने उनको प्रतिबन्ध-में नहीं रखा, किन्तु वैसा ही जाने दिया—हाँ, उस थोड़ेसे समयमें भी इतना उन्होंने अवश्य किया कि, बेगमसाहबा और फातिमाबीबीको अहमद मियाँका वह स्त्री-रूप अवश्य दिखला दिया। उस दशामें अहमदके मनकी क्या अवस्था हुई होगी, इसका पाठकगण ही अनुमान करें।

कुछ देरमें नानासाहब सूर्याजीसे विदा होकर सुल्तानगढ़की तरफ

चल दिये, और वहाँ जाकर किलेके आस-पासके लोगोंसे मिले ; तथा जो जानकारी उन्हें प्राप्त करनी थी, सो प्राप्त की , और जो प्रबन्ध उनको करना था, सो भी किया। इसके बाद वे लौटकर फिर सूर्याजीके पास आये ; और अहमदको सूर्याजीके ही अधिकारमें रखकर और जो कुछ सलाह सूर्याजीसे उनको करनी थी, सो करके फिर सासवड़ अर्थात् शिवाजीकी छावनीकी ओर चल पड़े।

छब्बीसवां परिच्छेद

अप्पासाहब वापस आये

मुसलमानी बादशाहतमें कैसा-कैसा अन्धेर मचा रहता था; और उस समयके प्रबन्धमें कितनी अस्थिरता रहती थी, इसकी आख्यायिकायें अब भी यत्र-तत्र सुनाई दिया करती हैं। एक बार एक हुक्म निकलता, तो दूसरी बार तुरन्त ही आधे घण्टेमें दूसरा हुक्म निकल जाता। एक बार कोई आदमी किसी कामके लिये नियुक्त किया जाता, तो दूसरी बार तुरन्त ही उसी दम उसकी नियुक्ति रद्द कर दी जाती ; और उसकी जगहपर दूसरा ही आदमी उस कामपर भेज दिया जाता। कहते हैं कि, एक बार मुगल-बादशाहतमें किसी आदमीको तहसीलदार-की जगह मिली, तो वह अपने कामका चार्ज लेनेके लिये घोड़ेपर उलटा बैठकर जाने लगा—लोग पूछते कि, भाई, यह क्या बात है, तो वह कहता कि, मैं इस तरह बैठकर पीछेकी ओर देखता जाता हूँ कि, मुझको निकालकर मेरी जगहपर जो आदमी नियुक्त किया गया होगा, वह पीछेसे आ तो नहीं रहा है! इस प्रकारकी, उस जमानेकी, अनेक आख्यायिकायें बुजुर्ग लोग सुनाया करते हैं। अस्तु। जिस समयकी हम यह कथा लिख रहे हैं, उस समय भी यही हालत थी। पाठकोंको स्मरण होगा कि, अप्पासाहबको अधिक अधिकार इत्यादि प्रदान करके फिरसे सुल्तानगढ़पर उनकी नियुक्ति की गई थी ; किन्तु परोसी हुई थालीमें मक्खी टूट पड़ी! बेचारे अप्पासाहबके हाथमें हुक्मनामा आये अभी

बहुत देर नहीं हुई थी, वे अपने ठहरनेके स्थानको लौटे ही थे, और सुलतानगढ चलनेकी तैयारीमें थे कि, इतनेमें एक दो दिनके बीचमें उनको फिर यह हुक्म मिला कि, "अभी आप यहासे रवाना न हो।" कारण क्या ? सो उनको क्या मालूम ? बेचारे उनके अधिकारमें—हुक्म माननेको लाचार थे। दो दिन हो गये। चार दिन हो गये। उनको कुछ भी खबर नहीं। बेचारे बड़े दुःखी हुए। हॉ, रणदुल्लाखाने आकर उनसे दो-चार समाधानकी बातें अवश्य की, पर उन बातोंसे उनको शायद ही कुछ सन्तोष हुआ हो! उन्होंने सोचा कि, हम जितनी राजभक्तिके साथ बादशाहकी सेवा करते हैं, उतनी सारी राजभक्ति बादशाहके यहाँ बिल्कुल ही व्यर्थ जाती है। इससे तो यही अच्छा होगा कि, हम काशीजी जाकर वहाँ आनन्दसे श्रीविश्वनाथजीके सामने बैठकर भगवद्भजन करते रहें। जिस राजाके यहाँ अपने मानो नौकरोंकी कुछ भी कदर नहीं, उसकी नौकरी करनेमें क्या लाभ ? हॉ, एक बार स्वीकार कर ली, सो करते भले ही रहे! सच पूछिये, तो ऐसी नौकरीको इससे पहले ही नमस्कार करना चाहिये था। इस प्रकारके विचार एक बार अप्पासाहबके मनमें भी आये बिना नहीं रहें, पर उस वृद्धकी हड्डी हड्डीमें राजभक्तिकी ब् ल्डकपनसे ही समाई हुई थी, अतएव उन्होंने उपर्युक्त विचारोंको अपने मनमें बहुत देरतक स्थान नहीं दिया! परन्तु हॉ, उनका बीजारोपण एक बार अवश्य हो गया। इसके बाद एक दिन बैठे हुए वे मन ही मन यह विचार कर रहे थे कि, अब आगे क्या करना चाहिये। इतनेमें सरदार रणदुल्लाखॉ वहाँ आ पहुँचा। उस समय अप्पासाहबका मन बहुत ही खिन्न हो रहा था। बार-बार वे यही सोच रहे थे कि, जो स्वामी हमारे समान सेवककी कुछ भी कदर न करे, उसकी नौकरी हम क्यों करें ? सच तो यह है कि, हमारे समान व्यक्तिकी सेवाकी इस दरबारमें कोई कदर हो ही नहीं सकती, और हम ही क्या, किसी भी सच्चे व्यक्तिकी नौकरीकी यहाँ यही दशा होगी। बस इसी प्रकारके विचार उनके मनमें बारम्बार आ रहे थे, और उनका मन बहुत ही उद्विग्न हो रहा था। इतनेमें ज्योंही

रणदुल्लाखाँ आ गया, त्यों ही उनके वे विचार, जो अभीतक भीतर ही भीतर दबे हुए थे, बाहर प्रकट होनेपर आ गये। क्योंकि रणदुल्लाखाँपर उनका बड़ा विश्वास था। उनका यह सदैवका खयाल था कि, इस दरबारमें यदि कोई हमारा सच्चा हितैषी है; और जो हमारे समान व्यक्तिकी पूरी पूरी प्रतिष्ठा कर सकता है, तो वह केवल यही है। और बस, इसी कारण उन्होंने उस समय अपने हृदयको खोलकर सब बातें उसके सामने कह देनेका निश्चय किया। उन्होंने कहा—"बस, हो चुका जितनी सेवा मुझसे हुई, उतनी ही काफी है। अब इस संसारमें मेरी कोई भी इच्छा बाकी नहीं रह गई है। और न अब मैं किले पर ही जानेकी कोई इच्छा अपने मनमें रखता हूँ। अब मैं काशीजी चला जाऊँगा, और वहीं श्रीविश्वनाथजीकी सेवामें अपना शेष जीवन विताऊँगा। मेरे न कोई लड़का, न बाला! लड़का था, किन्तु मैं समझता हूँ कि, अब वह मर गया। इसलिये खाँसाहब, बस, अब आप इतनी कृपा कीजिये कि, जिससे एक बार किसी न किसी प्रकार बादशाहसे मेरी फिर मुलाकात हो जाय, जिससे मैं हुजूरके कदमोंमें सब बातें अर्ज कर दूँ। अब परसों, जो हुक्म मेरे हाथमें आया है, उसको हुजूरके कदमोंपर रखकर और उनको आखिरी सलाम करके, मैं तुरन्त काशीजीको चला जाऊँगा। अब मुझे कोई आशा नहीं कि, मेरी सेवाको यहाँ कुछ भी कदर होगी।"

बुड्ढेके ये शब्द बिल्कुल हृदयसे निकले थे, अतएव रणदुल्लाखाँको भी उसपर बड़ा तरस आया। सच पूछिये, तो आज वह भी उनके पास इसी विषयमें कुछ बातचीत करने आया था। उनके उपर्युक्त उद्गार सुनकर कुछ देर तो वह वैसे ही चुप बैठा रहा, पर फिर उनसे बोला, "देखिये, इस समय दरबारकी हालत कुछ बहुत ही विचित्र हो रही है। वह कहाँतक विचित्र हो रही है, इसकी आप कल्पना भी नहीं कर सकते। मैं भी अब यहाँ रहनेसे उद्विग्न हो रहा हूँ। मुरारशाहब भी मुझसे ऐसी ही कुछ बातें करते थे। लेकिन अन्तमें फिर उन्होंने कहा कि, "भैया, जबतक, ईमानके साथ रहकर हम बादशाहके हितके लिये

उसकी सेवा कर सकते हैं, तबतक तो अवश्य ही करेंगे। जबतक हम देखते हैं कि, हुजूरके बदमाश अर्दली-बर्दली हमारे प्रत्यक्ष राजकाजमें हस्तक्षेप नहीं कर सकते, तबतक हम इस प्रकारका कोई भी विचार स्वप्नमें भी मनमें नहीं ला सकते। और जिस दिन फिर ऐसी दशा आ जायगी कि, हमारे हाथसे तो कुछ हो नहीं सकेगा, और वह दशा भी हमसे देखी न जायगी, तब फिर जो कुछ विचार करना होगा, देखा जायगा।" बाहरमें तो सारे संसारको आज यही मालूम हो रहा है कि, सारा राजकाज मुरारसाहब और रणदुल्लाखाँकी ही सलाहसे हो रहा है। उनकी सलाहके बिना बादशाह हूँ अथवा चूँ भी नहीं करता। और कुछ अंशमें यह बात अब भी सच ही है। परन्तु, हाँ, दिन-दिन अब इसमें कमी ही हो रही है। गत दो चार दिनोंमें तो दशा अत्यन्त चिन्ताजनक हो रही है। मेहरजान बहुत बीमार है। और . . '

रणदुल्लाखाँ आगे और भी कुछ कहनेवाला था, पर फिर सोचने लगा कि अब आगे कहूँ या न कहूँ, और वह बात उसने फिर वहीं छोड़ दी। अप्पासाहबका ध्यान पूरा पूरा उसकी बातोंकी ओर था, अथवा नहीं, कुछ कहा नहीं जा सकता। हाँ, उसका पहले-पहलका कथन—विशेषतः वह कथन, जो उसने मुरारपन्तका बतलाया—सुनकर तो मानो उनका मन बहुत ही विचार मग्न हो गया। उसका अगला कथन शायद ही उनके कानोंमें पड़ा हो। अतएव वे सोचहीमें उससे बोल उठे, "हाँ, मुरारसाहबने जो कुछ कहा, वह अक्षरशः सत्य है। ईमानदार नौकरोंका यही व्रत है। जबतक हमारे हाथसे नौकरी हो सके—जबतक मालिक स्पष्ट न कह दे कि, अब तुम्हारी नौकरीकी हमें आवश्यकता नहीं—और जबतक हमारे मनको यह विश्वास रहे कि, हम कुछ भी अपने स्वामीका हित कर सकते हैं, तबतक अपनी तरफसे स्वामिसेवा छोड़नी न चाहिये। लेकिन हाँ, एक बात है, जो स्वामि-सेवा भी न करने देता, और न यही कहता है कि, तुम्हारी सेवाकी आवश्यकता नहीं, तब हमारे समान नौकरोंकी बड़ी दुर्गति होती है—या तो यही कहकर छुट्टी दो कि, भाई, अब आगे तुम्हारी नौकरीकी

हमको जरूरत नहीं अथवा हमारे हाथमे पूरी-पूरी सेवा ही लो—लेकिन यह कौनसी बात है कि न इधरमे रखा जाय ; और न उधरमें ?"

अप्पासाहबके इस कथनका रणदुल्लाखाने भी अनुमोदन किया, सो कहनेकी आवश्यकता ही नहीं। लेकिन अन्तमें उसने इतना कहा कि, "आप बिलकुल निराश न हो जावें। एक बार मैं आपके लिये फिर प्रयत्न करता हूँ, और आपको यहाँसे भिजवानेका प्रबन्ध करता हूँ।" यह कह उसने उनका समाधान किया, और फिर यह भी कहा कि, "मेहरजान सुलतानगढ़पर कुछ दिनके लिए रहना चाहती है। आप वहाँ उसका प्रबन्ध रखें, उसको यहाँसे भेजनेमें दो उद्देश्य सिद्ध होंगे—एक तो उसकी इच्छाकी पूर्ति और दूसरा भी ऐसाही कुछ कारण है।"

उस कारणको जाननेकी इच्छा अप्पासाहबकी थी, पर उन्होंने जान-बूझकर इस विषयमें पूछना उचित नहीं समझा। हाँ अपने मनमें तर्क-वितर्क बहुतसे करते रहे।

रणदुल्लाखाने उस विषयमें कुछ कहनेका दो-चार बार विचार किया, और कुछ बार तो उस विषयके शब्द उसके होंठोंतक आगये होंगे ; पर अन्तमें न जाने क्या सोचकर वह कुछ कह नहीं सका। हाँ, अन्तमे इतना ही उसने कहा कि 'आपका छुटकारा चाहे यहाँसे शीघ्रता पूर्वक न भी हो, तो भी मेहरजानको वहाँ भेजनेका मेरा विचार है। कहिये, सब प्रबन्ध हो जायगा न ?" अप्पासाहबने कहा—"हाँ।" इसके सिवाय वे और कह ही क्या सकते थे ?

रणदुल्लाखा मेहरजानको सुल्तानगढ़पर भेजना चाहता था, इसमें उसकी इच्छा तो मुख्य हो थी, इसके अतिरिक्त, ऐसा जान पड़ता है कि, और भी कोई उससे भी विशेष प्रबल कारण था, क्योंकि रणदुल्लाखाने अपने कहनेके अनुसार, आगे चलकर चारही पाँच दिनमें, उसे वहाँके लिए रवाना भी कर दिया। इसके चार दिन बाद, कर्म-धर्म सयोगसे, अप्पासाहबको भी एक प्रकारसे स्थायी हुक्म मिल गया कि, वे सुलतान गढ़पर पहुँचकर फिर अपनी किलेदारीके अधिकार अपने हाथमे लेलेवें। उन्होंने भी सोचा कि, अब शीघ्रता ही करनी चाहिये—शुभं च शीघ्रं—

और इसलिये उन्होने शीघ्र ही अब बीजापुरसे अपना बोरिया-बँधना समेटा। इसके बाद मंजिल-दर-मंजिल तय करते हुए वे उचित समयपर सुल्तानगढ आ पहुँचे। उनके वहाँ पहुँचनेके कोई पाँच ही छै दिन पहले नानासाहब सुल्तानगढ पहुँचे थे। वहाँ सब अपना ठीकठाक जमाकर वे सासवड़की ओर शिवाजीकी सेवामें वहाँका सब समाचार बतलानेको गये, और अगली तैयारीके विषयमे उनको सूचना दी। आसपासके लोगोंको फोड़कर अपनेमे मिलानेका सारा कार्य सूर्याजीने स्वीकार किया था, और तदनुसार वे अपने प्रयत्नमे सलग्न भी हो गये थे। अप्पासाहब जब लौटकर सुल्तानगढपर आये, तब एकबार अवश्य ही उनके मनमे यह आया कि अब शायद हमारे कार्यमें कुछ बाधा उपस्थित हो, पर जब उन्होंने इस विषयपर अच्छी तरह विचार किया, तब उनको ऐसा मालूम हुआ कि अप्पासाहबका आ जाना एक प्रकारसे अच्छा ही हुआ। एक बार उनके मनमे यह शका तो अवश्य आई कि जिन-जिन लोगोने हमको अनुकूलता दिखाई है वे वे लोग शायद अब उनके आ जानेसे फिर निकल जायँ—यह नहीं कि ऐसी शका सूर्याजीके मनमे न आई हो, पर वे भी एक खासे राजनीतिज्ञ पुरुष थे, अतएव उन्होंने उस झोपड़ीवाले बुड्ढेकी सलाहसे इस बातका पूरा पूरा विचार कर रखा था कि अब उनके आ जानेसे जो परिस्थिति उत्पन्न होगी, उसपर क्या-क्या योजना की जाय, अपनी कार्यव्यवस्थामें क्या क्या परिवर्तन किये जायँ लेकिन हाँ, उन्होने यह विचार अवश्य किया कि, उनके आनेका समाचार नानासाहबके पास भेजना ठीक न होगा, और अपने इसी विचारके अनुसार उन्होने कार्य भी किया, अर्थात् इधरके इस समाचारका पता उन्हे नहीं लगने दिया। अप्पासाहब जब किलेपर पहुँच गये, तब अनेक लोगोको बहुत आनन्द हुआ। उनका शासन जरा कठोर था, पर उनका व्यवहार चूंकि बहुत ही सच्चा था, अतएव जैसा लोगोंपर उनका प्रभाव था, वैसा ही लोगोका उनपर प्रेम भी था। सूर्याजीने उस झोपड़ी वाले वृद्ध महाशयकी सलाह लेकर यदि चातुर्यसे काम न लिया होता, तो बहुत लोग निकल गये होते। लेकिन

सूर्याजीने यह प्रकट किया कि, देखो, हम जो कुछ करनेवाले हैं, उनकी इसमें भीतरसे पूर्ण मदद है। यह सभी जानते हैं कि, अभी थोड़े दिन पहले उनका कितना बड़ा भारी अपमान किया गया, उनको कैद करके बीजापुर ले गये; और वहाँ पहरेमें उनको रखा, इन सब बातोंके कारण उनको बड़ा दुःख है; और इसी कारण हम कहते हैं कि, इस प्रकारका प्रयत्न यदि हम लोग करेंगे, तो इसके लिये उनका पूर्ण अनुमोदन मिलेगा। इतना ही नहीं, बल्कि सूर्याजीने किसी किसीसे तो यह भी कह दिया कि, ऐसा करनेके लिये असली सम्मति तो उन्होंने ही दी है। इस कारस्तानीसे उनको कहाँतक लाभ होगा, अथवा न होगा, यह जाननेके लिये उस समय कोई साधन तो था ही नहीं, और मान लो कि, कुछ लोगोंको मालूम भी हो जाता कि, ऐसा करनेसे इतना लाभ होगा, अथवा हुआ, तो ऐसे लोग बहुत थोड़े थे; और सो भी ऐसे थे कि, जो सूर्याजीके समान, यवनोंके अत्याचारोंसे कष्ट पा चुके थे, और उनके लिये वह बात अनिष्ट न थी।

नानासाहबको गये लगभग पन्द्रह दिन हो गये। इधर अप्पासाहब सुल्तानगढ़ पर आये; और पहलेकी तरह अपना सब ठीकठाक किया। इसके दो ही चार दिन बाद एक दिन एक तरुण पुरुष, घोड़े पर सवार, मुसल्मानी पोशाक पहने (उस समय मराठों और मुसल्मानोंकी पोशाकमें कोई बहुत अन्तर नहीं था, अथवा यों कहिये कि, उनमें बिल्कुल ही अन्तर न था) सुल्तानगढ़के पास ही नादेगावमें आया। वहाँ आकर गाँवकी सरहदपर एक शिवालयके पास उसने अपने घोड़ेको विश्राम दिया; और स्वयं बस्तीमें इस विचारसे आया कि, कहीं द्रव्य देकर यदि कुछ भोजनका प्रबन्ध हो जाय, तो करना चाहिये। चलते-चलते वह एक ऐसे घरपर पहुँचा कि, जिसमें सिर्फ दो स्त्रियाँ दिखाई दीं, और वहाँ जाकर उसने अन्य स्थानोंकी ही तरह अपना प्रश्न उपस्थित किया, जिसे सुनकर एक स्त्रीने उससे कहा, "भैया, जो कुछ रूखा-सूखा हमारे पास है, सो हम तुमको देंगी, लेकिन उसके लिए द्रव्य हम नहीं ले सकतीं। हम गरीब आदमी हैं, लेकिन यह नहीं चाहतीं कि, दो

दिनके लिए यदि कोई अभ्यागत हमारे यहाँ आ जावे, तो उससे हम भोजनके लिए द्रव्य ले लेवें। और फिर तुम तो किसी कुलीन सरदार घरानेके राजकुमारसे दिखाई देते हो, तुमको जो भोजन दिया जायगा; और ऐसे कठिनाईके मौकेपर, सो कभी व्यर्थ नहीं जायगा। घड़ी-दो-घड़ी बैठ जाओ, मैं रसोई बना लूँ, तो भोजन कराऊँ।"

उसका यह कथन सुनकर वह तरुण बहुत चकित हुआ। परन्तु वह समय चकित होनेका नहीं था, अतएव उस देवीके सम्मुख कृतज्ञता प्रकट करके उसने कहा, "अच्छा, बाई, मैं अपने घ ड़ेको, जो गाँवके बाहर मन्दिरके पास बँधा है, चारा-दाना देकर अभी वापस आता हूँ।"

उस स्त्रीने जब यह सुना तब उसे कुछ आश्चर्यसा हुआ। इसके बाद फिर वह अपने ही आप पहले कुछ गुनगुनाई, और फिर प्रकट उससे कहती है, "भैया, तुम ऐसा क्यों करते हो, कि एक जगह घोड़ा बँधा रहे, और एक जगह तुम रहो। तुम किसी बड़े आदमीके लड़के मालूम होते हो, सो तुमको यदि अभी हालहीमें रहनेके लिये कहीं कुछ कठिनाई हो, तो घोड़ेको भी यहीं क्यों न ले आओ, और उधर पड़छीमें बाँध दो, तुम चबूतरेपर सो रहना। हम घरमें दो ही बहनें हैं; और एक हमारी मौसी है।"



सत्ताईसवां परिच्छेद

नवीन आदमी।

उस युवा पुरुषने उस आमन्त्रणको स्वीकार कर लिया, जिससे ऐसा जान पड़ा, मानो वह इसकी प्रतीक्षा ही कर रहा था। उसने तुरन्त ही उत्तर दिया कि, "अच्छा, यदि तुमको कोई तकलीफ न हो, तो मैं आजाऊँगा। मुझे सुभीता जरूर होगा।" इतना कहकर वह जल्दी ही अपना घोड़ा लाने चला गया। इधर वह स्त्री अब यह सोचने लगी कि, 'देखो, हमने यह कैसा अविचारका काम किया! हमारे घरमें इस समय एक ऐसा

व्यक्ति रहता है, जो कि बिल्कुल अज्ञातवासमें है; और ऐसा होने पर भी हमने एक नवीन आदमीको, एकबारगी, अपने घरमें रहनेकी अनुमति दे दी! यह भी नहीं पूछा कि, वह कौन है, कहाँसे आया है। यह काम अच्छा नहीं हुआ। और हमारे हाथसे तो ऐसा अविचार कभी नहीं हुआ, न जाने आज कैसे हो गया! हम उसकी तेजस्विता देखकर ही भूल गईं।" इस प्रकार सोच सोचकर मानो वह अब इसी बातका विचार कर रही थी कि, इस भूलसे बचनेका अब कौन उपाय निकालूँ। परन्तु इतनेमें वह नवपरिचित व्यक्ति अपना घोड़ा लेकर वहाँ आ ही पहुँचा और इसलिये, मानो उसको आप ही आप यह उत्तर मिल गया, कि, "नहीं, अब कुछ नहीं हो सकता।" इसके सिवाय उस युवाका चेहरा ही कुछ ऐसा था कि, उसे देखते ही उसका उपर्युक्त पश्चात्ताप भी कम हो गया। वह बाई ऐसी नहीं थी कि, एक बार कहकर फिर बदल जावे। इसलिये तुरन्त ही उसने घोड़ा बाँधनेके लिये उस युवा पुरुषसे कहा। इसके बाद आप रसोई बनानेके लिये भीतर चली गई। वह युवा अकेला ही बाहर बैठा हुआ, यह सोच सोचकर आनन्दितसा हो रहा था कि, "अच्छा हुआ, यहाँतक तो सब बात जम गई।" उसने सोचा कि, हम जिस कामके लिए इस ओर अकेले आये हैं, वह काम अब हमारा ठीक तौरसे हो जायगा। कुछ देर बाद उस स्त्रीने भोजनके लिए उसे बुलाया; और वह तुरन्त ही उठकर चला भी गया। पर भीतर प्रवेश करते समय एक ऐसी बात हुई कि, जिससे वह अत्यन्त विचारमग्न हो गया। वह भीतर गया कि, इतनेमें एक स्त्री, मानो उसकी नजर बचानेके लिए ही, एकदम अपनी जगहसे उठकर भीतरकी एक कोठरीमें घुस गई। युवाकी नजरोंमें उस स्त्रीकी एक झलकमात्र दिखाई पड़ी; पर इतनेहीसे, न जाने क्या सोचकर, वह अत्यन्त विचारमग्न हो गया। जिस स्त्रीको उसने देखा, उसका लुगड़ा उसके सौन्दर्यको शोभा देने योग्य न था, इसके सिवाय उसे यह भी विश्वास हुआ कि, यह स्त्री जिस स्थानमें इस समय मौजूद है, वहाँकी यह रहनेवाली भी नहीं। परन्तु फिर इस बातपर उसने और

कोई विशेष विचार नहीं किया, और भोजनके लिए बैठ गया। यथा-रुचि भोजन हो जानेपर वह बाहर आया, और अपने अभीष्ट कार्यके विषयमें, अथवा जो बातें उसने अभी देखी थीं, विचार करता हुआ लेट गया। ऐसा मालूम कि, उस समय उसके मनमें नानाप्रकारके विचार आ रहे थे। कुछ देर बाद उसको नींद सी मालूम होने लगी; और अब उसकी आँख लगनेही वाली थी कि, ये शब्द किसीके, उसके कानोंमें पड़े—"ऐसा ही था, तो मुझ अकेलीको यहाँ छोड़कर आप शहाजीके लड़केके गुटमें शामिल होनेके लिए काहेको चले गये? मुझको भी ले जाना था। पहले ही इस बातका विचार कर लेते कि, मेरे बाद मेरी स्त्रीका क्या होगा, वह क्या करेगी, इत्यादि।'

"हाँ, ठीक ही है।" एक दूसरी स्त्री—शायद वही जिसने उस युवाको ठहरनेके लिए जगह दी थी—कहती है, "अपनी स्त्रीकी इज्जत रखनेके लिये यहाँ तो रहा नहीं, और कहता है कि, धर्मरक्षाके लिए और स्वराज्य स्थापित करनेके लिये शहाजीके बागी लड़केके पास जाऊँगा।"

फिर पहली स्त्रीके शब्द सुनाई दिये.—

"आप अब इधर आनेवाले भी हैं—देखती हूँ, क्या क्या चमत्कार होता है। जिस स्त्रीको बिलकुल तुच्छ समझकर छोड़ दिया है, वह स्त्री ही अब बराबरीमें सामने खड़ी होकर युद्ध करेगी, और तब सब हाल मालूम हो जायगा।"

इसके बाद भी और कुछ बातचीत होती रही, पर वह इतनी धीमी और अस्पष्ट आवाजमें हुई कि, उस युवाके कानतक नहीं पहुँची, किन्तु ऐसा जान पड़ा कि, जितना कुछ उसने सुना था, उसको विचार निमग्न करनेके लिये उतना ही काफी था। उसकी नींद उड़ गई, और अब वह इस विचारमें पड़ा कि, मैं यहाँ, कहाँ आकर, किसके यहाँ ठहरा हूँ, और ये लोग कौन हैं। इस बातपर कुछ देर सोच विचार करनेके बाद फिर उसने निश्चय किया कि, दूसरे दिन हम इसका पता लगावेंगे, और उन विचारोंको फिर उसने वहीं छोड़ दिया। शायद मन ही

मन इस विषयमें कुछ अनुमान भी कर लिया, और ऐसा जान पड़ा कि, उस अनुमानसे उसे सन्तोष भी हुआ।

दूसरे दिन उसने घरकी मालकिनसे कहा कि, मैं अब किसी कामके लिये बाहर जाता हूँ, और शामको फिर आऊँगा। यह कहकर वह वहासे बिदा हुआ, और सचमुच ही फिर शामतक उसके दर्शन नहीं हुये। कई लोगोंने उस दिन उसे सुल्तानगढ़के आस पास घूमते हुये देखा, और प्रत्येकने अपने-अपने मनमें यह तर्क भी किया कि, न जाने यह कौन आया है; परन्तु अन्तमें सभोने यह कहकर कि, "होगा कोई!" उसकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। बात यह थी कि, वे सब लोग उस समय अप्पासाहबके फिरसे आ जानेपर खूब आनन्द मग्न हो रहे थे, और ऐसी दशामें कोई अन्य आदमी आकर यदि वहाँ कुछ कर भी जाता तो उसको ओर कोई विशेष ध्यान देनेकी सम्भावना नहीं थी। सन्ध्याकाल होते ही वह महाशय फिर अपने पूर्वस्थानपर आ गया; और पिछली रातकी भाति ही अपने घोड़ेको चारा-दाना देकर और उस बाईके यहाँ रसोई जीमकर, कम्बल बिछाकर पड़ रहा। इसके बाद, आधीरातके लगभग बहुत ही चुपकेसे, जिसमे किसोको उसके पैरोंको भी आहट न मिले, वहासे चल दिया; और फिर किलेके पास आकर उसके चारों ओर परिक्रमा की। दिनको उसने जिस ढगसे किलेका निरीक्षण किया था, उसकी अपेक्षा इस समयका उसका निरीक्षण बिल्कुल निराला था। कह नहीं सकते—किस कारणसे—चाहे अन्धेरेके; और चाहे अन्य किसी कारणसे—उसने इस बार बहुत ही बारीकीके साथ उसका निरीक्षण किया। लगभग दो-तीन घण्टेतक चारों ओर घूमकर—किसीको आहट न लगने देते हुए—उसने किलेका निरीक्षण किया, और अभी अच्छी तरह तड़का नहीं होने पाया था कि, फिर वह अपनी उसी ठहरनेकी जगहपर आकर लेट रहा। वह आकर लेटा नहीं कि, इतनेमें घरकी मालकिन यह देखनेके लिए बाहर निकली कि, अभी और कितनी रात है। देखती क्या है कि, उसका मेहमान जग रहा है; अतएव उसने पूछा कि, "क्या आज रातको तुमको नींद नहीं आई?

अब कितनी रात और है?" उसने कोई ढोंग इत्यादि न दिखलाते हुए उस स्त्रीके प्रश्नोंका सरल ढगसे उत्तर दे दिया, और वह स्त्री भीतर लौटकर जाने ही वाली थी कि, इतनेमें वह कहता है, "बाई, मैं दो दिन तुम्हारे घरमें रहा। तुमने लड़केकी तरह मेरा सब सम्बन्ध रखा। इसके लिए मैं तुम्हारा अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। ऐसे मनुष्य बहुत थोड़े हैं, जो इस प्रकार किसी बाहरी आदमीको अपने घरमे आश्रय देकर उसका सब प्रकारका प्रबन्ध रखें। अब मैं आज अपने घर चला जाऊँगा। मेरा काम सारा हो गया। हाँ, एक-दो बातें तुमसे पूछनी है, यदि आज्ञा हो, तो पूछूँ।"

उसका यह अत्यन्त विनयपूर्ण भाषण सुनकर उसको आश्चर्य हुआ; और शीघ्रतापूर्वक वह पीछे लौटकर उनके पास आकर कहती है, "भैया, पूछो। जो बतलाने लायक होगी, तो बतलाऊँगी।" इस प्रकारका सरल उत्तर पाकर वह क्षणभरके लिये चुप हो रहा, फिर तुरन्त ही कहता है, "बाई, तुम और कमसे कम तुम्हारे घरमें जो कोई हैं, वे वैसे ही नहीं हैं, जैसे कि दिखाई देते हैं। यह क्या बात है? यदि कोई सकट आया हो, तो क्या मैं कोई सहायता कर सकता हूँ? यदि मेरे योग्य कार्य हो, तो बतलाओ। बस, इतना ही मैं तुमसे पूछना चाहता हूँ।" यह उसका विचित्र प्रश्न सुनकर वह स्त्री पहले अपने आप ही कुछ गुनगुनाई, और फिर बोली, "भैया, मैं नहीं जानती कि, तुम कौन हो, और न तुम ही जानते हो कि, हम कौन हैं। ऐसी दशामे तुमको सब बातें बतलानेमे क्या लाभ? इससे तो नहीं बतलाया जाय, यही अच्छा। हाँ, इतना मैं अवश्य कह सकती हूँ कि, मेरे घरमें जिसको तुमने देखा है, वह सचमुच ही वैसी कोई नही है। मेरी मालकिन सिर्फ सकटके ही कारण इस अवस्थामे रह रही हैं—उसके पतिने बिना कारण ही उसको कटुवचन कहकर छोड़ दिया है, और इसी कारण उसे अज्ञातवासमे—एक तरह-से वनवासमे ही—आकर रहना पड़ा है। इससे अधिक और इस विषय में क्या बतलाऊँ? हाँ, इतना तुम करना कि, जब यहासे जाओ, इस बातका कृपा करके कहीं जिक्र मत करना। मुझे दृढ़ विश्वास है कि,

सत्यकी विजय अवश्य होगी; और जिस मुँहसे नाना (जीभ दबाकर) मेरे मालिकने बाईसाहबको तुच्छ बतलाकर इस दशामें ला रखा है, उसी मुखसे मैं उनके इस कृतकर्मके लिये उनसे क्षमा मँगवाऊँगी।"

उस बाईने इतना ही कहा था कि, भीतरसे आवाज आती है—"क्यो री, यह क्या,? यह तू क्या कह रही है? अपने आपमें तू क्यों नहीं है?" ये शब्द सुनते ही वह वहाँसे चल दी। लेकिन वह महाशय उससे और कुछ देर ठहरनेकी प्रार्थना करके उससे कहता है, "बाई, मैं यहाँ अपने आनेकी निशानीके तौरपर तुमको यह एक छोटीसी थैली दिये जाता हूँ। इसको तुम अपने पास रखो। अब आगे यदि मुझसे तुम्हारी कहीं मुलाकत हो जाय, तो पहचान मत भूलना। मुझे तुम अपने भाईके समान समझो; और अपनी मालकिनके उस अपमानको दूर करनेके लिए तुमने जो निश्चय किया है, उसमें मेरे हाथसे भी तुमको पूर्ण सहायता मिलेगी, इसका तुम विश्वास रखो। बस, अब मैं जाता हूँ।"

इतना कहकर उसने एक छोटीसी थैली उसके आगे रख दी। वह उसके लिये कुछ 'हाँ' या 'नहीं' करनेवाली थी, पर इतनेमें वह युवक एकदम पड़छीमें अपने घोड़ेके पास जाकर खड़ा हो गया। इसके बाद फिर मानों उसके मनमें कोई बात आई; और वह लौट आया, तथा उस स्त्रीसे धीरेसे बोला, "बाई, तुमने अब मुझे अपने भाईकी तरह तो समझ ही लिया—इसलिये कृपा करके इतना प्रबन्ध कर दो कि, जिससे एक बार किलेपर जाकर हम देवीके दर्शन कर सकें। इधर मेरी पहचान का कोई भी आदमी नहीं है; और देवीजीके दर्शनोंके साथ ही साथ इस प्रसिद्ध किलेको भी देखनेकी मेरी इच्छा है, अतएव यदि मैं अकेले ही वहाँ जाऊँगा, तो शायद लोग शंका करें, पर यदि किसी पहचानवाले-के साथ जाऊँगा। तो सहजहीमें देख सकूँगा; और फिर उधर ही उधर अपने घरको चला जाऊँगा। एक बार दर्शन करनेका मेरा संकल्प था, सो यदि तुम्हारी सहायतासे पूर्ण हो जाय, तो बड़ी उत्तम बात हो।"

थैली उस महाशयने पहले ही दे दी थी, और उसके बोलनेका ढग भी अत्यन्त मनोहर था, इसलिये वह स्त्री उसकी ओर बड़े आदरभावसे देख रही थी। कुछ देर सोचनेके बाद फिर वह एकदम कहती है—'हाँ, हाँ, आज तो यह सहजमें हो सकता है। श्यामा आनेवाला है। उसके आनेपर तुम्हारा यह काम हो जायगा। वह तुम्हारे साथ चला जायगा, और अच्छी तरह दर्शन कराकर, जो जो कुछ देखने योग्य होगा, सब दिखा देगा।"

श्यामाका नाम सुनते ही उस महाशयकी चेष्टापर कुछ विचित्र-सा परिवर्तन दिखाई दिया। उसका ऐसा जान पड़ा कि, जैसे उसने यह नाम कहीं सुना हो, और तत्काल वह कुछ स्मरणसा करने लगा, और फिर एकदम बोला, "ठीक! ठीक! वह लड़का इस कामके लिये सचमुच ही अच्छा होगा, क्योंकि लड़के जितने काम आते हैं, उतने बडे नही आते।"

इतना कहकर वह महाशय फिर वहाँ ठहर गया, और श्यामाके आनेकी प्रतीक्षा करने लगा। यह नवीन आदमी किसके यहाँ ठहरा था, सो अब पाठकोंने अनुमान कर ही लिया होगा। श्यामा उस जगह दो दो, चार चार दिनमें चक्कर लगा जाया करता था। आज भी उसके आनेकी बारी थी, और अपने समयपर वह आ भी गया। उसके आते उस स्त्रीने उस नवीन महाशयकी इच्छा उससे प्रदर्शित की, और उसकी इच्छाके अनुसार उसे किलेपर ले जानेके लिये श्यामासे कहा। यह सब सुनकर श्यामाने उस महाशयकी ओर एक बार बडी विचित्र दृष्टिसे देखा, और उसने भी उसकी ओर देखकर मानो आँख सी मटकाई। ऐसा जान पड़ा कि, उसकी सम्पूर्ण चेष्टाका श्यामाके मनपर एक बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा, क्योंकि वह तुरन्त ही बोल उठा—"हाँ, हाँ—यह कौनसो मुशकिल बात है। लेकिन देखिये, आप अपने ये कपडे पहनकर चलेंगे, तो काम ठीक ठीक नही होगा। पर हाँ, यदि आप मेरी तरह कमली इत्यादि धारण करके चलेंगे, तो सब काम हो जायगा।" इसके बाद वह ऐसी कुछ चेष्टा करके, उस व्यक्तिकी ओर देखकर हँसा कि,

जैसे वह उनका सारा अन्दरूनी इरादा समझ गया हो। उस महाशयने भी अर्थपूर्ण दृष्टिसे उसकी ओर देखा। इसके बाद दिन किसी न किसी तरह बिताकर, ठीक संध्या समय, वह श्यामाके कथनानुसार अपने वस्त्र बदलकर, किलेकी ओर उसके साथ चल दिया। अभी कुछ ही कुछ अँधेरा होने लगा था कि, इतनेमें उन्होंने किलेपर चढ़ना शुरू किया। श्यामा उसके साथ मानो किलेपर अचूक पहुँचनेके लिये एक परवानेकी ही तरह था। किलेपर आज वह बहुत दिनके बाद जा रहा था; और इसीलिये शायद किलेपरके सब लोगोंने उससे नानाप्रकारके प्रश्न करके उसको मानो बिल्कुल हैरान ही कर दिया। उस साथवाले महाशयके विषयमें भी लोगोंने उससे पूछा, तो किसीको "मामा," किसीको "काका" इत्यादि बतलाकर वह धड़ल्लेके साथ उसको ऊपर निकाल ले गया। उस साथवाले महाशयको तो, उसकी मजेदार बातें सुनकर बहुत ही कौतूहलसा हुआ। कहीं किसीने भी उनको रोका नहीं। बड़े मजेसे वे दोनों ऊपर पहुँच गये; और मनमाने तौरपर इधर-उधर घूमने लगे। किसीने यदि कुछ पूछा, तो श्यामाने कह दिया कि, ये हमारे मामा हैं, तुमसे मुलाकात करनेके लिए इनको ले आया हूँ। देवीजीके लिए इन्होंने मानता मानी है कि, आधी रातके समय आकर तुम्हारे दर्शन करूँगा, सो आज ये आये हैं। बस, इसी प्रकार, जिससे जो मन आया कहकर उसने मौका टाला। जितनी देरतक और जहाँ जहाँ जाने तथा देखनेकी उस महाशयकी इच्छा थी, उसने खूब अच्छी तरह देखभाल लिया। किलेका एक कोना भी देखनेमें बाकी नहीं रहा। जिस जिस जगह खड़े होकर अथवा उतरकर वह जो-जो देखना चाहता था, सब कुछ यथेच्छ ताड़ लिया, और फिर रात बिरातका कुछ भी खयाल न करते हुए, श्यामाको साथ लिये हुए, वह किलेके नीचे उतर आया। वहाँ बहुत ही थोड़ी देर विश्राम किया, और अपने घोड़ेपर सवार होकर तुरन्त ही वहाँ से चल दिया। हाँ; श्यामाने उसके चलते समय इतना उससे कहा, "महाराज, मैंने आपको पहचान लिया है, और मेरी बड़ी इच्छा है कि, आपके पास रहनेके लिये मैं आपके साथ चलूँ।"

वह महाशय कुछ हँसा और बोला, "मेरी भी ऐसी ही इच्छा है। कुछ दिनके बाद मौका आयेगा।"

अट्ठाईसवां परिच्छेद

विचार निश्चित हुआ।

पिछले परिच्छेदमे बतलाई हुई घटनाको हुए लगभग आठदस दिन हो गये। राजा शिवाजीकी वृत्ति अब बहुत ही उच्छृङ्खलतापूर्ण दिखलाई देने लगी—कमसे कम दादोजी कोंडदेव और उनकी माताजीको तो ऐसा ही जान पड़ने लगा कि, शिवबा आजकल न जाने किस चक्करमे है। लेकिन उन्होंने सोचा कि, ऐसे समयमे यदि हम इसमे कुछ कहेंगे, तो स्वच्छन्द लड़का न जाने क्या कर डाले और क्या नहीं, इसलिये वे कुछ नही बोले। कुछ दिन पहले दादोजी कोंडदेव और शिवाजीमे जो बात-चीत हुई थी, और उस समय उन्होने जो प्रतिज्ञाकी थी, सो पाठकोंको याद ही होगी, और सचमुच ही उसके अनुसार वे, किलेको हस्तगत किये बिना, घरमें कदम न रखते, किन्तु मातृभक्ति उनमे बहुत ही विलक्षण रूपसे जागृत थी। इसके सिवाय उनकी माता स्वयं एक दिन उनको ढूँढ़ती हुई उसी जगलमें जा पहुँची कि, जहाँ वे रहते थे, और उन्होने घर चलनेके लिये बहुत ही आग्रह किया, अतएव राजासाहबको लाचार होकर अपनी प्रतिज्ञा तोड़नी ही पड़ी। इस प्रकार जब वे घर वापस आये, तब गुरु महाराजको भी जरा सम्हलकर ही उनके साथ बर्ताव करना पड़ा। उस दिनसे वे भी उनके साथ विशेष सख्ती न करने लगे। यों तो राजासाहब साधारणत ऐसा कभी, नहीं करते थे कि, जिससे गुरुकी अवज्ञा हो, परन्तु बात यह थी कि, जिन कार्योंको करनेके लिये उनका मन उनमे कहता था, वही कार्य गुरुजीको बिलकुल त्याज्य मालूम होते थे, और उन कार्यो से उनको पराङ्मुख करनेके लिये ही वे सदैव प्रयत्न किया करते थे। बस, इसी कारणमे उन दोनोंमे एक प्रकारका दूरीभाव उत्पन्न हो गया था। और ऐसा जान पड़ता था

कि, वह दिनपर दिन बढ़ता ही जायगा। राजासाहबका चित्त दिन पर दिन अपने अभीष्ट कार्यकी ओर विशेष रूपसे संलग्न होरहा था; और अपनी तलवारका पहला पराक्रम दिखलानेका मौका वे पास पास ला रहे थे। चूँकि मौका पहला ही था, इसलिये विचार भी खूब करना पड़ रहा था। वे अवस्थामें यद्यपि अभी नवयुवक ही थे, अथवा यों कहिये, कि बालक ही थे, पर उनके विचार किसी उच्चसे उच्च वृद्धकी अपेक्षा किसी प्रकार भी कम न थे। इतिहास इसका साक्षी दे रहा है। जिस स्थानमें वे अपना पहला पराक्रम दिखलाना चाहते थे, उसको उन्होंने अपने लिये अत्यन्त उपयुक्त समझा था; और अब तो अपना पराक्रम दिखलाकर उसको शीघ्र ही हस्तगत कर लेना उनके लिये अत्यन्त आवश्यक हो गया था। हाँ, इस बीचमें एक नवीन कठिनाई अवश्य आकर उपस्थित हो गई थी; और उसीके विषयमें वे मन ही मन बहुत कुछ विचार किया करते थे। यद्यपि राजासाहबकी अवस्था अभी थोड़ी ही थी, फिर भी वे सबकी सलाह लेकर, विचार अपना स्वतन्त्र ही रखते थे। ऐसा आचरण उनके हाथसे कभी नहीं हुआ कि, उनके नवयुवक साथियोंने कोई सलाह दे दी हो, और उसीके जोशमें आकर, बिना स्वतन्त्र विचार किये, उन्होंने कोई कार्य कर डाला हो। बालकपनसे जिन लोगोंके साथ वे खेले-कूदे थे, उनके हाथसे भी यदि कभी कोई अक्षम्य चूक हो गई तो उन्होंने उनकी भी गम नहीं खाई। इस प्रकारके दो-एक उदाहरण इतिहास-पाठकोंसे छिपे नहीं हैं। तानाजी इत्यादि लोग प्रथम पराक्रम दिखलानेके लिये बड़े उतावले हो रहे थे; और दिनमें चार-चार बार उनसे कहते रहते कि, "अब तो सब तैयारी और जाँच-पड़ताल हो गई, अब जो कुछ करना हो, उसके लिये एक बार आज्ञा हो जाय।" राजासाहब भी "हाँ, हाँ" कहकर उनको आश्वासन दे देते। परन्तु अभीतक उनका यह विचार चूँकि निश्चित हुआ ही नहीं था कि, किस प्रकार क्या करना होगा इसलिये वे उन लोगोंकी सिर्फ सुनभर लिया करते थे। इधर तो यह हाल था; और उधर प्रतिज्ञाके दिन भी नजदीक आते जाते थे, इस कारण उनका

चित्त भी कुछ उद्विग्नसा हो रहा था। आज तक जो जो विचार और कार्य उन्होंने किये थे उनमे कभी कोई कठिनाई उपस्थित नहीं हुई थी; और सर्वदा सर्वथा सफलता ही प्राप्त हुई थी। किन्तु अब जो कार्य आनेवाला था, उसकी सफलता-निष्फलतापर उनके भावी सम्पूर्ण उद्देश्यकी सफलता और निष्फलता अवलम्बित थी। बीजापुरवालोंका एक किला स्वय अपनी शक्तिके बलपर हस्तगत कर लेना मानो बादशाहको अपनी भीतरी उद्देश्य खुल्लम-खुल्ला प्रकट कर देना था। यदि किला हाथमें आ जायगा, तो अगली सारी इमारतकी नीव बहुत ही उत्तम प्रकारसे दृढ़ हो जायगी, और यदि वह हाथमे न आया, तो सिर्फ बादशाहको हमारा भीतरी उद्देश्यभर मालूम हो जायगा, और वह हमारी ओरसे और भी अधिक सचेत हो जायगा। इसके सिवाय राजासाहबने यह भी सोचा कि, आठ दस दिन पहले किलेके हमारे हाथमे आ जानेकी जितनी सम्भावना थी, उतनी अब नही रह गई है, क्योंकि इसी बीचमे एक कारण ही ऐसा उपस्थित हो गया है। बस, यही सब बातें सोच करके उनकी चित्तवृत्ति डगमगा रही थी। परन्तु दूसरी ओर वे यह सोच रहे थे कि, अब बादशाहके राज्य अथवा किलेपर चढ़ाई न करते हुए यदि इसी प्रकार लूटपाटमें ही लगे रहेंगे, तो असली उद्देश्य सिद्ध नहीं होगा, और बदनामी भी होगी। इसलिये अब आगे स्वयं बादशाहके राज्यपर ही चढ़ाई करके उसके अधिकारियोंसे मुकाबिला करना चाहिये। केवल लुटेरेपनसे अब काम नही चलेगा। इस प्रकारके विचार उनके चित्तपर विशेष रूपमे अपना प्रभाव जमा रहे थे। इसलिये अब उन्होने सोचा कि, स्वधर्म आर स्वदेशपर परकीय लोग जो अत्याचार कर रहे हैं, उसको दूर करके यदि हमको सचमुच स्वराज्य स्थापित करना है, तो अब लूट-पाटको बन्द करके प्रत्यक्ष बादशाहसे ही मुकाबिला करना चाहिये, और ऐसा करनेके लिये उत्तम मौका भी यही है। क्योंकि प्राय किसी भी विचारको जब कार्यरूपमे परिणत करना होता है, तब कभी कभी उसके लिये किसी निमित्तकी भी आवश्यकता हुआ करती है, अन्यथा वह विचार, आवश्यकतासे अधिक समय तक,

केवल विचारके ही रूपमें बना रहता है। सो इस प्रकारका एक निमित्त भी इस अवसर पर आकर उपस्थित हो गया था; और वह निमित्त इस प्रकार था —

पाठकोंको यह मालूम है कि, राजा शिवाजीके अभिभावक गुरु दादोजी कोंडदेव समय समयपर उनके पिता राजा शहाजीको उनके आचरणके सम्बन्धमें पत्र लिख भेजा करते थे, सो इन दिनों भी उन्होंने ऐसा ही एक पत्र उनके विषयमें लिखा था। उसको पढ़कर राजा शिवाजीपर स्वाभाविक ही उनके पिता बड़े क्रुद्ध हुए, और उन्होंने, पिताको हैसियतसे जो कुछ उनको लिखना चाहिये था, सो, लड़केकी किसी प्रकारकी मुरौवत न रखते हुए, दादोजी लिख भेजा। दादोजीको भेजे हुए उस पत्रमें इस आशयका वृत्तान्त था:—"गरीब लोगोंको लूटकर उनका शाप अपने सिर लेने और यवनोंके नामसे सिर्फ जलनेसे ही यदि यवन राजाओंका नाश होनेको होता; और स्वराज्य स्थापित होनेको होता, तब तो आजतक चोरों और लुटेरोंने भी अनेक स्वराज्य स्थापित कर लिये होते! पागल और स्वार्थी लोगोंकी धुनमें आकर यदि यह (शिवबा) चलेगा, तो न सिर्फ अपना ही नाश करेगा, बल्कि कुलको भी कलंक लगायेगा। यह जानकर कि, अब आपके दबावमें वह नहीं चलता, हमको परम खेद हुआ। हमारे लिखनेसे यदि रास्तेपर आनेकी आशा हो, तो पत्र आते ही हम तुरन्त लिखेंगे। यवनोंका नाश करनेके लिये यवनोंसे ही—यवनोंके अधिकारियोंसे—भिड़ना चाहिये। गरीब-गुरबोंको क्यों सताना चाहिये? गरीबोंको सताना, देहातोंमें लूटपाट करना; और शहरों अथवा किलोंसे बचते रहना, नामर्दीका लक्षण है। न जाने क्यो यह बात उसके ध्यानमें नहीं आती?......"

इस पत्रको पढ़कर दादोजीने सोचा कि, इसको एक बार अपने शिष्यकी नजरोंमें भी लाना चाहिये, और देखना चाहिये कि, वह क्या कहता है। अपने इसी विचारके अनुसार मौका देखकर उन्होंने वह पत्र शिवाजीके सामने रखा; और बड़े ध्यानसे उनकी चेष्टाकी ओर देखते रहे।

कि, इसके पढ़नेसे उनके मनपर क्या प्रभाव पड़ता है। उन्होंने वह पत्र ध्यानपूर्वक पढ़ा, और क्षणमात्र उसका मनन करके फिर सामने ही, दीवालमें खिचे हुए, महाभारतके कुछ चित्रोंकी ओर देखकर एक लम्बी साँस छोड़ी। गुरुजीने समझा कि शायद इसके चित्तको इस पत्रके पढ़नेसे खेद अवश्य हुआ है, ऐसी दशामें हमारे बोलनेके लिये भी यह एक अच्छा मौका है। बस, यही सोचकर उन्होंने उस विषयमें कहना शुरू कर दिया। यह नहीं सोचा कि, महापुरुषोंका मन साधारण लोगोंकी तरह नहीं होता, और हमारा शिष्य कोई साधारण आदमी नहीं है, ऐसी विभूति हजार पाँच सौ वर्षमें कहीं एक बार किसी राष्ट्रमें उत्पन्न हो जाती है, और ऐसी ही विभूतियोंमेंसे एक यह हमारा शिष्य है—ये बातें दादोजीके खयालमें नहीं आ सकीं—अवश्य ही उन्हें अपने शिष्यके मनकी पहचान उस समय नहीं हो सकी, क्योंकि अब भी उनके मनमें यही खयाल बना रहा कि, शिवबा एक सनकी स्वभावका ही लड़का है, और उपद्रवी लड़कोंके साथ पड़कर उपद्रवी होता जा रहा है। इस समय यदि इसे थोड़ासा कह-सुनकर समझाया जायगा, तो यह शायद सुधर भी जाय, पर फिर नहीं सुधरेगा। कुछ दिन पहले जब एक बार वे उनपर नाराज हुए थे, तब उनके मनपर बहुत ही बुरा प्रभाव हुआ था, और उसके कारण उन्होंने घरतक छोड़ देनेकी प्रतिज्ञा की थी, पर माताजीके बहुत समझाने बुझानेपर वे अपनी प्रतिज्ञा भंग करके भी घर आये, अतएव दादोजी तबसे उनके साथ बहुत सम्हल सम्हलकर बर्ताव करते थे। पर आज उन्होंने फिर पिछली इन सब बातोंको एक ओर रख दिया, और इस प्रकारके कटुवाक्योंसे उनके हृदयको भेदना शुरू किया—"देख, तू धर्मके उद्धारके नामपर गरीबोंका काल ही बनेगा! यवनोंका राज्य लेना अथवा उनका पराभव करना तो एक ओर रहा, तू एक बड़ा भारी लुटेरा अवश्य बन जायगा!" अपने गुरुके ऐसे मर्मभेदक वचन सुनकर शिवाजीको अत्यन्त दुःख हुआ। पहले तो वे स्वयं अपने मनमें ही इस बातको सोच सोचकर दुखी हुआ करते थे, पर आज उनके पिता और गुरुने उस विषयमें

में और भी अधिक मर्मभेदक वचन सुनाये, इससे, उनके हृदयको कितना दु.ख हुआ, इसकी पाठक कल्पना करें। किन्तु फिर भी उन्होंने उनको कोई उत्तर नहीं दिया, चुपकेसे बातें सुन लीं; और कुछ ही देर बाद वहांसे उठकर चल दिये। जैसे घासका कोई गञ्ज रच रखा गया हो, उसके पास सिल्लॉ (सनके डण्ठलों) की मशाल भी बनाकर देख ली गई हो, आग भी तैयार हो, और सिर्फ उस मशालको आगमें जलाकर गञ्जपर फेंक देनेभरकी ही देरी हो—बस, यही दशा इस समय शिवाजीके मनकी हो रही थी। दादोजी कोंडदेवका कहना और राजा शहाजीका पत्र केवल निमित्तमात्र होगया। वे वहाँसे चलकर अपनी मित्रमण्डलीमें आये; और अपने मनका पक्का निश्चय करके ही आये। उनका निश्चय हो गया कि, या तो अपनी प्रतिज्ञाके दिनोंके अन्दर सुल्तानगढ़को हस्तगत करके ही छोड़ेंगे, अथवा वहीं अपने प्राणोंकी आहुति जगदम्बाको अर्पण करके ही रहेंगे। वे तुरन्त अपने गुप्त मंदिर में पहुँचे। उन्होंने श्रीधर स्वामीसे भी घड़ीभर अपने पास न आनेकी प्रार्थना की। मन्दिरमें जाकर उन्होंने अपनी तलवार निकालकर भवानी माताके सामने रख दी, और अनन्यभावसे उनकी प्रार्थना करके अपनी आँखें समाधिस्थ अवस्थाके समान बन्द कर लीं। उस समय उनका देवीका जो कुछ दृष्टान्त हुआ, अथवा जो कुछ विचार हुआ, सो उन्हींको मालूम। बड़ी दो घड़ी व्यतीत होजानेके बाद वे फिर पूर्वावस्था-में आये। इसके बाद उनकी चेष्टाकी पहलेकी उदासीनता बिलकुल जाती रही। जैसे बहुत दिनसे मनको त्रस्त करनेवाली कोई बात एकदम मनसे निकल जावे, और फिर चेहरा बिल्कुल प्रफुल्लित हो उठे, उसी प्रकार उनकी चेष्टा अत्यन्त आनन्दित दिखाई देने लगी। उद्विग्नताका नाम-निशान भी उनके चेहरेपर नहीं रह गया। इतने दिनतक जिसे बहुत ही गूढ़ कूटकका उत्तर उनको सूझ नहीं पड़ रहा था, वह आज एकाएक सुझाई दिया, पूरे-पूरे विचारका निर्णय होगया; और उनके चित्तमें पूर्ण शान्ति आई। चेहरेपर किंचित हास्य भी दिखाई देने लगा। इसके बाद तत्काल उन्होंने श्रीधर स्वामीको बुलाया; और उनसे कुछ

वार्तालाप किया। इसके बाद तानाजी, येसाजी और नानासाहबसे मिलकर सलाह मशविरा किया, और सुलतानगढ़पर चढाई करनेकी तैयारी हुई।

दूसरे दिन आधीरातके लगभग करीब तीन-साढे तीन सौ मावले हेटकरी लोगोंका एक जमाव सासवड़के उसी निश्चित जगलमे हुआ। उस समय तानाजीने उन लोगोंको सब बातें समझाई, और भवानी माताके मन्दिरके शस्त्रभण्डारमेंसे एक-एक तलवार प्रत्येक सिपाहीको पारितोषिक देकर उनके दो गोल बनाये। इसके बाद यह निश्चय हुआ कि, एक गोलकी अध्यक्षता स्वय तानाजी स्वीकार करें, और दूसरेका आधिपत्य नानासाहबको दिया जावे, तथा, जैसा कि राजासाहबने कहा, ये दोनों दलपति, सुलतानगढ़के दो पार्श्वोंपर, वहाँसे लगभग चार कोसके अन्तरपर, अमुक दिन, रातको जाकर छिपकर बैठ रहें। दोनो दल एक-दम न जायँ, किन्तु दो-दो, चार-चार आदमी ऐसा दिखलाते हुये जायँ कि, जैसे एकका दूसरेसे कोई सम्बन्ध ही न हो, और अन्तमें क्या हुक्म होता है, इसकी प्रतीक्षा करते हुए सब लोग चुपकेसे वहीं बैठे रहे, इस योजनाके निश्चित हो जानेके बाद यह भी निश्चित हुआ कि, सूर्याजीके आदमियोंका भी शायद काम पड़ेगा, और मौका आ जानेपर उनसे काम लेना ही पड़ेगा, इसलिये वे भी तैयार रहे, परन्तु जबतक उनका इशारा न मिले, वे अपनी तरफसे किसी बातमें कोई हाथ डालें। इस विषयका एक सन्देशा भी उनके पास भेज दिया गया।

इस प्रकार सब व्यवस्था हो जानेके बाद उन सब सिपाहियोंको बिदा कर दिया गया। नानासाहबके आनन्दका पारावार नहीं रहा। उन्होंने सोचा कि, जिस उद्देश्यसे हम घर द्वार छोड़कर यहाँ आये, उसके सफल होनेका अब सुअवसर आ गया, और हमारे उद्देश्यके अनुसार सुलतानगढ़—जहाँ हमने अपना जन्म बिताया, वही—स्वराज्यकी पहली नींव होगी। अब उनके आनन्दका क्या कहना। इसके बाद उनके मनमें यह बात आई कि, वास्तवमें इस किलेसे हम भली-भाँति परिचित हैं, और अब उस स्थानको और भी अधिक महत्व प्राप्त होगा। यह

बहुत अच्छा हुआ कि, राजा शिवाजीको हम इस कार्यमें पूरी-पूरी सहायता प्रदान कर सकेंगे। इस प्रकारके विचार जब उनके मनमें आये, तब उनका चित्त बहुत ही प्रफुल्लित हुआ। इसके बाद उनके मनमें यह आशा भी उत्पन्न हुई कि, अब पिताजी चाहे जो कहें, अथवा चाहे जैसा मौका आ जाय, हम उनको अपने पक्षमें मिला ही लेंगे। इस प्रकार सब विचार करके वे तुरन्त ही नियमानुसार भवानी माता और हनुमानजीके दर्शन करके वहाँसे चल दिये। तानाजी भी उसी प्रकार वहाँसे रवाना हुए। परन्तु राजा शिवाजीने अपने लिए क्या विचार किया था, सो उन्होंने किसीको भी नहीं बतलाया। अपने लोगोंसे उन्होंने यह तो कह दिया था कि, तुम लोग अमुक अमुक ओरसे अमुक जगह जाकर इस प्रकार घात लगाकर बैठो; पर यह बात उनको नहीं बतलाई थी कि, तुम्हें किस समय क्या हुक्म होगा, और उसके होनेपर तुमको किस प्रकार क्या क्या कार्य करना पड़ेगा। ये सब बातें बिलकुल अपने मनमें रखी थीं। पहला ही अवसर है। ऐसा न हो कि, कहीं अपना गुह्य बाहर फूट जाय, और सब खेल बिगड़ जाय! यह सोचकर उन्होंने अपने मनकी बात किसीको नहीं बतलाई थी। क्योंकि इस पहले अवसरपर किसीका विश्वास करनेसे यदि काम बिगड़ जाता, तो उनके चित्तको विषाद होना स्वाभाविक ही था। अतएव उन्होंने पहलेहीसे अपने मुख्य विचारका पता किसीको भी नहीं चलने दिया। हाँ, सिर्फ स्वामीजीको अपना भीतरी विचार अवश्य बतला दिया था। अस्तु। जिन लोगोंको यह हुक्म हुआ था कि, तुम अमुक दिन, रातके समय, सुल्तानगढ़के दोनों पार्श्वोंपर जाकर, इतने-इतने कोसोंके अन्तरपर, घात लगाकर बैठो, उन बेचारोंको यह कुछ भी नहीं मालूम था कि, हमारे लिये वहाँपर किस समय, क्या हुक्म, किस ओरसे मिलेगा, और इस बातका भी उनको साहस नहीं होता था कि, उक्त बातको पूछकर ही वे जान लें। उन सबको तो सिर्फ यही भावना थी कि हम सिर्फ राजासाहब-के आज्ञापालक हैं—जितनी बात वे बतला देवें, उतनी ही हम करें—विशेष बातसे हमको मतलब ही क्या? बस, इसी कारण फिर किसीने

उसकी चर्चा भी नहीं की, और सब अपने-अपने मार्गको रवाना हुए। राजासाहब अपने अगले विचारमे लगे।

लगभग चार पाच दिनके बाद नादेगाँवमे कमली ओढ़े एक आदमी उसी जगह आया कि, जहाँ पिछले परिच्छेदमें बतलाई हुई दो स्त्रियाँ रहती थीं। ऐसा जान पड़ा कि, वह कमलीवाला उन स्त्रियोंको पहचान-का था। इसके बाद दूसरे दिन जब वह लड़का, श्यामा, उन स्त्रियोंके घर आया, तब उसने भी तुरन्त ही पहचान लिया कि, यह और कोई नहीं—वही पहलेका हमारा मामा अथवा काका है। फिर श्यामाके साथ बहुत देरतक उसकी बहुत कुछ बातचीत होती रही। श्यामा उस समय यद्यपि वहा ठहरनेकी गरजसे न आया था, पर जब मामासे भेंट हो गई, तब उसका भी वहीं रहनेका विचार हो गया, और वह उसको साथ लेकर सुलतानगढ़के नीचेवाली बस्तीमें चला गया। वहाँ जाकर सब लोगोसे उसे मिलाने लगा, और उसपर तुर्रा यह कि, वे भी प्रत्येक घरमें जा जाकर वहाँके लोगोंसे घुल घुलकर बातें करने लगे। यही नहीं, बल्कि किलेके ऊपर भी जाकर सिपाही इत्यादिसे भी हिलमिलकर बातें करने लगे।

उन्तीसवां परिच्छेद।

पास आया।

सैयदुल्लाखाने बड़ा प्रयत्न किया कि, मुरारपन्तकी बादशाहको ओरसे अप्रतिष्ठा कराई जाय, और उनसे भी अधिक रणदुल्लाखाको गिरानेका प्रयत्न किया। साथ ही साथ उसने इस बातकी भी अत्यन्त कोशिश की कि, बादशाह उनका दरबारमे आना बन्द कर दे। इसके बाद उसने रणदुल्लाखाकी बहनका सौन्दर्य वर्णन करके बादशाहको यह भी सुझाया कि, उक्त सुन्दरी यदि बादशाहके अन्त पुरमें रहे, तो उसकी बड़ी शोभा होगी। इस प्रकार सैयदुल्लाखाने रणदुल्लाखाकी विडम्बना करनेका सब कुछ प्रत्यत्न किया, पर बादशाह अभी पगला

नहीं हुआ था कि, रणदुल्लाखाके समान सच्चे सरदारका इस प्रकार अपमान करनेको तैयार होता। वह अच्छी तरह जानता था कि, उसके समान खान्दानी सरदारका यदि किसी प्रकारसे भी विशेष अपमान किया जायगा, तो यह अच्छी वात न होगी, वल्कि राज्यके लिये और भी हानिकारक ही होगी। उसने सोचा कि, उसका खान्दान हमारे दरवारका कोई छोटा-मोटा खान्दान नहीं है। मुसल्मान सरदारोंमें यह अत्यन्त प्राचीनतम घराना है; उसका वाप हमारी वादशाहतका एक मुख्य आधारस्तम्भ था। इस लिये उसकी सन्ततिका अपमान करना, मानो दरवारके लोगोंमें विना कारण असन्तोष उत्पन्न करना है। यह वात वादशाह वहुत अच्छी तरह जानता था; और इसी कारण इस विषयमें सैयदुल्लाखाँकी वह एक भी नहीं सुनता था। परन्तु सैयदुल्लाखाँ मानो उसके पीछे एक अमंगल (क्रूर) ग्रहकी तरह लगा हुआ था। उसको मालूम था कि, सैयदुल्लाखाँ एक वहुत वदमाश आदमी है, उसको अकल विल्कुल ही नहीं। सब विषयोंमें यदि हम उसीके कहनेके अनुसार चलेंगे, तो वड़ी गड़वड़ी मच जायगी और वादशाहतको वहुत वड़ा धक्का पहुँचेगा। उसको कोई भी नहीं चाहता, सभी उसका नाश करनेके प्रयत्नमें ये सब वातें वादशाहको भलीभाति मालूम थीं। परन्तु फिर भी उससे भूलें होती ही थीं—जैसे कोई आदमी भ्रममें पड़ जाय, अथवा मद्यके नशेमें विवेकबुद्धि खो वैठे; और जान-बूझकर अपने हाथसे भूलें होने दे, उसी प्रकारकी अवस्था इस समय वादशाहकी थी। वह उसकी मूर्खता अथवा वदमाशीके विषयमें चाहे जितना विचार करता; और एक वार उसके मनका निश्चय भी हो जाता कि, सैयदुल्लाखाँ किसी कामका आदमी नहीं है—यही नहीं, वल्कि उसके पीछे उसपर क्रुद्ध होकर उसको गालियाँ भी देता; पर ज्यों ही फिर वह उसके सामने आ जाता, त्यों ही वादशाह, उसका मुखावलोकन करते ही, पानी पानी हो जाता! हाँ, कभी-कभी जब वह उसपर अत्यन्त ही नाखुश होता, तव उसे "पागल, गधा, हरामजादा!" कहकर गाली प्रदान कर देता; और वह भी "वाह वाह! वाह वाह!" कहकर हँसते हुए उसको टाल देता,

इससे बादशाह उसपर पूर्ववत् प्रसन्न हो जाता! इस प्रकार होते होते एक बार सैयदुल्लाखाके मनमें आया कि, अब किसी न किसी उपायसे रणदुल्लाखाँका घमण्ड जरूर चूर करना चाहिये। यह बात तो पाठकोंको मालूम ही है कि, वह कोई बहुत बड़ा राजनीतिज्ञ तो था ही नहीं, जो बादशाहकी भलाईका कोई उपाय सोचता, अथवा उसे कोई महत्वपूर्ण मन्त्रणा देकर राज्यके कल्याणका अथवा उसकी कीर्त्ति बढानेका कोई प्रयत्न करता, और इस प्रकार अपना प्रभाव बढ़ाकर अपने प्रतिपक्षोको नीचा दिखाता! किन्तु वास्तवमें उसकी सारी चातुरी नीचतापूर्ण कार्योंमें ही थी—वह क्या करता कि, बादशाहको किसी न किसी सुन्दरीके प्रलोभन अथवा मद्यकी मदहोशीमें डालकर, उसके हाथसे अपना मनमाना कार्य करा लेना। उसको सारी कर्त्तव्य दक्षता एक इसी बातमें थी कि, शराबके नशेमें बादशाहके द्वारा भले भले मनुष्योंका अपमान कराता, और आप फिर उसकी मौज देखना, तथा उसोमें आनन्द मनाता। बस, इसी प्रकारका उसका सारा व्यवहार था! किन्तु जब उसने देखा कि, इस प्रकारके व्यवहारसे मुरारपन्त अथवा रणदुल्लाखाँका प्रभाव हमारे द्वारा कुछ भी न्यून नहीं हो सकता, तब उसने इस प्रकारकी बातें बादशाहके मनमें भरनेका प्रयत्न किया कि, देखिये; रणदुल्लाखाने सुलतानगढ़के किलेदारको इतनी कोशिश करके फिरसे किलेदारी दिलवा ही दी, और उसमें उसका सिर्फ इतना हो उद्देश्य है कि, जिससे वह उक्त किलेदारकी पुत्रवधूको अपने पास रख सके। रणदुल्लाखाँको गिरानेके लिये उसने बादशाहसे ऐसी बातें कहीं सही, किन्तु फिर भी उसको इससे कोई लाभ न हुआ। रणदुल्लाखाँका महत्व और बादशाहकी नजरोंमें उसका प्रभाव, कुछ भी कम न हुआ। यह देखकर उसको अत्यन्त सन्ताप हुआ, पर उसका वह सन्ताप दूर कैसे हो? ऐसे नीचोंमें वह अकल तो होती नहीं कि, सामने मैदानमें भिड़कर अथवा अन्य कोई महान् पराक्रम दिखलाकर अपने सन्तापको शान्त करें। किन्तु वे तो सदा इसो प्रयत्नमें रहते हैं कि, कोई न कोई कपट करके अपने प्रतिपक्षोसे बदला निकालें। बस, उसका भो यही हाल था।

उसने सोचा कि, देखो, हमने इतने प्रयत्न किये, अपने शत्रु रणदुल्लाखाँपर इतना भारी कुचक्र चलाया; परन्तु फिर भी कोई लाभ नहीं हुआ; अन्तमें हमारे विरुद्ध, उसका ही बादशाहपर विशेष प्रभाव पड़ा; और रंगरावअप्पाको सुल्तानगढ़की किलेदारी फिरसे मिल ही गई। यह बात उसके हृदयमें शल्यकी तरह चुभ रही थी। नीचोंको अपनी वैराग्नि प्रज्वलित रखनेके लिये क्षुद्रसे क्षुद्र कारण भी पर्याप्त होते हैं; और उन कारणोंपर विचार करते करते भी उनकी भ्रष्ट बुद्धिमें कोई न कोई अजब युक्ति निकल पड़ती है। तदनुसार सैयदुल्लाखाँ भी बहुत दिनसे विचार कर रहा था कि, कोई न कोई बात बादशाहके मनमें जमाकर उसके द्वारा रणदुल्लाखाँका अपमान करावें; और ऐसा कर दें कि, जिससे फिर वह दरबारमें अपना मुख ही न दिखला सके। वास्तवमें बादशाहका इस समय यह हाल था कि, जिस समय वह प्रसन्न चित्त होता; और सैयदुल्लाखाँ उसके पास होता, उस समय रणदुल्लाखाके विषयमें यदि कोई बात निकलती, तो बादशाह उसकी निन्दा ही करता, उसको नमकहराम बतलाता, और यह निश्चय प्रकट करता कि, अब हम उसे अपने द्वारपर भी नहीं खड़ा होने देंगे; पर जब रणदुल्लाखाँ स्वयं किसी कामके लिये उससे मिलनेको आता तब उसका सारा, वह पहलेका, निश्चय डिग जाता; और उसकी बात वह बड़े ध्यानसे सुनता; और उसका सब काम कर देता। फिर जब वह चला जाता, तब उसके पीछे फिर यही कहने लगता कि, "देखो, यह कैसा लुच्चा है!" इसलिये सैयदुल्लाखाने सोचा कि; बादशाहको यह द्विधा परिस्थिति ठीक नहीं है, इसको बिल्कुल ही दूर कर लेना चाहिये; और कोई नवीन ही युक्ति ऐसी सोचनी चाहिये कि, जिससे उसका मन रणदुल्लाखासे एकदम ही फिरंट हो जाय। उसने सोचा कि, बादशाहका ही मन केवल कलुषित करनेसे काम नहीं चलेगा, इससे रणदुल्लाखाँका अपमान होनेकी कोई सम्भावना नहीं दिखाई देती; और ऐसी दशामें हमारा उद्देश्य भी सिद्ध नहीं होता। इसलिये अब, इसके विरुद्ध ही किसी युक्तिसे काम लेना चाहिये—वास्तवमें अब बादशाहके द्वारा ही ऐसा कोई कार्य

कराया जाय कि, जिसको सुनकर रणदुल्लाखाँ एकदम ही क्रुद्ध हो उठे, और वह खुद बादशाहका अपमान करे। अवश्य ही जब रणदुल्लाखाँ बादशाहका ऐसा कोई अपमान करेगा, तब बादशाहको वह क्यों सहन होने लगा! और ऐसी दशामें हमारा उद्देश्य आपही आप सिद्ध हो जायगा। ऐसा विचार जब उसके मनमें आया, तब वह मन ही मन अपनी बुद्धिकी प्रखरतापर बहुत ही आनन्दित हुआ, और सोचा कि, आजकल जो परिस्थिति है, उसीमे यदि हम अपना उपर्युक्त विचार पूर्ण कर सकें, तो विशेष सुविधा रहेगी, और यह सोचकर वह उसी धुनमें लग गया। सैयदुल्लाखाने क्या युक्ति सोची कि, रणदुल्लाखाँकी बहन इस समय चूँकि सुलतानगढ़पर रहती है, इसलिये हम वहाँ जावें; और किसी न किसी युक्तिसे उसे वहासे लाकर बादशाहकी नजरमे डालें—अथवा अपनी ही तरफसे उसे लाकर बादशाही जनानखानेमे रख दें। इसके बाद फिर चारो तरफ यह बात फैला दें कि, बादशाहने उसके साथ स्वैरताका व्यवहार किया। इसमे हमारा काम बिलकुल सिद्ध हो जायगा। ऐसा उसने अपना विचार स्थिर किया, और इसी उद्योगमे लग गया। पहले उसने यह सोचा कि, रणदुल्लाखाँको कुछ दिनके लिये कही दूरपर भिजवानेका प्रबन्ध कर किया जाय, और तब अपना विचार पूर्ण करनेमें विशेष सुविधा होगी, क्योंकि उसको जबतक बादशाहके पाससे कही दूर नही पटक देंगे, तबतक हमारे कार्यमे सफलता प्राप्त होना असम्भव है। यह सोचकर उसने कर्नाटक प्रान्तके एक सूबेदारसे इस आशयका एक पत्र मँगाया कि, इस प्रान्तमे बहुत भारी उपद्रव मच रहा है, इसलिये उसका बन्दोबस्त करनेके लिये कुछ सहायक सेना अवश्य भेजी जाय, इसके अतिरिक्त किसी अच्छे सरदारकी योजना करके यहाँका ठीक ठीक बन्दोवस्त कराया जाय। यह पत्र जब बादशाहके सामने पहुँच गया, तब सैयदुल्लाखाने स्वयं भी जाकर कर्नाटकके उक्त उपद्रवका इतना भयंकर चित्र बादशाहके सामने रखा, जिससे उनको पूर्ण विश्वास हो गया कि, यदि ऐसे समयमें कोई अच्छा सरदार ससैन्य वहाँ न भेजा जायगा, तो सचमुच ही उक्त प्रान्तके सारे

सूबे हमारे हाथसे निकल जायंगे। इस प्रकार जब सैयदुल्लाखाने देख लिया कि, अब बादशाहको उस ओर एक अच्छे सरदारके भेजनेकी आवश्यकता भलीभाति प्रतीत हो गई, तब उसने एक दूसरा काम किया। अर्थात् उसको जतलाया कि, दरबारमें यदि आज कोई सच्चा शूर लड़ाकू योद्धा है, तो रणदुल्लाखाँ ही है। उसके बिना ये उपद्रव कभी मिट नहीं सकते। निस्सन्देह हमारा उसका मेल नहीं है; लेकिन फिर भी हम सच्चे हृदयसे कहते हैं कि, ऐसे संकटोंके मौकोंपर यदि कोई पूरा पूरा काम दे सकता है, तो ऐसा एक वही व्यक्ति है। इस प्रकार गौरवपूर्ण वचन कहकर उसने इतना मनोमहत्व प्रकट किया कि, बादशाह एकदम खुश हो गया; और उसकी उदारतापर उसे बड़ा कौतुक हुआ। उसने तुरन्त ही रणदुल्लाखाँको बुलवाया; और कर्नाटकके सूबेदारका वह पत्र दिखलाया। उसकी राजभक्तिकी प्रशंसा की; और बहुत जल्द बारह हजार सेना साथ लेजानेकी आज्ञा प्रदान की। राज्यके आधारस्तम्भ तुम्हीं हो, तुम्हारे सिवाय और कोई नहीं, इत्यादि उत्साहवर्द्धक वचन कहकर अन्तमें बादशाहने यह भी कहा कि, देखो, सैयदुल्लाखाँ—जिसकी तुम्हारे विषयमें सदैव शिकायत रहती है—कभी भी सिफ़ारिश नहीं करता, उसने भी इस बार तुम्हारी ही सिफ़ारिश की है। बादशाहने अपनी समझसे तो यह बहुत ही अच्छी बात कही, पर रणदुल्लाखाके मनपर इसका कोई विचित्र ही प्रभाव पड़ा, सो उसके ध्यानमें नहीं आया। सैयदुल्लाखाने हमारी सिफारिश की—यह वाक्य सुनते ही रणदुल्लाखाँका सारा शरीर, नीचेसे ऊपरतक, जल उठा, और उसने सोचा कि, इसमें उसका कुछ-न-कुछ कपट जाल अवश्य ही है। परन्तु कर्नाटकके सूबेदारका वह पत्र चूंकि सामने ही मौजूद था, अतएव उसकी उपर्युक्त शकासे कोई लाभ नहीं हुआ। हाँ, उसने बादशाहसे इतना अवश्य कहा कि, "यह काम तो और लोग भी कर सकते हैं—मेरी ही इसमें क्या आवश्यकता है?" इसपर बादशाहने इस आशयके कठोर शब्द उससे कहे—"देखो, ऐसे समयमें भी तुम हमारा हुक्म माननेमें आनाकानी करते हो, इससे तो यही जान पड़ता

है कि, तुम्हारी खान्दानी राजभक्ति अब बिलकुल ही उड़ गई। जान पड़ता है, तुम राज्यको डुबो ही देना चाहते हो ?" रणदुल्लाखाँ बेचारा अब बादशाहके सामने इसपर और क्या कहे ? वह निरुत्तर ही होगया। उसने सोचा कि, अब इसपर और अधिक हम यदि कुछ कहेंगे, तो हमारे शत्रुओंको हमारे विरुद्ध बादशाहको उभाड़नेके लिये और एक नवीन ही मौका मिल जायगा, और फिर हमारा बहुत ही नुकसान होगा। इसलिये अब और कुछ भी न्यूनाधिक न कहते हुये वह बादशाहको सलाम करके वैसा ही चला गया। रणदुल्लाखाके जाते ही बादशाहने मुरारपन्तको बुलाया, और सब समाचार बतलाकर कहा कि 'ऐसा जान पड़ता है, मानो रणदुल्लाखाँका मन अब राज्यके कार्यमें ठीक-ठीक नहीं लगता है—वह और ही किसी विचारमें रहता है। बादशाहने बड़ी तेजीके साथ कहा कि, यदि कल ही सवेरे वह कर्नाटकके लिये रवाना नहीं होगया, तो उसका दरबारमें आना बन्द कर दिया जायगा। मुरारपन्तके सामने इस प्रकारकी बातचीत करनेमें बादशाहका आन्तरिक उद्देश्य यह था कि, इनसे जो कुछ कहेंगे, वह रणदुल्लाखाके कानमें अवश्य ही जायगा, क्योंकि उन दोनोंमें जो प्रेमभाव था, वह उसको भलीभाँति मालूम था। और सचमुच ही उसने जैसा सोचा था, वैसा ही हुआ। मुरारपन्त दरबारसे उठकर घर आये, और यह सोचने लगे कि, रणदुल्लाखाको वह सन्देश भेज दें कि, हम तुम्हारे पास आना चाहते हैं। उनको यह सोचते देर नहीं हुई थी कि, उनके अर्दलीने आकर यह सन्देशा दिया कि, सरदार रणदुल्लाखा आपसे मिलनेको आये हैं। इस प्रकार तुरन्त ही दोनोंकी मुलाकात हुई, और सब बातोंपर विचार हुआ। सैयदुल्लाखाँका इसमें क्या कपट है, सो कुछ उनकी समझमें नहीं आया। लेकिन इतना विश्वास दोनोंको होगया कि, कोई न कोई कपट इसमें उसका है अवश्य। किन्तु अब, जब बादशाहको आज्ञा ही हो चुकी, तब विचार करनेसे क्या लाभ ? रणदुल्लाखाने दूसरे ही दिन जानेकी तैयारी शुरूकी, और लगभग पचास चुने हुए हथियारबन्द सिपाही अपनी बहनकी सरक्षाके लिए भेज दिये। रणदुल्लाखाने

सोचा कि, यदि सैयदुल्लाखाका कोई नीच उद्देश्य हो सकता है, तो इसी विषयमें हो सकता है; और इसीलिये उसने उसका वन्दोवस्त करनेके लिए उन सिपाहियोंको पहलेहीसे रवाना कर दिया। रणदुल्लाखाके वे चुने हुए सिपाही ऐसे थे, जो जानपर खेलकर भी अपने कर्त्तव्यसे हट नहीं सकते थे। उन लोगोंको रंगराव अप्पाके नाम उसने एक पत्र भी दिया, जिसमें लिखा था—"हमको एकाएक कर्नाटक जाना पड़ रहा है, किन्तु वहन आपकी सरक्षामें है, इस कारण हमें कोई भी चिन्ता नहीं। सैयदुल्लाखाका विचार इस समय बहुत ही कपटका दिखाई दे रहा है। हम ये सिपाही भेज रहे हैं, ये जानपर खेल जानेवाले हैं। ये आपकी आज्ञासे उसका वन्दोवस्त रखेंगे। आपके भी काम आयेंगे।" बस, इसी प्रकारका समाचार उसमें था।

इस प्रकार, उस विषयमें जितना कुछ प्रवन्ध वह कर सकता था, किया, और मुरारसाहवसे प्रार्थना की कि, अव आप ही इधरका सव प्रवन्ध सम्हालियेगा। इतना करके रणदुल्लाखा वीजापुरसे वाहर निकला, और अपनी वारह हजार सेनाके साथ कर्नाटकके लिए कूच किया। उस समय यह विचार उसके मनमें आये विना नहीं रहा कि, देखो, एक वे वीर थे, जिन्होंने वीजापुरका राज्य संस्थापित करके उसको इतनी उन्नत दशाको पहुँचाया; और एक यह हमारा वादशाह है, जो एक मामूली पियादेके कहनेमें आकर पतिव्रता देवियोंका पातिव्रत्य भंग करते हुए विलासितामें निमग्न हो रहा है! इस प्रकारके विचार उसके मनमें आये, और क्षणभरके लिए उसका मन उद्विग्न हो गया।

इधर सैयदुल्लाखाने समझा कि हमारी कारस्तानी सफल हो रही है, और हमारे मार्गका सवसे वड़ा रोड़ा रणदुल्लाखाँ दूर हो गया, अतएव उसको इतना आनन्द हुआ कि, जिसका कुछ ठिकाना नहीं। इसलिये अव उसने यह सोचा कि, अव चाहे जव सुल्तानगढ़ जाकर हम वेगम-साहवाको ले आवेंगे; और जो कुछ मनमें आयेगा, सो करेंगे—वह शेर, जिसको कि हमने कर्नाटकके लिये रवाना किया है, लौटने भी न पायेगा; और इधर हम उसको क्रुद्ध करनेके लिये सव तैयारी कर रखेंगे। उसको

विश्वास हो गया कि, अब हमारा उद्देश्य पूरा पूरा सिद्ध हुआ, और अब इसमें कोई भी कठिनाई रह नहीं गई। बस, फिर क्या था—वह मन ही मन आनन्दमें बिलकुल तल्लीन हो गया। इसके बाद उसने सोचा कि, अब चार ही पाँच दिनके अन्दर हमे अपने इस उद्योगमे लग जाना चाहिए, इसलिये अब, पूर्ण विचारके साथ, हमे क्या-क्या प्रबन्ध करना चाहिये कि, जिससे किसीको पता भी न लगने पावे, और हम अपने उद्देश्यमें सफल हो जावें। बस, इसी बातके सोचनेमें उसने अपनी सारी शक्ति लगा दी। अन्तमें उसने न जाने क्या सोचकर अपने चुने हुए लगभग सौ सिपाहियोंको बुलाया, और कहा कि, तुमलोग सुलतानगढ़की दक्षिण ओर लगभग छै कोसके अन्तरपर जाकर अपनी छावनी डालो। इसके बाद वह स्वय अपने चार-पॉच सिपाहियोंको साथ लेकर सुलतानगढ़की ओर रवाना हुआ। राजा शिवाजीने अपना विचार उधर सासबड़की ओरसे निश्चित किया, और सैयदुल्लाखाने अपना यह विचार इधर बीजापुरकी ओरसे निश्चित किया। दोनोंके विचार सयोगवश एक ही समयके लिये निश्चित हुए। सैयदुल्लाखाका विचार यह था कि, पहले तो अपने सिपाहियोंको किलेसे दूर उपर्युक्त स्थानपर लगा रखा जाय, और फिर ठीक मौकेपर कुछ लोगोंको किलेपर बुला लिया जाय, और यदि आवश्यकता मालूम हो, तो शक्ति लगाकर भी अपना कार्य सिद्ध कर लिया जाय। उसका विश्वास था कि, शक्तिसे अवश्य काम लेना पड़ेगा, चुपकेमे कुछ काम न होगा। क्योंकि वह यह जानता था कि, रगराव अप्पासे रणदुल्लाखाका बड़ा स्नेह है, और हमारे विषयमे वे द्वेष रखते हैं। ऐसी दशामे उनसे अपने काममे हमको मदद तो मिल ही नहीं सकती, बल्कि विरोध ही करेंगे। उसने सोचा कि यों ही जब कभी हम सुल्तानगढ़पर चार दिनके लिए जाते हैं, तब तो उनको हमारा जाना अच्छा ही नहीं लगता, फिर ऐसी दशामे! लेकिन फिर उसने सोचा कि, हम बादशाहके गलेके तावीज हैं, इसलिए अप्पासाहब हमको वहाँ जानेसे रोक कभी नहीं सकते। सच तो यह था कि, उसको पूरी पूरी आशा थी कि, हम सम्पूर्ण कठिनाइयोंसे पार होकर

अपना कार्य अवश्य कर लेंगे, और हमें सफलता अवश्य मिलेगी! अस्तु। सब कठिनाइयोंका पूरा-पूरा विचार करके सैयदुल्लाखाकी सवारी बीजापुरसे रवाना हुई, और श्यामाके उस मामा या काकाको आये अभी एक ही दिन हुआ था कि, सरदार सैयदुल्लाखाँकी सवारी भी सुल्तान-गढ़पर आ पहुँची। उसके पीछे एक काला भूत बहुत दिनसे लगा था; सो वह बीजापुरमें अब कैसे रह सकता था? प्रकाश-रहित स्थानमें खड़े होनेपर खासाहबकी छाया चाहे न रहे, पर वह कालकलूटा महाशय उनका पीछा कभी नहीं छोड़ता था। सुल्तानगढ़पर जब उनकी सवारी आई, तब वह महाशय उसके साथ ऊपर अवश्य ही नहीं आया; किन्तु नीचेकी बस्तीहीमें रह गया। किन्तु हाँ, खाँसाहब जब ऊपर किलेकी ओर चलने लगे, तब वह उनकी ओर देखकर अपने ही आप खुसफुसाया—"जा, जा, दुष्ट, आजसे चौथे दिन मेरी प्रतिज्ञाका अन्तिम दिन है; और इस समय तू कर्म भी ऐसा कर रहा है कि, जिसके करते हुए तेरा वध करनेमें भी विशेष पुण्य है।"

इधर रंगराव अप्पाको ज्यों ही यह मालूम हुआ कि, सैयदुल्लाखाँ किलेपर आ रहा है, त्यों ही उनका शरीर क्रोधसे एकदम जल उठा। पहले तो उनके मनमें यही विचार आया कि, एकदम हुक्म देकर किलेके खन्दकका पुल खिंचवा लिया जाय; और दरवाजे बन्द करवा लिये जायँ, तथा इस पाजीको वहीं रोक दिया जाय; क्योंकि उनका पक्का विश्वास था कि, राज्यकी यह सत्यानाशी इसी एक दुष्टके कारणसे हुई है; और बीजापुरमें ले जाकर हमारा जो इतना अपमान किया गया, उसका भी कारण यही दुष्ट है। इस विषयमें उन्होंने अपना क्रोध अव-तक दबा रखा था, सो आज बिलकुल उमड़ आया; और उस बुड्ढेके मनमें यहाँतक आया कि, इस दुष्टको किलेपर बिलकुल ही न आने दिया जाय; और यदि आने भी दिया जाय, तो यहीं उसका काम-तमाम भी कर दिया जाय। फिर उन्होंने सोचा कि, ऐसा करनेसे कोई लाभ नहीं! यह दुष्ट आज एक प्रकारसे दूसरा बादशाह ही बना बैठा है, इसका यदि अणुमात्र भी अपमान किया जायगा तो बादशाह

आकाश पाताल एक कर देगा, और हमारे लिये क्या करेगा, और क्या नहीं—इसका कोई ठीक नहीं। और उसमे भी, यदि कहीं इसको हम यहींका यहीं मार डालेंगे, तो सब खातमा ही समझिये। इसके प्रत्येक रक्तविन्दुके लिये बादशाह एक एक आदमीका खून किये विना न रहेगा, और हमको क्या करेगा, क्या नहीं, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। इस प्रकारकी सभी बातें उनके मनमे आईं। सैयदुल्लाखाँ आजकल प्रत्यक्ष बादशाह ही बन रहा है। उसके मनमें जो कुछ आयगा, सो करायगा, कभी नहीं मानेगा! ऐसी हालत थी। इसलिये ज्यों ही ऐसा सन्देशा हरकारेने दिया कि, सरदार साहबकी सवारी आ रही है, त्यों ही अप्पासाहबने चारों ओर सब व्यवस्था ठीक रखनेका हुक्म दिया, और आप स्वय बहुत दूरसे खाँसाहबका स्वागत करनेके लिये चल पड़े। सैयदुल्लाखाँको सामनेसे आता हुआ देखकर अप्पासाहबने बड़े अदबसे उसका स्वागत किया, और "इधर आनेकी तकलीफ क्यों की?" इत्यादि प्रश्न करके आप पालकीके साथ चार कदम आगे भी चले। यह सब करते समय बेचारे अप्पासाहबके हृदयमे ऐसे कुछ विचित्र और भयंकर विचार आ रहे थे कि, उनको स्वय भी इस बातका खयाल न था कि, इस प्रकारके विचार भी कभी हमारे मनमें आ सकते हैं। उन्होंने सोचा कि, देखो, यह दुष्ट अन्तमे यहाँतक आ पहुँचा, अब इसे यदि हम यहीं मार डालें, तो बीजापुरके राज्यको एक बड़े भारी सकटसे बचानेका श्रेय हमको प्राप्त हो, पाप कुछ भी न लगे। सोचनेकी बात है कि, जिस बुड्ढेके मनमें विश्वासघात करनेका कभी विचार भी नहीं फटक सकता था, उसीके मनमें आज ये विचार—और निश्चयात्मक विचार—आ रहे हैं कि, "इसके किलेपर पहुँचते ही, किलेका पूरा पूरा बन्दोवस्त करके, इसको ऊपर ही ऊपर खुदाके घर रवाना कर दिया जाय, ऐसा करनेसे पाप बिलकुल नहीं लगेगा।" परन्तु उनका यह विचार—निश्चयात्मक होनेपर भी—एक क्षणसे अधिक टिक नहीं सका—तुरन्त ही उन्होंने उसे अपने हृदय-प्रदेशसे निकाल बाहर किया, और उसकी जगहपर इस विचारको कायम किया

कि, "अच्छा, आया तो आया—अब इसको नाखुश करनेका कोई काम नहीं करना चाहिये, बस—इतना ही हमारा कर्तव्य है।" यह सोचकर उन्होंने उसकी उचित मर्यादा और व्यवस्था रखनेका प्रबन्ध किया।

सैयदुल्लाखाँ जितना दुष्ट, उतना ही डरपोक भी था। किलेपर आते ही पहले उसने इन बातोंकी जाँच की कि, हमको जो जगह दी गई है, वह कहाँतक सुरक्षित है, रातबिरात आकर कोई हमारा खून तो नहीं कर सकेगा, हमारे मकानमें गुप्त रूपसे किसीके आनेका मार्ग तो नहीं है, किलेका बन्दोबस्त किस प्रकारका है, इत्यादि। इन बातोंके विषयमें जितनी चौकसी वह चाहता था, उतनी जब उसे नहीं दिखाई दी, तब उसने रंगराव अप्पापर अपना रोब गाँठकर पहले सब बन्दोबस्त पूरा पूरा करनेका हुक्म दिया। उसने देखा कि, किलेके आसपास खन्दकमें पूरा पूरा पानी नहीं है, इसलिये पानी छुड़वानेका भी उसने हुक्म दिया। पहरे-चौकीका खूब कठोर प्रबन्ध किया; और यह हुक्म दिया कि, कोई भी अपरिचित आदमी, जिसका किलेसे सम्बन्ध नहीं है, ऊपर न आने पावे। रंगराव अप्पाको जिन बातोंकी आवश्यकता ही नहीं मालूम होती थी, उन बातोंके न होनेपर भी उसने उसको दोष दिया; और कहा कि, तुम थानेदार होकर भी इतनी गफलतसे रहते हो—तुमको मालूम नहीं है, आजकल इन प्रान्तोंमें कितनी अराजकता फैली हुई है; किस समय कौन क्या करेगा, इसका कोई ठीक नहीं, फिर भी इतनी अन्धाधुन्ध! यह है क्या? इस प्रकार उसने उनको खूब डाँटा; और अनेक मर्मभेदक बातें कहीं। इसके बाद उसने अपने ही हुक्मसे किलेको ऐसा सुसज्जित कराया, मानो आज ही कोई किलेपर चढ़ाई करने आ रहा हो! अभीतक ऐसा नियम था कि, सूर्योदयसे लेकर सूर्यास्ततक, प्रत्येक परिचित व्यक्ति, फिर चाहे उसका किलेसे कोई सम्बन्ध भी न हो, किलेपर जा सकता था, पर अब खाँसाहबने यह सारी व्यवस्था बदल दी। उन्होंने अपना कठोर हुक्म सुनाया कि, चाहे जो कोई हो, परवानेके बिना ऊपर न आने दिया जाय। मतलब

यह कि, रंगराव अप्पासाहबकी सारी व्यवस्था बदलकर खाँसाहबने, अपने आनेके दिनसे ही, अपनी सम्पूर्ण स्वतन्त्र व्यवस्था जारी कर दी। अथवा यों कहिये कि, एक प्रकारसे किलेका सारा कारबार ही उन्होंने अपने हाथमें ले लिया। रंगराव अप्पाके समान स्वतन्त्रप्रकृति व्यक्तिको अवश्य ही यह बात पसन्द नहीं आई। सच तो यह था कि, उनको इस बातका विश्वास था कि, जबतक हम किलेपर मौजूद हैं, तबतक कोई ऐसा माईका लाल नहीं, जो किलेकी तरफ तिरछी नजरसे देख भी ले। शान्तिके दिनोंमें भी, युद्धके दिनोंकी भांति, किलेको सजा रखना नामर्दीका काम है। उनको पक्का विश्वास था कि, मौका आनेपर हमारी सारी पलटन क्षणभरमें ही किलेकी रक्षाके लिये तैयार हो जायगी। उनका यह एक कठोर नियम था कि, रातको कोई भी सिपाही कहीं दूसरी जगह न रहे किलेपर ही रहे, और रातको दस बजे आकर स्वयं उनके पास हाजिरी दे। बस, अपने इसी नियमको वे काफी समझते थे। परन्तु आज सैयदुल्लाखाने उपरोधक वचन कह कहकर उनको अत्यन्त खिन्न कर दिया, और किलेका सारा कारबार अपने हाथमें ले लिया। वह अब किलेपर इस प्रकार हुकूमत करने लगा, जैसे अप्पासाहब मौजूद ही न हों। उसके इस कार्यसे उनको कितना क्रोध आया होगा इसकी कल्पना पाठक स्वयं कर सकते हैं।

सैयदुल्लाखाने भयके वश होकर तो ऐसी व्यवस्था कराई ही थी, पर इसके अतिरिक्त इसमें उसका एक और भी भीतरी उद्देश्य था; और वह यही कि, जिससे उस कार्यमें उसे सुविधा हो, जिस मुख्य कार्यके लिये वह सुलतानगढ़पर आया था। पहले दिन रंगराव अप्पाके हाथसे किलेका सारा कारबार हाथमें लेकर ही उसको सन्तोष नहीं हुआ, बल्कि उसने किलेकी दक्षिण ओर जो अपने सिपाही कुछ अन्तरपर लगा रखे थे, उनमेंसे पचास आदमियोंको बुलाया, और किलेके सब दरवाजे भी उन्हींके हाथमें दे दिये, और अबतक जो संरक्षक दरवाजोंपर रहते थे, उनको अलग कर दिया। पहले ही दिन उसने ऐसा, नादिरशाहीका वर्ताव, किया—अब और क्या चाहिये? लोगोंके

मन एकदम विगड़ उठे। इसके वाद, दूसरे दिन, उसने जो व्यवहार दिखलाया, वह और भी अधिक असन्तोषजनक था। पाठकोंको मालूम है कि, रणदुल्लाखाँ जिस समय कर्नाटककी चढ़ाईपर जाने लगा था, उस समय उसने अपने पचास चुने हुए सिपाहियोंको, अपनी वहनके संरक्षणार्थ, किलेपर भेज दिया था। इसलिए सैयदुल्लाखाने सोचा कि, वे लोग हमारे कृष्णकृत्यके लिये एक विघ्नस्वरूप ही हैं, अतएव उसने इन लोगोंको भी अलग कर देनेका विचार किया। रंगराव अप्पाको उसने बुलवाया और कहा कि, "इतने लोगोंकी कोई आवश्यकता नहीं, इनको आज ही जानेके लिये कहो।" उन्होंने स्पष्ट ही उत्तर दिया कि, "ये लोग हमारे अधिकारमें नहीं हैं। वेगमसाहवाके अधिकारमें हैं। रणदुल्लाखाने इनको भेजा है। इनको जानेके लिये कहना मेरे अधिकारसे वाहर है।" यह उत्तर सुनकर वह एकदम जल उठा; क्योंकि उसका पक्का विश्वास था कि, ये लोग यदि जायंगे नहीं, तो हमारी कारस्तानी सफल नहीं होगी। फिर भी उसने निश्चय किया कि, अन्ततक प्रयत्न करना चाहिये। इसलिए यह निश्चय करके उसने उन सिपाहियोंके नायकको बुलवाया, और उससे वहुत ही घुड़ककर कहा कि, अव हम यहाँ आ गये हैं हमारे साथ वहुत आदमी हैं, तुम्हारी कोई आवश्यकता नहीं। एक दो आदमी भले ही वने रहें, वाकी सव वीजापुर चले जायँ। उस नायकने पहले तो अदवके साथ जो उत्तर देना चाहिये था, दिया; पर उसको उससे कोई सन्तोष नहीं हुआ; और वह उससे भी अधिक कठोर तथा अपमानजनक वातें कहने लगा, जिनको वह कट्टर सिपाही सह नहीं सका। अतएव उसने भी वैसे ही उत्तर दिये—यही नहीं, वल्कि अपनी तलवारपर भी वह एक वार हाथ ले गया। वह देखते ही डरपोक सैयदुल्लाखा एकदम नरम पड़ गया; और उस नायकके साथ दिलासेसे कुछ वातचीत करके उससे अपना पिंड छुड़ाया।

इस विषयमें सैयदुल्लाखाको सफलता नहीं हुई; परन्तु इससे वह निराश नहीं हुआ। वहादुरीके साथ कोई कार्य करनेमें यदि सफलता

प्राप्त नहीं होती, तो नामर्द लोग इससे घबड़ाते नहीं, परन्तु वही यदि नीचताका कोई कार्य हुआ—यदि नीचताकी कोई युक्ति उनकी सफल नहीं हुई—तब फिर उनको बड़ा ही खेद होता है। उसने सोचा कि, अच्छा, सिपाही भले ही बने रहें, कोई परवा नहीं। इनको छकाकर भी हम उस गुलबकावलीको अवश्य ही रखेंगे, और सो भी जब हम पहले उसका स्वाद ले लेंगे तब—इसीमें हमारी सारी कीमत है, और यही हमारी सारी करामात है! यह सोचकर फिर उसने अपना सड़ा हुआ मस्तिष्क उसी बातके सोचनेमें लगाया। यह घटना किलेपर उसके आनेके दूसरे दिनकी है। उसी दिन रातको एक और विलक्षण घटना हुई। उसको बतलाकर तब आगेका वृत्तान्त बतलावेंगे।

रात काफी जाचुकी थी। परन्तु हाँ, चादनी खूब छिटक रही थी। सैयदुल्लाखाने नींद लेनेका बहुत प्रयत्न किया, पर काले साँपको कहां रातको नींद आती है! और उसने यदि कहीं किसीका दश सोचा हो, तो कहना ही क्या? फिर तो वह उसी चक्करमे रहता है। उसने सोचा कि, रणदुल्लाखाको यद्यपि हमने भगा दिया, फिर भी उसने, जो कुछ प्रबन्ध उनको करना था, कर ही लिया। यह सोचकर उसपर वह बहुत ही क्रोधित हुआ। उसी क्रोधके आवेगमें उसको यही न सूझने लगा, कि अब वह क्या करे और क्या न करे। नाना प्रकारकी युक्तियाँ सोचीं, पर कोई भी उसके मनमें न आई। उसका सिर विचारोंके कारण बड़ी गड़बड़ीमें पड़ गया, और अब ऐसा मालूम हुआ कि, जैसे उसका सारा विचार ही निष्फल जायगा, और उसका उद्देश्य अब सिद्ध न होगा। वह मनही मन निराश होने लगा। पर वह इस प्रकार निराश हो जानेवाला मनुष्य न था। शीघ्र ही उसने अपने मनको समझा लिया, और उठकर खिड़कीके पास आया। वहाँसे उसने देखा कि, बाहर खूब चाँदनी छिटक रही है। उसको देखकर एकदम उसके मनमे क्या विचार आया कि, ऐसी चादनीमें यदि वह चम्पाकली मुझे मिल जाय, तो क्या ही बहार आ जाय! इस विचारके आनेसे उसके मनको कुछ सन्तोष सा हुआ। फिर उसके मनमें आया कि, यह केवल मेरे मनका

विचार ही नहीं है, वल्कि इसमें सत्यता भी है; और वहुत जल्द इसका मुझे अनुभव भी होनेवाला है—यह वात अपने मनमें लाकर उसने अपनी दृष्टि उस भवनकी ओर घुमाई जिस भवनमें वह वेगम रहती थी। जैसे प्रत्यक्ष दर्शन नहीं, तो न सही, उसके वँगलेके ही दर्शन सही! खांसाहवने उस दिन शरावकी मात्रा कुछ अधिक कर दी थी, और इसी कारण अपनी रची हुई कल्पनासृष्टिमें मनोराज्य करनेका उन्हें एक प्रकारसे अच्छा मौका मिल गया होगा, अस्तु। अव उनके मनमें यह आया कि, आओ, एकदम चाँदनीमें चलकर वैठें। वस, मनमें आनेभर की देरी थी कि, उन्होंने अपने आदमीको हुक्म दिया कि, हमारी कुर्सी सामनेके बुर्जपर (उस बुर्जपर जो वेगमके महलसे निकट था) लेचलकर लगाओ। आदमीने आज्ञानुसार कुर्सी लगाकर खवर दी; और खासाहवकी सवारी उसपर जाकर विराजमान हुई। आनन्दसे, मौजमें आकर, आरामके साथ हुक्का पीते हुए और वीच वीचमें शरावके घूँट लेते हुए वे सामनेके उसी महलकी ओर दृष्टि लगाकर, अपने मनोराज्यके सिंहासनपर वैठे हुए, तरंगें लेरहे थे। कुछ देर वाद उन्होंने अपने नौकरोंको भी वहाँसे चले जानेकी आज्ञा दी, जिससे उनके उस एकान्तआनन्दमें किसी प्रकारका व्यत्यय न होने पावे। उन्होंने सख्त हुक्म दे दिया कि, एक भी आदमी हमारे पास न रहे। इसके वाद आप फिर अपने उसी मनोराज्यमें निमग्न होगये। अपने सम्पूर्ण विचारोंके सफल होजानेपर हम अनेक वातें कर सकेंगे! रणदुल्लाखा क्रुद्ध होकर वादशाहसे वैर करने ही लगेगा; और तब राजद्रोही वतलाकर उसका वध भी किया जासकेगा। उसके नष्ट हो जानेपर फिर मुरारपन्त और अफजलखा इत्यादि लोग वातकी वातमें दरवारसे निकाले जासकेंगे; अथवा उनको हम अपनी मुट्ठीमें ले सकेंगे। और रणदुल्लाखाकी वहनको तो हम उसी प्रकार वशमें कर लेंगे, जैसे रम्भावती!

रम्भावतीका विचार उसके मनमें आया, और उसकी मूर्ति उसकी आखोंके सामने आकर खड़ी होगई। इसके वाद उसके सम्वन्धकी सारी घटनाएँ—अर्थात् उसके प्राप्त करा देनेमें उसने क्या-क्या प्रयत्न और

प्राप्त नहीं होती, तो नामर्द लोग इससे घबड़ाते नहीं, परन्तु वही यदि नीचताका कोई कार्य हुआ—यदि नीचताकी कोई युक्ति उनकी सफल नहीं हुई—तब फिर उनको बड़ा ही खेद होता है। उसने सोचा कि, अच्छा, सिपाही भले ही बने रहें, कोई परवा नहीं। इनको छकाकर भी हम उस गुलबकावलीको अवश्य ही रखेंगे, और सो भी जब हम पहले उसका स्वाद ले लेंगे तब—इसीमें हमारी सारी कीमत है, और यही हमारी सारी करामात है। यह सोचकर फिर उसने अपना सड़ा हुआ मस्तिष्क उसी बातके सोचनेमें लगाया। यह घटना किलेपर उसके आनेके दूसरे दिनकी है। उसी दिन रातको एक और विलक्षण घटना हुई। उसको बतलाकर तब आगेका वृत्तान्त बतलावेंगे।

रात काफी जाचुकी थी। परन्तु हाँ, चादनी खूब छिटक रही थी। सैयदुल्लाखाने नोद लेनेका बहुत प्रयत्न किया, पर काले साँपको कहां रातको नींद आती है। और उसने यदि कहीं किसीका दश सोचा हो, तो कहना ही क्या? फिर तो वह उसी चक्करमे रहता है। उसने सोचा कि, रणदुल्लाखाको यद्यपि हमने भगा दिया, फिर भी उसने, जो कुछ प्रबन्ध उनको करना था, कर ही लिया। यह सोचकर उसपर वह बहुत ही क्रोधित हुआ। उसी क्रोधके आवेगमें उसको यही न सूझने लगा, कि अब वह क्या करे और क्या न करे। नाना प्रकारकी युक्तियाँ सोचीं, पर कोई भी उसके मनमें न आई। उसका सिर विचारोंके कारण बड़ी गड़बड़ीमें पड़ गया, और अब ऐसा मालूम हुआ कि, जैसे उसका सारा विचार ही निष्फल जायगा, और उसका उद्देश्य अब सिद्ध न होगा। वह मनही मन निराश होने लगा। पर वह इस प्रकार निराश हो जानेवाला मनुष्य न था। शीघ्र ही उसने अपने मनको समझा लिया, और उठकर खिड़कीके पास आया। वहाँसे उसने देखा कि, बाहर खूब चाँदनी छिटक रही है। उसको देखकर एकदम उसके मनमे क्या विचार आया कि, ऐसी चादनीमें यदि वह चम्पाकली मुझे मिल जाय, तो क्या ही बहार आ जाय! इस विचारके आनेसे उसके मनको कुछ सन्तोष सा हुआ। फिर उसके मनमे आया कि, यह केवल मेरे मनका

विचार ही नहीं है, वल्कि इसमें सत्यता भी है; और वहुत जल्द इसका मुझे अनुभव भी होनेवाला है—यह वात अपने मनमें लाकर उसने अपनी दृष्टि उस भवनकी ओर घुमाई जिस भवनमें वह वेगम रहती थी। जैसे प्रत्यक्ष दर्शन नहीं, तो न सही, उसके वँगलेके ही दर्शन सही! खांसाहवने उस दिन शरावकी मात्रा कुछ अधिक कर दी थी, और इसी कारण अपनी रची हुई कल्पनासृष्टिमें मनोराज्य करनेका उन्हें एक प्रकारसे अच्छा मौका मिल गया होगा, अस्तु। अव उनके मनमें यह आया कि, आओ, एकदम चाँदनीमें चलकर वैठें। वस, मनमें आनेभर की देरी थी कि, उन्होंने अपने आदमीको हुक्म दिया कि, हमारी कुर्सी सामनेके वुर्जपर (उस वुर्जपर जो वेगमके महलसे निकट था) लेचलकर लगाओ। आदमीने आज्ञानुसार कुर्सी लगाकर खवर दी, और खांसाहवकी सवारी उसपर जाकर विराजमान हुई। आनन्दसे, मौजमें आकर, आरामके साथ हुक्का पीते हुए और वीच वीचमें शरावके घूँट लेते हुए वे सामनेके उसी महलकी ओर दृष्टि लगाकर, अपने मनोराज्यके सिंहासनपर वैठे हुए, तरंगें लेरहे थे। कुछ देर वाद उन्होंने अपने नौकरोंको भी वहाँसे चले जानेकी आज्ञा दी, जिससे उनके उस एकान्त-आनन्दमें किसी प्रकारका व्यत्यय न होने पावे। उन्होंने सख्त हुक्म दे दिया कि, एक भी आदमी हमारे पास न रहे। इसके वाद आप फिर अपने उसी मनोराज्यमें निमग्न होगये। अपने सम्पूर्ण विचारोंके सफल होजानेपर हम अनेक वातें कर सकेंगे! रणदुल्लाखा क्रुद्ध होकर वादशाहसे वैर करने ही लगेगा, और तव राजद्रोही वतलाकर उसका वध भी किया जासकेगा। उसके नष्ट हो जानेपर फिर मुरारपन्त और अफजलखां इत्यादि लोग वातकी वातमें दरवारसे निकाले जासकेंगे; अथवा उनको हम अपनी मुट्ठीमें ले सकेंगे। और रणदुल्लाखाको वहनको तो हम उसी प्रकार वशमें कर लेंगे, जैसे रम्भावती।

रम्भावतीका विचार उसके मनमें आया, और उसकी मूर्ती उसको आंखोंके सामने आकर खड़ी होगई। इसके वाद उसके सम्वन्धकी सारी घटनाएँ— अर्थात् उसके प्राप्त करा देनेमें उसने क्या-क्या प्रयत्न और

क्या क्या कारस्तानियाँ कीं, कितनी विचित्र-विचित्र युक्तियाँ भिड़ाईं, इत्यादि सब घटनाएँ—एकके बाद एक—उसके मनमें आने लगीं। इसके बाद उसने सोचा कि, उस समय हमने जो कुछ कार्य कर दिखलाया, और जो सफलता प्राप्त की वैसा ही—नहीं, नहीं, उससे भी विशेष महत्वपूर्ण और कठिन—कार्य करनेका अब मौका आ गया है। यह सोचकर वह अपनी बुद्धिको और भी विशेष रूपसे उसमें प्रवेश कराने लगा। अहा! रम्भावतीके प्राप्त होनेसे बादशाह कितना हमारे वशमें हो गया, और अब यदि इस कार्यमें सफलता प्राप्त हो गई, तो फिर पूछना ही क्या है! फिर तो वह बिलकुल हमारी मुट्ठीमें ही आ जायगा। इस प्रकार आनन्द और सुखके विचार उसके मनमें आ रहे थे, और वह अपने बड़े भारी कल्पना मन्दिरमें यथेष्ट रूपसे विहार कर रहा था। इतनेमें अचानक उसे ऐसा भास हुआ, जैसे उसके सामने कोई अत्यन्त काली छाया पड़ रही है। उसको देखते ही वह चौंक पड़ा, और एकदम सिर उठाकर देखता है, तो एक व्यक्ति उसे दिखाई पड़ा। उसको देखते ही उसके सारे अग शिथिल हो गये। वह उठनेका प्रयत्न करने लगा, पर अपने पैरोंको वह उठा नहीं सका। आज कई दिनमें उसे इस मूर्तिके दर्शन हुए थे जिसके कारण उसे इतना चौंकना पड़ा। उस व्यक्तिके हाथमें एक हथियार—खजर अथवा भुजाली थी, जो कि खूब ही चमकती हुई उसे भास हो रही थी। यही नहीं, बल्कि उसे यह भी भास हुआ, जैसे वह व्यक्ति अपने उस हथियारको बड़ी बुरी तरहसे उसको दिखला रहा हो। यह सोचकर कि, देखो, इस कालेकलूटेने यहाँ भी हमारा पीछा किया, वह डरते-डरते उसकी ओर देखने लगा। इतनेमे वह क्या देखता है कि, उस कालेकलूटे मनुष्यकी आखें बिलकुल लाल चिनगारीकी तरह चमक रही हैं। उनको देखकर तो वह और भी अधिक घबड़ाया। एक क्षणभरके बाद वह क्या देखता है कि, जैसे वह व्यक्ति किसी काले बादलकी तरह अपने स्थानसे धीरे-धीरे चलकर उसकी ओर आ रहा है। यह देखकर उसके हाथ-पैर फूल गये। अपने लोगोंके पहरेमें अपने निवासस्थानसे इतने नजदीक वह बैठा था, फिर

भी उसकी इतनी घबराहट ! पर करता क्या ? जैसे कोई कितना ही शूर वीर क्यों न हो, परन्तु फिर भी सामने यमदूतको देखकर वह घबड़ा ही जाता है, वैसी ही उसकी दशा हुई। इस व्यक्तिका दर्शन उसे बीच बीचमें हो ही जाता था, जो उसके सारे सुखोंका बिल्कुल विषकी भाँति कर डालता था। इस व्यक्तिको पकड़ने और उसको मरवा डालनेके लिए उसने इन महीनोंके अन्दर बड़े बड़े प्रयत्न किये, पर सब व्यर्थ गये। वह व्यक्ति दिखाई पड़ता, और पन्द्रह मिनटके अन्दर ही न जाने कहा गायब हो जाता, कुछ पता ही न चलता, और किस समय दिखाई दे जायगा इसका भी कुछ अनुमान न होता! किन्तु आजकी दशा वैसी नहीं थी आज वह व्यक्ति उसके सामने ही बिलकुल स्पष्ट खड़ा था। वह उसकी ओर देख रहा था। उसके नौकर चाकर भी कुछ बहुत दूर नहीं थे परन्तु उस व्यक्तिकी वह भुजाली और उसके वे भयंकर नेत्र देखते ही वह कुछ ऐसा घबड़ा गया कि, उसके मुखसे शब्द ही न निकलने लगा बोलती बन्द हो गई! इधर वह व्यक्ति ज्यों-ज्यों एक-एक कदम आगे बढ़ाने लगा, त्यों-त्यों उसका शरीर और भी अधिक लटपटाने लगा उसकी जीभ तलुएमें जा लगी। मुँह सूख गया। उसको ऐसा भास हुआ कि, जैसे वह अपनी कुर्सीमें भीतर-भीतर धँस रहा है; और उसकी कुर्सी जमीनके अन्दर धँस रही है। इतनेमें वह काला पुरुष, जिसके हाथमें भुजाली थी, उसके बिलकुल पास ही आ गया; और उसके कन्धेपर हाथ रखकर धीरेसे ही—"घबड़ा मत। कुल डेढ़ दिनका तुझे और अवकाश है। अब तू मेरे पंजेसे छूट नहीं सकता। और यदि छूट गया तो फिर मैं तुझे दिखाई नहीं दूँगा। जो करना हो, डेढ़ दिनके अन्दर कर ले"—इतने शब्द उच्चारण किये।

ये शब्द उसने इतनी शान्तिके साथ और स्वाभाविक तौरसे उच्चारण किये कि, सैयदुल्लाखाँको भी अचम्भा हुआ। वह सोचता था कि, अब मेरी गर्दनमें अथवा छातीमें यह भुजाली भोंककर मेरे प्राण ले लेगा। अब मेरे मरनेमें विलम्ब नहीं; परन्तु उसकी जगहपर वे शान्तिके साथ उच्चारण किये हुए शब्द उसके कान

पड़े ! इससे अधिक अचम्भेकी और कौन सी बात हो सकती है ? वह व्यक्ति, जो कुछ कहता था, कह चुका, और कुछ समय भी व्यतीत हो गया। अब वह नहीं बोलेगा, यह सोचकर उसने अपनी गर्दन ऊपर उठाई, और आँखें खोलकर देखा तो न वह व्यक्ति है, और न कोई ! उस व्यक्तिकी छाया भी कहीं नहीं। अभी बहुत समय नहीं हुआ—शायद एक मिनट भी मुशकिलसे हुआ हो; और इतनी ही देरमें वह न जाने कहाँका कहाँ गायब हो गया ? उसकी छाया भी कहीं दिखाई नहीं पड़ती—बड़े आश्चर्यकी बात है ! सैयदुल्लाखाँ अपने चारों ओर देखता है, पर व्यर्थ। कोई कहीं दिखाई नहीं पड़ता। ठण्ढी हवामें कुछ ऊँघकर उसने स्वप्न तो नहीं देखा ? उसको सन्देह हुआ, परन्तु उसकी वह घबराहट, और वह स्पष्ट दिखाई देनेवाली भुजाली, तथा जो अबतक कानमें गूँज रहे थे—ऐसे वे भयकर शब्द, इत्यादि बातोंसे उसे पूर्ण विश्वास हो गया कि, नहीं, यह स्वप्न नहीं था—बल्कि अक्षरशः सत्य घटना थी। उसने तुरन्त ही अपने आदमियोंको पुकारा और पूछा कि, यहाँ भुजाली हाथमें लिये हुए एक आदमी दिखाई दिया था, वह कहाँ गया ? पर किसीने उसे देखा ही नहीं था, उत्तर क्या देते ? हुक्म हुआ कि, देखो, वह कहीं पास ही छिपा बैठा होगा, उसकी तलाश करो। फिर क्या कहना है—चारों ओर दौड़ धूप शुरू हो गई—कोई इधर दौड़ता है, उधर मशालें, पलीते, कन्दीलें, जलाई जा रही हैं—दस बीस आदमी इधर-उधर दौड़ पड़े; पर उस व्यक्तिका पता कहाँ लगता है ? कई लोग नीचे दौड़ाये गये, कुछ बस्तीमें दौड़ाये, कहीं कुछ पता नहीं। अन्तमें सोचा कि, शायद हमारे ही मकानमें कहीं छिपा बैठा हो, इसलिये मकानका काना-कोना छान डाला गया, पर कहीं नामनिशान नहीं। अन्तमें बिलकुल निराश होकर, और अपने चारों ओर चार चुने हुए आदमियोंका सख्त पहरा रखकर खाँसाहब तड़फड़ाते हुए अपने बिछौनेपर लेट रहे।

———

तीसवां परिच्छेद

खाँसाहबकी घबड़ाहट

चारों ओरसे चार पहरेदारोंको रखकर खाँसाहब लेटे हुए हैं; पर फिर भी उनको अपने सुरक्षितपनका विश्वास नहीं। उनका चित्त अशान्त हो रहा है। यहाँतक कि एक बार उनके मनमें यह भी आया कि, व्यर्थके लिये हम अपना शहर छोड़कर यहाँ आये। इसके वाद वहुत देरतक वे इसी वातका विचार करते रहे कि, अव आगे हमको क्या करना चाहिये। इस प्रकार विचार करते-करते रात व्यतीत हो गई, सुवह हुआ, सूर्यप्रकाश आया, और चारों ओर खूब उजेला हो गया। उस समय उसकी वैसी ही दशा हुई, जैसी कि उस लड़केकी हो जाती है, जो कि सारी रात भूतके भयसे वड़ी घवड़ाहटमें विताता है; और सुवह होते ही इस प्रकारकी वड़ी-वड़ी वातें मारने लगता है कि, अजी भूत है क्या चीज! उसको क्या डरना! उसी प्रकार इसने भी सोचा कि, "देखो, हम उस कालेकलूटे आदमीसे व्यर्थके लिये डरे। डरनेकी कोई वात ही नहीं थी। हाँ, वह अचानक आ गया, और इसीलिये हम इतने डर गये। नहीं तो वातकी वातमें उसकी खवर ले ली होती—उसीके हाथ-खञ्जर छीनकर उसीके पेटमें भोंक दिया होता, पर क्या करें! अच्छा मौका हाथसे चला गया!" इस प्रकारके विचार उस दिन उसके मनमें कमसे कम सौ वार तो अवश्य ही आये होंगे। परन्तु साथ ही उसके मनमें यह भी आया कि, उस दुष्ट मनुष्यने जो मुद्दत वतलाई है, उसी-के अन्दर हमको यहासे रवाना हो जाना चाहिये। मतलव यह कि, उसने अन्तमें यही विचार किया कि, अपना कार्य जहाँतक शीघ्र हो सके, करके यहासे वहुत जल्द चला जाना चाहिये। किन्तु यह वात एक दिनमें कैसे हो? जो कार्य उसको सिद्ध करना था, वह एक दिनमें होने योग्य नहीं था। और इधर एक दिनमें ही उसे करना उसके लिये अत्यन्त आवश्यक हो गया। अन्तमें, जो हो, उसने निश्चित यही किया कि, हम कार्य आज ही पूरा करेंगे; और तदनुसार अपनी कार्यवाही

प्रणालीको ध्यानमें रखकर कुछ विचार भी अपने मनमें बाँध लिये। वास्तवमें जिस काममें कपट करनेका कोई भी कारण नहीं था, जो बात बिल्कुल सरलताके साथ सिद्ध की जा सकती थी, उसमे भी कपट करनेका उसने निश्चय किया। इसके बाद तुरन्त ही उसने अपने एक विश्वासपात्र आदमीको बुलाया, और कोई गुप्त सन्देशा उसके कानमे कहा। वह आदमी चला गया, और लगभग एक पहरके अनन्तर वापस आया। उसके साथ खाँसाहबके उन सौ मनुष्योंके सेनाध्यक्ष महाशय थे। सेनापति महाशय बकायदा सलाम करके उनके सामने खड़े हो गये। खाँसाहबने उन्हें अपने पास बैठा लिया, और उनकी बड़ी प्रशंसा की। फिर इसके बाद धीरेसे उनके कानमे बतलाया, कि हमारे क्या विचार हैं, और आपको क्या करना चाहिये। इसपर उन सेनाध्यक्ष महाशयने उनसे कुछ प्रश्न किये, ओर उन्होंने उनके उत्तर दिये। बहुत देरतक उन दोनोंमे कुछ गुप्त सलाह मशविरा होता रहा। अन्तमे सब बातें निश्चित हो गईं, और वह वहांसे चले गये। "हमको जो कुछ प्रबन्ध करना था, उसका एक भाग तो हमारी इच्छाके अनुसार हो चुका, अब थोड़ासा ही और रह गया है, और वही कठिन भी है—देखना चाहिये, क्या होता है?" ये शब्द खाँसाहबने अपने ही आप कहे, और फिर विचारमें निमग्न हो गये। लगभग एक घण्टाभर विचार करनेके बाद उन्होंने अपने उस अत्यन्त विश्वासपात्र नौकरको फिर बुलाया, और बहुत देरतक उससे कुछ कहते सुनते रहे, फिर अन्तमें कहा, "मैं चाहता था कि, कार्य धीरे-धीरे सावकाश सात-आठ दिनमे करूँ, परन्तु किसी कारणवश अब उतना अवकाश नहीं मिल सकता। उस ओरके दो आदमी भी यदि फूट जावें, और वे मेरे कथनानुसार अन्य लोगोंको शराब पिलाकर बेहोश कर दें, तो काम बन जाय। यह कार्य यदि सध जाय, तब तो कोई बात नहीं—जहाँतक हो सके, साधना चाहिये—और यदि न सधे, तब भी कोई हानि नहीं। मुझे जो कुछ करना है, सो करूँगा ही। परन्तु इस मार्गसे हो, तो बहुत अच्छा हो।" नौकरने सब बातें सुनकर यह कहकर स्वामीको आश्वासन दिया कि,

ाहाँतक हो सकेगा, मैं अवश्य आपके विचारोंको पूर्ण करनेका उद्योग करूँगा। इसके वाद वह वहासे चला गया। अव सैयदुल्लाखाँ मन ही मन चुपके-चुपके कुछ विचार करने लगा। आज उसे भूख-प्यास कुछ भी मालूम नहीं हुई। उसका सारा चित्त इसी एक विचारमें लगा था कि, हमारी इच्छाके अनुसार सारा कार्य किस प्रकार पूर्ण हो; और हम कव वीजापुर पहुँचें।

सैयदुल्लाखाँका हुक्म लेकर उसके उन चुने हुए सौ सिपाहियोंका सेनापति अपनी छावनीमें वापस आया, और अपने विश्वासके चार आदमी वुलाये। उनको सव वातें वतलाईं और तैयारी करनेके लिए कहा। उन चारोंसे फिर अन्य सव लोगोंमें वे वातें फैल गईं; और सवके मुँहसे यही सुनाई देने लगा कि, भाई, आज रातको अमुक-अमुक वातें करनी हैं।

लगभग सात वजे शामको सैयदुल्लाखाँका शत्रु वह काला-कलूटा पुरुष उन दोनों स्त्रियोंके घरपर आया, जहाँ श्यामाका वह मामा ठहरा हुआ था; वहाँ जाकर श्यामाके मामासे उसने भेंट की; और फिर दोनों वस्तीके वाहर, एक मन्दिरमें जाकर परस्पर कुछ वातचीत करने लगे! थोड़ी देर वातचीत होनेके वाद फिर वह काला महाशय श्यामाके मामासे कहता है, "आपकी और मेरी कोई जान-पहचान नहीं, फिर भी धृष्टतापूर्वक मैं आपके पास आया, और आपको इस मन्दिरमें ले आया; आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करके यहाँतक चले आये, यह आपकी वड़ी भारी कृपा हुई। आपका उद्देश्य क्या है, और आप कौन हैं; सो मुझे अच्छी तरह मालूम है। परन्तु यहाँ इन वातोंके वतलानेकी कोई आवश्यकता नहीं है! फिर कभी वतलाऊँगा। आज मैं आपसे सिर्फ इतना ही कहनेके लिए आया हूँ कि, "जिस उद्देश्यसे आप यहाँ आये हुए हैं, उसको यदि आप एकदम सिद्ध करना चाहते हैं, तो आजका मौका वड़ा अच्छा है।" इतना कहनेके वाद वह कुछ देरके लिए चुप हो गया। इसके वाद फिर कुछ देरमें कहता है, "यह तो आपको मालूम ही है कि, इस समय सैयदुल्लाखा किलेपर आया हुआ है। यह मानो

एक पापका पुञ्ज ही है। इसके समान दुष्ट आदमी और कोई नहीं होगा। आज भले आदमियोंकी बीजापुरके दरबारमे जो विडम्बना हो रही है, उस सबका कारण यही है। इसीके कारण वहाँका दरबार इतनी हीनावस्थाको प्राप्त हो रहा है। बादशाह वास्तवमें एक बहुत ही अच्छा आदमी है, पर इसी पापीने उसे खराब कर रखा है। इन सब बातोंपर ध्यान देनेसे आपको मालूम हो जायगा कि, यह मनुष्य यहाँ किस बातसे आया है। यह आजतक जिन नीचतापूर्ण कार्योंके कारण बादशाहका प्रियपात्र बना है, उसी प्रकारके एक नीच कामके लिए यह यहाँ आया है, और आज ही रातको यह अपने उक्त नीच कर्मको सिद्ध करनेके विचारमें है। बीजापुरके दरबारमे जो दो चार भले भले आदमी हैं, उनमें रणदुल्लाखा बहुत ही भला मनुष्य है। उसने अपनी बहनको यहाँ किलेपर कुछ दिनके लिए रख दिया है। बस, उसीको जबरदस्ती यहाँसे लेजाकर बादशाहके रंगमहलमें रखनेका नीच विचार इसने किया है। वह बहुत सुन्दरी और बड़ी साध्वी है। सैयदुल्लाखाँका विचार है कि, इसको एक बार ले जाकर यदि वह बादशाहके महलोंमे रख देगा, तो बादशाह उसपर और भी अधिक प्रसन्न हो जायगा, और इसीलिये यह सारा प्रयत्न वह कर रहा है। इसीलिए वह यहाँ आया है, और आज ही रातको वह अपने उद्योगमें लगेगा। इसलिये यह मौका ऐसा है कि, उसका उद्योग सफल न होने दिया जाय, और उसकी पूरी पूरी खबर ली जाय। उसका खबर स्वय आप कोई भी न लें। यह काम मुझे सौंप दीजिये। आज कितने हो वर्षोंसे मेरी यह बड़ी भारी महत्वाकाक्षा हो रही है कि, मैं इस दुष्टका वध करूँ। इसने मेरा बड़ा भारी अपराध किया है। आज रातको वह बेगमके आदमियोंको कोई न कोई नशा देकर बेहोश करनेवाला है। उनके बेहोश हो जानेपर वह अपने चुने हुए सौ सिपाही चुपकेसे किलेके ऊपर बुला लेगा। वे सौ सिपाही उसने पहले ही किलेकी एक ओर छिपा रखे हैं। उन सिपाहियोंके ऊपर पहुँच जानेपर फिर वह बेगमके महलपर एकदम छापा मारेगा, और उसको यहाँसे उड़ा ले जायगा। आप यदि इस समय चतुराईसे काम लेंगे, तो

आपका काम सहजहीमें हो जायगा। इसके सिवाय, एक साध्वीकी संरक्षाका श्रेय भी आपको प्राप्त होगा। आपकी सम्पूर्ण व्यवस्था भी मुझे मालूम है! उस व्यवस्थामें भी आपको कोई विशेष परिवर्तन नहीं करना पड़ेगा। रातको मौका है ही आप उसके आदमियोंको जहाँके तहाँ रोक रखनेका और अपने आदमियोंको ऊपर भेजनेका प्रबन्ध करें—बस, इतनेहीसे सब काम हो जायगा। नहीं तो आप अपना एक गिरोह इस ढगसे लगा रखें कि, वह दुष्ट जब उस साध्वीको पकड़कर ले जाने लगे, तब रास्तेमें ही उसको रोक रखा जाय। लेकिन यह आप मुझे बतलाइये; क्योंकि मुझे अपनी प्रतिज्ञा पूरी करनी है, सो मुझे पूर्ण करनी चाहिए।"

वह महाशय जब कि यह बातें कह रहा था, उसका श्रोता चुपकेसे बैठा हुआ सुन रहा था। यह कौन महाशय है, जो हमारे निश्चय और हमारे विचारोंका इतना पता रखता है, और हमको पहचानता भी है? कुछ भी उसके ध्यानमें नहीं आया; और इसलिए क्षणभरके लिए उसके मनमें यह शका भी उपस्थित हुई कि, यह जो कुछ कह रहा है, सो बिलकुल हृदयसे कह रहा है, अथवा इसमे इसका कोई विशेष उद्देश्य है? परन्तु इतनेमें उसके खयालमें आया कि, शायद हमने इसका वृत्तान्त कहीं सुना अवश्य है। अतएव वह एकदम उससे कहता है, "आपके कथनानुसार कार्य करनेमें कोई हानि तो दिखाई नहीं पड़ती। पर आपने जो वृत्तान्त बतलाया, वह क्या सचमुच उसी प्रकार होनेवाला है? आपको क्या इसकी सत्यताके विषयमें विश्वास है? और यदि है, तो यह कैसे कहा जा सकता है कि, इस प्रकार कार्य करनेसे सफलता अवश्य ही प्राप्त होगी?"

"इसमें आपको कोई शंका करनेकी आवश्यकता नहीं। मैं जो कुछ कहता हूँ, उसमें रत्तीभर फर्क नहीं पड़ सकता। मेरे विषयमें आप सन्देह न करें। आपको यदि मेरा विचार पसन्द आवे, तो वैसा आप करें। मैं तो अपनी प्रतिज्ञा किसी न किसी प्रकार पूरी ही करूँगा, इसमें फर्क पड़ नहीं सकता। हाँ, मेरी सूचनाके अनुसार आप यदि कार्य करेंगे,

तो आपके प्रयत्नोंको सफलता प्राप्त होनेमें सुविधा रहेगी। आपको फिर टेढ़े मेढ़े रास्तेसे किलेपर चढ़नेकी आवश्यकता नहीं रहेगी। बस, इसीलिए मैं आपको यह सूचना दे रहा हूँ। यदि आपका निश्चय हो, तो अभी आप सूर्याजीके सिपाहियोंमे सैयदुल्लाखाके सौ सिपाहियोंको रोक रखनेकी तजवीज करवा दें। इसके बाद अपने सिपाहियोंको आप यह हुक्म दें कि, वे उसी समय किलेके ऊपर चढ़ आवें, जिस समय सैयदुल्लाखाने अपने सिपाहियोंको किलेके ऊपर चढ़नेका हुक्म दे रखा है। ऐसा करनेसे सुलतानगढ़ बातकी बातमें आपके हाथमें आ जायगा। समय ठीक रातके बारह बजेका निश्चित हुआ है। सध सके, तो साधिये। न सध सके, तो मेरा कोई आग्रह नहीं। ऐन मौकेपर किसीके आकर कुछ कहनेसे आप अपना मन बदलनेवाले नहीं हैं, यह मै जानता हूँ। पर इसके साथ ही साथ मैं यह भी जानता हूँ कि, ठीक मौकेपर मिली हुई जानकारीसे लाभ उठा लेनेमें भी आप कुछ कम दक्ष नहीं हैं। बस, इसीलिये मैंने आपको यह सूचना देनेका प्रयत्न किया है। इसका आप भलीभाति विचार करें, पर साथ ही यह भी ध्यानमे रखें कि, अब विचार करनेके लिए आपके पास उतना समय नहीं है।"

इतना कहकर वह तुरन्त ही उठा, और "जाता हूँ" कहकर न जाने कहाका कहाँ गायब हो गया।

इकतीसवां परिच्छेद

द्विधा चित्त।

वह कालाकलूटा आदमी जब उपर्युक्त रीतिसे बातचीत करके चला गया, तब हमारे वे नवयुवक महाशय लगभग पाच ही मिनट मन ही मन सचिन्त होकर कुछ विचार करते रहे। उन्होंने सोचा कि, अब हम अपना पहलेका ही विचार स्थिर रखकर उसीके अनुसार कार्य करें या इस महाशयकी सूचनाके अनुसार इस अवसरसे लाभ उठावें—इसमें सन्देह नहीं, कि हमने अपना जो प्रबन्ध कर रखा है, उसकी अपेक्षा

इस महाशयके बतलाये हुए मार्गमें हमको बहुत अधिक सुविधा है, पर इस बातका तो विचार पहले हो जाना चाहिये कि, सचमुच ही वह सुविधा हमको प्राप्त होगी, अथवा और का और ही हो रहेगा। उस महाशयके विषयमें यद्यपि उन्होंने अपने मनमें अनुमान कर लिया था; फिर भी यह निश्चय नहीं था कि, उनका वह अनुमान कहाँतक सच है, और सच भी हो, तो इसका क्या ठीक कि, उस अनुमानके अनुसार ही सब बातें होंगी। बस, यही दो विचार उनके मनमें आ रहे थे। अन्तमें उन्होंने अपनी सदैवकी पद्धतिके अनुसार अपनी कुलदेवीका ही ध्यान करना निश्चित किया; और लगभग पाँच मिनटतक उसका ध्यान किया। उस ध्यानमें उनको देवीका साक्षात्कार हुआ, और यह सूचना मिली कि, "इस अवसर पर तुझे व्यर्थके लिये कष्ट न हो, इसी कारण मैंने ये सब सुविधाएँ उपस्थित कर रखी हैं। तू निस्संकोच होकर इस अवसरसे पूरा पूरा लाभ उठा ले।" देवीकी आज्ञा हो चुकी, अब क्या पूछना है? तुरन्त ही सूर्याजीके पास यह सन्देशा गया कि, सुल्तानगढ़की अमुक ओर इतने इतने लोगोंकी एक छावनी पड़ी है। यह छावनी वहाँसे उठकर किलेपर धावा करनेके लिए अमुक समयपर चल देगी, सो आप उसको जहाँका तहाँ दाब रखें। बिल्कुल वहाँसे इंचभर भी हिलने न दें। साथ ही साथ अपने गिरोहके लिए यह हुक्म हुआ कि, इतने-इतने बजे किलेपर बिलकुल सामनेहीके, दिल्ली-दरवाजेसे, धावा करना है, सो सब आदमी एकदम तैयार रहें। किसी प्रकारकी गफलत न हो। इस तैयारीमें फिर दो घड़ी भी नहीं लगी। सूर्याजीके गिरोहके लिए जो कार्य बतलाया गया, उसके लिए तो उन्हें कोई आश्चर्य नहीं हुआ; किन्तु जब स्वयं राजासाहबके लोगोंको यह बतलाया गया कि, आज इतने बजे आगेके दरवाजेसे ही ऊपर जाना होगा, तब अवश्य ही अत्यन्त आश्चर्य हुआ। क्योंकि पहले सबका यही खयाल था कि, आगेके दरवाजेसे जाना बिल्कुल असम्भव होगा; बल्कि उन लोगोंने समझा था कि, किलेके पीछेकी ओर अथवा दाईं-बाईं ओरसे, जहाँ चढ़नेयोग्य स्थान होगा, वहींसे जाना होगा। इसके बाद फिर किलेपर पहुँचकर वहाँके लोगोंपर

अचानक छापा मारना होगा, और छापा मारनेपर जब किलेके सिपाही मुकाबिला करने लगेंगे, तब उनको परास्त करके किलेको अपने हाथमें ले लेना होगा। वे समझते थे कि, किलेके बिलकुल सामनेके ही दरवाजेपर जाकर और उसको तोड़कर घुसनेका प्रयत्न करना मानो एक प्रकारसे किलेके लोगोंको सावधान करके उनके साथ मुकाबिला करना है। बात यह थी कि, श्रीधर स्वामीके छुटकारेके समय जो युक्ति की गई थी, उसीका लोगोंको खयाल था, और वे सोचते थे कि, ऐसा ही इस बार भी करना होगा। इसके सिवाय, बहुत लोगोंका यह भी खयाल हुआ कि, अपनी वर्तमान अवस्थामें, इतनी सबलताके साथ, आगेको ओरसे शत्रुपर धावा करना हमारे लिए ठीक न होगा। फिर उसमें भी सैयदुल्लाखाके समान सरदार अपनी सेनाके साथ पहले ही से आ जमा है। ऐसी दशामें वास्तवमें हमको इस समय किला लेनेका अपना विचार ही छोड़ देना चाहिये था, सो वैसा न करके यह क्या उपद्रव रचा जा रहा है, इसमें कोई भूल तो नहीं हो रही है? तानाजीको भी इसपर थोड़ासा सन्देह ही हुआ, परन्तु चूँकि उनकी अपने मित्रपर इतनी दृढ़ श्रद्धा थी कि, जिसके कारण उनको कोई भी कार्य असम्भव नहीं जान पड़ता था। उनको पक्का विश्वास था कि, हमारे मित्रपर भवानी माताकी पूर्ण कृपा है, और इस कारण वह उन्हें प्रत्येक कार्यमें सफलता अवश्य ही प्रदान करेगी, और इसी कारण उन्होंने अपने मनके उपर्युक्त सन्देहको अपने किसी मित्रसे प्रकट नहीं किया। हाँ, उन्होंने सिर्फ इतना ही प्रबन्ध किया कि, जो कुछ जानकारी अपने कार्यके विषयमें उनको प्राप्त करनी थी, सो सब समाप्त करके अपने लोगोंको नियत स्थानपर लगा रखा, और हुक्मकी प्रतीक्षा करनेके लिये कहा। इस प्रकार जब लोगोंको उचित स्थानपर लगा रखनेका प्रबन्ध हो चुका, तब एक और महत्वपूर्ण कार्यकी ओर ध्यान दिया गया। जिस दिनसे किलेके लेनेका विचार निश्चित होकर लोग किलेके पास लाकर लगा रखे गये थे, उसी दिनसे, अर्थात् जबसे उस नवयुवक महाशयने श्यामाके काका-मामाका रूप धरकर सारे किलेका, सब दृष्टियोंसे, निरीक्षण

किया था, तभीसे, उसके मनमें एक वात वार-वार आ रही थी, और वह यह कि, जिस तरहसे हो सके किलेदारको अपने पक्षमें कर लिया जाय। किलेको जीतकर उसे अपने वशमें करनेकी अपेक्षा पहले ही वशमें करना अच्छा—इससे विशेष लाभ होगा। वस, इसी कार्यको सिद्ध करनेके लिये विचार किया जा रहा था कि, इसके लिए किस युक्तिकी योजना की जाय। परन्तु वास्तवमें यह कार्य अव एक प्रकारसे असम्भव-सा ही मालूम हो रहा था। सच पूछिये, तो लड़का पिताके विरुद्ध होकर, अपने पिताके हाथका किला वादशाहके शत्रुके अधिकारमें दिलानेका प्रयत्न कर रहा था, और यह वात उस नवयुवकके मनको कुछ वहुत पसन्द नहीं आ रही थी। इधर आज अव विल्कुल अन्तका समय आ गया। इसलिए यह तो विलकुल निश्चित हो चुका कि, अव अप्पासाहव चाहे हमारे अनुकूल हों चाहे न हों, किला तो अवश्य ही हस्तगत किया जायगा, इसमें सन्देह नहीं; परन्तु फिर भी एकवार प्रयत्न करके देख लिया जाय, यदि उनकी अनुकूलता प्राप्त हो जाय, तो अच्छी ही वात है। यह विचार वार-वार उसके मनमें आने लगा। सच पूछिये, तो अव दरवाजेपर उसके सिपाहियोंके पहुँचने और धावा वोलनेमें लगभग घण्टे-डेढ़ घण्टेका ही अवकाश रह गया था; पर उतने अवकाशमें भी यदि कुछ हो सके तो करके देख लिया जाय, यह सोचकर उस नवयुवकने तुरन्त ही नानासाहवको वुलवाया और उनके आ जानेपर उसने कहा कि, तुम एक वार फिर किलेपर जाओ, और अपने पिताको, सोतेसे भी जगाकर, आज शामके वक्तकका सारा वृत्तान्त वतलाओ, और ऐसा यत्न करो कि, जिससे उनका मन हमारे कार्यकी ओर लग जाय। अन्ततक आशा न छोड़नी चाहिये। हम लोग हिन्दू हैं, इसलिए यह लोकापवाद न होना चाहिये कि देखो, लड़केने वापपर धावा वोल दिया, उसको कैद किया; उसका पराभव किया, उसकी मानखण्डना की। यह लोकापवाद वुरा है। पिताकी जीवितावस्थामें उसको कैद करके स्वयं राज करना हम हिन्दुओंका व्रत नहीं। इसलिए तुम जाओ; और अव भी उनके चित्तको वदलानेका प्रयत्न करो। तुम्हारे द्वारा यदि यह

[illegible] नहीं होगा, [illegible], परन्तु [illegible], और [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] और [illegible] अभिमान [illegible] [illegible]।"

[illegible] और [illegible]। अपने पिताके [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] पर यदि हम उनके [illegible], तो [illegible] हमारी गर्दन भी काट डाले बिना न रहेंगे। [illegible] अपने पितासे एक बार मिल ही चुके थे। वहाँका अनुभव अभी उनके लिये बिलकुल ताजा था। अतः उन्होंने उस नवयुवकको बतलाया भी कि, आप जो यह कार्य हमको बतला रहे हैं, इसमें हमको कोई आशा नहीं है, परन्तु जब उन्होंने उसका यह आग्रह देखा, कि नहीं—एक बार अन्तिम प्रयत्न करके फिर देख लो, तब वे इनकार नहीं कर सके। इसके सिवाय, उन्होंने यह भी सोचा कि, शायद हमको इस प्रकार आगे भेजनेमें इनका और भी कोई अच्छा उद्देश्य होगा, इसलिए अन्तमें वे जानेको तैयार हो गये। इस प्रकार उनकी तैयारी देखते ही राजा शिवाजीने उनको सांकेतिक शब्द भी बतला दिया। उन्होंने यह कहकर उनको सचेत कर दिया कि, "देखो, आज पहले दरवाजेसे ही अन्ततक सब पहरेदार सैयदुल्लाखाके हैं। इसलिए प्रत्येक जगहपर जब तुम यह सांकेतिक शब्द उच्चारण करोगे, तभी ऊपरतक पहुँच सकोगे, अन्यथा नहीं।" यह सुनकर उनको बड़ा आश्चर्य हुआ कि, इनको सैयदुल्लाखाके आदमियोंका यह गुप्त सांकेतिक शब्द मालूम कैसे हो गया। परन्तु वह मौका आश्चर्य अथवा कौतुकमें ही पड़े रहनेका नहीं था, इसलिए फिर उन्होंने कुछ भी न कहते हुए अपना रास्ता पकड़ा। चलते समय राजासाहबने उनसे कहा कि, "देखो, समय अब बिलकुल निकट आता जा रहा है।

इसलिये अब ऊपर जाकर फिर नीचे वापस आनेके लिए तुम्हें बिल्कुल मौका नहीं है ! जिस कामके लिये जा रहे हो, वह हो जाय, तब तो ठीक ही है, अन्यथा फिर तुमको वहीं रह जाना चाहिये। ठीक समयपर हमारे लोग ऊपर चढ़कर आवेंगे ही, सो उनको वहीं रहकर नाकेबन्दीमें सहायता करना, और किलेपरके अपने पुराने लोगोंको यही समझाते रहना कि, तुम लोग हमारे कार्यमें बाधा न डालो, हमारे आदमियोंके साथ उपद्रव मत करो। बस, इतना यदि तुमने कर लिया, तो किला हमारे हाथमें आ ही जायगा। हमारे लोग जब आवेंगे, तब इस बातकी शंका किसीको हो ही नहीं सकती कि, ये किसके सिपाही हैं; परन्तु जब सब पहरों और बुर्जोंके आदमी बेकार कर दिये जायंगे; और उनकी जगह हमारे लोग बुर्जोंपर जम जायंगे, तब अवश्य ही भीतरके लोगोंमें बड़ी गड़बड़ी मचेगी। परन्तु किलेपरके पुराने सिपाही आज सब असावधान हैं—उनके स्थानपर सब जगह सैयदुल्लाखाके ही आदमी तैनात हैं। इसलिए उनके आदमी जब मारे जायंगे, तब अन्य लोगोंको बुरा लगनेका कोई कारण ही नहीं। इसलिए तुम उनको समझाना और कहना कि, "देखो, अब तुम आजसे मुसल्मानोंके अत्याचारसे बिल्कुल मुक्त हो गये। अब तुमको हम सब प्रकारसे सुखी रखेंगे।" इस प्रकारका आश्वासन जब उनको तुम दोगे, तब वे काहेको उपद्रव करेंगे ? और यदि कुछ उपद्रव करेंगे भी, तो हम देख लेंगे और जिस कामके लिये तुम जा रहे हो, वह काम यदि हो गया, तब तो फिर कुछ कहना ही नहीं, पर यदि न हुआ, तो भी किलेके पुराने लोग, जो हमारे हैं, उनके प्राण जहाँतक हो सके, बचाने ही चाहिये। हाँ, जहाँ बिल्कुल लाचारीकी हालत आ जाय; और ऐसा जान पड़े कि, सामोपचारसे काम नहीं होता; वहीं उनकी प्राणहानि की जाय। परन्तु जहाँतक वे मिलाये जा सकें, वहाँतक उनको मिला लेना ही ठीक होगा। इस बातपर खूब ध्यान रखो। अबतक हमने इसी भावको रखकर सब व्यवस्था की है, और अन्ततक यही भाव कायम रखेंगे।"

इतना कहकर उन्होंने नानासाहबको विदा किया। और वे बिल्कुल

[illegible] मिलते, परन्तु [illegible] [illegible] देकर, किसीको ओर [illegible] गये। नानासाहब [illegible] के [illegible] [illegible] कि, [illegible] सामने [illegible] [illegible] आता [illegible] परन्तु [illegible] [illegible] [illegible] कि [illegible] नहीं [illegible] कि, उन्होंने [illegible] [illegible] सिपाहियोंका, सांकेतिक शब्द [illegible] [illegible] गया, [illegible] [illegible] [illegible] आ गया, और उनके लिये भीतर [illegible] [illegible] गया। [illegible] पहरेदार [illegible] सिपाहियोंको उसी सांकेतिक शब्दका [illegible] [illegible]। नानासाहब ऊपर चढ़ते जा रहे हैं, पर किसी पहरेदारको भी यह नहीं मालूम होता, कि यह सेय-दुल्लाखाका आदमी नहीं है। एक पहरेदारपर [illegible] ही उनसे यह प्रश्न किया गया कि, "आप कौन कहाँ हैं?" नानासाहब कुछ घबड़ाये, पर शीघ्र ही सम्हलकर यह कहते हुए, कि "सब घड़ीभरमें आते हैं—होशियार रहो," वे आगकी ओर झपटे। निस्सन्देह उनको इस प्रश्नका कोई वास्तविक महत्व मालूम नहीं था, किन्तु जो कुछ उस समय उनकी जबानपर आ गया, वह उत्तर उन्होंने दिया, और उससे बहुत लाभ हो गया। अन्यथा कहीं यदि वे उलटे यह पूछ बैठते कि, कौनसे लोग? तो सारा खेल बिगड़ जाता, क्योंकि उनका भेद खुल जाता। अस्तु।

प्रत्येक पहरेको लांघते हुए वे बिलकुल ऊपर निकल गये, और उनको कोई विशेष अड़चन कहीं भी उपस्थित नहीं हुई। परन्तु जब वे ऊपर पहुँच गये, तब उनको यह चिन्ता हुई कि, अब पिताजीके पास पहुँचनेतक न जाने किन-किन विघ्नोंका सामना करना पड़े। अबतक प्रत्येक पहरेदारने यही अनुमान किया था कि, नीचे जो हमारे चुने हुए लोग हैं, उन्हींमेंसे यह कोई होगा; यह खासाहबके पास उनकी ओरसे कोई सन्देशा लाया होगा, अथवा कुछ देर बाद जो लोग आनेवाले हैं, उनके आनेके पहले ही सब आवश्यक बातोंका प्रबन्ध करनेके लिए आ गया होगा। परन्तु अब, जब कि ऊपरके लोगोंने यह देखा कि, यह

मनुष्य खासाहबके महलकी ओर न जाते हुए किलेदार साहबके महलकी ओर जाता है, तब कुछ लोगोंका सन्देह जाग्रत हुआ। इधर खासाहबके कान मुख्यद्वारकी ही ओर लगे हुए थे, और क्षण-क्षणभर वे इस बातकी प्रतीक्षामें थे कि, अब कोई न कोई आता होगा, अब आनेमें देर नहीं है। इसलिये जब उन्होंने मुख्यद्वारके खुलने; और पुलके गिरनेकी आवाज पाई, तब उनकी उपर्युक्त आतुरता और भी अधिक बढ़ी। बेगमके लोगोको शराब पिलाकर उन्हें बेहोश कर डालनेकी युक्ति उसने की सही, पर उसमें पूर्णतया उसे सफलता प्राप्त नहीं हुई थी। उनमेंसे किसी मनुष्यके भी अपनेमें मिल जानेका उसे विश्वास नहीं था। अतएव उसने सोचा था कि, अब हमारे ही आदमियोंसे जो कुछ होनेको हेगा, सो होगा, अन्यथा कुछ नहीं होगा। बेगमके आदमी कुछ ऐसे-वैसे नहीं; वे जबतक पूरे-पूरे घायल नहीं हो जायँगे, तबतक हमारे आदमियोंकी एक भी न चलेगी। बस, इसी चिन्तामें वह निमग्न हो रहा था कि, इतनेमें नानासाहब ऊपर पहुँचे। खासाहबको खबर पहुँच चुकी थी कि, कोई आदमी ऊपर आया है; और वह अपने ही आदमियोंमेंसे है, अन्यथा वह सांकेतिक शब्द कैसे बोलता? किन्तु पहलेसे तो किसी आदमीके आनेकी सम्भावना नहीं थी, और न ऐसा निश्चित ही हुआ था—फिर यह आया कहांसे? शायद किसी कार्यवश आगया हो—यह सोचकर वह इस बातके लिये आतुर हो रहा था कि, अब यह आदमी कब हमारे पास आता है। परन्तु इतने ही में उसे यह मालूम हुआ कि वह इधर नहीं आकर किलेदारके महलकी ओर मुड़ पड़ा। फिर क्या पूछना था? चट उसको विश्वास हो गया कि, यह कोई न कोई धोखेबाजी हुई; और इसलिये तुरन्त ही उसने अपना आदमी भेजा कि, देखो, यह कौन मनुष्य है, जो इस प्रकारकी दगाबाजी करके इतनी रातको किलेदारके पास जा रहा है। इस बातके जाननेको वह इतना उतावला हो रहा था कि, पहला आदमी अभी कुछ ही दूर गया था, इतनेमें उसने दूसरा आदमी भी भेजा, उसके पीछे ही पीछे तीसरा, चौथा, पाँचवा—और अन्तमें जब कोई आदमी ही वहाँ न रहा,

तब स्वय ही जानेको उठा, पर इतनेमे किसीने उसे धक्का देकर नीचे गिरा दिया !

इधर नानासाहब ऊपर आते ही सपाटेके साथ एकदम अपने महलकी ओर गये, वहाँ उनको प्रवेश होनेमें कुछ भी कठिनाई नहीं पड़ी। उन्होंने अपना सच्चा नाम बतला दिया, और पहरेदारोंने उन्हें भीतर जाने दिया। कई लोगोंको उनके आनेसे बड़ा आनन्द हुआ। एक तो उनपर पहले ही से सबका प्रेम था, फिर वे ऐसे समयमें आये - अब और क्या चाहिये ? नानासाहब भीतर गये, और दरवाजा लगा लिया गया, इतनेमे सैयदुल्लाखाके आदमी, एकके बाद एक, आकर उपस्थित हुए, पर उनको भीतर प्रविष्ट नहीं होने दिया गया, सो बतलानेकी आवश्यकता नहीं।

बत्तोसवां परिच्छेद

पिता-पुत्र।

महलमें प्रवेश होना जितना सहज था, अवश्य ही, पिताके सामने जाना उतना सहज नहीं था। महलमें प्रवेश होनेतक नानासाहबको किसी बातका भय नहीं था, पर उनको असली भय इसी बातका था कि, महलमें जाकर हम पिताजीके सामने कैसे जायँगे, और जाकर उनके सामने क्या कहेंगे। पहले पहल, किलेसे चलते समय उनसे उनकी जो बातचीत हुई थी, और फिर बादको बीजापुरमें उनसे उनका जो सामना हुआ था, वह अभीतक उनको भूला न था, और वही मौका आज फिर आ गया। फिर भी उनको यह आशा हुई कि, सैयदुल्लाखाके अबतकके सारे कार्य, और दरबारका उनका अपमान, इत्यादि बातोंकी यदि उनको याद दिला दी जायगी, और "सुलतानगढ़, राजा शिवाजीके हाथ मे जानेपर भी, वास्तवमें आपहीके हाथमें रहेगा; राजा शिवाजी आपका बड़ा आदर करेंगे, और आप ही की सलाहसे अपना आगेका सारा कार्य करेंगे, स्वराज्यकी नींव डालना आपके ही हाथमें है," इत्यादि

बातें यदि उन्हें खूब समझाकर बतलाई जायँगी, तो फिर वे कुछ भी नहीं बोलेंगे, हमारे वशमें हो जायँगे; और उनके समान स्वामिभक्त सेवक जब एक बार हमारे हाथमें आ जायगा, तब फिर स्वराज्यस्थापना के कार्यमें उनसे बड़ी सहायता मिलेगी। इस प्रकारके विचारोंने उनके मनमें बड़े-बड़े महल खड़े कर दिये थे, पर वास्तवमें उनकी नींव कितनी कमजोर है, सो उनके ध्यानमें नहीं आया था। क्योंकि नवयुवक लोग जब किसी अपनी अभीष्ट बातका विचार करने लगते हैं, तब सारे विचार उनके मनमें ऐसे ही आते हैं कि, जो उनके लिए बिलकुल अनुकूल होते हैं, और यदि कोई प्रतिकूल विचार उनके मनमें आ भी जाता है, तो उसका भय उन्हें तनिक भी नहीं मालूम होता। वे सोचने लगते हैं कि, ऐसी ऐसी कठिनाइयोंकी बात ही क्या—ये तो चुटकी बजाते दूर हो जायँगी, और हम बातकी बातमें उस व्यक्तिको मिला लेंगे। बस, ऐसे ही विचार उनके मनमें आते हैं, और उन्हींके जोरपर (वास्तविक स्थितिका विचार करके नहीं) उनके सारे व्यापार चलते रहते हैं। पर जब वे संकटोंके पास होकर गुजरने लगते हैं, तब उन्हें उन संकटोंके स्वरूपका कुछ-कुछ ध्यान होने लगता है; और जब वे उनको प्रत्यक्ष देख लेते हैं, तब उनका सच्चा महत्व भी उनके ध्यानमें आ जाता है। अस्तु।

नानासाहब अत्यन्त साहस करके भीतर पहुँचे। अप्पासाहब अभी हालहीमें सदर बैठकपरसे उठकर अपने शयनागारमें गये थे। बाहर अर्दली मौजूद था। उसने उनको पहचाना; और उनके कथनानुसार भीतर जाकर देख आया कि, अप्पासाहब क्या कर रहे हैं। मालूम हुआ कि, वे हुक्का पीते हुए, यों ही इधरसे उधर और उधरसे इधर चक्कर लगा रहे हैं। नानासाहबने सोचा कि, जब वे यों ही चक्कर लगा रहे हैं, तब अवश्य ही उनका मन चंचल अवस्थामें होना चाहिये, और शायद वह मनोचाञ्चल्य वर्तमान दशासे ही सम्बन्ध रखता होगा। उनका ऐसा अनुमान करना स्वाभाविक ही था; क्योंकि प्रत्येक मनुष्य अपनी इच्छाके अनुसन्धानसे ही सब बातोंके विषयमें तर्क किया करता

है। अस्तु। वे दरवाजे तक गये, और बड़े साहसके साथ द्वार खोलकर भीतर भी प्रविष्ट हुए। भीतर जिस समय वे प्रविष्ट हुए, अप्पासाहब उनकी ओरको पीठ किये हुए उनके प्रतिकूल दिशाकी ओर जा रहे थे। इतनेमें वे भीतर जाकर इस तरहमे खड़े हो गये कि जिससे चिरागकी रोशनी उनके चेहरेपर न पड़े। अप्पासाहब जब अपना वह चक्कर पूरा करके पीछेकी ओर मुड़े, तब उनको ऐसा भास हुआ कि, यह कोई आदमी खड़ा है। तुरन्त ही उन्होंने पूछा—"कौन है?" शीघ्र उत्तर मिला, "मैं हूँ, नाना।" फिर क्या पूछना है? ये अक्षर उनके मुखमे निकलकर अप्पासाहबके कानतक पहुँचे, और वे एकदम वहीं खड़े रह-कर बोले, "अभागा, कमबख्त, मुझपर सकट आया, घर द्वारका सत्या नाश हो गया, अब भी तुझे कल नही है? फिर भी यहाँ आया मेरे मुँहमें कालिख लगानेके लिये?" ये शब्द बड़े जारसे उनके मुखसे निकले। इन शब्दोंके निकलते समय उनका सारा शरीर थर-थर हो रहा था—जान पड़ता था कि, वे अत्यन्त क्रोधसे भर गये हैं। उनके होठ बराबर चल रहे थे, जिससे जान पड़ा कि, वे और भी कुछ कहनेवाले हैं, इसलिये नानासाहब एकदम कुछ नही बोले—कह नहीं सकते कि, वे क्यो नहीं बोले—शायद उन्होंने यह सोचा हो कि एक दफा इनको अच्छी तरह बोल लेने दें, तब हम बोलें अथवा उनको बोलनेके लिये उस समय कुछ सुझाई ही न दिया हो—जो कुछ हो, लेकिन वे वैसे ही खड़े रह गये।

परन्तु, फिर अप्पासाहबके मुखसे भी कोई अक्षर नही निकला। इतने दिनके बाद स्वय अपना लड़का आकर सामने खड़ा हो; और इतना क्रोध उसपर उसका पिता करे! ऐसा अवसर शायद ही कभी कहीं उपस्थित हुआ हो। जो हो, किन्तु उनका क्रोध उस समय विलक्षण ही दिखाई दिया। कुछ देरतक दोनों बिलकुल चुप खड़े रहे। नाना-साहब जानबूझकर नहीं बोले, और अप्पासाहब क्रोधातिरेकके कारण चुप रह गये। उनका शरीर अभीतक थर थर काँप रहा था, जिससे उनके क्रोधकी परमावधि प्रकट हो रही थी। कुछ देर बाद वे आपेमें

आये, और बोले—"तू यदि पैदा ही न हुआ होता, अथवा पैदा होते ही मर गया होता, तो मुझे क्षणभरके लिये दुःख हुआ होता, सो हुआ होता! पर तेरे जीवित रहते हुए जो मुझे यह कष्ट भोगना पड़ रहा है, इसका अर्थ क्या है? देख, तू मेरे सामनेसे चला जा। मैंने तो समझ लिया था कि, तू मर गया; और मैं सुखी था—सो वह सुख भी तुझसे देखा नहीं गया; और आकर मेरे सामने खड़ा हो गया। तू जानता नहीं है कि, तेरे कारण मुझे कितना कष्ट सहना पड़ रहा है; पर अब भी तुझको कल नहीं है। तू इतने दिनतक मेरे सामने नहीं था, इस बीचमें मुझे जो कष्ट मिला, मैं चुपके सहता गया; पर तू इतनेसे भी सन्तुष्ट नहीं दिखाई देता। शायद तूने यही सोचा है कि, बार-बार सामने आकर कुछ न कुछ बकवाद करावे; और मुझको कष्ट पहुँचावे, और फिर तू खड़ा-खड़ा सामने देख! अभागा, कमबख्त तुझसे किसने कहा था कि, तू बीजापुर मेरे पीछे पीछे जाकर अपना यह काला मुख मुझको दिखला? अपना लड़का समझकर मैंने तेरी गर्दन नहीं काटी। मोह आड़े आया। पुत्रहत्याका पाप लगेगा, यही सोचकर हाथ खींच लिया, लेकिन पुत्रहत्याके पापसे बचकर स्वामिद्रोहका महापातक मत्थे लिया, जो अबतक मेरे हृदयमें सल रहा है। जिसके यहाँ रहकर 'नमक' खाया, उसके नमककी तो याद कर। तू सोचता होगा, कि, मैं तेरा बाप हूँ, इसलिये पुत्र-प्रेमके कारणसे मैं तुझे छोड़ दूँगा पर अब तू समझ ही गया! अब मेरे पंजेमें आ गया है, अभी तुझे कैद करवाता हूँ, और सुधरनेके लिये तुझे आठ दिनकी मुहल्त देता हूँ। यदि आठ दिनके अन्दर तू ये सारे फन्द-फितूर छोड़ देगा, तब तो ठीक; नहीं तो मैं अपने हाथसे तेरी मुसकें बाँधूँगा, और बादशाहके सामने भेज दूँगा। अब तू आ गया है पंजेमें—छूट नहीं सकता! बीजापुरकी बात जाने दे—यहाँ तेरा निकलना कठिन है—अरे कौन है उधर? चलो, लाओ—हथकड़ी ले आओ।

बुड्ढा ये सब बातें कहते हुए इतना उग्र दिखाई दे रहा था, जैसे प्रत्यक्ष जमदग्निका ही अवतार हो! "लाओ—हथकड़ी ले आओ" ये

शब्द उसने इतने क्रोधसे उच्चारण किये कि जैसे कोई भारी अपराधी अचानक हाथमें पड़ गया हो, और उसीको कैद करनेके लिये हुक्म दे रहा हो। हम यदि यह कहें कि यह बात नानासाहबको मालूम नहीं थी कि, हमारे पिता इतने निष्ठुर हैं, तो यह सच न होगा, पर हाँ, इतना उन्हें अन्दाज ही नहीं मालूम था कि, उनकी निष्ठुरता इतनी तीव्र हो गई होगी। जो हो, उनके शरीरमें भी उसका कुछ न कुछ भाग आया ही था। वे भी उनकी यह दशा देखकर अत्यन्त क्रुद्ध हुए और विचार किया कि जब हमारे पिता हमारे विषयमें निष्ठुरता प्रकट कर रहे हैं, और अपने लड़केकी अपेक्षा यवनोंकी सेवा ही इन्हें अधिक प्रिय है, तब हम भी इनसे अब विशेष कुछ न कहें—हाँ, अपने आनेका उद्देश्य इन्हें स्पष्ट बतला दें, और देखें, यदि कुछ असर हो। बस, यह सोचकर वे तुरन्त ही कहते हैं, "पिताजी, कुछ तो विचार कीजिये। स्वामि-सेवा अवश्य निष्ठापूर्वक करनी चाहिये, इसके लिये कोई मना नहीं करता, पर आपकी सेवाकी कुछ कदर भी तो हो? स्वामीके कदमोंके नीचे गर्दन रखिये—हम ना नहीं कहते लेकिन अगर वह उस गर्दनको बिना कारण ही रगड़ने लगे, तो तुरन्त ही उसको खींचकर उस स्वामीको धकेल न दीजिये? देखिये, अब भी विचार कीजिये मैं आपका लड़का हूँ—यह न खयाल कीजिये कि, छोटे मुँह बड़ी बात कहता हूँ—आप ही सोचिये अब आपकी दरबारमें, या इस किलेपर ही, क्या इज्जत रह गई है? एक मामूली पियादा आता है, और किलेको अपने अधिकारमें लेकर आपको ताकमें रख देता है। आपको अपने महलके बाहर निकलनेकी भी तो स्वतन्त्रता नहीं है—ऐसी दशा हो रही है—जरा गौर कीजिये। मैं आपका अकेला लड़का हूँ—और ऐसा वैसा कह रहा हूँ—इसीपर न जाइये। मैं जो कुछ कहता हूँ, उसका एक क्षणभर—सिर्फ क्षणभर—विचार कीजिये, आपको खुद ही मालूम हो जायगा। आपके समान सच्चे स्वामिभक्त सेवक यदि किसी अच्छे राज्यमें होते, तो न जाने उनकी कितनी कदर हुई होती—अजी, यहाँ तो सारा अर्दलियोंका और कुटनियोंका कारोबार है। यहाँ आपके समान लोगोंकी

क्या प्रतिष्ठा हो सकती है ! अभीतक क्या हुई और आगे क्या होगी ! वही यदि······"

नानासाहबका उपर्युक्त भाषण बराबर अस्खलित रूपसे जारी रहा। अप्पासाहबको कई बार उनका वह भाषण बिलकुल असह्यसा मालूम हुआ, और हाथसे इशारा करते हुए वे बीच-बीचमें, अधीर होकर, अरुचि भी दिखलाते रहे; पर उनका वह भाषण बिलकुल हृदयके अन्तस्तलसे निकल रहा था—वह बीचमें काहेको रुक सकता था। वे ऐसे सपाटेके साथ बोल रहे थे कि, बीचमें कुछ कहने अथवा प्रतिरोध करनेका उनको साहस ही न हुआ और इधर नानासाहबके भाषणका प्रवाह इतने जोरसे जारी था कि, जिसकी ध्वनि सुनकर ही मानो उनको और भी अधिक जोश चढ़ता आ रहा था। बीजापुरमें जितने जोरके साथ उन्होंने अप्पासाहबके सामने भाषण किया था, उसमे कहीं अधिक जोर और जोश आजके भाषणमें था। ऐसा जान पड़ता था मानो उनको इस बातका भान ही नहीं रह गया है कि, हम क्या कर रहे हैं; और फिर जब उन्होंने देखा कि, अप्पासाहब बीचमें कुछ भी नहीं बोल रहे, तब उनको और भी अधिक जोश आया। क्योंकि उन्होंने एक प्रकारसे मानो सोचसा लिया था कि, अब यह चाहे हमारे कहनेके अनुसार राजी हों, या न हों—सुल्तानगढ़पर धावा होगा ही, और किला एक बार अवश्य जीता जायगा, इसमें सन्देह नहीं, इसलिये जो कुछ कहना हो, कह ही न लो—अब काहेको उठा धरोगे ?

"मेरे हाथोंमें हथकड़ियाँ डालते हैं ? डालिये। लेचलिये मुझे बादशाहके पास। इतनी दूर क्यों ? सच्चे बादशाह तो आजकल यहीं मौजूद हैं, वही सब कुछ कर सकते हैं, उन्हींके पास न लेचलिये ! उन्हींकी मर्जी सम्हालना आजकल स्वामिसेवाकी सच्ची कसौटी है। आजकल स्वामी वही हैं। उनपर भक्ति हुई तो मानों सब कुछ फला ! फिर बादशाहके कानमें जाते देर नहीं ! ये जाकर तुरन्त कहेंगे, "देखिये, अपने लड़केको भी पकड़कर इन्होंने कालके मुखमें देनेमें कसर नहीं की, बागी बनानेको और बगावत सिखलानेको आया था, सो स्वयं बापने लड़केको पकड़कर

मेरे हाथमें देदिया, और सिर काटनेके लिये तलवार आगे रख दी।" बस, इस प्रकारकी प्रशंसा जहाँ इनके मुँहसे बादशाहके कानमें पड़ी वहाँ फिर और क्या चाहिए? अच्छा तो कीजिए फिर, वैसा ही पिताजी! इस राजभक्तिके प्रवाहमें आप कितना बहेंगे? स्वयं अपने पेटके लड़केको, राजभक्तिकी सनकमें, बलिदान करके क्या इस किलेदारीको लेकर आप फूँकेंगे? या जलायेंगे? राजभक्ति! आपके समान राजभक्त पुरुषकी कदर करनेके लिए राजा ही दूसरा चाहिए—आप सोच देखिये। आप स्वयं राजा बनना चाहें, तो बन सकते हैं—आपकी कदर होगी—आज ही, अभी, इसी क्षण आप इस किलेके राजा बना दिये जायँगे, सिर्फ आपके मनमें आनेभरकी देरी है। सो न जाने कब आपके मनमें आयेगा! राजा शिवाजीको आपके समान एक वीर, एक गुरु, मिल जाय, तो क्या ही अच्छी बात हो—चारों ओर स्वराज्य स्थापित होनेमें फिर बिलकुल ही विलम्ब न लगे, और न कोई कठिनाई आवे। कहाँ आपका प्रभाव! कहाँ आपकी सचाई! कहाँ आपकी योग्यता! और कहाँ आपका यह अपमान! देखिये, जो लोग आपका अपमान करने खड़े हुए हैं, उनमें आपमें कितना अन्तर है! लेकिन जब आपके मनमें आजाय, तब! कुछ तो विचार कीजिए। पिताजी मैं आपका लड़का हूँ, और कुछ न कुछ बक रहा हूँ, इसपर न जाइये। आपके सामने आकर मैंने इतने उपस्करके साथ कभी बातें नहीं की थीं, पर अब मौका आ गया है, देखिये, यदि कुछ मनमें आजाय। बस, इतना ही सूचित करने आया हूँ—और कोई बात नहीं। सभी चाहते हैं कि, आप अनुकूल होजायँ। आपके अनुकूल होजानेपर फिर और क्या चाहिए? • "

अप्पासाहब—चाहे जिस कारणसे हो—बिलकुल स्तब्ध होगये। उनकी आंखोंकी पलकें भी नहीं हिलीं। बराबर जैसे खड़े थे, वैसे ही रह गये। इसकारण स्वाभाविक ही नानासाहबके मनमें आया कि, शायद हमारे कहनेका इनपर कोई न कोई प्रभाव पड़ रहा है। क्योंकि ऐसा न होता, तो वे चुप कैसे खड़े रहते। बहुत जल्द जो मनमें आता, कर डालते। इसलिये उन्होंने सोचा कि, यदि इसी प्रकार हम अपना कथन

जारी रखेंगे, तो शायद अवश्य ही हमारा कार्य सिद्ध होगा। यह सोचकर उन्हें और भी कुछ कहनेका उत्साह हुआ। इसलिए उन्होंने जतलाया कि, देखिये, यवनोंके राज्यमें हिन्दुओंकी, गोब्राह्मण इत्यादिकी कैसी दुर्दशा हो रही है, और इस दुर्दशाको दूर करनेके लिए स्वराज्यके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं है। इसके वाद फिर उन्होंने राजा शिवाजीकी सब तैयारियोंका जिक्र किया; और उनकी सारी सफलताओं-की सविस्तर कहानी, वतलाई। फिर उन्होंने यह जतलाया कि, इस समय आपके द्वारा सहायता न होगा मुसल्मानोंके द्वारा होनेवाली गोहत्या और ब्रह्महत्याका पातक जान-बूझकर अपने सिर लेना है। हमारे हाथमें साधन यदि मौजूद हैं; और जान-बूझकर यदि हम उनका उपयोग नहीं करते, तो इन पापोंका भागी कौन होगा? आपको कुछ तो करना चाहिए। वे जब इस प्रकार कह रहे थे, ऐसा जान पड़ा कि, उस बुड्ढेके मनपर सचमुच ही कुछ न कुछ प्रभाव हुआ। क्योंकि उनकी बातें सुनते हुए ही ऐसा जान पड़ा कि, बुड्ढेके चेहरेपरकी कठोरता कुछ कमसी हुई है। यही नहीं, वल्कि चिरागकी रोशनी पड़नेपे ऐसा भी प्रकट हुआ कि, उनकी आखोंमें कुछ पानीसा झलक रहा है। परन्तु इतनेमें उन्होंने अपना मुँह फेर लिया; पीठ भी फेर ली; और वहाँसे वे आगेको चल भी दिये। कह नहीं सकते कि बुड्ढेके मनमें क्या विचार आरहे थे; पर हाँ, इतना अवश्य हुआ, कि उसके चेहरेकी कठोरता कम होकर उसमें मृदुताकी झलक दिखाई देने लगी; और इतनेहीमें ऐसा भी समझ पड़ा कि जैसे आँसूकी एक बूंद उसके सिकुड़े हुए गालोंपर टपक आयी हो। नानासाहबका कथन अभी जारी ही था। उन्होंने समझा कि, हमारे कथनका इनपर अवश्य प्रभाव पड़ा है, और इस कारण उन्हें कुछ कुछ आनन्द भी हुआ। पर इतनेहीमें क्या चमत्कार हुआ कि, अप्पासाहब एकदम मुड़ पड़े; और उनके बिलकुल पास आकर कुछ विचित्र चेष्टा वनाकर और एक विचित्र ही आवाजसे वोले, "जा, जा। अब अधिक मत वोल। और मुझे मोहमें डालनेकी आशासे मेरे हाथमें भयंकर पाप मत करवा। जा, तुझको जो कुछ करना हो, कर! मैं तो

अपनेको स्वामिसेवाके लिए समर्पित कर चुका हूँ। स्वामिद्रोहका कार्य मुझसे त्रिकालमें भी नहीं होसकता। एक क्षण—एक ही क्षणके लिये मैं मोहमें आनेवाला था, पर सम्हल गया। तू जो कुछ कहता है, वह यद्यपि सब सही है, फिर भी स्वामिद्रोह स्वामिद्रोह ही है। उसके लिये कारण कुछ भी हो, परन्तु इसमें उसका भाग नहीं जासकता। उसमें जो पाप लगेगा, सो भी वही रहेगा, और उसके लिये ईश्वरके घरमें जो दण्ड मिलेगा, उसमें भी कुछ अन्तर न पड़ेगा। जा, तेरे लिये इतना निमित्त तो है, कि तूने कभी स्वामीसेवा स्वीकार नहीं की है, ऐसी दशामें यदि कदाचित् तेरे हाथसे कुछ हो भी जायगा, तो स्वामिद्रोहका अरे रे रे! यह मैं क्या कह रहा हूँ? कभी नहीं। तू क्या करेगा, सो मालूम होते हुए भी तुझको यों ही छोड़ देना—वह भी एक स्वामिद्रोह ही है। ऐसा होते हुए भी मैं इसी मुँहसे तुझे सब कुछ करनेकी स्वतन्त्रता दे रहा हूँ? शिव! शिव! इसी घड़ीमें—इसी क्षणमें मुझे तुझको खासाहबके हाथमें देदेना चाहिये। कमसे कम तुझे कैद तो अवश्य ही कर रखना चाहिए। चुप, चुप रह। अब ऐसी अडबड बातें कहकर मेरे कान अपवित्र मत कर। तू अपने साथ मुझे भी पापमें मत फँसा। तू बड़ा ही कुलांगार निकला। मुझको मोहमें डाल रहा था, और दोनों ही मिलकर बहत्तर पीढ़ियोंके लिये अच्छी ही जगह ढूँढ़ रहे थे। अरे रे रे। मेरे कान इतनी देरतक तेरी बातें सुनते रहे, और फिर भी चुप रहे, इससे तो—ये बधिर क्यों न होगये? चुप, चुप। एक अक्षर भी अब मत बोल और न इस जगहसे हिलकर कहीं जानेकी इच्छा कर। यदि की, तो मैं तेरे ऊपर हथियार चलानेमें भी कसर नहीं करूँगा। नीच लोगोंके कहनेमें आकर तू ऐसे फन्दमें पड़ गया, इससे तो मर गया होता, तो बहुत अच्छा होता। बन्दर कहींका! तेरे समान बन्दरोंके हाथसे यदि स्वराज्य स्थापित होनेका होता तो फिर कहना ही क्या था? तुम लोग गरीब बेचारोंको कष्ट देते हो, उनको लूटते हो, खून करते हो, डाके डालते हो; और स्वराज्य स्थापित करनेको गप्पें मारते हो। बादशाही राज्यमें कुछ भी उपद्रव तो कर लो, फिर देखो मजा—कैसी तुम्हारी हड्डी पसली

तोड़ी जाती हैं! कहाँ बादशाही राज्य, और कहा तुम बन्दरोंका यह प्रयत्न!"

"रामचन्द्रने रावणका राज्य बन्दरोंके ही प्रयत्नसे पाया था!" नानासाहब बीचमें ही तिरस्कार युक्त वाणीसे बोल उठे।

फिर क्या कहना! प्रज्वलित की हुई चितामें मानो तेलका पीपाही भभका दिया गया। वे क्रोधसे हाथ उठाकर एकदम उनकी ओर दौड़ पड़े, और अब मारनेहीवाले थे कि, इतनेमें सैयदुल्लाखा और उसके पीछे-पीछे और भी चारपाच आदमी यह चिल्लाते हुए भीतर आये— "अजी, अप्पासाहब, अप्पासाहब! अरे मेरी जान...अरे यह क्या, तोबा! तोबा!" अप्पासाहब कुछ भी नहीं समझ सके कि, क्या बात है, सैयदुल्लाखा इस प्रकार यहाँ क्यों आया। परन्तु हाँ, उसको देखते ही मानों उनको और भी अधिक स्फूर्ति आगई, और वे एकदम बोल उठे—"अजी खासाहब। देखो, यह मेरा कमबख्त—यह नमकहराम, यह स्वामिद्रोही। इसको अपने हाथमें लीजिये। आप..."

परन्तु इतनेहीमें बाहर इतना कोलाहल मच गया कि, उसको देखनेके लिये स्वयं अप्पासाहबको बाहर आना पड़ा।

तैंतीसवां परिच्छेद

किलेपर गड़बड़ी

अप्पासाहबने बाहर आकर क्या देखा, सो तो हम पीछे बतलावेंगे। इसके पहले इस बातका खुलासा हो जाना चाहिये कि, महलके बाहर क्या-क्या घटनाएँ हो रही थीं; और सैयदुल्लाखाँ उनके पास इस प्रकार घबड़ाया हुआ दौड़कर क्यों गया था। पाठकोंको याद होगा कि, जब नानासाहब किलेके ऊपर आये; और किलेदारके महलोंकी ओर मुड़ पड़े तब इसका समाचार सैयदुल्लाखाने अपने किसी आदमीके द्वारा सुना, और एकदम क्रोधमें आकर उसने अपने आदमी—बल्कि अपने पासके सभी आदमी—एकके बाद एक भेज दिये गये कि जाओ, देखो,

यह कौन आया है, और उसको पकड़ लाओ। इतना करनेके बाद वह स्वय वहासे उठा, और चलना ही चाहता था कि, इतनेमे किसीने एक जबरदस्त धक्का लगाकर उसको नीचे गिरा दिया। यह कोन व्यक्ति था, जिसने उसको धक्का देकर गिराया, इसका अनुमान पूर्ण रूपमे पाठकोंको अवश्य ही हो गया होगा। इसके सिवाय, धक्का लगते ही खाँसाहब गिर पड़े, और उस समय यह देखकर कि, वह धक्का किसने उनको लगाया, उनकी क्या दशा हुई होगी, उसका भी अनुमान पाठक भलीभाति कर सकते हैं। उनके शत्रुने उसको धक्का देकर गिरा दिया, और उसकी छातीपर पैर रखकर बोला, "ऐ दुश्मन, अब मे तेरे आज-तकके सम्पूर्ण कर्मोंके लिये प्राणान्त प्रायश्चित देकर तेरे रक्तसे स्नान करूँगा, पर इसके लिये अभी ठीक आधे पहरका अवकाश है। मैं नहीं चाहता कि, लोग मुझे कहें कि, मैने तुझको अकेला पाकर अचानक तेरा खून किया। इसीलिये फिर तुझको आधे पहरके पहले ही चितावनी देता हूँ। तू अब मेरे हाथसे छूट नही सकता। मुझको तू अपने लिये प्रत्यक्ष शैतान ही समझ। इसलिये कहीं भागनेका प्रयास मत कर। तू अब बच नही सकता। इसलिये, अब तू अपनी नमाज पढ़। परमात्मा-की प्रार्थना कर। कृतकर्मों पर पश्चात्ताप कर। और जो चार घड़ी तुझे मिली है, उनको पश्चात्ताप तथा प्रार्थनामे लगाकर खुदाकी इबादतमें खर्च कर। तू अब छूट नहीं सकता। व्यर्थके लिये आशा रखकर कदा-चित् तू प्रयत्न करेगा, पर कोई लाभ नही होगा। तेरे पापके घड़े अब भर गये हैं। तू उबर नही सकता। तेरे इतने ही पाप काफी है। अब यहाँ "या अल्ला! या खुदा!" करते हुए बैठ ......"

वह जिस समय यह सब कह रहा था, उस समय सैयदुल्लाखाँ नीचे पड़ा हुआ बराबर थर-थर काँप रहा था। आँखें खोलकर देखना भी उसके लिये मुशकिल हो रहा था। उसकी घबड़ाहटका कुछ ठिकाना न था। उसके होंठ फड़फड़ा रहे थे, जिससे ऐसा जान पड़ता था कि, वह कुछ कहना चाहता था, पर मुँहसे बोल नहीं निकल रहा था। साँस भी बहुत धीरे-धीरे निकल रही थी।

उपर्युक्त वचन कहकर, उसकी छातीपर पैर रखनेवाले उस महाशयने एकबार अत्यन्त तुच्छ दृष्टिसे उसकी ओर देखा; और पैरके अँगूठेसे ही उसको ठुड्डीको टोंचकर कहा, "उठ, अब उठ, और जो कुछ मैंने बतलाया, उस काममें लग।" इतना कहकर वह तुरन्त ही वहाँसे चला गया।

सैयदुल्लाखाने ज्यों ही देखा कि, उसकी छातीपरका बोझा निकल गया, त्यों ही उसने कुछ देर इधर-उधर टटोला, और जब उसको विश्वास हो गया कि, अब वह यहाँ नहीं है, तब धीरेसे आँखें खोलीं; और उसे निश्चय हुआ कि, सचमुच ही अब वह यहाँसे चला गया। इससे उसे कुछ धैर्य आया, और फिर वहाँसे चुपके उठा। इतनेमें बाहरकी ओरसे कुछ गड़बड़ी मचनेकी आवाज उसके कानोंमें आई। देखता है, तो उसके आदमी, जिनको उसने उक्त व्यक्ति (नानासाहब) का पता लगानेके लिये भेजा था, किलेदारके महलके दरवाजेके पास दंगा कर रहे हैं। पहरेदार उनको भीतर नहीं आने दे रहे हैं, और वे लोग भीतर जानेके लिये बराबर उपद्रव मचा रहे हैं। अप्पासाहबके आदमियोंको यह भलीभांति मालूम था कि, भीतर कौन व्यक्ति गया है, इसके सिवाय यह बात भी वे जानते थे कि, सैयदुल्लाखाके आदमी यदि भीतर पहुँच जायंगे, तो ये नानासाहबके साथ कैसा व्यवहार करेंगे। इसके सिवाय अप्पासाहबके वे आदमी स्वयं उनसे भी अधिक नानासाहबपर प्रेम रखते थे, और इस कारण स्वाभाविक ही वे सैयदुल्लाखाँके आदमियोंको भीतर नहीं जाने दे सकते थे। कुछ पहरेदार सिपाही तो उनमें ऐसे भी थे कि, जो नानासाहबको बचानेके लिये अपनी जानपर भी खेल जा सकते थे और उसमें भी सैयदुल्लाखाके सिपाहियोंने उनका मुकाबिला था, कि जिनके विषयमें किलेका प्रत्येक आदमी पूरा-पूरा असन्तुष्ट हो रहा था। ऐसी दशामें, फिर क्या कहना है? सैयदुल्लाखाने ज्योंही देखा कि, हमारे आदमियोंको महलके अन्दर घुसने नहीं दिया जा रहा है; और बराबर झगड़ा जारी है, त्यों ही उसने समझ लिया, कि अवश्य ही यह कुछ बगावतका मामला है। इसलिये

उसने सोचा कि, थोड़ी देरके इस लड़ाई-झगड़ोंसे क्या लाभ ? अब तो एकदम ही हमारे सब सिपाही ऊपर आनेवाले हैं, और उनके आ जानेपर इन सबको खूब ही दुरुस्त करेंगे। यह सोचकर वह बड़े जोरसे अपने आदमियोंको वापस बुलाने लगा। परन्तु वे आदमी तो खूब झगड़नेमें लगे हुए थे, वे कहाँ उसकी बात सुनते। हाँ, उनमेंसे एक आदमीने अवश्य ही उसकी पुकार सुनी। वह झगड़नेमें कुछ कच्चा था। इसके सिवाय, जो बात उसने सुनी थी, उसे अत्यन्त महत्वपूर्ण समझकर खाँसाहबको शीघ्र ही बतलाना भी आवश्यक समझता था, इसलिए वह वहाँसे चल दिया, और उनके पास आकर उसने वह समाचार बतलाया। वह यही था कि नानासाहब आया हुआ है, और अपने पिताके पास जाकर कुछ गुप्त मन्त्रणा कर रहा है। यह समाचार उसने सुना और उसके कान एकदम खड़े हो गये। अभी पाव घड़ी भी नहीं हुई थी कि, उसका भयकर अपमान हो चुका था, और उसने उसे भयकर चितावनी भी दी थी, पर उपर्युक्त समाचारके सुनते ही वह सब भूल गया, और एकदम बड़े घमण्डमें आ गया! उसने सोचा कि, हमारे सिपाहियोंके ऊपर आनेका समय अब बिलकुल निकट है, शीघ्र ही वे सब आते होंगे, और जहाँ वे आ गये कि, बहुत जल्द हम इन दोनो पिता पुत्र—को, तथा बेगमको भी, कैद कर लेंगे, और बादशाहके सामने पेश करके प्रत्यक्ष दिखला देंगे कि देखो, यह किलेदार कितना दगाबाज है, और फिर ऐसे मनुष्यका पक्ष लेनेवाले रणदुल्लाखाँकी स्वामिभक्तिका भी परदा खोल देंगे। अहा! उस समय फिर हमारा कार्यभाग कितना सहज हो जायगा! बादशाह तो बिलकुल हमारी मुट्ठीमें ही आ जायगा। इस प्रकारके स्वप्न सुखका अनुभव करनेमें वह निमग्न हो गया। उसके पीछे पिशाचकी तरह उसका शत्रु लगा हुआ था, और अभी हालहीमें वह उसे फिर भी चितावनी दे गया था, सो भी उसे याद था—परन्तु फिर भी वह इस घमण्डमें भूला हुआ था कि, वह हमारा क्या कर लेगा ? हमारे सिपाही अभी किलेपर चढकर आते होंगे, हम तुरन्त ही उसको तलाश करायगे, और सबके देखते-

देखते वृक्षमें गलफाँस लगाकर मरवा डालेंगे, अथवा हाथीके पैरमें बाँधकर उसे बीजापुरतक ले जायगे ! इस प्रकारकी शेखी वह मन ही मन मारने लगा। यही नहीं, वल्कि इनमेंसे कुछ वातें उसने अपने उस आदमीके सामने भी प्रकट की। इससे उसे भी वड़ा जोश हो आया; और वह इधर-उधर देखने लगा कि, हमारे नीचेके आदमी कव आते हैं। खाँसाहवने उससे कहा कि जाओ, किलेदारके दरवाजेके पाससे अपने आदमियोंको बुला लाओ। मालिकका हुक्म पाकर वह जाने लगा, इतनेमें मालिक कहता है कि, अच्छा न जाओ; और फिर वापस वुलाता है ! वेचारेको क्षण क्षणपर यही मालूम हो रहा था कि, यह चला जायगा, तो फिर हम अकेले ही रह जायंगे, और शायद फिर न वह हमारा शत्रु हमारे सामने आकर खड़ा हो जाय ! अस्तु उसकी डेवढ़ीपर जो पहरेदार थे, उन्होंने भी जव सुना कि, किलेदारके दरवाजे-पर भीड़ एकत्र हो रही है, और मारपीट जारी है, तव वे भी अपना अपना काम छोड़कर चलते बने, और उसी गड़बड़ीमें जाकर शामिल हो गये। ऐसी दशामें उसने सोचा कि, अव हमारे पुकारनेपर कोई आवाज देनेवाला भी नहीं है, इसीलिये वह उस आदमीको जाने नहीं देता था। परन्तु उसने सोचा कि, अव इसमें क्या लाभ है कि, हम इसको यहीं-पर रखकर परस्पर एक दूसरेका मुँह ताकते रहें? यह सोचकर उसने निश्चय किया कि, अव हमारे लोग चूँकि घडी-आधी घड़ीमें ही आने-वाले हैं, इसलिये आओ, हम भी तवतक अपने ही लोगोंके पास चलकर यह समय व्यतीत करें। यह निश्चय करके वह तुरन्त ही उठा; और अपना चोगा पहना। सव पोशाक पहन लेनेके वाद हथियारवन्द होकर वह वाहर निकल पड़ा। वाहर निकलते समय उसने इधर-उधर, चार तरफ, नजर डाली—कोई कोनेमें तो नहीं वैठा है, किवाड़के पीछे तो छिपा हुआ नहीं खड़ा है—इस प्रकारको शंका करते करते वह वाहर निकला। दरवाजेके वाहर निकलकर जव उसने देखा कि यहाँ एक भी सिपाही या पियादा नहीं रह गया है, तव उसको वड़ा क्रोध आया; पर मुगलोंका जमाना तो था ही, उसमें व्यवस्था और टीपटाप ज्यादासे

आती। जलते-भुनते खॉसाहब बाहर निकले, और अपने सब लोगोंको गालियाँ बकते हुए क़िलेदारके महलकी ओर चले। परन्तु इतनेमें, नजदीकके बुर्जपर जो सिपाही था, उसने यह खबर दी कि, ऐसा जान पड़ता है, कि कोई बहुतसे लोग आ रहे हैं। इस खबरको सुनते ही उनकी खुशीका पारावार न रहा! उन्होंने समझा कि, अब हमारा उद्देश्य पूर्णतया सफल हुआ, अब विलम्ब नहीं है, हमारे लोग आये, और सब काम बन जायगा! बस, इसी खयालमें डूबकर वे अपने उन लोगोंको, जो महलके दरवाजेपर लड़ रहे थे, और भी अधिक गालियाँ देने लगा। इसके सिवाय, उसने यह भी सोचा कि, आज नानासाहब भी यहीं मौजूद हैं, और पिता-पुत्र, दोनों भीतर बैठे हुए गुप्त विचार कर रहे हैं—अब उन दोनोंका कैद करके मैं कृतकृत्य होऊँगा। यह सोचकर वह जल्दीसे महलकी ओर गया, और अप्पासाहब, नाना-साहब तथा अन्य सभी लोगोंको उसने ऐसी ऐसी गालियाँ बकनी शुरू की कि जिनका कुछ कहना ही नहीं! साथ ही वह अपने लोगोंसे बार-बार यह कहने लगा कि, "देखो, तुमलोग अभी इसी प्रकार लड़ते झगड़ते रहो, लेकिन जब मैं इशारा करूँ, तब तुरन्त ही, पीछे न हटते हुए, दरवाजा तोड़कर भीतर घुस पड़ो, और उन राजद्रोही विश्वास-घातियोंको अपने हाथसे छुटने मत दो।" उसने कहा कि, इन हराम-खोरोंको पकड़कर, मुसकें बाँधकर, ले चलो, और बादशाहके सामने खड़ा करके इनकी खूब बेइज्जती करो, इनको गधेपर सवार करके निकालो और मरवा डालो। इस प्रकारका जब अनर्गल भाषण जारी हुआ, तब और लोगोंको भी अच्छा मौक़ा मिला। वे खूब शोरगुल मचाकर दगाफिसाद करने लगे। इतनेमें बुर्जपरके पहरेदारने फिर खबर दी कि, लोगोंने किलेके सामने आकर सांकेतिक शब्दका उच्चा-रण किया, और पुल लगानेको कहा, तथा और भी कुछ इशारे बत-लाये। फिर क्या था, तुरन्त ही भीतरका अर्गल निकाल लिया गया, दरवाजा खुल गया, और खन्दकके ऊपरका पुल भी लगा दिया गया। तुरन्त ही इधर-उधर गड़बड़ी मच गई, लोग खन्दक पारकर आये,

और दरवाजेसे भीतर घुसे। बातकी बातमें उन्होंने पहरेदारोंको कैद करके उनके हथियार छीन लिये ; और कहा कि, देखो तुम चिल्लाना-चिल्लाना नहीं, जहाँ जरासा चिल्लाये कि, फिर तुम्हारा कुशल नहीं। यह कहकर उन्होंने उनकी मुसकें बाँध दीं , और अपने आदमी वहाँ तैनात करके आगे बढे। बस यही हाल उन्होंने सब दरवाजोंपर किया। इस प्रकार करते-करते वे लोग एकदम ऊपर पहुँच गये। अब सैय-दुल्लाखाँको मालूम हुआ कि, हमारे लोग आ गये, अतएव उसके आनन्दका ठिकाना न रहा। उसने सोचा कि, अपने लोगोंसे अब खुश-दिलीका बर्ताव करके उनके द्वारा इतना काम तो अभी करा लो , और बाकी फिर देखा जायगा। अतएव ज्यों ही उसने लोगोंको ऊपर आते हुए देखा, त्यों ही उनको लेनेके लिये वह आगे बढ़ा। उसको क्या मालूम कि, किलेपर आनेवाले इन लोगोंने सब दरवाजोंके पहरेदारोंको बाँधकर अपने पहरेदारोंको रख दिया है? उसने सोचा था कि, आगे बढ़कर हम इनमेंसे तीन चौथाई लोग तो बेगमके महलके चारों ओर लगा दें ; और एक चौथाई, नानासाहब तथा अप्पासाहबको पकड़नेके लिये, उनके महलपर धावा बोल दें इस प्रकार अपना निश्चय स्थिर करके वह बेचारा उन लोगोंके स्वागतके लिये आगे बढ़ा ; और अपने सिपाहियोंके अध्यक्षका नाम लेकर पुकारा। उसकी आवाज सुनते ही, ऊपर आनेवाले लोगोंमेंसे, एक नन्हेंसे सिपाहीराम उसके आगे आये ; और बोले "क्यों जी, खाँसाहब, मुझेकु लायक बुलाते?" इस प्रकार टूटी-फूटी 'हिन्दुस्तानी' बोलकर वह छोटासा छोकरा सिपाही जोर-जोरसे हँसने लगा!

यह देखते ही खाँसाहब क्रोधसे लाल हो गये, अथवा आश्चर्यसे चकित हो गये—यह मानो वे खुद ही समझ नहीं सके। हमने पुकारा किसको था ; और यह एक छोटासा लड़का ढाल-तलवार सजाये हमारे सामने आकर खिलखिल हँस रहा है! उन्होंने समझा कि, शायद हमारे सिपाहियों ही में से किसी का ढीठ छोकरा होगा ; अतएव वे बड़े जोरसे झोंककर उसकी ओर दौड़े। यह देखकर वह लड़का और भी हँसने

लगा, साथ ही साथ और भी लोग हँसने लगे। परन्तु "यह हँसनेका समय नहीं है, अब मशालें जलाकर आगे बढ़ो"—यह इशारा किसी गम्भीर ध्वनिवाले पुरुषकी ओरसे एकदम मिला, जिसे पाते ही एकदम सौ पचास मशालें जल गईं, और खाँसाहबको विश्वास हो गया कि, ये हमारे सिपाही नहीं हैं, उसी शैतानकी सेना है, जो हमें पकड़ने आई है। उन सैनिकोंके शरीरपर कमलीको छोड़कर और कुछ भी नहीं था—हाँ, हाथमें भाला और कमरमें तलवार, तथा कितनोंहीके हाथमें लम्बी-लम्बी बन्दूकें थीं। इसके अतिरिक्त सिपाहियोंकी और कोई भी शान अथवा निशानी नहीं थी। यह है क्या? ये कौन लोग हैं? खाँसाहबको सोचनेकी जरूरत ही न पड़ी। उन्होंने तत्काल समझ लिया कि, आज इतने दिनसे हमारा जो दुश्मन हमारे ऊपर दाँत लगाये हुए है, वह सचमुच ही शैतान है, और उसीने यह सेना अपने राज्यसे लाकर हमारे सामने खड़ी की है। बस, यह सोचकर वह तुरन्त ही लौट पड़ा; और दौड़ता हुआ अपने उन आदमियोंके पास गया कि, जो अप्पासाहबके दरवाजेपर अबतक झगड़ा-फिसाद मचा रहे थे। उसके पीछे पीछे हमारा वह सिपाही यह कहता हुआ चला—"अबे बड़े सिपाहीके छोरे, क्या भाग जासी म्होरे, और उसके पीछे भी कुछ मावले गये। खाँसाहबका अपेक्षित 'दीन' शब्द न जाने कहाँका कहाँ गया, और उसकी जगहपर "हर हर महादेव" की ध्वनि आकाशमें गूँजने लगी। खाँसाहबने ताड़ लिया, कि हो न हो, यह कोई बागियोंका मामला है। अप्पासाहबके छोकरेने अपने आदमी नीचे लाकर छिपा रखे होंगे, और आप स्वयं अपने पिताका समाचार देनेके लिये पहले आ गया होगा। निस्सन्देह, पिता-पुत्रकी सलाहसे ही यह काम हुआ है। वह अप्पासाहबके महलके पास जा पहुँचा, और उसके पीछे-पीछे वे लोग भी जा पहुँचे। अब वह क्या करे? उससे कुछ करते-धरते नहीं बना, वह बिलकुल घबड़ा गया। बेगमके लोगोंसे उसे कुछ सहायता मिल ही नहीं सकती थी, क्योंकि उनसे उसने पहले ही द्रोह कर रखा था। फिर भी चाहे इस समय वह उनके पास सहायता माँगनेके लिये अपना कोई

आदमी भेजता, तो कोई काम भी नहीं हो सकता था ; क्योंकि पहले तो अब आदमी ही काहेको जाता ; और यदि जाता भी, तो इस बातका विश्वास कहाँ था कि, बेगमके आदमी उसको सहायता करनेके लिये उसके पक्षमें आवेंगे ? जो हो, इसी प्रकारके सोच-विचारमें वह पड़ा था कि, इतनेमें मावलोंने उस महलको चारों ओरसे जाकर घेर लिया ; और उसके नामसे एकदम गुल-गपाड़ा मचाने लगे—चारों ओरसे यही आवाज आने लगी कि, "सैयदुल्लाखाँ कहाँ है ? उसको जल्दी लाओ—हमारे हाथमें दो !" इधर उसका नाम ज्यों-ज्यों निकलता, त्यों त्यों उसकी घबराहट और भी बढ़ती जाती ; और महलके पहरेदारोंको भी चूँकि मालूम न था कि, यह क्या मामला है ; अतएव वे भी अब झगड़ेसे बाज आये। यह मौका पाकर वह और उसके चार आदमी भीतर घुस गये। भीतर जाकर उन्होंने देखा, और क्या बात हुई, सो पिछले परिच्छेदमें पाठकोंसे प्रकट हो चुका है।

चौंतीसवां परिच्छेद

प्रभु भक्तिकी पराकाष्ठा

सैयदुल्लाखाँ किसी शरणापन्न व्यक्तिकी भांति दीन और दुःखी हो रहा है; और अप्पासाहब अत्यन्त आदर और आग्रहके साथ उसने अपने लड़केको कैद करके बादशाहके सम्मुख उपस्थित करनेकी प्रार्थना कर रहे हैं, खासाहबके लोग भी घबड़ाये हुए उसके पीछे खड़े हैं, और बाहर "हर हर महादेव !" "हर हर महादेव !" तथा "भवानी माताकी जय !" "भवानी माताकी जय !" का लगातार जयघोष हो रहा है ! सम्पूर्ण स्थिति अत्यन्त विलक्षण दिखाई दे रही थी। यह सारा गोलमाल जब अप्पासाहबके कानोंमें आया, तब क्रोधके मारे उनका मस्तिष्क इतना फिर गया कि वे बिल्कुल पागलकी भाँति दिखाई देने लगे, और एकदम तीरकी तरह वे बाहरको लपके। दरवाजेपर आकर देखते हैं, तो उनको बाहर निकलनेकी भी साख नहीं है। सम्पूर्ण महलके

आसपास कमलीधारी वीरोंका घेरा पड़ा हुआ है, और दरवाजेके सामने एकदम सैयदुल्लाखाकी पुकार मची हुई है। उसे सुनकर बुड्ढा दरवाजे के बाहर आया, और उन लोगोंको मनमानी गालियाँ देने लगा। उनकी गालियोंसे गुस्सेमें आकर एक आदमी आगे बढ़ा; और अब उनपर आक्रमण करने ही वाला है कि, इतनेमें पहलेकी ही उस धीर-गम्भीर वाणीसे ये शब्द सुनाई दिये:—"हाँ! वे कुछ भी कहते रहें, उनपर आक्रमण न किया जाय, उनके बालको भी धक्का न लगाया जाय। सबसे पहले सैयदुल्लाखाको पकड़ो। चुपके आत्मसमर्पण न कर दे, तो निस्सन्देह शस्त्रप्रहार करो। क़िलेपर जितने हिन्दू हों, उनका तभी प्रतिरोध करो, जब वे जान बूझकर दगा करें, और यदि वे कुछ भी न बोलें, तो उनपर भी शस्त्र न उठाओ। हाँ, यदि वे चुप न रहें, व्यर्थके लिए हमारा प्रतिरोध करें, तो फिर लाचारी है। अप्पासाहब! अब आप एक ओर हट जायँ, और हमको रास्ता दे दें, इसीमें कुशल है। उस दुष्ट मनुष्यको शरण देना उचित नहीं है—उसके दुष्कर्म क्या आपको मालूम नहीं हैं? वह यदि बीजापुर-दरबारमें न होता, तो बीजा-पुरके बादशाहकी ऐसी दुर्दशा न होती!" ये धीर और गम्भीर वाणीसे उच्चारण किये हुए शब्द ज्यों ही अप्पासाहबके कानमें पड़े, त्यों ही—न जाने क्यों—उनकी बड़ी ही विचित्र सी दशा हो गई। यह पुरुष, जो बोल रहा है, कौन है? उसको देखनेके लिए मानो उनके नेत्र बिलकुल उत्सुकसे दिखाई पड़ने लगे। क्षणमात्रके लिये उन्होंने विचार किया; और फिर एकदम पहले ही की भाँति सन्तप्त होकर कहते हैं, "जान पड़ता है, राजा शहाजीकी शुभ कीर्तिमें कालिमा लगानेवाला, उनकी प्रभुभक्तिमें कलंक लगानेवाला कुलांगार तू ही है! तू इधर आया क्यों? मेरा कमबख्त अभागा लड़का बागी हो गया—इसी कारण तो? लेकिन तू अच्छी तरह समझ ले कि मेरा कमबख्त—अरे रे रे! अब उसे 'मेरा' कहनेमें भी लाज आती है—यद्यपि वह बागी हो चुका है; और उसको मेरे पास भेजकर यद्यपि तूने मुझे भी फोड़नेके लिए काफी प्रयत्न किया है, फिर भी तू यह आशा मत रख कि, मैं एक क्षणभरके लिये भी तेरे

पक्षमें आ मिलूँगा—हाँ, इस किलेको भले ही तू एकबार इधरसे उधर उठाकर रख लेनेकी आशा कर, पर मेरे मिलनेकी आशा तू नहीं कर सकता। मेरे अभागे (पुत्र) की भाँति तू चार कमबख्त छोकरोंको इकट्ठा करके स्वराज्य स्थापित करनेको चला है। बस, एक इसी किलेको ले लेनेसे काम चल जायगा? मेरे घरमें एक अभागा कुलांगार उपजा, पर सभी किलेदारोंके घरमें ऐसे ही अभागे नहीं उपजे हैं। सभी इस प्रकारकी बगावत—नमकहरामी—नहीं करेंगे। तू कहता है, सैयदुल्लाखाँको मेरे हाथमें दे दो; वह दुष्ट है, होगा दुष्ट—लेकिन मेरे यहाँ तो राजदरबारसे मेहमानके तौरपर आया है। जब तक मेरे इस जर्जर शरीरमें प्राण हैं, तबतक तो तू उसे अपने हाथमें पानेकी आशा नहीं रख सकता। तू समझता क्या है? यही नहीं,—" आगे वह बुड्ढा और भी कुछ कहनेवाला था, पर फिर नहीं बोला। क्योंकि जिसको सम्बोधन करके वह यह सब कह रहा था, वह पुरुष—ऐसा उसे भास हुआ—कि किसी दूसरी तरफको चला गया; अथवा यह भी सम्भव है कि, बुड्ढेके मनमें कोई दूसरा ही विचार आ गया हो। जो भी कुछ हो—वह आगे बोला नहीं, किन्तु अपने आदमियोंको पुकारने लगा। अप्पासाहब जोर जोरसे लगातार अपने सिपाहियोंको बुला रहे हैं, इतनेमें दरवाजेके सामने खड़े हुए उन लोगोंके पीछेसे, अप्पासाहबको पुकारकर, उनका एक बाहरका सिपाही कहता है—"महाराज चारों ओर नाकेबन्दी हो गई है। सारी पलटन इन्होंने रोक रखी है। हमारे हथियार भीतर बन्द हैं। यह कहकर कि—जबतक तुम हमपर आक्रमण नहीं करोगे, हमारे कार्योंमें बाधा नहीं दोगे, तबतक हम तुम्हारे बालको भी धक्का नहीं लगावेंगे—ये लोग हमको पकड़ रहे हैं; और हमारे हथियार छीन रहे हैं। सब बुर्जोंपरके सिपाहियोंको इन्होंने इसी प्रकार कैद कर लिया है; और उनको निःशस्त्र करके अपने आदमियोंको तैनात कर दिया है। रसद-गल्ला, हथियार-वथियार कुछ भी हमारे हाथमें नहीं रखा है।" यह सुनते ही अप्पासाहबके क्रोधकी सीमा न रही! वे इतने क्रुद्ध हुए कि, कुछ पूछो मत! और एकदम बोले, "अच्छा रोओ,

... नाखो रोओ! चूड़ियाँ पहनो। चोगे चढ़ाओ। हमारे हम छिजड़े ... बनो तुमसे और क्या होगा! हरामखोरो, घूस खाकर नागी बन बैठे ... और उनके हाथमें दे दिया—अब हमारे सामने आगे हो गए रोना रोने! जिसने नमकहरामी की! उसी कमबख्त अभागेने तो! आह! मैं यदि इसका प्राण ले लूँ—तो क्या पुत्रहत्याका पातक मुझे लगे? नहीं—कभी नहीं। जिसने स्वामिद्रोह किया, पितृद्रोह किया, विश्वासघात किया, उसको मार डालनेमें तो पुण्य ही होगा! यही नहीं, बल्कि अन्य भी किसी भयंकर हत्याका पाप यदि होगा, तो वह भी मिट जायगा। इस बातका मुझे पक्का विश्वास है। अच्छा। देखता हूँ।' इतना कहकर अप्पासाहब लौट पड़े। फिर बाहरसे "सैयदुल्लाखाँको हमारे हाथमें दो।" की चिल्लाहट हुई। उसे सुनकर अत्यन्त तिरस्कार-पूर्ण चेष्टासे उन्होंने एक बार उन लोगोंकी ओर देखा, और फिर सदर बैठकपर आ गये। देखते हैं, तो सैयदुल्लाखाँ वहाँ बिलकुल गौ बनकर बैठा हुआ था। उसने एकबार फिर सुना कि लोगोंने उसके नामसे पुकार की, और चिल्लाये कि "सैयदुल्लाखाँको हमारे हाथमें दे दो!" यह सुनकर बेचारा बहुत ही घबड़ा गया और उनको सामने देखते ही बोला "अप्पासाहब, अब मेरी रक्षा आपहीके हाथमें है। मैंने आजतक आपके अनेकों अपराध किये। आपको कष्ट पहुँचानेके लिए बहुत प्रयत्न किये। ऐसी दशामें आपके सामने मेरी याचना कैसे सफल होगी! किन्तु फिर भी मैं याचना करता हूँ—आप चाहे जो करें—लेकिन उस शैतानके इन दूतोंके हाथसे मुझे बचावें मैं आपकी शरण आया हूँ। मैं यदि बच गया, इन दुष्टोंके हाथमें न पड़ा, तो अवश्य ही आपका कोई न कोई कल्याण करके ही रहूँगा किसी न किसी उपायसे आप मुझे किलेके नीचे मेरे सिपाहियोंके समीप पहुँचा दें। मैं उनके पासतक पहुँच जानेपर फिर क्षणभर भी यहाँ न ठहरूँगा, सीधा बीजापुर चला जाऊँगा। आप यदि चाहें, तो यह बात हो सकती है। नहीं तो वह शैतान—वह शैतान—मेरे प्राण लिये बिना आज न रहेगा। अभी वह मुझे चितावनी दे गया है।"

"वह शैतान ? कौनसा शैतान ? कौन वही मेरा कमबख्त ? वही तुमसे कह गया है, कि प्राण लूँगा ? मेरा कमबख्त ? मेरा ? छिः अब फिर यदि ये दो अक्षर मेरी जीभपर आवेंगे, तो मैं जीभ ही काट डालूँगा। वह चाडाल, वह कुलागार, जिसने पितृद्रोह, स्वामीद्रोह किया, उसको अब फिर मेरे घरको अपवित्र न करना चाहिए। लाओ रे मेरी तलवार! या तो मैं ही मर जाऊँगा—या इसीको मारूँगा। आह ? आह! ईश्वरने मुझे ये दिन दिखानेको क्यों रखा ? हमारी सत्रह पीढ़ियोंमें भी ऐसी नीचता, ऐसी नमकहरामी, कभी न हुई होगी—और आज मेरी इन आँखोंसे देखते हुए! न जाने ऐसे मैंने कौनसे पाप किये हैं कि, जिनका फल मैं यह भोग रहा हूँ! यदि मैं पुत्रमोहको आज छोड़ दूँगा, तभी इन पापोंका क्षालन होगा, अन्यथा नहीं होगा। लाओ लाओ, मेरी तलवार—ले आओ। मैं उसकी हत्या करता हूँ, नहीं तो उसके हाथसे पितृ-हत्या ही कराता हूँ। वह मुझे मारे, नहीं तो मैं उसे मारकर अपनेको मरवाता हूँ। लाओ लाओ, कोई न कोई हथियार इस समय लाओ—नहीं तो उसका सिर्फ गला ही दाबकर मैं प्राण लिये लेता हूँ—आह!" इतना कहकर वे बड़े जोशके साथ, बिलकुल पागलकी भाँति, एकदम अपने लड़केकी ओर दौड़ पड़े। सचमुच ही उनका पित्त भड़क उठा; और उन्होंने नानासाहबकी गर्दनमें हाथ डाल दिया। इतनेमें उनके नौकरोंने, जो वहाँ मौजूद थे, उनको एक ओर हटा दिया; और नानासाहबसे बाहर जानेकी प्रार्थना की। सैयदुल्लाखाँ बिलकुल दीन होकर अप्पासाहबकी ओर देख रहा था। उसका चित्त न जाने कैसा हो रहा था। वह आँखें फिरा फिराकर चारों ओर देख रहा था। इसके बाद उनसे फिर एक बार उसने प्रार्थना की कि, किसी न किसी तरह, बेगमके लोगोंकी सहायतासे मुझे आप नीचे पहुँचाइये, और अपने लोगोंसे मिलने दीजिये। अप्पासाहबने इसे स्वीकार किया; और कहा कि; "मैं अपने प्राण रहतेतक तुम्हारी रक्षा करूँगा, तुम चलो।" इतना कहकर उन्होंने अपनी युद्धकी वर्दी पहनी, अपने हथियारोंको खूब मजबूतीके साथ बाँधा; और बायें हाथसे सैयदुल्लाको पकड़कर

दरवाजेके बाहर निकल पड़े। दरवाजेपर जो लोग जमा थे, उनकी ओर एक तुच्छ दृष्टिसे देखा, और कहा—"अरे, ये सैयदुल्लाखाँ मेरे साथ हैं। मै इनको नीचे लेजाकर इनके आदमियोंके पास पहुँचाऊँगा, और फिर तुम्हारे साथ भिड़नेको लौट आऊँगा। अब मैं इनको लिये जाता हूँ—जिसका साहस हो, वह आगे बढे। और पहले मुझपर वार करे, मुझे मार डाले, और तब इनके शरीरमें हाथ लगावे। देखता हूँ अब कौन माईका लाल है!" ये शब्द सुनते ही और सैयदुल्लाखाँको उनके हाथमें देखते ही, तीन व्यक्ति एकदम जोशमें आकर आगे बढे, और बाकी बिलकुल क्रुद्ध होकर जोर जोरसे उसके नामका हल्ला मचाने लगे। परन्तु इतने हीमें पीछेकी ओरसे कुछ इशारा हुआ, लोग तुरन्त ही दोनों ओरसे कुछ कुछ हट गये, उन्होंने अप्पासाहबको सैयदुल्लाखाँ-के साथ निकल जानेका रास्ता दे दिया। वे बीचसे निकले जा रहे हैं, परन्तु किसीने भी उनका किसी प्रकारसे प्रतिरोध नहीं किया। यही नहीं, बल्कि खाँसाहबके जो वे पाँच-सात आदमी थे, उनको भी शस्त्र रख देनेके लिये लाचार किया, और कहा कि, तुम भी अपने मालिकके पीछे पीछे चले जाओ। वे भी चले गये। उन बेचारोंको क्या मालूम कि, नीचे उनके लिये क्या तजवीज हो चुकी है। उन्होंने देखा कि, चलो, अच्छा हुआ, हम भी छूट गये। वे बड़े आनन्दित हुए। अधि-काश लोगोंने हथियार रख देनेमें कुछ भी आनाकानी नहीं की। हाँ, एकने कुछ तेजी दिखलाई, और जहाँ एक मावलेने उसके जरा भाला टोंचा, कि वह भी रास्तेपर आ गया, और हथियार रखकर लम्बा हुआ।

इधर बेगमके सिपाहियोंको अभीतक यह भी नहीं मालूम हुआ था कि, यह क्या गड़बड़ी मची हुई है। पाँच-सात आदमी पहरेपर थे। उन्होंने कुछ पूँछ ताँछ की, तो दो एक मराठोंने—तानाजी वहीं कहीं खास तौरपर खड़े थे, सो उन्होंने विशुद्ध हिन्दुस्तानीमें उनसे कहा, "सैयदुल्लाखाके आदमी ऊपर आ गये हैं, और वे जबरदस्ती तुम्हारी बेगमसाहबाको यहाँसे भगा ले जानेके विचारमें हैं। इस समय वे किले-दारकी पतोहूके लिये शोरगुल मचाकर उसीके महलमें घुसना चाहते हैं।

।

सम्हालो। तुम अपने आदमियोंको जगाओ, और होशियार हो जाओ। सैयदुल्लाखाँ बेगमसाहबापर बहुत दिनसे दाँत लगाये हैं। और आज तुम्हारा रक्तपात करके उसको यहासे ले जायगा। तुम यहासे एक आदमीको भी हटने मत दो। उसके सिपाही अब उस महलकी ओरसे तुम्हारे ही महलपर धावा बोलेंगे।" बस, इतना कहकर तानाजीराव वहासे चलते बने। सैयदुल्लाखाँका यह विचार उन सभीको मालूम था। इसलिये उनका उपर्युक्त कथन उनको बिलकुल सत्य जान पड़ा। मशालोंके उजेलेमें उनको आदमी जरूर दिखलाई दिये, लेकिन उनकी वर्दी मुगल सिपाहियोंके समान न थी, बल्कि केवल कमली लपेटे हुए ही सब आदमी थे। इससे एकने कुछ शंका भी प्रकट की, तब दूसरेने कहा कि, अच्छा, दो आदमी जाकर ठीक-ठीक बातकी जाँच कर आवें। इतनेमें एक दूसरा ही कहता है—"अजी, जानेमें क्या धरा है? बद-माशोंने जान-बूझकर तमाशा बनाया होगा। वह हरामखोर सब कुछ कर सकता है। देखो न, हमारे खाँसाहबको कर्नाटक कैसे भेज दिया! उनके जानेकी क्या जरूरत थी? झूठा स्वाग रचा। अब हमारा कर्त्तव्य यही है कि, हम होशियार रहें। वहाँ जाकर देखनेकी क्या जरूरत है?" एक और उससे कुछ विरुद्ध कहने लगा, और आपसहीमें उनमें बातचीत शुरू हो गई। इतनेमें एक मनुष्यको, जिसे सैयदुल्लाखाने फोड़ लिया था, पश्चात्ताप हुआ, और वह अचानक ही बोल उठा "अजी यारो, सैयदुल्लाखाँ, बेगमसाहबाके विषयमें, अवश्य ही दुष्ट उद्देश्य रखता है। वह मुझे कल ही फोड़नेका प्रयत्न कर रहा था। मुझसे कहा था कि, मैं तुम सबको शराब पिलाकर बेहोश कर दूँगा। लेकिन मैंने स्वीकार नहीं किया।" यह अन्तिम वाक्य उसका मिथ्या था। वास्तवमें वह फूट गया था। लेकिन वह कुछ कर नहीं सका, और अब, जब कि उसने अपने मित्रोंकी बातें सुनीं इसके सिवाय यह भी सोचा कि, सैयदुल्लाखाँ अभी आकर शायद हमसे प्रेमसे बोलेगा; और यह बात ये हमारे साथी ताड़ जायंगे, तब उसने, खोलकर ऊपरकी बात कही। इसपर एकने उससे पूछा कि, पहले ही क्यों न बतलाया? उसने

कहा कि, मुझे इसमें कोई तत्व नहीं मालूम हुआ था। यह सुनकर सबने उन्हें गालियाँ देना शुरू किया। अस्तु। उन लोगोंमें जब कि यह चर्चा चल रही थी, उधरसे ऐसा जान पड़ा कि, किलेदारके महलकी ओरसे वे लोग अब उनके महलकी ओर चल पड़े हैं। यह देखकर उन सबको भी विश्वास हो गया कि, सचमुच ही इस समाचारमें सत्यता है। तुरन्त वे अपने अपने हथियार बाँधकर खड़े हो गये। वे लोग भी उधरसे आ गये। नानासाहब आगे थे। तानाजी उनके साथ थे। नानासाहबने जोरसे बेगमके सिपाहियोंको पुकारकर कहा, "भाइयो, तुम यदि चुपकेसे अपना सारा तवाजमा यहाँसे उठा ले जाना चाहते हो, तो चले जाओ। तुमसे कोई नहीं बोलेगा। लेकिन अगर तुम दगा-फिसाद करोगे, तो व्यर्थमें मारे जाओगे। यह किला अब अप्पासाहबके अधिकारमें नहीं। अब यहाँ वह पुरानी हुकूमत नहीं। रणदुल्लाखाँ एक भलामानुस है, उसके आदमियोंको विशेषत. स्त्रियोंको, हमारी ओर-से कुछ भी कष्ट नहीं दिया जायगा। तुमको मैं एक घड़ीका अवकाश देता हूँ। बस, इसी अवकाशके अन्दर तुम महलको खाली करके एक-दम चले जाओ। ऐसा न करना चाहो, तो अभी हथियार रखकर चुप बैठ जाओ। जब सुविधा देखो, तब चले जाओ। लेकिन किलेपर अब पुराना शासन नहीं है, यह खूब ध्यानमें रखो।" नानासाहबके इस कथनका तात्पर्य एकदम किसीके ध्यानमें नहीं आया। रणदुल्लाखाँको भलामानुस बतलाकर यह व्यक्ति हमसे सामोपचारका भाषण कर रहा है, यह क्या बात है? वे बड़े चमत्कृतसे दिखाई दिये। परन्तु उनमें दो एक जो कट्टर थे, वे क्रुद्ध होकर आगे आये, और अकड़कर बोले, "हम यहाँसे जा नहीं सकते, और न हथियार ही रखेंगे।" एक बोला, "हम तुम्हारा सब कपट जानते हैं। हमको महल छोड़नेमें फँसा कर तुम अचानक हमपर हल्ला करना चाहते हो।" यह जिसने कहा, उसकी आवाज जैसे नानासाहबने पहले कभी सुनी हो, ऐसा जान पड़ा; और इसलिये उसको देखनेके उद्देश्यसे उन्होंने ध्यानपूर्वक अपनी नजर डाली, पर कोई दिखाई न दिया। नानासाहब फिर कुछ कहनेवाले थे;

इतनेमें फिर वही मनुष्य, बड़े जोशके साथ अपने साथियोंसे कहता है, "अरे यारो, जो समझा था, वही निकला। मैं अनेक संकट सहकर, कपटके द्वारा, जिसके पंजेसे छूटकर, यहाँ तुमसे आ मिला, वही यह दुष्ट है। हमारे खाँसाहबका यह पक्का दुश्मन है। यह सैयदुल्लाखाके ही मेलका है। देखते क्या हो, आओ! बोल दें इसपर धावा!"

यह कहते समय नानासाहबको उसकी सूरत दिखाई दी। यह देखकर वे कुछ आश्चर्यितसे दिखाई दिये, परन्तु फिर एकदम क्रुद्ध होकर वे उसकी ओर टूट पड़े। दोनों ओरसे हथियार बजने लगे। इतनेमें अप्पासाहब ऊपर आये, और वह युद्ध देखकर सन्तुष्ट हुए। उन्होंने पहले ही समझा था कि, रणदुल्लाखाके सिपाही चुप नहीं रहेंगे, वे जरूर मोर्चा लेंगे; और ऐसा ही हुआ। इसलिये उस लड़ाईको देखकर उनको काफी जोश आया और वे रणदुल्लाखाके सिपाहियोंको उत्साह दिलाते हुए स्वयं भी उन्हींके बीचमें घुस पड़े। यह एक छोटीसी लड़ाई बिलकुल अचानक ही छिड़ गई। नानासाहबके खयालमें भी नहीं आया था कि, ऐसी कोई लड़ाई छिड़ जायगी। उन्होंने समझा था कि, किला अब अपने हाथमें आ ही गया, किन्तु पिता-पुत्रका सामना अवश्यम्भावी था।

पैंतीसवां परिच्छेद।

लड़ाईके होते हुए दूसरी ओर।

नानासाहबने ज्यों ही देखा कि, हमारे पिता युद्धमें घुस पड़े, त्योंही उनके हाथ-पैर बिलकुल ढीले होगये। उन्होंने देखा कि हमको अपने पिताके विरुद्ध शस्त्र ग्रहण करके, उन्हींके हाथसे, उनके अधिकारका किला हस्तगत करनेमें सहायता देनी पड़ी, यही नहीं, बल्कि स्वयं उनसे सामना करनेको भी समुपस्थित होना पड़ा, अतएव उनको अत्यन्त ही विषाद हुआ; और वे पीछे हट गये। उनका हाथ आगे न चलने

लगा। परन्तु केवल उन्हींपर तो वह लड़ाई अवलम्बित नहीं थी। लड़ाईका प्राण कोई दूसरा ही था। नानाजीने जब देखा कि, रणदुल्लाखाके सिपाही बड़ी वीरतासे मुकाबला कर रहे हैं, तब उन्होंने श्यामाको अन्य दो सवारोंके साथ सूर्याजीके पास सहायक सेना लानेके लिए भेजा। अप्पासाहब तो अपनी उस वृद्धावस्थामें भी केवल जमदग्निसे ही दिखाई दे रहे थे—वे बराबर मराठोंको नमकहराम, मातृद्रोही, पितृद्रोही, राजद्रोही, विश्वासघाती, इत्यादि-इत्यादि अनेक पदवियोंसे विभूषित करते हुए उनपर गालियोंकी पुष्पवृष्टि कर रहे थे। और नानासाहबपर तो उस वृष्टिकी ऐसी कुछ तीव्र बौछार पड़ रही थी, जिसका कुछ पूछना ही नहीं! "वह अभागा यदि मारा जाये, तो हमें बड़ा सुख हो, किसी न किसीकी तलवार उसे लगे!" यहाँतक उद्गार उनके मुखसे निकल रहे थे। ये सब बातें देखकर नानासाहबका धैर्य और भी गलित होगया। क्षणभरके लिये उनके मनमें यह भी आया कि, हम नाहक इस झगड़ेमें पड़े—न पड़े होते, तो अच्छा होता। स्वय पिताजी हमको ऐसे शाप दे रहे हैं! यह हमारे लिये अच्छा नहीं। स्वय लड़ाईके मौकेपर ही जब ये विचार मनमें आगये, तब हाथपैर कहाँतक काम देवें? वे चुपके एक एक कदम पीछे ही हटते गये। और अन्तमें लड़ाईके स्थानसे बिलकुल अलग जा पड़े यह मौका देखकर किसीने पीछेसे बिलकुल अचानक—उनके बिल्कुल असावधान और विमनस्क होते हुए—तल्वारका वार किया, जो बिलकुल उनके मर्मस्थानमें ही बैठा। नानासाहब चक्कर खाकर एकदम धरामसे नीचे गिर पड़े। उनके नीचे गिरते ही वह व्यक्ति, कि जिसने उनपर वार किया था एकदम उनकी छातीपर चढ़ बैठा, और बोला, "ऐ दुश्मन, में कितना खुशनसीब हूँ कि, अन्तमें मेरा इरादा पूरा हुआ, और तेरे कलेजेका खून पीनेके लिए मैं आगया। याद करले, तू भी बीजापुरमें इसी प्रकार मेरी छातीपर चढ़ कर मेरे प्राण लेनेको तैयार था! बस उसी समयसे मैंने पक्की प्रतिज्ञा कर ली थी कि, म तेरे कलेजेका खून पिऊँगा। ऐ दुश्मन तेरी औरतको मुसलमानोंने भ्रष्ट कर दिया है, और इसीलिये क्या तू मेरी फातिमा को भगा

लाया है ? उसीको उड़ा लेनेके लिए तू मेरा खून करना चाहता था ? तूने मेरे साथ इतना ही सलूक नहीं किया; वल्कि अन्तमें मेरा बड़ा भारी अपमान भी किया। उस छोकरेने मुझे स्त्रियोंका लहँगा पहनाकर तेरे हाथमें दे दिया। तूने मुझे तुच्छ दृष्टिसे देखा; और यह सोचकर कि, चूड़ी पहनने वाले और लहँगा पहनेवाले खोजेपर शस्त्र कौन चलावे, तूने मुझे उसी पोशाकमें कैदखानेमें डलवा दिया। पर मैं भी कैसा उस्ताद निकला कि, तेरे आदमियोंकी आँखमें धूल झोंककर भाग आया। सूर्याजीका दल चला ही आया था, इसलिये मुझे अच्छा मौका मिल गया; और मैं सीधे किलेतक पहुँचकर अपने खासाहवके लोगोंमें आ मिला। मुझे कोई भी पकड़ नहीं सका। कल ही मैं यहाँ आगया। लेकिन तुझ मुर्देको इन सब बातोंसे क्या मतलब ? मुर्दा नहीं तो क्या ? अब तू मुर्दा ही है; और यदि अभी नहीं हुआ, तो अब देख मैं तुझे शीघ्र ही मुर्दा किये डालता हूँ; और अपनी फातिमा तथा उसकी मालकिनको वहकालनेका बदला लेता हूँ ! देखूँ, अब तुझे कौन छुड़ाने आता है ?" यह कहकर उसने नानासाहबका कँधा पकड़कर खूब दबाया—मानों उनका वध करनेके पहले वह उनको होशमें लाकर यह जतलाना चाहता था कि, देख, अब तू यह मरा ! कन्धा हिलाते ही नानासाहबने "घर्र-घर्र करके एक प्रकारकी विचित्र आवाज की—अथवा यों कहिये कि वैसी आवाज उनके गलेसे निकली। अतएव यह समझकर कि, अभी यह जीरहा है, अहमद (यह दुष्ट पुरुष अहमद ही था, सो उपर्युक्त भाषणसे पाठकोंके ध्यानमें आगया होगा) ने भुजाली लेकर उनके गलेमें भोंकनेके लिए हाथ उठाया। एकक्षणभर—एक ही क्षण भरका यदि विलम्ब हो जाता, तो उनका काम तमाम होजाता। पर इतनेमें "खुदा ! खुदा" कहते हुए अहमदने अपने बायें हाथसे, जो कि अभीतक उनके कन्धेको दबाये हुए था, अपने कटे हुए दाहने हाथको पकड़ा ! किसी जबरदस्त आदमीने पीछेसे तलवार चलाकर उसका वह दाहना हाथ, जिसमें वह भुजाली पकड़े हुए था, बड़ी सफाईसे उड़ा दिया ! और जैसा कि हमने ऊपर बतलाया, वह 'खुदा खुदा' करते हुए अपने दूसरे हाथसे अपना

कटा हुआ हाथ पकड़ता है, इतनेमें एक जबरदस्त वार उसकी गर्दनपर हुआ, जिससे वह एकदम उलटकर धड़ामसे नीचे गिर पड़ा।

वर्णन करनेमें तो यह घटना बहुत बढ़ गई, पर वहाँ इतनी देर नहीं लगी, बहुत थोड़े समयमें ये सब काम हुए। अब उस पुरुषने, जिसने अहमदपर वार किया था, देखा कि, अहमद उलटकर गिर पड़ा, अतएव वह तुरन्त ही आगे आया, और अहमदकी टाँगे पकड़कर खींचते हुए उसे एक तरफ लेजाकर डाल दिया। सच पूछिये तो एक ढारको भी किसीने सावधानीसे ही डाला होता, पर बेचारे अहमदकी इससे भी बुरी गति हुई। उसको एक तरफ खींचकर डाल देनेके बाद वह पुरुष नानासाहबके पास आया, और अँधेरेमें ही उसने उनके हृदयको टटोला, उनकी नाकमें हाथ लगाया। इसके बाद वह वहाँसे उठा, और अहमदके पास गया। उसके भी हृदयपर हाथ लगाकर देखा, नाकमें भी हाथ लगाया। इतनेमें अहमद अपने गलेको घर्र घर्र करके कुछ कहनेका प्रयत्नसा करने लगा, पर बोल उसके मुँहसे नहीं निकला। इससे उस पुरुषको स्पष्ट मालूम हो गया कि, यह पापी अभी जीवित है। और कदाचित् फिर उठे, और उनकी ओर जानेका प्रयत्न करे, अतएव इसको पूरा-पूरा घायल कर देना चाहिये—जानसे मारनेकी ही कोई विशेष आवश्यकता नहीं। बस, यही सोचकर उसने उसके दोनों पैरोंपर गहरे वार किये, और इसके बाद फिर वह वहाँसे आदमियोंको लानेके लिए चला कि, जिससे नानासाहबको उठवाकर सुरक्षित स्थानमें लेजावें। वह अभी सौ कदम भी नहीं गया होगा कि इतनेमें उसे मालूम हुआ कि उसी ओरसे कोई किलेपर चढता हुआ आ रहा है। इसके साथ ही साथ चूड़ियोंके खनकनेकी आवाज उसके कानोंमें आई। इतनी रातको किलेके सीधे मार्गसे नहीं, किन्तु एक दूसरे ही रास्तेसे, और स्त्रियाँ ऊपर चढ़ती हुई आ रही हैं—यह मामला क्या है ? उसको बड़ा आश्चर्य हुआ, और सोचनेपर कुछ ध्यानमें न आया। वह कुछ ठहर गया। इतनेमें ये शब्द उसके कानोंमें पड़े—"क्यों बाईसाहबा, तुमने तो कहा, रास्ता भूल गई। अजी, ऐसे कौनसे चार-पाच बरस होगये, जो रास्ता

भूल जातीं ? देखो, जिस रास्तेसे तुमको उतार ले गई थी, उसी रास्तेसे आज ऊपर ले आई। लेकिन इतना आग्रह करके इस समय तुम आई क्यों ? यहाँ तो अभी भारी उपद्रव मचा हुआ है, ऐसे समयमें तुम्हारे आनेका काम क्या था ?"

"मेरा काम ! मेरा काम !—देखना अब मेरा काम, मालूम हो जायगा !"

"मैं नहीं समझी।"

"अब समझ जायगी। अरी पगली, मेरा ऐसा ही कुछ काम है ! मुझे मालूम नहीं है, वे इधर आये हैं ?"

'हाँ, यह तो मुझे मालूम है, लेकिन तुम इतनी रातको क्यों आई ?"

"उनके साथ लड़नेको—नहीं तो—अरी ! देख तो, इधर यह कौन पड़ा हुआ है—कोई पड़ा जरूर है। पर कौन ? अवश्य ही कोई वीर...।"

परन्तु इतनेमें उस वीर पुरुषके मनमें, जो वहीं खड़ा हुआ उन दोनोंकी बातें सुन रहा था, न जाने क्या विचार आया, कि वह एकदम अपनी गम्भीर वाणीसे उन स्त्रियोंसे बोला, 'हाँ, हा यह एक वीर पुरुष ही पड़ा हुआ है, और इसको जिसने विश्वासघात करके गिराया है वह उस तरफ मरा पड़ा है। तुम कोई बड़ी शूरवीर और साहसी स्त्रियाँ हो; और इस किलेसे परिचित भी दिखाई देती हो, अतएव तुम इसी वीर पुरुषके पास बैठो, और मैं इतनेमें दो तीन आदमियोंको तथा एक मशाल लिये आता हूँ। तब हमलोग इस घायल वीरको किसी सुरक्षित स्थान पर ले चलेंगे, और इसको होशमें लानेका प्रयत्न करेंगे। वह अभी अच्छी हालतमें है। घबड़ाना नहीं और यहांसे टलना नहीं।"

ऐसा जान पड़ा कि, जैसे उस पुरुषकी आवाज उन स्त्रियोंने कहीं सुनी थी। क्योंकि उसको सुनकर वे विशेष चमत्कृत नहीं हुईं। परन्तु अब वे इस गोलमालमें पड़ीं कि, जिस पुरुषके पास बैठनेके लिए इसने हमसे कहा, वह वीर पुरुष वास्तवमें है कौन ? वे बड़ी चिन्तामें पड़ीं। एकके मनमें कुछ विचित्र ही विचार आया; और बिल्कुल भयभीत

वाणीसे उसने अपने उस विचारको दूसरीसे प्रकट भी किया, जिसमे वह भी कुछ घबराई, और फिर उससे बोली, "नहीं, नहीं। बाई साहबा ऐसा नहीं हो सकता। तुम ऐसी शका क्यों करती हो? मन जो कुछ सोचता है, सो दुश्मन भी नहीं सोचता। ऐसा ही है।" यह कहकर वह नीचे झुक झुककर देखने लगी। लेकिन उजेला तो था ही नहीं। जो कुछ था, सो सिर्फ चाँदनीका था। उतने उजेलेसे वह कुछ नहीं जान सकी। परन्तु जब कोई आकृति मनमे समा जाती है, तब फिर वही चारो तरफ दिखाई देने लगती है—यही कारण शायद हो, अथवा, कह नही सकते, अन्य कोई कारण हो—किन्तु उस स्त्रीके मनमे ऐसा ही कुछ विचार आया कि, जिस पुरुषकी मूर्तिका वह ख्याल कर रही है, उसीकी मूर्ति, उस जगह, उस समय, उस हालतमे पड़ी हुई है। उसका उक्त विचार अब दृढ होने लगा, और ज्यो ज्यों उसका वह विचार दृढ़ होने लगा, त्यो-त्यो, ऐसा जान पड़ा कि, उसकी यह उत्कण्ठा भी बढ़ने लगी कि, जिस तरह हो, वह दूसरी स्त्री नीचे झुककर न देखे और हमारे मनका विचार उसके ध्यानमे न आने पावे। वह दूसरी स्त्री बार बार झुककर देखना चाहती, पर ज्यो ही वह झुकनेको होती, त्यों ही वह पहली स्त्री उससे कोई बात छेड़कर उसका मन दूसरी ओर आकर्षित कर लेती। उस पड़े हुए वीर पुरुषका श्वास बराबर चल रहा था, और स्पष्ट सुनाई भी दे रहा था। इसके सिवाय बीच बीचमें वह कभी-कभी अपने हाथ भी उठा उठाकर पटक देता था। परन्तु हाँ अभीतक उसने कोई शब्द उच्चारण नही किया था। उन स्त्रियोंकी बातचीत हो रही थी, और उपर्युक्त विचार भी उनके मनमें आ रहा था, इतनेमें उसका कराहना एकबार उनके कानमे पडा, जिसे सुनते ही एक स्त्री, अपना कुछ कानसा लगाकर, एकदम उसकी ओर चली। इतनेमें मानो उसके कानोमें ये शब्द पड़े—"कौन है यह? अप्पासाहब?" इन शब्दोंका उसे केवल भास मात्र हुआ था कि, एकदम वह आगे बढी, और उस पुरुषके पास जाकर ध्यानसे देखने लगी, तथा देखकर तुरन्त ही बोली, "अरी, देखरी! वही है, वही! अब मैं

क्या करूँ ? कहा था कि, साथ रहकर लड़ूँगी, पर यहाँ यह अनर्थ ! अरी जा, दौड़, देख, वह पुरुष शायद श्यामाका मामा ही है—उसे गये कितनी देर हो गई, अभीतक मशाल लेकर नहीं आया ; और न कोई आदमी ही आया। जा, दौड़ती जा। और थोड़ासा पानी और दिया भी लेती आ। जा—जल्दी।"

वह यह कह ही रही थी कि, इतनेमें उसके कानोंमें ऐसी कुछ आवाज आई कि; जैसे उधर, एक तरफ कोई व्यक्ति मौतके बिल्कुल अन्तिम खुर्राटे भर रहा हो! उसे सुनकर वह दूसरी स्त्री घबड़ाती हुई सी कहती है, "बाईसाहबा, मैं तुमको इस प्रकार कैसे छोड़ जाऊँ ? मैं नहीं जाऊँगी; तुम अकेली हो!"

"अरी पगली, देख इधर, इनके प्राणोंको क्या हो रहा है ? ऐसी दशामें मेरी चिन्ता क्यों ? मुझ अभागिनीको क्या ? जा ! जा। अब देर न कर।"

उस दूसरी स्त्रीने फिर कुछ नहीं कहा। तुरन्त ही चली गई। इधर इस स्त्रीकी दशा बिल्कुल पागलकीसी हो गई—उसे सूझ ही न पड़ने लगा कि, क्या करे और क्या न करे। इतनेमें उसे याद आया कि, वह जहाँपर बैठी है, उससे कुछ ही दूरपर पानीके एक सोतेका कुण्ड है। उस कुण्डके ध्यानमें आते ही वह एकदम उठी ; और दौड़ती हुई उस कुण्डकी ओर गई। किलेकी जानकारी उसे पूरी पूरी थी, अतएव वह अचूक रीतिसे उस सोतेके ही पास जा पहुँची। सोतेका वह कुण्ड कुछ गहरा था, किन्तु इसकी उसे कुछ भी कठिनाई मालूम नहीं हुई। उसने बहुत जल्द कुण्डमें झुककर अपना अंचल भिगोया ; और फिर उसी प्रकार खूब प्रयासपूर्वक झुककर एक अँजुली पानी भी भर लिया ; और ऐसी युक्तिके साथ अँजुलीको ऊपर निकाला कि, जिससे एक बूँद पानी भी नीचे गिरने नहीं पाया। इसके बाद वह ऐसे धीरे-धीरे पैर रखती हुई चली, जैसे काँचकी फर्शपर चल रही हो। उसका सारा चित्त उस वीर पुरुषकी ओर लगा हुआ था ; और यह सोच रही थी कि, यह अँजुलीका पानी कब जाकर मैं उनके मुखमें डालूँ; और इस भीगे हुए

अचलसे कब उनके नेत्रोंमे पानी लगाऊँ और उनको होशमें लाऊँ। प्रत्येक क्षण उसे युग युगकी भाति बीत रहा था। एक कदम रखकर वह दूसरा कदम इस उत्साहसे रखती कि, अब जल्द ही मैं उनके पास पहुँचती हूँ। इस प्रकार चलते-चलते वह उसी वीर पुरुषके पास आई। इसके बाद उसने अपनी अँजुलीका पानी ज्योंही उनके मुखमें डालनेके लिये अँजुल बढ़ाई, त्यों ही अत्यन्त क्षीण आवाजसे ये शब्द उसके कानोंमें आये—"पानी। पानी। कोई पानी दो।" यह सुनते ही उसे अत्यन्त हर्ष हुआ। तुरन्त ही उसने उनके मुखमें पानी डाला इसके बाद वह भीगा हुआ अचल उसने उनकी आँखोंमे लगाया, और मस्तक पर रखा। ठण्ढक पहुँचते ही "अहा हा!" यह शब्द उनके मुखसे निकला, जिसे सुनते ही उस स्त्रीको अत्यन्त सन्तोष हुआ। इसके बाद वह यह सोचने लगी कि, अब और क्या करूँ कि, जिससे इनके मनको आराम मालूम हो, फिर उसने सोचा कि, देखो, हमने दासीको भेजा, और पुरुषको गये तो बडी देर हो गई, पर अभी दोमेंसे कोई भी नही लौटा। यह बात सोच ही रही थी कि, इतनेमें दो-तीन मशालें और चार-पॉच आदमी आते हुए उसे दिखाई दिये। इससे स्वाभाविक ही उसके मनमें आया कि, हो न हो, ये वही मनुष्य हैं, जो हमारे पास आ रहे हैं, और वह अपना अचल बार-बार उस पुरुषकी ऑखों-पर रखती और उठाती हुई उस ओरको देखने लगी। इतनेमें उसे क्या भास हुआ कि, जैसे मृत्युकालके समान किसीको हुचकी आ रही है; और वहीं थोड़े अन्तरपर कोई अन्तिम खर्राटे भर रहा है। इसके बाद वह यह सोचती हुई कि, देखा, अब सब मालूम हो जायगा, उन मशालें लानेवाले लोगोंकी प्रतीक्षा करने लगी। इतनेमें वे सब लोग आ गये, जिनमे उसकी दासी थी, और वह पुरुष भी था कि, जो उन दोनोंको पहले उस वीर पुरुषके निकट बैठाल गया था। उन लोगोंके आते ही और मशालका उजेला पड़ते ही उस लेटे हुए पुरुषकी सूरत उन स्त्रियों-की नजरमें पड़ी। उसको देखते ही एक स्त्री उनमसे एकदम रोने लगी, पर दूसरीने उसका समाधान किया। इसके बाद उस साथवाले पुरुषने,

जो उन्हें बैठाल गया था, उनसे प्रार्थना की कि, "अब इनको महलके अन्दर कहीं न कहीं ले चलना चाहिये। मैं इनको ले चलकर वहाँ पौंढ़ा दूँगा ; और तुम इनकी सेवा करो।" वे स्त्रियाँ भी—वे कौन थीं, सो अब पाठकोंको बतलानेकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती—यही चाहती थीं। उस पुरुषका—यह पुरुष कौन है, सो भी पाठकोंको मालूम हो गया होगा—यह हुक्म होते ही दो आदमी आगे आये; और नानासाहबको उठाकर महलकी ओर ले चले। मशालवाले आगे चल रहे थे। उनके पीछे वे स्त्रियाँ, फिर दूसरे दो आदमी और सबके पीछे कमली लपेटे हुए शिवबा चल रहा था। इतनेमें उन पीछेवाले दो आदमियोंका ध्यान मरणासन्न अहमदकी ओर गया ; और तुरन्त ही उनके मनमें आया कि, इसी हरामजादेने नानासाहबकी ऐसी दशा की—फिर क्या कहना है? तुरन्त ही उनमेंसे एक आगे बढ़ा और बोला, "ऐ सुअर, जा। अब एकबार अपने खुदाके पास जा। तू यदि शीघ्र नहीं जा सकता, तो मैं तुरन्त ही तुझे भेज दूँ!" यह कहकर उसने उस मृतवत् पड़े हुए अहमदके शरीरमें एक लात मारी। यह देखते ही शिवबा तुरन्त उसको मना करते हुए कहता है—"जीवा, देख—ऐसी बात मैं कभी, कभी भी—पसन्द नहीं करूँगा, तूने यह काम बड़ा बेजा किया। चाहे मुसल्मान हो चाहे हिन्दू—मरणावस्थामें सब बराबर ही हैं। सभीको उस समय शान्ति और पवित्रताकी आवश्यकता होती है। मान ले कि, तू ही कभी मरनेपर आ जाय ; और उस समय कोई मुसल्मान आकर तेरे एक लात जमा दे, तो तुझको कितना बुरा मालूम होगा? बस, ऐसी ही इसकी दशा समझ। अब जा। उसके पास बैठ और मैं भी बैठता हूँ। चल, इस मरणावस्थामें जो कुछ सुख उसे मिल जाय, वह हम लोग उसे देवें।"

यह सुनकर जीवाको बहुत ही आश्चर्य हुआ। ऐसे हरामजादेके पास जाकर हम बैठें! लेकिन देखते हैं, तो शिवबा सचमुच ही उसके पास जाकर बैठ जाता है; और जीवाको दूसरी ओर बैठनेको कहता है। इसके बाद, एक और आदमी, जो उसके साथ था, उसको पानी लाने-

अचलसे कब उनके नेत्रोंमे पानी लगाऊँ और उनको होशमें लाऊँ। प्रत्येक क्षण उसे युग युगकी भांति बीत रहा था। एक कदम रखकर वह दूसरा कदम इस उत्साहसे रखती कि, अब जल्द ही मैं उनके पास पहुँचती हूँ। इस प्रकार चलते-चलते वह उसी वीर पुरुपके पास आई। इसके बाद उसने अपनी अँजुलीका पानी ज्योंही उनके मुखमें डालनेके लिये अँजुल बढाई, त्यों ही अत्यन्त क्षीण आवाजमें ये शब्द उसके कानोंमें आये—"पानी! पानी! कोई पानी दो!" यह सुनते ही उसे अत्यन्त हर्ष हुआ। तुरन्त ही उसने उनके मुखमे पानी डाला इसके बाद वह भीगा हुआ अचल उसने उनकी आँखोंमे लगाया, और मस्तक पर रखा। ठण्डक पहुँचते ही "अहा हा!" यह शब्द उनके मुखसे निकला, जिसे सुनते ही उस स्त्रीको अत्यन्त सन्तोष हुआ। इसके बाद वह यह सोचने लगी कि, अब और क्या करूँ कि, जिससे इनके मनको आराम मालूम हो, फिर उसने सोचा कि, देखो, हमने दासीको भेजा, और पुरुपको गये तो बड़ी देर हो गई, पर अभी दोमेंसे कोई भी नहीं लौटा। यह बात सोच ही रही थी कि, इतनेमें दो-तीन मशालें और चार-पाँच आदमी आते हुए उसे दिखाई दिये। इससे स्वाभाविक ही उसके मनमें आया कि, हो न हो, ये वही मनुष्य हैं, जो हमारे पास आ रहे हैं, और वह अपना अचल बार-बार उस पुरुपकी आँखों-पर रखती और उठाती हुई उस ओरको देखने लगी। इतनेमें उसे क्या भास हुआ कि, जैसे मृत्युकालके समान किसीको हुचकी आ रही है; और वहीं थोड़े अन्तरपर कोई अन्तिम खर्राटे भर रहा है। इसके बाद वह यह सोचती हुई कि, देखो, अब सब मालूम हो जायगा, उन मशालें लानेवाले लोगोंकी प्रतीक्षा करने लगी। इतनेमें वे सब लोग आ गये, जिनमें उसकी दासी थी, और वह पुरुष भी था कि, जो उन दोनोंको पहले उस वीर पुरुपके निकट बैठाल गया था। उन लोगोंके आते ही और मशालका उजेला पड़ते ही उस लेटे हुए पुरुषकी सूरत उन स्त्रियों-की नजरमें पड़ी। उसको देखते ही एक स्त्री उनमसे एकदम रोने लगी, पर दूसरीने उसका समाधान किया। इसके बाद उस साथवाले पुरुपने,

जो उन्हें बैठाल गया था, उनसे प्रार्थना की कि, "अब इनको महलके अन्दर कहीं न कहीं ले चलना चाहिये। मैं इनको ले चलकर वहाँ पौढ़ा दूँगा ; और तुम इनकी सेवा करो।" वे स्त्रियाँ भी—वे कौन थीं, सो अब पाठकोंको बतलानेकी आवश्यकता नहीं जान पड़ती—यही चाहती थीं। उस पुरुषका—यह पुरुष कौन है, सो भी पाठकोंको मालूम हो गया होगा—यह हुक्म होते ही दो आदमी आगे आये; और नानासाहबको उठाकर महलकी ओर ले चले। मशालवाले आगे चल रहे थे। उनके पीछे वे स्त्रियाँ, फिर दूसरे दो आदमी और सबके पीछे कमली लपेटे हुए शिवबा चल रहा था ! इतनेमें उन पीछेवाले दो आदमियोंका ध्यान मरणासन्न अहमदकी ओर गया ; और तुरन्त ही उनके मनमें आया कि, इसी हरामजादेने नानासाहबकी ऐसी दशा की—फिर क्या कहना है ? तुरन्त ही उनमेंसे एक आगे बढ़ा और बोला, "ऐ सुअर, जा। अब एकबार अपने खुदाके पास जा। तू यदि शीघ्र नहीं जा सकता, तो मैं तुरन्त ही तुझे भेज दूँ !" यह कहकर उसने उस मृतवत् पड़े हुए अहमदके शरीरमें एक लात मारी। यह देखते ही शिवबा तुरन्त उसको मना करते हुए कहता है—"जीवा, देख—ऐसी बात मैं कभी, कभी भी—पसन्द नहीं करूँगा, तूने यह काम बड़ा बेजा किया। चाहे मुसल्मान हो चाहे हिन्दू—मरणावस्थामें सब बराबर ही हैं। सभीको उस समय शान्ति और पवित्रताकी आवश्यकता होती है। मान ले कि, तू ही कभी मरनेपर आ जाय ; और उस समय कोई मुसल्मान आकर तेरे एक लात जमा दे, तो मुझको कितना बुरा मालूम होगा ? बस, ऐसी ही इसकी दशा समझ। अब जा। उसके पास बैठ और मैं भी बैठता हूँ। चल, इस मरणावस्थामें जो कुछ सुख उसे मिल जाय, वह हम लोग उसे देवें।"

यह सुनकर जीवाको बहुत ही आश्चर्य हुआ। ऐसे हरामजादेके पास जाकर हम बैठें ! लेकिन देखते हैं, तो शिवबा सचमुच ही उसके पास जाकर बैठ जाता है; और जीवाको दूसरी ओर बैठनेको कहता है। इसके बाद, एक और आदमी, जो उसके साथ था, उसको पानी लाने-

का हुक्म देता है। अहमदका अन्त बिलकुल निकट आगया, और वह और भी अधिक जोर जोरसे खुर्राटे भरने लगा। इतनेमें वह तीसरा आदमी पानी लेकर आता है, और शिवा अपने हाथसे उसके मुखमें डालता है। इसके बाद, इस विचारसे कि उसकी आँखें खुली न रहें, वह उसकी आँखोंपर हाथ रखे हुए जीवासे कहता है, 'देख जीवा, जबतक आमने सामने आदमी युद्धमें खड़ा होकर लड़ाई करे, तभीतक तो उससे द्वेष और शत्रुता है। परन्तु मृत्युके समय सभीकी एक गति है। हम सब समान ही हैं। यहाँ भिन्न भाव नहीं।"

यह सुनकर जीवाके मनमें जो कुछ भी आया हो, पर वह कुछ बोला नहीं—सिर्फ चमत्कृत चेष्टासे बैठा रहा। इतनेमें कुछ आदमी दौड़ते हुए आये, और किलेके पूर्णतया हस्तगत होजानेका समाचार सुनाया। साथ ही यह भी कहा कि,—हाँ, अप्पासाहबको पकड़ रखा है, उसका अब क्या किया जाय, आज्ञा हो। इसके सिवाय बेगमके आदमियोंने भी शस्त्र रखकर आत्मसमर्पण कर दिया। आगे क्या किया जाय, सो आज्ञा मिले। शिवबाने उत्तर दिया कि अच्छा उनको ऐसा ही रहने दो, फिर देखा जायगा। अभी उन आदमियोंमेंसे दो चारको ले आओ, जो आकर इसका अन्तिम सस्कार करें। यह हुक्म पाते ही आदमी दौड़े, और रणदुल्लाखाके आदमियोंमेंसे चार मुसल्मानोंको ले आये। उनके आनेपर शिवबा स्वयं उनके द्वारा अहमदके शवको नीचे बस्तीमें लेगया, और मुसल्मान धर्मानुसार उसकी अन्त्येष्टि क्रिया करवाई।

अस्तु। अब हमारे पाठक यह जाननेके लिये उत्सुक होंगे कि, सैयदुल्लाखाँका क्या हुआ—वह किलेके नीचे जाकर कुशलपूर्वक अपने आदमियोंमें मिला, अथवा उसकी और कोई गति हुई। इस प्रकारकी जिज्ञासा होना स्वाभाविकही है। इसलिये अब अगले परिच्छेदमें हम वही बतलाएँगे।

———

छत्तीसवां परिच्छेद

प्रतिज्ञाकी पूर्ति

अवतक उस काले-कलूटे महाशयने जैसा कुछ कहा था; और जैसी उसकी इच्छा थी, उसी प्रकार सब बातें हुईं। पर अब यह देखना चाहिये कि, आगे जिस प्रकारसे वह अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करना चाहता था, उसकी पूर्ति हुई, अथवा उसमें किसी प्रकारका विघात हुआ।

सैयदुल्लाखाको जब शैतानके भयने बड़ी बुरी तरहसे सताया, तब उसने अप्पासाहबके पैर पकड़कर यह प्रार्थना की कि, "जिस तरहसे हो सके, मुझे अपने लोगोंसे मिला दो—एक बार मैं उनमें जाकर मिल जाऊँ, फिर मैं अपना सारा प्रबन्ध खुद ही कर लूँगा।" अप्पासाहबने उसकी यह प्रार्थना स्वीकार की; और उसको किलेके मैदानतक पहुँचा देनेका दायित्व लिया; और तदनुसार उन्होंने उसे पहुँचा दिया। इसके बाद फिर उन्होंने सोचा कि, हमारा बहुत देरतक नीचे रहना उपयोगी न होगा; क्योंकि किलेकी भी तो खबर लेनी चाहिये। अपना यह विचार उन्होंने उससे भी प्रकट किया; और ऊपर चले आये। सैयदुल्लाखाने भी और कुछ नहीं सोचा; क्योंकि उसको तो किसी प्रकार अपना प्राण बचाकर किलेसे दूर निकल जाना था। अतएव उसके मनमें अब सिर्फ एक ही बात आरही थी; और वह यह कि मैं अब किस प्रकार अपने दलमें जा मिलूँ; और वहांसे एकदम बीजापुर भाग जाऊँ। इसके अतिरिक्त, मुमकिन है, और भी कोई बात उसके मनमें आई हो; पर वह बखूबी जानता था कि, यह मौका और कुछ कहने सुननेका नहीं है! और जो कोई बात उसके मनमें आरही थी, और जिसे कि, वह प्रकट नहीं कर रहा था, वह अवश्य ही अप्पासाहबके प्रतिकूल थी। परन्तु इस समय उसके लिये तेजी दिखलानेका मौका ही न था—यह मौका तो उसके लिये झुकनेका ही था। अप्पासाहबने चाहे जितनी सचाईके साथ उसके साथ व्यवहार किया हो, फिर भी वह ऐसा मनुष्य

नहीं था कि, जो उनकी प्रभु-भक्तिपर पूरा-पूरा विश्वास करता। पर इस समय उनके सामने वह यह थोड़े ही कह सकता था कि, मैं तुमको पक्का धूर्त समझता हूँ! अतएव उसने सोचा कि, अब जो कुछ होगा, सो देखा जायगा, बीजापुर पहुँचनेपर सब समझ लिया जायगा, इस समय तो हाँ जी, हाँ-जी, करके ही अपना काम निकालना चाहिये। बस, यही सोचते हुए उसने बहुत जल्द किलेका वह मैदान छोड़कर, अपने लोगोंको जहाँ रखा था, उधरकी ओर गया।

"समय तो होता आया, और अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार कार्य होनेके कोई लक्षण अभीतक दिखाई नहीं देते—यह है क्या? यदि अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार हम कार्य नहीं कर सके, तो अवश्य ही हमको अपने हाथसे चिता लगाकर उसीको अपनी देह समर्पित करना होगा। और ऐसा करनेमें भी हम सकोच नहीं करेंगे, पर इसके प्राण तो अवश्य हमारे हाथसे जाने चाहिये। उसीके रक्तसे हमारे हाथ रंजित होने चाहिये। ऐसा किये विना प्रतिज्ञा पूर्ण नहीं होगी, और न हमारे जीकी जलन जायगी। इसके जानेका एक ही उपाय है—और वह है इस मनुष्यका रक्तपात! बस रक्तपात ही! इसका खून! आज इतने दिनसे मैं ऐसा ही मौका प्राप्त करनेके प्रयत्नमें हूँ कि, किसी प्रकार यह हमारा मुकाबला करनेको हमारे सामने आवे, और फिर मैं इसको डंकेकी चोट यह चितावनी दूँ कि, अब तू याद करले अपने खुदाको, और मैं तुझे शैतानके घर भेजूँ। और सच तो यह है कि, यदि खाली इसका मुझे खून ही करना होता, तो अबतक कभीका कर डाला होता। परन्तु अपने कुलशीलको स्मरण करके मैंने यही निश्चय किया है कि, कपटसे इसका वध न करूँ—किन्तु समरमें इसका सामना करके तब इसके प्राण लूँ, कमसे कम ऐसी जगह कहीं इसका मुकाबला करनेको मिले, कि जहाँ फिर इसको यह कहनेका मौका न मिले कि, विश्वासघातसे मेरा खून किया। परन्तु यदि आजका यह अवसर निकल गया, तो फिर मानो सब गया। फिर मेरी प्रतिज्ञा पूर्ण नहीं हो सकती, और मुझे अपने ही हाथसे चिता रचकर अग्निप्रवेश करना होगा। मेरे और मेरी बहनके

घरपर जिसने ऐसा भयंकर संकट डाला उसी नीच•••आगे मानो वह कुछ सोच ही न सका। सैयदुल्लाखाके इस कट्टर दुश्मनने वास्तवमें यह विचार कर रखा था कि, वह ज्यों ही नीचे आवे, उसके सिपाहियों-पर सूर्याजीके सिपाहियोंकी ओरसे धावा करा दिया जाय; और फिर उसी युद्धमें मैं इसका सामना करूँ। आपने इसी विचारके अनुसार सब तैयारीकरके वह खाँसाहबका विकट शत्रु, उसके मार्गपर बैठा हुआ, उसकी प्रतीक्षा कर रहा था, और जैसा कि, हमने अभी ऊपर बतलाया, उसी प्रकारके विचार बार-बार उसके मनमें आ रहे थे, तथा क्षण क्षण-पर कान लगाकर वह उसके आनेकी आहट ले रहा था। बहुत देरतक उसका मन उपर्युक्त रीतिसे अस्वस्थ दशामें रहा, पर अन्तमें एकाएक उसको कुछ आशा उत्पन्न हुई। अर्थात् उसकी प्रतीक्षाके अनुसार सच-मुच ही ऊपरसे वह उसे आता हुआ दिखाई दिया। वास्तवमें उसने जिस जगह अपने सिपाही रखे थे, उधरकी ओरसे कुछ गोलमालकी आवाज उसके कानोंमें आई। पर वह सोच नहीं सका कि यह क्या मामला है। और तुरन्त ही अप्पासाहबके दिये हुए आदमियोंके साथ वह अपने सिपाहियोंकी ओर आगे चला। उसका कट्टर दुश्मन भी उसके पीछे पीछे छायाकी भांति चलने लगा। वह मन ही मन सोचता जाता था कि, अब चाहे प्रत्यक्ष यमराज ही क्यों न आजायँ, इसको मेरे हाथसे छुड़ा नहीं सकता—अब यह मेरे हाथसे मरा। इधर सैयदुल्लाखा अपने आदमियोंमें जा मिलनेकी आकांक्षासे अत्यन्त उत्कंठाके साथ चला जा रहा था। साथ ही साथ वह यह भी सोचता जाता था कि, देखो, हमारी आज्ञाके अनुसार हमारे आदमी किलेपर नहीं आये। उनकी जगह दूसरे ही आदमी आ गये। ऐसी दशामें निश्चित है कि, कोई न कोई अपघात अथवा विश्वासघात अवश्य ही हुआ। पर क्या करता, अब उसके हाथमें कोई उपाय नहीं था, अतएव वह चुपके चला जा रहा था। इतनेमें उसे क्या मालूम हुआ कि, जहाँ उसने अपने सिपाही रखे थे, उस ओर कोई भयंकर मारकाट मची हुई है। अतएव उसने अपने साथके एक आदमीको आगे रवाना किया। उसके पीछे

एक दूसरा आदमी भी भेजा। वे दौड़ते हुए गये, और जाकर क्या देखते हैं कि, खूब भयंकर लड़ाई हो रही है, और एक ओरसे "दीन दीन!" तथा दूसरी ओरसे "हर हर महादेव!" के गम्भीर शब्दोंसे आकाश कम्पायमान हो रहा है। सैयदुल्लाखाँ भी अब पास ही आ रहा था, अतएव उसने भी उस कोलाहलको स्पष्टरूपसे सुना अब उसको पूरा पूरा मालूम हो गया कि, हमारे लिये किसी तरफको भी मार्ग नहीं है—सब ओरसे हम घेर लिये गये हैं। उसको अब विचार करनेके लिये भी अवकाश नहीं रह गया। इतनेमें उसका वह कट्टर शत्रु उसके पास ही आकर बोला, "अरे दुष्ट, अब तू भाग नहीं सकता, और न ऐसा करनेसे तुझे कोई लाभ होगा—कपटसे यदि मैं तेरा खून करना चाहता, तो आज इतने वर्षोंमें चाहे कब कर डाला होता। कई बार तुझे मैंने अपने पंजेमें पकड़कर भी छोड़ दिया है। सो तू अच्छी तरह याद कर ले। यद्यपि तूने बड़े-बड़े भारी नीच कर्म किये हैं, पर फिर भी मैं धर्मयुद्ध करके ही तुझसे बदला लूँगा। इस बातका तू पूरा पूरा विश्वास रख। आज अब तू छूटकर जा नहीं सकता। मराठोंके साथ तेरे सिपाहियोंकी लड़ाई हो रही है, उसीमें अब तू भी प्रवेश कर। मराठोंकी ओरसे मैं प्रवेश करता हूँ। आजा—मेरा तेरा सामना होने दे—या तो तू ही मुझे मार डाल, और नहीं तो मैं तुझे मारूँगा ही। वास्तवमें ऐसा गौरव तो तुझे नहीं मिलना चाहिये, क्योंकि जो कर्म तूने किया है, और जिसके कारण कि मैं तुझसे बदला लेनेको उद्यत हुआ हूँ, वह इतना निन्दनीय है कि, आधीरातके बीचमें, अचानक आकर, तेरी प्रगाढ़ निद्रामें भी, यदि मैंने तेरा खून किया होता, तो भी अधर्माचरण करनेका पाप मुझे नहीं लग सकता था। तू जातिका योद्धा नहीं है, कुलीन भी नहीं है, ऐसी दशामें तेरे साथ धर्मका व्यवहार करना भी अनुचित ही है। पर मैं जातिका सच्चा मराठा हूँ, अतएव मेरे हाथसे ऐसा कभी नहीं हो सकता। बस, इसी कारण मैं इतने दिन रास्ता देखता रहा। अब आज मौका आ गया है। मैं तुझको पहले हीसे सचेत कर रहा हूँ। अचानक आकर तुझपर छापा नहीं मारता। जा

अपने दलमें शामिल हो। शूर-वीरकी तरह अपने दलको सम्हाल। मैं मराठोंकी ओरसे आता हूँ; और फिर देखता हूँ तेरा कर्त्तव्य!"

जिस समय वह महाशय यह भाषण दे रहा था। सैयदुल्लाखाँका सारा शरीर थर-थर काँप रहा था। वह पसीनेमे बिलकुल लतफत हो गया; और काँपते-काँपते ही बोलनेका यत्न करने लगा। किन्तु शब्द ही जीभसे न निकला। उसकी यह दशा देखकर उसका दुश्मन फिर उससे कहता है, "याद रख, तू कहेगा कि, मैं भग जाऊँगा। पर नहीं, कदापि नहीं—तुझसे ऐसा कभी नहीं हो सकता। मराठोंने इस सारे जंगलको घेर रखा है। बातकी बातमें पकड़ा जायगा। और फिर मैं तो तुझको भगोड़ा समझकर तेरा स्पर्श नहीं करूँगा—हाँ, पन्द्रह दिनतक भूखे रखे गये भेड़ियोंसे तुझे नुचवा नुचवाकर मार डालूँगा।" इतना कहकर वह वहासे चलता हुआ? और सैयदुल्लाखाँ भी उसके भयसे जरा छूटकर भाग जानेके विचारमें था—इतनेमें सामने ही से भारी कोलाहल मचाते हुए कुछ सिपाहियोंका एक दल आ पहुँचा। यह दल मराठोंका ही था। उस दलको देखते ही वह और भी अधिक घबड़ाया; और इस विचारमें लगा कि, अब भाग जावें या किसीसे उधार लेकर धैर्य धारण करें। इतनेमें एक आदमी यह चिल्लाता हुआ उसकी ओर दौड़ा कि, 'अरे यह वही है, कि जिसको सूर्याजीने जीवित पकड़ लानेके लिये हम लोगोंको आज्ञा दी है। चलो पकड़ो इसको, और ले चलो उनके पास!" उसने ये शब्द सुने, पर वह तो पहलेका एक अर्दली-मात्र था, लड़ाई वगैरह करना उसको क्या मालूम? उसकी लड़ाई तो यही थी कि, दीन-हीन गरीबों और किसानोंको तंग करो, उनको लूटो खसूटो; जिस तरह बने, द्रव्य वसूल करो, उनकी सुन्दर-सुन्दर लड़कियाँ अथवा स्त्रियाँ जबरदस्ती भगा लाओ, और बादशाहके जनानखानेमें डाल दो। जिस किसी बड़े सरदारके पास विपुल सम्पति सुनाई दे, अथवा जिस किसीकी बहू-बेटी सुन्दरी रूपवती सुनाई दे, उसपर एकदम धावा बुलवा दो, उसके घरके पुरुषोंको कैदखानेमें डलवा दो, जो कुछ धन-दौलत हो, लूटकर थोड़ी तो बादशाही खजाने; और बाकी

अपने घरमें पहुँचा दो, और जो स्त्रियाँ हों, उनको अपने अगाा बाद-शाहके अन्तःपुरमें ले जाकर रखो। बस, यही उसका युद्ध-कौशल और यही उसका सारा कर्त्तव्य! यह काम वह अकेला ही नहीं करता था। उसके कई आवुर्द भी थे। पाठकोंको याद होगा कि, सूर्याजीके घरपर जब धावा बोला गया, तब एक सरदार साहब बड़ी बुरी तरहसे वहाँ मारे गये थे। वे भी इसके ही आवुर्द थे। इन सब बातोंपर ध्यान देनेसे पाठकोंको मालूम हो जायगा कि, वह किस कंडेका आदमी था। अत-एव ऐसे मनुष्यके लिये धर्म-भाव और सत्यमार्गकी बात क्या कहना! उसका तो इस समय यही सूझ रहा था कि, किसी न किसी तरह मेरी जान बचे—मैंने भर पाया! अस्तु। उन मराठोंने उसपर धावा किया, उस समय पहले-पहल तो उसने तेजी दिखाई, पर जब उन्होंने उसे धर घसीटा, तब वह तेजी न जाने कहाँ चली गई, और उसकी जगह तुरन्त ही लाचारी प्रकट करने लगा। किन्तु वहाँ किसीने न उसकी लाचारी देखी, और न तेजी—अब बेचारा क्या करे? मराठे लोग धक्के देते हुए उसे सूर्याजीके पास ले चले। अब उसको पूरे तौरपर मालूम हो गया कि, मेरा खातमा हुआ, पर फिर भी, जैसे कोई कुत्ता बिलकुल अस्थिपंजरावशेष हो जावे, और मरनेपर आ रहे, तथापि यदि कोई उसके लात मार देवे, तो वह डरते-डरते भी गुर्रावे, और दाँत दिखाते हुए भगे तथा भौंकता भी जावे—बस, ऐसा ही वह भी करता जा रहा था। भाग जाना तो अब उसके लिये सम्भव नहीं था। परन्तु हाँ, बीच बीचमें वह कभी कुछ दीनता दरसाता, कभी कुछ गुरगुराने लगता। बस, इसी प्रकार करते हुए वह उनके साथ चला जा रहा था। अन्तमें उन लोगोंने उसको वैसा ही ले जाकर सूर्याजीके सामने पेश कर दिया। उन्होंने अभी हालहीमें उसके सिपाहियोंको पूर्ण पराजित करके उनको जंगलमें इधर-उधर भाग जानेको लाचार किया था। इसके बाद अब वे कुछ विश्राम लेनेके विचारमें थे। इतनेमें ज्यों ही उनको खबर मिली कि, सैयदुल्लाखाँ गिरफ्तार करके लाया गया है, त्यों ही वे किसी क्रोधित किये हुए व्याघ्रकी तरह उठे, और यह कहते हुए कि,

"कहाँ है वह दुश्मन ? वे बाहर निकल आये। सैयदुल्लाखाँ उनके सामने लाया गया। उसको देखते ही उनका सारा शरीर जल उठा; और वे एकदम उससे बोले, "ऐ दुश्मन, अब तू हमारे हाथसे छूट नहीं सकता। मेरे श्वसुर, मित्र और स्वयं मेरे कुटुम्बके सत्यानाशका मूल कारण तू ही है। तेरे राई राईके समान टुकड़े कर डालने चाहिये। परन्तु तेरे शरीरके यह छोटे-छोटे कण भी गिरकर पृथ्वीको अपवित्र करेंगे, इसलिये तुझको ऐसा ही खड़ा जला देना चाहिये। हम मराठों-की स्त्रियोंकी बेइज्जती करना कोई छोटा-मोटा पाप नहीं। उस पापका क्षालन करनेके लिये तुम अधर्मोंका रक्तपात ही करना चाहिये। अरे तू ही देख—हमारे तीन घरानोंकी तुम अधर्मोंने क्या दशा कर दी! हमारे समान राजभक्त और खान्दान ढूँढ़नेपर भी न मिलेंगे। किन्तु तुम पापियोंको उसकी क्या कदर ? तुम तो ऐसे लोग हो, जो व्यसनी बादशाहको और भी अधिक व्यसनोंमें फँसाकर, उसीके बलपर, अत्याचार करते हुए अपना पेट पालते हो! तुम राजभक्ति और उसके भक्तों-की कदर क्या जानो! उसकी कल्पना ही तुमको क्या होगी ? चल आज तेरे दिन पूरे हुए। अब तू मरनेके लिये तैयार हो! अपने मित्र, अपने श्वसुर, अपने साले और मैं स्वयं अपना, बदला लेनेके लिये भी तुमको एक ही आघातसे खतम करता हूँ। इससे सबको सन्तोष होगा।" यह कहकर उन्होंने अपनी तल्वार निकाली। इतनेमें पीछेसे आकर किसी व्यक्तिने उनसे कहा, "नहीं, नहीं—भैया, यह अधिकार तुमको नहीं। मुझको है ? अन्ततक मैं समझता था कि, समरमें इसका सामना करके वैर-परिशोध करूँगा। पर नहीं। इतना पुण्य भी इसके भाग्यमें नहीं। अब एक तल्वार इसको दो; और मेरी तलवार मेरे पास मौजूद ही है। दोनोंका सामना होने दो। तुम बीचमें मत पड़ो। अपनी प्रतिज्ञा मुझे पूर्ण करने दो। इतने वर्षोंकी उम्मेद पूरी होने दो। इस आशाके सफल हो जानेपर एक और काम मुझे करना है, उसको करूँगा। आज यह मेरी प्रतिज्ञाका अन्तिम दिन है। आज यदि मैं अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण नहीं कर सका, तो मुझे आत्महत्या करके प्राणत्याग करनेके

तिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है। इसको तुम अच्छी तरह समझ लो।'
उस व्यक्तिको देखकर और उसका यह भाषण सुनकर सूर्याजीको बहुत ही आश्चर्य हुआ। उन्होंने ज्यों ही उस पुरुषको देखा, और उसका उपर्युक्त कथन सुना, त्यों ही उनको उस झोपड़ीवाले बुड्ढेकी कही हुई कुछ बातोंका स्मरण आया। मन ही मन उन्होंने दिन गिनकर हिसाब लगाया, तो वह बिल्कुल बराबर बैठा, और सचमुच ही आज उसकी प्रतिज्ञाका अन्तिम दिन था। अतएव सूर्याजी बहुत ही चमत्कृत दृष्टिसे उसकी ओर देखकर आश्चर्यचकित हो गये। इसके बाद उन्होंने धीरेसे ही कहा, "हाँ, हाँ ठीक है। इससे बदला लेनेका अधिकार तुम्हींको है। और तुम्हीं इसको पूर्ण करो। मैं अपनी तलवार उसको देता हूँ—सो वह लेवे और खुशीसे तुम्हारे साथ लड़े।"

परन्तु सूर्याजीके इस कथनसे लाभ ही क्या था? क्योंकि सैयदुल्ला-खाँ बिलकुल ही घबड़ा रहा था। परन्तु हाँ, इतनेमें उसको कोई बात सूझी, और वह कुछ धीरज धरकर उनसे बोला, "मैं यहाँ अकेले पड़ गया हूँ, तुम चाहे जिस तरह मेरा वध कर सकते हो, इसमें कुछ असम्भव नहीं, और न कोई आश्चर्य। लेकिन, अगर मैं मर जाऊँगा, तो जानते हो, तुमलोगोंकी क्या दशा होगी? बादशाह मुझपर बहुत प्रेम करता है। जब उसको यह बात मालूम होगी, तब वह 'मराठा' औषधिके लिये भी नहीं रखेगा, फिर क्या हाल होगा, उसको जरा सोचो। इसके बाद मुझे खुशीसे मारो। लेकिन अगर छोड़ दोगे, तो मैं तुम्हारा कल्याण करूँगा। अबतक तुमने हमारा जितना कुछ अपमान किया है, सब मैं भूल जाऊँगा, और बादशाहसे तुम्हारी सिफारिश करूँगा। तुम्हारे सब लोग, जो कैद किये गये थे, उनको छोड़ दूँगा। मुझको छोड़ भर दो। मेरे बालको भी धक्का न लगाओ। अन्यथा "मराठा" नाममात्रके लिये भी संसारमें न रहेगा। इस बातको तुम अच्छी तरह समझ लो। सोचो इस बातको, खूब सोचो और मुझको छोड़ दो। इसी-
तुम स कल्याण है। जो बातें हो गईं, सो हो गईं! उनके-
प नहीं।"

उसका यह कथन सुनकर सूर्याजी और उसका वह साला (पाठक समझ ही गये होंगे) दोनों हँसे; और उससे बोले "सैयदुल्लाखा अब ऐसी बातोंमें व्यर्थ समय मत गवा। अब तू अपने खुदाको याद कर, और वीरोंकी तरह मैदानमें आकर लड़नेको तैयार हो। तेरे कुकर्मोंका तो बदला हम तुझे दे दें; और फिर जो कुछ मराठोंका होनेवाला होगा, सो पीछेसे होता रहेगा। उसकी चिन्ता तू मत कर। हम तुझको अब छोड़ नहीं सकते। तू ही सोच देख, मान ले कि तू ही हमारी दशामें होता, तेरी ही तरह हमने भी तेरे घर-द्वार और इज्जत आबरूका सत्यानाश किया होता, तो तू हमारे साथ क्या बर्ताव करता—हमसे बदला लेनेके लिये तूने क्या-क्या प्रयत्न किये होते ? किन्तु तू तो एक ऐसा मनुष्य है जिसको कुल-शील कुछ ही नहीं तेरे सामने ऐसी उदारताकी बातें करनेमें क्या लाभ ? सो कुछ नहीं हो सकता! अब तुझे मरना ही पड़ेगा और कोई बात नहीं। मराठोंके सारे खान्दान तेरे मरनेके बाद चाहे बादशाह नष्ट कर डालें, उनके घर द्वारपर चाहे हल चलवा दें, फिर भी कोई परवा नहीं। आजकल जैसी दशामें वे जीवन रख रहे हैं, उसकी अपेक्षा उनका मरना कोई बुरा न होगा। चल, चल। अब दूसरी कोई बात मत निकाल। जहाँ तू बैठा है, वहीं हम तुझको नहीं मार रहे हैं, यह देख तेरे ऊपर कितना उपकार है। तुझको वीरोंकी तरह मरनेका मौका दे रहे हैं, और फिर भी तू तैयार न हो, तो इसके लिये हम क्या करें ? अब मुझे यही करना पड़ेगा; अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके लिये मैं तुझपर एक छोटासा वार तो जरूर करूँगा, और तेरे शरीरका रक्त निकाल लूँगा—फिर उसमें एक उँगली डुबोकर, सबके सामने वृक्षमें बाँधकर तुझको फाँसी दूँगा। बस, यही दण्ड तेरे लिए उचित भी है। किन्तु फिर भी हम तुझे बड़प्पन देते हैं। वीरोंकी तरह मरनेको कहते हैं। अब आगे तेरी इच्छा! तू यदि कोई मामूली आदमी होता, तो तुझको थोड़ासा दण्ड देकर, तेरी नाक कान काटकर तुझे छोड़ दिया होता। लेकिन तू इतना नीच और अधमाधम प्राणी है, कि तुझको यदि जीवदान दिया जायगा, तो तू इस उपकारको भी कभी

अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है। इसको तुम अच्छी तरह समझ लो।'
उस व्यक्तिको देखकर और उसका यह भाषण सुनकर सूर्याजीको बहुत ही आश्चर्य हुआ। उन्होंने ज्यों ही उस पुरुषको देखा, और उसका उपर्युक्त कथन सुना, त्यों ही उनको उस झोपड़ीवाले बुड्ढेकी कही हुई कुछ बातोंका स्मरण आया। मन ही मन उन्होंने दिन गिनकर हिसाब लगाया, तो वह बिल्कुल बराबर बैठा, और सचमुच ही आज उसकी प्रतिज्ञाका अन्तिम दिन था। अतएव सूर्याजी बहुत ही चमत्कृत दृष्टिसे उसकी ओर देखकर आश्चर्यचकित हो गये। इसके बाद उन्होंने धीरेसे ही कहा, "हाँ, हाँ ठीक है। इससे बदला लेनेका अधिकार तुम्हींको है। और तुम्हीं इसको पूर्ण करो। मै अपनी तलवार उसको देता हूँ—सो वह लेवे और खुशीसे तुम्हारे साथ लड़े।"

परन्तु सूर्याजीके इस कथनसे लाभ ही क्या था? क्योंकि सैयदुल्ला-खाँ बिलकुल ही घबड़ा रहा था। परन्तु हाँ, इतनेमें उसको कोई बात सूझी, और वह कुछ धीरज धरकर उनसे बोला, "मै यहाँ अकेले पड़ गया हूँ, तुम चाहे जिस तरह मेरा वध कर सकते हो, इसमें कुछ असम्भव नहीं, और न कोई आश्चर्य। लेकिन, अगर मैं मर जाऊँगा, तो जानते हो, तुमलोगोंकी क्या दशा होगी? बादशाह मुझपर बहुत प्रेम करता है। जब उसको यह बात मालूम होगी, तब वह 'मराठा' औषधिके लिये भी नहीं रखेगा, फिर क्या हाल होगा, उसको जरा सोचो। इसके बाद मुझे खुशीसे मारो। लेकिन अगर छोड़ दोगे, तो मैं तुम्हारा कल्याण करूँगा। अबतक तुमने हमारा जितना कुछ अपमान किया है, सब मैं भूल जाऊँगा, और बादशाहसे तुम्हारी सिफारिश करूँगा। तुम्हारे सब लोग, जो कैद किये गये थे, उनको छोड़ दूँगा। मुझको छोड भर दो। मेरे बालको भी धक्का न लगाओ। अन्यथा "मराठा" नाममात्रके लिये भी संसारमें न रहेगा। इस बातको तुम अच्छी तरह समझ लो। सोचो इस बातको, खूब सोचो और मुझको छोड़ दो। इसीमें तुम सबोंका कल्याण है। जो बातें हो गईं, सो हो गईं। उनके विषयमें विचार करनेकी आवश्यकता नहीं।"

उसका यह कथन सुनकर सूर्याजी और उसका वह साला (पाठक समझ ही गये होंगे) दोनों हँसे; और उससे बोले "सैयदुल्लाखा अब ऐसी बातोंमें व्यर्थ समय मत गवा। अब तू अपने खुदाको याद कर, और वीरोंकी तरह मैदानमें आकर लड़नेको तैयार हो। तेरे कुकर्मोंका तो बदला हम तुझे दे दें; और फिर जो कुछ मराठोंका होनेवाला होगा, सो पीछेसे होता रहेगा। उसकी चिन्ता तू मत कर। हम तुझको अब छोड़ नहीं सकते। तू ही सोच देख, मान ले कि तू ही हमारी दशामें होता, तेरी ही तरह हमने भी तेरे घर-द्वार और इज्जत आवरूका सत्यानाश किया होता, तो तू हमारे साथ क्या वर्ताव करता—हमसे बदला लेनेके लिये तूने क्या-क्या प्रयत्न किये होते? किन्तु तू तो एक ऐसा मनुष्य है जिसको कुल-शील कुछ ही नहीं तेरे सामने ऐसी उदारताकी बातें करनेमे क्या लाभ? सो कुछ नहीं हो सकता! अब तुझे मरना ही पड़ेगा और कोई बात नहीं। मराठोंके सारे खान्दान तेरे मरनेके बाद चाहे बादशाह नष्ट कर डालें, उनके घर द्वारपर चाहे हल चलवा दें, फिर भी कोई परवा नहीं। आजकल जैसी दशामें वे जीवन रख रहे हैं, उसकी अपेक्षा उनका मरना कोई बुरा न होगा। चल, चल। अब दूसरी कोई बात मत निकाल। जहाँ तू बैठा है, वहीं हम तुझको नहीं मार रहे हैं, यह देख तेरे ऊपर कितना उपकार है। तुझको वीरोंकी तरह मरनेका मौका दे रहे हैं, और फिर भी तू तैयार न हो, तो इसके-लिये हम क्या करें? अब मुझे यही करना पड़ेगा, अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके लिये मैं तुझपर एक छोटासा वार तो जरूर करूँगा; और तेरे शरीरका रक्त निकाल लूँगा—फिर उसमें एक उँगली डुबोकर, सबके सामने वृक्षमें बाँधकर तुझको फाँसी दूँगा। बस, यही दण्ड तेरे लिए उचित भी है। किन्तु फिर भी हम तुझे बड़प्पन देते हैं। वीरोंकी तरह मरनेको कहते हैं। अब आगे तेरी इच्छा! तू यदि कोई मामूली आदमी होता, तो तुझको थोड़ासा दण्ड देकर, तेरी नाक कान काटकर तुझे छोड़ दिया होता। लेकिन तू इतना नीच और अधमाधम प्राणी है, कि तुझको यदि जीवदान दिया जायगा, तो तू इस उपकारको भी कभी

अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं है। इसको तुम अच्छी तरह समझ लो।' उस व्यक्तिको देखकर और उसका यह भाषण सुनकर सूर्याजीको बहुत ही आश्चर्य हुआ। उन्होंने ज्यों ही उस पुरुषको देखा, और उसका उपर्युक्त कथन सुना, त्यों ही उनको उस झोपड़ीवाले बुड्ढेकी कही हुई कुछ बातोंका स्मरण आया। मन ही मन उन्होंने दिन गिनकर हिसाब लगाया, तो वह बिल्कुल बराबर बैठा, और सचमुच ही आज उसकी प्रतिज्ञाका अन्तिम दिन था। अतएव सूर्याजी बहुत ही चमत्कृत दृष्टिसे उसकी ओर देखकर आश्चर्यचकित हो गये। इसके बाद उन्होंने धीरेसे ही कहा, "हाँ, हाँ ठीक है। इससे बदला लेनेका अधिकार तुम्हींको है। और तुम्हीं इसको पूर्ण करो। मैं अपनी तलवार उसको देता हूँ—सो वह लेवे और खुशीसे तुम्हारे साथ लड़े।"

परन्तु सूर्याजीके इस कथनसे लाभ ही क्या था? क्योंकि सैयदुल्लाखाँ बिलकुल ही घबड़ा रहा था! परन्तु हाँ, इतनेमें उसको कोई बात सूझी, और वह कुछ धीरज धरकर उनसे बोला, "मैं यहाँ अकेले पड़ गया हूँ, तुम चाहे जिस तरह मेरा वध कर सकते हो, इसमें कुछ असम्भव नहीं, और न कोई आश्चर्य। लेकिन, अगर मैं मर जाऊँगा, तो जानते हो, तुमलोगोंकी क्या दशा होगी? बादशाह मुझपर बहुत प्रेम करता है। जब उसको यह बात मालूम होगी, तब वह 'मराठा' औषधिके लिये भी नहीं रखेगा, फिर क्या हाल होगा, उसको जरा सोचो। इसके बाद मुझे खुशीसे मारो। लेकिन अगर छोड़ दोगे, तो मैं तुम्हारा कल्याण करूँगा। अबतक तुमने हमारा जितना कुछ अपमान किया है, सब मैं भूल जाऊँगा, और बादशाहसे तुम्हारी सिफारिश करूँगा। तुम्हारे सब लोग, जो कैद किये गये थे, उनको छोड़ दूँगा। मुझको छोड भर दो। मेरे बालको भी धक्का न लगाओ। अन्यथा "मराठा" नाममात्रके लिये भी संसारमें न रहेगा। इस बातको तुम अच्छी तरह समझ लो। सोचो इस बातको, खूब सोचो और मुझको छोड़ दो। इसीमें तुम सबोंका कल्याण है। जो बातें हो गईं, सो हो गईं! उनके विषयमें विचार करनेकी आवश्यकता नहीं।"

उसका यह कथन सुनकर सूर्याजी और उसका वह साला (पाठक समझ ही गये होंगे) दोनों हँसे; और उससे बोले "सैयदुल्लाखा अब ऐसी बातोंमें व्यर्थ समय मत गवा। अब तू अपने खुदाको याद कर, और वीरोंकी तरह मैदानमें आकर लड़नेको तैयार हो। तेरे कुकर्मोंका तो बदला हम तुझे दे दें; और फिर जो कुछ मराठोंका होनेवाला होगा, सो पीछेसे होता रहेगा। उसकी चिन्ता तू मत कर। हम तुझको अब छोड़ नहीं सकते। तू ही सोच देख, मान ले कि तू ही हमारी दशामें होता, तेरी ही तरह हमने भी तेरे घर-द्वार और इज्जत आवरूका सत्यानाश किया होता, तो तू हमारे साथ क्या वर्ताव करता—हमसे बदला लेनेके लिये तूने क्या-क्या प्रयत्न किये होते ? किन्तु तू तो एक ऐसा मनुष्य है जिसको कुल-शील कुछ ही नहीं तेरे सामने ऐसी उदारताकी बातें करनेमे क्या लाभ ? सो कुछ नहीं हो सकता ! अब तुझे मरना ही पड़ेगा और कोई बात नहीं। मराठोंके सारे खान्दान तेरे मरनेके बाद चाहे बादशाह नष्ट कर डालें, उनके घर द्वारपर चाहे हल चलवा दें, फिर भी कोई परवा नहीं। आजकल जैसी दशामें वे जीवन रख रहे हैं, उसकी अपेक्षा उनका मरना कोई बुरा न होगा। चल, चल। अब दूसरी कोई बात मत निकाल। जहाँ तू बैठा है, वहीं हम तुझको नहीं मार रहे हैं, यह देख तेरे ऊपर कितना उपकार है। तुझको वीरोंकी तरह मरनेका मौका दे रहे हैं, और फिर भी तू तैयार न हो, तो इसके लिये हम क्या करें ? अब मुझे यही करना पड़ेगा; अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करनेके लिये मैं तुझपर एक छोटासा वार तो जरूर करूँगा; और तेरे शरीरका रक्त निकाल लूँगा—फिर उसमें एक उँगली डुबोकर, सबके सामने वृक्षमें बाँधकर तुझको फाँसी दूँगा। बस, यही दण्ड तेरे लिए उचित भी है। किन्तु फिर भी हम तुझे बड़प्पन देते हैं। वीरोंकी तरह मरनेको कहते हैं। अब आगे तेरी इच्छा ! तू यदि कोई मामूली आदमी होता, तो तुझको थोड़ासा दण्ड देकर, तेरी नाक कान काटकर तुझे छोड़ दिया होता। लेकिन तू इतना नीच और अधमाधम प्राणी है, कि तुझको यदि जीवदान दिया जायगा, तो तू इस उपकारको भी कभी

नहीं मानेगा, तुरन्त ही भूल जायगा, और यहांसे जाते ही हमारे समान पुराने-पुराने सभी खान्दानोंकी जड़ मूलसे मटियामेट करानेका बादशाहसे प्रयत्न करावेगा। ऐसा तू अधम है, तू काला साँप है, जो उपकार करनेपर भी दंश करना नहीं छोड़ सकता। किन्तु अब इन व्यर्थ बातोंमें क्या फायदा। हम तुझको जीता छोड़कर अनेक पतिव्रताओंपर अत्याचार करानेका पातक अपने सिर थोड़े ही लेंगे? अब तो तुझे यमराजके घर जाना ही होगा, और तभी बादशाह भी कुछ अच्छी दशापर आवेगा। तू कहता है कि, तुझपर उसका प्रेम है, तेरी मृत्युका समाचार सुनते ही वह बदला लेनेको तैयार होगा, किन्तु—बाबा! तू भूल रहा है। तेरे मरनेपर स्वप्नमें भी उसको तेरी याद नहीं रहेगी—बाबा! तेरी जगह लेनेको कितने ही लोग वहाँ काफी प्रयत्न कर रहे हैं! तेरे जाते ही वे आगे बढ़ेंगे। जैसे पानीपर लकीर खींचनेसे वह कभी टिक नहीं सकती, वैसे ही—राजा हुए, बादशाह हुए—इनके मनपर कभी भी किसीके उपकारों, अथवा सेवाओंका प्रभाव नहीं टिकता। इस बातको अच्छी तरह समझ ले। तथापि, यदि तुझे इसी बातसे सन्तोष होता हो, कि बादशाह तेरे मरनेके बाद तेरा बदला लेगा, तो अच्छी बात है—तू इसीसे सन्तोष होने दे। हमको उसका डर मत दिखला और हम उससे डरेंगे नहीं, सो ध्यानमें रख।"

इतना कहकर वह काला महाशय क्षणमात्रके लिये खिन्न हो गया। ऐसा जान पड़ा कि, किसी बातपर वह कुछ निराशसा हो रहा है। उसने एक लम्बी सांस ली, और उससे फिर बोला, "सैयदुल्लाखाँ, मुझको बड़ी आशा थी कि, मैं वीरोंकी तरह तुझसे वैर परिशोध करूँगा, पर देख, तूने मुझे बहुत ही निराश किया! संग्राममें नहीं खड़ा हुआ, फिर मैंने सोचा—तू न सही संग्राममें, तुझे अकेले ही सामने बुलाकर तेरे हाथमें तलवार दूँ, और वीरोंकी तरह हम दोनों लड़कर, अन्तमें तुझसे बदला लूँ। सो तू ऐसा करनेपर भी तैयार नहीं हुआ। इस तरहसे भी तूने मुझे निराश किया। देख, अब भी मौका। इसको हाथसे मत जाने दे। ले यह तलवार और युद्धके लिये खड़ा हो। क्या ठीक है—शायद तू ही

मुझे मार ले—मुमकिन है। मैंने तो समझा था कि, तू यह कहकर कि, 'तू मेरे साथ लड़नेकी योग्यता नहीं रखता लड़नेसे इन्कार करेगा; पर यहाँ कुछ दूसरा ही मामला निकला।"

परन्तु सैयदुल्लाखाने एक अक्षर भी मुखसे नहीं निकाला; और न तलवार ही हाथमें ली। उसको वीर-मृत्यु काहेको पसन्द आती? वृक्षकी डाली और डोरी ही उसके लिये विधनाने सिरजी थी।

सैंतीसवां परिच्छेद

कुछ पूर्व वृत्तान्त

अन्तमें उस महाशयको अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार अपने शत्रुसे लड़कर उसका रक्तपात करनेको नहीं मिला। अपना कट्टर दुश्मन समझकर इतने दिन जिस व्यक्तिका वह पीछा करता रहा, वह अन्तमें बिलकुल हिजड़ा ही निकल गया; और उस काले कलूटे महाशयको अपनी भुजाओंकी खुजली मिटानेका भी अवसर नहीं मिला। इस बातपर उसे कितना खेद हुआ होगा, इसकी पाठकगण ही कल्पना करें। रामदेवराव [वही काले-कलूटे महाशय] कोई साधारण व्यक्ति नहीं थे। बल्कि दौलताबाद अथवा देवगिरीके यादवोंके खान्दानसे उनका सम्बन्ध था, और उस घरानेके प्रसिद्ध रामरावके नामपर ही उनका नाम भी रामदेवराव रखा गया था। बादशाह अलाउद्दीनखिलजी जब दक्षिणमें आया, तब पूर्वके रामदेवरावने बहुत अच्छा पराक्रम दिखलाकर अपने खान्दानका नाम रखा था। सो हमारे इन सत्रहवीं शताब्दीके रामदेवरावको भी बड़ी आशा थी कि, हम भी पूर्वके राम-देवरावकी तरह ही कुछ न कुछ कर दिखलावेंगे। परन्तु यह समय कुछ दूसरा था, मुसल्मानी बादशाहतकी जड़ काफी जम चुकी थी, अतएव उन्होंने सोचा था कि, समयके अनुकूल चलकर ही हमको अपनी और अपने घरानेकी उन्नति कर लेनी चाहिये। उनको और उनके पिताको यह इच्छा थी कि, बादशाह मुहम्मदशाहके जमानेमें हमको दरबारमें

चलकर अपनी अलौकिक वीरता और प्रभुभक्तिका परिचय देना चाहिये; तथा उसकी प्रसन्नता प्राप्त करके उत्तम रीतिसे अपने खान्दानकी उन्नति कर लेनी चाहिये। इस प्रकारकी केवल इच्छा ही रखकर वे चुप नहीं रहे, बल्कि स्वयं रामदेवराव अपनी जागीरका गर्व छोड़कर अपने कुटुम्बके साथ बीजापुरमें जा रहे। उनका घराना बहुत ही पुराना और स्वामिभक्तिके लिये प्रसिद्ध था, इस कारण बादशाहके दरबारमें बहुत जल्द उनका खूब प्रभाव जम गया। सब लोग यही समझने लगे कि, वे बहुत जल्द बढ़ जायगे, शीघ्र ही मुरारपन्तकी जोड़के हो जायगे, और उनके बाद प्रधान मन्त्रीका पद इन्हींको मिलेगा। बादशाह उन पर प्रसन्न भी बहुत था। सब बात बिलकुल ठीक थी। आकाश बिलकुल स्वच्छ है, सृष्टिके सम्पूर्ण प्राणीमात्र आनन्दपूर्वक सूर्य भगवानके कल्याण-कारक प्रतापका अनुभव कर रहे हैं, ऐसे सुन्दर समयमें अचानक चारों तरफसे घनघोर घटा घिर आवे, आकाश मेघाच्छादित हो जाय, और सारी सृष्टिमें अन्धकार छा जाय, यही नहीं, बल्कि बादलोंकी भयंकर गड़गड़ाहट होकर भारी वृष्टि होने लगे, और ऐसा जान पड़े कि जैसे सारे ब्रह्माण्डका ही प्रलय होने आया हो,—उस समय जैसी दशा हो, वैसी ही दशा अचानक आ उपस्थित हुई। रामदेवराव बड़े आनन्दमें थे, उनके पिता भी बड़े प्रफुल्लित थे कि, देखो, हमारे लड़केने बहुत अच्छा नाम कमाया है। उनको इस बातका अभिमान होने लगा कि, अन्य कुछ मराठे घरानोंकी तरह हमारा घराना बिलकुल अन्धेरेमें ही नहीं रहेगा, कुछ न कुछ—क्यों, बहुत अच्छा—नाम करेगा। इधर, रामदेवरावकी पत्नी अति रूपवती थी। उसके लावण्यकी ख्याति सैयदुल्लाखाँ और उसके समान अन्य भी कितने ही नरपशुओंके मुखसे बादशाहके कानोंतक पहुँची, इससे उसको लालसा हुई कि, किसी न किसी प्रकारसे एकबार उसके दर्शन अवश्य होने चाहिये। इसको पूर्ण करनेके लिये युक्ति क्या की जाय, इस विषयमें विचार शुरू हुआ, और अन्तमें सैयदुल्लाखाके पतित हृदयसे एक युक्ति निकली। वह यही कि, बादशाहके अन्तःपुरसे स्वयं बेगमसाहबाकी ओरसे—

कमसे कम उनके नामसे—उसके पास बुलावा भेजा जाय; और जब वह रंगमहलमें आवे, तब बादशाह ओटसे छिपकर यथेच्छ नेत्रसुखका अनुभव करें। बादशाहको यह युक्ति इतनी पसन्द आई कि उसने सैयदुल्लाखाँ (जो कि उस समय केवल मुख्य अर्दली था) की बड़ी प्रशंसा की; और उस युक्तिको कार्यमें परिणत करनेकी आज्ञा दी। उसने बेगमसाहबाकी ओरसे एक बाँदीको रामदेवरावके घर भेजा; और सन्देशा दिलाया कि, उन्होंने (रामदेवकी पत्नीको) बुलाया है। सैयदुल्लाखाने यह सन्देशा इस ढगसे भेजा कि, जिससे रामदेवरायको भी वह मालूम हो जाय। इधर बेगमसाहबाके पास यह सन्देश भेज दिया कि, रामदेवरावके घरके लोग अन्तःपुरमें आनेवाले हैं, इसलिये बादशाहकी आज्ञा है कि, उनका भलीभांति आदर-सत्कार किया जाय। इतना सब प्रबन्ध हो जानेके बाद उन स्त्रियोंके मिलनेकी जगह नियत की; और बादशाह जहासे छिपकर देखे, उस स्थानको भी निश्चित किया; और उसको खूब सजानेका प्रबन्ध किया। साथ ही साथ इस बातका पता किसीको नहीं लगने दिया कि, यह सारा प्रबन्ध किस लिए हो रहा है। रामदेवराव और उनकी पत्नीने जब देखा कि, बादशाहके अन्तःपुरसे, खास पटरानीकी ओरसे, उनको बुलाया गया है, तब वे इसपर मन ही मन बड़े आनन्दित हुए। रामदेवरावकी पत्नी उस दिन खूब बनठनकर बेगमसाहबासे मिलने गई। सम्पूर्ण प्रबन्ध बहुत ही उत्तम प्रकारका रहा। बादशाहकी इच्छाके अनुसार ही सारी बातें हुई। उसका लावण्य खूब मनमाना देखनेके लिये उसको अच्छा मौका मिला। परन्तु इसका परिणाम क्या हुआ? वह एकदम पागल हो गया। उसने सोचा कि, अब इसको लौटकर जाने ही न दिया जाय; और यह बात बहुत धीरेसे अपने इस विषयके मन्त्री—सैयदुल्लाखाँ—से कही। वह यही चाहता था, और जो कुछ वह चाहता था, वही बादशाहके मुखसे सुनकर उसको बहुत ही आनन्द हुआ। परन्तु ऐसी बात इतनी जल्दी होने देना उसे पसन्द न था। वह बड़ा धूर्त था। इसलिये उसने सोचा कि, यदि बादशाहको अपनी मुट्ठीमें करके अपना जीवन सार्थक करना

है, तो उसके लिये यह मौका हाथमें न जाने देना चाहिये। यह सोच-कर उसने उसकी उपर्युक्त इच्छाका प्रतिरोध करना शुरू किया। उसने बतलाया कि, हुजूरकी ओरसे यदि ऐसा विशासघात किया जायगा, तो बड़ा भयकर आन्दोलन उठ खड़ा होगा, और प्रजामे बड़ा भारी असन्तोष फैल जायगा। साराश यह कि, उसका एक अत्यन्त भयंकर चित्र उसने उसके सामने चित्रित कर दिया, और उस समय रामदेवकी पत्नीको वहासे विदा करवा दिया। पत्नी घर जाकर शाही अन्तःपुरकी सब बातें और बेगमसाहबाके आदर सत्कारका समाचार पतिसे बतलाने लगी, जिसे सुनकर उसके आनन्दका पारावार ही न रहा। उसने सोचा कि, अब क्या बात है—हमारी सब तरहसे तरक्की होगी। हमारी पत्नी जब बार-बार अन्तः पुरमें जाने आने लगेगी, तब बेगमसाहबाकी नजरों-में भी हमारी प्रतिष्ठा बढ जायगी, और बादशाहकी हमपर और भी अधिक मिहरबानी हो जायगी। किन्तु उस बेचारेको यह कल्पना भी न थी कि, हम जो ये मनके महल खड़े कर रहे हैं, उनकी नींव बड़ी बुरी तरहसे—बड़ी भयकर रीतिसे—खोली जा रही है। सैयदुल्लास्वरूपी घूस इस काममें लगी हुई थी। बादशाहको तो उस दिनसे और किसी बातका ध्यान ही नहीं रहा—रात दिन उसीका ध्यान—ऐसा एक क्षण भर भी नहीं गया कि जिस समय उसने रामदेवरावकी पत्नीका नाम न निकाला हो, और उसको लानेके लिये हठ न किया हो। परन्तु सैय-दुल्लाखॉ उस समय उसके साथ अपनी पूरी पूरी अकलसे काम ले रहा था जैसे किसी बाघको विशेष क्रुद्ध करनेके लिये उसको भूखा रखते हैं, अथवा कभी-कभी यों ही एक आध टुकड़ा उसके सामने डाल देते हैं—बस, इसी प्रकार वह कर रहा था। बार-बार उसको वचन देता कि, देखो अब कोई न कोई युक्ति निकालते ही हैं, और जब देखता कि, वह बहुत ही बिगड़ रहा है, तब एक आध दिन फिर बेगमसाहबाके नामसे सन्देशा भेजकर उसको अन्तःपुरमें बुलवाता, और उसकी एक दृष्टि उसपर डलवा देता। बस, ऐसा ही उसने चार पॉच बार किया। इससे बेगमसाहबाको भी बड़ा आश्चर्य हुआ कि, यह बाई बार बार

हमारे घर क्यों आती है। पाँचवीं वार जव रामदेवरावकी पत्नी आई, तव ऐसी कुछ बातें निकलीं कि, जिनसे सैयदुल्लाखाँको बड़ा भय हुआ कि, कहीं हमारा यह षड्यन्त्र खुल न जाय। इसलिये उसने सोचा कि, यह युक्ति अव आगे काम न देगी। इसके सिवाय पाँचवीं वार वादशाहकी हालत भी वहुत खराव हो गई, तव उसने सोचा कि, यह कहीं कोई वहुत ही अविचारपूर्ण कार्य न कर वैठे। इसलिये अव जल्दी ही दो कदम आगे वढ़कर और कोई न कोई मार्ग निकालना चाहिये, तभी यह कब्जेमें रह सकेगा, अन्यथा सारा मामला विगड़ जायगा। यह सोचकर उसकी दुष्ट वुद्धि कोई न कोई और ही अजीव युक्ति निकालनेमें लगी। वादशाह प्रतिदिन कमसे कम पाँच-सात वार उससे पूछता कि, "अव कोई युक्ति निकाली ?" वह कह देता, नहीं हुजूर, वड़ी कोशिश करता हूँ, पर अभी तक तो कोई युक्ति सूझी ही नहीं।" वादशाहने देखा कि, यह रोज रोज ऐसे ही टाल रहा है, तव एक दिन उसने स्वयं कहा, "देख सैयदुल्ला, तुझको तो कोई युक्ति नहीं सूझती; किन्तु मैंने एक निकाली है। वधिकोंके द्वारा रामदेवका वध करवाकर उसकी स्त्रीको खुल्लमखुल्ला अपने महलोंमें रखूँगा।" सैयदुल्लाखाँको यह युक्ति पसन्द न आई हो, सो नहीं; किन्तु उसने ख्याल किया, जव वादशाह ही अपनी ओरसे सारी कार्यवाही कर लेगा; तव फिर हमारा उसमें प्रभाव क्या रह जायगा ? अतएव उसने उसकी इस युक्तिका वड़ी चतुरताके साथ खण्डन किया; और यह वचन दिया कि, अव दो ही दिनके अन्दर मैं कोइ न कोई वहुत ही अच्छी युक्ति निकालता हूँ। वे दो दिन वादशाहको वड़ी मुशकिलसे वीते। उसने उसको वहुत ही तंग किया। अन्तमें उसने आकर वादशाहको यह युक्ति वतलाई—"रामदेवरावको दक्षिणकी ओर कर्नाटकमें उपद्रवोंका दमन करनेके लिये अथवा नवीन प्रान्त जीतनेके लिये भेज दिया जाय; और उसको अवकाश इतना थोड़ा दिया जाय कि, जिससे अपने घरके लोगोंको साथ लेजानेका विचार करनेके लिये भी उसे फ़ुरसत न मिले। इस प्रकारके कार्यके लिये वह वड़े आनन्दसे चला जायगा। इसके

सिवाय उसके घरके लोगोंको उसकी जागीरपर उसके पिताके पास कुशलपूर्वक भेज देनेका दायित्व आप अपने ऊपर ले लीजिये। उसके यहाँसे जाते ही मैं उसके पिताके पास यह समाचार भिजवा दूँगा कि, वह अपनी पत्नीसहित कर्नाटककी चढ़ाईपर चला गया। इसके सिवाय मैं इसका भी प्रबन्ध करूँगा कि, उसके पत्र उसके पिताके पास पहुँचने न पावें। रामदेवराव जब चला जायगा, तब उसकी पत्नीको, यह कहकर कि तुझे तेरे जागीरके गाँवपर तेरे श्वशुरके पास भेजते हैं, उसके घरसे हटाकर बिल्कुल गुप्त रूपसे किसी स्थानमें लाकर रखेंगे। इसके सिवाय इस विषयमें और किसीको कुछ भी नहीं मालूम होने देंगे। बस्तीके लोग और रामदेवराव यही समझेंगे कि उसका पिताके पास रवाना कर दिया। यही नहीं, बल्कि ऐसा भी प्रबन्ध करेंगे कि, जिससे इस प्रकार का समाचार उनके कानमें पहुँच जाय। लोगोंमें यह बात बिल्कुल फूटने नहीं देंगे। इधर रामदेवरावके घरके लोगोंका ऐसा विश्वास करा देंगे कि, वह उसके साथ चली गई। इस प्रकार कुछ दिन होनेके बाद रामदेवरावपर वहाँकी वहीं कोई तोहमत लगा देंगे, और वहीं उसका अन्त करवा डालेंगे। फिर चारों तरफ यह हूल उड़ा देंगे कि, उसकी पत्नी घर न जाते हुए स्वयं ही शाही जनानखानेमें आकर रहने लगी है।" बादशाहने जब उसकी यह युक्ति सुनी, तब उसकी तबीयत इतनी खुश हुई कि कुछ पूछिये ही नहीं। उसने समझा कि, बस—उसके समान चतुर और राजनीतिज्ञ कार्यकर्त्ता हमारे राज्यभरमें शायद ही और कोई हो। उसने उसके कथनानुसार सब कार्यवाही करनेका विचार किया। दूसरे ही दिन रामदेवरावको अपने निजी दरबार-हालमें बुलाकर उसकी खूब प्रशंसा की, और बहुत जल्द उस चढ़ाईपर चले जानेकी आज्ञा दी। उससे कहा कि, "देखो, तुम यदि कार्यपर बहुत जल्दी, एक क्षणका भी विलम्ब न लगाते हुए, चले जाओगे, और हमारे इच्छानुकूल कार्य करोगे, तो तुम्हारी कितनी तारीफ होगी कि, जिसको मैं आज बतला नहीं सकता।" बादशाह जब स्वयं ही ऐसा कह रहा है, तब फिर और क्या चाहिए? वे पहले ही एक बड़े महात्वकांक्षी पुरुष

थे, फिर उनको यह एक ऐसा मौका मिल रहा है कि, जिससे उनकी उस महत्वाकांक्षामें मानों एक प्रकारका अंकुर ही फूट रहा हो। उन्होंने तत्काल ही बादशाहकी आज्ञा स्वीकार कर ली। उन्होंने सोचा कि, यह हमारे घरके लोगोंको हमारे पिताके पास भेजनेका दायित्व लेता ही है, अब और काम ही कौन-सा है? हमारे भाग्य जागे, अब हम दक्षिण विजय करके ज्यों ही आये, त्योंही दरबारमें हमको और भी विशेष गौरव प्राप्त होगा। इस प्रकार आनन्दमें निमग्न होते हुए बेचारे रामदेवराव अपने महलमें वापस आये। इधर बादशाहने उनके लिये फौज-फाटाका सारा प्रबन्ध करके तीसरे दिन उनको वहाँसे रवाना कर दिया। सबलोग कहने लगे कि, रामदेवरावने अपने खान्दानका गौरव बहुत अच्छा बढ़ाया; और अब वे विजय करके ही वहाँसे लौटेंगे, इसमें कुछ सन्देह नहीं। सभी उनका खूब अभिनन्दन करने लगे। उनके जोशका ठिकाना न रहा। उन्होंने अपने पिताको पत्र लिखा; पर धूर्त सैयदुल्लाखाने उनके हरकारेको बीचमें ही फोड़ लिया, और उससे वह पत्र लेलिया। उसकी जगहपर उसने एक पत्र अपनी तरफसे उनके पिताको लिखा, जिसमें यह जतलाया कि, रामदेवरावको पत्र लिखनेका अवकाश नहीं मिला, इसलिए मैं उनकी ओरसे आपको यह पत्र भेज रहा हूँ। उसने सब वृत्तान्त उस पत्रमें लिखकर अन्तमें लिखा कि वे अपने घरके लोगोंको साथ लेकर चढ़ाईपर गये, आप कोई चिन्ता न करें। अवश्य ही उस पत्रको पाते ही उनके पिताको परम प्रसन्नता प्राप्त हुई—उस बुड्ढे के आनन्दका ठिकाना न रहा। फिर भी उसके मनमें यह जरूर आया कि, देखो, घरके लोगोंको साथ लेकर रामदेव चढ़ाईपर गया, यह अच्छा नहीं किया। परन्तु उस आनन्दके आवेगमें उसे इस बातपर विशेष विचार करनेका अवकाश कहाँ? उसने तुरन्त ही बादशाहको एक अत्यन्त उपकार-दर्शक और कृतज्ञता-प्रदर्शक पत्र लिखा, जिसमें यह जतलाया कि, लड़का आपहीका है, सब प्रकारसे आपके चरणोंमें समर्पित कर दिया है! वह पत्र जब दरबारमें आया, तब बादशाहने उसे सैयदुल्लाखाको दिखाया। दुष्ट सैयदुल्ला हँसकर बोलने ही बादशाह

के कानमें कहता है, "लड़का ही क्यों वह भी हुजूर······"। यह सुनते ही बादशाहको उसकी उस समय सूचक नीचतापर हँसी आई। इससे तो खासाहब और भी विशेष प्रफुल्लित हुए। फूले न समाये। अस्तु! जो हो, उस पत्रके कारण दरबारपर बहुतही अच्छा प्रभाव पड़ा। सभी बादशाहकी प्रशंसा करने लगे। उसने देखा कि, वाह, यह तो बहुत ही अच्छा काम बना, और सैयदुल्लापर पहलेसे भी अधिक प्रसन्न हुआ। इसके बाद दोही चार दिनमें उसकी कपट कार्यवाहीके अनुसार वह कार्य भी बहुत ही गुप्तरूपसे सिद्ध हुआ जो अत्यन्त नीचातिनीच था। अर्थात् बादशाहकी अत्याचारपूर्ण इच्छाके पूर्ण होनेका अवसर मिला। रामदेवरावकी पत्नी रम्भावतीके नामसे प्रसिद्ध हुई। परन्तु उसको भ्रष्ट करनेमें बादशाहको बड़े बड़े अत्याचारपूर्ण कार्य करने पड़े, और अन्तमें जब उसके मरने तककी नौबत आगई, तब वह लाचार हुई। इन सब बातोंका अत्यन्त दु खद इतिहास देनेका हमारा यहाँ विचार नहीं। उसका थोड़ासा दिग्दर्शनमात्र आगे चलकर उस स्त्रीके मुखसे ही पाठकोंको मालूम होगा। अस्तु।

रम्भावतीको भ्रष्ट करनेका गुप्त षड्यन्त्र बहुत दिनोंतक स्वयं अन्तःपुरमें भी किसीको मालूम नहीं होने दिया गया। आगे चलकर धीरे-धीरे उस स्त्रीके विषयमें जिज्ञासा बढ़ने लगी, और उसके सच्चे स्वरूपके प्रकट होनेकी सम्भावना भी बढ़ने लगी। यह देखकर सैयदुल्लाखा और उसके पिल्लुओंने उस स्त्रीके असली पतेके विषयमें अनेक झूठी-झूठी गप्पें उड़ानेमें खूब कमाल किया। इधर रामदेवराव और उनके पितामें जो पत्रव्यवहार होता, उसे वह बीचहीमें गायब करवा देता। इस विषयमें उसने पूर्ण दक्षतासे काम लिया, और उसे इसमें काफी सफलता भी हुई। अन्तमें उसने मानो अपनी नीचता अथवा अपनी काली कारवाईका कमालकर दिखलानेके निश्चयसे ही रामदेवरावको अपनी ओरसे एक पत्र लिखा। उसमें उसने अपनेको उनका बड़ा भारी मित्र प्रकट किया, और अत्यन्त विश्वास दिखलाकर, बादशाहके द्वारा रम्भावतीके भ्रष्ट, किये जानेका विस्तृत वृत्तान्त लिखा। उसमें सारा दोष बादशाहके-

ऊपर डाला, और अपने लिए लिखा कि, हमने उसको इस भयंकर कार्यसे पराङ्मुख करनेके लिए बहुत उपदेश किया; और जितने उपाय हो सकते थे, सब उसको बचानेके लिये किये; पर उसने हमारी एक न सुनी। इसके बाद अन्तमें उसने लिखा कि, "अब रम्भावती बादशाहकी सच्ची-सच्ची पटरानी बन चुकी है; और उसने मुझसे आज ही तेरा वध करनेके लिये, वधिकोंको भेजनेका, वचन दिया है। ये जल्लाद बहुत ही भयंकर रीतिसे तुम्हारा खून करनेके लिये आरहे हैं। सो, तुमको यद्यपि मुझपर प्रेम नहीं है, किन्तु मुझको तुमपर बड़ी दया आती है, और तुम्हारे स्नेहकी मैं सदैव आकांक्षा रखता हूँ, इसलिये अपना कर्त्तव्य समझकर, मैं बहुत ही गुप्तरूपसे तुमको यह पत्र लिख रहा हूँ। तुम्हारे विषयमें ये भयंकर घटनाएँ हुई हैं, इनको प्रकट कर देना जिस प्रकार मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ, इसी प्रकार आगेके लिये तुमको क्या करना चाहिए, इस विषयमें सलाह देना भी मैं कर्त्तव्य समझता हूँ! तुम खुद ही होशियार हो। पर ऐसे समयमें दूसरेकी ही अक्ल काम दिया करती है। इसलिये पहले तुम यह काम करो कि, इस पत्रके पाते ही वहांसे बहुत जल्द कहीं चले जाओ, और फिर बहुत दिन बाद वेशान्तर करके मेरे पास आकर मिलो। मुझे तुमसे और भी बहुत सी बातें बतलानी हैं। इस पत्रमें लिखी नहीं जा सकती। ऐसे नीच अधमाधम बादशाहकी सेवामें रहना मुझे तो एक मिनटके लिये भी नहीं आता। मैं बहुत ही उद्विग्न होगया हूँ। क्या बतलाऊँ? नौकरीका मामला है, तुम इस पत्रको पाकर तुरन्त ही फाड़ डालो।" इस पत्रको पाकर रामदेवरावके मनकी क्या दशा हुई, उसकी कल्पना नहीं की जा सकती। उनमें महत्वाकांक्षा बहुत भारी थी सही; परन्तु सबसे मुख्य बात तो यह था कि, उनको अपनी पत्नीपर बड़ा प्रेम था। और उनके शरीरमें सच्चा-सच्चा राजपूती रक्त दौड़ रहा था। अतएव पत्र पढ़ते ही उनका सारा शरीर एकदम जल उठा—वे क्रोधसे बिल्कुल अन्धे हो गये। बादशाहने हमारे साथ ऐसा विश्वासघात किया! यह देखकर उनको इतना भयंकर क्रोध आया कि, यदि बीजापुरमें वे इस समय

[illegible] आकर उन्होंने बादशाहका खून किया होता। पर [illegible] बादशाहके जानेकी आज्ञा और सैयदुल्लाखाँकी सूचनाके अनुसार कार्य करनेके अतिरिक्त उनके लिए कोई मार्ग ही नहीं था। सैयदुल्लाखाँको वे अत्यन्त नीच एक अर्दलीमात्र समझते थे, अपनी दृष्टिमें उसकी कोई भी कदर नहीं थी, पर आज वही उनके काम आया, इसपर उन्हें आश्चर्य हुआ, और उसके विषयमें उनके हृदयमें आदरभाव उत्पन्न हुए। अब उनकी महत्वाकांक्षाके लिये कोई भी कारण शेष नहीं रहा। उन्होंने सोचा कि, अब राज दरबारमें हम चाहे जितनी उन्नति करते जावें, पर उसका क्या मूल्य। स्त्रीका पतिव्रत्य बेचकर उसके बलपर अपनी उन्नति करना मानो अपने मुखपर एक ऐसा कलंक लगाना है, जो कभी हजार प्रयत्न करनेपर भी नहीं मिट सकता—न सिर्फ अपने ही मुखपर, बल्कि अपने कुल, अपनी मान मर्यादा सबको ही अक्षय कलंकसे कलंकित करना है। यह सोचकर उनको अत्यन्त परिताप हुआ, और उन्होंने इस बातका विचार किया कि, अब जल्लादोंके हाथसे अपने प्राणोंको बचाकर यहांसे बहुत शीघ्र चल देना चाहिये, और हमारे कुलमें कलंक लगानेवाले उस बादशाह-रूप राक्षसको शीघ्र ही यमपुरीका मार्ग दिखाना चाहिये, और उसके रक्तसे यह अपमान—यह कलंक, जहाँतक शीघ्र हो सके, धो डालनेका प्रयत्न करना चाहिये। अबतक स्वामिभक्तिका एक बन्धन उनके मनमें था, सो आज वह भी टूट गया, और वे एकदम बिगड़ उठे। बहुत जल्द उन्होंने सैयदुल्लाखाँकी सूचनाके अनुसार कार्य करनेका निश्चय किया, और वैसा ही किया भी। इधर सैयदुल्लाखाने यह सोचा था कि, ज्यों ही रामदेव उधर हमारे पत्रकी सूचनाके अनुसार भाग जायगा, त्यों ही हम इधर यह हूल उठावेंगे कि, उसने बादशाहके साथ कोई विश्वासघात किया, और इसी कारण जब बादशाहने उसको वहीं का वहीं प्राणदण्ड देनेका हुक्म किया, तब वह कहीं तुरन्त ही भाग गया। इसके सिवाय उसने यह भी सोचा कि, उसका विश्वासघात ऐसा कोई प्रकट किया जाय, कि जिसकी भयंकरताको सुनकर प्रत्येक प्रजाजन

उससे घृणा करने लगे ! उसने इस बातका भी पूरा-पूरा प्रबन्ध कर रखा था कि, जिससे रामदेवरावके वहांसे भागनेका समाचार उसे जल्दीसे जल्दी मिल जावे। इसके सिवाय उसने यह भी सन्धान बाँध लिया था कि, उधरसे वह समाचार आवे; और इधर उसके विरुद्ध हूल उठाई जावे; और फिर उसी क्रोधपर रामदेवके पिताको भी कैद करके मरवा डाला जाय। इसके सिवाय, बादशाहको अब वह उतनी ही बातें बतलाता था कि, जितनी बातें बतलानेकी खुद आवश्यकता समझता था, और बादशाहने तो उसे अत्यन्त राजनीति पटु और विश्वासपात्र कार्यकर्त्ता समझ ही रखा था। सब बातें उसके अनुकूल थीं—अब और क्या चाहिये ? उसको निश्चय था कि, रामदेवराव उसके उपदेशके अनुसार फौज फाटा छोड़कर वहांसे चल देगा; और फिर वह गुप्तरूपसे उससे आकर मिलेगा। इसलिए, इसके बाद उसने अपने मनमें एक यह भी भयंकर सन्धान बाँध रखा था कि, जहाँ वह एकान्तमें आकर उसको मिले, वहीं वह तुरन्त उसको गिरफ्तार करा देवे; और उसके विश्वासघातके लिए उसको प्राणदण्ड दिलावे। परन्तु उसका यह भयंकर षड्यन्त्र अन्ततक गुप्त नहीं रह सका। रामदेवरावके पिताको ऐसी कुछ खबर मिली कि, उनकी पुत्रवधू किसी संदिग्ध स्थानमें पड़ गई है, इसके सिवाय यह खबर भी उनके कानों, पहुँच गई कि, उनको पकड़कर मार डालनेके लिये भी दरबारसे हुक्म निकल चुका है। यह सुनते ही उन्होंने अपना स्थान छोड़कर वेशान्तर कर लिया। सैयदुल्लाखाने देखा कि, एक शिकार उसके हाथसे निकल गया, इसका उसे बड़ा ही अचम्भा हुआ। वह सोच ही न सका कि, उसके इतने गुप्त विचार इस प्रकार बाहर कैसे फूट गये। फिर भी यह कहकर उसने अपने मनको समझाया कि, हमारे विचार फूटनेके कारण यह शिकार हमारे हाथसे नहीं गया, बल्कि इसका और ही कोई कारण होगा। इधर रामदेवराव वहांसे भाग खड़े हुए, और वेशान्तर करके बीजापुरकी तरफ आये। बादशाहके उक्त दुष्ट कार्यका बदला लेनेको वे बिल्कुल तैयार थे। लेकिन इतनेमें एक आदमीने उनको पहचान लिया; और

उनको एक ऐसा पत्र दिया, जिसमे सैयदुल्लाखाँकी सब कार्यवाहियोंका पूरा-पूरा उल्लेख था। उस पत्रको देनेके बाद उस महाशयने उनसे कहा कि, तुम बहुत जल्द अमुक अमुक जगलको चले जाओ, और वहाँ अमुक जगहपर एक झोपड़ीमे कोई भिल्ल रहता है, उससे जाकर मिलो। उसने जो पत्र दिया, उसके अक्षर रामदेवरावकी पहचानके थे। इससे उनका चित्त द्विधामे पड़ गया। उनको यही निश्चय न होने लगा कि वे सैयदुल्लाखाँको अपना दुश्मन समझें या बादशाहको। अन्तमें उन्होंने यही विचार किया कि, उस भिल्लसे मिलनेके बाद, जो कुछ करना होगा, देखा जायगा। यह सोचकर वे उस पत्रमे लिखे हुए जगलमें जाकर उस भिल्लसे मिले। वह भिल्ल उनका पिता है।

अड़तीसवां परिच्छेद

और कुछ वृत्तान्त, और आगे

रामदेवराव अपने पितासे मिले। उस समय उन दोनोंके मनकी जो दशा हुई, और उन दोनोंमें जो बातचीत हुई, उनका सविस्तार वर्णन यहाँ देनेकी आवश्यकता नहीं है। क्योंकि उन बातोंको पाठकगण स्वय ही अपनी कल्पनासे भलीभाति विचार सकते हैं। बहुत देरतक तो वे दोनो एक दूसरेकी ओर एकटक देखते हुए चुपके खड़े रहे। इसके बाद दोनोंके चित्तमें एकदम कोई ऐसा विचार आया कि, जिससे उन्होंने एकदम अपनी अपनी गर्दन नीची कर ली, और फिर उसी दशामें वे बहुत देरतक खड़े रहे। किसी प्रकार भी किसीके मुखसे कोई शब्द न निकला। परन्तु वह दशा भी कितनी देर टिक सकती थी? कुछ देर बाद दोनों एकदम खूब लिपटकर मिले, और फिर एक दूसरेसे धीरेसे ही छूटकर वे दोनों अलग अलग नीचे बैठ गये। इसके बाद रामदेवराव, अपने पितासे बोले, "आपने यह वृत्तान्त लिखकर हमारे पास भेजा, इससे मेरा चित्त दुविधामें पड़ गया है। वास्तवमे हमारा शत्रु कौन है? बादशाह या सैयदुल्ला?" "सैयदुल्ला। वह नीच-

सैयदुल्ला !" उनके पिताने उत्तर दिया। उसे सुनकर रामदेवराव कुछ देर ठहर गये; और फिर एक लम्बीसी साँस लेकर कहते हैं, "तब तो ठीक है। यह बात यदि सत्य है, तब कोई हर्ज नहीं। अब स्वामिद्रोहके पातकसे हम बच जायंगे। आप लड़कपनसे हमको यह शिक्षा देते आये हैं कि, स्वामी चाहे जो कर डाले, फिर भी उसका विश्वासघात करके उससे बदला लेना सच्चे सेवकका व्रत नहीं। आपकी यह शिक्षा हमारे मनको बारम्बार टोंच रही थी। परन्तु अब मालूम हुआ कि, इस सम्पूर्ण पापकर्मको करानेवाला वही नीच सैयदुल्ला है, और यदि सच है, तो मैं उसके रक्तमें अपने हाथ डूबोकर अवश्य ही अपने मनको सन्तुष्ट कर लूँगा, और फिर···" इसके आगे उनके मुखसे शब्द ही न निकला। वे चुप हो रहे। उनके पिताने बहुत देरतक अपने मनको रोका; और फिर जब देखा कि, पुत्र अब कुछ शान्त हो गया है, तब वे धीरेसे ही बोले, "तेरा दुश्मन सैयदुल्ला ही है, दूसरा कोई नहीं। उसने यदि यह सारा षड्यन्त्र न रचा होता तो बादशाह इतना कभी नहीं कर सकता था। इसका साक्षी मैं स्वयं ही हूँ। मैंने बारीकीके साथ सब जाँच की है; और मेरा प्राण बचानेवाली सिर्फ 'वही' है—यदि उसने समयपर मुझे सूचना न भेज दी होती, तो जल्लादोंके हाथसे अत्यन्त भयंकर रीतिसे मेरा खून हो गया होता। उसने (अपनी पुत्र-वधूकी तरफ इशारा करता है) जो कुछ समाचार मुझे दिया, वह बिलकुल सच निकला। मैं अपने महलको छोड़कर बाहर चला आया, इसके पाव घण्टे बाद ही जल्लाद लोग महलमें जा घुसे। मैं मिला नहीं, इसलिये उन्होंने बड़ा उपद्रव मचाया। नौकर लोगोंको अनेक यातनाएँ दीं, और अन्तमें महलको जलाकर विध्वंस कर दिया—उस-पर हल चलवा दिया। मैं अपने प्राणोंको कुछ कर डालनेवाला था, लेकिन सोचा कि, एक बार तुझसे मिल लूँ सब सच्चा समाचार तुझसे बतलाकर बदला लेनेका कार्य तुझको सौंप दूँ, और तब जो कुछ करना हो, करूँ। बस, यही सोचकर मैं किसी न किसी प्रकार प्राणोंको रखे रहा। मैं तुमसे विश्वासपूर्वक कहता हूँ कि, हमारा—हमारा ही नहीं,

बल्कि सारी बादशाही प्रजाका—बादशाहका—दुश्मन सैयदुल्ला ही है; इसके अतिरिक्त और कोई नहीं। उसका यदि तू नाश करेगा, तो तेरे कुलका कलङ्क धुल जायगा—यही नहीं, बल्कि सारे संसारका आशीर्वाद भी तुझे मिलेगा ... "

पिता इस प्रकार बराबर कुछ न कुछ कहता रहा, पर रामदेवका चित्त उस ओर बिलकुल ही नहीं था। पिताके मुँहमें पहले पहल तो उसके भाषणमें "वही" शब्द जबसे उनके कानमें आया, तभीसे उनकी चित्तवृत्ति बिल्कुल भ्रान्तसी हो गई थी। वे बराबर तबसे अपने ही ध्यानमें निमग्न थे। 'वही' के दो अक्षर उनके कानोंमें मानो तपी हुई सलाइयोंकी भाँति भासित हुए। इन्हीं दो अक्षरोंने उनके मनको ऐसा कुछ अशान्तिमें डाल दिया कि, जिसका कुछ ठिकाना नहीं था। "सन्देशा भेजनेवाली वही थी। क्या वह इतनी निर्लज्ज है, जो अबतक जी रही है? उसने आत्महत्या करके क्या अभीतक इस संसारसे अपना छुटकारा नहीं कर लिया? पिताके पास सन्देशा भेजती है। उनके और मेरे प्राणोंकी उसे इतनी परवा है कि, जिसके कारण उसने भ्रष्टतातक सहन कर ली! नहीं। कभी नहीं हो सकता। अपने शत्रुके साथ ही साथ उसका भी रक्तपात करना चाहिए। ऐसा करनेसे पाप नहीं लग सकता; पर पिताजीको इस विषयमें कुछ भी ख्याल नहीं मालूम होता, यह क्या बात है? अहाहा! प्राचीन राजपूतोंका समय कितना पवित्र था! उस समयमें अपने देखते-देखते अपने स्त्रियोंके प्राण ले लेते थे, और तब जो कुछ करना होता था, करते थे। पर आज हम अपनी भ्रष्टा स्त्रीके छिपकर भेजे हुए सन्देशोंपर अपने प्राण बचानेको तैयार हुए हैं। कल शायद उन्हींकी शिफारिशोंसे बादशाहकी कृपा सम्पादन करके कोई ऊँचासा पद भी प्राप्त करनेके लिये आगे आवेंगे! इससे तो स्त्रीहत्याका पाप भी सिरपर ले लेना कोई अनुचित न होगा, और आत्महत्या कर लेना भी कुछ बेजा न होगा। ऐसे कलंकित जीवनसे तो मर जाना ही अच्छा!" इस प्रकारके विचार उनके मनमें बराबर आते रहे, और इधर उनके पिताका भाषण भी जारी रहा। उपर्युक्त रीतिसे विचार

करते करते एकदम उनके मनमें कोई भयंकर विचार आया ; और वे अपने पितासे बोले, "क्या कहते हैं ? यह सारी शत्रुता सैयदुल्लाखाकी ही है ? सारा षड्यंत्र उसका है ? और यह समाचार आपको उस चांडालिनने भेजा ? उसीने भेजा ? उसी चाडालिनके द्वारा आया ? और उसी समाचारको पाकर आप अपने प्राण बचानेको भगे ?"

अन्तिम प्रश्नके भीतरका भावार्थ और मर्मभेदक भाव उनके पिताके ध्यानमें न आया हो, सो नहीं। किन्तु उन्होंने, उस विषयमें कुछ भी प्रकट न करते हुए, एकदम इस प्रकार कहा, "हाँ, उसीने भेजा। उसे चाडालिन इत्यादि कहकर.गालियाँ देनेसे क्या लाभ ? वह कर ही क्या सकती थी ? उसको कुशलपूर्वक पहुँचा जाना किसका काम था ? अपने साथ लेजानेकी बुद्धि क्यों नहीं हुई ? जिस दशामें उसके साथ विश्वासघात किया गया, उस दशामें कोई भी होता—उसके साथ और क्या होसकता था ? उसके साथ विश्वासघात होनेका दोष किसपर है ?" ऐसा मालूम हुआ कि, कहीं उसी विषयको लेकर पिता-पुत्रमें झगड़ा न होने लगे; पर कुशल हुई थोड़ेहीमें निपट गया। पिताको जितनी बातें प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष-रूपसे मालूम हो सकती थीं, उतनी सब उसने मालूम कर ली थीं; और सैयदुल्लाखाके भयंकर काले षड्यन्त्रका सारा वृत्तान्त यद्यपि रम्भावतीके द्वारा ही उसके पिताको मालूम हुआ था, तथापि जब वह सारा वृत्तान्त अपने पितासे स्वयं रामदेवरावने सुना, तब उनको एकदम वहीं आत्महत्या कर लेनेकी इच्छा हुई, पर अन्तमें उनके मनमें यह विवेक जाग्रत होगया कि, इस प्रकार आत्महत्यासे कोई लाभ नहीं। पहले उस नीचका रक्तपात करके उसमें अपने हाथ डुबाने चाहिये कि, जिसने हमारे साथ ऐसा भयकर विश्वासघात किया है—उससे बदला लिये बिना आत्महत्या कर लेना बिल्कुल कायरता होगी। बस, यही सोचकर उन्होंने अपनी घोर प्रतिज्ञा की। परन्तु फिर उन्होंने सोचा कि, हमारी यह इतनी घोर प्रतिज्ञा एकदम बहुत जल्द पूर्ण नहीं होगी, इसमें कुछ अवकाश लगेगा; और यदि हम इसको उतावलीके साथ पूर्ण करना चाहेंगे, तो बहुतेरे विघ्नोंसे हमको सामना करना पड़ेगा; यही

सब सोचकर उन्होंने कुछ काल अज्ञातवासमें ही व्यतीत करनेका निश्चय किया, और सूर्याजीके ग्रामसे थोड़ी दूरपर एक जंगलमें वटवृक्षके नीचे एक झोपड़ी बनाकर वे उसमें कोलभिल्ल और बहेलियोंके समान अपना जीवन बिताने लगे। हाँ, बीच-बीचमें वे बीजापुर अवश्य ही आते थे, नाना प्रकारके भेष बदलकर खबरें ले आते थे, और अपने बदला लेनेका यथोचित मौका न देखकर वैसे ही जलते-भुनते लौट आते थे। जंगलमें वे दोनों भिल्ल रहते थे, पर सूर्याजीको छोड़कर अन्य किसीको भी उनके स्वरूपका पूरा-पूरा परिचय नहीं था। वे बहुत दिनोंतक तो कुछ बोलते ही न थे, और न किसीसे उनका कोई संपर्क था, सूर्याजी अवश्य ही बिलकुल गुप्तरूपसे कभी-कभी उनके पास हो आया करते थे, और उनका समाचार लेकर फिर अत्यन्त गुप्तरूपसे लौट जाया करते थे। उन्हीं दिनोंके लगभग सूर्याजीके घरपर सैयदुल्लाखाने धावा करवाया। उस धावेमें उनके घरकी क्या दशा हुई, और उसका आबुर्दा प्यारेखा किस प्रकार श्यामाके द्वारा मारा गया, इत्यादि बातें पाठकोंको पहलेके परिच्छेदोंमें विदित हो चुकी हैं। उस समय पीछेसे मुसलमानोंने सूर्याजीके महलोंमें आग लगा दी थी, और उस आगसे सूर्याजीकी धर्म-पत्नी, उनके छोटे बच्चे और स्वयं सूर्याजीको भी मृत्युके मुखसे बाहर खींच लानेवाला जो कालाकलूटा व्यक्ति पाठकोंको दिखाई दिया था, वे हमारे यही रामदेवराव थे। यही उन सबको आगके मुखसे बचाकर अपनी झोपड़ीमें ले गये, वहां फिर उनके सम्पूर्ण चरित्रमें क्या क्या परिवर्तन होते गये, सो सब पाठकोंको मालूम है। सूर्याजी और अपनी बहनको जब रामदेवने लाकर अपनी झोपड़ीमें रखा, तब उन्हें मालूम हुआ कि, अब शायद हमारे अज्ञातवासमें कोई बाधा न आवे, और यही सोचकर पीछेसे उन्होंने अचानक अपना स्थान बदल दिया था, जिसका वृत्तान्त पीछे आ ही चुका है। उसके बाद और भी जो जो घटनाएँ हुईं, वे सब पाठकोंको मालूम हैं।

उन घटनाओंमें पाठकोंको यह भी स्मरण होगा कि एकबार राम-देवका अपने पितासे बातोंही बातोंमें कुछ झगड़ा हो गया था, और

उसी समय उन्होंने अपने शत्रुसे बदला लेनेकी वीर प्रतिज्ञा की थी। यही नहीं, बल्कि उस प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये एक खास अवधि नियत करके वे अपने पिताको छोड़कर एकदम बीजापुर चले आये थे। वहाँ आकर उन्होंने बड़ी-बड़ी विचित्र कारस्तानियाँ कीं। एक दो विश्वासपात्र मनुष्योंकी सहायतासे भेष बदलने और उस बदले हुए भेषके अनुसार कार्य करनेका कौशल उन्हें अच्छी तरह सिद्ध हो गया था। थोड़े ही दिनमें अनुभव प्राप्त करके वे इस कार्यमें बड़े निपुण हो गये। इसके बाद भेष बदल बदलकर उन्होंने अनेक स्थानोंमें अपना बहुत अच्छा प्रवेश कर लिया; और सैयदुल्लाखाके विषयमें सब बातोंका पूरा-पूरा ज्ञान रखने लगे। उनका ऐसा निश्चय था कि उसको कहीं मुकाबलेमें खड़ा करके, अपना सारा वृत्तान्त उससे प्रकट करके, तब उसका वध करें, और इसीमें हमारा पुरुषार्थ भी है, और ऐसा ही हम करेंगे। उसको चुरा छिपाकर मारने अथवा उसकी असावधान दशामें विश्वास-घातक वधिककी भाँति वध करनेमें कोई भी खूबी नहीं, और न ऐसा करना हमारे लिये शोभा देगा। इस प्रकारका सम्पूर्ण निश्चय करके उन्होंने सोचा था किसी युद्धमें उसका सामना करना ठीक होगा, और यदि युद्धका मौका न मिलेगा, तो अकेले ही उसको पकड़ेंगे, और उसके हाथमें तलवार देकर असियुद्धमें उसे प्रवृत्त करके तब उसका शूरवीरकी भाँति वध करेंगे। परन्तु इस बातका उन्हें विश्वास नहीं था कि, इन दो बातोंमेंसे हमारी एक बात भी पूर्ण न होगी। अस्तु। सैयदुल्लाखापर निगाह रखते हुए बीजापुरमें वे बुड्ढे मोलवी अथवा फकीर या साईंका भेष धरकर रम्भावतीसे भी कभी-कभी मिलते रहते थे। यही नहीं, बल्कि एक दो बार उसका वध करनेके लिए उन्होंने शस्त्र भी उठाया था, पर अन्तमें स्त्रीहत्याका पाप करनेके लिये उनका हाथ नहीं उठा। इसके सिवाय उन्होंने यह भी सोचा कि, इसका वध करनेके बाद यदि हम कहीं पकड़ लिये गये, तो हमारी असली प्रतिज्ञा जो सैयदुल्लाखाके वध करनेकी है, सो एक ओर रह जायगी; और हमको तुरन्त ही प्राणदण्ड मिलेगा। इसीलिए उन्होंने सोचा कि, अब वह तो चूंकी एकबार भूट

हो ही चुकी है, अब उसको दो महीने इसी प्रकार रहने देनेमें कोई हानि नहीं है—पहले हम अपने शत्रुका प्राण हरण कर लेवें, तब फिर उसका वध करनेमें कोई कठिनाई नहीं पड़ेगी। बस यही सोचकर वे अपने कट्टर शत्रुका वध करनेका अवसर देख रहे थे। बीजापुरके घर घरका पूरा पूरा समाचार उनको सदैव मिलता रहता था। ऐसे ही समाचारोंसे लाभ उठाकर उन्होंने रणदुल्लाखांके महलके तहखानेसे,—अहमदके पतेसे—नानासाहबका छुड़ाया था। इसके बादका सारा वृत्तान्त पाठकोंको मालूम है, इसलिये अब यहांपर उस विषयमें कुछ भी उल्लेख न करते हुए यह बतलाना चाहिये कि, सैयदुल्लाखांका अन्त करनेके बाद रामदेवरावने क्या किया। उससे बदला लेनेके बाद सूर्याजी तथा अन्य लोगोंने भी रामदेवरावसे कहा कि, अब तुम कहीं मत जाओ, पर उनका चित्त ठिकाने नहीं था। उनको इस बातका अत्यन्त दुःख था—मरणप्राय दुःख था—कि उनका वध अन्तमें वे किसी वीर पुरुषकी तरह नहीं कर सके। परन्तु बेचारे करते क्या? कोई उपाय न था। अस्तु। अब अन्तमें एक बात और रह गई, और वह बात थी रम्भावतीका निपटारा करना। इसलिये उसका निपटारा करनेके लिये उन्होंने बीजापुरको प्रयाण किया। बादशाहके अन्तःपुरमें जानेके लिये साई बाबाका भेष उनके लिये विशेष उपयुक्त था, क्योंकि उस भेषमें वहांके पहरेदार और दासी लोग उनका बड़ा आदर करती थी और इसी भेषसे वे इसके पहले और भी कई बार वहाँ गये थे। इस बार भी वे साई बाबाके भेषसे ही बिलकुल शामको वहाँ पहुँचे। संयोगवश बादशाह उस समय शराबके नशेमें बिलकुल बेहोश पड़ा था, अतएव रम्भावतीसे उनकी भेंट हो गई। वह उनको देखते ही पहचान गई। रामदेवरावने शान्ति-पूर्वक उससे कहा, "तू बागमें चल, वहाँ एकान्तमें तुझसे कुछ कहना है।" उन्होंने यद्यपि ये शब्द बहुत ही शान्तिके साथ कहे थे, परन्तु वह यह भलीभांति जानती थी कि, उनका चित्त कितना क्षुभित हो रहा है। अस्तु। क्षणमात्र वह कुछ नहीं बोली, फिर तुरन्त कहती है, "आती हूँ आप अमुक ओर, अमुक पुष्पकरणीके

पास, जाकर खड़े हों।" यह कहकर वह वहांसे चल दी। लगभग चौथाई घड़ीमें ही वह वहाँ पहुँच गई। इस समय उसकी चेष्टा बहुत ही विचित्र हो रही थी। उसको देखते ही रामदेवरावकी जिह्वा मानो बिलकुल चिपक गई, और उनका हाथ तो बिलकुल उठने ही न लगा। वे बिलकुल स्तब्ध खड़े रहे। उनके चित्तकी दशा, वह ताड़ गई, और धृष्टताके साथ आगे आकर उनसे बोली, "अब मैं जो कुछ कहने वाली हूँ, उसमें निर्लज्जता तो अवश्य ही है, पर लाचारीसे कहना पड़ेगा। आप इस समय यहाँ किस उद्देश्यसे आये हैं; सो मैं जानती हूँ; और उस बातके लिये मैं तैयार भी हूँ। पर आपके ही हाथसे उसके होनेकी आवश्यकता नहीं है। आपको इस पापमें पड़नेकी क्या जरूरत है? देखिये, यह शीशी आज कितने ही दिनोंसे मैं अपने पास रख रही हूँ। आपकी आज्ञा प्राप्त करके इसके उपयोग करनेका मेरा निश्चय था। जिस दिन पहले पहल आपको मैंने पहचाना, उसी दिन मैं इसको लाई। इस शीशीका उपयोग तो किसी न किसी दिन होना ही था; पर इच्छा थी कि, एक बार आपका समाचार फिर मिल जाय; और तब मैं अपने जीवनका खुशीके साथ अन्त करूँ। मुझको इन चाण्डालोंने बाह्यत. भ्रष्ट किया है; पर मैं अन्तःकरणसे अब भी वही बनी हूँ। बाह्यतः भ्रष्ट करनेमें भी इनको बड़े-बड़े प्रयत्न करने पड़े; मुझे बड़ी बड़ी भयंकर धमकियाँ इन्होंने दीं; और बड़े-बड़े अत्याचार किये। उन सबको मैं बतलाना नहीं चाहती। जो भी कुछ हो; मैं भ्रष्टा अवश्य हो गई हूँ; और अब उन सब बातोंको कहनेसे कोई लाभ नहीं है। बहुत समयतक तो मेरे ऊपर इतना सख्त पहरा रखा गया था कि, मैं अपने जीवनका अन्त करनेमें भी बिलकुल असमर्थ थी। उसी बीचमें मुझे ऐसी खबरें भी मिलीं कि, आपको ये नरपिशाच न जाने क्या क्या कष्ट देकर क्या कर डालना चाहते हैं। इसलिये मैं बहुत ही घबड़ाई; और इस बातका विचार करने लगी कि, आपके प्राण बचानेके लिये मैं किन किन उपायोंसे काम लूँ। मुझे अपने निजके प्राणोंकी रत्तीभर भी चिन्ता नहीं थी। सिर्फ मैंने यही सोचा कि, इस समय यदि कपटसे मैं काम

नहीं लूँगी, तो आपकी और श्वसुरजीकी जानको न जाने ये राक्षस क्या कर डालेंगे। इसीलिये किसी प्रकार प्राणोंको रखा। इच्छा धारण की और उस अपनी भ्रष्टावस्थामें भी कपटपूर्ण कार्रवाइयोंमें इन दुष्टोंकी सब गुप्त गुप्त कारस्तानियाँ मैंने जान लीं। इसके लिये नाना प्रकारकी युक्तियाँ और दाँव पेंच मैंने किये। इस प्रकार वे सब गुप्त कारस्तानियाँ समझकर फिर मैंने श्वसुरजीके पास उनकी खबर भेजी। मैं ईश्वरको साक्षी देकर आपसे कहती हूँ कि, आप मेरे बाह्य आचरण, मेरी बाह्य भ्रष्टताका खयाल करके मुझको सचमुच ही भ्रष्टा न समझें। मैं अन्तः-करणसे बिलकुल निर्मल हूँ। उस दुष्टका अन्त आपके हाथसे हो गया, इसी बातके जाननेको मैं उत्सुक हूँ, सो आप बतलाइये, और फिर मैं इस शीशीका विष पान करके अपनी देहका अन्त करूँ। ईश्वर मेरे सच्चे अन्तःकरणका पक्का साक्षी है। वह मुझे जन्म जन्मान्तरमें आपका ही साथ देगा। जाइये, अब विलम्ब न कीजिये—यह सुसमाचार एक बार मुझे सुनाइये कि उस दुष्टका अन्त आपके हाथसे हो गया—फिर मैं एक क्षणका भी विलम्ब न लगाते हुए अपने प्राणोंका बलिदान आपके चरणोंपर कर दूँगी।"

रामदेवराव शान्तिपूर्वक सुन रहे थे। परन्तु उनकी चेष्टासे यह कुछ नहीं मालूम हो रहा था कि, उसका कथन उनको सत्य मालूम हो रहा है अथवा नहीं। उसका कथन समाप्त होते ही किसी निराश और दुश्चित्त मनुष्यकी तरह वे उससे कहते हैं, "अच्छा, तो अब तू पीले यह जहर! और इस पृथ्वीपरसे अपने भ्रष्ट शरीरका अन्त कर। मैं उसका वध कर आया।"

रम्भावती क्षणभर शान्त खड़ी रही, और फिर एकदम इतना ही प्रश्न उच्चारण किया—"सचमुच?" इसपर रामदेवराव फिर उससे उपर्युक्त दुश्चित्तताके ही साथ कहते हैं, "हाँ! हाँ! सचमुच। तुझको दुःख होता है क्या?"

रम्भावती फिर विशेष कुछ नहीं बोली। तुरन्त ही उस शीशीकी डट्टी निकाली और शीशीको अपने मुँहमें लगाकर सिर्फ इतना ही

कहा—"हाँ, मुझे दुःख होता है कि, आपको मेरी सच्ची परीक्षा बिलकुल नहीं हुई। अब इस जहरके घूँटसे ही हो।" ऐसा कहती हुई एकदम वह उस हलाहलको पान कर गई।

× × × ×

दूसरे दिन एक स्त्री और एक पुरुषकी लाश उस बागमें मिली। रामदेवराव यहाँ आत्महत्या करके मरे, अथवा किसी दूसरेने उनको मारा, किसीको मालूम नहीं हुआ।

उन्यासीवां परिच्छेद

सुलतानगढ़पर

रामदेवरावका सारा चरित्र पिछले परिच्छेदमें परिपूर्ण हो चुका। अब यहाँपर रम्भावतीके विषयमें थोड़ा उल्लेख अवश्य करना है। मनुष्य सोचता कुछ है; और होता कुछ है। वह तो प्रायः इसी विचारसे अपने सब कार्य करता है कि ऐसा करनेसे अमुक-अमुक परिणाम होगा; परन्तु कभी-कभी ऐसा भी हो जाता है कि, जो कुछ वह सोचता है, वह तो होता ही नहीं; और कुछ अन्य ही परिणाम उसके सामने उपस्थित होता है। रम्भावतीने इस उद्देश्यसे वह हलाहल पान किया था जिससे उसके पतिको आँखों देखते उसके अन्तःकरणकी पवित्रता स्पष्ट प्रकट हो जाय; और वह अपने उस अत्यन्त अपवित्र जीवनक्रमसे मुक्त हो जाय। पर बेचारीका उद्देश्य जैसाका तैसा सिद्ध नहीं हुआ। वह बेहोश पड़ी थी—जहरका पूरा-पूरा प्रभाव उसपर अभी नहीं हो पाया था इतनेमें एक दासी वहाँ पहुँच गई। परिणाम यह हुआ कि, चारों ओर दौड़-धूप शुरू हो गई; और राजवैद्यकी औषधियाँ देकर उसके विषका प्रभाव नष्ट किया गया; पर फिर भी वह सर्वथा चंगी कभी नहीं हुई। हृदयको अत्यन्त पवित्र और दृढ़ रखकर बादशाहकी दुस्सह यातनाओंमें उसे और भी बहुतसा समय व्यतीत करना पड़ा। हाँ, इतना अवश्य हुआ कि, बादशाहकी कृपा उसपर बराबर वैसी ही बनी रही। सैफुल्ला-

खाकी मृत्युसे बीजापुरके दरबारमें, और दरबारसे बाहर भी, किसीको कोई शोक नहीं हुआ। बहुत जल्द बादशाहके मनमें भी उसका नाम पानीकी लकीरकी भाँति ही मिट गया, जैसा कि रामदेवने सैयदुल्लाखासे कहा था। इधर बादशाहके पास यह समाचार भी आया कि, सुल्तान-गढ़का किला शहाजीके लड़केने ले लिया। पर उसका भी उसको कोई विशेष महत्व मालूम नहीं हुआ। शिवाजीपर कोई विशेष क्रोध भी उसका नहीं देखा गया, और यदि कुछ देखा भी गया, तो वह बहुत दिनतक टिक नहीं सका। क्योंकि इधर शिवाजीकी ओरसे भी दरबारको इस अभिप्रायका एक पत्र लिखा गया कि, मैं भी आपका सेवक ही हूँ—आपके सेवकका एक पुत्र हूँ—इस किलेपर सिर्फ इसी उद्देश्यसे आकर रहने लगा हूँ—जिससे इस ओरके प्रदेशकी पूरी-पूरी चौकसी रहे और मेरा कोई भी उद्देश्य नहीं। इस गौरवयुक्त पत्रका दरबारमें अच्छा ही प्रभाव पड़ा, और ऐसा दिखाई दिया कि, उनके इस कार्यका थोड़े ही में वहाँ विस्मरण हो गया।

परन्तु ये सब घटनाएँ तो बहुत आगेकी हुईं। वास्तवमें किला जिस दिन हस्तगत किया गया, उस दिनके बाद फिर किलेपर क्या-क्या घटनाएँ हुईं, सो हमको यहाँपर बतलानी चाहिये।

पाठकोंको मालूम है कि, नानासाहब बुरी तरहसे घायल हुए थे, और पहले वे मैदान ही में पड़े थे, फिर शिवाजीने उठवाकर महलमें भिजवा दिया था। उनकी धर्म-पत्नी भी, अपनी दासीके साथ, उसी मौकेपर किलेपर आ गई थी, अतएव महलमें पहुँचनेपर उनकी सेवा-शुश्रूषाका भी बहुत अच्छा प्रबन्ध होने लगा। उस साध्वीने उनकी किस लगनके साथ शुश्रूषा की, सो बतलानेकी आवश्यकता ही नहीं है। उनका घाव बहुत गहरा था, अतएव लोगोंका खयाल था कि, यह बहुत दिनमें आराम होगा, और सच ही था, क्योंकि कई दिनतक तो वे बिलकुल बेहोशीकी ही हालतमें रहे। बाह्य जगत्का उनको कुछ भी ज्ञान नहीं था। एक दिन तो उनकी तबीयत ऐसी खराब हो गई कि, उस रातको उनका बचना बहुत ही कठिन दिखाई देने लगा। उनकी

उस दशामें सभी लोगोंका मन बहुत ही उदास हो रहा था; पर उसमें भी दो व्यक्तियोंका मन बहुत अधिक शोकग्रस्त दिखाई दे रहा था। एक तो उनकी धर्मपत्नी और दूसरी फातिमाको स्वामिनी रणदुल्लाखाकी बहन मेहरजान। बचपनकी कई घटनाओंके कारण मेहरजानका प्रेम नानासाहबपर पूर्णतया हो गया था। परन्तु यह बात स्पष्टतया कभी किसीपर भी प्रकट नहीं हुई थी। वह एक अत्यन्त कुलीन घरकी बेटी थी। फातिमाके अतिरिक्त उसके मनका भाव, शब्दोंसे तो क्या—कल्पनासे भी और किसीपर प्रकट नहीं हुआ था। उनकी धर्मपत्नीको जब उसके भ्राताने बीजापुरमें लेजाकर अपने महलके पास ही रखा, तब उसको इस बातका समाचार तुरन्त ही मिल गया था; और उसने इस बातकी भी खबरदारी रखी थी कि, उसके भाई रणदुल्लाखांके द्वारा उसके साथ कोई अविचारपूर्ण व्यवहार न होने पावे। यही नहीं, बल्कि अहमदने जब उनको अत्यन्त नीचताके साथ उसके महलके तहखानेके अन्दर लाकर बन्द किया, तब उसके ही कहनेसे फातिमाने उनके साथ अच्छा व्यवहार किया था, और उनको सब प्रकारकी फिक्र रखी थी, सो पाठकोंने उसी समय ताड़ लिया होगा। पहले पहल तो जब फातिमाको यह मालूम हुई कि, अहमद जिस व्यक्तिको कैद कर लाया है, वह अमुक ही है, तब उसने तुरन्त जाकर अपनी मालकिनसे नहीं बतलाया, क्योंकि वह जानती थी कि, इस समाचारको पाकर उनको बड़ा दुःख होगा; और रणदुल्लाखासे वह प्रकट रूपसे कुछ कह भी नहीं सकेगी। इसके सिवाय अहमदने उसे यह भी विश्वास करा दिया था कि, उनको रणदुल्लाखाकी आज्ञासे यह कष्ट दिया जा रहा है। किन्तु, जो हो, अन्ततक वह समाचार फातिमा गुप्त नहीं रख सकी। अपनी मालकिनसे उसे बतलाना ही पड़ा; और उनको छुड़ानेके लिए मेहरजान, अपनी लाज एक ओर रखकर, उस तहखानेकी ओर गई, वहाँ उसे उसके भाईने भी देख लिया, इत्यादि सब बातें पाठकोंको मालूम है। यहाँपर सिर्फ तात्पर्य यही है कि, रणदुल्लाखाको भी इस बातका संशय हो गया था कि, मेहरजान नानासाहबपर प्रेम रखती है।

किन्तु उसने अपने इस संशयको मिटानेका कभी प्रयत्न नहीं किया। उसकी ओर वह उपेक्षाकी दृष्टिसे ही देखता रहा। हाँ, एक दो बार जब उसने मेहरजानके विवाहके सम्बन्धमें बात निकाली, तब उसने यही प्रकट किया कि, वह विवाह नहीं करेगी—आजन्म अविवाहित रहेगी। इससे उसका उपर्युक्त संशय दृढ़ आश्रय हो गया।

जो हो, नानासाहबकी उस आसन्नावस्थामें मेहरजानके मनकी जो दशा होरही थी, उसकी कल्पना पाठकोंको स्वयं ही करनी चाहिए। वे जितने दिन बीमार रहे, उतने दिनोंके बीचमें कई बार वह उनको देखने आई थी। परन्तु बराबर बहुत देरतक वह कभी नहीं बैठी। परन्तु आज जब कि उनकी दशा बहुत ही खराब होरही थी, वहाँसे उठनेकी उसका जी नहीं चाहता था, और बराबर उसके नेत्रोंमें आँसू आरहे थे, परन्तु फिर भी उनको उसने किसीपर प्रकट नहीं होने दिया। सायंकाल होनेको आया, परन्तु फिर भी उनकी हालतमें कोई अच्छा परिवर्तन नहीं हुआ। क्षण क्षणपर अंदेशा बढ़ रहा था। सूर्याजी इत्यादि सभी लोग बाहर उपस्थित थे। उन्होंने अप्पासाहबसे भी जाकर उनका वह समाचार बतलाया। उद्देश्य यह था कि, अन्तमें भी बुड्ढा यह कहे कि, अच्छा, अब मैं लड़केके पास बैठने जाता हूँ। परन्तु उनका यह उद्देश्य सफल नहीं हुआ। बुड्ढा अत्यन्त ही दृढ और सच्चा स्वामिभक्त पुरुष था। अतएव उस भयंकर दशामें भी उसने यही कहा कि, अब मैं यहाँ नहीं रहूँगा, उसका मुख नहीं देखूँगा। यह सुनकर उस बुड्ढेके विषयमें सर्वसाधारण लोगोंके मनमें कुछ तिरस्कारहीके भाव उठे, परन्तु शिवबाके मनमें अत्यन्त पूज्यभाव उत्पन्न हुआ। उन्होंने सोचा कि, सेवक ऐसा ही होना चाहिये तभी स्वामीका कल्याण होता है। इसके बाद उनके मनमें यह बात भी आई कि, अन्तमें मैं भी अप्पासाहबसे दो चार बातें नम्रतापूर्वक करूँगा, और उनको समझा बुझाकर अपने अगले कार्यकी सहायताके लिये उनको रख लूँगा। इस प्रकार मन ही मन सोचकर वे चुप बैठे रहे।

इधर आधीरातके बाद नानासाहबकी प्रकृतिमें कुछ परिवर्तन हुआ;

और धीरे-धीरे प्रभातकालतक उनको वहुत कुछ आराम मालूम हुआ। यही नहीं, वल्कि उस समय उन्होंने पहले ही पहल अपनी ऑखें खोलकर इधर-उधर देखा भी। उसी समय अचानक उनकी दृष्टि मेहरजानकी ओर भी गई। उसके साथ उनकी चार ऑखें हुई। उसको उस समय जो सन्तोष हुआ, उसका वर्णन करना कठिन है। उसने समझ लिया कि, अव इनको मृत्युका भय नहीं रहा, और तुरन्त ही उसने हर्षसे यह कहते हुए नानासाहबकी पत्नीको आलिंगन किया कि, "अव सकट गया, खुदाने आपपर मेहर की!" इसके वाद एकाएक न जाने क्या विचार उसके मनमें आया; और वह तुरन्त उठकर अपने महलको चली आई। इसके वाद फिर उनकी तवीयत वरावर अच्छी ही होती गई, और लगभग तीन दिनमें वे विलकुल होशमें आ गये। परन्तु उनके होशमें आते ही एक नवीन संकट उपस्थित हुआ। अपनी वेहोशीकी हालतमें वे अपनी धर्मपत्नीके हाथसे औषधि-पानी लेनेमें आनाकानी कर ही नहीं सकते थे। परन्तु जव वे होशमें आगये, तव उनका अपनी स्त्रीके सम्वन्धका पूर्व दुराग्रह फिर उद्भुत होआया, और उनका चित्त वहुत ही खिन्न होगया। उनके मस्तकमें वरावर सिकुड़न पड़े रहते। हॉ, उन्होंने प्रकाश रूपसे अपने कुविचारोंके विषयमें एक अक्षरका भी उच्चारण नहीं किया। प्रकट रूपसे यदि वे कुछ कहते, तो उनको समझानेका कोई न कोई प्रयत्न करता। जो हो, उनकी पत्नीने अवश्यही उनके दिलकी वात ताड़ ली। परन्तु उनकी उस सन्दिग्धावस्थाका निरसकरण किस प्रकार किया जाय, उस वेचारीको कुछ सूझ नहीं पड़ता था। निस्सन्देह, वह यह समझती थी कि, उसकी मूर्त्ति उसके पतिके सम्मुख रहनेसे उसके पतिको कष्ट होता है, पर वह यदि उनके पास न रहे, तो उनके औषधोपचार और पथ्यपानीका ठीक ठीक प्रवन्ध किस प्रकार हो? वेचारी वड़ी चिन्तामें थी। दो दिन उसे उसी चिन्तामें वीते। परन्तु पतिदेवके मनकी अवस्था सुधरनेके कोई भी लक्षण दिखाई नहीं दिये। उसकी दासी वड़ी विलक्षण स्त्री थी। वह स्पष्टरूपसे नानासाहवसे सव कुछ पूछ वता सकती थी; पर केवल पूछने वताने अथवा

बहस करनेका वह मौका न था। अब तो ऐसे किसी मनुष्यकी आवश्यकता थी कि, जो उनके मनका उक्त सन्देह बिलकुल जड़-मूलसे मिटा सके। परन्तु ऐसा मनुष्य कौन था? हाँ, एक मनुष्य था। इसलिये उनकी स्त्रीने सोचा कि, देखो—यदि वह मनुष्य हमारे मनके अनुकूल कार्य कर दे, तो बहुत ही अच्छी बात हो। वह मनुष्य मेहरजान है। मेहरजानके ही भाईके पंजेमें फँसकर दुर्भाग्यवश वह अपने पतिके लिये संशयका कारण बन गई थी, परन्तु थी वह बिलकुल निष्कलंक परन्तु इस बातको प्रत्यक्ष बतलाकर उनका विश्वास कौन दिला सकता था? वही मेहरजान दिला सकती थी, उसके सिवाय और किसीको भी वैसा करनेकी सामर्थ्य न थी, और न किसी दूसरेकी बातका उतना विश्वास ही उनको हो सकता था। यही सब सोच समझकर नानासाहबकी धर्मपत्नीने यह निश्चय किया कि, जो भी कुछ हो, इस मौकेपर मेहरजानसे मिलकर इस विषयमें हमको उससे प्रार्थना करनी चाहिये। यह सोचकर वह तुरन्त ही उनके पास गई, और सरलतापूर्वक अपने आनेका सब कारण स्पष्टरूपसे उसको बतलाया।

मेहरजानने देखा कि, यह एक बहुत ही विचित्र प्रकारका कार्य उसके सामने आया, अतएव स्वाभाविक ही उसके मनकी बड़ी विचित्र दशा हुई। वह कुछ देर तो बिलकुल स्तब्ध बैठी रही। जिस पुरुषपर आजतक उसका इतना प्रेम रहा, उसीसे इस अवस्थामें बोलनेका मौका आ रहा है, और सो भी दूसरेके विषयमें। कैसी विलक्षण घटना है! परन्तु उसने सोचा कि, इस समय उनके प्राणोंको बचानेके लिये, और इस साध्वीकी निष्कलंकता स्पष्टरूपसे प्रकट करके बतलानेमें, बिलकुल संकोच न करना चाहिये। यह सोचकर उसने उनके पास आकर उनसे बोलना स्वीकार किया। उनके साथ एक बार बातचीत करनेका उसे और भी मौका आया था, और वह अवसर बराबर उसके हृदयपर खचित हो रहा था। हाँ, नानासाहबको अवश्य ही उसका कभी स्मरण नहीं आया। अस्तु। उस बेचारी साध्वी स्त्रीको क्या पता कि, मेहरजानके मनकी, हमारी इस प्रार्थनाके कारण, इस समय क्या दशा हो रही है।

इधर मेहरजानके सिपाहियोंको इस बातपर बड़ा आश्चर्य हो रहा था कि, अब यद्यपि किला दूसरेके हाथमें चला गया है; और जिसके हाथमें गया है, उसने यद्यपि हमको यहांसे रवाना हो जानेकी आज्ञा भी दे दी है, फिर भी न जाने क्यों हमारी मालकिन अभीतक इसको छोड़नेकी इच्छा नहीं कर रही है। इस बातका आश्चर्य अन्य सब लोगोंको तो हो रहा था ; पर उनमें एक ऐसी भी थी, जिसे कुछ भी आश्चर्य इस बातका नहीं मालूम हो रहा था ; और वह थी—फतिमा। परन्तु उसने भी सच्चा कारण कभी किसीसे प्रकट नहीं किया ; किन्तु वह अपने सिपाहियोंसे सिर्फ यही कहती कि, "खॉसाहबके कर्नाटकसे वापस आ जानेका समाचार जबतक प्राप्त न हो जाय, बीजापुर हम लोगोंका जाना उचित न होगा, इसीलिये हमारी मालकिन अभी यहांसे नहीं जा रही हैं। इसके अतिरिक्त किलेके हस्तगत हो जानेपर राजा शिवाजीने उन सबके साथ इतना उत्तम व्यवहार किया कि, मेहरजानके साथ तो शिवाजीके लोगोंने इतना सम्मानपूर्ण व्यवहार किया कि, जिसके उसके मनमें आया कि, बीजापुर जानेकी अपेक्षा यहीं रहना ही; इस दृष्टिसे भी, विशेष अच्छा है। अस्तु।

मेहरजान अपने दिये हुए वचनोंके अनुसार, उसी दिन शामको नानासाहबसे मिलने गई। उसने अपने मनमें यह निश्चय किया था कि, परदेकी ओटमें बैठकर उनसे बातचीत करेगी ; और जो कुछ कहना होगा, कह देगी ; तथा फिर तुरन्त ही उठकर चली आवेगी। अपने इसी निश्चयके अनुसार उसने फतिमाको, सब प्रबन्ध करा रखनेके लिए, पहले ही भेज दिया था। फतिमाकी और नानासाहबकी अच्छी पहचान थी। इसलिये उनके पास पहलेसे ही जाकर उनको उसने सब बातें समझा दी कि, आज मेहरजान आपसे मिलने आनेवाली हैं, और जो बातें वे आपसे कहें, उनको आप ध्यानपूर्वक सुनेंगे, इत्यादि जो कुछ उसको कहना सुनना था ; और जो प्रबन्ध करना था, वो सब करके वह फिर अपनी मालकिनके पास वापस गई ; और उनके पास उसको ले आई। इधर मेहरजानने जबसे उनको स्त्रीको आनेका वचन

दिया था, और विशेषकर जबसे उसने फतिमाको पहलेसे ही सब प्रबन्ध कर आनेके लिये कह भेजा था, तबसे उसका चित्त बहुत ही व्याकुल हो रहा था। वह यही सोच रही थी कि, मैं क्या कहूंगी, और किस प्रकारसे कहूंगी, जो कुछ हमको कहना है, उसके कहनेके बाद और तो कोई शब्द हमारे मुँहसे न निकल जायगे? इस प्रकारके अनेक विचार उसके मनमें आ रहे थे। फिर जब ठीक मोकेका समय आ गया, तब तो उसका चित्त बहुत ही व्यग्र हुआ। तथापि वह चली, और नानासाहबके भवनमें जहाँ उसके बैठनेकी योजना की गई थी, वहीं जाकर बैठ गई। परन्तु वहाँ बैठनेपर भी उसे अपने मुँहसे एक शब्द भी बाहर निकालनेका साहस न हो रहा था। फतिमा उससे बार बार इशारा कर रही थी कि, "बोलो, कुछ बोलो।" पर फिर भी उसे बोलनेका साहस न होता था। अन्तमें बहुत ही धैर्य करके उसने ये शब्द उच्चारण किये—"नानासाहब, व्यर्थके सन्देहमें पड़कर आप बिना कारण अपनी बीमारी और बढ़ा रहे हैं। आपका सन्देह बिलकुल ही अप्रयोजक और मिथ्या है। इस विषयमें आप रत्तीभर भी शंका न लावें। यदि मेरे शब्दोंकी आपका रत्ती भर भी कीमत हो, तो आप मेरे कथनपर पूर्ण विश्वास करें। आपकी पत्नी बिलकुल निष्कलंक साध्वी है—इससे अधिक और क्या कहूँ? अपने अप्रयोजक सन्देहसे आप अपनी बीमारी बढ़ा रहे हैं, अपनी पवित्र पत्नीको व्यर्थके लिये कष्ट दे रहे हैं, और • "

आगे उसके होठपर "मुझे भी" ये शब्द अवश्य आये थे। परन्तु उनको वह फिर पीछे लौटा ले गई, और चुप हो रही। बिलकुल चुप हो रही। उपर्युक्त शब्द उसने इतने गद्गद् कण्ठसे निकाले कि उनको सुनकर नानासाहबके शरीरपर एकदम रोमांच हो आया, और उनके हृदयमें यह बात बिलकुल जम गई कि, इसके प्रत्येक शब्दमें सत्यता पूर्णतया भरी हुई है, और यही नहीं, बल्कि बोलनेवालेका हृदय भी उसके साथ ही साथ अत्यन्त प्रेमसे हमारी ओर दौड़ता आ रहा है। उन शब्दोंको सुनते ही वे बिलकुल स्तब्ध हो गये। जब स्वयं मेहरजान

उस विषयमें खुलासा कह रही है, तब संशयके लिये स्थान कहाँ ? कुछ देरतक स्तब्ध रहनेके बाद वे बोले, "तुम्हारा वचन हमारे लिये प्रमाण है। हमको विश्वास हो गया। इतने दिनतक हमने बिना कारण अपनेको क्लेशमें डाले रखा। इसके लिये क्षमा करो।"

नानासाहब जिस समय स्तब्ध थे, मेहरजानका चित्त बहुत ही आतुर हो रहा था। जिस बातका उसे अबतक भय था, वह बात आज फिर उसके ध्यानमें आई। किसी समय जबकि वह अपनी छोटी अवस्थामें थी, उसका पिता इसी तरह उसे सुल्तानगढ़पर लाया था। उस मौकेपर एक बार वह नानासाहबके साथ खेल रही थी। खेलते-खेलते दोनोंमें कोई विनोदपूर्ण वार्तालाप हुआ। नानासाहब तो उसे केवल विनोद समझकर तत्काल ही भूल गये; पर मेहरजानके हृदयपर वह वार्तालाप वैसा ही बना रहा; और अबतक अनेक बार उसके मनमें वह बात आई भी थी। नानासाहबको उस बातकी बिलकुल याद नहीं थी; और यदि याद भी होती, तो भी उससे कोई लाभ न था; यह बात मेहरजान भी जानती थी। पर फिर भी जब उसने देखा कि, उनको सचमुच ही उस बातकी बिलकुल याद नहीं, तब उसे बहुत खेद हुआ। और उसके मनमें आया कि, लाओ, उस बातका स्मरण एक बार इन्हें दिला दें। यही नहीं, बल्कि उसने यह भी सोचा कि, खाली स्मरण ही न दिलावें, किन्तु बीचमें जो यह परदा लगा हुआ है, उसको एक ओट हटाकर, उनके मुखकी ओर एक बार देखकर, तब उस बातका स्मरण उनको दिलावें। क्षणभरमें ही उसका यह विचार इतना प्रबल हुआ कि, परदेकी ओर जानेको उसका हाथ और बोलनेके लिये उसके होंठ—ये दोनों एक साथ ही चले, पर उसकी नैसर्गिक शालीनता एक क्षणमें उसको चेतानेके लिये दौड़ पड़ी, और एकदम उसके मनमें आया कि, "ऐसा करना हमारा व्रत नहीं!" यह भाव उसके मनमें आनेमें देर नहीं लगी कि, वह उठकर एकदम बिजलीकी तरह यहाँसे लपक गई! यही नहीं, बल्कि उसने सोचा कि जो बात इस समय हमारे मनमें आई, शायद फिर कभी आजाय, इसलिये उसको आनेका मौका ही न रखा जाय, और इसीलिये

महलमें पहुँचते ही उसने अपने आदमियोंको एकदम नजरमें कैदकर देनेका हुक्म दिया।

इधर शिवाजीने अप्पासाहबका चित्त अपनी ओर खींचनेका बहुत कुछ प्रयत्न किया। परन्तु उन्होंने कहा कि "तेरे समान भ्रष्ट मनुष्यके कारण ही मेरे समान स्वामिभक्त पुरुषोंके लड़के बिगड़ जाते हैं। मेरा लड़का एक सिर्फ तेरे ही कारणसे बिगड़ा, और ऐसा बिगड़ा कि मैं उसके लिए और वह मेरे लिये बिलकुल दुश्मन हो गया। अब यदि तुझमें कुछ भी भलमनसाहत हो, तो तू मुझे, जहां मेरा मन हो, वहां जाने दे। मेरे लड़केने मेरे मनके विरुद्ध चलकर जितना मुझे सन्ताप दिया है, उतना सन्ताप तेरे लड़केके कारणसे तुझे न हो, यही मेरी इच्छा है। मुझसे स्वामिद्रोह करानेके लिये अब तू मेरे सामने घृणित बातें करके मेरे कान अपवित्र मत कर। जा, मेरा कमबख्त अभागा लड़का तुझे मिल ही गया है, बस वही काफी है।" इतना कहकर बुड्ढा बिगड़कर उठ खड़ा हुआ। परन्तु शिवाजीके मनसे उनके विषयका पूज्य भाव जरा भी कम नहीं हुआ। उन्होंने अप्पासाहबसे सिर्फ इतना ही कहा कि "अप्पासाहब, ऐसा जान पड़ता है कि मेरे इन सम्पूर्ण कार्योंका उद्देश्य आपके ध्यानमें नहीं आया। अस्तु। मैं आपको क्षणभरके लिए भी प्रतिबन्धमें नहीं रख सकता। जहाँ आपकी इच्छा हो, आनन्दपूर्वक जा सकते हैं। बुड्ढा उसी दिन वहाँसे चला गया। इधर सुलतानगढ़का किला जिस दिनसे शिववाके हाथमें आया, उस दिनसे श्रीरामदासस्वामीका वह वचन उनको कई बार याद आया कि जो उन्होंने शिवाजीसे कहा था। श्रीसमर्थने यही कहा था कि कोई सिद्धि होनेपर मैं तुमको दर्शन देने वहाँ आऊँगा। और इसी वचनका स्मरण करके शिवाजीने श्रीधरस्वामीको श्रीसमर्थकी सेवामें पहलेहीसे भेज दिया था कि आप चलकर वहाँ देखें—श्रीसमर्थका कैसा विचार है, कब आवेंगे, इत्यादि। इसलिये अब राजा शिवाजी इसी प्रतीक्षामें थे कि श्रीधरस्वामी, देखें, अब कब लौटते हैं, और अकेले लौटते हैं या श्रीसमर्थको भी साथमें लिये आते हैं।

अस्सीवां परिच्छेद

समाप्ति

सुल्तानगढ़ हस्तगत हो जानेके बाद जितनी 'कुछ घटनाएँ हुईं', उन सबका वर्णन ऊपर किया जा चुका है। अब उन घटनाओंके बाद और नानासाहबके आराम हो जानेके बाद शिवबाका सारा ध्यान किस ओर लग रहा था, सो भी पाठकोंको पिछले परिच्छेदके अन्तमें मालूम हो चुका। किलेके हस्तगत होजानेके बादसे ही शिवाजीके मनमें एक यह विचार भी बराबर आरहा था कि किला एक बार हमने हस्तगत तो कर लिया; पर अब ऐसे कौन कौनसे प्रयत्न किये जायँ कि जिससे किला स्थायी रूपसे हमारे हाथमें बना रहे, और दिन प्रतिदिन हमको अपने अभीष्ट उद्देश्यमें अधिकाधिक सफलता प्राप्त होती रहे। प्रायः संसारमें ऐसे ही लोग विशेष देखे जाते हैं कि उनको जो कुछ मिल जाता है, उसीमें सन्तुष्ट हो रहते हैं, पर नहीं, शिवाजीकी महत्वाकांक्षा बहुत ही भारी थी—उनकी उस महत्वाकांक्षाको महत्वाकांक्षा कहना ठीक नहीं होगा, बल्कि उस महत्वाकांक्षाको 'महत्वाकांक्षा' न कहकर यदि "दीन-हीन लोगोंको यवनोंके अत्याचारसे छुड़ानेकी इच्छा" कहा जाय, तो विशेष उपयुक्त होगा। यह इच्छा उनकी इतनी प्रबल थी कि जिसके कारण केवल उस किलेको ही प्राप्त कर लेने भरसे उनको कोई सन्तोष नहीं हुआ। बल्कि, उनके मनमें अब बार बार यही विचार आने लगा कि यह किला जो प्राप्त हुआ है उसको स्थायी रूपसे अपने कब्जेमें कैसे रखा जाय, और आगे भी इसी प्रकार कार्यों में हमको सफलता किस प्रकार मिलती रहे, जिससे दिनपर दिन हम अपने उद्देश्यके समीप पहुँचते जायँ। बस, इन्हीं बातोंका विचार वे बार-बार अपने मनमें कर रहे थे। इसके सिवाय इस बातका तो उन्हें पूर्ण विश्वास था कि भवानी माताकी कृपासे ही हमको यह विजय प्राप्त हुआ है, और श्रीगुरुमहाराज के प्रसादका इसमें सहारा है, बस इसी कारण वे इस बातकी प्रतीक्षामें थे कि देखें अब गुरुवर्य कब आते हैं, अथवा कब हमें अपने समीप

झुलाते हैं। इधर किलेपर जो प्रबन्ध करना था, उसका प्रारम्भ उन्होंने करा दिया था। किस किस ओरकी किलेबन्दीमें क्या क्या कसर है, किस ओरसे शत्रुके आनेसे किलेके जीतनेमें उसको सुविधा है, उस सुविधाको नष्ट करनेके लिये किलेके उस पार्श्वको विशेष रूपसे अगम, अभेद्य तथा विकट बना देनेके लिये—क्या क्या योजना करनी चाहिए, इत्यादि सभी बातोंका वे विचार कर रहे थे। शिवाजीका लड़कपनसे ही यह तरीका, अथवा स्वभाव था कि जो कुछ करना हो, वह अत्यन्त विचार पूर्वक तो किया ही जाय, पर उसके लिए व्यर्थमें दस पाँच मनुष्योंकी सलाह लेते रहनेकी कोई आवश्यकता नहीं। जहाँतक मुमकिन हो, स्वयं अपने निजके ही विचारसे प्रत्येक बातका निर्णय किया जाय, और फिर जब कोई बात अपने मनमें निश्चित होजावे, तब फिर, अपने ढगसे, उसको पूरा करनेमें दूसरोंसे मदद ली जाय। एक बार वहाँ उनका विचार निश्चित होगया, और जो कुछ मनमें आया, उसीके अनुसार वे हुक्म देते, और उसको अमलके लानेके लिये किसी मनुष्यकी, जो उसके योग्य होता, योजना कर देते थे। फिर वह मनुष्य यदि अपने कार्यमें कुछ भी त्रुटि करता, तो यह बात उनसे सहन नहीं होती थी। उनके अगले चरित्रमें तो हमारा उपर्युक्त कथन चरितार्थ हुआ ही है, पर उनकी कई बातोंसे यह भी प्रमाणित होता है कि, लड़कपनसे ही उनमें इसी प्रकारकी प्रवृत्ति थी, और अपने इसी तरीकेसे वे सदैव काम लिया करते थे। कहना नही होगा कि, शिवाजीके समान व्यक्ति सदैव उत्पन्न नहीं हुआ करते, किन्तु जब समय आजाता है, और परमेश्वरका वैसा ही प्रसाद भी होता है, तभी ऐसी विभूतियाँ उत्पन्न होती हैं। अस्तु। किलेको जीतनेमें जिन जिन लोगोंसे सहायता मिली थी, उन उन सब व्यक्तियोंका यथोचित रीतिसे पुरस्कृत करनेका उन्होंने निश्चय किया। परन्तु हाँ, साथ ही साथ उन्होंने इस बातका भी विचारकर रखा कि, जिन लोगोंने सचमुच ही कार्यकी ओर ध्यान रखकर सहायता दी थी, उन्हींको उचित पुरस्कार दिया जाय, और बाकी जिन लोगोंने केवल अपने स्वहितकी ही ओर ध्यान रखकर अपने पहलेके स्वामीसे दगाबाजी

की थी, उनको, उनकी योग्यताके अनुसार ही, पुरस्कृत अथवा तिरस्कृत किया जाय। श्यामापर वे बहुत प्रसन्न थे, इसलिये उसको सदैव अपने पास रखनेका उन्होंने निश्चय किया। और अपना यह निश्चय उन्होंने स्वयं श्यामा और उसकी माँसे प्रकट भी कर दिया। श्यामाका पिछला वृत्तान्त जब उन्होंने सुना, तब उस लड़केके साहस और उसके चातुर्यपर उन्हें बड़ा कौतूहल हुआ। साथ ही उनके मनमें यह आया कि, यह लड़का आगे चलकर बहुत ही अच्छा निकलेगा, और हमारी ओरसे इसको सब प्रकारकी सहायता भी होगी। इसके बाद फिर उन्होंने इस बातका विचार शुरू किया कि, इस लड़केको किस-किस प्रकारकी शिक्षा दी जाय। श्यामाके साथ ही साथ एक चौकीदार (सर्फोजी) का भी नाम निकला। इसका व्यवहार बहुत ही अप्रामाणिक समझा गया था। किलेदारी प्राप्त करनेके लिए इसने अपने स्वामीके साथ बहुत ही दगाबाजीका व्यवहार किया था। पाठकोंको याद होगा कि, यही चौकीदार सैयदुल्लाखाँको अप्पासाहबके विरुद्ध, किलेके सब समाचार गुप्त रूपसे पहुँचाया करता था। एक दिन रातको जब एक घुड़सवार किलेके पीछेकी ओर एक पहाड़ीपर इससे कुछ गुप्त वार्तालाप कर रहा था, तब श्यामाने बन्दरकी तरह उस विकट पहाड़ीपर चढ़कर उन दोनोंकी गुप्त बातें सुनी थीं। अस्तु! इस चौकीदारको शिवाजीने अपने सामने बुलवाया, और उसके मुँहसे उसका सारा अपराध और उसके षड्यन्त्र स्वीकार कराये, और फिर उसको बहुत ही भारी दण्ड दिया। नानासाहबको उनके पिताका कार्य देना निश्चित हुआ। सूर्याजीसे सदैव अपने साथ रहनेके लिये कहा। यह सब प्रबन्ध धीरे-धीरे उन्होंने किया। नीचेकी बस्तीके पटेलजीको भी यथोचित पुरस्कार दिया गया, साथ ही उनको यह भी आश्वासन दिया गया कि, आपको चार छै गाँवोंकी पटेली और भी दी जायगी। इतना सारा प्रबन्ध किया। पर यह विचार अभी उनके मनमें बना हुआ था कि, यह किला, जो हमने लिया है, हमारा पहला प्रयत्न है, अब यह अन्ततक किस प्रकार हमारे पास बना रहे। अब बीजापुरमें यह सब

"मसल गये सब मेरे फूल।
किसी दुष्टने पैर तले मे कुचल मिटाये मूल॥"

अपनी सदाकी पद्धतिके अनुसार ही गाने लगी, और लोगोंकी अणुमात्र भी लाज न करते हुए अपने हाथ आगे ला लाकर हिलाने लगी। यह देखते ही स्वामीने बहुत ही विचित्र चेष्टा बनाई, फिर शीघ्रता-पूर्वक स्वयं उसके पास गये, और उसके मस्तकपर हाथ रखकर कहा, "सच है, सच है, दुष्टोंने फूलोंको मसलकर पैरोंसे अवश्य कुचल डाला है। तुझको भी उनकी चिन्ता हो रही है न? होगा—फिर भी शीघ्र ही वे ताजे होंगे। तू अब चिन्ता बिलकुल न कर। यह कहकर उन्होंने एक बार फिर अपनी कृपापूर्ण दृष्टिसे उसकी ओर देखा। और "जा, सुखसे रह," इतना कहकर उसे जानेकी आज्ञा दी।

इस घटनाको चाहे कोई चमत्कार कहो, सत्पुरुषका साक्षात्कार कहो, अथवा यह कहो कि बोलते हुए फूलसे भेंट हो गई—जो कुछ कहो, किन्तु स्वामीका उक्त आशीर्वाद सुनते ही उस स्त्रीने अपना वह गाना-रोना-हँसना बन्द कर दिया, और कुलीन स्त्रियोंकी तरह लज्जा-विनयसे पूर्ण होकर, वहांसे कायदेके साथ, चल दी, और वहीं एक ओर वृक्षोंकी घनी छाया देखकर ओटमें जा बैठी। सूर्याजीको उनकी पत्नी फिर जैसीकी तैसी प्राप्त हुई। इस घटनाको देखते ही स्वामीके विषयमें वहांके लोगोंके मनमें जो भाव आये—जो अपूर्व पूज्य भाव और अनुपम भक्ति उनके मनमें उत्पन्न हुई—उसका वर्णन करना बिल-कुल असम्भव है। सब आपसमें फुसफुसाकर बातें करने लगे, और आश्चर्य चकित हो गये। किन्तु स्वामीके मनमें फिर वह बात एक क्षणभर भी नहीं रही। वे जैसेके तैसे फिर आगे चल दिये। किलेपर महाराजके पहुँचते ही चारों ओर बड़ी धूमधाम मच गई। बालक, वृद्ध, नर नारी सभी स्वामीके दर्शनोंको बड़ी उत्कंठाके साथ दौड़े। सभीकी यह प्रबल इच्छा थी, कि हमको अपने हाथोंसे स्वामीकी कुछ सेवा करनेका सौभाग्य प्राप्त हो, और इसी इच्छाके वश होकर सभी आगे-आगे

दौड़ने लगे। अन्तमें जब सब लोगोंने यथेच्छ दर्शनसुख और वन्दनसुख-प्राप्त कर लिया, और स्वामीके आशीर्वाद पाकर आनन्दित हो गये, तब लोगोंकी भीड़ धीरे-धीरे कम होने लगी। अन्तमें मुख्य-मुख्य लोग रह गये। तब श्रीधर स्वामीने समर्थसे स्नान सध्यादि नित्यकर्म करनेके लिये उठनेकी प्रार्थना की। स्वामी उठे; और विधिवत् सब कार्य हुए। इसमें एक पहर व्यतीत हुआ। फिर उपाहार होनेके वाद जिस समय स्वामी वैठे हुए थे, राजा शिवाजी फिर उनकी वन्दनाके लिए वहाँ आये। नानासाहबकी अभी ऐसी दशा नहीं थी कि किलेके नीचे उतरकर फिर ऊपर चढ़ सकते, अतएव वे स्वामीके स्वागतको नीचे जा नहीं सके थे, और न भीड़में ही उनके दर्शनोंको पहुँच सके थे। इसलिए वे भी अब वन्दना करनेको आये। उन्होंने आते ही स्वामीकी चरणवन्दनाकी, और स्वामीने उनके मस्तकपर हाथ रखकर कहा, "वाह! खूब काम किया! परन्तु अभी और बहुत कुछ करना है। हाँ, साध्वीके विषयमें व्यर्थ तर्क-वितर्क मनमें मत लाओ। इससे कभी कल्याण नहीं होता।" यह अन्तकी वात सुनते ही नानासाहब भौंचक्क होकर समर्थकी ओर देखने लगे। क्या समर्थको यह वात मालूम है? और मालूम कैसे हुई? वे वड़े आश्चर्यचकित हुए। पर अन्य लोगोंकी भाति उनको भी विश्वास था कि समर्थकी दृष्टिमें कोई भी वात अज्ञात नहीं है, इसलिये उनका वह आश्चर्य शीघ्र ही दूर होगया, और मन भक्तिभावसे भर गया। इसके बाद उन्होंने सिर्फ इतना ही कहा—'समर्थकी आज्ञा शिरसावन्ध है।" यह कहकर उन्होंने अपनी गर्दन नीची कर ली। फिर तीसरे पहर स्वामीके दर्शनोंके लिये नीचेकी वस्ती और आसपासके गाँवोंकी स्त्रियोंके झुण्डके झुण्ड आने लगे। नानासाहबकी धर्म-पत्नी भी दर्शनों-के लिये आई। उनको स्वामीने बहुत ही सुन्दर आशीर्वाद दिया। संध्याका समय होते ही समर्थ फिर अपने सन्ध्यावन्दन जपतपादि नित्य-कर्मों के लिये गये। सब कर्मों से निपटने और समाधि विधिके समाप्त होनेके बाद फिर वैठक हुई। उस समय राजा शिवाजी, सूर्याजी, नाना-साहब, तानाजीराव, येसाजी, कल्याण स्वामी, श्रीधर स्वामी—वस,

इतने ही मुख्य-मुख्य लोग वहाँ थे। इतनेमें राजासाहब उठे, और हाथ जोड़कर प्रार्थना की—

"श्रीभवानी माता और श्रीसमर्थके चरणोंके कृपाप्रसादसे यहाँतक तो सब निर्विघ्न पार हुआ, और यह पहली सिद्धि प्राप्त हुई। अब आगे भी ऐसा ही क्रम जारी रखना साथ है। महाराजकी ही आज्ञा और कृपा-प्रसादपर अवलम्बित है। महाराजकी कृपादृष्टि यदि न होती, तो यह कुछ भी न हुआ होता। मैं महाराजका एक लघु सेवक हूँ, और जो कुछ आजतक मुझसे बन पड़ा है, और जो आगे बन पड़ेगा, सो सब महाराजके ही चरणकमलोंमें अर्पण है। आगे क्या होगा, उसका ज्ञान इस दासको कुछ भी नहीं। परन्तु आजका यह प्रथम लाभ, गुरुदक्षिणा के तौरपर, आपके ही चरणोंमें समर्पित करनेकी उत्कट इच्छा है। यह किला आजसे मेरा नहीं है, आपका है, और किलेके आस पासके ग्राम भी आपके ही हैं। स्वीकार करके आशीर्वाद दें—यही अभिलाषा है।" यह सुनते ही महाराज जोरसे हँसे, और बोले, 'वाह! खूब किया! हमारे इस भगवे पर आगये! किले और राज्य खूब शोभा देंगे! बाबा, ये किले और भावी राज्य न तेरे न मेरे। यह तेरा है, अथवा मेरा है—ऐसा विचार मनमें रखकर यदि प्रयत्न करने लगेगा, तो इसमें तो न करना ही अच्छा। ऐसा भाव रखकर यदि सफलता भी प्राप्त हो, तो मेरी नजरमें उसकी कोई कदर नहीं। भाव ऐसा मत रख कि, यह मेरा होगा, और इसीलिये मैं इसकी वृद्धि करूँगा, क्योंकि यदि ऐसा समझेगा, तो फिर सारा कारबार ही समाप्त हुआ! वास्तवमें यह तेरा नहीं। यह उनका है कि, जिनको ज्ञान नहीं, बल नहीं, और इसी कारण जिनको बलवान और क्रूर यवनोंका अत्याचार सहना पड़ रहा है—उन्हींका यह सारा राज्य है। हम केवल सूत्रधार हैं। ऐसे भावमें जब तू चलेगा, तभी सिद्धि प्राप्त होगी। और वही श्लाघनीय होगा। इसलिए ऐसी ही भावना रख।'

यह सुनते ही शिवबा क्षणभरके लिए स्तब्ध हो रहे। स्वामीका उपदेश उनके हृदयमें बिलकुल गड़ गया, और वे एक दम बोले, 'यह

सब मैंने किया, अथवा करूँगा—ऐसा भाव मेरा बिल्कुल ही नहीं। मैं यह पूर्णतया जानता हूँ कि, भवानी माता और आपके चरणोंकी जब कृपा होगी, तभी हाथमें लिए हुए कार्यकी सिद्धि होगी—सिर्फ व्यवहार दृष्टिसे मैंने उक्त बात कही। इसके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ, और—उन अज्ञ तथा दीनहीन लोगोंके लिये ही—मैं महाराजके चरणोंमें यह गुरुदक्षिणा अर्पण करता हूँ। सो मनोभावसे स्वीकार हो, और कोई न कोई चिन्ह महाराजकी ओरसे मुझे मिले, जिससे यह ज्ञात होता रहे कि, आगे जो कुछ सिद्धि होगी, वह महाराजकी ही कृपा दृष्टिका फल है।"

स्वामीने इसपर भी बहुत कुछ आपत्ति प्रकट की; पर जब सभी लोगोंका अत्यन्त आग्रह देखा तब तुरन्त ही अपनी भगवा रंगकी एक कफनी, जो वहाँ पास ही पड़ी सूख रही थी, उठा कर और शिवबाके हाथमें देकर कहा, "यह लो मेरा चिन्ह। इसका झंडा बनाओ। और जो मैं बतला रहा हूँ, उन अक्षरोंको किलेपर खुदवाकर सब कागज-पत्रोंमें इसी सिक्केका व्यवहार किया करो।"

"विक्रमैर्वर्धिता विष्णोः,
सा मूर्तिरिव वामना।
शाहासुतस्य मुद्रेयं,
शिवराज्य राजते॥"

श्रीधर स्वामीने शीघ्रतापूर्वक इन अक्षरोंको टीप लिया, और शिवबाने उस कफनीको मस्तकपर धारण करके बड़े आदरके साथ स्वीकार किया।

❀ समाप्त ❀

सव मैंने किया, अथवा करूँगा—ऐसा भाव मेरा बिल्कुल ही नह
मैं यह पूर्णतया जानता हूँ कि, भवानी माता और आपके चरण
जब कृपा होगी, तभी हाथमें लिए हुए कार्यकी सिद्धि होगी—ि
व्यवहार दृष्टिसे मैंने उक्त बात कही। इसके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ; और
उन अज्ञ तथा दीनहीन लोगोंके लिये ही—मैं महाराजके चरणोंमें
गुरुदक्षिणा अर्पण करता हूँ। सो मनोभावसे स्वीकार हो, और कोई
कोई चिन्ह महाराजकी ओरसे मुझे मिले, जिससे यह ज्ञात होता रहे
आगे जो कुछ सिद्धि होगी, वह महाराजकी ही कृपा दृष्टिका फल है।

स्वामीने इसपर भी बहुत कुछ आपत्ति प्रकट की; पर जब स
लोगोंका अत्यन्त आग्रह देखा तब तुरन्त ही अपनी भगवा रंगकी
कफनी, जो वहीं पास ही पड़ी सूख रही थी, उठा कर और शिवा
हाथमें देकर कहा, "यह लो मेरा चिन्ह। इसका झंडा बनाओ। अ
जो मैं बतला रहा हूँ, उन अक्षरोंको किलेपर खुदवाकर सब काग
पत्रोंमें इसी सिक्केका व्यवहार किया करो।"

"विक्रमैर्वर्धिता विष्णोः,
सा मूर्तिरिव वामना।
शाहासुतस्य मुद्रेयं,
शिवराज्य राजते॥"

श्रीधर स्वामीने शीघ्रतापूर्वक इन अक्षरोंको टीप लिया, और शिव
ने उस कफनीको मस्तकपर धारण करके बड़े आदरके साथ स्वीक
किया।

❀ समाप्त ❀